

# THE FREE INDOLOGICAL COLLECTION

[WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC](http://WWW.SANSKRITDOCUMENTS.ORG/TFIC)

## FAIR USE DECLARATION

This book is sourced from another online repository and provided to you at this site under the TFIC collection. It is provided under commonly held Fair Use guidelines for individual educational or research use. We believe that the book is in the public domain and public dissemination was the intent of the original repository. We applaud and support their work wholeheartedly and only provide this version of this book at this site to make it available to even more readers. We believe that cataloging plays a big part in finding valuable books and try to facilitate that, through our TFIC group efforts. In some cases, the original sources are no longer online or are very hard to access, or marked up in or provided in Indian languages, rather than the more widely used English language. TFIC tries to address these needs too. Our intent is to aid all these repositories and digitization projects and is in no way to undercut them. For more information about our mission and our fair use guidelines, please visit our website.

Note that we provide this book and others because, to the best of our knowledge, they are in the public domain, in our jurisdiction. However, before downloading and using it, you must verify that it is legal for you, in your jurisdiction, to access and use this copy of the book. Please do not download this book in error. We may not be held responsible for any copyright or other legal violations. Placing this notice in the front of every book, serves to both alert you, and to relieve us of any responsibility.

**If you are the intellectual property owner of this or any other book in our collection, please email us, if you have any objections to how we present or provide this book here, or to our providing this book at all. We shall work with you immediately.**

**-The TFIC Team.**





आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार जीवकाण्ड की  
आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजीकृत भाषा टीका

# सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

## (प्रथम खण्ड)

गोम्मटसार जीवकाण्ड एवं उसकी भाषा टीका

सम्पादक :

ब्र० यशपाल जैन, एम. ए.

प्रकाशक

साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग  
श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट  
ए-४, बापूनगर, जयपुर-३०२०१५

प्रथम संस्करण : २२००

[ ७ मई, १९८६ अक्षय तृतीया ]

मूल्य : चालीस रुपये मात्र

मुद्रक : श्री बालचन्द्र यन्त्रालय 'मानवाश्रम', जयपुर

## प्रकाशकीय

आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार जीवकाण्ड की आचार्यकल्प पण्डित प्रवर टोडरमलजी कृत भापा टीका, जो सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका के नाम से विख्यात है, के प्रथम खण्ड का प्रकाशन करते हुए हमे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है ।

दिगम्बराचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती करणानुयोग के महान आचार्य थे । गोम्मटसार जीवकाण्ड, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, लब्धिसार, अपणासार, त्रिलोकसार तथा द्रव्य-संग्रह ये महत्वपूर्ण कृतियाँ आपकी प्रमुख देन हैं । पण्डित प्रवर टोडरमलजी ने गोम्मटसार जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड तथा लब्धिसार और अपणासार की भापा टीकाएँ पृथक्-पृथक् बनाई थी । चूँकि ये चारों टीकाएँ परस्पर एक-दूसरे से सम्बन्धित तथा सहायक थी, अतः सुविधा की दृष्टि से उन्होंने उक्त चारों टीकाओं को मिलाकर एक ही ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत कर दिया तथा इस ग्रन्थ का नामकरण उन्होंने 'सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका' किया । इस सम्बन्ध में टोडरमलजी स्वयं लिखते हैं—

या विधि गोम्मटसार, लब्धिसार ग्रन्थनिकी,  
भिन्न-भिन्न भापाटीका कीनी अर्थ गायक ।  
इनिक परस्पर सहायकपनौ देख्यौ,  
तातै एक कर दई हम तिनकौ मिलायक ॥  
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका घर्यौ है याकौ नाम,  
सोई होत है सफल ज्ञानानन्द उपजायक ।  
कलिकाल रजनीमें अर्थ को प्रकाश करै,  
यातै निज काज कीजै इष्ट भाव भायक ॥

इस ग्रन्थ की पीठिका के सम्बन्ध में मोक्षमार्ग प्रकाशक की प्रस्तावना लिखते हुए डॉ० हृदयचन्द्रजी भारिल्ल लिखते हैं—

“सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका विवेचनात्मक गद्य शैली में लिखी गई है । प्रारंभ में इकहत्तर पृष्ठ की पीठिका है । आज नवीन शैली से सम्पादित ग्रन्थों में भूमिका का बड़ा महत्त्व माना जाता है । शैली के क्षेत्र में लगभग दस सौ बीस वर्ष पूर्व लिखी गई सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की पीठिका आधुनिक भूमिका का आगमिक रूप है । किन्तु भूमिका का आद्य रूप होने पर भी उसमें प्रौढ़ता पाई जाती है, उसमें हलकापन वही भी देखने को नहीं मिलता । इसके पढ़ने से ग्रन्थ का पूरा हार्दिक मूल्य जाता है एवं इस गूढ़ ग्रन्थ के पढ़ने में आने वाली पाठक की समस्त गठिनायियाँ दूर हो जाती हैं । हिन्दी आत्मकथा साहित्य में जो महत्त्व महाकवि पण्डित दत्तात्रेयदास के 'अद्वैतकथानक' को प्राप्त है, वही महत्त्व हिन्दी भूमिका साहित्य में सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका की पीठिका का है ।”

इस ग्रन्थ का प्रकाशन बड़ा ही श्रम साध्य कार्य था, चूँकि प्रकाशन के लिए समाज का दबाव भी बहुत था, अतः इसे सम्पादित करने हेतु ब्र० यशपाल जी को तैयार किया गया। उन्होंने अथक परिश्रम कर इस गुरुतर भार को वहन किया, इसके लिए यह ट्रस्ट सदैव उनका ऋणी रहेगा।

पुस्तक का प्रकाशन इस विभाग के प्रभारी श्री अखिल बसल ने बखूबी सम्हाला है। अतः उनका आभार मानते हुए जिन महानुभावों ने इस ग्रन्थ की कीमत कम करने में आर्थिक सहयोग दिया है उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

इस ट्रस्ट के विषय में तो अधिक क्या कहूँ इसकी गतिविधियों से सारा समाज परिचित है ही, तीर्थ क्षेत्रों का जीर्णोद्धार एवं उनका सर्वेक्षण तो इस ट्रस्ट के माध्यम से हुआ ही है। इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है श्री टोडरमल दि० जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जिसके माध्यम से सैकड़ों विद्वान जैन समाज को मिले हैं और निरन्तर मिल रहे हैं।

साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग के माध्यम से भी अनुकरणीय कार्य इस ट्रस्ट द्वारा हो रहा है। आचार्य कुन्दकुन्द के पंचपरमागम समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड तथा पचास्तिकाय जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन तो इस विभाग द्वारा हुआ ही है साथ ही—मोक्षशास्त्र, मोक्षमार्ग प्रकाशक, श्रावकधर्म प्रकाशक, पुरुषार्थसिद्धयुपाय, ज्ञान स्वभाव—ज्ञेयस्वभाव, छहढाला, समयसार—नाटक, चिद्विलास आदि का भी प्रकाशन इस विभाग ने किया है। प्रचार कार्य को भी गति देने के लिए पाँच विद्वान नियुक्त किये गए हैं जो गाँव-गाँव जाकर विभिन्न माध्यमों से तत्त्वप्रचार में रत हैं।

इस अनुपम ग्रन्थ के माध्यम से आप अपना आत्म कल्याण कर भव का अभाव करे ऐसी मंगल कामना के साथ—

— नेमीचन्द्र पाटनी

## श्री कुन्दकुन्द कहान दि० जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित

### महत्त्वपूर्ण साहित्य

१. समयसार	२० ०० रु.	१०. श्रावकधर्म प्रकाश	५ ५० रु.
२. प्रवचनसार	१६ ०० रु.	११ पुरुषार्थ सिद्धयुपाय	६.०० रु.
३. नियमसार	१५ ०० रु.	१२ चिद्विलास	२ ५० रु.
४. अष्टपाहुड	१६ ०० रु.	१३. भक्तामर प्रवचन	४.५० रु.
५ पचास्तिकाय संग्रह	१० ०० रु.	१४. वीतराग-विज्ञान भाग-४	५ ०० रु.
६. मोक्षशास्त्र	२० ०० रु.	(छहढाला प्रवचन)	
७ मोक्षमार्ग प्रकाशक	१० ०० रु.	१५ ज्ञानस्वभाव-ज्ञेयस्वभाव	१२ ०० रु.
८. समयसार नाटक	१५ ०० रु.	१६. युगपुरुष कानजी स्वामी	२.०० रु.
९. छहढाला	५ ०० रु.		

(५) मूल गाथा तो वड़े टाइप में दी ही है, साथ ही टीका में भी जहाँ पर संस्कृत या प्राकृत के कोई सूत्र अथवा गाथा, श्लोक आदि आये हैं, उनको भी ब्लैक टाइप में दिया है।

(६) गाथा का विषय जहाँ भी बबलादि ग्रंथों से मिलता है, उसका उल्लेख श्रीमद् राजचंद्र आश्रम, अगास से प्रकाशित गोम्मटसार जीवकाण्ड के आधार से फुटनोट में किया है।

अनेक जगह अलौकिक गणितादि के विषय अति सूक्ष्मता के कारण से हमारे भी समझ में नहीं आये हैं — ऐसे स्थानों पर मूल विषय यथावत ही दिया है, अपनी तरफ से अनुच्छेद भी नहीं बदले हैं।

सर्वप्रथम मैं पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट के महामन्त्री श्री नेमीचन्द्रजी पाटनी का हार्दिक आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रंथ के संग्रहण का कार्यभार मुझे देकर ऐसे महान ग्रंथ के सूक्ष्मता से अध्ययन का अवसर प्रदान किया।

डॉ० हुकमचंद भारिल्ल का भी इस कार्य में पूरा सहयोग एवं महत्वपूर्ण मुभाव तथा मार्गदर्शन मिला है, इसलिए मैं उनका भी हार्दिक आभारी हूँ।

हस्तलिखित प्रतियों से मिलान करने का कार्य अतिशय कष्टसाध्य होता है। मैं तो हस्त-लिखित प्रति पढ़ने में पूर्ण समर्थ भी नहीं था। ऐसे कार्य में शातस्वभावी स्वाध्यायप्रेमी सावर्मी भाई श्री साँभागमलजी बोहरा दूधवाले, वापनगर जयपुर का पूर्ण सहयोग रहा है। ग्रंथ के कुछ विषेय प्रकरण अनेक बार पुनः-पुनः देखने पड़ते थे, फिर भी आप आलस्य छोड़कर निरन्तर उत्साहित रहते थे। मुद्रण कार्य के समय भी आपने प्रत्येक पृष्ठ का शुद्धता की दृष्टि से अवलोकन किया है। एतदर्थ आपका जितना बन्धनवाद दिया जाय, वह कम ही है। आशा है भविष्य में भी आपका सहयोग इसीप्रकार निरन्तर मिलता रहेगा। साथ ही ब्र० कमलावेन जयपुर, श्रीमती गीलावाई विदिशा एवं श्रीमती श्रीवती जैन दिल्ली का भी इस कार्य में सहयोग मिला है, अतः वे भी बन्धनवाद की पात्र हैं।

गोम्मटनार जीवकाण्ड, गोम्मटनार कर्मकाण्ड तथा लल्लिवसान-क्षपणामार के “सदृष्टि अधिकांश” का प्रकाशन पृथक् ही होगा। गणित सम्बन्धी इस विलम्ब कार्य का भार ब्र० विमलावेन ने अपने ऊपर लिया तथा शारीरिक अस्वस्थता के बावजूद भी अत्यन्त परिश्रम से पूर्ण करके मेरे इस कार्य में अभूतपूर्व योगदान दिया है, इसलिए मैं उनका भी हार्दिक आभारी हूँ।

हस्तलिखित प्रतियाँ जिन मदिरों से प्राप्त हुई हैं, उनके दृष्टियों का भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने ये प्रतियाँ उपलब्ध कराईं। इस कार्य में श्री विनयकुमार पापड़ीवाल तथा सागरमलजी बज (लल्लूजी) का भी सहयोग प्राप्त हुआ है, इसलिए वे भी बन्धनवाद के पात्र हैं।

अन्त में इस ग्रंथ का स्वाध्याय करके सभी जन सर्वज्ञता की महिमा से परिचित होकर अपने सर्वज्ञस्वभाव का आश्रय लेने एवं पूर्ण कल्याण करें — यही मेरी पवित्र भावना है।

अक्षय तृतीया  
३ मई, १९५६

— ब्र० यशपाल जैन

## प्रस्तुत संस्करण की कीमत कम कराने वाले दातारों की सूची

१. श्रीमती विभा जैन, घ.प. श्री अरुणकुमारजी जैन	मुजफ्फरनगर	२००१.००
२. श्रीमती भवरीदेवी सुपुत्री स्व. श्री ताराचन्दजी गगवाल	जयपुर	२०००.००
३. श्रीमती शकुतलादेवी घ.प. श्री विजयप्रतापजी जैन	कानपुर	१००१.००
४. श्री के. सी. सोगानी	ब्यावर	१००१.००
५. श्री छोटाभाई भीखाभाई मेहता	बम्बई	१००१.००
६. श्रीमती प्यारीबाई घ.प. श्री मारणकचन्दजी जैन	मुगावली	१०००.००
७. श्रीमती किरणकुमारी जैन	चण्डीगढ़	६००.००
८. श्री दिगम्बर जैन मन्दिर	लवाण	६४१.००
९. श्री दिगम्बर जैन स्वाध्याय मण्डल	कानपुर	५५१.००
१०. श्री महिला मुमुक्षुमण्डल श्रीबुधु ब्याँ सिघईजी का मन्दिर	सागर	५०५.००
११. श्रीमती भवरीदेवी घ.प. श्री घीसालालजी छाबड़ा	सीकर	५०१.००
१२. श्रीमती बसंतीदेवी घ.प. श्री हरकचन्दजी छाबड़ा	वम्बई	५०१.००
१३. श्रीमती नारायणीदेवी घ.प. श्रीगुलाबचन्दजी रारा	दिल्ली	५०१.००
१४. श्री हुलासमलजी कासलीवाल	कलकत्ता	५०१.००
१५. श्री भैयालालजी वैद	उज्जैन	५०१.००
१६. श्री प्रमोदकुमार विनोदकुमारजी जैन	हस्तिनापुर	५०१.००
१७. श्री मारणकचन्द माधोसिंहजी साखला	जयपुर	५०१.००
१८. श्री चतरसेन अमीतकुमारजी जैन	रुड़की	५०१.००
१९. श्री सोहनलालजी जैन, जयपुर प्रिण्टर्स	जयपुर	५०१.००
२०. श्री इन्दरचन्दजी विजयकुमारजी कौशल	छिन्दवाडा	५०१.००
२१. श्रीमती सुमित्रा जैन घ.प. श्री नरेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१.००
२२. श्रीमती किरण जैन घ.प. श्री सुरेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१.००
२३. श्रीमती त्रिशला जैन घ.प. श्री रमेशचन्दजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१.००
२४. श्रीमती उषा जैन घ.प. श्री अनिलकुमारजी जैन	मुजफ्फरनगर	५०१.००
२५. श्री राजेश जैन (टोनी)	मुजफ्फरनगर	५०१.००
२६. श्री राजकुमारजी कासलीवाल	तिनसुखिया	५०१.००
२७. श्रीमती धापूदेवी घ.प. स्व. श्री केसरीमलजी सेठी	नई दिल्ली	५०१.००
२८. श्री अजितप्रसादजाँ जैन	दिल्ली	५०१.००
२९. श्री सुमेरमलजी जैन	तिनसुखिया	५०१.००
३०. श्री पूनमचन्द नेमचन्द जैन	वर्डीत	५०१.००
३१. श्रीमती मोतीदेवी वण्डी घ.प. स्व. श्री उग्रसेनजी वण्डी	उदयपुर	५०१.००

---

२११२२.००

---

३२.	श्री कपूरचन्द राजमल जैन एवं परिवार	नवाग	१०१.००
३३.	श्री छोटे लाल सतीशचन्दजी जैन	उदावा	१०१.००
३४.	श्रीमती रगूवाई घ.प. श्री उम्मेदमलजी भण्डारी	सायना	१००.००
३५.	श्रीमती केसरदेवी घ.प. श्री जयनारायणजी जैन	फिरंगीवादा	१००.००
३६.	श्री सुहास वसंत मोहिरे	बेलगाव	१००.००
३७.	श्री वीरेन्द्रकुमार बालचन्द जैन	पारोना	१००.००
३८.	श्रीमती केसरदेवी वण्डी	उदयपुर	१००.००
३९.	श्री माणकचन्द प्रभुलालजी	कुगावट	१००.००
४०.	श्रीमती रत्नप्रभा सुपुत्री स्व. श्री ताराचन्दजी गगवाल	जयपुर	१००.००
४१.	श्री माणकचन्द प्रभुलालजी भगनोत	कुगावट	१००.००
४२.	श्री नेमीचन्दजी जैन मगरानी वाले	जिवपुरी	१००.००
४३.	स्व. श्रीमती कुसुमलता एव. सुनद वसल स्मृति निधि हस्ते डॉ. राजेन्द्र वसल	अमलाई	१११.००
४४.	श्री जयन्ति भाई धनजी भाई दोशी	दादर बम्बई	१११.००
४५.	श्रीमती धुडीवाई खेमराज गिडिया	खैरागढ	१०१.००
४६.	चौ० फूलचन्दजी जैन	बम्बई	१०१.००
४७.	फुटकर		१७७२.००

योग ३२८२०.००

हे भव्य हो ! शास्त्राभ्यास के अनेक अंग हैं । शब्द या अर्थ का वाचन या सीखना, सिखाना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्न करना, समाधान जानना, बारम्बार चर्चा करना इत्यादि अनेक अंग हैं-वहाँ जैसे बने तैसे अभ्यास करना । यदि सर्व शास्त्र का अभ्यास न बने तो इस शास्त्र में सुगम या दुर्गम अनेक अर्थों का निरूपण है, वहाँ जिसका बने उसका अभ्यास करना । परन्तु अभ्यास में आलसी न होना ।

# विषय-सूची

<b>सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका पीठिका</b>	<b>१-६८</b>	<b>उपशातकषाय का स्वरूप</b>	<b>१६७-१६८</b>
मगलाचरण, सामान्य प्रकरण	१	क्षीणकषाय का स्वरूप	१६८
प्रथमानुयोग पक्षपाती का निराकरण	५	सयोगकेवली का स्वरूप	१६८-१६९
चरणानुयोग पक्षपाती का निराकरण	६	अयोगकेवली का स्वरूप	१६९-१७६
द्रव्यानुयोग पक्षपाती का निराकरण	९	सिद्ध का स्वरूप	१७६-१७९
शब्दशास्त्र पक्षपाती का निराकरण	११	<b>दूसरा अधिकार :</b>	
अर्थ पक्षपाती का निराकरण	१२	<b>जीवसमास-प्ररूपणा</b>	<b>१८०-२३४</b>
काम भोगादि पक्षपाती का निराकरण	१३	जीवसमास का लक्षण	१८०-१८२
शास्त्राभ्यास की महिमा	१५	जीवसमास के भेद	१८३-१९१
जीवकाण्ड सबधी प्रकरण	१७-३०	योनि अधिकार	१९१-१९८
कर्मकाण्ड सबधी प्रकरण	३१-४०	अवगाहना अधिकार	१९८-२३४
अर्थसंदष्टी प्रकरण	४६-४७	<b>तीसरा अधिकार :</b>	
लब्धिसार, क्षणसार सबधी प्रकरण	४८-५५	<b>पर्याप्ति-प्ररूपणा</b>	<b>२३५-२७६</b>
परिकर्माष्टक सबन्धी प्रकरण	५५-६८	अलौकिक गणित	२३५-२६८
<b>मंगलाचरण व प्रतिज्ञा</b>	<b>६९-८६</b>	दृष्टात द्वारा पर्याप्ति अपर्याप्ति का	
भाषा टीकाकार का मगलाचरण	६९-७५	स्वरूप व भेद	२६८-२७०
ग्रन्थकर्ता का मगलाचरण व प्रतिज्ञा	७५-८१	पर्याप्ति, निवृत्ति अपर्याप्ति का स्वरूप	२७०-२७२
बीस प्ररूपणाओं के नाम व सामान्य		लब्धि अपर्याप्तक का स्वरूप	२७२-२७६
कथन	८१-८६	<b>चौथा अधिकार :</b>	
<b>पहला अधिकार .</b>		<b>प्राण-प्ररूपणा</b>	<b>२७७-२८०</b>
<b>गुणस्थान-प्ररूपणा</b>	<b>८६-१७९</b>	प्राण का लक्षण, भेद, उत्पत्ति की	
गुणस्थान और तद् विषयक औदायिक		सामग्री, स्वामी तथा एकेन्द्रियादि	
भावो का कथन	८६-९१	जीवो के प्राणो का नियम	२७७-२८०
मिथ्यात्व का स्वरूप	९१-९५	<b>पांचवा अधिकार :</b>	
सासादन का स्वरूप	९५-९६	<b>संज्ञा-प्ररूपणा</b>	<b>२८१-२८३</b>
सम्यग्मिथ्यात्व का स्वरूप	९६-९८	संज्ञा का स्वरूप, भेद, आहारादि संज्ञा	
असयत्त का स्वरूप	९८-१०३	का स्वरूप तथा संज्ञाओं के स्वामी	२८१-२८३
देशसयत्त का स्वरूप	१०३-१०४	<b>छठवां अधिकार :</b>	
प्रमत्त का स्वरूप	१०४-१३२	<b>गतिमार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>२८४-३०८</b>
अप्रमत्त का स्वरूप	१३२-१५३	मगलाचरण और मार्गणार्थाधिकार	
अपूर्वकरण का स्वरूप	१५३-१५९	के वर्णन की प्रतिज्ञा	२८४
अनिवृत्तिकरण का स्वरूप	१५९-१६०	मार्गणा शब्द की निरुक्ति का लक्षण	२८४
सूक्ष्मसांपराय का स्वरूप	१६०-१६७		

चंद्र मार्गणाओं के नाम	२८५
मातरमार्गणा, उनका स्वरूप व संख्या	२८५-२९७
नारकादि गतिमार्गणा का स्वरूप	२९७-३००
सिद्धगति का स्वरूप	३०१
नारकी जीवों की संख्या का कथन	३०२-३०८

#### सातवां अधिकार :

##### इन्द्रिय मार्गणा-प्ररूपणा ३०९-३२१

मंगलाचरण, इन्द्रिय शब्द की	
निरुक्ति, इन्द्रिय के भेद	३०९-३१२
एकेन्द्रियादि जीवों की इन्द्रिय-संख्या	
उनका विषय तथा क्षेत्र	३१३-३१७
इन्द्रिय रहित जीवों का स्वरूप	३१८
एकेन्द्रियादि जीवों की संख्या	३१८-३२१

#### आठवां अधिकार :

##### कायमार्गणा-प्ररूपणा ३२२-३५२

मंगलाचरण, कायमार्गणा का	
स्वरूप व भेद	३२२
स्यावरकाय की उत्पत्ति का कारण	३२३
शरीर के भेद, लक्षण और संख्या	३२४-३२८
अप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित जीवों का	
स्वरूप	३२८-३३०
आधारण वनस्पति का स्वरूप	३३०-३३७
अमकाय का प्ररूपण	३३७-३३८
वनस्पतिवत् अन्य जीवों के प्रतिष्ठित	
तथा अप्रतिष्ठितपना	३३९
स्यावरकाय तथा अमकाय जीवों के	
शरीर का आकार	३३९-३४०
आयुर्वृद्धि-मिटो का स्वरूप	३४१
पृथ्वी, जल, वायु आदि जीवों की संख्या	३४१-३४१

#### नववां अधिकार :

##### योगमार्गणा-प्ररूपणा ३५२-४०५

योग या सामान्य लक्षण,	
योग या विशेष लक्षण,	
योग विद्वानों का लक्षण	३५२-३५५
उन प्रकार के अन्य या उदाहरण-	
योग मयन	३५६-३५६
मन-वचन-योग के भेदों का कारण	३६०

#### मयोग केवली की मनोयोग की

समावना	३६१-३६२
काययोग का स्वरूप व भेद	३६३-३७०
योग रहित आत्मा का स्वरूप	३७०-३७१
शरीर में कर्म नोकर्म का भेद	३७१
औदारिकादि शरीर के समयप्रवृद्ध	
की संख्या	३७२-३७४
विश्रमोपचय का स्वरूप	३७५-३७६
औदारिक पाच शरीरों की	
उत्कृष्ट स्थिति	३७६-३८८
औदारिक समयप्रवृद्ध का स्वरूप	३८८-३८९
औदारिकादि शरीर विषयक	
विशेष कथन	३८९-४००
योग मार्गणाओं में जीवों की संख्या	४०१-४०५

#### दसवां अधिकार :

##### वेदमार्गणा-प्ररूपणा ४०६-४१३

तीन वेद और उनके कारण व भेद	४०६-४०८
वेद रहित जीव	४०९-४१०
वेद की अपेक्षा जीवों की संख्या	४१०-४१३

#### ग्यारहवां अधिकार :

##### कपायमार्गणा-प्ररूपणा ४१४-४३५

मंगलाचरण तथा कपाय के	
निरुक्तिसिद्ध लक्षण,	
शक्ति की अपेक्षा क्रोधादि के ४	
भेद तथा दृष्टांत गतियों के प्रथम	
समय में क्रोधादि का नियम	४१४-४१६
कपाय रहित जीव	४१६-४२०
कपायों का स्थान	४२१-४२०
कपायस्थानों का यन्त्र, कपाय की	
अपेक्षा जीवसंख्या	४२०-४२५

#### बारहवां अधिकार :

##### ज्ञानमार्गणा-प्ररूपणा ४३६-५७१

ज्ञान का निरुक्तिमिद्ध सामान्य लक्षण,	
पाच ज्ञानों का आद्योपक्रमिक क्रमिक-	
रूप से विभाग, मिथ्याज्ञान का	
कारण और स्वामी	४३६-४३८
मिथ्याज्ञान का कारण और मतःपर्यय-	
ज्ञान का स्वामी, दृष्टांत द्वारा तीन	



मिथ्याज्ञान का स्वरूप, मतिज्ञान का स्वरूप, उत्पत्ति आदि	४३८-४५०
श्रुतज्ञान का सामान्य लक्षण, भेद	४५०-४५३
पर्यायज्ञान, पर्यायसमास, अक्षरात्मक श्रुतज्ञान	४५३-४८१
श्रुतिनिबद्ध विषय का प्रमाण, अक्षर-समास, पदज्ञान, पद के अक्षरों का प्रमाण, प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान	४८१-४८४
अनेक प्रकार के श्रुतज्ञान का विस्तृत स्वरूप, अगबाह्य श्रुत के भेद, अक्षरों का प्रमाण, अगो व पूर्वों के पदों की सख्या, श्रुतज्ञान का माहात्म्य, अवधिज्ञान के भेद,	४८४-५२१
उसके स्वामी और स्वरूप,	५२१-५३६
अवधि का द्रव्यादि चतुष्टय की अपेक्षा वर्णन, अवधि का सबसे जघन्य द्रव्य	५३७-५५४
नरकादि में अवधि का क्षेत्र	५५४-५६०
मनःपर्यायज्ञान का स्वरूप, भेद, स्वामी और उसका द्रव्य	५६०-५६८
केवलज्ञान का स्वरूप, ज्ञानमार्गणा में जीवसख्या	५६८-५७१
<b>तेरहवां अधिकार :</b>	
<b>संयममार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>५७२-५८०</b>
संयम का स्वरूप और उसके पाँच भेद, संयम की उत्पत्ति का कारण	५७२-५७४
देश संयम और असंयम का कारण, सामायिकादि ५ संयम का स्वरूप	५७४-५७७
देशविरत, इन्द्रियों के अट्ठाईस विषय, संयम की अपेक्षा जीवसख्या	५७७-५८०
<b>चौदहवां अधिकार :</b>	
<b>दर्शनमार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>५८१-५८४</b>
दर्शन का लक्षण, चक्षुदर्शन आदि ४ भेदों को क्रम से स्वरूप, दर्शन की अपेक्षा जीव सख्या	५८१-५८४
<b>पंद्रहवां अधिकार :</b>	
<b>लेश्यामार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>५८५-६४४</b>
लेश्या का लक्षण, लेश्याओं के निर्देश	

आदि १६ अधिकार	५८५-५८६
निर्देश, वर्ण, परिणाम, सक्रम, कर्म, लक्षण, गति, स्वामी, साधन, अपेक्षा लेश्या का कथन	५८६-६१०
सख्या, क्षेत्र, स्पर्श, काल, अन्तर, भाव और अल्पबहुत्व अपेक्षा लेश्या का कथन	६१०-६४३
लेश्या रहित जीव	६४३-६४४
<b>सोलहवां अधिकार :</b>	
<b>भव्यमार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>६४५-६५७</b>
भव्य, अभव्य का स्वरूप, भव्यत्व अभव्यत्व से रहित जीव, भव्य मार्गणा में जीवसख्या	६४५-६४६
पाँच परिवर्तन	६४६-६५७
<b>सतरहवां अधिकार :</b>	
<b>सम्यक्त्वमार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>६५८-७२३</b>
सम्यक्त्व का स्वरूप, सात अधिकारों के द्वारा छह द्रव्यों के निरूपण का निर्देश	६५८-६५९
नाम, उपलक्षण, स्थिति, क्षेत्र, सख्या, स्थानस्वरूप, फलाधिकार द्वारा छह द्रव्यों का निरूपण	६५९-७०१
पचास्तिकाय, नवपदार्थ, गुणस्थान क्रम से जीवसख्या, त्रैराशिक यन्त्र	७०२-७०७
क्षपकादि की युगपत् सम्भव विशेष सख्या, सर्व संयमियों की सख्या, आयिक सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व, उपशम सम्यक्त्व	७०८-७१९
पाँच लट्ठि, सम्यक्त्व ग्रहण के योग्य जीव, सम्यक्त्वमार्गणा के दूसरे भेद, सम्यक्त्वमार्गणा में जीवमंरया	७१९-७२३
<b>अठारहवां अधिकार :</b>	
<b>संज्ञीमार्गणा-प्ररूपणा</b>	<b>७२४-७२५</b>
संज्ञी, असंज्ञी का स्वरूप, संज्ञी असंज्ञी की परीक्षा के चिन्ह	७२४
संज्ञी मार्गणा में जीवसख्या	७२५

**उद्गीसवां अधिकार :**

आहारमार्गणा-प्ररूपणा ७२६-७२६

आहार का स्वरूप, आहारक

अनाहारक भेद, समुद्घात

के भेद, समुद्घात का स्वरूप ७२६-७२७

आहारक और अनाहारक का काल

प्रमाण, आहारमार्गणा मे जीवसख्या ७२८-७२९

**वीसवां अधिकार :**

उपयोग-प्ररूपणा ७३०-७३२

उपयोग का स्वरूप, भेद तथा

उत्तर भेद, साकार

अनाकार उपयोग की विशेषता

उपयोगाधिकार मे जीवसख्या ७३०-७३२

**इक्कीसवां अधिकार :**

अन्तर्भावाधिकार ७३३-७५०

गुणस्थान और मार्गणा में शेष

प्ररूपणाओ का अन्तर्भाव, मार्गणाओ

मे जीवसमासादि ७३३-७४१

गुणस्थानो मे जीवसमासादि

मार्गणाओ मे जीवसमास ७४१-७५०

**वाईसवां अधिकार :**

आलापाधिकार ७५१-८५८

नमस्कार और आलापाधिकार के

कहने की प्रतिज्ञा ७५१

गुणस्थान और मार्गणाओ के आलापो

की सख्या, गुणस्थानों में आलाप,

जीवसमास की विशेषता, वीस भेदो की

योजना, आवश्यक नियम ७५१-७६६

यत्र रचना ७६७-८५५

गुणस्थानातीत सिद्धो का स्वरूप,

वीस भेदो के जानने का उपाय,

अन्तिम आशीर्वाद, ८५५-८५८

—०—

विषयजनित जो सुख है वह दुख ही है क्योंकि विषय-सुख परनिमित्त से होता है, पूर्व और पश्चात् तुरन्त ही आकुलता सहित है और जिसके नाश होने के अनेक कारण मिलते ही हैं, आगामी नरकादि दुर्गति प्राप्त करानेवाला है... ऐसा होने पर भी वह तेरी चाह अनुसार मिलता ही नहीं, पूर्व पुण्य से होता है, इसलिए विषम है। जैसे खाज से पीड़ित पुरुष अपने अंग को कठोर वस्तु से खुजाते हैं वैसे ही इन्द्रियो से पीड़ित जीव उनको पीडा सही न जाय तब किंचितमात्र जिनमें पीडा का प्रतिकार सा भासे ऐसे जो विषयसुख उनमे भ्रमापात करते हैं, वह परमार्थ रूप सुख नहीं, और शास्त्रान्यास करने से जो सम्यग्ज्ञान हुआ उससे उत्पन्न आनन्द, वह सच्चा सुख है। जिससे वह सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, किसी द्वारा नष्ट नहीं होता, मोक्ष का कारण है, विषम नहीं है। जिस प्रकार खाज की पीडा नहीं होती तो सहज ही मुखी होता, उसी प्रकार वहाँ इन्द्रिय पीड़ने के लिए समर्थ नहीं होती तब सहज ही सुख को प्राप्त होता है। इसलिए विषयसुख को छोड़कर शास्त्रान्यास करना, यदि सर्वथा न छुटे तो जितना हो सके उतना छोड़कर शास्त्रान्यास में तत्पर रहना।

इसी ग्रन्थ से अनुदित, पृष्ठ - १३ व १४

आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजीकृत  
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका  
पीठिका

॥ मंगलाचरण ॥

बंदौ ज्ञानानंदकर, नेमिचन्द्र गुणकंद ।  
माधव वंदित विमलपद, पुण्यपयोनिधि नंद ॥ १ ॥  
दोष दहन गुन गहन घन, अरि करि हरि अरहंत ।  
स्वानुभूति रमनी रमन, जगनायक जयवंत ॥ २ ॥  
सिद्ध सुद्ध साधित सहज, स्वरससुधारसधार ।  
समयसार शिव सर्वगत, नमत होहु सुखकार ॥ ३ ॥  
जैनी वानी विविध विधि, वरनत विश्वप्रमान ।  
स्यात्पद-मुद्रित अहित-हर, करहु सकल कल्याण ॥ ४ ॥  
मै नमो नगन जैन जन, ज्ञान-ध्यान धन लीन ।  
मैन मान बिन दान घन, एन हीन तन छीन ॥ ५ ॥ १  
इहविधि मंगल करन तै, सबविधि मंगल होत ।  
होत उदंगल दूरि सब, तम ज्यौ भानु उदोत ॥ ६ ॥

सामान्य प्रकरण

अथ मंगलाचरण करि श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथ, ताकी देशभाषामयी टीका करने का उद्यम करौ हौ । सो यहु ग्रंथसमुद्र तौ ऐसा है जो सातिशय बुद्धि-बल संयुक्त जीवनि करि भी जाका अवगाहन होना दुर्लभ है । अर मैं मंदबुद्धि अर्थ प्रकाशनेरूप याकी टीका करनी विचारौ हौ ।

सो यहु विचार ऐसा भया जैसे कोऊ अपने मुख तै जिनेद्रदेव का सर्व गुण वर्णन किया चाहै, सो कैसें बने ?

इहां कोऊ कहै — नाहीं बने है तो उद्यम काहे कौ करौ हौ ?

ताकौ कहिये है — जैसे जिनेद्रदेव के सर्व गुण कहने की सामर्थ्य नाही, तथापि भक्त पुरुष भक्ति के वश तै अपनी बुद्धि अनुसार गुण वर्णन करै, तैसे इस ग्रंथ का संपूर्ण अर्थ प्रकाशने की सामर्थ्य नाही । तथापि अनुराग के वश तै मैं अपनी बुद्धि अनुसार ( गुण ) २ अर्थ प्रकाशोंगा ।

१. यह चित्रालंकारयुक्त है ।

२. गुण शब्द घ प्रति मे मिला ।

बहुरि कौऊ कहै कि - अनुराग है तो अपनी बुद्धि अनुसार ग्रंथाभ्यास करो, मंदबुद्धिनि कौ टीका करने का अधिकारी होना युक्त नहीं ।

ताकों कहिये है - जैसे किसी शिष्यशाला विषे बहुत बालक पढ़े हैं । तिनविषे कौऊ बालक विशेष ज्ञान रहित है, तथापि अन्य बालकनि तें अधिक पढ़्या है, सो आपतें थोरे पढ़ने वाले बालकनि कौ अपने समान ज्ञान होने के अर्थ किछू लिखि देना आदि कार्य का अधिकारी हो है । तैसे मेरे विशेष ज्ञान नाही, तथापि काल दाप ते मोतैं भी मंदबुद्धि है, अर होंहिगे । तिनिके मेरे समान इस ग्रंथ का ज्ञान होने के अर्थ टीका करने का अधिकारी भया ही ।

बहुरि कौऊ कहै कि - यह कार्य करना तो विचारया, परन्तु जैसे छोटा मनुष्य बड़ा कार्य करना विचारै, तहां उस कार्य विषे चूक होई ही, तहां वह हास्य कौ पावै है । तैसे तुम भी मंदबुद्धि होय, इस ग्रंथ की टीका करनी विचारौ हौ सो चूक होइगी, तहा हास्य कौ पावोगे ।

ताकों कहिये है - यह तौ सत्य है कि मैं मंदबुद्धि होइ ऐसे महान ग्रंथ की टीका करनी विचारौ हौ, सो चूक तौ होइ, परन्तु सज्जन हास्य नाही करेंगे । जैसे औरनि तें अधिक पढ़्या बालक कही भूलै तव बड़े ऐसा विचारै है कि बालक है, भूलै ही भूलै, परन्तु और बालकनि तें भला है, ऐसे विचारि हास्य नाही करै है । तैसे मैं इहां कही भूलोंगा तहां सज्जन पुरुष ऐसा विचारेंगे कि मंदबुद्धि था, सो भूलै ही भूलै, परन्तु केतेइक अतिमदबुद्धीनि तें भला है, ऐसे विचारि हास्य न करेंगे ।

सज्जन तो हास्य न करेंगे, परन्तु दुर्जन तौ हास्य करेंगे ?

ताकों कहिये है कि - दुष्ट तौ ऐसे ही है, जिनके हृदय विषे औरनि के निर्दोष भले गुण भी विपरीतरूप ही भासै । सो उनका भय करि जामे अपना हित होय ऐसे कार्य कौ कौन न करैगा ?

बहुरि कौऊ कहै कि - पूर्व ग्रंथ थे ही, तिनिका अभ्यास करने-करावने तें ही हित हो है, मंदबुद्धिनि करि ग्रंथ की टीका करने की महंतता काहेकौ प्रगट कीजिये ?

ताकों कहिये है कि - ग्रंथ अभ्यास करने तें ग्रंथ की टीका स्मृति करने विषे उपयोग विशेष लागै है, अर्थ भी विशेष प्रतिभासै है । बहुरि अन्य जीवनि कौ ग्रंथ अभ्यास करावने का संयोग होना दुर्लभ है । अर संयोग होइ तौ कोई ही जीव के अभ्यास होइ । अर ग्रंथ की टीका बनै तौ परंपरा अनेक जीवनि के अर्थ का ज्ञान होइ । तातें अपना अर अन्य जीवनि का विशेष हित होने के अर्थ टीका करिये है, महंतता का तौ किछू प्रयोजन नाही ।

बहुरि कोऊ कहै कि इस कार्य विषै विशेष हित हो है सो सत्य, परंतु मंदबुद्धि तै कही भूलि करि अन्यथा अर्थ लिखिए, तहां महत् पाप उपजने तै अहित भी तो होइ ?

ताकौ कहिए है - यथार्थ सर्व पदार्थनि का ज्ञाता तौ केवली भगवान है । औरनि के ज्ञानावरण का क्षयोपशम के अनुसारी ज्ञान है, तिनिकौ कोई अर्थ अन्यथा भी प्रतिभासै, परंतु जिनदेव का ऐसा उपदेश है - कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्रनि के वचन की प्रतीति करि वा हठ करि वा क्रोध, मान, माया, लोभ करि वा हास्य, भयादिक करि जो अन्यथा श्रद्धान करै वा उपदेश देइ, सो महापापी है । अर विशेष ज्ञानवान गुरु के निमित्त बिना, वा अपने विशेष क्षयोपशम बिना कोई सूक्ष्म अर्थ अन्यथा प्रतिभासै अर यहु ऐसा जानै कि जिनदेव का उपदेश ऐसै ही है, ऐसा जानि कोई सूक्ष्म अर्थ कौ अन्यथा श्रद्धै है वा उपदेश दे तौ याकौ महत् पाप न होइ । सोइ इस ग्रंथ विषै भी आचार्य करि कहा है -

सम्माइठ्ठी जीवो, उवइठ्ठं पवयणं तु सदहृदि ।

सदहृदि असम्भावं, अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥२७॥ जीवकांड ॥

बहुरि कोऊ कहै कि - तुम विशेष ज्ञानी तै ग्रंथ का यथार्थ सर्व अर्थ का निर्णय करि टीका करने का प्रारंभ क्यों न कीया ?

ताकौ कहिये है - काल दोष तै केवली, श्रुतकेवली का तौ इहां अभाव ही भया । बहुरि विशेष ज्ञानी भी विरले पाइए । जो कोई है तौ दूरि क्षेत्र विषै है, तिनिका संयोग दुर्लभ । अर आयु, बुद्धि, बल, पराक्रम आदि तुच्छ रहि गए । तातैं जो बन्या सो अर्थ का निर्णय कीया, अवशेष जैसै है तैसै प्रमाण है ।

बहुरि कोऊ कहै कि - तुम कही सो सत्य, परंतु इस ग्रंथ विषै जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का किछु उपाय भी है ?

ताकौ कहिये है - एक उपाय यहु कीजिए है - जो विशेष ज्ञानवान पुरुषनि का प्रत्यक्ष तौ संयोग नाही, तातैं परोक्ष ही तिनिस्यों ऐसी बीनती करौ हौ कि मै मंद बुद्धि हौ, विशेषज्ञान रहित हौ, अविवेकी हौ, शब्द, न्याय, गणित, धार्मिक आदि ग्रंथनि का विशेष अभ्यास मेरे नाही है, तातैं शक्तिहीन हौ, तथापि धर्मानुराग के वश तै टीका करने का विचार कीया, सो या विषै जहा-जहां चूक होइ, अन्यथा अर्थ होइ, तहां-तहां मेरे ऊपरि क्षमा करि तिस अन्यथा अर्थ कौ दूरि करि यथार्थ अर्थ लिखना । ऐसै विनती करि जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का उपाय कीया है ।

बहुरि कोऊ कहै कि तुम टीका करनी विचारी सो तौ भला कीया, परंतु ऐसे महान ग्रंथनि की टीका सस्कृत ही चाहिये । भाषा विषै याकी गंभीरता भासै नाही ।

ताकों कहिये है - इस ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृत टीका ती पूर्व है ही । परन्तु तहा संस्कृत, गणित, आम्नाय आदि का ज्ञान रहित जे मंदबुद्धि हे, तिनिका प्रवेश न हो है । बहुरि इहां काल दोष तै बुद्ध्यादिक के तुच्छ होने करि संस्कृतादि ज्ञान रहित घने जीव है । तिनिके इस ग्रंथ के अर्थ का ज्ञान होने के अर्थ भाषा टीका करिए है । सो जे जीव संस्कृतादि विणेषज्ञान युक्त है, ते मूलग्रंथ वा संस्कृत टीका तै अर्थ धारैगे । बहुरि जे जीव संस्कृतादि विणेष ज्ञान रहित है, ते इस भाषा टीका तै अर्थ धारौ । बहुरि जे जीव संस्कृतादि ज्ञान सहित है, परन्तु गणित आम्नायादिक के ज्ञान के अभाव तै मूलग्रंथ वा संस्कृत टीका विषे प्रवेश न पावै है, ते इस भाषा टीका तै अर्थ कौ धारि, मूल ग्रंथ वा संस्कृत टीका विषे प्रवेश करहु । बहुरि जो भाषा टीका तै मूल ग्रंथ वा संस्कृत टीका विषे अधिक अर्थ होइ, ताके जानने का अन्य उपाय वनै सो करहु ।

इहां कोऊ कहै - संस्कृत ज्ञानवालों कै भाषा अभ्यास विषे अधिकार नाही ।

ताकों कहिये है - संस्कृत ज्ञानवालों कौ भाषा वांचने तै कोई दोष तो नाही उपजै है, अपना प्रयोजन जैसे सिद्ध होइ तैसे ही करना । पूर्व अर्धमागधी आदि भाषामय महान ग्रंथ थे । बहुरि बुद्धि की मंदता जीवनि के भई, तब संस्कृतादि भाषामय ग्रंथ वने । अब विणेष बुद्धि की मंदता जीवनि के भई तातै देश भाषामय ग्रंथ करने का विचार भया । बहुरि संस्कृतादिक का अर्थ भी अब भाषाद्वार करि जीवनि कौ समझाइये है । इहां भाषाद्वार करि ही अर्थ लिख्या तो किछू दोष नाही है ।

ऐसे विचारि श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीयनामा पंचसंग्रह ग्रंथ की 'जीवतत्त्व प्रदीपिका' नामा संस्कृत टीका, ताकै अनुसारि 'सम्यग्ज्ञानचंद्रिका' नामा यहु देशभाषामयी टीका करने का निश्चय किया है । सो श्री अरहंत देव वा जिनवाणी वा निर्ग्रथ गुननि के प्रसाद तै वा मूल ग्रंथकर्ता नेमिचंद्र आदि आचार्यनि के प्रसाद तै यहु कार्य सिद्ध होहु ।

अब इस शास्त्र के अभ्यास विषे जीवनि कौ सन्मुख करिए है । हे भव्यजीव हो ! तुम अपने हित कौ वाछौ हो ती तुमकौ जैसे वनै तैसे या शास्त्र का अभ्यास करना । जातै आत्मा का हित मोक्ष है । मोक्ष विना अन्य जो है, सो परसयोग-जनित है, विनाशीक है, दुःखमय है । अर मोक्ष है सोई निज स्वभाव है, अविनाशी है, अनंत सुखमय है । तातै मोक्ष पद पावने का उपाय तुमकौ करना । सो मोक्ष के उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र्य है । सो इनकी प्राप्ति जीवादिक के स्वप्न जानने ही तै हो है ।

अर यह शास्त्राभ्यासरूप ज्ञानधन है सो अविनाशी है, भय रहित है, धर्मरूप है, स्वर्ग मोक्ष का कारण है । सो महंत पुरुष तौ धनकादिक कौ छोड़ि शास्त्राभ्यास विषै लगै है । तू पापी शास्त्राभ्यास कौ छोड़ाय धन उपजावने की बड़ाई करै है, सो तू अनंत संसारी है ।

बहुरि तै कह्या - प्रभावना आदिधर्म भी धन ही तै हो है । सो प्रभावना आदि धर्म हैं सो किंचित् सावद्य क्रिया संयुक्त है । तिसतै समस्त सावद्य रहित शास्त्राभ्यासरूप धर्म है, सो प्रधान है । ऐसै न होइ तौ गृहस्थ अवस्था विषै प्रभावना आदि धर्म साधते थे, तिनि कौ छांड़ि संजमी होइ शास्त्राभ्यास विषै काहे को लगै है ? बहुरि शास्त्राभ्यास तै प्रभावनादिक भी विशेष हो है ।

बहुरि तै कह्या - धनवान के निकट पंडित भी आनि प्राप्त होइ । सो लोभी पंडित होइ, अर अविचैकी धनवान होइ तहां ऐसै हो है । अर शास्त्राभ्यासवालों की तौ इंद्रादिक सेवा करै हैं । इहां भी बड़े बड़े महंत पुरुष दास होते देखिए है । तातै शास्त्राभ्यासवालों तैं धनवान कौ महंत मति जानै ।

बहुरि तै कह्या - धन तै सर्व कार्यसिद्धि हो है । सो धन तै तौ इस लोक संबंधी किछू विषयादिक कार्य ऐसा सिद्ध होइ, जातै बहुत काल पर्यंत नरकादि दुःख सहने होइ । अर शास्त्राभ्यास तै ऐसा कार्य सिद्ध हो है जातै इहलोक विषै अर परलोक विषै अनेक सुखनि की परंपरा पाइए । तातैं धन उपजावने का विकल्प छोड़ि शास्त्राभ्यास करना । अर जो सर्वथा ऐसै न बनै तौ संतोष लिए धन उपजावने का साधनकरि शास्त्राभ्यास विषै तत्पर रहना । ऐसै अर्थ उपजावने का पक्षपाती कौ सन्मुख किया ।

बहुरि कामभोगादिक का पक्षपाती बोलै है कि - शास्त्राभ्यास करने विषै सुख नाही, बड़ाई नाही । तातै जिन करि इहां ही सुख उपजै ऐसे जे स्त्रीसेवना, खाना, पहिरना, इत्यादि विषय, तिनका सेवन करिए । अथवा जिन करि यहा ही बड़ाई होइ ऐसे विवाहादिक कार्य करिए ।

ताकौ कहिए है - विषयजनित जो सुख है सो दुःख ही है । जातै विषय सुख है, सो परनिमित्त तै हो है । पहिले, पीछै, तत्काल आकुलता लिए है, जाके नाश होने के अनेक कारण पाइए है । आगामी नरकादि दुर्गति कौ प्राप्त करगहारा है । ऐसा है तौ भी तेरा चाह्या मिलै नाही, पूर्व पुण्य तै हो है, तातै विषम है । जैसे खाजि करि पीड़ित पुरुष अपना अंग कौ कठोर वस्तु तै गुजावै, तैसे इंद्रियनि करि

पीड़ित जीव, तिनकी पीड़ा सही न जाय तब किञ्चिन्मात्र तिस पीड़ा के प्रतिकार से भासै - ऐसे जे विषयमुख तिन विषे भंषापात लेवै है, परमार्थरूप सुख है नाहीं ।

बहुरि शास्त्राभ्यास करनेतें भया जो सम्यग्ज्ञान, ताकरि निपज्या जो आनन्द, सो सांचा सुख है । जातें सो सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, काहू करि नष्ट न हो है, मोक्ष का कारण है, विषम नाहीं । जैसे खाजि न पीड़ै, तब सहज ही सुखी होइ, तैसें तहां इन्द्रिय पीड़ने कौ समर्थ न होइ, तब सहज ही, सुख कौ प्राप्त हो है । तातें विषय मुख छोड़ि शास्त्राभ्यास करना । (जो) सर्वथा न छूटे तो जेता वनै तेता छोड़ि, शास्त्राभ्यास विषे तत्पर रहना ।

✓ बहुरि तें विवाहादिक कार्य विषे बड़ाई होने की कहो, सो केतेक दिन बड़ाई रहेगी ? जाकै अर्थ महापापारंभ करि नरकादि विषे बहुतकाल दुःख भोगना होइगा । अथवा तुम तें भी तिन कार्यनि विषे वन लगावनेवाले बहुत हैं, तातें विशेष बड़ाई भी होने की नाहीं ।

बहुरि शास्त्राभ्यास तें ऐसी बड़ाई हो है, जाकी सर्वजन महिमा करे, इद्रादिक भी प्रशंसा करै अर परंपरा स्वर्ग मुक्ति का कारण है । तातें विवाहादिक कार्यनि का विकल्प छोड़ि, शास्त्राभ्यास का उद्यम राखना । सर्वथा न छूटे तो बहुत विकल्प न करना । ऐसे काम भोगादिक का पक्षपाती कौ शास्त्राभ्यास विषे सन्मुख किया । या प्रकार अन्य जीव भी जे विपरीत विचार तें इस ग्रंथ अभ्यास विषे अरुचि प्रगट करै, तिनका यथार्थ विचार तें इस शास्त्र के अभ्यास विषे सन्मुख होना योग्य है ।

इहां अन्यमती कहै है कि - तुम अपने ही शास्त्र अभ्यास करने कौ दृढ किया । हमारे मत विषे नाना युक्ति आदि करि सयुक्त शास्त्र है, तिनका भी अभ्यास क्यों न कराइए ?

ताकों कहिए है - तुमारे मत के शास्त्रनि विषे आत्महित का उपदेश नाहीं । जातें कही गृंगार का, कही युद्ध का, कही काम सेवनादि का, कही हिमादि का कथन है । सो ए तौ विना ही उपदेश सहज ही वनि रहे है । इनका तनै दिन होई, ने नहा उलटे पोषे हैं, तातें तिनतें हित कैसे होइ ?

तहां वह कहै है - ईश्वरनै अैसे लीला करी है, ताको गावै हैं, तिसतें भला हो है ।

तहां कहिये है - जो ईश्वर के सहज मुख न होगा, तब संसारीवत् लीला गुरि गुरी भया । जो (वह) सहज मुखी होता तो काहेकौ विषयादि सेवन वा



युद्धादिक करता ? जातै मदबुद्धि हू बिना प्रयोजन किचिन्मात्र भी कार्य न करै । तातै जानिए है - वह ईश्वर हम सारिखा ही है, ताका जस गाएं कहा सिद्धि है ?

बहुरि वह कहै है कि - हमारे शास्त्रनि विषै वैराग्य, त्याग, अहिंसादिक का भी तौ उपदेश है ।

तहां कहिए है - सो उपदेश पूर्वापर विरोध लिए है । कही विषय पोषे है, कही निषेधे है । कही वैराग्य दिखाय, पीछै हिंसादि का करना पोष्या है । तहां वातुलवचन-वत् प्रमाण कहा ?

बहुरि वह कहै है कि वेदांत आदि शास्त्रनि विषै तो तत्त्व ही का निरूपण है ।

तहां कहिए है - सो निरूपण प्रमाण करि बाधित, अयथार्थ है । ताका निराकरण जैन के न्यायशास्त्रनि विषै किया है, सो जानना । तातै अन्यमत के शास्त्रनि का अभ्यास न करना ।

ऐसै जीवनि कौ इस शास्त्र के अभ्यास विषै सन्मुख किया, तिनकौ कहिए है-

हे भव्य ! शास्त्राभ्यास के अनेक अंग है । शब्द का वा अर्थ का वांचना, या सीखना, सिखावना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्न करना, समाधान जानना, बार बार चरचा करना, इत्यादि अनेक अंग है । तहां जैसै बनै तैसै अभ्यास करना । जो सर्व शास्त्र का अभ्यास न बनै तौ इस शास्त्र विषै सुगम वा दुर्गम अनेक अर्थनि का निरूपण है । तहा जिसका बनै तिसही का अभ्यास करना । परंतु अभ्यास विषै आलसी न होना ।

देखो ! शास्त्राभ्यासकी महिमा, जाकौ होतै परंपरा आत्मानुभव दशा कौ प्राप्त होइ - सो मोक्ष रूप फल निपजै है; सो तौ दूर ही तिष्ठौ । शास्त्राभ्यास तै तत्काल ही इतने गुण हो है । १. क्रोधादि कपायनि की तौ मंदता हो है । २. पंचइंद्रियनि की विषयनि विषै प्रवृत्ति रुकै है । ३. अति चंचल मन भी एकाग्र हो है । ४. हिंसादि पच पाप न प्रवर्तै है । ५. स्तोक ज्ञान होतै भी त्रिलोक के त्रिकाल संबंधी चराचर पदार्थनि का जानना ही है । ६. हेयोपादेय की पहिचान हो है । ७. आत्मज्ञान सन्मुख हो है ( ज्ञान आत्मसन्मुख हो है ) । ८. अधिक-अधिक ज्ञान होतै आनंद निपजै है । ९. लोकविषै महिमा, यज्ञ विशेष हो है । १०. सातिशय पुण्य का बंध हो है - इत्यादिक गुण शास्त्राभ्यास करतै तत्काल ही प्रगट होई हैं ।

नानं नान्वाभ्यास अवश्य करना । वहुरि हे भव्य । शास्त्राभ्यास करने का समय पावना महादुर्लभ है । काहे ते ? सो कहिए है—

एकेद्रियादि असंजी पर्यंत जीवनिके तौ मन ही नाही । अर नारकी वेदना गीडिन, निर्यत्र विवेक रहित, देव विपयासक्त, तातै मनुष्यनि कै अनेक सामग्री मिले नान्वाभ्यास होइ । सो मनुष्य पर्याय का पावना ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि महादुर्लभ है ।

तत्रा द्रव्य करि लोक विपै मनुष्य जीव बहुत थोरे हैं, तुच्छ संख्यात मात्र ही है । अर अन्य जीवनि विपै निगोदिया अनंत है, और जीव असंख्याते हैं ।

वहुरि क्षेत्र करि मनुष्यनि का क्षेत्र बहुत स्तोक है, अढाई द्वीप मात्र ही है । अर अन्य जीवनि विपै एकेद्रिनि का सर्व लोक है, औरनिका केते इक राजू प्रमाण है । वहुरि काल करि मनुष्य पर्याय विपै उत्कृष्ट रहने का काल स्तोक है, कर्मभूमि अपेक्षा पृथक् कोटि पूर्व मात्र ही है । अर अन्य पर्यायनि विपै उत्कृष्ट रहने का काल — एकेद्रिय विपै तो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र, अर और विपै संख्यातपत्य मात्र है ।

वहुरि भाव करि तीव्र शुभाशुभपना करि रहित ऐसे मनुष्य पर्याय कौ गन्तव्य पणिगाम होने अति दुर्लभ है । अन्य पर्याय कौ कारण अशुभरूप वा शुभरूप पणिगाम होने मुलभ है । ऐसे शास्त्राभ्यास का कारण जो पर्याप्त कर्मभूमिया मनुष्य पर्याय, ताका दुर्लभपना जानना ।

तत्रा मुवान, उच्चकुल, पूर्णआयु, इंद्रियनि की सामर्थ्य, नीरोगपना, सुसंगति, अमृत्यु अभिप्राय, बुद्धि की प्रबलता इत्यादिक का पावना उत्तरोत्तर महादुर्लभ है । सो प्रत्यक्ष देखिए है । अर इतनी सामग्री मिले बिना ग्रंथाभ्यास वनै नहि । सो तुम भाग्यकरि यह अवसर पाया है । तातै तुमकौ हठ करि भी तुमारे हिय सोने के अति प्रेमे है । जैसे वनै तैसे इस शास्त्र का अभ्यास करो । वहुरि अन्य जीवनि जो जेने वनै तैने नान्वाभ्यास करावा । वहुरि जे जीव शास्त्राभ्यास करते नहि, तिनकी अशुभोदना वगैरे । वहुरि पुनिक निवाचना, वा पढ़ने, पढ़ावनेवालों की निमित्त नान्वाभ्यास का बाह्यकारण, तिनका साधन करना । सो देखिए भी गन्तव्य पणिगामिनि हो है वा महत्पुण्य उपजै है ।

सो जो नान्वाभ्यास या अभ्यासादि विपै जीवनि कौ रुचिमान किया ।

## गोम्मटसार जीवकाण्ड सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि जो यहु सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषा टीका, तिहिंविषै संस्कृत टीका तै कहीं अर्थ प्रकट करने के अर्थ, वा कही प्रसंगरूप, वा कही अन्य ग्रंथ का अनुसारि लेइ अधिक भी कथन करियेगा । अर कही अर्थ स्पष्ट न प्रतिभासैगा, तहां न्यून कथन होइगा ऐसा जानना । सो इस भाषा टीका विषै मुख्यपनै जो-जो मुख्य व्याख्यान है, ताकौ अनुक्रमतैं संक्षेपता करि कहिए है । जातै याके जानै अभ्यास करने-वालौ कै सामान्यपनै इतना तौ जानना होइ जो या विषै ऐसा कथन है । अर क्रम जाने जिस व्याख्यान कौ जानना होइ, ताकौ तहां शीघ्र अवलोकि अभ्यास करै, वा जिनने अभ्यास किया होइ, ते याकौ देखि अर्थ का स्मरण करैं, सो सर्व अर्थ की सूचनिका कीए तौ विस्तार होई, कथन आगै है ही, तातै मुख्य कथन की सूचनिका क्रम तै करिए है ।

तहाँ इस भाषा टीका विषै सूचनिका करि कर्माष्टक आदि गणित का स्वरूप दिखाइ संस्कृत टीका के अनुसारि मंगलाचरणादि का स्वरूप कहि मूल गाथानि की टीका कीजिएगा । तहां इस शास्त्र विषै दोय महा अधिकार हैं — एक जीवकांड, एक कर्मकांड । तहा जीवकांड विषै बाईस अधिकार है ।

तिनिविषै प्रथम गुणस्थानाधिकार है । तिस विषै गुणस्थाननि का नाम, वा सामान्य लक्षण कहि तिनिविषै सम्यक्त्व, चारित्र अपेक्षा औदयिकादि सभवते भावनि का निरूपण करि क्रम तैं मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि का वर्णन है । तहा मिथ्यादृष्टि विषै पंच मिथ्यात्वादि का सासादन विषै ताके काल वा स्वरूप का, मिश्र विषै ताके स्वरूप का वा मरण न होने का, असंयत विषै वेदकादि सम्यक्त्वनि का वा ताके स्वरूपादिक का, देश संयत विषै ताके स्वरूप का वर्णन है । बहुरि प्रमत्त का कथन विषै ताके स्वरूप का अर पंद्रह वा अस्सी वा साढ़े सैतीस हजार प्रमाद भेदनि का अर तहां प्रसंग पाइ संख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट करि वा गूढ यत्र करि अक्षसंचार विधान का कथन है । जहा भेदनि कौ पलटि पलटि परस्पर लगाइए तहा अक्षसंचार विधान हो है । बहुरि अप्रमत्त का कथन विषै स्वस्थान अर सातिशय दोय भेद कहि, सातिशय अप्रमत्त कै अध करण हो है, ताके स्वरूप वा काल वा परिणाम वा समय-समय संबंधी परिणाम वा एक-एक समय विषै अनुकृष्टि विधान, वा तहां संभवते च्यारि आवश्यक इत्यादिक का विशेष वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ श्रेणी व्यवहार रूप गणित का कथन है । तिसविषै सर्वधन, उत्तरधन, मुख,

भूमि, चय, गच्छ इत्यादि संज्ञानि का स्वरूप वा प्रमाण ल्यावने कौ करणसूत्रनि का वर्णन है । बहुरि अपूर्वकरण का कथन विषे ताके काल, स्वरूप, परिणाम, समय-समय संबंधी परिणामादिक का कथन है । बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषे ताके स्वरूपादिक का कथन है । बहुरि सूक्ष्मसांपराय का कथन विषे प्रसंग पाइ कर्मप्रकृतिनि के अनुभाग अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नाना-गुणहानिनि का अर पूर्वस्पर्द्धक, अपूर्वस्पर्द्धक, बादरकृष्टि, सूक्ष्मकृष्टि का वर्णन है । इत्यादि विशेष कथन है सो जानना । बहुरि उपशांतकषाय, क्षीणकषाय का कथन विषे तिनके दृष्टातपूर्वक स्वरूप का, सयोगी जिन् का कथन विषे नव केवललब्धि आदिक का, अयोगी विषे शैलेश्यपना आदिक का कथन है । ग्यारह गुणस्थाननि विषे गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है । तहा द्रव्य कौ अपकर्षण करि उपरितन स्थिति अर गुणश्रेणी आयाम अर उदयावली विषे जैसे दीजिए है, ताका वा गुणश्रेणी आयाम के प्रमाण का निरूपण है । तहां प्रसंग पाइ अंतर्मुहूर्त के भेदनि का वर्णन है । बहुरि सिद्धनि का वर्णन है ।

बहुरि दूसरा जीवसमास अधिकार विषे — जीवसमास का अर्थ वा होने का विधान कहि चौदह, उगणीस, वा सत्तावन, जीवसमासनि का वर्णन है । बहुरि च्यारि प्रकारि जीवसमास कहि, तहां स्थानभेद विषे एक आदि उगणीस पर्यंत जीवस्थाननि का, वा इन ही के पर्याप्तादि भेद करि स्थाननि का वा अठ्याणवै वा च्यारि सैं छह जीवसमासनि का कथन है । बहुरि योनि भेद विषे शंखावर्तादि तीन प्रकार योनि का, अर सम्मूर्च्छनादि जन्म भेद पूर्वक नव प्रकार योनि के स्वरूप वा स्वामित्व का अर चौरासी लक्ष योनि का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ च्यारि गतिनि विषे सम्मूर्च्छनादि जन्म वा पुरुषादि वेद संभवै, तिनका निरूपण है । बहुरि अवगाहना भेद विषे सूक्ष्मनिगोद अपर्याप्त आदि जीवनि की जघन्य, उत्कृष्ट शरीर की अवगाहना का विशेष वर्णन है । तहा एकेद्रियादिक की उत्कृष्ट अवगाहना कहने का प्रसंग पाइ गोलक्षेत्र, संखक्षेत्र, आयत, चतुरस्रक्षेत्र का क्षेत्रफल करने का, अर अवगाहना विषे प्रदेशनि की वृद्धि जानने के अर्थ अनतभाग आदि चतु स्थानपतित वृद्धि का, अर डम प्रसंग तै दृष्टातपूर्वक षट्स्थानपतित आदि वृद्धि-हानि का, सर्व अवगाहना भेद जानने के अर्थ मत्स्यरचना का वर्णन है । बहुरि कुल भेद विषे एक नौ माटा निष्प्राणवै लाव कोडि कुलनि का वर्णन है ।

बहुरि तीनरा पर्याप्त नामा अधिकार विषे — पहलै मान का वर्णन है । तहा तीनि-अनाधिक मान के भेद कहि । बहुरि द्रव्यमान के दोय भेदनि विषे, सख्या

मान विषै संख्यात, असंख्यात, अनंत के इकईस भेदनि का वर्णन है । बहुरि सख्या के विशेष रूप चौदह धारानि का कथन है । तिनि विषै द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा द्विरूपघनाघनधारानि कै स्थाननि विषै जे पाइए है, तिनका विशेष वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ पण्टी, बादाल, एकट्टी का प्रमाण, अर वर्गशलाका, अर्धच्छेदनि का स्वरूप, वा अविभागप्रतिच्छेद का स्वरूप, वा उक्तम् च गाथानि करि अर्धच्छेदादिक के प्रमाण होने का नियम, वा अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादिकनि का वर्णन है । बहुरि दूसरा उपमा मान के पल्य आदि आठ भेदनि का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ व्यवहारपल्य के रोमनि की संख्या ल्यावने कौ परमाणू तै लगाय अंगुल पर्यंत अनुक्रम का, अर तीन प्रकार अंगुल का, अर जिस जिस अंगुल करि जाका प्रमाण वर्णिए ताका, अर गोलगर्त के क्षेत्रफल ल्यावने का वर्णन है । अर उद्धारपल्य करि द्वीप-समुद्रनि की संख्या ल्याइए है । अद्धारपल्य करि आयु आदि वर्णिए है, ताका वर्णन है । अर सागर की सार्थिक संज्ञा जानने कौ, लवण समुद्र का क्षेत्रफल कौ आदि देकर वर्णन है । अर सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगत्श्रेणी, जगत्-प्रतर, (जगत्घन) लोकनि का प्रमाण ल्यावने कौ विरलन आदि विधान का वर्णन है । बहुरि पल्यादिक की वर्गशलाका अर अर्धच्छेदनि का प्रमाण वर्णन है । तिनिके प्रमाण जानने कौ उक्तम् च गाथा रूप करणसूत्रनि का कथन है । बहुरि पीछै पर्याप्ति प्ररूपणा है । तहां पर्याप्ति, अपर्याप्ति के लक्षण का, अर छह पर्याप्तिनि के नाम का, स्वरूप का, प्रारंभ संपूर्ण होने के काल का, स्वामित्व का वर्णन है । बहुरि लब्धिअपर्याप्ति का लक्षण, वा ताके निरंतर क्षुद्रभवनि के प्रमाणादिक का वर्णन है । तहां ही प्रसंग पाइ प्रमाण, फल, इच्छारूप त्रैराशिक गणित का कथन है । बहुरि सयोगी जिन कै अपर्याप्तपना संभवने का, अर लब्धि अपर्याप्ति, निर्वृति अपर्याप्ति, पर्याप्ति के संभवते गुणस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि चौथा प्राणाधिकार विषै - प्राणनि का लक्षण, अर भेद, अर कारण अर स्वामित्व का कथन है ।

बहुरि पाँचमां संज्ञा अधिकार विषै - च्यारि संज्ञानि का स्वरूप, अर भेद, अर कारण, अर स्वामित्व का वर्णन है ।

बहुरि छठ्ठा मार्गणा महा अधिकार विषै - मार्गणा की निरुक्ति का, अर चौदह भेदनि का, अर सांतर मार्गणा के अंतराल का, अर प्रसंग पाइ तत्त्वार्थसूत्र टीका के अनुसारि नाना जीव, एक जीव अपेक्षा गुणस्थाननि विषै, अर गुणस्थान

अपेक्षा लिए मार्गणानि विषे काल का, अर अंतर का कथन करि छद्वा गति मार्गणा अधिकार है । तहां गति के लक्षण का, अर भेदनि का अर च्यारि भेदनि के निर्गत्ति लिए लक्षणानि का, अर पाँच प्रकार तिर्यच, च्यारि प्रकार मनुष्यनि का अर निद्रनि का वर्णन है । बहुरि सामान्य नारकी, जुदे-जुदे सात पृथ्वीनि के नारकी, अर पाँच प्रकार तिर्यच, च्यारि प्रकार मनुष्य, अर व्यंतर, ज्योतिपी, भवनवागी, नाधर्मादिक देव, सामान्य देवराशि इन जीवनि की संख्या का वर्णन है । तहां पर्याप्त मनुष्यनि की संख्या कहने का प्रसंग पाइ “कटपयपुरस्थवर्ण” इत्यादि सूत्र करि तत्कारादि अक्षररूप अंक वा बिंदी की संख्या का वर्णन है ।

बहुरि सातमां इंद्रियमार्गणा अधिकार विषे — इंद्रियनि का निर्गत्ति लिए लक्षण का, अर-लब्धि उपयोगरूप भावेन्द्रिय का, अर बाह्य अभ्यन्तर भेद लिए निवृत्ति-उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय का, अर इन्द्रियनि के स्वामी का, अर तिनके विषयभूत क्षेत्र का, अर तहां प्रसंग पाइ सूर्य के चार क्षेत्रादिक का अर इंद्रियनि के आकार का वा अवगाहना का, अर अतीन्द्रिय जीवनि का वर्णन है । बहुरि एकेन्द्रियादिकनि का उदाहरण रूप नाम कहि, तिनकी सामान्य संख्या का वर्णन करि, विज्ञेयपने सामान्य एकेन्द्री, अर सूक्ष्म वादर एकेन्द्री, बहुरि सामान्य त्रस, अर वेडन्द्रिय, तेडन्द्रिय, चौइन्द्रिय, पचेन्द्रिय इन जीवनि का प्रमाण, अर इन विषे पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि आठमां कायमार्गणा अधिकार विषे — काय के लक्षण का वा भेदनि का वर्णन है । बहुरि पंच स्थावरनि के नाम, अर काय, कायिक जीवरूप भेद, अर वादर, सूक्ष्मपने का लक्षणादि, अर शरीर की अवगाहना का वर्णन है ।

बहुरि वनस्पती के साधारण-प्रत्येक भेदनि का, प्रत्येक के सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित भेदनि का, अर तिनकी अवगाहना का अर एक स्कध विषे तिनके शरीरनि के प्रमाण का, अर योनीभूत बीज विषे जीव उपजने का, वा तहां सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित होने के काल का, अर प्रत्येक वनस्पती विषे सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित जानने का तिनके लक्षण का, बहुरि साधारण वनस्पती निगोदरूप तहां जीवनि के उपजने, पर्याप्ति धरने, मरने के विधान का, अर निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति का, अर स्कध, अंडर, पुलवी, आवास, देह, जीव इनके लक्षण प्रमाणादिक का अर नित्यनिगोदादि के स्वरूप का वर्णन है । बहुरि त्रस जीवनि का अर तिनके क्षेत्र का वर्णन है । बहुरि वनस्पतीवत् औरनि के शरीर विषे सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठितपने का, अर स्थावर, त्रस

जीवनि के आकार का, अर काय सहित, काय रहित जीवनि का वर्णन है । बहुरि अग्नि, पृथ्वी, अप्, वात, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक-साधारण वनस्पती जीवनि की, अर तिनविषै सूक्ष्म-बादर जीवनि की, अर तिनविषै भी पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की संख्या का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ पृथ्वी आदि जीवनि की उत्कृष्ट आयु का वर्णन है । बहुरि त्रस जीवनि की, अर तिनविषै पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की संख्या का वर्णन है । बहुरि बादर अग्निकायिक आदि की संख्या का विशेष निर्णय करने के अर्थ तिनके अर्धच्छेदादिक का, अर प्रसंग पाइ “दिण्णछेदेणवहिद” इत्यादिक करणसूत्र का वर्णन है ।

बहुरि नवमां योगमार्गणा अधिकार विषै — योग के सामान्य लक्षण का अर सत्य आदि च्यारि-च्यारि प्रकार मन, वचन योग का वर्णन है । तहां सत्य वचन का विशेष जानने कौ दश प्रकार सत्य का, अर अनुभय वचन का विशेष जानने कौ आमंत्रणी आदि भाषानि का, अर सत्यादिक भेद होने के कारण का, अर केवली के मन, वचन योग संभवने का अर द्रव्य मन के आकार का इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि काय योग के सात भेदनि का वर्णन है । तहां औदारिकादिकनि के निरुक्ति पूर्वक लक्षण का, अर मिश्रयोग होने के विधान का, अर आहारक शरीर होने के विशेष का, अर कार्माणयोग के काल का विशेष वर्णन है । बहुरि युगपत् योगनि की प्रवृत्ति होने का विधान वर्णन है । अर योग रहित आत्मा का वर्णन है । बहुरि पंच शरीरनि विषै कर्म-नोकर्म भेद का, अर पंच शरीरनि की वर्गणा वा समय प्रबद्ध विषै परमाणुनि का प्रमाण वा क्रम तै सूक्ष्मपना वा तिनकी अवगाहना का वर्णन है । बहुरि विस्रसोपचय का स्वरूप वा तिनकी परमाणुनि के प्रमाण का वर्णन है । बहुरि कर्म-नोकर्म का उत्कृष्ट संचय होने का काल वा सामग्री का वर्णन है । बहुरि औदारिक आदि पंच शरीरनि का द्रव्य तौ समय प्रबद्धमात्र कहि । तिनकी उत्कृष्ट स्थिति, अर तहाँ सभवती गुणहानि, नाना गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दो गुणहानि का स्वरूप प्रमाण कहि, करणसूत्रादिक तै तहा चयादिक का प्रमाण ल्याय समय-समय संबंधी निषेकनि का प्रमाण कहि, एक समय विषै केते परमाणु उदयरूप होइ निर्जरै, केते सत्ता विषै अवशेष रहै, ताके जानने कौ अकसंदृष्टि की अपेक्षा लिये त्रिकोण यत्र का कथन है । बहुरि वैक्रियिकादिकनि का उत्कृष्ट सचय कौनकै कैसे होइ सो वर्णन है । बहुरि योगमार्गणा विषै जीवनि की संख्या का वर्णन विषै वैक्रियिक शक्ति करि संयुक्त बादर पर्याप्त अग्निकायिक, वातकायिक अर पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यच, मनुष्यनि के प्रमाण का, अर भोगभूमियां आदि

जीवनि कै पृथक् विक्रिया, अर औरनि कै अपृथक् विक्रिया हो है, ताका कथन है । वहुरि त्रियोगी, द्वियोगी, एकयोगी जीवनि का प्रमाण कहि त्रियोगीनि विषे आठ प्रकार मन-वचनयोगी अर काययोगी जीवनि का, अर द्वियोगीनि विषे वचन-काययोगीनि का प्रमाण वर्णन है । तहा प्रसंग पाइ सत्यमनोयोगादि वा सामान्य मन-वचन-काय योगनि के काल का वर्णन है । वहुरि काययोगीनि विषे सात प्रकार काययोगीनि का जुदा-जुदा प्रमाण वर्णन है । तहा प्रसंग पाइ औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण के काल का, वा व्यंतरनि विषे सोपक्रम, अनुपक्रम काल का वर्णन है । वहुरि यहु कथन है (जो) जीवनि की संख्या उत्कृष्टपत्तै युगपत् होने की अपेक्षा कही है ।

वहुरि दशवां वेदमार्गणा अधिकार विषे — भाव-द्रव्यवेद होने के विधान का, अर तिनके लक्षण का, अर भाव-द्रव्यवेद समान वा असमान हो है ताका, अर वेदनि का कारण दिखाई ब्रह्मचर्य अगीकार करने का अर तीनों वेदनि का निरुक्ति लिये लक्षण का, अर अवेदी जीवनि का वर्णन है । वहुरि तहां संख्या का वर्णन विषे देव राशि कही । तहा स्त्री-पुरुषवेदीनि का, अर तिर्यचनि विषे द्रव्य-स्त्री आदि का प्रमाण कहि समस्त पुरुष, स्त्री, नपुसकवेदीनि का प्रमाण वर्णन है । वहुरि सैनी पचेन्द्री गर्भज, नपुसकवेदी इत्यादिक ग्यारह स्थाननि विषे जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

वहुरि ग्यारहवां कषायमार्गणा अधिकार विषे — कषाय का निरुक्ति लिये लक्षण का, वा सम्यक्त्वादिक घातने रूप दूसरे अर्थ विषे अनन्तानुवधी आदि का निरुक्ति लिए लक्षण का वर्णन है । वहुरि कषायनि के एक, च्यारि, सोलह, असख्यात लोकमात्र भेद कहि क्रोधादिक की उत्कृष्टादि च्यारि प्रकार शक्तिनि का दृष्टांत वा फल की मुख्यता करि वर्णन है । वहुरि पर्याय धरने के पहलै समय कषाय होने का नियम है वा नाही है सो वर्णन है । वहुरि अकषाय जीवनि का वर्णन है । वहुरि क्रोधादिक के शक्ति अपेक्षा च्यार, लेण्या अपेक्षा चौदह, आयुबंध अर अवंध अपेक्षा बीस भेद हैं, तिनका अर सर्व कषायस्थाननि का प्रमाण कहि तिन भेदनि विषे जेते-जेते स्थान संभवै तिनका वर्णन है । वहुरि इहा जीवनि की संख्या का वर्णन विषे नारकी, देव, मनुष्य, तिर्यच गति विषे जुदा-जुदा क्रोधी आदि जीवनि का प्रमाण वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ तिन गतिनि विषे क्रोधादिक का काल वर्णन है ।

वहुरि बारहवां ज्ञानमार्गणा अधिकार विषे — ज्ञान का निरुक्ति पूर्वक लक्षण कहि, ताके पंच भेदनि का अर क्षयोपशम के स्वरूप का वर्णन है । वहुरि तीन मिथ्या ज्ञाननि का, अर मिश्र ज्ञाननि का अर तीन कुज्ञाननि के परिणामन के उदाहरण का



वर्णन है । बहुरि मतिज्ञान का वर्णन विषै याके नामांतरका, अर इन्द्रिय-मन तै उपजने का अर तहा अवग्रहादि होने का, अर व्यंजन-अर्थ के स्वरूप का, अर व्यंजन विषै नेत्र, मन वा ईहादिक न पाइए ताका, अर पहले दर्शन होइ पीछै अवग्रहादि होने के क्रम का अर अवग्रहादिकनि के स्वरूप का, अर अर्थ-व्यंजन के विषयभूत बहु, बहुविध आदि बारह भेदनि का, तहां अनिसृति विषै च्यारि प्रकार परोक्ष प्रमाण गर्भितपना आदि का, अर मतिज्ञान के एक, च्यारि, चौबीस, अठ्ठाईस अर इनतै बारह गुणे भेदनि का वर्णन है । बहुरि श्रुतज्ञान का वर्णन विषै श्रुतज्ञान का लक्षण निरुक्ति आदि का, अर अक्षर-अनक्षर रूप श्रुतज्ञान के उदाहरण वा भेद वा प्रमाण का वर्णन है । बहुरि भाव श्रुतज्ञान अपेक्षा बीस भेदनि का वर्णन है । तहां पहिला जघन्यरूप पर्याय ज्ञान का वर्णन विषै ताके स्वरूप का, अर तिसका आवरण जैसै उदय हो है ताका, अर यहु जाकै हो है ताका, अर याका दूसरा नाम लब्धि अक्षर है, ताका वर्णन है । अर पर्यायसमास ज्ञान का वर्णन विषै षट्स्थानपतित वृद्धि का वर्णन है । तहा जघन्य ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कहि । अर अनंतादिक का प्रमाण अर अनंत भागादिक की सहनानी कहि, जैसै अनंतभागादिक षट्स्थानपतित वृद्धि हो है, ताके क्रम का यंत्र द्वार तै वर्णन करि अनंत भागादि वृद्धिरूप स्थाननि विषै अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण ल्यावने कौ प्रक्षेपक आदि का विधान, अर तहा प्रसंग पाइ एक बार, दोय बार, आदि संकलन धन ल्यावने का विधान, अर साधिक जघन्य जहां दूणा हो है, ताका विधान, अर पर्याय समास विषै अनंतभाग आदि वृद्धि होने का प्रमाण इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि अक्षर आदि अठारह भेदनि का क्रम तै वर्णन है । तहां अर्थाक्षर के स्वरूप का, अर तीन प्रकार अक्षरनि का अर शास्त्र के विषयभूत भावनि के प्रमाण का, अर तीन प्रकार पदनि का अर चौदह पूर्वनि विषै वस्तु वा प्राभूत नामा अधिकारनि के प्रमाण का इत्यादि वर्णन है । बहुरि बीस भेदनि विषै अक्षर, अनक्षर श्रुतज्ञान के अठारह, दोय भेदनि का अर पर्यायज्ञानादि की निरुक्ति लिए स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि द्रव्यश्रुत का वर्णन विषै द्वादशांग के पदनि की अर प्रकीर्णक के अक्षरनि की संख्यानि का, बहुरि चौसठ मूल अक्षरनि की प्रक्रिया का, अर अपुनरुक्त सर्व अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषै प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगनि करि तिस प्रमाण ल्यावने का विधान अर सर्व श्रुत के अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषै अंगनि के पद अर प्रकीर्णकनि के अक्षरनि के प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादि वर्णन है । बहुरि आचारांग आदि ग्यारह अंग, अर दृष्टिवाद अंग के पांच भेद, तिनमें परिकर्म के पांच

भेद, तहां मूत्र अर प्रथमानुयोग का एक-एक भेद, अर पूर्वगत के चौदह भेद, चूनि का के पांच भेद, इन सबनि के जुदा-जुदा पदनि का प्रमाण अर उन विषे जां-जो व्याख्यान पाइए, ताकी सूचनिका का कथन है । तहां प्रसंग पाड तीर्थकर की दिव्यध्वनि होने का विधान, अर वर्तमान स्वामी के समय दण-दण जीव अंतःकृत केवली अर अनुत्तरगामी भए तिनकानाम अर तीन सी तिरेसठि कुवाडनि के धारकनि विषे केई कुवादीनि के नाम अर सुप्त संग का विधान, अर अक्षरनि के स्थान-प्रयत्नादिक, अर ब्रह्म भाषा अर आत्मा के जीवादि विषेपण इत्यादि बने कथन हैं । बहुरि सामान्यिक आदि चौदह प्रकीर्णकनि का स्वरूप वर्णन है । बहुरि श्रुतज्ञान की महिमा का वर्णन है ।

// बहुरि अवविज्ञान का वर्णन विषे निरुक्ति पूर्वक स्वरूप कहि, ताके भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय भेदनि का, अर ते भेद कानके होय, कान आत्मप्रदेणनि ते उपजै ताका, अर तहां गुणप्रत्यय, के छह भेदनि का, तिनविषे अनुगामी, अननुगामी के तीन-तीन भेदनि का वर्णन है । बहुरि सामान्यपनै अववि के देशावधि, परमावधि, सर्वावधि भेदनि का, अर तिन विषे भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय के संभवपने का, अर ए कानके होड-ताका, अर नहा प्रतिपार्ती, अप्रतिपार्ती, विषेप का, अर इनके भेदनि के प्रमाण का, वर्णन है । बहुरि जघन्य देशावधि का विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा द्वितीयादि उत्कृष्ट पर्यंत क्रम ते भेद होने का विधान, अर तहां द्रव्यादिक के प्रमाण का अर सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है । तहा प्रसंग पाड ब्रह्महार, वर्ग, वर्गणा, गुणकार इत्यादिक का अनेक वर्णन है । अर तहां ही क्षेत्र-काल अपेक्षा तिस देशावधि के उगणीम कांडकनि का वर्णन है ।

बहुरि परमावधि के विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जघन्य ते उत्कृष्ट पर्यंत क्रम ते भेद होने का विधान, वा तहां द्रव्यादिक का प्रमाण वा सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है । तहां प्रसंग पाड संकलित वन ल्यावने का अर “द्विच्छिदरासिच्छेदं” इत्यादि दाय करणमूत्रनि का आदि अनेक वर्णन है ।

बहुरि सर्वावधि अभेद है । ताके विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है । बहुरि जघन्य देशावधि ते सर्वावधि पर्यंत द्रव्य अर भाव अपेक्षा भेदनि की समानता का वर्णन है । बहुरि नरक विषे अवधि का वा ताके विषयभूत क्षेत्र का, अर मनुष्य, तिर्यच विषे जघन्य-उत्कृष्ट अवधि होने का, अर देव विषे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिर्पानि के अवधिगोचर क्षेत्रकाल का, सौधमादि द्विकनि विषे क्षेत्रादिक का, वा द्रव्य का भी वर्णन है ।

बहुरि मनःपर्ययज्ञान का वर्णन विषै ताके स्वरूप का, अर दोय भेदनि का अर तहां ऋजुमति तीन प्रकार, विपुलमति छह प्रकार ताका, अर मनःपर्यय जहातै उपजै है अर जिनकै हो है ताका, अर दोय भेदनि विषै विशेष है ताका, अर जीव करि चितया हुवा द्रव्यादिक कौ जानै ताका, अर ऋजुमति का विषयभूत द्रव्य का अर मनःपर्यय संबंधी ध्रुवहार का, अर विपुलमति के जघन्य तै उत्कृष्ट पर्यन्त द्रव्य अपेक्षा भेद होने का विधान, वा भेदनि का प्रमाण, वा द्रव्य का प्रमाण कहि, जघन्य उत्कृष्ट क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है ।

बहुरि केवलज्ञान सर्वज्ञ है, ताका वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की संख्या का वर्णन विषै मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञानी का अर च्यारो गति संबंधी विभंगज्ञानीनि का, अर कुमति-कुश्रुत-ज्ञानीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि तेरहवां संयममार्गणा अधिकार विषै — ताके स्वरूप का, अर संयम के भेद के निमित्त का वर्णन है । बहुरि संयम के भेदनि का स्वरूप वर्णन है । तहा परिहारविशुद्धि का विशेष, अर ग्यारह प्रतिमा, अट्टाईस विषय इत्यादिक का वर्णन है । बहुरि इहां जीवनि को संख्या का वर्णन विषै सामायिक, छेदोपस्थापन, परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्मसापराय, यथाख्यात संयमधारी, अर संयतासंयत, अर असयत जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि चौदहवां दर्शनमार्गणा अधिकार विषै — ताके स्वरूप का, अर दर्शन भेदनि के स्वरूप का वर्णन है । बहुरि इहा जीवनि की संख्या का वर्णन विषै शक्ति चक्षुर्दर्शनी, व्यक्त चक्षुर्दर्शनीनि का अर अवधि, केवल, अचक्षुर्दर्शनीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि पंद्रहवां लेश्यामार्गणा अधिकार विषै — द्रव्य, भाव करि दोय प्रकार लेश्या कहि, भावलेश्या का निरुक्ति लिए लक्षण अर ताकरि बध होने का वर्णन है । बहुरि सोलह अधिकारनि के नाम है । बहुरि निर्देशाधिकार विषै छह लेश्यानि के नाम है । अर वर्णाधिकार विषै द्रव्य लेश्यानि के कारण का, अर लक्षण का, अर छहो द्रव्य लेश्यानि के वर्ण का दृष्टात का, अर जिनकै जो-जो द्रव्य लेश्या पाइए, ताका व्याख्यान है । बहुरि प्रमाणाधिकार विषै कषायनि के उदयस्थाननि विषै संक्लेशविशुद्धि स्थाननि के प्रमाण का, अर तिनविषै भी कृष्णादि लेश्यानि के स्थाननि के प्रमाण का, अर सक्लेशविशुद्धि की हानि, वृद्धि तै अशुभ, शुभलेश्या होने के

अनुक्रम का वर्णन है । बहुरि सक्रमणाधिकार विषै स्वस्थान-परस्थान सक्रमण कहि सकलेशविशुद्धि का वृद्धि-हानि तै जैसै सक्रमण हो है ताका, अर सकलेशविशुद्धि विषै जैसै लेश्या के स्थान होइ, अर तहा जैसै षट्स्थानपतित वृद्धि-हानि संभवै, ताका वर्णन है । बहुरि कर्माधिकार विषै छहो लेश्यावाले कार्य विषै जैसै प्रवर्तै, ताके उदाहरण का वर्णन है । बहुरि लक्षणाधिकार विषै छहो लेश्यावालेनि का लक्षण वर्णन है ।

बहुरि गति अधिकार विषै लेश्यानि के छब्बीस अश, तिनविषै आठ मध्यम अंश आयुबंध कौ कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषै होइ, तिन अपकर्षनि का उदाहरणपूर्वक स्वरूप का अर तिनविषै आयु न बंधै तौ जहा बंधै ताका, अर सोप-क्रमायुष्क, निरुपक्रमायुष्क, जीवनि कै अपकर्षणरूप काल का, वा तहां आयु वधने का विधान वा गति आदि विशेष का, अर अपकर्षनि विषै आयु वधनेवाले जीवनि के प्रमाण का वर्णन करि पीछे लेश्यानि के अठारह अशनि विषै जिस-जिस अश विषै मरण भए, जिस-जिस स्थान विषै उपजै ताका वर्णन है ।

बहुरि स्वामी अधिकार विषै भाव लेश्या की अपेक्षा सात नरकनि के नारकीनि विषै, अर मनुष्य-तिर्यच विषै, तहा भी एकेद्रिय-विकलत्रय विषै, असैनी पचेद्रिय विषै लब्धि अपर्याप्तक तिर्यच-मनुष्य विषै, अपर्याप्तक तिर्यच-मनुष्य-भवनत्रिकदेव सासादन वालों विषै, पर्याप्त-अपर्याप्त भोगभूमियां विषै, मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानिनि विषै, पर्याप्त भवनत्रिक-सीवर्मादिक आदि देवनि विषै जो-जो लेश्या पाइए ताका वर्णन है । तहा असैनी के लेश्यानिमित्त तै गति विषै उपजने का आदि विशेष कथन है ।

बहुरि साधन अधिकार विषै द्रव्य लेश्या अर भाव लेश्यानि के कारण का वर्णन है ।

बहुरि सख्याधिकार विषै द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, मान करि कृष्णादि लेश्या-वाले जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषै सामान्यपने स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद अपेक्षा, दिनेपपने दोय प्रकार स्वस्थान, सात प्रकार समुद्घात, एक उपपाद इन दश स्थाननि विषै नभवतै न्याननि की अपेक्षा कृष्णादि लेश्यानि का (स्थान वर्णन कहिए) क्षेत्र वर्णन है । तहा प्रसंग पाठ विवक्षित लेश्या विषै संभवतै स्थान, तिन विषै जीवनि के प्रमाण का, तिन न्याननि विषै क्षेत्र के प्रमाण का, समुद्घातादिक के विधान का, क्षेत्रादिक का, मरने वाले आदि देवनि के प्रमाण का, केवल समुद्घात विषै उत्पत्त्यादिक का, तहा लोक के क्षेत्रफल का इत्यादिक का वर्णन है ।

बहुरि स्पर्शाधिकार विषै पूर्वोक्त सामान्य-विशेषपनै करि लेश्यानि का तीन काल संबंधी क्षेत्र का वर्णन है । तहाँ प्रसंग पाइ मेरु तै सहस्रार पर्यंत सर्वत्र पवन के सद्भाव का, अर जंबूद्वीप समान लवणसमुद्र के खंड, लवणसमुद्र के समान अन्य समुद्र के खंड करने के विधान का, अर जलचर रहित समुद्रनि का मिलाया हुआ क्षेत्रफल के प्रमाण का, अर देवादिक के उपजने, गमन करने का इत्यादि वर्णन है ।

बहुरि काल अधिकार विषै कृष्णादि लेश्या जितने काल रहै ताका वर्णन है ।

बहुरि अंतराधिकार विषै कृष्णादि लेश्या का जघन्य, उत्कृष्ट जितने काल-अभाव रहै, ताका वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ एकेद्री, विकलेद्री विषै उत्कृष्ट रहने के काल का वर्णन है ।

बहुरि भावाधिकार विषै छहौ लेश्यानि विषै औदयिक भाव के सद्भाव का वर्णन है ।

बहुरि अल्पबहुत्व अधिकार विषै संख्या के अनुसारि लेश्यानि विषै परस्पर अल्प-बहुत्व का व्याख्यान है, ऐसे सोलह अधिकार कहि लेश्या रहित जीवनि का व्याख्यान है ।

बहुरि सोलहवां भव्यमार्गणा अधिकार विषै - दोय प्रकार भव्य अर अभव्य अर भव्य-अभव्यपना करि रहित जीवनि का स्वरूप वर्णन है । बहुरि इहां संख्या का कथन विषै भव्य-अभव्य जीवनि का प्रमाण वर्णन है । बहुरि इहां प्रसंग पाइ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भावरूप पंचपरिवर्तननि के स्वरूप का, वा जैसे क्रम तै परिवर्तन हो है ताका, अर परिवर्तननि के काल का, अनादि तै जेते परिवर्तन भए, तिनके प्रमाण का वर्णन है । तहां गृहीतादि पुद्गलनि के स्वरूप सदृष्टि का, वा योग स्थान आदिकनि का वर्णन पाइए है ।

बहुरि सत्तरहवां सम्यक्त्वमार्गणा अधिकार विषै - सम्यक्त्व के स्वरूप का, अर सराग-वीतराग के भेदनि का अर षट् द्रव्य, नव पदार्थनि के श्रद्धानरूप लक्षण का वर्णन है । बहुरि षट् द्रव्य का वर्णन विषै सात अधिकारनि का कथन है ।

तहा नाम अधिकार विषै द्रव्य के एक वा दोय भेद का, अर जीव-अजीव के दोय-दोय भेदनि का, अर तहा पुद्गल का निरुक्ति लिए लक्षण का, पुद्गल परमाणु के आकार का वर्णनपूर्वक रूपी-अरूपी अजीव द्रव्य का कथन है ।

बहुरि उपलक्षणानुवादाधिकार विषै छहो द्रव्यनि के लक्षणनि का वर्णन है । तहां गति आदि क्रिया जीव-पुद्गल कै है, ताका कारण धर्मादिक है, ताका दृष्टात-

पूर्वक वर्णन है । अर वर्तनाहेतुत्व काल के लक्षण का दृष्टान्तपूर्वक वर्णन है । अर मुख्य काल के निश्चय होने का, काल के धर्मादिक की कारणपने का, समय, आवली आदि व्यवहारकाल के भेदनि का, तथा प्रसंग पाइ प्रदेश के प्रमाण का, वा अंतर्मुहूर्त के भेदनि का, वा व्यवहारकाल जानने की निमित्त का, व्यवहारकाल के अतोत, अनागत, वर्तमान भेदनि के प्रमाण का, वा व्यवहार निश्चय काल के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि स्थिति अधिकार विषे सर्व अपने पर्यायनि का समुदायरूप अवस्थान का वर्णन है ।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषे जीवादिक जितना क्षेत्र रोकै, ताका वर्णन है । तथा प्रसंग पाइ तीन प्रकार आधार वा जीव के समुद्धातादि क्षेत्र का वा संकोच विस्तार शक्ति का वा पुद्गलादिकनि की अवगाहन शक्ति का वा लोकालोक के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि संख्याधिकार विषे जीव द्रव्यादिक का वा तिनके प्रदेशनि का, वा व्यवहार काल के प्रमाण का, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव मान करि वर्णन है ।

बहुरि स्थान स्वरूपाधिकार विषे (द्रव्यनि का वा ) द्रव्य के प्रदेशनि का चन, अचलपने का वर्णन है । बहुरि अणुवर्गणा आदि तेईस पुद्गल वर्गणानि का वर्णन है । तहां तिन वर्गणानि विषे जेती-जेती परमाणू पाइए, ताका आहारादिक वर्गणा तै जो-जो कार्य निपजै है ताका जघन्य, उत्कृष्ट, प्रत्येकादि वर्गणा जहां पाइए ताका, महास्कव वर्गणा के स्वरूप का, अणुवर्गणा आदि का वर्गणा लोक विषे जितनी जितनी पाइए ताका इत्यादि का वर्णन है । बहुरि पुद्गल के स्थूल-स्थूल आदि छह भेदनि का, वा स्कंध, प्रदेश, देश इन तीन भेदनि का वर्णन है ।

बहुरि फल अधिकार विषे धर्मादिक का गति आदि साधनरूप उपकार, जीवनि के परस्पर उपकार, पुद्गलनि का कर्मादिक वा सुखादिक उपकार, तिनका प्रशानरादिक लिए वर्णन है । तथा प्रसंग पाइ कर्मादिक पुद्गल ही है ताका, अर कर्मादिक जिम-जिम पुद्गल वर्गणा तै निपजै है ताका, अर स्निग्ध-रूक्ष के गुणनि के अज्ञनि करि जैन पुद्गल का संबन्ध हो है, ताका वर्णन है । असे पट् द्रव्य का वर्णन करि नहा काल त्रिना पंचास्तिकाय हैं, ताका वर्णन है । बहुरि नव पदार्थनि का वर्णन विषे जीव-अजीव का ती पट् द्रव्यनि विषे वर्णन भया । बहुरि पाप जीव पुद्गल जीवनि का वर्णन है । तथा प्रसंग पाइ चौदह गुण-स्थाननि विषे जीवनि का

स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषे सामान्य सत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन करि विशेष वर्णन विषे मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषे जेते स्थान वा भंग पाइए तिनकी कहि जुदा-जुदा कथन विषे तिनका विधान वा प्रकृति घटने, बधने, बदलने के विशेष का बद्धायु-अबद्धायु अपेक्षा वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ मिथ्यादृष्टि विषे तीर्थकर सत्तावाले के नरकायु ही का सत्त्व होइ ताका, वा एकेद्रियादिक के उद्वेलना का अर सासादन विषे आहार सत्ता के विशेष का, मिश्र विषे अनंतानुबंधीरहित सत्त्वस्थान जैसे संभव ताका, असयत विषे मनुष्यायु-तीर्थकर सहित एक सौ अड़तीस प्रकृति की सत्तावाले के दोय वा तीन ही कल्याणक होइ ताका, अपूर्वकरणादि विषे उपशमक-क्षपक श्रेणी अपेक्षा का इत्यादि अनेक वर्णन है । बहुरि आचार्यनि के मतकरि जो विशेष है ताकी कहि तिस अपेक्षा कथन है ।

बहुरि चौथा त्रिचूलिका नामा अधिकार है । तहां प्रथम नव प्रश्नकरि चूलिका का व्याख्यान है । तिसविषे पहिले तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषे जिन प्रकृतिनि की उदयव्युच्छित्ति ते पहिले बंधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति ते पीछे बंधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति-बंधव्युच्छित्ति युगपत् भई तिनका वर्णन है । बहुरि दूसरा — तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषे जिनका अपना उदय होते ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अन्य प्रकृतिनि का उदय होते ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अपना वा अन्य प्रकृतिनि का उदय होते बंध होय तिन प्रकृतिनि का वर्णन है । बहुरि तीसरा — तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषे जिनका निरन्तर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर वा निरंतर बंध होइ तिनका कथन है । इहां तीर्थकरादि प्रकृति निरंतर बंधी जैसे है ताका, अर सप्रतिपक्ष-नि प्रतिपक्ष अवस्था विषे सांतर-निरंतर बंध जैसे संभव है ताका वर्णन है ।

बहुरि दूसरी पंचभागहारचूलिका का व्याख्यान विषे मंगलाचरणकरि उद्वेलन, विध्यात, अवःप्रवृत्त, गुणसंक्रम, सर्वसंक्रम — इन पंच भागहारनि के नाम का, अर स्वरूप का, अर ते भागहार जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषे वा गुणस्थाननि विषे संभव ताका वर्णन है । अर सर्वसंक्रमभागहार, गुणसंक्रमभागहार, उत्कर्षण वा अपकर्षणभागहार, अवःप्रवृत्तभागहार, योगनि विषे गुणकार, स्थिति विषे नानागुणहानि, पुल्य के अर्थछेद, पुन्य का वर्गमूल, स्थिति विषे गुणहानि-आयाम, स्थिति विषे अन्योन्याभ्यस्त गति, पुन्य, कर्म की उत्कृष्ट स्थिति, विध्यातसंक्रमभागहार, उद्वेलनभागहार,

अनुभाग विषे नानागुणहानि, गुणहानि, द्वयर्द्धगुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनका प्रमाणपूर्वक अल्पबहुत्व का कथन है ।

बहुरि तीसरी दशकरणचूलिका का व्याख्यान विषे बंध, उत्कर्षण, सक्रम, अपकर्षण, उदीर्णा, सत्त्व, उदय, उपशम, निधत्ति, निःकाचना — इन दशकरणानि के नाम का, स्वरूप का, जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषे वा गुणस्थाननि विषे जैसें संभवै तिनका वर्णन है ।

बहुरि पांचवां बंध-उदय-सत्त्वसहित स्थानसमुत्कीर्तन नामा अधिकार विषे मंगलाचरण करि एक जीव कैं युगपत् सभवतां बंधादिक प्रकृतिनि का प्रमाणरूप स्थान वा तहा प्रकृति बदलने करि भये भंगनि का वर्णन है । तहां मूल प्रकृतिनि के बंधस्थाननि का, अर तहां संभवते भुजाकारादि बध विशेष का, अर भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्यरूप बंध विशेषनि के स्वरूप का, अर मूल प्रकृतिनि कै उदयस्थान, उदीर्णास्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है । बहुरि उत्तर प्रकृतिनि का कथन विषे दर्शनावरण, मोहनीय, नाम की प्रकृतिनि विषे विशेष है ।

तहां दर्शनावरण के बधस्थाननि का, अर तहां गुणस्थान अपेक्षा भुजाकारादि विशेष संभवने का, अर दर्शनावरण के गुणस्थाननि विषे संभवते बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि मोहनीय के बधस्थाननि का, अर ते गुणस्थाननि विषे जैसें सभवै ताका, अर तहां प्रकृतिनि के नाम जानने कौं ध्रुवबंधी प्रकृति, वा कूटरचना आदिक का, अर तहां प्रकृति बदलने तै भए भगनि का, अर तिन बधस्थाननि विषे संभवते भुजाकारादि विशेषनि का, वा भुजाकारादिक के लक्षण का, वा सामान्य-अवक्तव्य भंगनि की सख्या का, अर भुजाकारादि संभवने के विधान का, अर इहा प्रसंग पाइ गुणस्थाननि विषे चढना, उतरना इत्यादि विशेषनि का वर्णन है । बहुरि मोह के उदयस्थाननि का, अर गुणस्थाननि विषे संभवता दर्शनमोह का उदय कहि तहां संभवते मोह के उदयस्थाननि का, अर तहां प्रकृत्यादि के जानने कू कूटरचना आदि का, अर तहां प्रकृति बदलने तै भए भगनि का, अर अनिवृत्तिकरण विषे वेदादिक के उदयकालादिक का, अर सर्वमोह के उदयस्थान, अर तिनकी प्रकृतिनि का विधान, वा संख्या वा मिलाई हुई संख्या का, अर गुणस्थाननि विषे संभवते उपयोग, योग, संयम, लेश्या, सम्यक्त्व तिनकी अपेक्षा मोह के उदयस्थाननि का, वा तिनकी प्रकृतिनि



का विधान, सख्या आदिक का, तथा अनंतानुबन्धी रहित उदयस्थान मिथ्यादृष्टि की अपर्याप्त-अवस्था में न पाइए इत्यादि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि मोह के सत्त्वस्थाननि का वा तथा प्रकृति घटने का, अर ते स्थान गुणस्थाननि विषे जैसे संभवै ताका, अर अनिवृत्तिकरण विषे विशेष है ताका वर्णन है ।

बहुरि नामकर्म का कथन विषे आधारभूत इकतालीस जीवपद, चांतीस कर्मपदनि का व्याख्यान करि नाम के बंधस्थाननि का अर ते गुणस्थाननि विषे जैसे संभवै ताका, अर ते जिस-जिस कर्मपदसहित बंध है ताका, अर तिनविषे क्रम ते नवध्रुवबंधी आदि प्रकृतिनि के नाम का, अर तेइस के नै आदि दै करि नाम के बंधस्थाननि विषे जे-जे प्रकृति जैसे पाइए ताका, अर तहां प्रकृति बदलने ते भए भंगनि का वर्णन है । अर इहां प्रसंग पाइ जीव मरि जहां उपजै ताका वर्णन विषे प्रथमादि पृथ्वी नारकी मरि जहां उपजै वा न उपजै ताका, तथा प्रसंग पाइ स्वयंभू-रमण-समुद्रपरै कूणानि विषे कर्मभूमिया तिर्यंच है इत्यादि विशेष का, अर वादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त अग्निकायिक आदि जीव जहां उपजै ताका, तथा सूक्ष्मनिगोद ते आए मनुष्य सकल समय न ग्रहै इत्यादि विशेष का, अर अपर्याप्त मनुष्य जहा उपजै ताका, अर भोगभूमि-कुभोगभूमि के तिर्यंच-मनुष्य, अर कर्मभूमि के मनुष्य जहा उपजै ताका, अर सर्वार्थसिद्धि ते लगाय भवनत्रिक पर्यंत देव जहा उपजै ताका वर्णन है । बहुरि जैसे च्यवन-उत्पाद कहि चौदह मार्गणानि विषे गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए जैसे जे-जे नामकर्म के बंधस्थान संभवै तिनका वर्णन है ।

तथा गति, इन्द्रिय, काय, योग, वेद मार्गणानि विषे तो लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है । कषाय मार्गणा विषे अनंतानुबन्धी आदि जैसे उदय हो है ताका, वा इनके देशघाती-सर्वघाती स्पर्द्धकनि का, वा सम्यक्त्व-संयम घातने का, वा लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है । अर ज्ञान मार्गणा विषे गति आदिक की अपेक्षा करि बंधस्थाननि का कथन है । अर समय मार्गणा विषे सामायिकादिक के स्वरूप का, अर सयतासंयत विषे दोय गति अपेक्षा, अर असयम विषे च्यारि गति अपेक्षा जे-जे जीव जहां पर्यंत उपजै ताका, अर सासादन विषे बंधस्थान कहने को देवगति विषे जैसे उपजम-सम्यक्त्व को छोडि सासादन होइ ताका इत्यादि कथन है । अर दर्शन मार्गणा विषे गति अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है ।

अर लेश्या मार्गणा विषै प्रथमादि नरक पृथ्वीनि विषै लेश्या सभवने का, जिस-जिस संहनन के धारी जे-जे जीव जहां-जहा पर्यंत नरकविषै उपजै ताका, नरकनिविषै पर्याप्त-निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था अपेक्षा बंधस्थाननि अर का, तिर्यच विषै एकेद्रियादिक के वा भोगभूमियां तिर्यच के जो-जो लेश्या पाइए ताका, अर जे-जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि तिर्यच विषै उपजै ताका, अर तिनके निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था विषै बंधस्थाननि का, अर जहां तै आए सासादन वा असंयत होइ अर तिनके जे बंधस्थान होइ ताका, अर शुभाशुभलेश्यानि विषै परिणामनि का, तहा प्रसंग पाइ कषायनि के स्थान वा तहा सकलेश-विशुद्धस्थान वा कषायनि के च्यारि शक्तिस्थान, चौदह लेश्या स्थान, बीस आयु बन्धाबन्धस्थान तिनका, अर लेश्यानि के छन्बीस अंश, तहा आठ मध्यम अश आयुबन्ध कौ कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषै होइ, अन्य अठारह अश च्यारि गतिनि विषै गमन कौ कारण तिनके विशेष का, अर लेश्यानि के पलटने के क्रम का वर्णन करि, तिर्यच के मिथ्यादृष्टि आदि विषै जैसे मिथ्यात्व-कषायनि का उदय पाइए है ताकौ कहि, तहां जे बंधस्थान पाइए ताका, अर भोगभूमिया तिर्यच के वा प्रसंग पाई औरनि के जैसे निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त मिथ्यादृष्टि आदि विषै जैसे लेश्याकरि बंधस्थान पाइए, वा भोगभूमि विषै जैसे उपजना होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि मनुष्यगति विषै लब्धिअपर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त, पर्याप्त दशा विषै जो-जो लेश्या पाइए वा तहां संभवते गुणस्थाननि विषै बंधस्थान पाइए ताका वर्णन है ।

बहुरि देवगति विषै भवनत्रिकादिक के निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त दशा विषै जो-जो लेश्या पाइए, वा देवनि के जहा जन्मस्थान है वा जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि जहा-जहां देवगति विषै उपजै, वा निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त-दशा विषै मिथ्यादृष्टि आदि जीवनी के जे-जे बंधस्थान पाइए तिनका, अर तहा प्रासंगिक गाथानिकरि जे-जे जीव जहां-जहा पर्यंत देवगति विषै उपजै, वा अनुदिशादिक विमाननि तै चयकरि जे पद न पावै, वा जे जीव देवगति तै चयकरि मनुष्य होइ निर्वाण ही जाय, वा जहा के आये तिरेसठि शलाका पुरुष न होइ, वा देवपर्याय पाइ जैसे जिनपूजादिक कार्य करै तिनका वर्णन है ।

बहुरि भव्यमार्गणा विषै बंधस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै सम्यक्त्व के लक्षण का, भेदनि का, जहां मरण न होय ताका, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व जाकै होइ ताका, वा वाकै जिन प्रकृतिनि

का उपशम होइ ताका, तहा लब्धि आदि होने का, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व भए मिथ्यात्व के तीन खंड हो हैं ताका, तहां नारकादिक कैं जे बंधस्थान पाइए तिनका, तहां नूरक विषे तीर्थंकर के बंध होने के विधान का, वा साकार-उपयोग होने का, वा निसर्गज-अधिगमज के स्वरूप का अर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जाकै होइ ताका, तहां अपूर्वकरणादि विषे जो-जो क्रिया करता चढै वा उतरै ताका, तहां जे बंधस्थान संभवै ताका, वा तहां मरि देव होय ताकैं बंधस्थान संभवै ताका वर्णन है । वहुनि क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारंभ-निष्ठापन जाकै होइ ताका, वा तहां तीन करण हो हैं तिनका, तहां गुणश्रेणी आदि होने का अर अनंतानुबन्धी का विसंयोजनकरि पीछे केई क्रिया करि करणादि विधान तैं दर्शनमोह क्षपावने का, अर तहां प्रारंभ-निष्ठापन के काल का, वा तिनके स्वामीनि का, वा तहां तीर्थंकर सत्तावाले के तद्भव-अन्यभव विषे मुक्ति होने का वर्णनकरि क्षायिक सम्यक्त्व विषे संभवते बंधस्थाननि का वर्णन है । वहुनि वेदक-सम्यक्त्व जिनकैं होइ अर प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तैं वा मिथ्यात्व तैं जैसैं वेदक सम्यक्त्व होइ, अर तिनकैं जे बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है ।

वहुनि सासादन, मिश्र, मिथ्यात्व जहां-जहां जिस-जिस दशा विषे संभवै अर तहां जे बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ विवक्षित गुणस्थान तैं जिस-जिस गुणस्थान को प्राप्त होइ ताका वर्णन है ।

वहुनि संजी अर आहार मार्गणा विषे बंधस्थाननि का वर्णन है । वहुनि नाम के बंधस्थाननि विषे भुजाकारादि कहने कौ पुनरुक्त, अपुनरुक्त भंगनि का, अर स्वस्थानादि तीन भेदनि का, प्रसंग पाइ गुणस्थाननि तैं चढने-उतरने का, जहां मरण न होइ ताका, कृतकृत्य-वेदक सम्यग्दृष्टि मरि जहां उपजै ताका, भुजाकारादिक के लक्षण का, अर इकतालीस जीव पदनि विषे भंगसहित बंधस्थाननि का वर्णन करि मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषे संभवते भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्य भंगनि का वर्णन है ।

वहुनि नाम के उदयस्थाननि का वर्णन विषे कार्माण<sup>१</sup>, मिश्रशरीर, गरीरपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति, भापापर्याप्ति इन पंचकालनि का स्वरूप प्रमाणादिक कहि, वा केवली के समुद्घात अपेक्षा इनका संभवपना कहि, नाम के उदयस्थान हानि

१. 'होने का' गेमा न पुस्तक मे पाठ है

का विधान विषै ध्रुवोदयी आदि प्रकृतिनि का वर्णन करि, तिन पंचकालनि की अपेक्षा लीए जिस-जिस प्रकार बीस प्रकृति रूप स्थान तै लगाय संभवते नाम के उदयस्थाननि का, अर तहां प्रकृति बदलने करि संभवते भंगनि का वर्णन है । बहुरि नाम के सत्त्वस्थाननि का वर्णन विषै तिराणवे प्रकृतिरूप स्थान आदि जैसे जै सत्त्वस्थान है तिनका, अर तहां जिन प्रकृतिनि की उद्वेलना हो है तिनके स्वामी वा क्रम वा कालादिक विशेष का, अर सम्यक्त्व, देशसंयम, अनंतानुबंधी का विसंयोजन, उपशमश्रेणी चढना, सकलसंयम धरना, ए उत्कृष्टपनै केती वार होइ तिनका, अर च्यारि गति की अपेक्षा लीए गुणस्थाननि विषै जे सत्त्वस्थान संभवै तिनका, अर इकतालीस जीवपदनि विषै सत्त्वस्थान संभवै तिनका वर्णन है ।

बहुरि त्रिसंयोग विषै स्थान वा भंगनि का वर्णन है । तहा मूल प्रकृतिनि विषै जिस-जिस बंधस्थान होतै जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान होइ ताका, अर ते गुणस्थाननि विषै जैसे संभवै ताका वर्णन है । बहुरि उत्तर प्रकृतिनि विषै ज्ञानावरण, अतराय का तौ पांच-पांच ही का बंध, उदय, सत्त्व होइ; तातै तहां विशेष वर्णन नाही । अर दर्शनावरण विषै जिस-जिस बंधस्थान होतै जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान गुणस्थान अपेक्षा संभवै ताका वर्णन है, अर वेदनीय विषै एक-एक प्रकृति का उदय-बंध होतै भी प्रकृति बदलने की अपेक्षा, वा सत्त्व दोय का वा एक का भी हो है, ताकी अपेक्षा गुणस्थान विषै संभवते भंगनि का वर्णन है । बहुरि गोत्र विषै नीच-उच्च गोत्र के बंध, उदय, सत्त्व के बदलने की अपेक्षा गुणस्थाननि विषै संभवते भंगनि का वर्णन है । बहुरि आयु विषै भोगभूमियां आदि जिस काल विषै आयुबध करै ताका, एकेद्रियादि जिस आयु कौ बाधै ताका, नारकादिकनि कै आयु का उदय, सत्त्व संभवै ताका, अर आठ अपकर्ष विषै बंधै ताका, तहा दूसरी, तीसरी बार आयुबध होने विषै घटने-बधने का, अर बध्यमान-भुज्यमान आयु के घटनेरूप अपवर्तनघात, कदलीघात का वर्णन करि बंध, अबंध, उपरितबंध की अपेक्षा गुणस्थाननि विषै संभवते भंगनि का वर्णन है । बहुरि वेदनीय, गोत्र, आयु इनके भंग मिथ्यादृष्ट्यादि विषै जेतै-जेतै संभवै, वा सर्व भग जेतै-जेतै है तिनका वर्णन है ।

बहुरि मोह के स्थाननि की अपेक्षा भंग कहि गुणस्थाननि विषै बंध, उदय, सत्त्वस्थान जैसे पाइए ताका वर्णन करि मोह के त्रिसंयोग विषै एक आधार, दोय आधेय, तीन प्रकार, तहां जिस-जिस बंधस्थान विषै जो-जो उदयस्थान, वा

सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस उदयस्थान विपै जो-जो वधस्थान वा सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विपै जो-जो वधस्थान वा उदयस्थान संभवै तिनका वर्णन है । वहुनि मोह के बंध, उदय, सत्त्वनि विपै दोय आधार, एक आधेय तीन प्रकार, तहा जिस-जिस वधस्थानसहित उदयस्थान विपै जो-जो सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस-जिस वधस्थानसहित सत्त्वस्थान विपै जो-जो उदयस्थान संभवै अर जिस-जिस उदयस्थान सहित सत्त्वस्थान विपै जो-जो वधस्थान पाइए ताका वर्णन है । वहुनि नामकर्म के स्थानोक्त भंग कहि गुणस्थाननि विपै, अर चाँदह जीवसमासनि विपै अर गति आदि मार्गणानि के भेदनि विपै संभवते बंध, उदय, सत्त्वस्थाननि का वर्णनकरि एक आधार, दोय आधेय का वर्णन विपै जिस-जिस वधस्थाननि विपै जो-जो उदयस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस-जिस उदयस्थान विपै जो-जो वधस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विपै जो-जो वधस्थान वा उदयस्थान जिस-जिसप्रकार संभवै तिनका वर्णन है । वहुनि दोय आधार, एक आधेय विपै जिस-जिस वधस्थानसहित उदय स्थान विपै जो-जो सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस वधस्थानसहित सत्त्वस्थान विपै जो-जो उदयस्थान संभवै अर जिस-जिस उदयस्थानसहित सत्त्वस्थान विपै जो-जो वधस्थान पाइए तिनका वर्णन है ।

वहुनि छठा प्रत्यय अधिकार है, तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि च्यारि मूल आयव अर सत्तावन उत्तरआस्रवनि का, अर ते जेसै गुणस्थाननि विपै संभवै ताका, तहा व्युच्छित्ति वा आस्रवनि के प्रमाण, नामादिक का वर्णन करि, तहां विशेष जानने की पच प्रकारनि का वर्णन है । तहा प्रथम प्रकार विपै एक जीव के एक काल संभवै ऐमे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टरूप आस्रवस्थान जेते-जेते गुणस्थाननि विपै पाइए तिनका वर्णन है ।

वहुनि दूसरा प्रकार विपै एक-एक स्थान विपै आस्रवभेद बदलने ते जेते-जेते प्रकार होइ तिनका वर्णन है ।

वहुनि तीसरा प्रकार विपै तिन स्थाननि के प्रकारनि विपै संभवते आस्रवनि की अपेक्षा कूटरचना के विधान का वर्णन है ।

वहुनि चौथा प्रकार विपै तिनहूँ कूटनि के अनुसारि अक्षसंचारि विधान ते जेने आयवस्थाननि की कहने का विधानरूप कूटोच्चारण विधान का वर्णन है । तहां

अविरत विषै युगपत् सभवतै हिंसा के प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भेदनि का, अर ते भेद जेते होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि पांचवां प्रकार विषै तिन स्थाननि विषै भंग ल्यावने के विधान का वा गुणस्थाननि विषै संभवते भंगनि का, तहाँ अविरत विषै हिंसा के प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंग ल्यावने कौं गणितशास्त्र के अनुसार प्रत्येक द्विसंयोगी, त्रिसंयोगी आदि भंगनि के ल्यावने के विधान का वर्णन है । बहुरि आस्रवनि के विशेषभूत जिनि-जिनि भाव तै स्थिति-अनुभाग की विशेषता लीयें, ज्ञानावरणादि जुदि-जुदि प्रकृति का बंध होइ तिनका क्रम तै वर्णन है ।

बहुरि सातवां भावचूलिका नामा अधिकार है । तहा नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि भावनि तै गुणस्थानसज्ञा हो है ऐसै कहि पंच मूल भावनि का, अर इनके स्वरूप का, १ अर तिरेपन उत्तर भावनि का, अर मूल-उत्तर भावनि विषै अक्षसचार विधान तै प्रत्येक परसयोगी, स्वसयोगी, द्विसंयोगी आदि भग जैसे होइ ताका, अर नाना जीव, नाना काल अपेक्षा गुणस्थान विषै संभवते भावनि का वर्णन है ।

बहुरि एक जीव कै युगपत् सभवते भावनि का वर्णन है । तहा गुणस्थाननि विषै मूल भावनि के प्रत्येक, परसयोगी, द्विसंयोगी आदि संभवते भगनि का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ प्रत्येक, द्विसंयोगी, त्रिसंयोगी आदि भग ल्यावने के गणितशास्त्र अनुसार विधान वर्णन है । बहुरि गुणस्थाननि विषै मूल भावनि की वा तिनके भगनि की संख्या का वर्णन है ।

बहुरि उत्तर भावनि के भंग स्थानगत, पदगत भेद तै दोय प्रकार कहे है । तहा एक जीव कै एक काल संभवते भावनि का समूह सो स्थान । तिस अपेक्षा जे स्थानगत भंग, तिन विषै स्वसंयोगी भंग के अभाव का अर गुणस्थाननि विषै संभवते औपशमिकादिक भावनि का अर औदयिक के स्थाननि के भगनि का वर्णन करि तहां संभवते स्थाननि के परस्पर संयोग की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेपादि विधान तै जैसे जेतै प्रत्येक भग अर परसंयोगी विषै द्विसंयोगी आदि भंग होइ तिनका, अर तहां गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्वभंगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

बहुरि जातिपद, सर्वपद भेदकरि पदगत भग दोय प्रकार, तिनका स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषै जेतै-जेतै जातिपद संभवै तिनका, अर तिनकौ परस्पर

लगावने की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेप आदि विधान तै जेते-जेते प्रत्येक स्वसंयोगी परसयोगी, द्विसंयोगी आदि भग संभवै तिनका, अर तहां गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्व भंगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

वहुरि पिंडपद, प्रत्येकपद भेदकरि सर्वपद भग दोय प्रकार है । तिनके स्वरूप का, अर गुणस्थान विषै ए जेतै जैसें सभवैं ताका, अर तहां परस्पर लगावने तै प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भग कीए जे भंग होहि तिनका, तहां मिथ्यादृष्टि का पन्द्रहवां प्रत्येक पद विषै भंग ल्यावने का, प्रसंग पाइ गणितशास्त्र के अनुसार एकवार, दोयवार आदि सुकलन धन के विधान का, अर गुणस्थाननि विषै प्रत्येकपद, पिंडपदनि की रचना के विधान का, अर प्रत्येकपदनि के प्रमाण का, अर तहां जेतै सर्वपद भंग भए तिनका वर्णन है । वहुरि यहा तीनसै तिरेसठि कुवाद के भेदनि का अर तिन विषै जैसें प्ररूपण है ताका, अर एकान्तरूप मिथ्यावचन, स्याद्वादरूप सम्यग्वचन का वर्णन है ।

वहुरि आठवां त्रिकरण चूलिका नामा अधिकार है । तहां मंगलाचरण करि करणनि का प्रयोजन कहि अधःकरण का वर्णन विषै ताके काल का अर तहां सभवते सर्व परिणाम, प्रथम समय संवन्धी परिणाम, अर समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, वा द्वितीयादि समय संवन्धी परिणाम, वा समय-समय सम्बन्धी परिणामनि विषै खंड रचनाकरि अनुकृष्टि विधान, तहां खंडनि विषै प्रथम खंड विषै वा खंड-खंड प्रति वृद्धिरूप वा द्वितीयादि खंडनि विषै परिणाम तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । तहां श्रेणीव्यवहार नामा गणित के सूत्रनि के अनुसार ऊर्ध्वरूप गच्छ, चय, उत्तर वन, आदि वन, सर्व धनादिक का, अर अनुकृष्टि विषै तिर्यग्रूप गच्छादिक के प्रमाण ल्यावने का विधान वर्णन है । अर तिन खंडनि विषै विगुह्यता का अल्प-बहुत्व का वर्णन है । वहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषै अनुकृष्टि विधान नाही, ऊर्ध्वरूप गच्छादिक का प्रमाण ल्यावने का विधान पूर्वक ताके काल का वा सर्व परिणाम, प्रथम समयसंवन्धी परिणाम, समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, द्वितीयादि समय संवन्धी परिणाम, तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । वहुरि अनिवृत्ति करण विषै भेद नाही, ताते तहां कालादिक का वर्णन है ।

वहुरि नवमा कर्मस्थिति अविकार है । तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि आशय के लक्षण का वा स्थिति अनुसार ताके काल का, वा उदीर्गक कर्म

आबाधाकाल का वर्णन है । बहुरि कर्मस्थिति विषे निषेकनि का वर्णन है । बहुरि प्रथमादि गुणहानिनि के प्रथमादि निषेकनि का वर्णन है । बहुरि स्थितिरचना विषे द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दोगुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनके स्वरूप, का, अर अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा तिनके प्रमाण का वर्णन है । तहां नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशि सर्व कर्मनि का समान नाहीं, ताते इनका विशेष वर्णन है । तहां मिथ्यात्वकर्म की नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त जानने का विधान वर्णन है । इहा प्रसंग पाइ 'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि करणसूत्रकरि गुणकाररूप पंक्ति के जोडने का विधान आदि वर्णन है । बहुरि गुणहानि, दो गुणहानि के प्रमाण का वर्णन है । तहां ही विशेष जो चय ताका प्रमाण वर्णन है । ऐसे प्रमाण कहि प्रथमादि गुणहानिनि का वा तिनविषे प्रथमादि निषेकनि का द्रव्य जानने का विधान वा ताका प्रमाण अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । बहुरि मिथ्यात्ववत् अन्यकर्मनि की रचना है । तहा गुणहानि, दो गुणहानि तो समान है, अर नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त राशि समान नाहीं । तिनके जानने कौ सात पंक्ति करि विधान कहि तिनके प्रमाण का, अर जिस-जिसका जेता-जेता नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का प्रमाण आया, ताका वर्णन है । बहुरि ऐसे कहि अंकसंदृष्टि अपेक्षा त्रिकोणयंत्र, अर त्रिकोणयंत्र का प्रयोजन, अर तहां एक-एक निषेक मिलि एक समयप्रबद्ध का उदय त्रिकोणयंत्र हो है । अर सर्व त्रिकोणयंत्र के निषेक जोड़े किंचिदून द्वचर्द्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है तिनका वर्णन है । बहुरि निरंतर-सांतररूप स्थिति के भेद, स्वरूप स्वामीनि का वर्णन है । बहुरि स्थितिबंध कौ कारण जे स्थितिबंधाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषे आयु आदि कर्म के स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननि के प्रमाण का अर स्थितिबंधाध्यवसाय के स्वरूप जानने कौ सिद्धांत वचनिका वर्णनकरि स्थिति के भेदनि कौ कहि तिन विषे जेते-जेते स्थितिबंधाध्यवसायस्थान सभवै तिनके जानने कौ द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दो-गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का वा चय का, वा प्रथमादि गुणहानिनि का, वा तिनके निषेकनि का, वा आदि घनादिक का द्रव्यप्रमाण अर ताके जानने का विधान, ताका वर्णन है । बहुरि इहा एक-एक स्थितिभेद संबंधी स्थितिबन्धाध्यवसायस्थाननि विषे नानाजीव अपेक्षा खंड हो है । तहां ऊपरली-नीचली स्थिति संबंधी खंड समान भी हो है; ताते तहां अनुकृष्टि-रचना का वर्णन है । तहा आयुकर्म का जुदा ही विधान है, ताते पहिले आयु की कहि, पीछे मोहादिक की अनुकृष्टि-रचना का अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । तहां



खंडनि की समानता-असमानता इत्यादि अनेक कथन है । बहुरि अनुभागबंध को कारण जे अनुभागाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषै तिन सर्वनि का प्रमाण कहि, तहां एक-एक स्थितिभेद संबंधी स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननि विषै द्रव्य, स्थिति, गुणहानि आदि का प्रमाणादिक कहि एक-एक स्थितिबंधाध्यवसायस्थानस्य जे निपेक तिनविषै जेते-जेते अनुभागाध्यवसायस्थान पाइए तिनका वर्णन है । बहुरि मूलग्रंथकर्त्ताकरि कीया हुवा ग्रंथ की संपूर्णता होने विषै ग्रंथ के हेतु का, चामुंडराय राजा को आशीर्वाद का, ताकरि बनाया चैत्यालय वा जिर्नविंव का, वीरमार्तंड राजा कौं आशीर्वाद का वर्णन है । बहुरि संस्कृत टीकाकार अपने गुरुनि का वा ग्रंथ होने के समाचार कहे है तिनका वर्णन है ।

असै श्रीमद् गोस्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह मूलशास्त्र, ताकी जीवतत्त्व-प्रदीपिका नामा संस्कृतटीका के अनुसार इस भाषाटीका विषै अर्थ-का वर्णन होसी ताकी सूचनिका कही ।

### अर्थसंदृष्टि सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि तहां जे संदृष्टि है, तिनका अर्थ, वा कहे अर्थ तिनकी संदृष्टि जानने कौ इस भाषाटीका विषै जुदा ही संदृष्टि अधिकार विषै वर्णन होसी ।

इहां कोऊ कहै — अर्थ का स्वरूप जान्या चाहिए, संदृष्टिनि के जानै कहा सिद्धि हो है ?

ताका समाधान — संदृष्टि जानै पूर्वाचार्यनि की परंपरा तै चल्या आया जो संकेतरूप अभिप्राय, ताकी जानिए है । अर थोरे मे बहुत अर्थ कौ नीकै पहिचानिए है । अर मूलशास्त्र वा संस्कृतटीका विषै, वा अन्य ग्रंथनि विषै, जहां संदृष्टिरूप व्याख्यान है, तहां प्रवेश पाइये है । अर अलौकिक गणित के लिखने का विधान आदि चमत्कार भासै है । अर संदृष्टिनि कौ देखते ही ग्रंथ की गंभीरता प्रगट हो है — इत्यादि प्रयोजन जानि संदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है ।

तहां केई संदृष्टि आकाररूप है, केई अंकरूप है, केई अक्षररूप है, केई निगने हो का विगेषरूप है, सो तिस अधिकार विषै पहिले तौ सामान्यपनै संदृष्टिनि का वर्णन है, तहा पदार्थनि के नाम तै, संख्या तै अर अक्षरनि तै अंकनि की अर प्रभृति आदि की संदृष्टिनि का वर्णन है ।

बहुरि सामान्य संख्यात, असंख्यात, अनंत की, अर इनके इकईस भेदनि की, अर पल्य आदिआठ उपमा प्रमाण की, अर इनके अर्धच्छेद वा वर्गशलाकानि की सदृष्टिनि का वर्णन है । बहुरि परिकर्माष्टक विषे संकलनादि होते जैसे सहनानि हो है अर बहुत प्रकार संकलनादि होते वा संकलनादि आठ विषे एकत्र दोय, तीन आदि होते जो सहनानी हो है, वा संकलनादि विषे अनेक सहनानी का एक अर्थ हो है इत्यादिकनि का वर्णन है । अर स्थिति-अनुभागादिक विषे आकाररूप सहनानी है, वा केई इच्छित सहनानी है, इत्यादिकनि का वर्णन है । असें सामान्य वर्णन करि पीछे श्रीमद् गोम्मटसार नामा मूलशास्त्र वा ताकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा टीका, ताविषे जिस-जिस अधिकार विषे कथन का अनुक्रम लीए संख्यादिक अर्थ की जैसे-जैसे सदृष्टि है, तिनका अनुक्रम तै वर्णन है । तहां केई करण वा त्रिकोणयंत्र का जोड़ इत्यादिकनि का सदृष्टिनि का संस्कृत टीका विषे वर्णन था अर भाषा करते अर्थ न लिखा था, तिनका इस सदृष्टि अधिकार विषे अर्थ लिखिएगा । अर मूलशास्त्र के यंत्ररचना विषे वा संस्कृत टीका विषे केई सदृष्टिरूप रचना ही लिखी थी । तिनको अर्थपूर्वक इस सदृष्टि अधिकार विषे लिखिएगा, सो इहां तिनकी सूचनिका लिखै विस्तार होई, तातै तहां ही वर्णन होगा सो जानना ।

इहां कोऊ कहै — मूलशास्त्र वा टीका विषे जहां सदृष्टि वा अर्थ लिखा था, तहां ही तुम भी तिनके अर्थनि का निरूपण करि क्यों न लिखान किया ? तहां छोड़ि तिनको एकत्र करि सदृष्टि अधिकार विषे कथन किया सो कौन कारण ?

तहां समाधान — जो यहु टीका मंदबुद्धीनि कै ज्ञान होने के अर्थ करिए है, सो या विषे बीचि-बीचि सदृष्टि लिखने तै कठिनता तिनको भासै, तव अभ्यास तै विमुख होइ, तातै जिनको अर्थमात्र ही प्रयोजन होहि, सो अर्थ ही का अभ्यास करी अर जिनको सदृष्टि कौ भी जाननी होइ, ते सदृष्टि अधिकार विषे तिनका भी अभ्यास करौ ।

बहुरि इहां कोई कहै — तुम असा विचार कीया, परंतु कोई इस टीका का अवलंबन तै संस्कृत टीका का अभ्यास कीया चाहै, तो कैसे अभ्यास करै ?

ताकों कहिए है — अर्थ का तौ अनुक्रम जैसे संस्कृत टीका विषे है, तैसे या विषे है ही । अर जहां जो सदृष्टि आदि का कथन बीचि मै आवै, ताकों सदृष्टि अधिकार विषे तिस स्थल विषे बाकी कथन है; ताकों जानि तहा अभ्यास करौ । ऐसे विचारि सदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है ।

### लब्धिसार-क्षपणासार सम्बन्धी प्रकरण

वहुरि ऐसा विचार भया जो लब्धिसार अर क्षपणासार नामा शास्त्र है, तिन विषे सम्यक्त्व का अर चारित्र का विशेषता लीए बहुत नीकै वर्णन है । अर तिस वर्णन कौ जानै मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि का भी स्वरूप नीकै जानिए है, सो इनका जानना बहुत कार्यकारी जानि, तिन ग्रंथनि के अनुसारि किछु कथन करना । तातै लब्धिसार शास्त्र के गाथा सूत्रनि की भाषा करि इस ही टीका विषे मिलाइएगा । तिस ही के क्षपक श्रेणी का कथन रूप गाथा सूत्रनि का अर्थ विषे क्षपणासार का अर्थ गर्भित होयगा ऐसा जानना ।

इहां कोऊ कहै - तिन ग्रंथनि की जुदी ही टीका क्यों न करिए ? याही विषे कथन करने का कहा प्रयोजन ?

ताका समाधान - गोम्मटसार विषे कह्या हुवा केतेइक अर्थनि कौ जानै विना तिन ग्रंथनि विषे कह्या हुवा केतेइक अर्थनि का ज्ञान न होय, वा तिन ग्रंथनि विषे कह्या हुवा अर्थ कौ जानै इस शास्त्र विषे कहे हुए गुणस्थानादिक केतेइक अर्थनि का स्पष्ट ज्ञान होइ, सो ऐसा संबंध जान्या अर तिन ग्रंथनि विषे कहे अर्थ कठिन हैं, सो जुदा रहे प्रवृत्ति विशेष न होइ तातै इस ही विषे तिन ग्रंथनि का अर्थ लिखने का? विचार कीया है । सो तिस विषे प्रथमोपशम सम्यक्त्वादि होने का विधान धाराप्रवाह रूप वर्णन है । तातै ताकी सूचनिका लिखे विस्तार होइ, कथन आगै होयहीगा । तातै इहां अधिकार मात्र ताकी सूचनिका लिखिए है ।

प्रथम मंगलाचरण करि प्रकार कारण का वा प्रकृतिबंधापसरण, स्थिति-बंधापसरण, स्थितिकांडक, अनुभागकांडक, गुणश्रेणी फालि इत्यादि, केतीइक संज्ञानि का स्वरूप वर्णन करि प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने का विधान वर्णन है ।

तहा प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने योग्य जीव का, अर पंचलब्धिनि के नामादिक कहि, तिनके स्वरूप का वर्णन है । तहां प्रायोग्यता लब्धि का कथन विषे जेने स्थिति घटै है अर तहा च्यारि गति अपेक्षा प्रकृतिवन्धापसरण हो है ताका, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेशबंध का वर्णन है । वहुरि च्यारि गति अपेक्षा एक जीव के गुणपत् संभवता भंगसहित प्रकृतिनि के उदय का, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के

१. १ ग्रंथि मे 'अर्थ लिखने का' स्थान पर 'अनुसारि किछु कथन' ऐसा पाठ मिलता है ।

उदय का वर्णन है । बहुरि एक जीव कै युगपत् संभवती प्रकृतिनि के सत्त्व का रअ स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के सत्त्व का वर्णन है । बहुरि करणलब्धि का कथन विषै तीन करणनि का नाम-कालादिक कहि तिनके स्वरूपादिक का वर्णन है ।

तहां अधःकरण विषै स्थितिबंधापसरणादिक आवश्यक हो है, तिनका वर्णन है ।

अर अपूर्वकरण विषै च्यारि आवश्यक, तिनविषै गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है । तहां अपकर्षण किया हुआ द्रव्य कौ जैसें उपरितन स्थिति गुणश्रेणी आयाम उदयावली विषै दीजिए है, सो वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ उत्कर्षण वा अपकर्षण किया हुआ द्रव्य का निक्षेप अर अतिस्थापन का विशेष वर्णन है । बहुरि गुणसक्रमण इहा न संभवै है, सो जहां संभवै है ताका वर्णन है । बहुरि स्थितिकाडक, अनुभाग-कांडक के स्वरूप, प्रमाणादिक का अर स्थिति, अनुभागकांडकोत्करण काल का वर्णनपूर्वक स्थिति, अनुभाग, सत्त्व घटावने का वर्णन है ।

बहुरि अनिवृत्तिकरण विषै स्थितिकांडकादि विधान कहि ताके काल का संख्यातवां भाग रहे अंतरकरण हो है, ताके स्वरूप का, अर आयाम प्रमाण का, अर ताके निषेकनि का अभाव करि जहां निक्षेपण कीजिए है ताका इत्यादि वर्णन है । बहुरि अंतरकरण करने का अर प्रथम स्थिति का, अर अंतरायाम का काल वर्णन है । बहुरि अंतरकरण का काल पूर्ण भए पीछे प्रथम स्थिति का काल विषै दर्शनमोह के उपशमावने का विधान, काल, अनुक्रमादिक का, तहां आगाल, प्रत्यागाल जहां पाइए है वा न पाइए है ताका, दर्शनमोह की गुणश्रेणी जहा न होइ है, ताका इत्यादि अनेक वर्णन है ।

बहुरि पीछे अंतरायाम का काल प्राप्त भए उपशम सम्यक्त्व होने का, तहा एक मिथ्यात्व प्रकृति कौ तीन रूप परिणमावने के विधान का वर्णन है । बहुरि उपशम सम्यक्त्व का विधान विषै जैसें काल का अल्पबहुत्व पाइए है, तैसें वर्णन है ।

बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषै मरण के अभाव का, अर तहा तै सासादन होने के कारण का, अर उपशम सम्यक्त्व का प्रारंभ वा निष्ठापन विषै जो-जो उपयोग, योग, लेश्या पाइए ताका, अर उपशम सम्यक्त्व के काल, स्वरूपादिक का, अर तिस काल कौ पूर्ण भए पीछे एक कोई दर्शनमोह की प्रकृति उदय आवने का, तहा जैसें

द्रव्य को अपकर्षण करि अंतरायामादि विषे दीजिए है ताका, अर दर्शनमोह का उदय भए वेदक सम्यक्त्व वा मिश्र गुणस्थान वा मिथ्यादृष्टि गुणस्थान हो है, तिनके स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का विधान वर्णन है । तहां क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारंभ जहां होइ ताका, अर प्रारंभ-निष्ठापन अवस्था का वर्णन है । बहुरि अनंतानु-बन्धी के विसंयोजन का वर्णन है । तहां तीन करणनि का अर अनिवृत्तिकरण विषे स्थिति घटने का अर अन्य कषायरूप परिणामने के विधान प्रमाणादिक का कथन है । बहुरि विश्राम लेइ दर्शनमोह की क्षपणा हो है, ताका विधान वर्णन है । तहां संभवता स्थितिकांडादिक का वर्णन है । अर मिथ्यात्व, मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी विषे स्थिति घटावने का, वा संक्रमण होने का विधान वर्णन करि सम्यक्त्वमोहनी की आठ वर्ष प्रमाण स्थिति रहे अनेक क्रिया विशेष हो हैं, वा तहां गुणश्रेणी, स्थितिकांडकादिक विषे विशेष हो है, तिनका वर्णन है । बहुरि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि होने का वा तहां मरण होतै लेश्या वा उपजने का, वा कृतकृत्य वेदक भए पीछे जे क्रिया विशेष हो हैं अर तहां अंतकांडक वा अंतफालि विषे विशेष हो है, तिनका वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व होने का वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के विधान विषे संभवते काल का तेतीस जायगां अल्पबहुत्व वर्णन है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के स्वरूप का वा मुक्त होने का इत्यादि वर्णन है ।

बहुरि चारित्र दोय प्रकार — देशचारित्र, सकलचारित्र । सो ए जाकें होइ वा सन्मुख होतै जो क्रिया होइ सो कहि देशचारित्र का वर्णन है । तहां वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्र जो ग्रहै, ताके दोइ ही कारण होइ, गुणश्रेणी न होइ, देशसंयत को प्राप्त भए गुणश्रेणी होइ इत्यादि वर्णन है । बहुरि एकांतवृद्धि देशसंयत के स्वरूपादिक का वर्णन है । बहुरि अधःप्रवृत्त देशसंयत का वर्णन है । तहां ताके स्वरूप-कालादिक का, अर तहां स्थिति-अनुभागखंडन न होइ, अर तहां देशसंयत तैं भ्रष्ट होइ देशसंयत को प्राप्त होइ ताके करण होने न होने का, अर देशसंयत विषे संभवते गुणश्रेण्यादि विशेष का वर्णन है । बहुरि देशसंयम के विधान विषे संभवते काल का अल्पबहुत्वता का वर्णन है । बहुरि जघन्य, उत्कृष्ट देशसंयम जाकें होइ ताका, अर देशसंयम विषे स्पष्टक का अविभागप्रतिच्छेद पाडए ताका वर्णन है । बहुरि देशसंयम के स्थाननि-गा, अर तिनके प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप तीन प्रकारनि का, अर ते क्रम

तैं जैसैं जिनकैं जेते पाइए, अर बीच में स्वामीरहित स्थान पाइए तिनका, अर तहा विशुद्धता का वर्णन है ।

बहुरि सकलचारित्र तीन प्रकार — क्षायोपशमिक, औपशमिक, क्षायिक; तहां क्षायोपशमिक चारित्र का वर्णन है । तिसविषै यहु जाकैं होइ ताका, वा सन्मुख होते जो क्रिया होइ, ताका वर्णन करि वेदक सम्यक्त्व सहित चारित्र ग्रहण करनेवाले कैं दोय ही करण होइ इत्यादि अल्पबहुत्व पर्यंत सर्व कथन देशसंयतवत् है, ताका वर्णन है । बहुरि सकलसंयम स्पर्द्धक वा अविभागप्रतिच्छेदनि का कथन करि प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप स्थान कहि ते जैसैं जेते जिस जीव के पाइए, तिनका क्रम तैं वर्णन है । तहां विशुद्धता का वा म्लेच्छ के सकलसंयम संभवने का वा सामयिकादि संबंधी स्थाननि का इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि औपशमिक चारित्र का वर्णन है । तहां वेदक सम्यक्त्वी जिस-जिस विधानपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्वी वा द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी होइ उपशम श्रेणी चढै है, ताका वर्णन है । तहां द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होने का विधान विषैं तीन करण, गुणश्रेणी, स्थितिकाडकादिक वा अंतरकरणादिक का विशेष वर्णन है ।

बहुरि उपशम श्रेणी विषैं आठ अधिकार हैं, तिनका वर्णन है । तहां प्रथम अधःकरण का वर्णन है । बहुरि दूसरा अपूर्वकरण का वर्णन है । इहां संभवते आवश्यकनि का वर्णन है । इहांतैं लगाय उपशम श्रेणी का चढ़ना वा उतरणा विषैं स्थितिबधापसरण अर स्थितिकांडक वा अनुभागकांडक के आयामादिक के प्रमाण का, अर इनकौ होते जैसा-जैसा स्थितिबंध अर स्थितिसत्त्व वा अनुभागसत्त्व अवशेष रहै, ताका यथा ठिकाणैं बीच-बीचि वर्णन है, सो कथन आगैं होइगा तहां जानना । बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषैं प्रसंग पाइ, अनुभाग के स्वरूप का वा वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नानागुणहानि का वर्णन है । अर इहां गुणश्रेणी, गुणसंक्रम हो है, अर प्रकृतिबंध का व्युच्छेद हो है, ताका वर्णन है । बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषैं दश करणनि विषैं तीन करणनि का अभाव हो है । ताका अनुक्रम लीएं कर्मनि का स्थितिबध करनेरूप क्रमकरण हो है ताका, तहां असंख्यात समयप्रवद्धनि की उदीरणादिक का, अर कर्मप्रकृतिनि के स्पर्द्धक देशघाती करनेरूप देशघातीकरण का, अर कर्मप्रकृतिनि कैं केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्य निषेकनि विषैं निपेक्षण करनेरूप अंतरकरण का, अर अंतरकरण की समाप्तता भए युगपत् सात करणनि का प्रारंभ हो है ताका, तहां ही आनुपूर्वी संक्रमण का — इत्यादि वर्णन करि नपुसकवेद

अर लीवेद अर छह हास्यादिक, पुरुषवेद, तीन क्रोध अर तीन माया अर दोय लोभ; इनके उपशमावने के विधान का अनुक्रम तै वर्णन है । तहा गुणश्रेणी का वा स्थिति-अनुभागकांडकघात होने न होने का अर नपुंसकवेदादिक विषै नवकबंध के स्वरूप-परिणामनादि विशेष का, वा प्रथम स्थिति के स्वरूप का आदि विशेष का, वा तहां आगाल, प्रत्यागाल गुणश्रेणी न हो है इत्यादि विशेषनि का, अर संक्रमणादि विशेष पाड़े है, तिनका इत्यादि अनेक वर्णन पाड़े है । बहुरि संज्वलन लोभ का उपशम विधान विषै लोभ-वेदककाल के तीन भागनि का, अर तहा प्रथम स्थिति आदिक का वर्णन करि सूक्ष्मकृष्टि करने का विधान वर्णन है । तहां प्रसग पाड़े वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का कथन करि अर कृष्टि करने का वर्णन है । इहां वादरकृष्टि तां है ही नाही, सूक्ष्मकृष्टि है, तिनविषै जैसे कर्मपरमाणु परिणाम है वा तहां ही जैसे अनुभागादिक पाड़े है, वा तहां अनुसमयापवर्त्तरूप अनुभाग का घात हो है इत्यादिकनि का, अर उपशमावने आदि क्रियानि का वर्णन है । बहुरि सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान का प्राप्त होइ सूक्ष्मकृष्टि का प्राप्त जो लोभ, ताके उदय को भोगवने का, तहा संभवती गुणश्रेणी, प्रथम स्थिति आदि का इहां उदय-अनुदयरूप जैसे कृष्टि पाड़े तिनका, वा संक्रमण-उपशमनादि क्रियानि का वर्णन है । बहुरि सर्व कषाय उपशमाय उपशांत कषाय हो है ताका, अर तहां संभवती गुणश्रेणी आदि क्रियानि का, अर इहा जे प्रकृति उदय हैं, तिनविषै परिणामप्रत्यय अर भवप्रत्ययरूप विशेष का वर्णन है । अमें संभवती इकईस चारित्रमोह की प्रकृति उपशमावने का विधान कहि उपशांत कषाय तै पडनेरूप दोय प्रकार प्रतिपात का, तहां भवक्षय निमित्त प्रविपान तै देव नवन्धी असयत गुणस्थान को प्राप्त हो है । तहा गुणश्रेणी वा अनुपशमन वा अंतर का पूरण करना इत्यादि जे क्रिया हो है, तिनका वर्णन है । अर अट्टाक्षय निमित्त तै क्रम तै पडि स्वस्थान अप्रमत्त पर्यंत आवै तहा गुणश्रेणी आदिक का, वा चटते जे क्रिया भई थी, तिनका अनुक्रम तै नष्ट होने का वर्णन है । बहुरि अप्रमत्त तै पडने का तहां संभवति क्रियानि का अर अप्रमत्त तै चढै तो बहुरि अंशों नाटे ताका वर्णन है । अमें पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध का उदय सहित जो श्रेणी नाटे, ताही अपेक्षा वर्णन है । बहुरि पुरुषवेद, संज्वलन मान सहित आदि ग्यारह प्रकार उपशम श्रेणी चटनेवानों के जो-जो विशेष पाड़े है, तिनका वर्णन है । बहुरि उपशम चारित्र्य विधान विषै संभवने काल का अल्पबहुत्व वर्णन है ।

बहुरि अंगानां के अनुनारि नीग आधिकचारित्र्य के विधान का वर्णन है । तहां अर अंगानां: नीर अविनागनि का अर अपक श्रेणी को सम्मुख जीव का वर्णन है ।

बहुरि अध.करण का वर्णन है । तहा विशुद्धता की वृद्धि आदि च्यारि आवश्यकनि का, अर तहां सभवते परिणाम, योग, कषाय, उपयोग, लेश्या, वेद, अर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप कर्मनि का सत्त्व, बध उदय, तिनका वर्णन है ।

बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन है । तहा सभवते स्थितिकाडकघात, अनुभाग-काडकघात, गुणश्रेणी, गुणसंक्रम इनका विशेष वर्णन है । अर इहा प्रकृतिबध की व्युच्छित्ति हो है, तिनका वर्णन है । इहातै लगाय क्षपक श्रेणी विषै जहा-जहां जैसा-जैसा स्थितिबधापसरण, अर स्थितिकाडकघात, अनुभागकाडकघात पाइए अर इनकौ होतै जैसा-जैसा स्थितिबध, अर स्थितिसत्त्व अर अनुभागसत्त्व रहै, तिनका बीच-बीच वर्णन है, सो कथन होगा तहा जानना ।

बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन है । तहा स्वरूप, गुणश्रेणी, स्थितिकाडकादि का वर्णन करि कर्मनि का क्रम लीए स्थितिबंध, स्थितिसत्त्व करने रूप क्रमकरण का वर्णन है । बहुरि गुणश्रेणी विषै असख्यात समयप्रबद्धनि की उदीरणा होने लगी, ताका वर्णन है ।

बहुरि प्रत्याख्यान-अप्रत्याख्यानरूप आठ कषायनि के खिपावने का विधान वर्णन है । बहुरि निद्रा-निद्रा आदि सोलह प्रकृति खिपावने का विधान वर्णन है । बहुरि प्रकृतिनि की देशघाती स्पर्द्धकनि का बध करनेरूप देशघातीकरण का वर्णन है । बहुरि च्यारि संज्वलन, नव नोकषायनि के केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्यत्र निक्षेपण करनेरूप अंतरकरण का वर्णन है । बहुरि नपुसकवेद खिपावने का विधान वर्णन है । तहा सक्रम का वा युगपत् सात क्रियानि का प्रारभ हो है, तिनका इत्यादि वर्णन है । बहुरि स्त्रीवेद क्षपणा का वर्णन है । बहुरि छह नोकषाय अर पुरुषवेद इनकी क्षपणा का विधान वर्णन है । बहुरि अश्वकर्णकरणसहित अपूर्वस्पर्द्धक करने का वर्णन है । तहा पूर्वस्पर्द्धक जानने कौ वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का अर तिन-विषै देशघाती, सर्वघातिनि के विभाग का, वा वर्गणा की समानता, असमानता आदिक का कथन करि अश्वकरण के स्वरूप, विधान क्रोधादिकनि के अनुभाग का प्रमाणादिक का अर अपूर्वस्पर्द्धकनि के स्वरूप प्रमाण का तिनविषै द्रव्य-अनुभागादिक का, तहा समय-समय सबधी क्रिया का वा उदयादिक का बहुत वर्णन है ।

बहुरि कृष्टिकरण का वर्णन है । तहा क्रोधवेदककाल के विभाग का, अर वादर-कृष्टि के विधान विषै कृष्टिनि के स्वरूप का, तहां वारह सग्रहकृष्टि, एक-एक संग्रहकृष्टि



विषे अनती अतरकृष्टि तिनका, अर तिनविषे प्रदेश अनुभागादिक के प्रमाण का, तहां समय-समय सबधी क्रियानि का वा उदयादिक का अनेक वर्णन है । वहुरि कृष्टि वेदना का विधान वर्णन है । तहां कृष्टिनि के उदयादिक का, वा संक्रम का, वा घात करने का, वा समय-समय संबधी क्रिया का विशेष वर्णन करि क्रम तें दश संग्रहकृष्टिनि के भोगवने का विधान-प्रमाणादिक का बहुत कथन करि तिनकी क्षपणा का विधान वर्णन है । वहुरि अन्य प्रकृति संक्रमण करि इनरूप परिणामी, तिनके द्रव्यसहित लोभ की द्वितीय, तृतीय संग्रहकृष्टि के द्रव्य कौ सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणामावै है, ताके विधान-स्वरूप-प्रमाणादिक का वर्णन है । अैसे अनिवृत्तिकरण का बहुत वर्णन है । याविषे गुणश्रेणी-अनुभागघात के विशेष आदि बीच-बीचि अनेक कथन पाइए है, सो आगे कथन होइगा तहां जानना ।

वहुरि सूक्ष्मसापराय का वर्णन है । तहां स्थिति, अनुभाग का घात वा गुण-श्रेणी आदि का कथन करि बादरकृष्टि संबधी अर्थ का निरूपण पूर्वक सूक्ष्मसापराय सबंधी कृष्टिनि के अर्थ का निरूपण, अर तहां सूक्ष्मकृष्टिनि का उदय, अनुदय, प्रमाण अर संक्रमण, क्षयादिक का विधान इत्यादि अनेक वर्णन है । वहुरि यहू तौ पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध का उदय सहित श्रेणी चढ्या, ताकी अपेक्षा कथन है । वहुरि पुरुषवेद, संज्वलन मान आदि का उदय सहित ग्यारह प्रकार श्रेणी चढने वालो के जो-जो विशेष पाइए, ताका वर्णन है । अैसे कृष्टिवेदना पूर्ण भए ।

वहुरि क्षीणकषाय का वर्णन । तहां ईर्यापथबंध का, अर स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि का, वा तहां संभवते ध्यानादिक का अर ज्ञानावरणादिक के क्षय होने के विधान का, अर इहां शरीर सम्बन्धी निगोद जीवनि के अभाव होने के क्रम का इत्यादि वर्णन है ।

वहुरि सयोगकेवली का वर्णन है । तहां ताके महिमा का अर गुणश्रेणी वा अर विहार-आहारादिक होने न होने का वर्णन करि अतर्मुहूर्त्त मात्र आयु रहै आर्वाजनकरण हो है ताका, तहां गुणश्रेणी आदि का, अर केवलसमुद्घात का, तहां दंत-कपाटादिक के विधान वा क्षेत्रप्रमाणादिक का, वा तहां संभवती स्थिति-अनुभाग घटने आदि क्रियानि का वा योगनि का इत्यादि वर्णन है । वहुरि वादर मन-वचन आय योग कौ निरोधि मूदम करने का, तहां जैसे योग हो है, ताका अर सूक्ष्म मनोयोग, वचनयोग, उच्छ्वास-निश्वास, काययोग के निरोध करने का, तहां काययोग के

पूर्वस्पर्द्धकनि के अपूर्वस्पर्द्धक अर तिनकी सूक्ष्मकृष्टि करिए है, तिनका स्वरूप, विधान, प्रमाण, समय-समय सम्बन्धी क्रियाविशेष इत्यादिक का अर करी सूक्ष्मकृष्टि, ताकौ भोगवता सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान युक्त हो है, ताका वा तहा सभवते स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि अयोगकेवली का वर्णन है । तहां ताकी स्थिति का, शैलेश्यपना का, ध्यान का, तहा अवशेष सर्व प्रकृति खिपवाने का वर्णन है ।

बहुरि सिद्ध भगवान का वर्णन है । तहां सुखादिक का, महिमा का, स्थान का, अन्य मतोक्त स्वरूप के निराकरण का इत्यादि वर्णन है । अैसें लब्धिसार क्षण-सार कथन की सूचनिका जाननी ।

बहुरि अन्त विषे अपने किछू समाचार प्रगट करि इस सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की समाप्तता होतै कृतकृत्य होइ आनंद दशा कौ प्राप्त होना होइगा । अैसें सूचनिका करि ग्रंथसमुद्र के अर्थ संक्षेपपने प्रकट किए है ।

इति सूचनिका ।

—०—

### परिकर्माष्टक सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि इस करणानुयोगरूप शास्त्र के अभ्यास करने के अर्थ गणित का ज्ञान अवश्य चाहिये, जातै अलंकारादिक जानै प्रथमानुयोग का, गणितादिक जानै करणानुयोग का, सुभाषितादिक जानै चरणानुयोग का, न्यायादि जानै द्रव्यानुयोग का विशिष्ट ज्ञान हो है, तातै गणित ग्रंथनि का अभ्यास करना । अर न बने तौ परिकर्माष्टक तौ अवश्य जान्या चाहिये । जातै याकौ जाणै अन्य गणित कर्मनि का भी विधान जानि तिनकौ जानै अर इस शास्त्र विषे प्रवेश पावै । तातै इस शास्त्र का अभ्यास करने को प्रयोजनमात्र परिकर्माष्टक का वर्णन इहा करिए है—

तहां परिकर्माष्टक विषे संकलन, व्यवकलन, गुणकार, भागहार, वर्ग, घन, वर्गमूल, घनमूल ए आठ नाम जानने । ए लौकिक गणित विषे भी सभवै है, अर अलौकिक गणित विषे भी संभवै है । सो लौकिक गणित तौ प्रवृत्ति विषे प्रसिद्ध ही है । अर अलौकिक गणित जघन्य संख्यातादिक वा पल्यादिक का व्याख्यान आगे जीवसमासाधिकार पूर्ण भए पीछे होइगा, तहां जानना । अव संकलनादिक का स्वरूप

चौदह भए । तहां जोड विषै दश स्थानीय चौका लिख्या अर रह्या एका, ताकौ अर शत स्थानीय दूवा कौ जोडै, तीन भया, सो जोड विषै शत स्थानीय लिख्या । अैसे जोडैं तीन सै चालीस भये । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि व्यवकलन विषै मूलराशि के एक स्थानीय आदि अंकनि विषै ऋण राशि के एक स्थानीय आदि अंकनि कौ यथाक्रम घटाइए । जो मूलराशि के एक स्थानीय आदि अंक तै ऋणराशि के एक स्थानीय आदि अंक अधिक प्रमाण लीए होइ तौ धनराशि के दश स्थानीय आदि अंक विषै एक घटाइ धनराशि के एक स्थानीय आदि अंक विषै दश जोडि, तामै ऋणराशि का अंक घटावना । सो प्रवृत्ति विषै जैसे बाकी काढने का विधान है, तैसे ही यह जानना । अैसे करतै जो होइ, सो अवशेष प्रमाण जानना ।

इहां उदाहरण — जैसे छह सै पिचहत्तरि मूलराशि विषै बाणवै (६७५-६२) ऋण घटावना होइ, तहां एक स्थानीय पांच में दूवा घटाए तीन रहे अर दश स्थानीय सात विषै नव घटै नाही तातै शतस्थानीय छक्का में एक घटाइ ताके दश सात विषै जोडै सतरह भए, तामै नौ घटाइ आठ रहे शत स्थानीय छक्का में एक घटायै पांच रहे, तामै ऋण का अंक कोऊ घटावने कौ है नाही तातै, पांच ही रहे । अैसे अवशेष पांच सै तियासी प्रमाण आया । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि गुणकार विषै गुण्य के अंत अंक तै लगाय आदि अंक पर्यंत एक-एक अंक कौ क्रम तै गुणकार के अंकनि करि गुणि यथास्थान लिखिए वा जोडिए, तब गुणित राशि का प्रमाण आवै ।

इहां उदाहरण — जैसे गुण्य दोय सै छप्पन अर गुणकार सोलह (२५६×१६) । तहां गुण्य का अंत अंक दूवा कौ सोलह करि गुणना । तहा छक्का तौ दूवा ऊपरि<sup>१६</sup> अर एका ताके पीछै<sup>१६</sup> २५६ अैसे स्थापन करि एक करि दूवा कौ गुणै, दोय पाये, सो तो एक के नीचै लिखना । अर छह करि दूवा कौ गुणै बारह पाए, तिसविषै दूवा तौ गुण्य की जायगां लिखना एका पहिलै दोय लिख्या था तामै जोडना तब अैसा भया [३२ ५६] । बहुरि अैसे ही गुण्य का उपात अक पांचा, ताकौ सोलह<sup>१६</sup> करि गुणना तहा अैसे ३२, ५६ स्थापना करि एका करि पांचा कौ गुणै, पांच भये, सो तौ एका के नीचै दूवा, तामै जोडिए अर छक्का करि पांचा कौ गुणै तीस भए, तहां बिदी पांचा की जायगां मांडि तीन पीछले अंकनि विषै जोडिए अैसे कीए

ऐसा ४००६ भया । वहुरि गुण्य का आदि अंक छक्का को सोलह करि गुणना तहां  
 ऐसे <sup>१६</sup> ४००६ स्थापि एक करि छह को गुणै छह भये सो तौ एका के नीचै  
 विदी तामै जोडिए अर छ को छ करि गुणै छत्तीस भया, तहा छक्का तौ गुण्य का  
 छक्का को जायगां स्थापना, तीया पीछला अंक छक्का तामै जोडना, ऐसे कीए  
 ऐसा ४०६६ भया । या प्रकार गुणित राशि च्यारि हजार छिनवै आया । ऐसे ही  
 अन्यत्र विधान जानना ।

वहुरि भागहार विषै भाज्य के जेते अंकनि विषै भागहार का भाग देना  
 संभवै, तितने अंकनि कौ ताका भाग देइ पाया अंक कौ जुदा लिखि तिस पाया अंक  
 करि भागहार कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना जाका भाग दीया था, तामै घटाय  
 अवशेष तहा लिखना । वहुरि तैसे ही भाग दीए जो अंक पावै, ताकौ पूवै लिख्या था  
 अंक, ताके आगे लिखि ताकरि भागहार कौ गुणि तैसे ही घटावना । अैसे यावत्  
 भाज्यराशि नि शेष होइ तावत् कीए जुदे लिखे अंक प्रमाण एक भाग आवै है ।

इहा उदाहरण-जैसे भाज्य च्यारि हजार छिनवै, भागहार सोलह । तहां  
 भाज्य का अन्त अंक च्यारि कौ तौ सोलह का भाग संभवै नाही ताते दोय अंके  
<sup>४०६६</sup>  
 चालीस तिनकां भाग देना, तहा ऐसे १६ लिखि । इहां तीन आदि अंकनि करि  
 सोलह कौ गुणै, ती चालीस तै अधिक होइ जाय ताते दोइ पाये सो दूवा जुदा लिखि,  
 नाकरि सोलह कौ गुणि चालीस मै घटाए अैसे ८६६ भया ।

वहुरि इहा निवासी कौ <sup>८६६</sup> सोलह का भाग दीए १६ पांच पाए, सो दूवा के  
 आगे निवि, नाकरि सोलह कौ गुनि निवासी में घटाए ऐसा ६६ रह्या । याकौ सोलह  
 का भाग दीए छह पाय, सो पाचा के आगे लिखि, ताकरि सोलह कौ गुणि छिनवै  
 भाग, सो घटाए भाज्यराशि नि.शेष भया । ऐसे जुदे लिखे अंक तिनकरि एक भाग  
 का प्रमाण दोय मै छप्पन आवै है । वहुरि 'भागो नास्ति लब्धं शून्यं' इस वचन तै  
 उक्त भाग टूटि जाय तहां विदी पावै । जैसे भाज्य तीन हजार छत्तीस (३०३६)  
 भागहार छह (६) तहा तीस को छह का भाग दीए, पांच पाए, तिनकरि छह कौ  
 भाग, घटाय तीन नि शेष होय गया, सो इहां भाग टूट्या, ताते पांच के आगे विदी  
 लिखि । वहुरि अवशेष छत्तीस कौ छह का भाग दीए छह पाए, सो विदी के आगे  
 लिखि, नाकरि छह कौ गुणि घटाए सर्व भाज्य निःशेष भया । ऐसे लब्ध प्रमाण  
 जानना । ऐसे ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि वर्ग विषे गुणकारवत् विधान जानना । जातें दोय जायगां समान राशि लिखि एक कौं गुण्य, एक कौं गुणकार स्थापि परस्पर गुणें वर्ग हो है । जैसे सोलह कौ सोलह करि गुणै, सोलह का वर्ग दोय सैं छप्पन हो है ।

बहुरि घन विषे भी गुणकारवत् ही विधान है । जातैं तीन जायगां समान राशि मांडि परस्पर गुणन करना । तहां पहिला राशिरूप गुण्य कौ दूसरा राशिरूप गुणकार करि गुणें जो (प्रमाण) होइ ताकौ गुण्य स्थापि, ताकौ तीसरा राशिरूप गुणकार करि गुणें जो प्रमाण आवैं, सोइ तिस राशि का घन जानना ।

जैसे सोलह कौ सोलह करि गुणै, दोय सैं छप्पन, बहुरि ताकौं सोलह करि गुणै च्यार हजार छिनवे होइ, सोई सोलह का घन है । ऐसैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि वर्गमूल विषे वर्गरूप राशि के प्रथम अंक उपरि विषम की दूसरे अंक उपरि सम की तीसरे (अंक) उपरि विषम की चौथे (अंक) उपरि सम की ऐसे क्रम तैं अन्त अंक पर्यंत उभी आडी लीक करि सहनानी करनी । जो अन्त का अंक सम होय तो तहां उपांत का अर अन्त का दोऊ अंकनि कौ विषम संज्ञा जाननी । तहां अन्त का एक वा दोय जो विषम अंक, ताका प्रमाण विषे जिस अंक का वर्ग संभवै, ताका वर्ग करि अन्त का विषम प्रमाण में घटावना । अवशेष रहै सो तहां लिखना । बहुरि जाका वर्ग कीया था, तिस मूल अंक कौ जुदा लिखना । बहुरि अवशेष रहै अंकनि करि सहित जो तिस विषम के आगै सम अंक, ताके प्रमाण कौं जुदा स्थाप्या जो अंक, तातैं दूणा प्रमाण रूप भागहार का भाग दीए जो अंक पावै, ताकौ तिस जुदा स्थाप्या, अंक के आगै लिखना । अर तिस अंक करि गुण्या हुवा भागहार का प्रमाण को तिस भाज्य में घटाइ अवशेष तहा लिखि देना । बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस सम के आगैं विषम अंक, तामैं जो अंक पाया था, ताका वर्ग कीए जो प्रमाण होइ, सो घटावना अवशेष तहा लिखना । बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस विषम के आगै सम अंक, ताकौ तिन जुदे लिखे हुए सर्व अंकरूप प्रमाण तैं दूणा प्रमाण रूप भागहारा का भाग देइ पाया अक कौ तिन जुदे लिखे हुए अकनि के आगै लिखना । अर इस पाया अंक करि भागहार कौ गुणि भाज्य में घटाइ, अवशेष तहां लिखना । बहुरि इस अवशेष सहित जो सम अंक के आगै विषम अंक ताविषे पाया अंक का वर्ग घटावना । ऐसे ही क्रमतैं यावत् वर्गित राशि निःशेष होय, तावत् कीए वर्गमूल का प्रमाण आवैं है ।

इहा उदाहरण - जैसे वर्गित राशि पैसठ हजार पांच सौ छत्तीस (६५५३६) इहां विषम-सम की सहनानी असी<sup>१-१-१</sup><sub>६५५३६</sub> करि अन्त का विषम छक्का तामें तीन का वर्ग तौ बहुत होइ जाइ, तातें संभवता दोय का वर्ग च्यारि घटाइ अवशेष दोइ तहां लिखना । अर मूल अंक दूवा जुदा पंक्ति विषे लिखना । बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला सब अंक ऐसा २५। ताकौ जुदा लिख्या जो दूवा तातें दूणा च्यारि का भाग दीए, छह पावै; परंतु आगे वर्ग घटावने का निर्वाह नाही; तातें पांच पाया, सो जुदा लिख्या हुआ दूवा के आगे लिखना । अर पाया अंक पांच करि भागहार च्यारि कौ गुणि, भाज्य में घटाएं, पचीस की जायगा पांच रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा (५५) तामें पाया अंक पांच का वर्ग पचीस घटाए, अवशेष ऐसा ३०, तिस सहित आगिला सम ऐसा ३०३, ताकौ जुदे लिखे अंकनि तै दूणा प्रमाण पचास का भाग दीए छह पाया, सो जुदे लिखे अंकनि के आगे लिखना । अर छह करि भागहार पचास कौ गुणि, भाज्य में घटाए अवशेष ऐसा ३ रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा ३६, यामें पाया अंक छह का वर्ग घटाए राशि निःशेष भया । ऐसैं जुदे लिखे हूवे अंकनि करि पैसठ हजार पांच सौ छत्तीस का वर्गमूल दोए सैं छप्पन आया । ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना ।

बहुरि घनमूल विषे घन रूप राशि के अंकनि उपरि पहिला घन, दूजा-तीजा अघन चौथा घन, पांचवाँ-छठा अघन ऐसैं क्रमतै ऊभी आडी लीक रूप सहनानी करनी । जो अंत का घन अंक न होइ तो अन्त उपांत दोय अंकनि की घन संज्ञा जाननी । अर ते दोऊ घन न होइ तौ अन्त तै तीन अंकनि की घन संज्ञा जाननी । तहा एक वा दोय वा तीन अंक रूप जो अन्त का घन, तामें जाका घन संभवै ताका घन करि ताकौ अंत का घन अकरूप प्रमाण में घटाइ अवशेष तहां लिखना । अर जाका घन कीया था, तिस मूल अंक कौ जुदा पंक्ति विषे स्थापना । बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अंक कौ तिस मूल अंक के वर्ग तै तिगुणा भागहार का भाग देना जो अंक पावै, ताकौ जुदा लिख्या हुआ अंक के आगे लिखना । अर पाया अंक करि भागहार कौ गुणी, भाज्य में घटाइ अवशेष तहां लिखि देना । बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक, ताविषे पाया अंक के वर्ग कौ पूवै पंक्ति विषे तिष्ठते अंकनि करि गुणें, जो प्रमाण होइ, ताकौ तिगुणा करि घटाइ देना । अवशेष तहां दिगना । बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक विषे तिस ही पाया अंक का घन घटावना । बहुरि अवशेष सहित आगिला अंक कौ जुदा लिखि अंकनि के प्रमाण

का वर्ग कौं तिगुणा करि निर्वाह होइ, तैसें भाग देना । पाया अंक पंक्ति विषे आगै लिखना । ऐसे ही अनुक्रम तै यावत् धनराशि निःशेष होइ तावत् कीए घनमूल का प्रमाण आवै है ।

इहां उदाहरण — जैसे घनराशि पंद्रह हजार छह सै पच्चीस (१५६२५) इहां घनअघन की सहनानी कीए ऐसा (१५६२५) इहां अन्त अंक घन नाहीं तातैं दोय अंक रूप अन्तघन १५ । इहां तीन का घन कीए बहुत होइ जाइ, तातैं दोय का घन आठ घटाइ, तहां अवशेष सात लिखना । अर घनमूल दूवा जुदी पंक्ति विषे लिखना बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अंक असा (७६) ताकौ मूल अंक का वर्ग च्यारि, ताका तिगुणा बारह, ताका भाग दिए छह पावै, परंतु आगै निर्वाह नाहीं तातैं पांच पाया सो दूवा के आगै पंक्ति विषे लिखना अर इस पांच करि भागहार बारह कौ गुणि, भाज्य में घटाए, अवशेष सोलह (१६) तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१६२) तामें पाया अंक पांच, ताका वर्ग पचीस, ताकौ पूवै पंक्ति विषे तिष्ठै था दूवा, ताकरी गुणे पचास, तिनके तिगुणे डचोढ सै घटाए अवशेष बारह, तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१२५), यामें पांच का घन घटाएं राशि निःशेष भया ऐसें पंद्रह हजार छःसै पच्चीस का घनमूल पच्चीस प्रमाण आया । ऐसे ही अन्यत्र जानना ।

ऐसे वर्गन करि अब भिन्न परिकर्माष्टक कहिए है । तहां हार अर अशनि का संकलनादिक जानना । हार अर अंश कहा कहिए । जैसे जहा छह पंचास कहे, तहां एक के पंचास अंश कीए तिह समान छह अंश जानने । वा छह का पांचवां भाग जानना । तहां छह कौ तो हार वा हर वा छेद कहिए । अर पाच कौ अंश वा लव इत्यादिक कहिए । तहा हार कौ ऊपरि लिखिए, अंश कौ नीचै लिखिए । जैसे छह पंचास कौ असा<sup>६</sup> लिखिए । ऐसे ही अन्यत्र जानना । तहां भिन्न संकलन-व्यवकलन के अर्थ भागजाति, प्रभागजाति, भागानुबंध, भागापवाह ए च्यारि जाति है । तिन-विषे इहां विशेष प्रयोजनभूत समच्छेद विधान लीए भागजाति कहिए है । जुदे-जुदे हार अर तिनके अंश लिखि एक-एक हार कौ अन्य हारनि के अंशनि करि गुणिए अर सर्व अंशनि कौ परस्पर गुणिए । ऐसे करि जो सकलन करना होइ तौ परस्पर हारनि कौ जोड दीजिए अर व्यवकलन करना होइ तो मूलराशि के हारनि विषे ऋणराशि के हार घटाइ दीजिए । अर अंश सबनि के समान भए । तातैं अश परस्पर गुणे जेते भए तेते ही राखिए । ऐसें समान अश होने तै याका नाम समच्छेद विधान है ।

इहां उदाहरण - तहां संकलन विषै पांच छट्ठा अंश दोय तिहाइ तीन पाव

(चौथाई) इनको जोडना होइ तहां  $\left| \begin{smallmatrix} ५ & २ & ३ \\ ६ & ३ & ४ \end{smallmatrix} \right|$  ऐसा लिखि तहां पांच हार कौ अन्य के तीन च्यारि-अंशनि करि अर दोय हार कौ अन्य के छह-च्यारि अंशनि करि अर तीन हार कौ अन्य के छह-तीन अंशनि करि गुणे साठि अडतालीस चीवन हार भए । अर अंशनि

कौ परस्पर गुणे सर्वत्र बहत्तर अंश  $\left| \begin{smallmatrix} ६० & ४५ & ५४ \\ ७२ & ७२ & ७२ \end{smallmatrix} \right|$  ऐसे भए । इहां हारनि कौ जोडे एक सो वासठ हार अर बहत्तर अश भए तहां हार कौ अंश का भाग दीए दोय पाये अर अवशेष अठारह का बहत्तरिवां भाग रह्या । ताका अठारह करि अपवर्त्तन कीए एक का चौथा भाग भया । ऐसे तिनका जोड सवा दोय आया । कोई संभवता प्रमाण का भाग देइ भाज्य वा भाजक राशि का महत् प्रमाण कौ थोरा कीजिए (वा नि.शेष कीजिए) तहा अपवर्त्तन संजा जाननी सो इहा अठारह का भाग दीए भाज्य अठारह था, तहां एक भया अर भागहार बहत्तर था, तहां च्यारि भया, तातै अठारह करि अपवर्त्तन भया कह्या । ऐसे ही अन्यत्र अपवर्त्तन का स्वरूप जानना ।

बहुरि व्यवकलन विषै जैसें तीन विषै पांच चौथा अंश घटावना । तहां 'कल्प्यो हरो रूपमहारराशेः' इस वचन तै जाके अंश न होइ, तहा एक अंश कल्पना, सो इहां तीनका अंश नाही, तातै एक अंश कल्पि  $\left| \begin{smallmatrix} ३ & ५ \\ १ & ४ \end{smallmatrix} \right|$  ऐसे लिखना इहां तीन हारनि कौ अन्य के च्यारि अंश करि, अर पांच हारनि कौ अन्य के एक अंश करि गुणे अर अंशनि कौ परस्पर गुणे  $\left| \begin{smallmatrix} १२ & ५ \\ ४ & ३ \end{smallmatrix} \right|$  ऐसा भया । इहां बारह हारनि विषै पांच घटाएं सात हार भए । अर अंश च्यारि भए । तहां हार कौ अंश का भाग दीए एक अर तीन का चौथा भाग पौए इतना फल आया ।

बहुरी भिन्न गुणकार विषै गुण्य अर गुणकार के हार कौ हार करि अंश कौ अंश करि गुणन करना । जैसे दश की चौथाइ कौ च्यारि की तिहाइ करि गुणना होइ, तहां ऐसा  $\left| \begin{smallmatrix} १० & ४ \\ ८ & ३ \end{smallmatrix} \right|$  लिखि गुण्य-गुणकार के हार अर अंशनि कौ गुणे चालीस हार अर बारह अंश  $\left| \begin{smallmatrix} ४० \\ १२ \end{smallmatrix} \right|$  भए तहां हार कौ अंश का भाग दीए तीन पाया । अव शेष च्यारि का बारहवां भाग ताकौ च्यारि करि अपवर्त्तन कीए एक का तीसरा भाग भया । अरै ही अन्यत्र जानना ।



बहुरि भिन्न भागहार विषै भाजक के हारनि कौ अंश कीजिए अर अंशनि कौ हार कीजिए । अैसे पलटि भाज्य-भाजक का गुण्य-गुणकारवत् विधान करना । जैसे सैतीस के आधा कौं तेरह की चौथाई का भाग देना होइ तहां अैसे  $\left| \begin{smallmatrix} ३७ & १३ \\ २ & ४ \end{smallmatrix} \right|$  लिखिए बहुरि भाजक के हार अर अंश पलटै अैसे  $\left| \begin{smallmatrix} ३७ & ४ \\ २ & १३ \end{smallmatrix} \right|$  लिखिना । बहुरि गुणनविधि कीए एक सौ अडतालीस हार अर छव्वीस अंश  $\frac{१४८}{२६}$  भए । तहां अंश का हार कौ भाग दीए पांच पाए । अर अवशेष अठारह छव्वीसवां भाग, ताका दोय करि अपवर्त्तन कीए नव तेरहवां भागमात्र भया । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि भिन्न वर्ग अर घन का विधान गुणकारवत् ही जानना । जातै समान राशि दोय कौ परस्पर गुणे वर्ग हो है । तीन कौ परस्पर गुणे घन हो है । जैसे तेरह का चौथा भाग कौ दोय जायगा मांडि  $\left| \begin{smallmatrix} १३ & १३ \\ ४ & ४ \end{smallmatrix} \right|$  परस्पर गुणे ताका वर्ग एक सौ गुणहत्तर का सोलहवां भागमात्र  $\frac{१६६}{१६}$  हो है । अर तीन जायगा मांडि  $\left| \begin{smallmatrix} १३ & १३ & १३ \\ ४ & ४ & ४ \end{smallmatrix} \right|$  परस्पर गुणें इकईस सै सत्याणवै का चौसठवां भाग मात्र  $\frac{२१६७}{६४}$  घन हो है । बहुरि भिन्न वर्गमूल, घनमूल विषै हारनि का अर अंशनि का पूर्वोक्त विधान करि जुदा-जुदा मूल ग्रहण करिए । जैसे वर्गित राशि एक सौ गुणहत्तरि का सोलहवा भाग  $\frac{१६६}{१६}$  । तहां पूर्वोक्त विधान तै एक सौ गुणहत्तरि का वर्गमूल तेरह, अर सोलह का च्यारि अैसे तेरह का चौथा भागमात्र  $\frac{१३}{४}$  वर्गमूल आया । बहुरि घनराशि इकईस सै सत्याणवै का चौसठवां भाग  $\frac{२१६७}{६४}$  । तहां पूर्वोक्त विधान करि इकईस सै सत्याणवै का घनमूल तेरह, चौसठि का च्यारि ऐसे तेरह का चौथा भागमात्र  $\frac{१३}{४}$  घनमूल आया । अंमै ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि अब शून्यपरिकर्माष्ट लिखिए है । शून्य नाम विदी का है, ताके सकलनादिक कहिए है । तहां विदी विषै अंक जोडै अंक ही होय । जैसे पचान विषै पांच जोडिए । तहा एकस्थानीय विदी विषै पांच जोडै पांच भए । दशस्थानीय पांच है ही, अैसे पचावन भए । बहुरि अंक विषै विदी घटाए अंक ही रहै । जैसे पचावन में दश

घटाए एक स्थानीय पांच में विदी घटाए पांच ही रहे, दशस्थानीय पांच में एक घटाए चार रहे अंस पैतालीस भए । वहरि गुणकार विपै अंक को विदीकरि गुणे विदी होय । जैसे बीस को पांच करि गुणिए, तहां गुण्य के दूवा को पांच करि गुणे दश भए । वहरि विदी को पांच करि गुणे, विदी ही भई अंस सी भए ।

वहरि अंक का विदी का भाग दीए खहर कहिए । जातै जैसे-जैसे भागहार घटता होइ, तैसे-तैसे लघ्वराशि बढती होइ । जैसे दश को एक का छट्ठा भाग का भाग दीए साठि होइ, एक का बीसवां भाग का भाग दीए दोय सै होय, सो विदी शून्यरूप, ताका भाग दीए फल का प्रमाण अवक्तव्य है । याका हार विदी है, इतना ही कह्या जाए । वहुरी विदी का वर्गघन, वर्गमूल, घनमूल विपै गुणकारादिवत् विदी ही हो है । अंस लौकिक गणित अपेक्षा परिकर्माष्टक का विधान कह्या ।

वहरि अलौकिक गणित अपेक्षा विधान है, सो सातिजय जानगम्य है । जातै तहां अंकादिक का अनुक्रम व्यक्तरूप ? नाही है । तहा कही ती संकलनादि होतै जो प्रमाण भया ताका नाम कहिए है । जैसे उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात विपै एक जोडै जघन्य परीतानंत होइ, (जघन्य परीतानंत में एक घटाए उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होइ) ? अर जघन्य परीतासंख्यात विपै एक घटाए उत्कृष्ट संख्यात होइ । पत्य को दशकोडा-कोडि करि गुणे सागर होइ जगत् श्रेणी कूं सात का भाग दीए राजू होइ । जघन्य युक्ता-संख्यात का वर्ग कीए जघन्य असंख्यातासंख्यात होइ । सूच्यंगुल का घन कीये घनांगुल होइ । प्रतरांगुल का वर्गमूल ग्रहे सूच्यंगुल होइ । लोक का घनमूल ग्रहे जगत् श्रेणी होइ, इत्यादि जानना ।

वहरि कही संकलनादि होतै जो प्रमाण भया, ताका नाम न कहिए है, संकलनादिरूप ही कथन कहिए है । जातै सर्व संख्यात, असंख्यात, अनंतनि के भेदनि का नाम वक्तव्यरूप नाही है । जैसे जीवराशि करि अधिक पुद्गलराशि कहिए वा सिद्ध राशि करि द्वीन जीवराशि कहिए, वा असंख्यात गुणा लोक कहिए वा संख्यात प्रतरांगुल करि भाजित जगत्प्रतर कहिए, वा पत्य का वर्ग कहिए, वा पत्य का घन कहिए, वा केवलज्ञान का वर्गमूल कहिए, वा आकाश प्रदेशराशि का घनमूल कहिए, इत्यादि

१. ६ प्रति 'वनव्यरूप' ऐसा पाठ है ।

२. यह वाक्य निम्न छपी प्रति में है, इतलिवित छह प्रतियों में नहीं है ।

जानना । बहुरि अलोकिक मान की सहनानी स्थापि, तिनके लिखने का वा तहां संकलनादि होतै लिखने का जो विधान है, सो आगै सदृष्टि अधिकार विषै वर्णन करेगे, तहां तै जानना । बहुरि तहा ही लोकिक मान का भी लिखने का वा तहां संकलनादि होतै लिखने का जो विधान है, सो वर्णन करेगे । इहां लिखै ग्रन्थ विषै प्रवेश करते ही शिष्यनि कौ कठिनता भासती, तहां अरुचि होती, तातै इहां न लिखिए है । उदाहरण मात्र इतना ही इहा भी जानना, जो संकलन विषै तौ अधिक राशि कौ ऊपरि लिखना जैसे पंच अधिक सहस्र  $“ ५ ”$   $१०००$  अैसे लिखने । व्यवकलन विषै हीन राशि कौ ऊपरि लिखि तहा पूछडीकासा आकार करि बिदी दीजिए जैसे पंच हीन सहस्र  $५$   $१०००$  अैसे लिखिए । गुणकार विषै गुण्य के आगै गुणक कौ लिखिए । जैसे पंचगुणा सहस्र  $१००० \times ५$  अैसे लिखिए । भागहार विषै भाज्य के नीचै भाजक कौ लिखिए । जैसे पांच करि भाजित सहस्र  $१०००$   $५$  अैसे लिखिए । वर्ग विषै राशि कौ दोय बार बराबर मांडिए । जैसे पांच का वर्ग कौ  $५ \times ५$  अैसे लिखिए । घन विषै राशि कौ तीन बार बराबर मांडिए । जैसे पांच का घन कौ  $५ \times ५ \times ५$  अैसे लिखिए । वर्गमूल-घनमूल विषै वर्गरूप-घनरूप राशि के आगै मूल की सहनानी करनी । जैसे पचीस का वर्गमूल कौ  $“ २५ व० मू० ”$  अैसे लिखिए । एक सौ पचीस का घनमूल कौ  $“ १२५ व० मू० ”$  अैसे लिखिए । अैसे अनेक प्रकार लिखने का विधान है । अैसे परिकर्माष्टक का व्याख्यान कीया सो जानना ।

बहुरि त्रैराशिक का जहां-तहां प्रयोजन जानि स्वरूप मात्र कहिए है । तहां तीन राशि हो है — प्रमाण फल, इच्छा । तहा जिस विवक्षित प्रमाण करि जो फल प्राप्त होइ, सो प्रमाणराशि अर फलराशि जाननी । बहुरि अपना इच्छित प्रमाण होइ, सो इच्छा राशि जाननी । तहा फल कौ इच्छा करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए अपना इच्छित प्रमाण करि प्राप्त जो फल, ताका प्रमाण आवै है, इसका नाम लब्ध है । इहा प्रमाण अर इच्छा १ की एकजाति जाननी । बहुरि फल अर लब्ध की एक जाति जाननी । इहां उदाहरण जैसे पांच रुपैया का सात मण अन्न आवै तौ सात रुपैया का केता अन्न आवै अैसे त्रैराशिक कीया । इहा प्रमाण राशि पांच, फल राशि सात, इच्छा राशि सात, तहा फलकरि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए गुणचास

का पांचवां भाग मात्र लब्ध प्रमाण आया । ताका नव मण अर च्यारि मण का पाचवां भाग मात्र लब्धराशि भया ।

अैसे ही छह सै आठ (६०८) सिद्ध छह महीना आठ समय विषे होइ, ती सर्व सिद्ध केते काल में होइ, अैसे त्रैराशिक करिए, तहां प्रमाण राशि छह सै आठ, अर फलराशि छह मास आठ समयनि की संख्यात आवली, इच्छा राशि सिद्धराशि । तहां फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए लब्धराशि संख्यात आवली करि गुणित सिद्ध राशि मात्र अतीत काल का प्रमाण आवै है । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि केतेइक गणितनि का कथन आगे इस शास्त्र विषे जहां प्रयोजन आवैगा तहा कहिएगा । जैसे श्रेणी व्यवहार का कथन गुणस्थानाधिकार विषे करणनि का कथन करते कहिएगा । बहुरि एक बार, दोय बार आदि संकलन का कथन जाना-धिकार विषे पर्यायसमासज्ञान का कथन करते कहिएगा । बहुरि गोल आदि क्षेत्र व्यवहार का कथन जीवसमासादिक अधिकारनि विषे कहिएगा । अैसे ही और भी गणितनि का जहां प्रयोजन होइगा तहां ही कथन करिएगा सो जानना । बहुरि अज्ञात राशि ल्यावने का विधान वा सुवर्णगणित आदि गणितनि का इहां प्रयोजन नाही, ताते तिनका इहां कथन न करिए है । अैसे गणित का कथन किया । ताकौ यदि राखि जहां प्रयोजन होइ, तहा यथार्थरूप जानना । बहुरि अैसे ही इस शास्त्र विषे करणसूत्रनि का, वा केई संज्ञानि का वा केई अर्थनि का स्वरूप एक बार जहां कह्या होइ, तहाते यदि राखि, तिनका जहां प्रयोजन आवै, तहा तैसा ही स्वरूप जानना ।

या प्रकार श्रीगोम्मतसार शास्त्र की सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा  
भाषाटीका विषे पीठिका समाप्त भई ।

# गोम्मटसार जीवकाण्ड

## सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

### भाषाटीका सहित

अब इस शास्त्र के मूल सूत्रनि की संस्कृत टीका के अनुसार भाषा टीका करिए है । तहां प्रथम ही संस्कृत टीकाकार करि कथित ग्रन्थ करने की प्रतिज्ञा, वा मूल शास्त्र होने के समाचार वा मंगल करने की पुष्टता इत्यादि कथन कहिए है ।

बंदौ नेमिचंद्र जिनराय, सिद्ध ज्ञानभूषण सुखदाय ।

करि हौ गोम्मटसार सुटीक, करि कर्णाट टीक तै ठीक ॥१॥

असै संस्कृत टीकाकार मंगलपूर्वक प्रतिज्ञा करी है । बहुरि कहै है — श्रीमान् अर कौह करि हण्या न जाय है प्रभाव जाका, ऐसा जो स्याद्वाद मत, सोही भई गुफा ताके अभ्यंतर वास करता जो कुवादीरूप हस्तीनि कौ सिंहसमान सिंहनन्दि नामा मुनीन्द्र, तिहकरि भई है ज्ञानादिक की वृद्धि जाकै, ऐसा जो गंगनामा वश विषै तिलक समान अर राजकार्य का सर्व जानने कौ आदि दे करि अनेक गुणसयुक्त श्रीमान् राजमल्ल नामा महाराजा देव, पृथिवी कौ प्यारा, ताका महान् जो मंत्रीपद, तिहविषै शोभायमान अर रण की रंगभूमि विषै शूरवीर अर पर का सहाय न चाहै, ऐसा पराक्रम का धारी, अर गुणरूपी रत्ननि का आभूषण जाके पाइए अर सम्यक्त्व रत्न का स्थानकपना कौ आदि देकरि नानाप्रकार के गुणन करि अंगीकार करी जो कीर्ति, ताका भर्तार असै जो श्रीमान् चामुंडराय राजा, ताका प्रश्न करि जाका अवतार भया, ऐसा इकतालीस पदनि विषै नामकर्म के सत्त्व का निरूपण, तिहद्वार करि समस्त शिष्य जननि के समूह कौ संबोधन के अर्थ श्रीमान् नेमीचन्द्र नामा सिद्धांतचक्रवर्ती, समस्त सिद्धांत पाठी, जननि विषै विख्यात है निर्मल यश जाका, अर विस्तीर्ण बुद्धि का धारक, यहु भगवान् शास्त्र का कर्ता ।

सो महाकर्मप्रकृति प्राभृत नामा मुख्य प्रथम सिद्धांत, तिहका १. जीवस्थान, २. क्षुद्रबंध, ३. बंधस्वामी, ४. वेदनाखण्ड, ५. वर्गणाखंड, ६. महाबंध — ए छह खंड हैं ।

तिनविषे जीवादिक जो प्रमाण करनेयोग्य समस्त वस्तु, ताकी उद्धार करि गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह नामा ग्रंथ के विस्तार की रचता संता तिस ग्रंथ की आदि ही विषे निर्विघ्न शास्त्र की सपूर्णता होने के अर्थ, वा नास्तिक वादी का परिहार के अर्थ, वा शिष्टाचार का पालने के अर्थ, वा उपकार की स्मरण के अर्थ विशिष्ट जो अपना इष्ट देव का विशेष, ताहि नमस्कार करै है ।

भावार्थ — इहां ऐसा जानना — सिंहनन्दि नामा मुनि का शिष्य, जो गंगवंशी राजमल्ल नामा महाराजा, ताका मंत्री जो चामुंडराय राजा, तिहने नेमीचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती प्रति ऐसा प्रश्न कीया —

जो सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायादिक इकतालीस जीवपदनि विषे नामकर्म के सत्त्वनि का निरूपण कैसे है ? सो कहौ ।

तहा इस प्रश्न के निमित्त कौ पाय अनेक जीवनि के संबोधने के अर्थ जीवस्थानादिक छह अधिकार जामै पाइए, ऐसा महाकर्म प्रकृति प्राभृत है नाम जाका, ऐसा अग्रायणीय पूर्व का पाचवा वस्तु, अथवा यति भूतबलि आचार्यकृत १ धवल शास्त्र, ताका अनुसार लेइ गोम्मटसार अर याहीका द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथ, ताके करने का प्रारंभ किया । तहां प्रथम अपने इष्टदेव कौ नमस्कार करै हैं । ताके निर्विघ्नपने शास्त्र की समाप्तता होने कू आदि दैकरि च्यारि प्रयोजन कहे । अब इनका दृढ़ करै हैं ।

इहा तर्क — जो इष्टदेव, ताकौ नमस्कार करने करि निर्विघ्नपने शास्त्र की समाप्तता कहा हो है ?

तहा कहिए है — जो ऐसी आशंका न करनी, जातै शास्त्र का ऐसा वचन है—

“विघ्नौघाः प्रलयं याति शाकिनीभूतपन्नगाः ।

विषं निर्विषतां याति स्तुयमाने जिनेश्वरे ॥”

याका अर्थ — जो जिनेश्वरदेव कौ स्तवतां थका विघ्न के जु समूह, ते नाश कौ प्राप्त हो हैं । बहुरि शाकिनी, भूत, सर्पादिक, ते नाश कौ प्राप्त हो हैं । बहुरि विष है, सो विषरहितपना कौ प्राप्त हो है । सो ऐसा वचन थकी शंका न करना । बहुरि जेने प्रायश्चित्त का आचरण करि व्रतादिक का दोष नष्ट हो है, बहुरि जैसे

१. यनि दृष्टजाचार्य ने गुणधराचार्य विरचित कपायपाहुट के सूत्रों पर चूणिमूय लिखे हैं । भूतबली आचार्य ने “दृष्टजाचार्य” नाम की रचना की है और आचार्य वीरसेन ने पट्टखण्डागम सूत्रों की ‘धवला’ टीका लिखी है

औषधि सेवन करि रोग नष्ट हो है; तैसे मंगल करने करि विघ्नकर्ता अन्तरायकर्म के नाश का अविरोध है, तातै शंका न करनी । अैसे प्रथम प्रयोजन दृढ़ किया ।

बहुरि तर्क — जो ऐसा न्याय है—

“सर्वथा स्वहितमाचरणीयं किं करिष्यति जनो बहुजल्पः ।  
विद्यते नहि स कश्चिदुपायः सर्वलोकपरितोषकरो यः ॥”

याका अर्थ — जो सर्वप्रकार करि अपना हित का आचरण करना । अपना हित करते बहुत बकै है जो मनुष्यलोक, सो कहा करैगा ? अर कोऊ कहै जो सर्व प्रसन्न होइ, सो कार्य करना; तो लोक विषै सो कोई उपाय ही नाही, जो सर्व लोक कौ संतोष करै । अैसे न्याय करि जाका प्रारम्भ करो हौ, ताका प्रारम्भ करौ ।

नास्तिकवादी का परिहार करि कहा साध्य है ?

तहा कहिए है — अैसा भी न कहना । जातै प्रशम, सवेग अनुकम्पा, आस्तिक्य गुण का प्रगट होनेरूप लक्षण का धारी सम्यग्दर्शन है । यातै नास्तिकवादी का परिहार करि आप्त जो सर्वज्ञ, तिहने आदि देकरि पदार्थनि विषै जो आस्तिक्य भाव हो है, ताकै सम्यग्दर्शन का प्राप्ति करने का कारणपना पाइए है । बहुरि अैसा प्रसिद्ध वचन है—

“यद्यपि विमलो योगी, छिद्रान् पश्यति मेदनि ।  
तथापि लौकिकाचारं, मनसापि न लंघयेत् ॥”

याका अर्थ — यद्यपि योगीश्वर निर्मल है, तथापि पृथ्वी वाके भी छिद्रनि कौ देखै है । तातै लौकिक आचार कूं मन करि भी उल्लंघन न करै; अैसे प्रसिद्ध है । तातै नास्तिक का परिहार कीया चाहिये । अैसे दूसरा प्रयोजन दृढ़ किया ।

बहुरि तर्क — जो शिष्टचार का पालन किसै अर्थ करिए ?

तहां कहिए है — अैसा विचार योग्य नाही, जातै अैसा वचन मुख्य है “प्रायेण गुरुजनशीलमनुचरन्ति शिष्याः ।” याका अर्थ — जे शिष्य है ते, अतिशय करि गुरुजन का जु स्वभाव, ताकौ अनुसार करि आचरण करै है । बहुरि अैसा न्याय है — “मंगलं निमित्तं हेतुं परिमाणं नाम कर्तारमिति षडपि व्याकृत्याचार्याः पश्चाच्छास्त्रं व्याकुर्वन्तु” याका अर्थ—जो मंगल, निमित्त, हेतु, परिमाण, नाम, कर्ता इन छहों कौ पहिले करि

आचार्य है सो पीछे शास्त्र कौ करौ । असा न्याय आचार्यनि की परंपरा तै चल्या आया है । ताका उल्लघन कीए उन्मार्ग विषे प्रवर्तने का प्रसंग होय । तातै शिष्टाचार का पालना किसे अर्थ करिए है ? असा विचार योग्य नाही ।

अब इहा मंगलादिक छहों कहा ? सो कहिए है - तहां प्रथम ही पुण्य, पूत, पवित्र, प्रगस्त, शिव, भद्र, क्षेम, कल्याण, शुभ, सौख्य - इत्यादि मंगल के पर्याय है । मंगल ही के पुण्यादिक भी नाम है । तहां मल दोय प्रकार है - द्रव्यमल, भावमल तहां द्रव्यमल दोयप्रकार - बहिरंग, अन्तरंग । तहां पसेव, मल, धूलि, कादों इत्यादि बहिरंग द्रव्यमल है । बहुरि प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशनि करि आत्मा के प्रदेशनि विषे निविड बंध्या जो जानावरणादि आठ प्रकार कर्म, सो अन्तरंग द्रव्यमल है ।

बहुरि भावमल अज्ञान, अदर्शनादि परिणामरूप है । अथवा नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव भेदरूप मल है । अथवा उपचार मल जीव के पाप कर्म है । तिस सब ही मल कौ गालयति कहिए विनाशै, वा घातै, वा दहै, वा हनै, वा शोधै, वा विध्वंसै, सो मंगल कहिए । अथवा मंगं कहिए सौख्य वा पुण्य, ताकौ लाति कहिए आदान करै, ग्रहण करै, सो मंगल है ।

बहुरि सो मंगल नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भेद तै आनंद का उपजावनहारा छह प्रकार है । तहा अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, इनका जो नाम, सो तां नाम मंगल है । बहुरि कृत्रिम, अकृत्रिम जिनादिक के प्रतिविव, सो स्थापना मंगल है । बहुरि जिन, आचार्य, उपाध्याय, साधु इनका जो शरीर, सो द्रव्य मंगल है ।

बहुरि कैलाश, गिरिनार, सम्मेदाचलादिक पर्वतादिक, अर्हन्त आदिक के तप-केवलजानादि गुणनि के उपजने का स्थान, वा साढा तीन हाथ ते लगाय पाच नै पञ्चम धनुष पर्यन्त केवली का शरीर करि रोक्या हूवा आकाश अथवा केवली का अनुदयान् नहि रोक्या हूवा आकाश, सो क्षेत्र मंगल है ।

बहुरि जिस काल विषे तप आदिक कल्याण भए होहि, वा जिस काल विषे अर्हन्त आदि जिनादिक के महान उत्सव वर्तै, सो काल मंगल है ।

बहुरि मंगल पर्याय करि संयुक्त जीवद्रव्यमात्र भाव मंगल है ।

गो यद् गत्या हूवा मंगल जिनादिक का स्तवनादिरूप है, सो शास्त्र की आदि ॥ १॥ गीसा हूवा जिन्यनि की घोर कालादिक करि शास्त्रनि का पारगामी करै है ।



मध्य विषै कीया हूवा मंगल विद्या का व्युच्छेद न होइ, ताकौ करै है । अन्त विषै कीया हूवा विद्या का निर्विघ्नपनै कौ करै है ।

कोई तर्क करै कि — इष्ट अर्थ की प्राप्ति परमेष्ठीनि के नमस्कार तै कैसे होइ ?

तहां काव्य कहिए है —

“नेष्टं विहंतुं शुभभावभग्नरसप्रकर्षः प्रभुरंतराय ।

तत्कामचारेण गुणानुरागान्नुत्यादिरिष्टार्थकृदहदादेः ॥”

याका अर्थ — अर्हन्तादिक कौ नमस्काररूप शुभ भावनि करी नष्ट भया है अनुभाग का आधिक्य जाका, असा जु अन्तराय नामा कर्म, सो इष्ट के घातने कौ प्रभु कहिए समर्थ न होइ, तातै तिस अभिलाष युक्त जीव करि गुणानुराग तै अर्हत आदिक कौ कह्या हूवानमस्कारादिक, सो इष्ट अर्थ का करनहारा है - असा परमागम विषै प्रसिद्ध है, तातै सो मंगल अवश्य करना ही योग्य है ।

बहुरि निमित्त इस शास्त्र का यहु है — जे भव्य जीव है, ते बहुत नय प्रमाणनि करि नानाप्रकार भेद कौ लीये पदार्थ कौ जानहु, इस कार्य कौ कारणभूत करिए है ।

बहुरि हेतु इस शास्त्र के अध्ययन विषै दोय प्रकार है — प्रत्यक्ष, परोक्ष । तहां प्रत्यक्ष दोय प्रकार — साक्षात्प्रत्यक्ष, परपराप्रत्यक्ष । तहा अज्ञान का विनाश होना, बहुरि सम्यग्ज्ञान की उत्पत्ति होनी, बहुरि देव-मनुष्यादिकनि करि निरंतर पूजा करना, बहुरि समय-समय प्रति असख्यात गुणश्रेणीरूप कर्म निर्जर होना, ये तौ साक्षात् प्रत्यक्ष हेतु है । शास्त्राध्ययन करतै ही ए फल निपजै है । बहुरि शिष्य वा शिष्यनि के प्रति शिष्य, तिनकरि निरंतर पूजा का करना, सो परंपरा प्रत्यक्ष हेतु है । शास्त्राध्ययन कीए तै असी फल की परंपरा हो है ।

बहुरि परोक्ष हेतु दोय प्रकार — अभ्युदयरूप, निःश्रेयसरूप । तहा सातावेदनी-यादिक प्रशस्त प्रकृतिनि का तीव्र अनुभाग का उदय करि निपज्या तीर्थकर, इंद्र, राजादिक का सुख, सो तौ अभ्युदयरूप है । बहुरि अतिशय संयुक्त, आत्मजनित, अनौपम्य, सर्वोत्कृष्ट तीर्थकर का सुख वा पंचेद्रियनि तै अतीत सिद्ध सुख, सो निःश्रेयसरूप है । ग्रंथ अध्ययन तै पीछे परोक्ष असा फल पाइए हैं । तातै यहु ग्रंथ ऐसे फलनि का हेतु जानना ।

बहुरि प्रमाण इस शास्त्र का नानाप्रकार अर्थनि करि अनन्त है । बहुरि अक्षर गणना करि सख्यात है; जातै जीवकाण्ड का सात सैं पचीस गाथा सूत्र है ।

बहुरि नाम-जीवादि वस्तु का प्रकाशने कौ दीपिका समान है । तातै संस्कृत टीका की अपेक्षा जीवतत्त्वप्रदीपिका है ।

बहुरि कर्ता इस शास्त्र का तीन प्रकार - अर्थकर्ता, ग्रथकर्ता, उत्तर ग्रंथकर्ता ।

तहाँ समस्तपनै दग्ध कीया धाति कर्म चतुष्टय, तिहकरि उपज्या जो अनन्त ज्ञानादिक चतुष्टयपना, ताकरि जान्या है त्रिकाल संबन्धी समस्त द्रव्य-गुण-पर्याय का यथार्थ स्वरूप जिहै, बहुरि नष्ट भए हैं क्षुधादिक अठारह दोष जाके, बहुरि चौतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य करि संयुक्त, बहुरि समस्त सुरेन्द्र-नरेन्द्रादिकनि करि पूजित हैं चरण कमल जाका, बहुरि तीन लोक का एक नाथ, बहुरि अठारह महाभाषा अर सात सैं क्षुद्र भाषा, वा संजी सबधी अक्षर-अनक्षर भाषा तिहस्वरूप, अर तालवा, दात, होठ, कठ का हलावना आदि व्यापाररहित, अर भव्य जीवनि कौ आनन्द का कर्ता, अर युगपत् सर्व जीवनि कौ उत्तर का प्रतिपादन करनहारा ऐसी जु दिव्यध्वनि, तिहकरि संयुक्त, बहुरि बारह सभा करि सेवनीक, ऐसा जो भगवान श्री वर्द्धमान तीर्थकर परमदेव, सो अर्थकर्ता जानना ।

बहुरि तिस अर्थ का ज्ञान वा कवित्वादि विज्ञान अर सात ऋद्धि, तिनकरि नपुर्ण विराजमान ऐसा गौतम गणधर देव, सो ग्रथकर्ता जानना । बहुरि तिसही के अनुक्रम का धारक, बहुरि नाही नष्ट भया है सूत्र का अर्थ जाकै, बहुरि रागादि दांपनि करि रहित ऐसा जो मुनिश्वरनि का समूह, सो उत्तर ग्रंथकर्ता जानना ।

या प्रकार मगलादि छहोनि का व्याख्यान इहा कीया । ऐसैं तीसरा प्रयोजन दूट कीया ह ।

बहुरि तर्क - जो शास्त्र की आदि विषे उपकार स्मरण किसे अर्थ करिए है?

तहाँ कहिए हैं - जो ऐसा न कहना, जातै ऐसा कथन है

“श्रेयोमार्गन्य संसिद्धिः प्रसादात्परमेष्ठिनः

दन्याहृन्माद्गुणस्तोत्रं शास्त्रादौ मुनिपुगवाः ॥”

याका अर्थ — श्रेय जो कल्याण, ताके मार्ग की सम्यक् प्रकार सिद्धि, सो परमेष्ठि के प्रसाद तै हो है । इस हेतु तै मुनि प्रधान है, ते शास्त्र की आदि विषै तिस परमेष्ठी का स्तोत्र करना कहै है । बहुरि ऐसा वचन है—

अभिमतफलसिद्धेरभ्युपायः सुबोधः, प्रभवति स च शास्त्रात्तस्य चोत्पत्तिराप्तात् ।  
इति भवति स पूज्यस्तत्प्रसादात्प्रबुद्धैर्न हि कृतमुपकारं पण्डिताः (साधवो) विस्मरन्ति ॥

याका अर्थ — वांछित, अभीष्ट फल की सिद्धि होने का उपाय सम्यग्ज्ञान है । बहुरि सो सम्यग्ज्ञान शास्त्र तै हो है । बहुरि तिस शास्त्र की उत्पत्ति आप्त जो सर्वज्ञ तै है । इस हेतु तै सो आप्त सर्वज्ञदेव है, सो तिसका प्रसाद तै ज्ञानवंत भए जे जीव, तिनकरि पूज्य हो है, सो न्याय ही है व पंडित है, ते कीए उपकार कौ नाही भूलै है, तातै शास्त्र की आदि विषै उपकार स्मरण किसे अर्थ करिए ऐसा न कहना । ऐसै चौथा प्रयोजन दूढ किया ।

याहीतै विघ्न विनाशने कौ, बहुरि शिष्टाचार पालने कौ, बहुरि नास्तिक के परिहार कौ, बहुरि अभ्युदय का कारण जो परम पुण्य, ताहि उपजावने कौ, बहुरि कीया उपकार के यादि करने कौ शास्त्र की आदि विषै जिनेद्रादिक कौ नमस्कारादि रूप जो मुख्य मंगल, ताकौ आचरण करत संता, बहुरि जो अर्थ कहेगा, तिस अभिधेय की प्रतिज्ञा कौ प्रकाशता सता आचार्य है, सौ सिद्धं इत्यादि गाथा सूत्र कौ कहै है—

सिद्धं सुद्धं प्रणम्य, जिनेद्रवरणेमिचंद्रमकलंकं ।

गुणरयणभूषणोदयं, जीवस्स प्ररूपणं वोच्छं ॥१॥

सिद्धं शुद्धं प्रणम्य, जिनेद्रवरणेमिचन्द्रमकलंकम् ।

गुणरत्नभूषणोदयं, जीवस्य प्ररूपणं वक्ष्ये ॥१॥

टीका — अहं वक्ष्यामि । अहं कहिए मै जु हों ग्रंथकर्ता । सो वक्ष्यामि कहिये कहौगा करौगा । किं ? किसहि करौगा ? प्ररूपणं कहिये व्याख्यान अथवा अर्थ कौ प्ररूपै वा अर्थ याकरि प्ररूपिये ऐसा जु ग्रंथ, ताहि करौगा । कस्य प्ररूपणं ? किसका प्ररूपण कहौगा ? जीवस्य कहिये च्यारि प्राणनि करि जीवै है, जीवेगा, जीया ऐसा जीव जो आत्मा, तिस जीव के भेद का प्रतिपादन करण हारा शास्त्र

में कहौंगा; असी प्रतिज्ञा करि । इस प्रतिज्ञा करि इस शास्त्र के संबन्धाभिधेय, शक्यानुष्ठान, इष्टप्रयोजनपना है; ताते बुद्धिवंतनि करि आदर करना योग्य कह्या है ।

तहा जैसा संबन्ध होइ, तैसा ही जहा अर्थ होइ; सो संबन्धाभिधेय कहिये । वहुरि जाके अर्थ के आचरण करने की सामर्थ्य होइ, सो शक्यानुष्ठान कहिये । वहुरि जो हितकारी प्रयोजन लिए होइ, सो इष्टप्रयोजक कहिये ।

कथंभूतं प्ररूपणं ? जाकौ कहौंगा, सो कैसा है प्ररूपण ? गुणरत्नभूषणोदय-गुण जे सम्यग्दर्शनादिक, तेई भये रत्न, सोई है आभूषण जाके, असा जो गुणरत्नभूषण चामुंडराय, तिसते है उदय कहिये उत्पत्ति जाकी असा शास्त्र है । जाते चामुंडराय के प्रश्न के वश ते याकी उत्पत्ति प्रसिद्ध है । अथवा गुणरूप जो रत्न सो भूषयति कहिये शोभै जिहि विषे ऐसा गुणरत्नभूषण मोक्ष, ताकी है उदय कहिये उत्पत्ति जाते ऐसा शास्त्र है ।

भावार्थ — यहु शास्त्र मोक्ष का कारण है । वहुरि विकथारूप वंध का कारण नाही है । इस विज्ञेपण करि १. वंधक २. वध्यमान ३. वंधस्वामी ४. वंधहेतु ५. वंधभेद - ये पंच सिद्धांत के अर्थ हैं ।

तहा कर्मवव का कर्ता संसारी जीव, सो वंधक । वहुरि मूल-उत्तर प्रकृतिवध सो वध्यमान । वहुरि यथासभव वव का सद्भाव लीये गुणस्थानादिक, सो वंधस्वामी । वहुरि मिथ्यात्वादि आस्रव, सो वंधहेतु । वहुरि प्रकृति, स्थिति आदि वंधभेद — इनका निरूपण है, ताते गोम्मटसार का द्वितीयनाम पंचसंग्रह है । तिहिविषे वंधक जो जीव, ताका प्रतिपादन करणहारा यहु शास्त्र जीवस्थान वा जीवकांड इनि दोय नामनिकरि विन्यास, नाहि में कहौंगा । असा शास्त्र के कर्ता का अभिप्राय यहु विज्ञेपण दिग्वारे है ।

वहुरि कथंभूतं प्ररूपणं ? कैसा है प्ररूपण ? सिद्धं कहिये पूर्वाचार्यनि की परंपरा करि प्रसिद्ध है, अपनी रचि करि नाही रचनारूप किया है । इस विज्ञेपण करि आचार्य अपना कर्तापना को छोडि पूर्व आचार्यादिकनि का अनुसार को कहै है । पुनः किं विज्ञेपणं ? वहुरि कैसा है प्ररूपण ? शुद्धं कहिये पूर्वापर विरोध को प्रादि देकरि दोषनि करि रहित है, ताते निर्मल है । इस विज्ञेपण करि सम्यग्ज्ञानी जीवनि के उपादेयपना इस शास्त्र का प्रकाशित कीया है ।

ते जीवसमास है । वहुरि परि कहिये समंतता ते आप्ति कहिये प्राप्ति, सो पर्याप्ति है । शक्ति की निष्पन्नता का होना सो पर्याप्ति जानना । वहुरि प्राणंति कहिये जीवें हैं जीवितव्यरूप व्यवहार कौ योग्य हो हैं जीव जिनिकरि, ते प्राण हैं । वहुरि आगम विषे प्रसिद्ध बांछा, संज्ञा, अभिलाषा ए एकार्थ है । वहुरि जिन करि वा जिन विषे जीव है, ते मृग्यंते कहिये अवलोकिये ते मार्गणा है । तहां अवलोकनहारा मृगयिता तो भव्यनि विषे उत्कृष्ट, प्रधान तत्त्वार्थ श्रद्धावान जीव जानना । अवलोकने योग्य, मृग्य चोदह मार्गणानि के विशेष लिये आत्मा जानना । वहुरि अवलोकना मृग्यता का साधन कौ वा अधिकरण कौ जे प्राप्त, ते गति आदि मार्गणा है । वहुरि मार्गणा जो अवलोकन, ताका जो उपाय, सो ज्ञान-दर्शन का सामान्य भावरूप उपयोग है । ऐसे इन प्ररूपणानि का साधारण अर्थ का प्रतिपादन कह्या ।

आगै सग्रहनय की अपेक्षा करि प्ररूपणा का दोय प्रकार को मन विषे धारि गुणस्थान-मार्गणास्थानरूप दोय प्ररूपणानि के नामांतर कहै है —

संखेओ ओघोत्ति य, गुणसण्णा सा च मोहजोगभवा ।

वित्थारादेसोत्ति य, मग्गणसण्णा सकम्मभवा ॥३॥

संक्षेप ओघ इति च गुणसंज्ञा, सा च मोहयोगभवा ।

विस्तार आदेश इति च, मार्गणसंज्ञा स्वकर्मभवा ॥३॥

टीका — संक्षेप ऐसी ओघ गुणस्थान की संज्ञा अनादिनिधन ऋषिप्रणीत मार्ग विषे रहै है, प्रसिद्ध है । गुणस्थान का ही संक्षेप वा ओघ असा भी नाम है । वहुरि सो संज्ञा 'मोहयोगभवा' कहिए दर्शन-चारित्रमोह वा मन, वचन, काय योग, तिनकरि उपजो है । इहा संज्ञा के धारक गुणस्थान के मोह-योग ते उत्पन्नपना है । ताते तिनकी मज्ञा के भी मोह-योग करि उपजना उपचार करि कह्या है । वहुरि मृग्य विषे नकार कह्या है, ताते सामान्य अमी भी गुणस्थान की संज्ञा है; असा जानना ।

वहुरि तैमे ही विस्तार, आदेश असी मार्गणास्थान की संज्ञा है । मार्गणा वा विस्तार, आदेश असा नाम है । सो यह संज्ञा अपना-अपना मार्गणा का नाम की प्रणानि के व्यवहार कौ कारण जो कर्म, ताके उदय ते हो है । इहां भी पूर्ववत् संज्ञा के नाम ते उपजने का उपचार जानना । निश्चय करि संज्ञा ती शब्दजनित ही है ।

बहुरि चकार तै विशेष ऐसी भी मार्गणास्थान की संज्ञा गाथा विषै विना कही भी जाननी ।

आगै प्ररूपणा का दोय प्रकार पना विषै अवशेष प्ररूपणानि का अंतर्भूतपना दिखावै हैं -

**आदेसे संलीणा, जीवा पज्जत्तिपाणसण्णाओ ।**

**उवओगोवि य भेदे, वीसं तु परूवणा भणिदा ॥४॥**

आदेशे संलीना, जीवाः पर्याप्तिप्राणसंज्ञाश्च ।

उपयोगोऽपि च भेदे, विंशतिस्तु प्ररूपणा भणिताः ॥४॥

टीका - मार्गणास्थानप्ररूपणा विषै जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, उपयोग - ए पांच प्ररूपणा संलीना कहिए गर्भित है, किसी प्रकार करि तिति मार्गणाभेदनि विषै अंतर्भूत है । तैसे होते गुणस्थानप्ररूपण अर मार्गणास्थानप्ररूपण अैसे संग्रहनय अपेक्षा करि प्ररूपणा दोय ही निरूपित हो है ।

आगै किस मार्गणा विषै कौन प्ररूपणा गर्भित है ? सो तीन गाथानि करि कहै हैं -

**इंद्रियकाये लीणा, जीवा पज्जत्तिआणभासणो ।**

**जोगे काओ णाणे, अक्खा गदिमग्गणे आऊ ॥५॥**

इंद्रियकाययोर्लीना, जीवाः पर्याप्त्यानभाषामनांसि ।

योगे कायः ज्ञाने, अक्षीणि गतिमार्गणायामायुः ॥५॥

टीका - इंद्रियमार्गणा विषै, बहुरि कायमार्गणा विषै जीवसमास अर पर्याप्ति अर सासोश्वास, भाषा, मनबल प्राण ए अंतर्भूत है । कैसे है ? सो कहे है - जीवसमास अर पर्याप्ति इनिके इंद्रिय अर कायसहित तादात्म्यकरि कीया हुवा एकत्व सभवै है । जीवसमास अर पर्याप्ति ए इंद्रिय-कायरूप ही है । बहुरि सामान्य-विशेष करि कीया हुवा एकत्व सभवै है । जीवसमास, पर्याप्ति अर इंद्रिय, काय विषै कही सामान्य का ग्रहण है, कहीं विशेष का ग्रहण है । बहुरि पर्याप्तिनि कै धर्म-धर्मोकरि कीया हुवा एकत्व संभवै है । पर्याप्ति धर्म है, इंद्रिय-काय धर्मो है । ताते जीवसमास अर पर्याप्ति

मिथ्यात्वादिक परिणाम, तिनकरि गुण्यंते कहिए लखिए वा देखिए वा लांछित करिए जीव, ते जीव के परिणाम गुणस्थान संज्ञा के धारक है, असा सर्वदर्शी जे सर्वज्ञदेव, तिनकरि निर्दिष्टाः कहिए कहे है । इस गुण शब्द की निरुक्ति की प्रधानता लीए सूत्र करि मिथ्यात्वादिक अयोगकेवलीपना पर्यन्त ये जीव के परिणाम विशेष, तेई गुणस्थान है, असा प्रतिपादन कीया है ।

तहा अपनी स्थिति के नाश के वश तै उदयरूप निपेक विषे गले जे कार्माण स्कंध, तिनका फल देनेरूप जो परिणमन, सो उदय है । ताका होते जो भाव होइ, सो औदयिक भाव है ।

बहुरि गुण का प्रतिपक्षी जे कर्म, तिनका उदय का अभाव, सो उपशम है । ताका होते संतै जो होय, सो औपशमिक भाव है ।

बहुरि प्रतिपक्षी कर्मनि का बहुरि न उपजै असा नाश होना, सो क्षय; ताका होते जो होइ, सो क्षायिक भाव है ।

बहुरि प्रतिपक्षी कर्मनि का उदय विद्यमान होते भी जो जीव के गुण का अश देखिए, सो क्षयोपशम; ताका होते जो होइ, सो क्षायोपशमिक भाव है ।

बहुरि उदयादिक अपेक्षा तै रहित, सो परिणाम है; ताका होते जो होइ, सो पारिणामिक भाव है । असै औदयिक आदि पंचभावनि का सामान्य अर्थ प्रतिपादन करि विस्तार तै आगे तिनि भावनि का महा अधिकार विषे प्रतिपादन करिसी ।

आगे ते गुणस्थान गाथा दोय करि नाममात्र कहै है—

मिच्छो सासण मिससो, अविरदसम्मो य देसविरदो य ।

विरदा पमत्त इदरो, अपुव्व अणियट्टि सुहमो य ॥६॥

उवसंत खीणमोहो, सजोगकेवलिजिणो अजोगी य ।

चउदस जीवसमासा, कमेण सिद्धा य णादव्वा ॥१०॥१

मिथ्यात्वं सासनः मिश्रः, अविरतसम्यक्त्वं च देशविरतश्च ।

विरताः प्रमत्तः इतरः, अपूर्वः अनिवृत्तिः सूक्ष्मश्च ॥९॥

उपज्ञातः क्षीणमोहः, सयोगकेवलिजिनः अयोगी च ।

चतुर्दश जीवसमासाः, क्रमेण सिद्धाश्च ज्ञातव्या ॥१०॥

टीका — मिथ्या कहिए अतत्त्वगोचर है दृष्टि कहिए श्रद्धा जाकी, सत्त्वं मिथ्यादृष्टि है । 'नाम्न्युत्तरपदश्च' असा व्याकरण सूत्र करि दृष्टिपद का लोप करते 'मिच्छो' असा कह्या है । यहु भेद आगे भी जानना ।

बहुरि आसादन जो विराधना, तिहि सहित वर्तें सो सासादना, सासादना है सम्यग्दृष्टि जाकै, सो सासादन सम्यग्दृष्टि है । अथवा आसादन कहिए सम्यक्त्व का विराधन, तीहि सहित जो वर्तमान, सो सासादन । बहुरि सासादन अर सो सम्यग्दृष्टि सो सासादन सम्यग्दृष्टि है । यहु पूर्वे भया था सम्यक्त्व, तिस न्याय करि इहा सम्यग्दृष्टिपना जानना ।

बहुरि सम्यक्त्व अर मिथ्यात्व का जो मिश्रभाव, सो मिश्र है ।

बहुरि सम्यक् कहिए समीचीन है दृष्टि कहिए तत्त्वार्थश्रद्धान जाकै, सो सम्यग्दृष्टि अर सोई अविरत कहिए असंयमी, सो अविरतसम्यग्दृष्टि है ।

बहुरि देशत कहिए एकदेश तै विरत कहिए सयमी, सो देशविरत है, सयता-सयत है, असा अर्थ जानना ।

इहा जो विरत पद है, सो ऊपरि के सर्व गुणस्थानवर्तीनि कै सयमीपना कौ जनावै है । बहुरि प्रमाद्यति कहिये प्रमाद करै, सो प्रमत्त है । बहुरि इतर कहिए प्रमाद न करै, सो अप्रमत्त है ।

बहुरि अपूर्व है करण कहिए परिणाम जाकै, सो अपूर्वकरण है ।

बहुरि निवृत्ति कहिए परिणामनि विषै विशेष न पाइए है निवृत्तिरूप करण कहिए परिणाम जाकै, सो अनिवृत्तिकरण है ।

बहुरि सूक्ष्म है सापराय कहिये कषाय जाकै, सो सूक्ष्मसापराय है ।

बहुरि उपशांत भया है मोह जाका, सो उपशांतमोह है ।

बहुरि क्षीण भया है मोह जाका, सो क्षीणमोह है ।

बहुरि घातिकर्मनि कौ जीतता भया, सो जिन, बहुरि केवलज्ञान याकै है यातै केवली, केवली सोई जिन, सो केवलिजिन, बहुरि योग करि सहित सो सयोग, सोई केवलिजिन, ऐसे सयोगकेवलीजिन है ।



योग याकै है सो योगी, योगी नाही सो अयोगी, केवलजिन ऐसी गी, सोई केवलजिन अैसे अयोगकेवलजिन है ।

... मिथ्यादृष्टि आदि अयोगिकेवलजिन पर्यन्त चौदह जीवसमास कहिए गुणस्थान ते जानने ।

कैसे यह जीवसमास ऐसी संज्ञा गुणस्थान की भई ?

तहां कहिए है — जीव है, ते समस्यंते कहिए संक्षेपरूप करिए इनिविषे, ते जीवसमास अथवा जीव है । ते सम्यक् आसते एषु कहिए भले प्रकार तिष्ठै है, इनि-विषे, ते जीवसमास, अैसे इहां प्रकरण जो प्रस्ताव, ताकी सामर्थ्य करि गुणस्थान ही जीवसमास शब्द करि कहिए है । जातै ऐसा वचन है — ‘यादृशं प्रकरणं तादृशोर्थः’ जैसा प्रकरण तैसा अर्थ, सो इहां गुणस्थान का प्रकरण है, तातै गुणस्थान अर्थ का ग्रहण किया है ।

वहुरि ये कर्म सहित जीव जैसे लोक विषे है, तैसे नष्ट भए सर्वकर्म जिनके, ऐसे सिद्ध परमेष्ठी भी है, ऐसा जानना । क्रमेण कहिए क्रम करि सिद्ध है, सो यहां क्रम शब्द करि पहिले घातिकर्मनि कौ क्षपाइ सयोगकेवली, अयोगकेवली गुणस्थाननि विषे यथायोग्य काल तिष्ठि, अयोगकेवली का अंत समय विषे अवशेष अघातिकर्म समस्त खिपाइ सिद्ध हो है — ऐसा अनुक्रम जनाइए है । सो इस अनुक्रम की जनावन-हारा क्रम शब्द करि युगपत् सर्वकर्म का नाशपना, वहुरि सर्वदा कर्म के अभाव तै सदा ही मुक्तपना परमात्मा के निराकरण कीया है ।

आगे गुणस्थाननि विषे औदयिक आदि भावनि का संभव दिखावै है —

मिच्छे खलु ओदइओ, बिदिये पुण पारणामिओ भावो ।

मिस्से खओवसमिओ, अविरदसम्महि तिण्णेव ॥११॥<sup>१</sup>

मिथ्यात्वे खलु औदयिको द्वितीये पुनः पारिणामिको भावः ।

मिश्रे क्षायोपशमिकः अविरतसम्यक्त्वे त्रय एव ॥११॥

टोका — मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषे दर्शनमोह का उदय करि निपज्या ऐना औदयिक भाव, अतत्त्वश्रद्धान है लक्षण जाका, सो पाइए है । खलु कहिए

प्रकटपनै । बहुरि दूसरा सासादनगुणस्थान विषै पारिणामिक भाव है । जातै इहां दर्शनमोह का उदय आदि की अपेक्षा का जु अभाव, ताका सद्भाव है ।

बहुरि मिश्रगुणस्थान विषै क्षायोपशमिक भाव है । काहै तै ?

मिथ्यात्वप्रकृति का सर्वघातिया स्पर्धकनि का उदय का अभाव, सोई है लक्षण जाका, ऐसा तो क्षय होते संते, बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व नाम प्रकृति का उदय विद्यमान होते संते, बहुरि उदय कौ न प्राप्त भए ऐसे निषेकनि का उपशम होते संते, मिश्रगुणस्थान हो है । तातै ऐसा कारण तै मिश्र विषै क्षायोपशमिकभाव है ।

बहुरि अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान विषै औपशमिक सम्यक्त्व, बहुरि क्षायोपशमिकरूप वेदकसम्यक्त्व, बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व ऐसे नाम धारक तीन भाव हैं, जातै इहां दर्शनमोह का उपशम वा क्षयोपशम वा क्षय संभवै है ।

आगै कहे है जु ए भाव, तिनके संभवने के नियम का कारण कहै है -

एदे भावा गियमा, दंसरामोहं पडुच्च भगिदा हु ।

चारित्तं एत्थि जदो, अविरदअंतेसु ठाणेसु ॥१२॥

एते भावा नियमाद्, दर्शनमोहं प्रतीत्य भाणिताः खलु ।

चारित्रं नास्ति यतो, अविरतांतेषु स्थानेषु ॥१२॥

टीका - असै पूर्वोक्त औदयिक आदि भाव कहे, ते नियम तै दर्शनमोह कौ प्रतीत्य कहिए आश्रयकरि, भगिता कहिए कहे है प्रकटपनै; जातै अविरतपर्यंत चारि गुणस्थान विषै चारित्र नाही है । इस कारण तै ते भाव चारित्र मोह का आश्रय करि नाही कहे है ।

तीहि करि सासादनगुणस्थान विषै अनंतानुबंधी की कोई क्रोधादिक एक कषाय का उदय विद्यमान होतै भी ताकी विवक्षा न करने करि पारिणामिकभाव सिद्धांत विषै प्रतिपादन कीया है, ऐसा तू जानि ।

बहुरि अनंतानुबंधी की किसी कषाय का उदय की विवक्षा करि औदयिक भाव भी है ।

आगै देशसंयतादि गुणस्थाननि विषै भावनि का नियम गाथा दोय करि दिखावै हैं -

देसविरदे प्रमत्ते, इदरे य खओवसमियभावो दु ।

सो खलु चरित्तमोहं, पडुच्च भणियं तहा उवरिं ॥१३॥

देशविरते प्रमत्ते, इतरे च क्षायोपशमिकभावस्तु ।

स खलु चरित्रमोहं, प्रतीत्य भणितस्तथा उपरि ॥१३॥

टीका - देशविरत विषे, वहुरि प्रमत्तसंयत विषे, वहुरि इतर अप्रमत्तसंयत विषे क्षायोपशमिक भाव है । तहां देशसंयत अपेक्षा करि प्रत्याख्यान कपायनि के उदय अवस्था कौ प्राप्त भए जे देशघाती स्पर्धकनि का अनंतवा भाग मात्र, तिनका जो उदय, तीहि सहित जे उदय कौ न प्राप्त भए ही निर्जरा रूप क्षय होते जे विवक्षित उदयरूप निषेक, तिनि स्वरूप जे सर्वघातिया स्पर्धक अनंत भागनि विषे एक भागविना बहुभाग, प्रमाण मात्र लीए तिनका उदय का अभाव, सो ही है लक्षण जाका असा क्षय होते संते, वहुरि वर्तमान समय सवधी निषेक तें ऊपरि के निषेक जे उदय अवस्थाकौ न प्राप्त भए, तिनकी सत्तारूप जो अवस्था, सोई है लक्षण जाका, असा उपशम होते संते देशसंयम प्रकट है । तातें चारित्र मोह कौ आश्रय करि देशसंयम क्षायोपशमिक भाव है, असा कह्या है ।

वहुरि तैसैं ही प्रमत्त-अप्रमत्त विषे भी संज्वलन कपायनि का उदय आए जे देशघातिया स्पर्धक अनंतवा भागरूप, तिनका उदय करि सहित उदय कौ न प्राप्त होते ही क्षयरूप होते जे विवक्षित उदय निषेक, तिनिरूप सर्वघातिया स्पर्धक अनंत भागनि विषे एक भागविना बहुभागरूप, तिनका उदय का अभाव, सो ही है लक्षण जाका असा क्षय होते, वहुरि ऊपरि के निषेक जे उदय कौ प्राप्त न भए, तिनका सत्ता अवस्थारूप है लक्षण जाका, असा उपशम, ताकौ होते संते प्रमत्त-अप्रमत्त हो है । तातें चारित्र मोह अपेक्षा इहां सकलसंयम है । तथापि क्षायोपशमिक भाव है ऐसा कह्या है, असा श्रीमान् अभयचंद्रनामा आचार्य सिद्धांतचक्रवर्ती, ताका अभिप्राय है ।

भावार्थ - सर्वत्र क्षयोपशम का स्वरूप असा ही जानना । जहां प्रतिपक्षी कर्म के देशघातिया स्पर्धकनि का उदय पाइए, तीह सहित सर्वघातिया स्पर्धक उदय-निषेक संबंधी, तिनका उदय न पाइए (विना ही उदय दीए) निर्जरै, सोई क्षय, अर जे उदय न प्राप्त भए आगामी निषेक, तिनका सत्तास्वरूप उपशम, तिनि दोऊनि कौं होतैं

क्षयोपशम हो है । सो स्पर्धकनि का वा निषेकनि का वा सर्वधाति-देशधातिस्पर्धकनि के विभाग का आगै वर्णन होगा, तातै इहां विशेष नाही लिख्या है । सो इहां भी पूर्वोक्तप्रकार चारित्रमोह को क्षयोपशम ही है । तातै क्षायोपशमिक भाव देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त विषै जानना । तैसै ही ऊपरि भी अपूर्वकरणादि गुणस्थाननि विषै चारित्रमोह कौ आश्रय करि भाव जानने ।

**तत्तो उर्वरि उवसमभावो उवसामगेसु खवगेसु ।**

**खडओ भावो रियमा, अजोगिचरिमोत्ति सिद्धे य ॥१४॥**

तत उपरि उपशमभावः उपशामकेषु क्षपकेषु ।

क्षायिको भावो नियमात् अयोगिचरम इति सिद्धे च ॥१४॥

टीका - तातै ऊपरि अपूर्वकरणादि च्यारि गुणस्थान उपशम श्रेणी संबधी, तिनिविषै औपशमिक भाव है । जातै तिस सयम का चारित्रमोह के उपशम ही तै संभव है । बहुरि तैसै ही अपूर्वकरणादि च्यारि गुणस्थान क्षपक श्रेणी संबंधी अर सयोग-अयोगीकेवली, तिनिविषै क्षायिक भाव है नियमकरि, जातै तिस चारित्र का चारित्र-मोह के क्षय ही तै उपजना है ।

बहुरि तैसै ही सिद्ध परमेष्ठीनि विषै भी क्षायिक भाव हो है, जातै तिस सिद्धपद का सकलकर्म के क्षय ही तै प्रकटपना हो है ।

आगै पूर्वे नाममात्र कहे जे चौदह गुणस्थान, तिनिविषै पहिले कह्या जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थान, ताका स्वरूप कौ प्ररूपै है -

**मिच्छोदयेण मिच्छत्तमसद्दहणं तु तच्चअत्थाणं ।**

**एयंतं विवरीयं, विणयं संशयिदमण्णाणं ॥१५॥**

मिथ्यात्वोदयेन मिथ्यात्वमश्रद्धानं तु तत्त्वार्थानाम् ।

एकांतं विपरीतं, विनयं संशयितमज्ञानम् ॥१५॥

टीका - दर्शनमोहनी का भेदरूप मिथ्यात्व प्रकृति का उदय करि जीव के अतत्त्व श्रद्धान है लक्षण जाका अैसा मिथ्यात्व हो है । बहुरि सो मिथ्यात्व १. एकांत २. विपरीत ३. विनय ४. संशयित ५. अज्ञान - अैसै पांच प्रकार है ।

तहां जीवादि वस्तु सर्वथा सत्वरूप ही है, मर्वथा असत्वरूप ही है, सर्वथा एक ही है, सर्वथा अनेक ही है - इत्यादि प्रतिपक्षी दूसरा भाव की अपेक्षारहित एकांतरूप अभिप्राय, सो एकांत मिथ्यात्व है ।

बहुरि अहिंसादिक समीचीन धर्म का फल जो स्वर्गादिक मुख, ताकीं हिंसादिरूप यज्ञादिक का फल कल्पना करि मानै; वा जीव के प्रमाण करि सिद्ध है जो मोक्ष, ताका निराकरण करि मोक्ष का अभाव मानै; वा प्रमाण करि खंडित जो स्त्री के मोक्षप्राप्ति, ताका अस्तित्व वचन करि स्त्री कीं मोक्ष है ऐसा मानै इत्यादि एकांत अवलंबन करि विपरीतरूप जो अभिनिवेश - अभिप्राय, सो विपरीत मिथ्यात्व है ।

बहुरि सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र की सापेक्षा रहितपनै करि गुरुचरणपूजनादिरूप विनय ही करि मुक्ति है - यहु श्रद्धान वैनयिक मिथ्यात्व है ।

बहुरि प्रत्यक्षादि प्रमाण करि ग्रह्या जो अर्थ, ताका देखातर विषे अर कालांतर विषे व्यभिचार जो अन्यथाभाव, सो संभवै है । तातैं अनेक मत अपेक्षा परस्पर विरोधी जो आप्तवचन, ताका भी प्रमाणाता की प्राप्ति नाहीं । तातैं अैसे ही तत्त्व है, अैसा निर्णय करने की शक्ति के अभाव तैं सर्वत्र संशय ही है, अैसा जो अभिप्राय, सो संशय मिथ्यात्व है ।

बहुरि जानावरण दर्शनावरण का तीव्र उदय करि संयुक्त जे एकेद्रियादिक जीव, तिनके अनेकांत स्वरूप वस्तु है, अैसा वस्तु का सामान्य भाव विषे अर उपयोग लक्षण जीव है अैसा वस्तु का विशेष भाव विषे जो अज्ञान, ताकरि निपज्या जो श्रद्धान, सो अज्ञान मिथ्यात्व है ।

अैसे स्थूल भेदनि का आश्रय करि मिथ्यात्व का पंचप्रकारपना कह्या, जातैं सूक्ष्म भेदनि का आश्रय करि असंख्यात लोकमात्र भेद संभवै हैं । तातैं तहां व्याख्यानादिक व्यवहार की अप्राप्ति है ।

आगे इन पंचनि का उदाहरण कीं कहै हैं -

एयंत बुद्धदरसी, विवरीओ बह्य तावसो विराओ ।  
इंदो विय संसइयो, मक्कडिओ चेव अण्णाणी ॥१६॥  
एकांतो बुद्धदग्गो, विपरीतो ब्रह्म तापसो विनयः ।  
इंद्रोऽपि च संगयितो, मत्करी चैवाजानी ॥१७॥

टीका — ए उपलक्षणपना करि कहे है । एक का नाम लेनै तै अन्य भी ग्रहण करने, तातै ऐसे कहने — बुद्धदर्शी जो बौद्धमती, ताकौ आदि देकरि एकांत मिथ्यादृष्टि है । बहुरि यज्ञकर्ता ब्राह्मण आदि विपरीत मिथ्यादृष्टि है । बहुरि तापसी आदि विनय मिथ्यादृष्टि है । बहुरि इन्द्रनामा जो श्वेतांबरनि का गुरु, ताकौ आदि देकरि संशय मिथ्यादृष्टि हैं । बहुरि मुस्करी (मुसलमान) संन्यासी कौ आदि देकरि अज्ञान मिथ्यादृष्टि है । वर्तमान काल अपेक्षा करि ए भरतक्षेत्र विषै संभवते बौद्धमती आदि उदाहरण कहे है ।

आगै अतत्त्वश्रद्धान है लक्षण जाका, अैसे मिथ्यात्व कौ प्ररूपै है —

मिच्छन्तं वेदन्तो, जीवो विवरीयदंसणो होदि ।

ण य धम्मं रोचेदि हु, मधुरं खु रसं जहा जरिदो ॥१७॥<sup>१</sup>

मिथ्यात्वं विदन् जीवो, विपरीतदर्शनो भवति ।

न च धर्मं रोचते हि, मधुरं खलु रसं यथा ज्वरितः ॥१७॥

टीका — उदय आया मिथ्यात्व कौ वेदयन् कहिए अनुभवता जो जीव, सो विपरीतदर्शन कहिए अतत्त्वश्रद्धानसंयुक्त है, अयथार्थ प्रतीत करै है । बहुरि केवल अतत्त्व ही कौ नाही श्रद्धै है, अनेकांतस्वरूप जो धर्म कहिए वस्तु का स्वभाव अथवा रत्नत्रयस्वरूप मोक्ष का कारणभूत धर्म, ताहि न रोचते कहिए नाही रूचिरूप प्राप्त हो है ।

इहां दृष्टान्त कहै है — जैसे ज्वरित कहिए पित्तज्वर सहित पुरुष, सो मधुर — मीठा दुग्धादिक रस, ताहि न रोचै है; तैसे मिथ्यादृष्टि धर्म कौ न रोचै है, ऐसा अर्थ जानना ।

इस ही वस्तु स्वभाव के श्रद्धान कौ स्पष्ट करै है —

मिच्छाइट्टी जीवो, उवइट्ठं पवयणं ण सद्वहदि ।

सद्वहदि असब्भावं, उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ॥१८॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्धान्ति ।

श्रद्धान्ति असद्भावं, उपदिष्टं वा अनुपदिष्टम् ॥१८॥

टीका - मिथ्यादृष्टि जीव है, सो उपदिष्ट कहिए अर्हन्त आदिकनि करि उपदेस्या हूआ प्रवचन कहिए आप्त, आगम, पदार्थ इनि तीनो को नाही श्रद्धा है, जातै प्र कहिए उत्कृष्ट है वचन जाका, असा प्रवचन कहिए आप्त । बहुरि प्रकृष्ट जो परमात्मा, ताका वचन सो प्रवचन कहिए परमागम । बहुरि प्रकृष्ट उच्यते कहिए प्रमाण करि निरूपिए असा प्रवचन कहिए पदार्थ, या प्रकार निरुक्ति करि प्रवचन शब्द करि आप्त, आगम, पदार्थ तीनों का अर्थ हो है । बहुरि सो मिथ्यादृष्टि असद्भाव कहिए मिथ्यारूप; प्रवचन कहिए आप्त आगम, पदार्थ; उपदिष्टं कहिए आप्त कीसी आभासा लिए कुदेव जे है, तिनकरि उपदेस्या हूआ अथवा अनुपदिष्ट कहिए बिना उपदेस्या हूआ, ताकीं श्रद्धान करै है । बहुरि वादी का अभिप्राय लेइ उक्तं च गाथा कहै है -

“घटपडथंभादिपयत्थेसु मिच्छाइद्वी जहावगमं ।

सद्वहंतो वि अण्णारणी उच्चदे जिणवयणे सद्वहणाभावादो ॥”

याका अर्थ - घट, पट, स्तंभ आदि पदार्थनि विषे मिथ्यादृष्टि जीव यथार्थ जान लीए श्रद्धान करता भी अजानी कहिए, जातै जिनवचन विषे श्रद्धान का अभाव है । असा सिद्धांत का वाक्य करि कह्या मिथ्यादृष्टि का लक्षण जानि सो मिथ्यात्व भाव त्यजना योग्य है । ताका भेद भी इस ही वाक्य करि जानना । सो कहिए हैं - कोल मिथ्यादर्शनरूप परिणाम आत्मा विषे प्रकट हूआ थका वर्ण-रसादि की उपलब्धि जो जान करि जानने की प्राप्ति, ताहि होते संतै कारणविपर्यास, बहुरि भेदाभेदविपर्यास, बहुरि स्वरूपविपर्यास को उपजावै है ।

तहां कारणविपर्यास प्रथम कहिए है । रूप-रसादिकनि का एक कारण है, सो अमूर्तक है, नित्य है असे कल्पना करै है । अन्य कोई पृथ्वी आदि जातिभेद नोए भिन्न-भिन्न परमाणु हैं, ते पृथ्वी के चारि गुणयुक्त, अपके गव बिना तीन गुणयुक्त, अग्नि के रम बिना दोय गुणयुक्त, पवन के एक स्पर्श गुणयुक्त परमाणु हैं, ते अपनी नमान जानि के कार्यनि को निपजावनहारे हैं, असा वर्णन करै है । या प्रकार कारण विषे विपरीतभाव जानना ।

बहुरि भेदाभेदविपर्यास कहै हैं - कार्य ते कारण भिन्न ही है अथवा अभिन्न ही ऐसी कल्पना भेदाभेद विषे अन्यथापना जानना ।

बहुरि स्वरूपविपर्यास कहै है - रूपादिक गुण निर्विकल्प है, कोऊ कहै - है ही नहीं । कोऊ कहै - रूपादिकनि के जानने करि तिनके आकार परिणया ज्ञान ही है नाहीं, तिनका अवलंबन बाह्य वस्तुरूप है । अँसा विचार स्वरूप विषै मिथ्यारूप जानना । या प्रकार कुमतिज्ञान का बल का आधार करि कुश्रुतज्ञान के विकल्प हो है । इनका सर्व मूल कारण मिथ्यात्व कर्म का उदय ही है, अँसा निश्चय करना ।

आगै सासादनगुणस्थान का स्वरूप दोय सूत्रनि करि कहै है -

आदिमसम्पत्तद्धा, समयादो छावलित्ति वा सेसे ।

अणअणदरुदयादो, णासियसम्मोत्ति सासणक्खो सो ॥१६॥

आदिमसम्यक्त्वाद्वा, आसमयतः षडावलिरिति वा शेषे ।

अनान्यतरोदयात् नाशितसम्यक्त्व इति सासानाख्यः सः ॥१९॥

टीका - प्रथमोपशम सम्यक्त्व का काल विषै जघन्य एकसमय, उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहै, अनंतानुबंधी च्यारि कषायनि विषै अन्यतम कोई एक का उदय होते संतै, नष्ट कीया है सम्यक्त्व जानै अँसा होई, सो सासादन अँसा कहिए । बहुरि वा शब्दकरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व का काल विषै भी सासादन गुणस्थान की प्राप्ति हो है । अँसा (गुणधराचार्यकृत) कषायप्राभूतनामा यतिवृषभाचार्यकृत (चूर्णिसूत्र) जयधवल ग्रन्थ का अभिप्राय है ।

जो मिथ्यात्व तै चतुर्थादि गुणस्थाननि विषै उपशम सम्यक्त्व होइ, सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व है ।

बहुरि उपशमश्रेणी चढते क्षायोपशमिक सम्यक्त्व तै जो उपशम सम्यक्त्व होय, सो द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जानना ।

सम्मत्तरयणपव्वयसिहरादो मिच्छभूमिसमभिमुहो ।

णासियसम्मत्तो सो, सासणणामो मुणेयव्वो ॥२०॥<sup>१</sup>

सम्यक्त्वरत्नपर्वतशिखरात् मिथ्यात्वभूमिसमभिमुखः ।

नाशितसम्यक्त्वः सः, सासननामा मंतव्य ॥२०॥



टीका - जो जीव सम्यक्त्वपरिणामरूपी रत्नमय पर्वत के शिखर तै मिथ्यात्व-परिणामरूपी भूमिका के सन्मुख होता संता, पडि करि जितना अतराल का काल एक समय आदि छह आवली पर्यन्त है, तिहि विषे वर्ते, सो जीव नष्ट कीया है सम्यक्त्व जानै, असा सासादन नाम धारक जानना ।

आगे सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का स्वरूप गाथा च्यारि करि कहै है -

सम्मामिच्छुदयेण य, जत्तंतरसव्वधादिकज्जेण ।  
एण य सम्मं मिच्छं पि य, सम्मिस्सो होदि परिणामो ॥२१॥<sup>१</sup>

सम्यग्मिथ्यात्वोदयेन च, जात्यंतरसर्वधातिकार्येण ।  
न च सम्यक्त्वं मिथ्यात्वमपि च, सम्मिश्रो भवति परिणामः ॥२१॥

टीका - जात्यंतर कहिए जुदी ही एक जाति भेद लीए जो सर्वधातिया कार्यरूप सम्यग्मिथ्यात्व नामा दर्शनमोह की प्रकृति, ताका उदय करि मिथ्यात्व प्रकृति का उदयवत् केवल मिथ्यात्व परिणाम भी न होइ है । अर सम्यक्त्व प्रकृति का उदयवत् केवल सम्यक्त्व परिणाम भी न होइ है । तिहि कारण तै तिस सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति का कार्यभूत जुदी ही जातिरूप सम्यग्मिथ्यात्वपरिणाम मिलाया हुआ मिश्रभाव हो है, असा जानना ।

दहिगुडमिव वामिस्सं, पुहभावं एव कारिदुं सकं ।  
एवं मिस्सयभावो, सम्मामिच्छोत्ति एणद्वो ॥२२॥<sup>१</sup>

दधिगुडमिव व्यामिश्रं, पृथग्भावं नैव कर्तुं शक्यम् ।  
एवं मिश्रकभावः, सम्यग्मिथ्यात्वमिति ज्ञातव्यम् ॥२२॥

टीका - इव कहिए जैसे, व्यामिश्रं कहिए मिला हुआ, दही अर गुड सो पृथग्भावं कर्तुं कहिए जुदा-जुदा भाव करने कौ, नैव शक्यं कहिए नाही समर्थपना है. एवं कहिए तैसे, सम्यग्मिथ्यात्वरूप मिला हुआ परिणाम, सो केवल सम्यक्त्वभाव करि अथवा केवल मिथ्यात्वभाव करि जुदा-जुदा भाव करि स्थापने कौ नाही समर्थपना है । इस कारण तै सम्यग्मिथ्यादृष्टि असा जानना योग्य है । समीचीन अर नोई मिथ्या, नो सम्यग्मिथ्या असा है दृष्टि कहिए श्रद्धान जाकै, सो सम्यग्मिथ्या-

<sup>१</sup>-संस्कृत-वचना पुस्तक १, पृ. १७१-गा. १०६

मिथ्यादृष्टि है। इस निरुक्ति तै भी पूर्वे ग्रह्या जो अतत्त्वश्रद्धान, ताका सर्वथा त्याग बिना, तीहिं सहित ही तत्त्व श्रद्धान हो है। जातै तैसै ही सभवता प्रकृति का उदयरूप कारण का सद्भाव है।

**सो संजमं ण गिण्हदि, देसजमं वा एण बंधदे आउं ।**

**सम्मं वा मिच्छं वा, पडिवज्जिय मरदि णियमेण ॥२३॥<sup>१</sup>**

स संयमं न गृह्णाति, देशयमं वा न बध्नाति आयुः ।

सम्यक्त्वं वा मिथ्यात्वं, वा प्रतिपद्य म्रियते नियमेन ॥२३॥

टीका — सो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव है, सो सकलसंयम वा देशसंयम कौ ग्रहण करै नाही, जातै तिनके ग्रहण योग्य जे करणरूप परिणाम, तिनिका तहां मिश्र-गुणस्थान विषै असंभव है। बहुरि तैसै ही सो सम्यग्मिथ्यादृष्टि जीव च्यारि गति संबंधी आयु कौ नाही बाधै है। बहुरि मरणकाल विषै नियमकरि सम्यग्मिथ्यात्वरूप परिणाम कौ छोडि, असंयत सम्यग्दृष्टीपना कौ वा मिथ्यादृष्टीपना कौ नियमकरि प्राप्त होइ, पीछै मरै है।

भावार्थ — मिश्रगुणस्थान तै पंचमादि गुणस्थान विषै चढना नाही है। बहुरि तहां आयुबध वा मरण नाही है।

**सम्मत्तमिच्छपरिणामेसु जहिं आउगं पुरा बद्धं ।**

**तहिं मरणं मरणंतसमुग्घादो वि य एण मिस्सम्मि ॥२४॥<sup>२</sup>**

सम्यक्त्वमिथ्यात्वपरिणामेषु यत्रायुष्कं पुरा बद्धम् ।

तत्र मरणं मरणंतसमुद्घातोऽपि च न सिध्ते ॥२४॥

टीका — सम्यक्त्वपरिणाम अर मिथ्यात्वपरिणाम इनि दोऊनि विषै जिह परिणाम विषै पुरा कहिए सम्यग्मिथ्यादृष्टीपनाकौ प्राप्ति भए पहिले, परभव का आयु बंध्या होइ, तीहिं सम्यक्त्वरूप वा मिथ्यात्वरूप परिणाम विषै प्राप्त भया ही जीव का मरण हो है, अैसा नियम कहिए है। बहुरि अन्य केई आचार्यनि के

१. षट्खंडागम — धवला पुस्तक ४, पृष्ठ ३४१, गाथा ३३

२. षट्खंडागम — धवला पुस्तक ४, पृष्ठ ३४६ गाथा ३३ एव पुस्तक ५, पृष्ठ ३१ टीका.

अभिप्राय करि नियम नाही है । सोई कहिए है - सम्यक्त्वपरिणाम विषे वर्तमान कोई जीव यथायोग्य परभव के आयु कौ बांधि बहुरि सम्यग्मिथ्यादृष्टि होइ पीछे सम्यक्त्व कौ वा मिथ्यात्व कौ प्राप्त होइ मरै है । बहुरि कोई जीव मिथ्यात्वपरिणाम विषे वर्तमान, सो यथायोग्य परभव का आयु बांधि, बहुरि सम्यग्मिथ्यादृष्टि होइ पीछे सम्यक्त्व कौ वा मिथ्यात्व कौ प्राप्त होइ मरै है । बहुरि तैसे ही माराणातिक समुद्रघात भी मिथ्यगुणस्थान विषे नाही है ।

आगे असंयत गुणस्थान के स्वरूप कौ निरूपै है ।

सम्मत्तदेसघादिस्सुदयादो वेदगं हवे सम्मं ।

चलमलिनमगाढं तं रिणच्चं कम्मक्खवणहेदु ॥२५॥

सम्यक्त्वदेशघातेरुदयाद्वेदकं भवेत्सम्यक्त्वम् ।

चलं मलिनमगाढं तन्नित्यं कर्मक्षपणहेतु ॥२५॥

टीका - अनंतानुबंधी कषायनि का प्रशस्त उपशम नाही है, इस हेतु तैतिन अनंतानुबंधी कषायनि का अप्रशस्त उपशम कौ होते अथवा विसंयोजन होते, बहुरि दर्शनमोह का भेदरूप मिथ्यात्वकर्म अर सम्यग्मिथ्यात्वकर्म, इनि दोऊनि कौ प्रशस्त उपशमरूप होते वा अप्रशस्त उपशम होते वा क्षय होने के सन्मुख होते बहुरि सम्यक्त्व प्रकृतिरूप देशघातिया स्पर्धकों का उदय होते ही जो तत्त्वार्थश्रद्धान है लक्षण जाका, असा सम्यक्त्व होइ, सो वेदक असा नाम धारक है ।

जहा विवक्षित प्रकृति उदय आवने योग्य न होइ अर स्थिति, अनुभाग घटने वा वधने वा संक्रमण होने योग्य होइ, तहा अप्रशस्तोपशम जानना ।

बहुरि जहां उदय आवने योग्य न होइ अर स्थिति, अनुभाग घटने-वधने वा संक्रमण होने योग्य भी न होइ, तहां प्रशस्तोपशम जानना ।

बहुरि तीहि सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होते देशघातिया स्पर्धकनि के तत्त्वार्थश्रद्धान नष्ट करने को सामर्थ्य का अभाव है; तातै सो सम्यक्त्व चल, मलिन मगाढ हो है । जातै सम्यक्त्व प्रकृति के उदय का तत्त्वार्थश्रद्धान कौ मल उपजावने मात्र ही विषे व्यापार है । तीहि कारण तै तिस सम्यक्त्व प्रकृति के देशघातियना है । असे सम्यक्त्व प्रकृति के उदय कौ अनुभवता जीव के उत्पन्न भया

जो तत्त्वार्थश्रद्धान, सो वेदक सम्यक्त्व है, अँसा कहिए है । यह ही वेदक सम्यक्त्व है, सो क्षायोपशमिक सम्यक्त्व अँसा नामधारक है, जातै दर्शनमोह के सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय का अभावरूप है लक्षण जाका, ऐसा क्षय होतै, बहुरि देशघातिस्पर्धकरूप सम्यक्त्व प्रकृति का उदय होतै, बहुरि तिसही का वर्तमान समयसंबंधी तै ऊपरि के निषेक उदय कौ न प्राप्त भए, तिनिसंबंधी स्पर्धकनि का सत्ता अवस्थारूप है लक्षण जाका, ऐसा उपशम होतै वेदक सम्यक्त्व हो है । तातै याही का दूसरा नाम क्षायोपशमिक सम्यक्त्व है, भिन्न नाही है ।

सो वेदक सम्यक्त्व कैसा है ? नित्यं कहिए नित्य है । इस विशेषण करि याकी जघन्यस्थिति अंतर्मुहूर्त है, तथापि उत्कृष्टपना करि छद्यासठि सागरप्रमाण काल रहै है । तातै उत्कृष्ट स्थिति अपेक्षा दीर्घकाल ताई रहै है, तातै नित्य कह्या है । बहुरि सर्वकाल अविनश्वर अपेक्षा नित्य इहा न जानना । बहुरि कैसा है ? कर्मक्षपणहेतु (कहिए) कर्मक्षपावने का कारण है । इस विशेषण करि मोक्ष के कारण सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र परिणाम है, तिनि विषे सम्यक्त्व ही मुख्य कारण है, ऐसा सूचै है । बहुरि वेदक सम्यक्त्व विषे शंकादिक मल है, ते भी यथासंभव सम्यक्त्व का मूल तै नाश करने कौ कारण नाही, अँसे सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तै उपजे है ।

बहुरि औपशमिक अर क्षायिक सम्यक्त्व विषे मल उपजावने कौ कारण तिस सम्यक्त्व प्रकृति का उदय का अभाव तै निर्मलपना सिद्ध है, ऐसा हे शिष्य ! तू जान ।

बहुरि चलादिकनि का लक्षण कहै है, तहा चलपना कहिए है -

नानात्मीयविशेषेषु चलतीति चलं स्मृतं ।

लसत्कल्लोलमालासु जलमेकमवस्थितं ॥

स्वकारितेऽर्हच्चैत्यादौ देवोऽयं मेऽन्यकारिते ।

अन्यस्यायमिति भ्राम्यन् मोहाच्छादोऽपि चेष्टते ॥

याका अर्थ - नाना प्रकार अपने हो विशेष कहिए आप्त, आगम, पदार्थरूप श्रद्धान के भेद, तिनि विषे जो चलै - चंचल होइ, सो चल कह्या है । सोई कहिए है - अपना कराया अर्हन्तप्रतिविबादिक विषे यहु मेरा देव है, ऐसे ममत्व करि, बहुरि

अन्यकरि कराया अर्हन्तप्रतिविवादिक विषे यहु अन्य का है, ऐसे पर का मानिकरि भेदरूप भजन करै है; तातै चल कहा है ।

इहा दृष्टांत कहै है - जैसे नाना प्रकार कल्लोल तरंगनि की पंक्ति विपै जल एक ही अवस्थित है, तथापि नाना रूप होइ चल है; तैसे मोह जो सम्यक्त्व प्रकृति का उदय, तातै श्रद्धान है, सो भ्रमण रूप चेष्टा करै है ।

भावार्थ - जैसे जल तरंगनि विपै चंचल होइ, परंतु अन्यभाव की न भजै, तैसे वेदक सम्यग्दृष्टि अपना वा अन्य का कराया जिनविवादि विपै यहु मेरा, यहु अन्य का इत्यादि विकल्प करै है, परंतु अन्य देवादिक की नाही भजै है ।

अब मलिनपना कहिए है -

तदप्यलब्धमाहात्म्यं पाकात्सम्यक्त्वकर्मणः ।

मलिनं मलसंगेन शुद्धं स्वर्णमिवोद्भवेत् ॥

याका अर्थ - सो भी वेदक सम्यक्त्व है, सो सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तै न पाया है माहात्म्य जिहि, ऐसा हो है । वहरि सो शकादिक मल का संगकरि मलिन हो है । जैसे शुद्ध सोना वाह्य मल का संयोग तै मलिन हो है, तैसे वेदक सम्यक्त्व शकादिक मल का संयोग तै मलिन हो है ।

अब अगाढ कहिए है -

स्थान एव स्थितं कंप्रमगाढमिति कीर्त्यते ।

बृद्धयष्टिरिवात्यक्तस्थाना करतले स्थिता ॥

समेप्यनंतशक्तित्वे सर्वेषामर्हतामयं ।

देवोऽस्मै प्रभुरेषोस्मा इत्यास्था सुदृशामपि ॥

याका अर्थ - स्थान कहिए आप्त, आगम, पदार्थनि का श्रद्धान रूप अवस्था, तिहि विपै तिष्ठता हुआ ही कांपै, गाढा न रहै, सो अगाढ ऐसा कहिए है ।

ताका उदाहरण कहैं हैं - जैसे तीव्र रुचि रहित होय सर्व अर्हन्त परमेष्ठीनि के अनतशक्तिपना समान होतै संते, भी इस शातिकर्म, जो शाति क्रिया ताकै अर्थि शातिनाथ देव है, सो प्रभु कहिए समर्थ है । वहरि इस विघ्ननाशन आदि क्रिया के अर्थि पार्श्वनाथ देव समर्थ है । इत्यादि प्रकार करि रुचि, जो प्रतीति, ताकी गिथिलता संभव है । तातै बूढ़े का हाथ विपै लाठी गिथिल संबंधपना करि अगाढ है, तैसे सम्यक्त्व अगाढ है ।

भावार्थ - जैसे बूढ़े के हाथ ते लाठी छूटै नाही, परंतु शिथिल रहै । तैसे वेदक सम्यक्त्व का श्रद्धान छूटै नाहीं । शांति आदि के अर्थ अन्य देवादिकनि कौ न सेवै, तथापि शिथिल रहै । जैन देवादिक विषे कल्पना उपजावै ।

ऐसा इहा चल, मलिन, अगाढ का वर्णन उपदेशरूप उदाहरण मात्र कह्या है । सर्व तारतम्य भाव ज्ञानगम्य है ।

आगे औपशमिक, क्षायिक सम्यक्त्वनि का उपजने का कारण अर स्वरूप प्रतिपादन करै है -

सत्तण्हं उवसमदो, उवसमसम्मो खयादु खइयो य ।

बिदियकसायुदयादो, असंजदो होदि सम्मो य ॥२६॥

सप्तानामुपशमतः, उपशमसम्यक्त्वं क्षयात्तु क्षायिकं च ।

द्वितीयकषायोदयादसंयतं भवति सम्यक्त्वं च ॥२६॥

टीका - नाही पाइए है अंत जाका, ऐसा अनंत कहिए मिथ्यात्व, ताहि अनुबध्नंति कहिए आश्रय करि प्रवर्तै असै अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; बहुरि मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व प्रकृति नाम धारक दर्शनमोह प्रकृति तीन; असै सात प्रकृतिनि का सर्व उपशम होने करि औपशमिक सम्यक्त्व हो है । बहुरि तैसे तिन सात प्रकृतिनि का क्षयतै क्षायिक सम्यक्त्व हो है । बहुरि दोऊ सम्यक्त्व ही निर्मल है, जातै शंकादिक मलनि का अंश की भी उत्पत्ति नाही संभवै है । बहुरि तैसे दोऊ सम्यक्त्व निश्चल है, जातै आप्त, आगम, पदार्थ गोचर श्रद्धान भेदनि विषे कही भी स्खलित न हो है । बहुरि तैसे ही दोऊ सम्यक्त्व गाढ है, जातै आप्तादिक विषे तीव्र रुचि संभवै है । यहु मल का न संभवना, स्खलित न होना तीव्ररुचि का संभवना - ए तीनों सम्यक्त्व प्रकृति का उदय का इहां अत्यंत अभाव है, तातै पाइए है ऐसा जानना ।

बहुरि या प्रकार कहे तीन प्रकार सम्यक्त्वनि करि परिणया जो सम्यग्दृष्टि जीव, सो द्वितीय कषाय जे अप्रत्याख्यान क्रोध, मान, माया, लोभ; इन विषे एक किसी का उदय करि असंयत कहिए असंयमी हो है, याही तै याका नाम असंयत-सम्यग्दृष्टि है ।

आगै तत्त्वार्थश्रद्धांन का सम्यक् प्रकार ग्रहण अर त्याग का अवसर नाही,  
ताहि गाथा दोय करि प्ररूपे है -

सम्माइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।  
सद्दहदि असब्भावं, अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥२७॥<sup>१</sup>

सम्यग्दृष्टिर्जीवः, उपदिष्टं प्रवचनं तु श्रद्धाति ।  
श्रद्धाति असद्भावं, अज्ञायमानो गुरुनियोगात् ॥२७॥

टीका - जो जीव अर्हन्तादिकनि करि उपदेस्या हूवा असा जु प्रवचन कहिए  
आप्त, आगम, पदार्थ ए तीन, ताहि श्रद्धाति कहिए श्रद्धै है, रोचै है । बहुरि तिनि  
आप्तादिकनि विषे असद्भावं कहिए अतत्त्व, अन्यथा रूप ताकौ भी अपने विशेष  
ज्ञान का अभाव करि केवल गुरु ही का नियोग तै जो इस गुरु ने कहा, सो ही अर्हन्त  
की आज्ञा है, असा प्रतीति तै श्रद्धान करै है, सो भी सम्यग्दृष्टि ही है, जातै तिस  
की आज्ञा का उल्लंघन नाही करै है ।

भावार्थ - जो अपने विशेष ज्ञान न होइ, बहुरि जेनगुरु मदमति तै आप्तादिक  
का स्वरूप अन्यथा कहै, अर यहु अर्हन्त की असी ही आज्ञा है, असे मानि जो असत्य  
श्रद्धान करै तौ भी सम्यग्दृष्टि का अभाव न होइ, जातै इसने तो अर्हन्त की आज्ञा  
जानि प्रतीति करी है ।

सुत्तादो तं सम्मं, दरसिज्जंतं जदा एण सद्दहदि ।  
सो चेव हवइ मिच्छाइट्ठी जीवो तदो पहुदी ॥२८॥

सूत्रात्तं सम्यग्दर्शयंतं, यदा न श्रद्धाति ।  
स चैव भवति मिथ्यादृष्टिर्जीवः तदा प्रभृति ॥२८॥

टीका - तैसे असत्य अर्थ श्रद्धान करता आज्ञा सम्यग्दृष्टी जीव, सो जिस  
काल प्रवीण अन्य आचार्यनि करि पूर्वे ग्रह्या हुवा असत्यार्थरूप श्रद्धान तै विपरीत  
भाव सत्यार्थ, सो गणधरादिकनि के सूत्र दिखाइ सम्यक् प्रकार निरूपण कहा हुवा  
होइ, ताकौ खोटा हट करि न श्रद्धान करै तौ, तीहि काल सौ लगाय, सो जीव

मिथ्यादृष्टी हो है । जातै सूत्र का अश्रद्धान करि जिन आज्ञा का उल्लंघन का सुप्रसिद्धपना है, तीहि कारण तै मिथ्यादृष्टी हो है ।

आगै असंयतपना अर सम्यग्दृष्टीपना के सामानाधिकरण्य कौ दिखावै है —

**एगो इन्द्रियेसु विरदो, एगो जीवे थावरे तसे वापि ।**

**जो सद्दहदि जिणुत्तं, सम्माइठो अविरदोसो ॥२६॥<sup>१</sup>**

नो इन्द्रियेषु विरतो, नो जीवे स्थावरे तसे वापि ।

यः श्रद्धाति जिनोक्तं, सम्यग्दृष्टिरविरतः सः ॥२९॥

टीका — जो जीव इन्द्रियविषयनि विषे नोविरत — विरति रहित है, बहुरि तैसे ही स्थावर, तस जीव की हिसा विषे भी नाही विरत है — त्याग रहित है । बहुरि जिन करि उपदेश्या प्रवचन कौ श्रद्धान करै है, सो जीव अविरत सम्यग्दृष्टी हो है । या करि असंयत, सोई सम्यग्दृष्टी, सो असंयतसम्यग्दृष्टी है ऐसे सामानाधिकरणपना दृढ कीया । बहुत विशेषणनि का एक वस्तु आधार होइ, तहां कर्मधारेय समास विषे सामानाधिकरणपना जानना । बहुरि अपि शब्द करि ताकै सवेगादिक सम्यक्त्व के गुण भी याकै पाइए है, ऐसा सूचै है । बहुरि इहां जो अविरत विशेषण है, सो अंत्यदीपक समान जानना । जैसे छैहडै धरचा हुवा दीपक, पिछले सर्वपदार्थनि कौ प्रकाशै, तैसे इहा अविरत विशेषण नीचे के मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषे अविरतपना कौ प्रकाशै है, ऐसा संबंध जानना । बहुरि अपि शब्द करि अनुकंपा भी है ।

भावार्थ—कोऊ जानैगा कि विषयनि विषे अविरती है, तातै विषयानुरागी बहुत होगा, सो नाही है, सवेगादि गुणसंयुक्त है । बहुरि हिसादि विषे अविरति है, तातै निर्दयी होगा, सो नाही है; दया भाव संयुक्त है, ऐसा अविरतसम्यग्दृष्टि है ।

आगै देशसंयत गुणस्थान कौ गाथा दोय करि निर्देश करै है —

**पच्चक्खाणुदयादो, संजमभावो एग होदि एवरिं तु ।**

**थोववदो होदि तदो, देसवदो होदि पंचमओ ॥३०॥<sup>२</sup>**

१. षट्खंडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७४, गाथा १११.

२. षट्खंडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ १७६, गाथा ११२.



प्रत्याख्यानोदयात् संयमभावो न भवति नवरि तु ।

स्तोकव्रतं भवति ततो, देशव्रतो भवति पंचमः ॥३०॥

टीका - अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानानावरण रूप आठ कषायनि का उपशम तै प्रत्याख्यानानावरण कषायनि का देशघाती स्पर्धकनि का उदय होतै संतें सर्वघाती स्पर्धकनि का उदयाभाव रूप लक्षण जाका, ऐसा क्षय करि जाकै सकल संयमरूप भाव न हो है । विशेष यहु देशसंयम कहिए, किंचित् विरति हो है, ताकी धरै-धरै, देशसंयत नामा पंचमगुणस्थानवर्ती जीव जानना ।

जो तसवहाउ विरदो, अविरदओ तह य थावरवहादो ।

एकसमयम्हि जीवो, विरदाविरदो जिणैकमई ॥३१॥

यस्त्रसद्वधाद्विरत , अविरतस्तथा च स्थावरवधात् ।

एकसमये जीवो, विरताविरतो जिनैकमतिः ॥३१॥

टीका - सोई देशसंयत विरताविरत ऐसा भी कहिए है । एक काल ही विपै जो जीव त्रसहिंसा तै विरत है अर स्थावरहिंसा तै अविरत है, सो जीव विरत अर सोई अविरत ऐसै विरत-अविरत विपै विरोध है; तथापि अपने-अपने गोचर भाव त्रस-स्थावर के भेद अपेक्षा करि विरोध नाही । तीहि करि विरत-अविरत ऐसा उपदेश योग्य है । बहुरि तैसै चकार शब्द करि प्रयोजन बिना स्थावर हिंसा कौ भी नाही करै है, ऐसा व्याख्यान करना योग्य है । सो कैसा है ? जिनैकमतिः कहिए जिन जे आप्तादिक, तिनही विपै है एक केवल मति कहिए इच्छा - रुचि जाकै ऐसा है । इस करि देशसंयत कें सम्यग्दृष्टीपना है, ऐसा विशेषण निरूपण कीया है । यहु विशेषण आदि दीपक समान है, सो आदि विपै धरचा हूवा दीपक जैसै अगिले सर्व पदार्थनि की प्रकाशै, तैसै इहांतै आगै भी सर्व गुणस्थानकनि विपै इस विशेषण करि संबंध करना योग्य है - सर्व सम्यग्दृष्टी जानने ।

आगै प्रमत्तगुणस्थान कौ गाथा दोय करि कहैं है -

संजलण एोकसायाणुदयादो संजमो हवे जम्हा ।

मलजणणपमादो वि, य तम्हा हु पमत्तविरदो सो ॥३२॥

संज्वलननोकषायाणामुदयात्संयमो भवेद्यस्मात् ।

मलजननप्रमादोऽपि च तस्मात्खलु प्रमत्तविरतः सः ॥३२॥

टीका — जा कारण तै संज्वलनकषाय के सर्वघाती स्पर्धकनि का उदयाभाव लक्षण धरै क्षय होतै, बहुरि बारह कषाय उदय कौ न प्राप्त तिनका, अर संज्वलन कषाय अर नोकषाय, इनके निषेकनि का सत्ता अवस्था रूप लक्षण धरै उपशम होतै; बहुरि संज्वलनकषाय, नोकषायनि का देशघाती स्पर्धकनि का तीव्र उदय तै सकलसयम अर मल का उपजावनहारा प्रमाद दोऊ हो है । तीहि कारण तै प्रमत्त सोई विरत, सो षष्ठम गुणस्थानवर्ती जीव प्रमत्तसंयत अैसा कहिए है ।

“विविक्खदस्स संजमस्स खओवसमियत्तपडुप्पायणमेत्तफलत्तादो कथं संजलणणोकसायाणं चरित्तविरोहीणं चारित्तकारयत्तं ? देशघादित्तेण सपडिवक्ख गुणं विणिम्मूलणसत्तिविरहियाणमुदयो विज्जमाणो वि ण स कज्जकार ओत्ति संजमहेदुत्तेण विविक्खयत्तादो, वत्थुदो दु कज्जं पडुप्पायेदि मलजणणपमादोविय ‘अविय इत्यवधारणे’ मलजणणपमादो चेव जम्हा एवं तम्हा हु पमत्ताविरदो सो तमुवलक्खदि ।”

याका अर्थ — विवक्षित जो संयम, ताकै क्षायोपशमिकपना का उत्पादनमात्र फलपना है । संज्वलन अर नोकषाय जे चारित्र के विरोधी, तिनकै चारित्र का करना — उपजावना कैसै संभव है ?

तहां कहै है — एक देशघाती है, तीहि भावकरि अपना प्रतिपक्षी संयमगुण, ताहि निर्मूल नाश करने की शक्ति रहित है । सो इनका उदय विद्यमान भी है, तथापि अपना कार्यकारी नाही, सयम नाश न करि सकै है । अैसै संयम का कारणपना करि विवक्षा तै संज्वलन अर नोकषायनि के चारित्र उपजावना उपचार करि जानना । वस्तु तै यथार्थ निश्चय विचार करिए, तव ए संज्वलन अर नोकषाय अपने कार्य ही कौ उपजावै है । इनि तै मल का उपजावनहारा प्रमाद हो है । अपि च अैसा शब्द है सो प्रमाद भी है, अैसा अवधारण अर्थ विषै जानना । मल का उपजावनहारा प्रमाद है, जातै अैसै तातै प्रकट प्रमत्तविरत, सो षष्ठम गुणस्थानवर्ती जीव है ।

ताहि लक्षण करि कहै है —

वत्तावत्तपमादे, जो वसइ पमत्तसंजदो होदि ।

सयलगुणशीलकलिओ, महव्वई चित्तलायरणो ॥३३॥<sup>१</sup>

हो है । इहा सूत्र विषै पहिलै चकार कह्या, सो सर्व ही ए प्रमाद है, अैसा साधारण भाव जानने के अर्थि कह्या है । बहुरि दूसरा तथा शब्द कह्या, सो परस्पर समुदाय करने के अर्थि कह्या है ।

आगै इनि प्रमादनि के अन्य प्रकार करि पांच प्रकार है, तिनकौ नव गाथानि करि कहै है -

संखा तह पत्थारो, परियट्ठण णट्ठ तह समुद्दिट्ठं ।

एदे पंच पयारा, पमदसमुक्कित्तणे णेया ॥३५॥

संख्या तथा प्रस्तारः, परिवर्तन नष्टं तथा समुद्दिष्टम् ।

एते पंच प्रकाराः, प्रमादसमुत्कीर्तने ज्ञेयाः ॥३५॥

टीका - संख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट ए पांच प्रकार प्रमादनि का व्याख्यान विषै जानना । तहा प्रमादनि का आलाप कौ कारणभूत जो अक्ष-संचार के निमित्त का विशेष, सो संख्या है । बहुरि इनका स्थापन करना, सो प्रस्तार है । बहुरि अक्षसंचार परिवर्तन है । संख्या धरि अक्ष का ल्यावना नष्ट है । अक्ष धरि संख्या का ल्यावना समुद्दिष्ट है । इहा भंग कौ कहने का विधान, सो आलाप जानना । बहुरि भेद वा भंग का नाम अक्ष जानना । बहुरि एक भेद अनेक भंगनि विषै क्रम तै पलटै, ताका नाम अक्षसंचार जानना । बहुरि जेथवा भंग होइ, तीहि प्रमाण का नाम संख्या जानना ।

आगै विशेष संख्या की उत्पत्ति का अनुक्रम कहै है -

सव्वे पि पुव्वभंगा, उवरिमभंगेसु एक्कमेक्केसु ।

मेलंति त्ति य कमसो, गुणिदे उप्पज्जदे संखा ॥३६॥

सर्वेऽपि पूर्वभंगा, उपरिमभंगेषु एकैकेषु ।

मिलंति इति च क्रमशो, गुणिते उत्पद्यते संख्या ॥३६॥

टीका - सर्व ही पहिले भंग ऊपरि-ऊपरि के भंगनि विषै एक-एक विषै मिलै है, संभवै है । यातै क्रम करि परस्पर गुणै, विशेष संख्या उपजै है । सोई कहिए है - पूर्व भंग विकथाप्रमाद च्यारि, ते ऊपरि के कषायप्रमादनि विषै एक-एक विषै सभवै

हैं । अैसे च्यारि विकथानि करि गुणै, च्यारि कषायनि के सोलह प्रमाद हो है ।  
बहुरि ए नीचले भंग सोलह भए, ते ऊपरि के इंद्रियप्रमादनि विषै एक-एक विषै संभवै  
हैं । अैसे सोलह करि गुणै, पंच इंद्रियनि के असी प्रमाद हो है । तैसे ही निद्रा विषै,  
बहुरि स्नेह विषै एक-एक ही भेद है । तातै एक-एक करि गुणै भी असी-असी ही  
प्रमाद हो हैं । अैसे विशेष संख्या की उत्पत्ति कही ।

आगे प्रस्तार का अनुक्रम दिखावै है -

पढमं पमदपमाणां, कमेण णिक्खिविय उवरिमाणां च ।

पिंडं पडि एक्केकं, णिक्खित्ते होदि पत्थारो ॥३७॥

प्रथमं प्रमादप्रमाणं, क्रमेण निक्षिप्य उपरिमाणं च ।

पिंडं प्रति एकैकं, निक्षिप्ते भवति प्रस्तारः ॥३७॥

टीका - प्रथम विकथास्वरूप प्रमादनि का प्रमाण का विरलन करि एक-एक  
जुदा विखेरी, पीछे क्रम करि नीचे विरल कीया था । ताकै एक-एक भेद प्रति एक-  
एक ऊपरि का प्रमादपिंड कौ स्थापन करना, तिनकौ मिलै प्रस्तार हो है । सो  
कहिए है - विकथा प्रमाद का प्रमाण च्यारि, ताकौ विरलन करि क्रम तै स्थापि  
(१ १ १ १) बहुरि ताकै ऊपरि का दूसरा कषाय नामा प्रमाद, ताका पिंड जो  
समुदाय, ताका प्रमाण च्यारि (४) ताहि विरलनरूप स्थापे जे नीचले प्रमाद,  
तिनिका एक-एक भेद प्रति देना ।

भावार्थ - एक-एक विकथा भेद ऊपरि च्यारि-च्यारि कषाय स्थापने  
क ४ ४ ४ ४  
वि १ १ १ १ सो इनकी मिलाए जोडै, सोलह प्रमाद हो है । बहुरि ऊपरि की अपेक्षा  
लीए याकों पहिला प्रमादपिंड कहिए, सो याकौ विरलन करि क्रम तै स्थापि, यातै  
ऊपरी का तिस पहिला की अपेक्षा याको दूसरा इंद्रियप्रमाद, ताका पिंड प्रमाण  
पाच, ताहि पूर्ववत् विरलन करि स्थापे, जे नीचले प्रमाद, तिनके एक-एक भेद प्रति  
एक-एक पिंडरूप स्थापिए -

५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५  
१ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १ १  
क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो , क्रो मा मा लो ,  
स्त्री स्त्री स्त्री स्त्री , म म म म , रा रा रा रा , अ अ अ अ ,

भावार्थ — सोलह भेदनि विषै एक-एक भेद ऊपरि पांच-पांच इंद्रिय स्थापने, सो इनकों जोड़ै, असी भंग हो हैं । यह प्रस्तार आगे कहिए जो अक्षसंचार, ताका कारण है । अैसें प्रस्ताररूप स्थापे जे असी भंग, तिनिका आलाप जो भंग कहने का विधान, ताहि कहिए है — स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्री-कथालापी अैसें यह असी भंगनि विषै पहिला भंग है । बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-रसना इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसें यह दूसरा भंग है । बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-घ्राण इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसें यह तीसरा भंग भया । बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-चक्षु इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसें यह चौथा भंग है । बहुरि स्नेहवान्-निद्रालु-श्रोत्र इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-स्त्रीकथालापी अैसें यह पांचवा भंग है । अैसें पांच भंग भए । याही प्रकार क्रोधी की जायगा मानी स्थापि पंच भंग करने ।

बहुरि मायावी स्थापि पंच भंग करने । बहुरि लोभी स्थापि पंच भंग करने । अैसें एक-एक कषाय के पांच-पांच होइ, च्यारि कषायनि के एक स्त्रीकथा प्रमाद विषै बीस आलाप हो हैं । बहुरि जैसें स्त्रीकथा आलापी की अपेक्षा बीस भेद कहे, तैसें ही स्त्रीकथालापी की जायगा भक्तकथालापी, बहुरि राष्ट्रकथालापी, बहुरि अवनिपालकथालापी क्रम तै स्थापि एक-एक विकथा के बीस-बीस भंग होइ । च्यारौ विकथानि के मिलि करि सर्वप्रमादनि के असी आलाप हो है, अैसा जानना ।

आगे अन्य प्रकार प्रस्तार दिखावै हैं —

णिक्खित्तु बिदियमेत्तं, पढमं तस्सुवरि बिदयमेक्केकं ।

पिंडं पडि णिक्खेओ, एवं सव्वत्थ कायव्वो ॥३८॥

निक्षिप्त्वा द्वितीयमात्रं, तस्यौपरि द्वितीयमेकैकम् ।

पिंडं प्रति निक्षेप, एवं सर्वत्र कर्तव्यः ॥३८॥

टीका — कषायनामा दूसरा प्रमाद का जेता प्रमाण, तीहिमात्र स्थानकनि विषै विकथास्वरूप पहिला प्रमाद का समुदायरूप पिंड जुदा-जुदा स्थापि ( ४४४४ ), बहुरि एक-एक पिंडप्रति द्वितीय प्रमादनि का प्रमाण का एक-एक रूप ऊपरि स्थापना ।

भादार्थ - च्यारि-च्यारि प्रमाण लीए, एक-एक विकथा प्रमाद का पिड, ताको दूसरा प्रमाद कषाय का प्रमाण च्यारि, सो च्यारि जायगा स्थापि, एक-एक पिड के ऊपरि क्रम तै एक-एक कषाय स्थापिए (१ १ १ १) <sup>(४ ४ ४ ४)</sup> अैसे स्थापन कीए, तिन

का जोड सोलह पिड प्रमाण होइ । वहुनि 'अैसे ही सर्वत्र करना' इस वचन तै यह सोलह प्रमाण पिड जो समुदाय, सो तीसरा इन्द्रिय प्रमाद का जेता प्रमाण, तितनी जायगा स्थापिए । सो पांच जायगा स्थापि ( १६ १६ १६ १६ १६ ), इनके ऊपरी तीसरा इन्द्रिय प्रमाद का प्रमाण एक-एक रूपकरि स्थापन करना ।

भादार्थ - पूर्वोक्त सोलह भेद जुदे-जुदे इन्द्रिय प्रमाद का प्रमाण पांचा, सो पांच जायगा स्थापि, एक-एक पिड के ऊपरि एक-एक इन्द्रिय भेद स्थापन करना <sup>१ १ १ १</sup> ( १६ १६ १६ १६ ) अैसे स्थापन कीए, अधस्तन कहिए नीचे की अपेक्षा अधसंचार को कारण दूसरा प्रस्तार हो है ।

सो इस प्रस्तार अपेक्षा आलाप जो भंग कहने का विधान, सो कैसे हो है ?

सोई कहिए है - स्त्रीकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन-इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा असी भंगनि विषे प्रथम भंग है । वहुनि भक्तकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा दूसरा भंग है । वहुनि राष्ट्रकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा तीसरा भंग है । वहुनि अवनिपालकथालापी-क्रोधी-स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान् अैसा चौथा भंग है । अैसे ही क्रोध की जायगा मानी वा मायावी वा लोभी क्रम तै कहि च्यारि-च्यारि भंग होइ, च्यारौ कषायनि के एक स्पर्शन इन्द्रिय विषे सोलह आलाप हो है ।

वहुनि अैसे ही स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत की जायगा रसना वा घ्राण वा चक्षु वा श्रोत्र इन्द्रिय के वशीभूत क्रम तै कहि एक-एक के सोलह-सोलह भेद होइ पाचों इन्द्रियनि के असी प्रमाद आलाप हो है । तिन सवनि को जानि व्रती पुरुषनि करि प्रमाद छोडने ।

भादार्थ - एकै जीव के एक काल कोई एक-एक, कोई भेदरूप विकथादिक हो हैं । तातें तिनके पलटने की अपेक्षा पद्रह प्रमादनि के असी भंग हो हैं । अैसा ही यह अनुक्रम चौरासी लाख उत्तरगुण, अठारह हजार शील के भेद, तिनका भी प्रन्तार विषे करना ।

आगै पीछे कहा जो दूसरा प्रस्तार, ताकी अपेक्षा अक्षपरिवर्तन कहिए  
अक्षसंचार, ताका अनुक्रम कहै हैं -

पढमक्खो अंतगदो, आदिगदे संकमेदि बिदियक्खो ।  
दोण्णिवि गंतूणंतं, आदिगदे संकमेदि तदियक्खो ॥३६॥

प्रथमाक्ष अंतगतः आदिगते संक्रामति द्वितीयाक्षः ।  
द्वावपि गत्वांतमादिगते, संक्रामति तृतीयाक्षः ॥३९॥

टीका - पहिला प्रमाद का अक्ष कहिए भेद विकथा, सो आलाप का  
अनुक्रम करि अपने पर्यन्त जाइ, बहुरि बाहुडि करि अपने प्रथम स्थान कौ युगपत्  
प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो अपने दूसरे स्थान कौ प्राप्त होइ ।

भावार्थ - आलापनि विषे पहिलै तो विकथा के भेदनि कौ पलटिए, क्रम तैं  
स्त्री, भक्त, राष्ट्र, अवनिपालकथा च्यारि आलापनि विषे कहिए । अर अन्य प्रमादनि  
का पहिला-पहिला ही भेद इन चारौ आलापनि विषे ग्रहण करिए । तहां पीछें  
पहिला विकथा प्रमाद अपना अंत अवनिपालकथा तहां पर्यंत जाइ, बाहुडि करि अपना  
स्त्रीकथारूप प्रथम भेद कौ जब प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद कषाय, सो अपना  
पहला स्थान क्रोध को छोडि, द्वितीय स्थान मान कौ प्राप्त होइ । बहुरि प्रथम प्रमाद  
का अक्ष पूर्वोक्त अनुक्रम करि संचार करता अपना पर्यन्त कौ जाइ, बाहुडि करि  
युगपत् अपना प्रथम स्थान कौ जब प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो  
अपना तीसरा स्थान कौ प्राप्त होइ ।

भावार्थ - दूसरा कषाय प्रमाद दूसरा भेद मान कौ प्राप्त हुवा, तहां भी  
पूर्वोक्त प्रकार पहला भेद क्रम तैं च्यारि आलापनि विषे क्रम तैं पलटी, अपना पर्यन्त  
भेद ताई जाइ, बाहुडि अपना प्रथम भेद स्त्रीकथा कौ प्राप्त होइ, तब कषाय  
प्रमाद अपना तीसरा भेद माया कौ प्राप्त हो है । बहुरि अैसे ही संचार करता,  
पलटता दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो जब अपने अंत पर्यन्त भेद कौ प्राप्त  
होइ, तब प्रथम अक्ष विकथा, सो भी अपना पर्यन्त भेद कौ प्राप्त होइ तिष्ठै ।

भावार्थ - पूर्वोक्त प्रकार च्यारि आलाप माया विषे, च्यारि आलाप लोभ  
विषे भए कषाय अक्ष अपना पर्यन्त भेद लोभ, ताकौ प्राप्त भया । अर इनिविषे

पहिला अक्ष विकथा, सो भी अपना पर्यन्त भेद अवनिपालकथा, ताकी प्राप्त भया; अैसें होते सोलह आलाप भए ।

बहुरि ए दोऊ अक्ष विकथा अर कपाय बाहुडि करि अपने प्रथम स्थान की प्राप्त भए, तब तीसरा प्रमाद का अक्ष अपना प्रथम स्थान छोडि, दूसरा स्थान की प्राप्त हो है । अर इस ही अनुक्रम करि प्रथम अर द्वितीय अक्ष का क्रम तै अपने पर्यन्त भेद ताई जानना । बहुरि बाहुडना तिनकरि तीसरा प्रमाद का अक्ष इंद्रिय, सो अपना तीसरा आदि स्थान की प्राप्त होइ, अैसा जानना ।

भावार्थ - विकथा अर कपाय अक्ष बाहुडि अपना प्रथम स्थान स्त्रीकथा अर क्रोध की प्राप्त होइ, तब इंद्रिय अक्ष विपै पूर्वे सोलह आलापनि विपै पहिला भेद स्पर्शन इंद्रिय था, सो तहां रसना इंद्रिय होइ, तहां पूर्वोक्त प्रकार अपना-अपना पर्यंत भेद ताई जाय, तब रसना इंद्रिय विपै सोलह आलाप होइ । बहुरि तैसें ही ते दोऊ अक्ष बाहुडि अपने प्रथम स्थान की प्राप्त होइ, तब इंद्रिय अक्ष अपना तीसरा भेद घ्राण इंद्रिय की प्राप्त होइ, या विपै पूर्वोक्त प्रकार सोलह आलाप होइ ।

बहुरि इस ही क्रमकरि सोलह-सोलह आलाप चक्षु, श्रोत्र इंद्रिय विपै भए, सर्व प्रमाद के अक्ष अपने पर्यन्त भेद की प्राप्त होइ तिष्ठैं हैं । यह अक्षसंचार का अनुक्रम नीचै के अक्ष तैं लगाय, ऊपरि के अक्ष पर्यन्त विचार करि प्रवर्तविना । बहुरि अक्ष की सहनानी हंसपद है, ताका आकार (X) अैसा जानना ।

आगे प्रथम प्रस्तार की अपेक्षा अक्षपरिवर्तन कहै हैं -

तदियक्खो अंतगदो, आदिगदे संकमेदि विदियक्खो ।

दोणिवि गंतूणंतं, आदिगदे संकमेदि पढमक्खो ॥४०॥

तृतीयाक्षः अंतगतः, आदिगते संक्रामति द्वितीयाक्षः ।

द्वावपि गत्वांतमादिगते संक्रामति प्रथमाक्षः ॥४०॥

टोका - तीसरा प्रमाद का अक्ष इंद्रिय, सो आलाप का अनुक्रम करि अपने पर्यन्त जाइ स्पर्शनादि क्रम तैं पांच आलापनि विपै श्रोत्र पर्यन्त जाइ, बहुरि बाहुडि युगपन् अपने प्रथम स्थान स्पर्शन की प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कपाय, सो पहले श्रोत्रप्य प्रथम स्थान की प्राप्त था, ताकी छोडि अपना दूसरा स्थान मान



कौ प्राप्त हो है । तहां बहुरि तीसरा प्रमाद का अक्ष इन्द्रिय, सो पूर्वोक्त अनुक्रम करि अपने अंत भेद पर्यन्त जाइ, बाहुडि युगपत् प्रथम स्थान कौ प्राप्त होइ, तब दूसरा प्रमाद का अक्ष कषाय, सो दूसरा स्थान मान कौ छोडि, अपना तृतीय स्थान माया कौ प्राप्त होइ । तहा भी पूर्वोक्त प्रकार विधान होइ, असै क्रम तै दूसरा प्रमाद का अक्ष जब एक बार अपना पर्यन्त भेद लोभ कौ प्राप्त होइ, तब तीसरा प्रमाद का अक्ष इन्द्रिय, सो भी क्रम करि संचार करता अपने अंत भेद कौ प्राप्त होइ, तब बीस आलाप होइ ।

**भावार्थ** — एक-एक कषाय विषै पांच-पाच आलाप इन्द्रियनि के संचार करि होइ । बहुरि ते इन्द्रिय अर कषाय दोऊ ही अक्ष बाहुडि अपने-अपने प्रथम स्थान कौ युगपत् प्राप्त होइ, तब पहिला प्रमाद का अक्ष विकथा, सो पहिलै बीसों आलापनि विषै अपना प्रथम स्थान स्त्रीकथा रूप, ताकौ प्राप्त था । सो अब प्रथम स्थान कौ छोडि, अपना द्वितीय स्थान भक्तकथा कौ प्राप्त होइ । बहुरि इस ही अनुक्रम करि पूर्वोक्त प्रकार तृतीय, द्वितीय प्रमाद का अक्ष इन्द्रिय अर कषाय, तिनिका अपने अंत पर्यन्त जानना । बहुरि बाहुडना इनि करि प्रथम प्रमाद का अक्ष विकथा, सो अपना तृतीयादि स्थानकनि कौ प्राप्त होइ, असै संचार जानना ।

**भावार्थ** — पूर्वोक्त प्रकार एक-एक विकथा भेद विषै इन्द्रिय-कषायनि के पलटने तै बीस आलाप होइ, ताके चारौ विकथानि विषै असी आलाप हो है । यह अक्षसंचार का अनुक्रम ऊपरि अंत का भेद इन्द्रिय का पलटन तै लगाय क्रम तै अधस्तन पूर्व-पूर्व अक्ष का परिवर्तन कौ विचारि पलटना, असै अक्षसंचार कह्या । अक्ष जो भेद, ताका क्रम तै पलटने का विधान असै जानना ।

आगै नष्ट ल्यावने का विधान दिखावै है —

लगमाणेहिं विभक्ते, सेसं लक्खित्तु जाण अक्खपदं ।

लद्धे रूपं पक्खिव, सुद्धे अंते ण रूपपक्खेओ ॥४१॥

स्वकमानैविभक्ते, शेषं लक्षयित्वा जानीहि अक्षपदम् ।

लब्धे रूपं प्रक्षिप्य शुद्धे अंते न रूपप्रक्षेयः ॥४१॥

**टीका** — कोऊ जेथवां प्रमाद भंग पूछै, तीहि प्रमाद भंग का आलाप की खबरि नाही, जो यह आलाप कौन है, तहा ताकौ नष्ट कहिए । ताके ल्यावने

का, जानने का उपाय कहिए है । कोऊ जेथवां प्रमाद पूछ्या होइ, ताकी अपना प्रमाद पिड का भाग दीजिए, जो अवशेष रहै, सो अक्षस्थान जानना । बहुरि जेते पाए होइ, तिनिविषे एक जोडि, जो प्रमाण होइ, ताकी द्वितीय प्रमाद पिड का भाग देना, तहां भी तैसे ही जानना । अैसे ही क्रम तै सर्वत्र करना । इतना विणेष जानना, जो जहा भाग दीएं राशि शुद्ध होइ जाय, कछु भी अवशेष न रहै; तहा तिस प्रमाद का अंत भेद ग्रहण करना । बहुरि तहां जो लब्धराशि होइ, तिहि विषे एक न जोडना । बहुरि अैसे करतै अंत जहा होइ, तहां एक न जोडना, सो कहिए है ।

जेथवा प्रमाद पूछ्या, तिस विवक्षित प्रमाद की संख्या की प्रथम प्रमाद विकथा, ताका प्रमाण पिड च्यारि, ताका भाग देइ, अवशेष जितना रहै, सो अक्षस्थान है । जितने अवशेष रहै, तेथवा विकथा का भेद, तिस आलाप विषे जानना । बहुरि इहा भाग दीए, जो पाया, तीह लब्धराशि विषे एक और जोडना । जोडै जो प्रमाण होइ, ताका ऊपरि का दूसरा प्रमाद कषाय, ताका प्रमाण पिड च्यारि, ताका भाग देइ, जो अवशेष रहै, सो तहां अक्षस्थान जानना । जितने अवशेष रहै, तेथवा कषाय का भेद तिस आलाप विषे जानना बहुरि जो इहा लब्धराशि होइ, तीहि विषे एक जोडि, तीसरा प्रमाद इंद्रिय, ताका प्रमाण पिड पाच, ताका भाग दीजिए । बहुरि जहा अवशेष शून्य रहै, तहां प्रमादनि का अंतस्थान विषे ही अक्ष तिष्ठै है । तहा अंत का भेद ग्रहण करना, बहुरि लब्धराशि विषे एक न जोडना ।

इहां उदाहरण कहिए है — काहूने पूछ्या कि असी भगनि विषे पंद्रहवा प्रमाद भंग कौन है ?

तहा ताके जानने को विवक्षित नष्ट प्रमाद की संख्या पंद्रह, ताकी प्रथम प्रमाद का प्रमाण पिड च्यारि का भाग देइ तीन पाए, अर अवशेष भी तीन रहै, सो तीन अवशेष रहै, तातै विकथा का तीसरा भेद राष्ट्रकथा, तीहि विषे अक्ष है, तहां अक्ष देखकरि देखै ।

भावार्थ — तहां पंद्रहवां आलाप विषे राष्ट्रकथालापी जानना । बहुरि तहां तीन पाए थे । तिस लब्धराशि तीन विषे एक जोडै, च्यारि होइ, ताकी ताके ऊपरि कषाय प्रमाद, ताका प्रमाण पिड च्यारि, ताका भाग दीएं अवशेष शून्य है, किछु न रह्या, तहां तिस कषाय प्रमाद का अंत भेद जो लोभ, ताका आलाप विषे अक्ष सूचै है । जातै जहां राशि शुद्ध होइ जाइ, तहां ताका अंत भेद ग्रहण करना ।

भावार्थ — पंद्रहवा आलाप विषे लोभी जानना । बहुरि तहा लब्धराशि एक, तोहि विषे एक न जोडना । जातै जहा राशि शुद्ध होइ जाय, तहा पाया राशि विषे एक और न मिलावना सो एक का एक ही रह्या, ताकौ ऊपरि का इन्द्रिय प्रमाण पिंड पांच का भाग दीए, लब्धराशि शून्य है । जातै भाज्य तै भागहार का प्रमाण अधिक है, तातै इहा लब्धराशि का अभाव है । अवशेष एक रह्या, तातै इन्द्रिय का स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत असा प्रथम भेद रूप अक्ष पंद्रहवा आलाप विषे सूचै है । असै पंद्रहवां राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इन्द्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान ऐसा आलाप जानना ।

याही प्रकार जेथवां आलाप जान्यां चाहिए, तेथवां नष्ट आलाप कौ साधै ।

बहुरि इहां द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा विकथादिक का क्रम करि जैसे नष्ट ल्यावने का विधान कह्या, तैसे ही प्रथम प्रस्तार अपेक्षा ऊपरि तै इन्द्रिय, कषाय, विकथा का अनुक्रम करि पूर्वोक्त भागादिक विधान तै नष्ट ल्यावने का विधान करना ।

तहां उदाहरण — किसी ने पूछा प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पंद्रहवा आलाप कौन ?

तहां इस संख्या कौ पांच का भाग दीए, अवशेष शून्य, तातै इहां अंत का भेद श्रोत्र इन्द्रिय के वशीभूत ग्रहण करना ।

बहुरि इहां पाए तीन, ताकौ कषाय पिंड प्रमाण च्यारि, ताका भाग दीए, लब्धराशि शून्य, अवशेष तीन, तातै तहां तीसरा कषाय भेद मायावी जानना । बहुरि लब्धराशि शून्य विषे एक मिलाएं एक भया, ताकौ विकथा का प्रमाद पिंड च्यारि का भाग दीएं लब्धराशि शून्य, अवशेष एक, सो स्त्रीकथालापी जानना । एस प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पंद्रहवां स्नेहवान्-निद्रालु-श्रोत्र इन्द्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी असा आलाप जानना । असै ही अन्य नष्ट आलाप साधने ।

आगे आलाप धरि संख्या साधने कौ अगिला सूत्र कहै है —

संठाविदूरा ख्वं, उवरीदो संगुणित्तु सगमाणे ।

अवगिज्ज अरांकिदयं, कुज्जा एमेव सव्वत्थ ॥४२॥

संस्थाप्य रूपमुपरितः संगुणित्वा स्वकमानम् ।

अपनीयानंकितं, कुर्यात् एवमेव सर्वत्र ॥४२॥

टीका - प्रथम एक रूप स्थापन करि ऊपरि तें अपना प्रमाण करि गुणें, जो प्रमाण होई, तामें अनंकित स्थान का प्रमाण घटावना, जैसे सर्वत्र करना । इहां जो भेद ग्रहण होइ, ताकें परे स्थानकनि की जो संख्या, ताकी अनंकित कहिए । जैसे विकथा प्रमाद विषे प्रथम भेद स्त्रीकथा का ग्रहण होइ, तौ तहा ताकें परे तीन स्थान रहैं, तातें अनंकित का प्रमाण तीन है । वहुरि जो भक्तकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकें परे दोय स्थान रहैं, तातें अनंकित स्थान दोय है । वहुरि जो राष्ट्रकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकें परे एक स्थान है, तातें अनंकित स्थान एक है । वहुरि जो अविनिपालकथा का ग्रहण होइ, तौ ताकें परे कोऊ भी नहीं, तातें तहां अनंकित स्थान का अभाव है । जैसे ही कपाय, इंद्रिय प्रमाद विषे भी अनंकित स्थान जानना ।

सो कोऊ कहे कि अमुक आलाप केथवां है ? तहां आलाप कह्या, ताकी संख्या न जानिए, तो ताकी संख्या जानने कौ उद्दिष्ट कहिए है । प्रथम एक रूप स्थापिए, वहुरि ऊपरि का इंद्रिय प्रमाद संख्या पांच, ताकरि तिस एक कौ गुणिए, तहां अनंकित स्थानकनि की संख्या घटाइ, अवशेष कौ ताके अनंतर नीचला कपाय प्रमाद का पिंड की संख्या च्यारि, ताकरि गुणिए, तहां भी अनंकित स्थान घटाइ, अवशेष कौ ताके अनंतर नीचला विकथा प्रमाद का पिंड च्यारि, ताकरि गुणिए, तहां भी अनंकित स्थान घटाइ, अवशेष रहै तितनां विवक्षित आलाप की संख्या हो है । जैसे ही सर्वत्र उत्तरगुण वा शीलभेदनि विषे उद्दिष्ट ल्यावने का अनुक्रम जानना ।

इहां भी उदाहरण दिखाइए हैं - काहूने पूछ्या कि राष्ट्रकथालाप-लोभी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान ऐसा आलाप केथवा है ?

तहां प्रथम एक रूप स्थापि, ताकौ ऊपरि का इंद्रिय प्रमाद, ताकी संख्या पांच, तीहिकरि गुणें पांच भए । तींहि राशि विषे पंद्रहवां उद्दिष्ट की विवक्षा करि, तामें पहला भेद स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत ऐसा आलाप विषे कह्या था, तातें ताके परे रसना, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र ए च्यारि अनंकित स्थान हैं । तातें इनकों घटाएं, अवशेष एक रहै, ताकौ नीचला कपाय प्रमाद की संख्या च्यारि करि गुणें, च्यारि भए, सो इस लव्वराशि च्यारि विषे इहां आलाप विषे लोभी कह्या था, सो लोभ के परे कोऊ भेद नाही । तातें अनंकित स्थान कोऊ नाही । इस हेतु तें इहां शून्य घटाए, राशि जैसा का तैसा ही रह्या, सो च्यारि ही रहै । वहुरि इस राशि कौ याके नीचे विकथा प्रमाद की संख्या च्यारि ताकरि गुणें सोलह भए । इहां आलाप विषे

राष्ट्रकथालापी कहा, सो याके परै एक भेद अवनिपाल कथा है, यातै अनंकित स्थान एक घटाएं, पंद्रह रहै, सोई पूछ्या था, ताका उत्तर अैसा — जो राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान, अैसा आलाप पंद्रहवां है । सो यहु विधान दूसरा प्रस्तार की अपेक्षा जानना ।

बहुरि प्रथम प्रस्तार अपेक्षा नीचे तै अनुक्रम जानना ।

तहां उदाहरण कहिए है — स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इंद्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी, अैसा आलाप केथवां है ?

तहां एक रूप स्थापि, प्रथम प्रस्तार अपेक्षा ऊपरि का प्रमाद विकथा, ताका प्रमाण च्यारि करि गुणै, च्यारि भए, सो इहा स्त्रीकथालापी ग्रह्या, सो याके परै तीन भेद है । तातै अनंकित स्थान तीन घटाएं, अवशेष एक रह्या, ताकौ कषाय प्रमाद च्यारि करि गुणै, च्यारि भए, सो इहा मायावी ग्रह्या, ताके परै एक लोभ अनंकित स्थान है, ताकौ घटाएं तीन रहै, याकौ इंद्रिय प्रमाद पाच करि गुणै, पद्रह भए, सो इहां श्रोत्र इंद्रिय का ग्रहण है । ताके परै कोऊ भेद नाही, तातै अनंकित स्थान का अभाव है । इस हेतु तै शून्य घटाए भी पंद्रह ही रहै । अैसे स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इंद्रिय के वशीभूत-मायावी-स्त्रीकथालापी, अैसा आलाप पद्रहवा है । या ही प्रकार विवक्षित प्रमाद का आलाप की सख्या हो है, अैसे अक्ष धरि सख्या का ल्यावना, सो उद्दिष्ट सर्वत्र साधै ।

आगै प्रथम प्रस्तार का अक्षसंचार कौ आश्रय करि नष्ट, उद्दिष्ट का गूढ यत्र कहै है —

इगिबितिचपराखपणदसपण्णरसं खवीसतालसठ्ठी य ।  
संठचिय पमदठाणे, एट्ठुद्दिट्ठं च जाण तिट्ठाणे ॥४३॥

एकद्वित्रिचतुः पंचखपंचदशपंचदशखविंशच्चत्वारिंशत्षष्ठीश्च ।  
संस्थाप्य प्रमाद स्थाने, नष्टोद्दिष्टे च जानीहि त्रिस्थाने ॥४३॥

टीका — प्रमादस्थानकनि विषै इंद्रियनि के पंच कोठानि विषै क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि, पांच इन अंकनि कौ स्थापि; कषायनि के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै बिदी, पांच, दश, पंद्रह इन अंकनि कौ स्थापि; तैसे विकथानि के च्यारि कोठानि विषै क्रम तै बिदी, बीस, चालीस, साठि इनि अंकनि कौ स्थापि; निद्रा,

स्नेह के दोय, तीन आदि भेदनि का अभाव है । तीहि करि ताके निमित्त तैं हुई जो आलापनि की बहुत संख्या, सो न संभवै है । यातैं तिन तीनों स्थानकनि विषैं स्थापे अंक, तिन विषैं नष्ट उद्दिष्ट तू जानि ।

भावार्थ — निद्रा, स्नेह का तौ एक-एक भेद ही है । सो इनकी तौ सर्वभगनि विषैं पलटनि नाही । तातैं इनिकों तो कहि लैने । अर अवशेष तीन प्रमादनि का तीन पंक्ति रूप यंत्र करना । तहां ऊपरि की पंक्ति विषैं पंच कोठे करने । तिन विषैं क्रम तैं स्पर्शन आदि इंद्रिय लिखने । अर एक, दोय, तीन, च्यारि, पाच ए अंक लिखने । व्हुरि ताके नीचली पंक्ति विषैं च्यारि कोठे करने, तिन विषैं क्रम तैं क्रोधादि कपाय लिखने । अर विदी, पांच, दश, पंद्रह ए अंक लिखने । व्हुरि ताके नीचली पंक्ति विषैं च्यारि कोठे लिखने, तहां स्त्री आदि विकथा क्रम तैं लिखनी । अर विदी, बीस, चालीस, साठ ए अंक लिखने ।

स्पर्शन १-	रसन २	घ्राण ३	चक्षु ४	श्रोत्र ५
क्रोध ०	नान ५	माया १०	लोभ १५	
स्त्री ०	भक्त २०	राष्ट्र ४०	अव ६०	

इहां कोऊ नष्ट वृत्तैं तो जेथवा प्रमाद भंग पूछ्या सो प्रमाण तीनों पंक्ति विषैं जिन-जिन कोठेनि के अंक जोड़ैं होंइ, तिन-तिन कोठेनि विषैं जो-जो इंद्रियादि लिखा होइ, सो-सो तिस पूछ्या हूआ आलाप विषैं जानने । व्हुरि जो उद्दिष्ट वृत्तैं तौ, जो आलाप पूछ्या, तिस आलाप विषैं जो इंद्रियादिक ग्रहे होंइ, तिनके तीनों पंक्तिनि के कोठेनि विषैं जे-जे अंक लिखे होंइ, तिनको जोड़ैं जो प्रमाण होइ, तेथवां सो आलाप जानना ।

तहां नष्ट का उदाहरण कहिए है —

जैसैं पैंतीसवा आलाप कैसा है ?

ऐसा पूछैं इंद्रिय, कपाय, विकथानि कैं तीनों पंक्ति संबंधी जिन-जिन कोठानि के अंक वा शून्य मिलाएं, सो पैंतीस की संख्या होइ, तिन-तिन कोठानि विषैं लिखे हूवे इंद्रियादि प्रमाद अर स्नेह-निद्रा विषैं आगै उच्चारण कीए स्नेहवान-निद्रालु-श्रोत्र इंद्रिय के वशीभूत-मायावी-भक्तकथालापि अैसा पूछ्या हूआ पैंतीसवां आलाप जानना ।

**भावार्थ** — यंत्र विषै इंद्रियपक्ति का पांचवां कोठा, कषायपक्ति का तीसरा कोठा, विकथापक्ति का दूसरा कोठा, इन कोठेनि का अक जोड़ै पैतीस होइ, तातै इन कोठेनि विषै जे-जे इंद्रियादि लिखे, ते-ते पैतीसवा आलाप विषै जानने । स्नेह, निद्रा कौ पहिलै कहि लीजिये ।

बहुरि दूसरा उदाहरण नष्ट का ही कहिए है । इकसठिवा आलाप कैसा है ?

असै पूछै, इहा भी इंद्रिय कषाय विकथानि के जिन-जिन कोठानि के अक वा शून्य जोडे, सो इकसठि सख्या होइ, तिन-तिन कोठानि विषै प्राप्त प्रमाद पूर्ववत् कहे । स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-क्रोधी-अवनिपालकथालापी असै पूछ्या हूवा इकसठिवा आलाप हो है ।

**भावार्थ** — इंद्रियपक्ति का प्रथम कोठा का एका अर कषायपक्ति का प्रथम कोठा की बिदी, विकथा का चौथा कोठा का साठि जोडे, इकसठि होइ । सो इनि कोठानि विषै जे-जे इंद्रियादि लिखे है, ते इकसठिवा आलाप विषै जानने । असै ही अन्य आलाप का प्रश्न भए भी विधान करना ।

बहुरि उद्दिष्ट का उदाहरण कहिए है — स्नेहवान्-निद्रालु-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-मानी-राष्ट्रकथालापी असै आलाप केथवा है ?

असै प्रश्न होतै स्नेह, निद्रा बिना जे-जे इंद्रियादिक इस आलाप विषै कहे, ते तीनो पक्तिनि विषै जिस-जिस कोठे विषै ये लिखे होइ, सो ये इंद्रियपक्ति का प्रथम कोठा, कषायपक्ति का दूसरा कोठा, विकथापक्ति का तीसरा कोठानि विषै ये आलाप लिखे है । सो इन कोठानि के एक, पांच, चालीस ये अंक मिलाइ, छियालीस होइ है, सो पूछ्या हूआ आलाप छ्यालीसवा है ।

बहुरि दूसरा उदाहरण कहिए है — स्नेहवान्-निद्रालु-चक्षु इंद्रिय के वशीभूत लोभी-भक्तकथालापी असै आलाप केथवा है ?

तहा इस आलाप विषै कहे इंद्रियादिकनि के कोठे, तिनि विषै लिखे हुवे च्यारि, पंद्रह, बीस ये अक जोडे गुणतालीस होइ, सो पूछ्या आलाप गुणतालीसवा है । एसै ही अन्य आलाप पूछै भी विधान करना ।

आगै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा नष्ट, उद्दिष्ट का गूढ यंत्र कहै है —

इगिवितिचखचडवारं, खसोलरागठुदालचउसट्ठिं ।  
संठविय पमपठाणे, एण्ठुद्धिट्ठं च जाण तिट्ठाणे ॥४४॥

एकद्वित्रिचतुःखचतुरष्टद्वादश खपोडशरागाष्टचत्वारिंशच्चतुःषष्टिम् ।  
संस्थाप्य प्रमादस्थाने, नष्टोद्दिष्टे च जानीहि त्रिस्थाने ॥४४॥

टीका - प्रमादस्थानकनि विपे विकथा प्रमाद के च्यारि कोठानि विपे क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि अंकनि कौं स्थापि; तैसे ही कपाय प्रमाद के च्यारि कोठानि विपे क्रम तै विदी, आठ, वारह अंकनि कौं स्थापि; तैसे ही इन्द्रिय प्रमादनि के पंच कोठानि विपे क्रम तै विदी, सोलह, वत्तीस, अड़तालीस, चौंसठि अंकनि कौं स्थापि, पूर्वोक्त प्रकार हेतु तै तिन तीनों स्थानकनि विपे स्थापे जे अंक, तिनि विपे नष्ट अर समुद्दिष्ट कौं तू जानहु ।

भावार्थ - यहां भी पूर्वोक्त प्रकार तीन पंक्ति का यन्त्र करना । तहां ऊपर की पंक्ति विपे च्यारि कोठे करने, तहां क्रम ते स्त्री आदि विकथा लिखनी अर एक, दोय, तीन, च्यारि, ए अंक लिखने । बहुरि ताके नीचै पंक्ति विपे च्यारि कोठे करने, तहां क्रम तै क्रोधादि कपाय लिखने अर विदी, च्यारि, आठ, वारा ए अंक लिखने । बहुरि नीचै पंक्ति विपे पाच कोठे करने, तहां क्रम तै स्पर्शनादि इंद्रिय लिखने, अर विदी, सोलह, वत्तीस, अड़तालीस, चौंसठि ए अंक लिखने ।

स्त्री १	भक्त २	राष्ट्र ३	अवनि ४	
क्रोध ०	मान ४	माया ८	लोभ १२	
स्पर्शन ०	रसना १६	त्राण ३२	चक्षु ४८	श्रोत्र ६४

असं यंत्र करि पूर्व जैसं विधान कहा, तैसे इहां भी नष्ट, समुद्दिष्ट का ज्ञान करना ।

तहां नष्ट का उदाहरण - जैसे पंद्रहवां आलाप कैसा है ?

असा प्रश्न होते विकथा, कपाय, इंद्रियनि के जिस-जिस कोठा के अंक वा शून्य मिलाएं, सो पंद्रह मंड्या होइ, तिस-तिस कोठा कौं प्राप्त विकथादिक जोड़ें, राष्ट्रकथालापी-लोभी-स्पर्शन इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान असा तिस पंद्रहवां आलाप कौं कहै ।



तथा दूसरा उदाहरण — तीसवां आलाप कैसा है ?

अैसा प्रश्न होतै विकथा, कषाय, इंद्रिय के जिस-जिस कोठा के अंक जोड़े सो तीस संख्या होइ, तिस-तिस कोठा कों प्राप्त विकथादि प्रमाद जोड़े, भक्तकथालापी-लोभी-रसना इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान अैसा तिस तीसवां आलाप को कहै ।

अब उद्दिष्ट का उदाहरण कहिए हैं — स्त्रीकथालापी-मानी-घ्राण इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान अैसा आलाप कैथवां है ?

अैसा प्रश्न होतै इस आलाप विषै जो-जो विकथादि प्रमाद कह्या है, तीह-तींह प्रमाद का कोठा विषै जो-जो अंक एक, च्यारि, बत्तीस, लिखे है; तिनकौ जोड़े, सैंतीस होइ, तातैं सो आलाप सैंतीसवां कहिए ।

बहुरि दूसरा उदाहरण अवनिपालकथालापी-लोभी-चक्षु इंद्रिय के वशीभूत-निद्रालु-स्नेहवान अैसा आलाप कैथवां है ?

तहां इस आलाप विषै जे प्रमाद कहे, तिनके कोठानि विषै प्राप्त च्यारि, बारह, अड़तालीस अंक मिलाएं, जो संख्या चौसठि होइ, सोई तिस आलाप कौ चौसठिवां कहै, अैसै ही अन्य आलाप पूछै भी विधान करना ।

अैसै मूल प्रमाद पाच, उत्तर प्रमाद पंद्रह, उत्तरोत्तर प्रमाद असी, इनका यथासंभव संख्यादिक पाच प्रकारनि कौ निरूपण करि ।

अब और प्रमाद की संख्या का विशेष कौ जनावै है, सो कहै है । स्त्री की सो स्त्रीकथा, धनादिरूप अर्थकथा, खाने की सो भोजन कथा, राजानि की सो राज-कथा चोर की सो चोरकथा, वैर करणहारी सो वैरकथा, पराया पाखड़ादिरूप सो परपाखंडकथा, देशादिक की सो देशकथा, कहानी इत्यादि भाषाकथा, गुण रोकनेरूप गुणबंधकथा, देवी की सो देवीकथा, कठोररूप निष्ठुरकथा, दुष्टतारूप परपैशून्यकथा, कामादिरूप कंदर्पकथा, देशकाल विषै विपरीत सो देशकालानुचितकथा, निर्लज्जतादिरूप भडकथा, मूर्खतारूप मूर्खकथा, अपनी बढाईरूप आत्मप्रशंसाकथा, पराई निदा रूप परपरिवादकथा, पराई घृणारूप परजुगुप्साकथा, पर कौ पीड़ा देनेरूप परपीड़ा कथा, लड़नैरूप कलहकथा, परिग्रह कार्यरूप परिग्रहकथा, खेती आदि का आरभरूप कृष्याद्यारंभकथा, संगीत वादित्रादिरूप संगीतवादित्रादि कथा — अैसै विकथा पचीस भेदसंयुक्त है ।

बहुरि सोलह कषाय अर नव नो कषाय भेद करि कषाय पचीस है । बहुरि स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, मन नाम धारक इन्द्रिय छह है । बहुरि स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा, प्रचला भेद करि निद्रा पांच है । बहुरि स्नेह, मोह भेद करि प्रणय दोय है । इनको परस्पर गुण, पांचसै अधिक सैतीस हजार प्रमाण हो है (३७५००) । ए भी मिथ्यादृष्टि आदि प्रमत्तसयत गुणस्थान पर्यंत प्रवर्तै है । जे बीस प्ररूपणा, तिनि विषै यथासंभव वध का हेतुपणाकरि पूर्वोक्त सख्या आदि पांच प्रकार लीए जैनागम तै अविरोद्धपने जोडने ।

अब प्रमादनि के साड़ा सैतीस हजार भेदनि विषै संख्या, दोय प्रकार प्रस्तार, तिन प्रस्तारनि की अपेक्षा अक्षसंचार, नष्ट, समुद्दिष्ट पूर्वोक्त विधान तै यथासंभव करना ।

बहुरि गूढ यंत्र करने का विधान न कह्या, सो गूढ यंत्र कैसे होइ ?

ताते इहां भापा विषै गूढ यंत्र करने का विधान कहिए है । जाकौं जानै, जाका चाहिए, ताका गूढ यंत्र कर लीजिये । तहां पहिले प्रथम प्रस्तार की अपेक्षा कहिए है । जाका गूढ यंत्र करना होइ, तिस विवक्षित के जे मूलभेद जितने होंइ, तितनी पंक्ति का यंत्र करना । तहा तिन मूल भेदनि विषै अंत का मूलभेद होइ, ताकी पंक्ति सवनि के ऊपरि करनी । तहा तिस मूल भेद के जे उत्तर भेद होहि, तितने कोठे करने । तिन कोठानि विषै तिस मूल भेद के जे उत्तर भेद होहि, ते क्रम तै लिखने । बहुरि तिनही प्रथमादि कोठानि विषै एक, दोय इत्यादि क्रम तै एक-एक वधता का अंक लिखना । बहुरि ताके नीचे जो अंत भेद तै पहला उपांत मूल भेद होइ, ताकी पंक्ति करनी । तहां उपांत मूल भेद के जेते उत्तर भेद होइ तिनके कोठे करने । तहां उपान्त मूल भेद के उत्तर भेदनि कौ क्रम तै लिखने । बहुरि तिनही कोठानि विषै प्रथम कोठा विषै विंदी लिखनी । दूसरे कोठा विषै ऊपरि की पंक्ति का अंत का कोठा विषै जेते का अंक होइ, सो लिखना । बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै दूसरा कोठा विषै जेते का अंक लिख्या, तितना-तितना ही वधाई-वधाई क्रम तै लिखने । बहुरि ताके नीचे-नीचे जे उपांत तै पूर्वं मूल भेद होंइ, ताकी आदि देकरि आदि के मूल भेद पर्यंत जे मूल भेद होइ, तिनकी पंक्ति करनी । तहा तिनके जेते-जेते उत्तर भेद होइ, तितने-तितने कोठे करने । बहुरि तिन कोठानि विषै अपना-मूल भेद के जे उत्तर भेद होइ, ते क्रम तै लिखने ।

बहुरि तिन सर्व पंक्तिनि के प्रथम कोठानि विषै तौं बिदी लिखनी, बहुरि द्वितीय कोठा विषै अपनी पंक्ति तै ऊपरि की सर्व पंक्ति के अंत का कोठानि विषै जितने-जितने का अंक लिख्या होइ, तिनकौं जोड़े जो प्रमाण होइ, तितने का अंक लिखना । बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै जेते का अंक दूसरा कोठा विषै लिख्या होइ तितना-तितना ही क्रम तै बधाइ-बधाइ लिखना । असै विधान करना ।

अब द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा कहिए है । जो विधान प्रथम प्रस्तार अपेक्षा लिख्या, सोई विधान द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा जानना । विशेष इतना — इहां विवक्षित का जो प्रथम मूल भेद होइ, ताकी पंक्ति ऊपरि करनी । ताकै नीचै दूसरे मूल भेद की पंक्ति करनी । असैं ही नीचै-नीचै अंत के मूल भेद पर्यंत पंक्ति करनी । बहुरि तहां जैसै अंत मूल भेद संबंधी ऊपरि पंक्ति तै लगाइ क्रम वर्णन कीया था, तैसै यहां प्रथम मूल भेद संबंधी पंक्ति तै लगाइ क्रम तै विधान जानना । अन्य या प्रकार साडा सैतीस हजार प्रमाद भंगनि का प्रथम प्रस्तार अपेक्षा गूढ यंत्र कह्या ।

तहां कोऊ नष्ट पूछै कि एथवां आलाप भंग कौन ?

तहा जिस प्रमाण का आलाप पूछ्या, सो प्रमाण सर्व पंक्तिनि के जिस-जिस कोठानि के अंक वा बिदी मिलाएं होइ, तिस-तिस कोठा विषै जे-जे उत्तर भेद लिखे, तिनरूप सो पूछ्या हवा आलाप जानना ।

बहुरि कोई उद्दिष्ट पूछै कि अमुक आलाप केथवा है ?

तौ तहां पूछै हुए आलाप विषै जे-जे उत्तर भेद ग्रहे है, तिन-तिन उत्तर भेदनि के कोठानि विषै जे-जे अंक वा बिदी लिखी है, तिनकौं जोड़े जो प्रमाण होइ, तेथवां सो पूछ्या हवा आलाप जानना । अब इस विधान तै साडा सैतीस हजार प्रमाद भंगनि का प्रथम प्रस्तार अपेक्षा गूढ यंत्र लिखिए है ।

इहा प्रमाद के मूल भेद पांच है, तातै पांच पंक्ति करनी । तहां ऊपरि प्रणय पंक्ति विषै दोय कोठे करि, तहां स्नेह मोह लिखे अर एक दोय का अक लिखे, ताके नीचै निद्रा पंक्ति के पांच कोठे करि तहां स्त्यानगूद्धि आदि लिखे अर प्रथम कोठा विषै बिदी लिखी । द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की पंक्ति के अंत के कोठे में अंक दोय था, सो लिख्या । अर तृतीयादि कोठे विषै तितने-तितने ही बधाइ च्यारि, छह, आठ लिखे । बहुरि ताके नीचै इंद्रिय पंक्ति के छह कोठे करि, तहां स्पर्शनादि लिखे ।

अर प्रथम कोठा विषै विदी, द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की दोय पंक्ति के अंत का कोठा के जोड़ें दश होइ सो, अर तृतीयादि कोठानि विषै सोई दश-दश वधाइ लिखे हैं । अर ताके नीचै कषाय पंक्ति विषै पचीस कोठे करि, तहां अनंतानुबंधी क्रोधादि लिखे । अर प्रथम कोठा विषै विदी, दूसरा कोठा विषै ऊपरि की तीन पंक्ति का अंत के कोठानि का जोड़ साठ लिखि, तृतीयादि कोठानि विषै तितने-तितने वधाइ लिखे । बहुरि ताके नीचै विकथा पंक्ति विषै पचीस कोठा करि तहां स्त्रीकथादि लिखे । अर प्रथम कोठा विषै विदी, द्वितीय कोठा विषै ऊपरि की च्यारि पंक्तिनि के अंत कोठानि का जोड़ पंद्रह सै, तृतीयादि कोठानि विषै तितने-तितने ही वधाइ लिखे है । अंसै प्रथम प्रस्तार अपेक्षा यंत्र भया । ( देखिए पृष्ठ १२५ )

बहुरि साडा सैतीस हजार प्रमाद भंगनि का द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा गूढ यंत्र लिखिए हैं ।

तहां ऊपरि विकथा पंक्ति करी, तहां पचीस कोठे करि, तहां स्त्रीकथादि लिखे । अर एक, दोय आदि एक-एक वधता अंक लिखे, ताके नीचै-नीचै कषाय पंक्ति अर इंद्रिय पंक्ति अर निद्रा पंक्ति अर प्रणय पंक्ति विषै क्रम तै पचीस, पचीस, छह, पांच, दोय कोठे करि तहां अपने-अपने उत्तर भेद लिखे । बहुरि इन सब पंक्तिनि के प्रथम कोठा विषै विदी लिखी । अर दूसरा कोठा विषै अपनी-अपनी पंक्ति तै ऊपरि क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि पंक्ति, तिनके अंत कोठा संबंधी अंकनि का जोड़ें, पचीस, छह सै पचीस, साडा सैतीस सै, अठारह हजार सात सै पचास लिखे । बहुरि तृतीयादि कोठानि विषै जेते दूसरे कोठा विषै लिखे, तितने-तितने वधाइ, क्रम तै अंत कोठा पर्यंत लिखे है । अंसै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा यंत्र जानना । ( सोही यंत्र का कोठा को विवि वा अक्षर अंकादिक कही विवि मूजिव क्रम तै यंत्र रचना विधि लिखि है । )<sup>१</sup> इसप्रकार साडा सैतीस हजार प्रमाद का गूढ यंत्र कीए । ( देखिए पृष्ठ १२६ )

तहां प्रथम प्रस्तार अपेक्षा कोऊ पूछै कि इन भंगनि विषै पैतीस हजारवां भंग कौन है ?

तहां प्रणय पंक्ति का दूसरा कोठा, निद्रा पंक्ति का पांचवां कोठा, इंद्रिय पंक्ति का दूसरा कोठा, कषाय पंक्ति का नवमा कोठा, विकथा पंक्ति का चौबीसवां कोठा,

<sup>१</sup> यह वाक्य छह हस्तलिखित प्रतियों में नहीं मिला ।

०	स्त्री	अनतानुबधी क्रोध ०	स्पर्शन ०	सस्त्यानग्रद्धि ०	१ स्नेह
१५००	अर्थ	अनतानुबधी मान ६०	रसन १०	निद्रानिद्रा २	२ मोह
३०००	भोजन	अनतानुबधी माया १२०	घ्राण २०	प्रचलाप्रचला ४	
४५००	राजा	अनतानुबधी लोभ १८०	चक्षु ३०	निद्रा ६	
६०००	चोर	अप्रत्याख्यान क्रोध २४०	श्रोत्र ४०	प्रचला ८	
७५००	वैर	अप्रत्याख्यान मान ३००	मन ५०		
९०००	परपाखंड	अप्रत्याख्यान माया ३६०			
१०५००	देश	अप्रत्याख्यान लोभ ४२०			
१२०००	भाषा	प्रत्याख्यान क्रोध ४८०			
१३५००	गुणवध	प्रत्याख्यान मान ५४०			
१५०००	देवी	प्रत्याख्यान माया ६००			
१६५००	निष्ठुर	प्रत्याख्यान लोभ ६६०			
१८०००	परपैशून्य	सज्वलन क्रोध ७२०			
१९५००	कदपं	सज्वलन मान ७८०			
२१०००	देशकाला- नुचित	सज्वलन माया ८४०			
२२५००	भंड	सज्वलन लोभ ९००			
२४०००	मूर्ख	हास्य ९६०			
२५५००	आत्मप्रशसा	रति १०२०			
२७०००	परपरिवाद	अरति १०८०			
२८५००	परजुगुप्सा	शोक ११४०			
३००००	परपीडा	भय १२००			
३१५००	कलह	जुगुप्सा १२६०			
३३०००	परिग्रह	पुरुष १३२०			
३४५००	कृष्याधारभ	स्त्री १३८०			
३६०००	सगीतवाद्य	नपुमक १४४०			

सर्व विधान पूर्वोक्त जानना, अैसे गूढ यंत्र करना । तहां प्रमाद के साडे सैतीस हजार भेद, तिनिका यंत्र लिखिए ।

१	स्त्री	अनतानुवधी क्रोध ०	स्पर्शन ०	मग्न्यानगृद्धि ०	० मनेह
२	अर्थ	अनतानुवधी मान २५	रसन ६२५	निद्रानिद्रा ३७७०	१८७५० मोह
३	भोजन	अनतानुवधी माया ५०	घ्राण १२५०	प्रचनप्रचला ७५००	
४	राजा	अनतानुवधी लोभ ७५	चक्षु १८७५	निद्रा ११२५०	
५	चोर	अप्रत्याख्यान क्रोध १००	श्रोत्र २५००	प्रचला १५०००	
६	वैर	अप्रत्याख्यान मान १२५	मन ३१२५		
७	परपाखड	अप्रत्याख्यान माया १५०			
८	देश	अप्रत्याख्यान लोभ १७५			
९	भाषा	प्रत्याख्यान क्रोध २००			
१०	गुणवध	प्रत्याख्यान मान २२५			
११	देवी	प्रत्याख्यान माया २५०			
१२	निष्ठुर	प्रत्याख्यान लोभ २७५			
१३	परपेशून्य	सज्जलन क्रोध ३००			
१४	कदपं	सज्जलन मान ३२५			
१५	देशकाला- नुचित	सज्जलन माया ३५०			
१६	मह	सज्जलन लोभ ३७५			
१७	मूर्ख	हास्य ४००			
१८	आत्मप्रशभा	रति ४०५			
१९	परपरिवाद	अरति ४५०			
२०	परजुगुप्सा	शोक ४७५			
२१	परपीडा	भय ५००			
२२	कलह	जुगुप्सा ५२५			
२३	परिग्रह	पुरुष ५५०			
२४	कृप्याधारम	स्त्री ५७५			
२५	सगीतवाद्य	नपुंसक ६००			

इनि कोठानि के अंक जोड़े पैतीस हजार होइ । तातै इनि कोठानि विषै तिष्ठते उत्तर भेदरूप मोही-प्रचलायुक्त-रसना इन्द्रिय के वशीभूत-प्रत्याख्यान क्रोधी-कृष्याद्यारंभकथालापी असा आलाप पैतीस हजारवा जानना । याकौ दृढ करखों कौ 'सगमाणेहि विभत्ते' इत्यादि पूर्वोक्त सूत्र करि भी याकौ साधिए है । पूछनहारेने पैतीस हजारवां आलाप पूछ्या, तहा प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पहलै प्रणय का प्रमाण दोय, ताकौ भाग दीए, साढे सतरा हजार पाए, अवशेष किछू रह्या नाही । तातै इहां अंत भेद स्नेह ग्रहण करना । बहुरि लब्धराशि विषै किछू अवशेष न रह्या, तातै एक न जोडना । बहुरि तिस लब्धराशि कौ याके नीचै निद्राभेद पांच, ताका भाग दीए, पैतीस सै पाए, इहा भी किछू अवशेष न रह्या, तातै अंत भेद प्रचला का ग्रहण करना । इहां भी लब्धराशि विषै एक न जोडि, तिस लब्धराशि कौ छह इंद्रिय का भाग दीएं पाच सै तियासी पाए, अवशेष दोय रहै, सो इहा दूसरा अक्ष रसना इंद्रिय का ग्रहण करना । बहुरि लब्धराशि विषै इहा एक जोडिए, तब पांच सै चौरासी होइ, तिनकौ कषाय पचीस का भाग दीए, तेवीस पाए, अवशेष नव रहै सो इहा नवमां कषाय प्रत्याख्यान क्रोध का ग्रहण करना । बहुरि लब्धराशि तेवीस विषै एक जोडिए, तब चौवीस होइ, ताकौ कषाय भेद पचीस का भाग दीए, शून्य पावै, अवशेष चौवीस रहै, सो इहा चौवीसवा विकथा भेद कृष्याद्यारंभ का ग्रहण करना । असे पूछ्या हुवा पैतीस हजारवा आलाप मोही-प्रचलायुक्त-रसना इन्द्रिय के वशीभूत-प्रत्याख्यान क्रोधी-कृष्याद्यारंभकथालापी असा भगरूप हो है । असे ही अन्य नष्ट का साधन करना । असे नष्ट का उदाहरण कह्या ।

अब उद्दिष्ट का कहिए है — कोऊ पूछै कि स्नेही-निद्रायुक्त-मन के वशीभूत अनंतानुबन्धी क्रोधयुक्त-मूर्खकथालापी असा आलाप केथवा है ?

तहा उत्तर भेद जिस-जिस कोठानि विषै लिखे है, तिस-तिस कोठानि के अक एक, छह, पचास, बिदी, चौवीस हजार मिलाए, चौवीस हजार सत्तावनवा भेद है, असा कहिए । बहुरि याही कू 'संठाविद्वारुखं' इत्यादि सूत्रोक्त उद्दिष्ट ल्यावने का विधान साधिए है । प्रथम एकरूप स्थापि, ताकौ प्रथम प्रस्तार अपेक्षा पहिलै पचीस विकथानि करि गुणिए । अर इहा आलाप विषै मूर्खकथा का ग्रहण है, तातै याके परै आठ अनकित स्थान है । तिनकौ घटाएं, तब सतरह होइ । बहुरि इनिकौ पचीस कषायनि करि गुणिए अर यहा प्रथम कषाय का ग्रहण है, तातै याके परै

चौवीस अनंकित स्थान घटाइए, तब च्यारि सैं एक होंड । वहुरि इनिकी छह इंद्रिय करि गुणिए अर इहां अतभेद का ग्रहण है, तातैं अनंकित न घटाइए, तब चौवीस सैं छह होंड । वहुरि इनिकी पांच निद्रा करि गुणिए अर इहां चौथी निद्रा का ग्रहण है, तातैं याके परै एक अनंकित स्थान है, ताकी घटाइए, तब बारह हजार गुणतीस होंड । याकी दोय प्रणय करि गुणिए अर इहां प्रथम भेद का ग्रहण है; तातैं याके परै एक अनंकित स्थान घटाइए, तब चौवीस हजार सत्तावन होंड, असे स्नेहवान-निद्रालु-मन के वशीभूत-अनंतानुबंधीक्रोधयुक्त-मूर्खकथालापी असा पूछ्या हुवा आलाप चौवीस हजार सत्तावनवां जानना । याही प्रकार अन्य उद्दिष्ट साधने । वहुरि जैसे प्रथम प्रस्तार अपेक्षा विधान कह्या; तैसे ही द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा यथा-संभव नष्ट, उद्दिष्ट ल्यावने का विधान जानना । असे साडा सैतीस हजार प्रमाद भंगनि के प्रकार जानने ।

वहुरि याही प्रकार अठारह हजार शील भेद, चौरासी लाख उत्तर गुण, मतिज्ञान के भेद वा पाखंडनि के भेद वा जीवाधिकरण के भेद इत्यादिकनि विषैं जहां अक्षसंचार करि भेदनि की पलटनी होइ, तहां संख्यादिक पांच प्रकार जानने । विशेष इतना पूर्वे प्रमादनि की अपेक्षा वर्णन कीया है । इहां जाका विवक्षित वर्णन होइ, ताको अपेक्षा सर्वविधान करना । तहां जैसे प्रमादनि के विकथादि मूलभेद कहे हैं, तैसे विवक्षित के जेते मूलभेद होइ, ते कहने । वहुरि जैसे प्रमाद के मूल भेदनि के स्त्रीकथादिक उत्तरभेद कहे हैं, तैसे विवक्षित के मूलभेदनि के जे उत्तर भेद हो हैं, ते कहने । वहुरि जैसे प्रमादनि के आदि-अंतादिरूप मूलभेद ग्रहि विधान कह्या है, तैसे विवक्षित के जे आदि-अंतादि मूलभेद होंइ, तिनको ग्रहि विधान करना । वहुरि जैसे प्रमाद के मूलभेद-उत्तरभेद का जेता प्रमाण था, तितना ग्रहण कीया । तैसे विवक्षित के मूल भेद वा उत्तर भेदनि का जेता-जेता प्रमाण होइ, तितना ग्रहण करना । इत्यादि संभवते विशेष जानि, संख्या अर दोय प्रकार प्रस्तार अर तिन प्रस्तारनि की अपेक्षा अक्षसंचार अर नष्ट अर समुद्दिष्ट ए पांच प्रकार हैं, ते यथा-संभव साधन करने ।

तहां उदाहरण — तत्त्वार्थसूत्र का पष्ठम अध्याय विषैं जीवाधिकरण के वर्णन स्वरूप असा सूत्र है —

“आद्यं संरंभसमारंभारंभयोगकृतकारितानुमतकषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः” ।





तहां प्रथम एक स्थापि प्रथम प्रस्तार अपेक्षा उपरि तै सरंभादि तीन करि गुणी, इहा अतस्थान का ग्रहण है, तातै अनकित कौ न घटाए, तीन ही भए । बहुरि इनकौ तीन योग करि गुणि, इहां वचन, काय ए दोय अनकित घटाए सात भए । बहुरि इनकौ कृतादि तीन करि गुणि, अनुमोदन अनकित स्थान घटाए, वीस हो है । बहुरि इनकौ च्यारि कषाय करि गुणिए, एक लोभ अनकित स्थान घटाए गुन्यासी हो है । अैसा पूछ्या हुवा आलाप गुन्यासीवा है; अैसै ही अन्य उद्दिष्ट साधने । बहुरि इस ही प्रकार तै द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा भी नष्ट-उद्दिष्ट समुद्दिष्ट साधने । बहुरि पूर्वे जो विधान कह्या है, तातै याके गूढयंत्र अैसै करने ।

प्रथम प्रस्तार अपेक्षा जीवाधिकरण का गूढयंत्र ।

क्रोध १	मान २	माया ३	लोभ ४
कृत ०	कारित ४	अनुमोदित ८	
मन ०	वचन १२	काय २४	
सरभ ०	समारभ ३६	आरभ ७२	

द्वितीय प्रस्तार अपेक्षा जीवाधिकरण का गूढयंत्र ।

सरभ १	समारंभ २	आरभ ३	
मन ०	वचन ३	काय ६	
कृत ०	कारित ६	अनुमोदित १८	
क्रोध ०	मान २७	माया ५४	लोभ ८१

तहा नष्ट पूछै तौ जैसै च्यारो पक्तिनि के जिस-जिस कोठा के अक मिलाए पूछ्या हुवा प्रमाण मिलै, तिस-तिस कोठा विषै स्थित भेदरूप आलाप कहना । जैसै साठिवां आलाप पूछै तौ च्यारि, आठ, बारह, छत्तीस अक जोडे साठि अक होइ ।

तात्तै इन अंक संयुक्त कोठानि के भेद ग्रहै, लोभ अनुमोदित वचन समारंभ अैसा आलाप कहिए ।

बहुरि उद्दिष्ट पूछै तौ, तिस आलाप विषै कहे भेद संयुक्त कोठेनि के अंक मिलाए, जो प्रमाण होइ, तेथवां आलाप कहना । जैसें पूछ्या कि मान कृत काय आरंभ केथवा आलाप है ? तहां इस आलाप विषै कहे भेद संयुक्त कोठेनि के दोय, विदी, चौबीस, बहत्तरि ए अंक जोडि, अठचाणवैवां आलाप है; अैसा कहना । याही प्रकार प्रथम प्रस्तार अपेक्षा अन्य नष्ट-समुद्दिष्ट वा दूसरा प्रस्तार अपेक्षा ते नष्ट-समुद्दिष्ट साधन करने । अैसें ही शील भेदादि विषै यथासभव साधन करना । या प्रकार प्रमत्तगुणस्थान विषै प्रमाद भग कहने का प्रसंग पाइ सख्यादि पांच प्रकारनि का वर्णन करि प्रमत्तगुणस्थान का वर्णन समाप्त किया ।

आगै अप्रमत्त गुणस्थान के स्वरूप कौ प्ररूपै है -

संजलणणोकसायाणुदयो मंदो जदा तदा होदि ।

अपमत्तगुणो तेण य, अपमत्तो संजदो होदि ॥४५॥

संज्वलननोकषायाणामुदयो मंदो यदा तदा भवति ।

अप्रमत्तगुणस्तेन च, अप्रमत्तः संयतो भवति ॥४५॥

टीका - यदा कहिए जिस काल विषै संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ च्यारि कषाय अर हास्यादि नव नोकषाय इनका यथासंभव उदय कहिए फल देनेरूप परिणामन, सो मंद होइ, प्रमाद उपजावने की शक्ति करि रहित होइ, तदा कहिए तीहि काल विषै अतर्मुहूर्त पर्यंत जीव कै अप्रमत्तगुण कहिए अप्रमत्तगुणस्थान हो है, तीहि कारणकरि तिस अप्रमत्त गुणस्थान संयुक्त संयत कहिए सकलसंयमी, सो अप्रमत्तनयत है । चकार करि आगै कहिए हैं जे गुण, तिनकरि संयुक्त है ।

आगै अप्रमत्त संयत के दोय भेद है; स्वस्थान अप्रमत्त, सातिगय अप्रमत्त । नहा जो श्रेणी चढ़ने कौ सन्मुख नाही भया, सो स्वस्थान अप्रमत्त कहिए । बहुरि जो श्रेणी चढ़ने कौ नन्मुख भया, सो सातिगय अप्रमत्त कहिए ।

तहां स्वस्थान अप्रमत्त संयत के स्वरूप कौ निरूपै हैं -

णट्ठासेसपमादो, वयगुणसीलोलिमंडिओ णाणी ।

अणुवसमओ अखवओ, भाणणिलीणो हु अपमत्तो ॥ ४६ ॥<sup>१</sup>

नष्टाशेषप्रमादो, व्रतगुणशीलावलिमंडितो ज्ञानी ।

अनुपशमकः अक्षपको, ध्याननिलीनो हि अप्रमत्तः ॥ ४६ ॥

टीका — जो जीव नष्ट भए है समस्त प्रमाद जाके असा होइ, बहुरि व्रत, गुण, शील इनकी आवली - पंक्ति, तिनकरि मंडित होइ — आभूषित होइ, बहुरि सम्यग्ज्ञान उपयोग करि संयुक्त होइ, बहुरि धर्मध्यान विषै लीन है मन जाका असा होइ, असा अप्रमत्त संयमी यावत् उपशम श्रेणी वा क्षपक श्रेणी के सन्मुख चढने कौ न प्रवर्तै, तावत् सो जीव प्रकट स्वस्थान अप्रमत्त है; असा कहिए । इहा ज्ञानी ऐसा विशेषण कह्या है, सो जैसै सम्यग्दर्शन-सम्यक्चारित्र मोक्ष के कारण है, तैसै सम्यक्ज्ञान के भी मोक्ष का कारणपना कौ सूचै है ।

भावार्थ — कोऊ जानेगा कि चतुर्थ गुणस्थान विषै सम्यक्त्व का वर्णन किया, पीछे चारित्र का किया, सो ए दोय ही मोक्षमार्ग है; तातै ज्ञानी असा विशेषण कहि सम्यग्ज्ञान भी इनि की साथि ही मोक्ष का कारण है असा अभिप्राय दिखाया है ।

आगै सातिशय अप्रमत्तसयत के स्वरूप कौ कहै है —

इगवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं ।

पढमं अधापवत्तं, करणं तु करेदि अपमत्तो ॥ ४७ ॥

एकविंशतिमोहक्षपणोपशमननिमित्तानि त्रिकरणानि तेषु ।

प्रथममधःप्रवृत्तं, करणं तु करोति अप्रमत्तः ॥ ४७ ॥

टीका — इहां विशेष कथन है; सो कैसे है ? सो कहिए है — जो जीव समय-समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता करि वर्धमान होइ, मंदकपाय होने का नाम विशुद्धता है, सो प्रथम समय की विशुद्धता तै दूसरे समय की विशुद्धता अनंतगुणी, तातै तीसरे समय की अनन्त गुणी, असा समय-समय विशुद्धता जाके बढती होइ, असा जो

वेदक सम्यग्दृष्टि अप्रमत्तसंयत गुणस्थानवर्ती जीव, सो प्रथम ही अनंतानुबन्धी के चतुष्क कौं अधःकरणादि तीन करणरूप पहिलै करि विसंयोजन करै है ।

विसंयोजन कहा करै है ?

अन्य प्रकृतिरूप परिणमावनेरूप जो सक्रमण, ताका विधान करि इस अनतानुबन्धी के चतुष्क के जे कर्म परमाणु, तिनकौ बारह कषाय अर नव नोकषायरूप परिणमावै है ।

बहुरि ताके अनंतरि अंतर्मुहूर्त्तकाल ताई विश्राम करि जैसा का तैसा रहि, बहुरि तीन करण पहिले करि, दर्शनमोह की तीन प्रकृति, तिन कौ उपशमाय, द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि हो है ।

अथवा तीनकरण पहिलै करि, तीन दर्शनमोह की प्रकृतिनि कौ खिपाइ, क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो है ।

बहुरि ताके अनंतर अंतर्मुहूर्त्त काल ताई अप्रमत्त तै प्रमत्त विषै प्रमत्त तै अप्रमत्त विषै हजारोंबार गमनागमन करि पलटनि करै है । बहुरि ताके अनंतर समय-समय प्रति अनतगुणी विशुद्धता की वृद्धि करि वर्धमान होत सता इकईस चारित्र मोह की प्रकृतिनि के उपशमावने कौ उद्यमवत हो है । अथवा इकईस चारित्र मोह की प्रकृति क्षपावने कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही उद्यमवत हो है ।

भावार्थ — उपशम श्रेणी कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि वा द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि दोऊ चढे अर क्षपक श्रेणी कौ क्षायिक सम्यग्दृष्टि ही चढने कौ समर्थ है । उपशम सम्यग्दृष्टि क्षपक श्रेणी की नाही चढै है । सो यहु अैसा सातिशय अप्रमत्तसंयत, सो अनतानुबन्धी चतुष्क विना इकईस प्रकृतिरूप, तिस चारित्रमोह कौ उपशमावने वा क्षय करने कौ कारणभूत अैसै जे तीन करण के परिणाम, तिन विषै प्रथम अधः-प्रवृत्तकरण की करै है; अैसा अर्थ जानना ।

आगे अधःप्रवृत्तकरण का निरुक्ति करि सिद्ध भया अैसा लक्षण कौ कहै है —

जह्या उवरिमभावा, हेट्ठिमभावोहं सरिसगा होति ।

तह्या पढमं करणं, अधापवत्तो त्ति णिहिट्ठं ॥४८॥

यस्मादुपरितनभावा, अधस्तनभावैः सदृशका भवन्ति ।

तस्मात्प्रथमं करणं, अधःप्रवृत्तिमिति निर्दिष्टम् ॥४८॥

टोका - जा कारण तै जिस जीव का ऊपरि-ऊपरि के समय सबधी परिणामनि करि सहित, अन्य जीव के नीचे-नीचे के समय सबधी परिणाम सदृश - समान हो है, ता कारण तै सो प्रथम करण अधःकरण है - असा एहिदृष्टं कहिए परमागम विषे प्रतिपादन कीया है ।

भावार्थ - तीनों करणनि के नाम नाना जीवनि के परिणामनि की अपेक्षा है । तहां जैसी विशुद्धता वा सख्या लीए किसी जीव के परिणाम ऊपरि के समय सबधी होइ, तैसी विशुद्धता वा सख्या लीए किसी अन्य जीव के परिणाम अधस्तन समय सबधी भी जिस करण विषे होइ, सो अधःप्रवृत्त करण है । अधःप्रवृत्त कहिए नीचले समय संबधी परिणामनि की समानता कौ प्रवर्तै अैसे हैं करण कहिए परिणाम जा विषे, सो अधःप्रवृत्तकरण है । इहां करण प्रारभ भए पीछे घने-घने समय व्यतीत भए जे परिणाम होहि, ते ऊपरि ऊपरि समय संबधी जानने । बहुरि थोरे-थोरे समय व्यतीत भए जे परिणाम होहि, ते अधस्तन-अधस्तन समय सबधी जानने । सो नाना जीवनि के इनकी समानता भी होइ ।

ताका उदाहरण - जैसे दोय जीव के एकै कालि अधःप्रवृत्तकरण का प्रारभ करे, तहा एक जीव के द्वितीयादि घने समय व्यतीत भये, जैसे सख्या वा विशुद्धता लीये परिणाम भये, तैसे सख्या वा विशुद्धता लीये द्वितीय जीव के प्रथम समय विषे भी होइ । याही प्रकार अन्य भी ऊपरि नीचे के समय सबधी परिणामनि की समानता इस करण विषे जानि याका नाम अधःप्रवृत्तकरण निरूपण कीया है ।

आगे अधःप्रवृत्तकरण के काल का प्रमाण कौ चय का निर्देश के अर्थ कहै है -

अंतोमुहुत्तमेत्तो, तक्कालो होदि तत्थ परिणामा ।

लोगाणमसंखमिदा, उवरुवरि सरिसवड्ढिगया ॥४९॥

अंतमुहूर्तमात्रस्तत्कालो भवति तत्र परिणामाः ।

लोकानामसंख्यमिता, उपर्युपरि सदृशवृद्धिगताः ॥४९॥

टीका - तीनों करणनि विषे स्तोक अंतर्मुहूर्त प्रमाण अनिवृत्तिकरण का काल है । यातें संख्यातगुणा अपूर्वकरण का काल है । यातें संख्यातगुणा इस अधः-प्रवृत्तकरण का काल है, सो भी अंतर्मुहूर्त मात्र ही है । जातें अतर्मुहूर्त के भेद बहुत हैं । वहरि तोह अधःप्रवृत्तकरण के काल विषे अतीत, अनागत, वर्तमान त्रिकालवर्ती नाना जीव संबंधी विणुद्धतारूप इस करण के सर्व परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण है । लोक के प्रदेशनि का प्रमाण तै असंख्यात गुणे है । वहरि तिनि परिणामनि विषे तिस अधःप्रवृत्तकरण का काल प्रथम समय संबंधी जेते परिणाम है, तिन तै लगाय द्वितीयादि समयनि विषे ऊपरि-ऊपरि अंत समय पर्यन्त समान वृद्धि करि वर्धमान हैं । प्रथम समय संबंधी परिणाम तै द्वितीय समय संबंधी परिणाम जितने वधती हैं, तितने ही द्वितीय समय संबंधी परिणामनि तै तृतीय समय संबंधी परिणाम वधती हैं । इस क्रम तै ऊपरि-ऊपरि अंत समय पर्यंत सदृश वृद्धि कौ प्राप्त जानने । सो जहां समान वृद्धिहानि का अनुक्रम स्थानकनि विषे होइ, तहां श्रेणी व्यवहाररूप गणित सभव है; तातें इहां श्रेणी व्यवहार करि वर्णन करि है ।

तहां प्रथम मजा कहिए है, विवक्षित सर्व स्थानक संबंधी सर्व द्रव्य जोड़ें जो प्रमाण होइ, सो सर्वधन कहिए वा पदधन कहिए । वहरि स्थानकनि का जो प्रमाण, ताका पद कहिए वा गच्छ कहिए । वहरि स्थान-स्थान प्रति जितना-जितना वधै, ताका चय कहिए वा उत्तर कहिए वा विशेष कहिए । वहरि आदि स्थान विषे जो प्रमाण, ताका मुख कहिए वा आदि कहिए वा प्रथम कहिए । वहरि अतस्थान विषे जो प्रमाण, ताका अतधन कहिए वा भूमि कहिए । वहरि सर्व स्थानकनि तै धीनि जो स्थान, ताका द्रव्य के प्रमाण कौ मध्यधन कहिए । जहां स्थानकनि का प्रमाण नम होइ तहां बीच के दोय स्थानकनि का द्रव्य जोड़ि आधा कीए जो प्रमाण होइ, ताका मध्यधन कहिए । वहरि जेना मुख का प्रमाण होइ, तितना-तितना सर्व मगनर्गन वा गहण करि जोड़ें जो प्रमाण होइ, सो आदिवन कहिए । वहरि सर्व मगनर्गन विषे जे-जे चय दधे, तिन सर्व चयनि कौ जोड़ें जो प्रमाण होइ, ताका प्रमाण प्रमाण वा मध्यधन कहिए । वहरि असं आदिवन, उत्तरधन मिलै सर्वधन होइ । प्रमाण प्रमाण जानने के अर्थ करण सूत्र कहिए है ।

“मुहभूमिजोगदले पदगुणिदे पदधनं होदि” इस सूत्र करि मुख आदिस्थान अर भूमि अंतस्थान, इनकौ जोडि, ताका आधा करि, ताकौ गच्छकरि गुणै, पदधन कहिए सर्वधन हो है ।

बहुरि ‘आदि अंते सुद्धे वट्टहदे रूवसंजुदे ठाणे ।’ इस सूत्र करि आदि कौ अंतधन विषै घटाए, जेते अवशेष रहै, तिनकौ वृद्धि जो चय, ताका भाग दीयें, जो होइ, तामै एक मिलाए स्थानकनि का प्रमाणरूप पद वा गच्छ का प्रमाण आवै है । बहुरि ‘पदकदिसंखेण भाजियं पचयं’ पद जो गच्छ, ताकी जो कृति कहिए वर्ग, ताका भाग सर्वधन कौ दीएं जो प्रमाण आवै, ताकू संख्यात का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो चय जानना । सो इहां अध करण विषै पहिले मुखादिक का ज्ञान न होइ तातै असै कथन कीया है । बहुरि सर्वत्र सर्वधन कौ गच्छ का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तामै मुख का प्रमाण घटाइ, अवशेष रहै, तिनकौ एक गच्छ का आधा प्रमाण का भाग दीए चय का प्रमाण हो है ।

अथवा ‘आदिधनोणं गणितं पदोनपदकृतिदलेन संभजित प्रचयः’ इस वचन तै सर्वस्थानक संबंधी आदिधन कौ सर्वधन विषै घटाइ, अवशेष कौ गच्छ के प्रमाण का वर्ग विषै गच्छ का प्रमाण घटाइ अवशेष रहै, ताका आधा जेता होय, ताका भाग दीये चय का प्रमाण आवै है । बहुरि उत्तरधन कौ सर्वधन विषै घटाएं, अवशेष रहै, ताकौ गच्छ का भाग दीएं मुख का प्रमाण आवै है ।

बहुरि “व्येकं पदं चयाभ्यस्तं तदादिसहितं धनं” इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ कौ चय करि गुणै, जो प्रमाण होइ, ताकौ मुख का प्रमाण सहित जोडे, अंतधन हो है । बहुरि मुख अर अंतधन कौ मिलाइ ताका आधा कीए मध्यधन हो है ।

बहुरि ‘पदहतमुखमादिधन’ इस सूत्र करि पद करि गुण्या हुवा मुख का प्रमाण, सो आदिधन हो है ।

बहुरि “व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं” इस सूत्र करि एक घाटि जो गच्छ, ताका आधा प्रमाण कौ चय करि गुणै, जो प्रमाण होइ, ताकौ गच्छ करि गुणै, उत्तरधन हो है । सो आदिधन, उत्तरधन मिलाए भी सर्वधन का प्रमाण हो



है । अथवा मध्यघन कौं गच्छ करि गुणौ भी सर्वघन का प्रमाण आवै है । अैसे श्रेणी व्यवहाररूप गणित का किचित् स्वरूप प्रसंग पाइ कह्या ।

अब अधिकारभूत अधःकरण विषै सर्वघन आदि का वर्णन करिए है । तहां प्रथम अंकसंदृष्टि करि कल्पनारूप प्रमाण लीएं दृष्टांतमात्र कथन करिए है । सर्व अधःकरण का परिणामनि की संख्यारूप सर्वघन तीन हजार वहत्तरि (३०७२) । वहुरि अव.करण के काल का समयनि का प्रमाणरूप गच्छ सोलह (१६) । वहुरि समय-समय परिणामनि की वृद्धि का प्रमाणरूप चय च्यारि (४) । वहुरि इहां संख्यात का प्रमाण तीन (३) । अब उर्ध्व रचना विषै घन ल्याइए है । सो युगपत् अनेक समय की प्रवृत्ति न होइ, तातै समय संबंधी रचना ऊपरि-ऊपरि ऊर्ध्वरूप करिए है । तहां आदि घनादिक का प्रमाण ल्याइये है ।

‘पदकदिसंक्षेप भाजियं पचयं’ इस सूत्र करि सर्वघन तीन हजार वहत्तरी, ताकौ पद सोलह की कृति दोय सै छप्पन, ताका भाग दीएं बारह होइ । अर ताकौ संख्यात का प्रमाण तीन, ताका भाग दीए च्यारि होइ । अथवा दोय सौ छप्पन कौ तिगुणा करि, ताका भाग सर्व घन कौं दीये भी च्यारि होइ सो समय-समय प्रति परिणामनि का चय का प्रमाण है । अथवा याकौ अन्य विधान करि कहिए है । सर्वघन तीन हजार वहत्तरि, ताकौ गच्छ का भाग दीएं एक सौ बाणवै, तामें आगे कहिए है मुख का प्रमाण एक सौ बासठि, सो घटाइ तीस रहे । इनकौ एक घाटि गच्छ का आधा साढा सात, ताका भाग दीये च्यारि पाए, सो चय जानना ।

अथवा ‘आदिघनोनं गणितं पदोनपदकृतिदलेन संभजितं’ इस सूत्र करि आगे कहिए हैं — आदिघन पचीस सै बाणवै, तीहकरि रहित सर्वघन च्यारि सै असी, ताका पद कौ कृति दोय सै छप्पन विषै पद सोलह घटाइ, अवशेष का आधा कीये, एक नौ बीन होइ, ताका भाग दीये च्यारि पाये, सो चय का प्रमाण जानना ।

वहुरि ‘व्येकपदार्धघनचयगुणो गच्छ उत्तरघनं’ इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ पंद्रह, ताका आधा साढा सात ( $\frac{१५}{२}$ ) ताकी चय च्यारि, ताकरि गुण तीस, ताका गच्छ सोलह करि गुण, च्यारि सौ असी चयघन का प्रमाण हो है । वहुरि इस प्रचयघन करि सर्वघन तीन हजार वहत्तरि सो हीन कीये, अवशेष दोय हजार पांच

सै बाणवै रहे । इनकौ पद सोलह, ताका भाग दीये एक सौ बासठि पाये, सोई प्रथम समय संबंधी परिणामनि की संख्या हो है । बहुरि यामै एक-एक चय बधाये संते द्वितीय, तृतीयादि समय संबंधी परिणामनि की संख्या हो है । तहां द्वितीय समय संबंधी एक सौ छ्यासठ, तृतीय समय सबधी एक सौ सत्तरि इत्यादि क्रम तै एक-एक चय बधती परिणामनि की संख्या हो है । १६२, १६६, १७०, १७४, १७८, १८२, १८६, १९०, १९४, १९८, २०२, २०६, २१०, २१४, २१८, २२२ ।

इहा अत समय संबंधी परिणामनि की संख्यारूप अतधन ल्याइये है ।

‘व्येकं पदं चयाभ्यस्तं तदादिसहितं धनं’ इस सूत्र तै एक घाटि गच्छ पंद्रह, ताकौ चय च्यारि करि गुणौ साठि, बहुरि याकौ आदि एक सौ बासठि करि युक्त कीएं दोय सै बाईस होइ; सोई अंत समय सबधी परिणामनि का प्रमाण जानना । बहुरि यामै एक चय च्यारि घटाए दोय सै अठारह द्विचरम समय सबधी परिणामनि का प्रमाण जानना । अैसे कहै जो धन कहिए समय-समय संबंधी परिणामनि का प्रमाण, तिनकौ अधःप्रवृत्तकरण का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यन्त ऊपरि-ऊपरि स्थापन करने ।

आगै अनुकृष्टिरचना कहिए है - तहा नीचै के समय संबंधी परिणामनि के जे खंड, तिनके ऊपरि के समय संबंधी परिणामनि के जे खंडनि करि जो सादृश्य कहिए समानता, सो अनुकृष्टि अैसा नाम धरै है ।

भावार्थ - ऊपरि के अर नीचे के समय संबंधी परिणामनि के जे खंड, ते परस्पर समान जैसै होइ, तैसै एक समय के परिणामनि विषै खंड करना, तिसका नाम अनुकृष्टि जानना । तहा ऊर्ध्वगच्छ के संख्यातवां भाग अनुकृष्टि का गच्छ है, सो अंकसदृष्टि अपेक्षा ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण सोलह, ताकौ संख्यात का प्रमाण च्यारि का भाग दीए जो च्यारि पाए; सोई अनुकृष्टि विषै गच्छ का प्रमाण है । अनुकृष्टि विषै खंडनि का प्रमाण इतना जानना । बहुरि ऊर्ध्व रचना का चय कौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए, अनुकृष्टि विषै चय होइ, सो ऊर्ध्व चय च्यारि कौ अनुकृष्टि गच्छ च्यारि का भाग दीएं एक पाया; सोई अनुकृष्टि चय जानना । खंड-खंड प्रति बधती का प्रमाण इतना है । बहुरि प्रथम समय संबंधी समस्त परिणामनि का प्रमाण एक सौ बासठि, सो इहां प्रथम समय संबंधी अनुकृष्टि रचना विषै सर्वधन जानना । बहुरि ‘व्येकपदार्धधनचयगुणो गच्छ उत्तरधनं’ इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ तीन,

ताका आधा कौ चय एक करि गुणी अर गच्छ च्यारि करि गुणै छह होइ, सो इहां उत्तरधन का प्रमाण जानना । बहुरि इस उत्तरधन छह कौ (६) सर्वधन एक सौ वासठि (१६२) विषै घटाएं, अवशेष एक सौ छप्पन रहे, तिनकौ अनुकृष्टि गच्छ च्यारि का भाग दीएं गुणतालीस पाए, सोई प्रथम समय संवंधी परिणामनि का जो प्रथम खण्ड, ताका प्रमाण है, सो यहू ही सर्व जघन्य खण्ड है; जातैं इस खण्ड तें अन्य सर्व खडनि के परिणामनि की संख्या अर विशुद्धता करि अधिकपनों संभवै है । बहुरि तिस प्रथम खंड विषै एक अनुकृष्टि का चय जोडै, तिसही के दूसरा खंड का प्रमाण चालीस हो है । अैसे ही तृतीयादिक अंत खंड पर्यंत तिर्यक् एक-एक चय अधिक स्थापने । तहां तृतीय खंड विषै इकतालीस अंत खंड विषै वियालीस परिणामनि का प्रमाण हो है । ते ऊर्ध्वरचना विषै जहा प्रथम समय संवंधी परिणाम स्थापे, ताकै आगै-आगै बरोबरि ए खंड स्थापन करने । ए (खंड) एक समय विषै युगपत् अनेक जीवनि के पाइए, तातैं इनिको बरोबरि स्थापन कीए है । बहुरि तातैं परे ऊपरि द्वितीय समय का प्रथम खंड प्रथम समय का प्रथम खंड ३६ तें एक अनुकृष्टि चय करि (१) एक अधिक हो है; तातैं ताका प्रमाण चालीस है । जातैं द्वितीय समय संवंधी परिणाम एक सौ छ्यासठि, सो ही सर्वधन, तामें अनुकृष्टि का उत्तर धन छह घटाइ, अवशेष कौ अनुकृष्टि का गच्छ च्यारि का भाग दीये, तिस द्वितीय समय का प्रथम खंड की उत्पत्ति सभवै है । बहुरि ताकै आगै द्वितीय समय के द्वितीयादि खंड, ते एक-एक चय अधिक सभवै है ४१, ४२, ४३ । इहां द्वितीय समय का प्रथम खंड सो प्रथम समय का द्वितीय खंड करि समान है ।

अैसे ही द्वितीय समय का द्वितीयादि खंड, ते प्रथम समय का तृतीयादि खंडनि करि समान है । इतना विशेष - जो द्वितीय समय का अंत का खंड प्रथम समय का सर्व खंडनि विषै किसी खंड करि भी समान बाही । बहुरि तृतीयादि समयनि के प्रथमादि खंड द्वितीयादि समयनि के प्रथमादि खंडनि तें एक विशेष अधिक है ।

तहा तृतीय समय के ४१, ४२, ४३, ४४ । चतुर्थ के ४२, ४३, ४४, ४५ । पंचम समय के ४३, ४४, ४५, ४६ । षष्ठम समय के ४४, ४५, ४६, ४७ । सप्तम समय के ४५, ४६, ४७, ४८ । अष्टम समय के ४६, ४७, ४८, ४९ । नवमा समय के ४७, ४८, ४९, ५० । दशवा समय के ४८, ४९, ५०, ५१ । ग्यारहवां समय के ४९, ५०, ५१, ५२ । बारहवा समय के ५०, ५१, ५२, ५३ । तेरहवां समय

के ५१, ५२, ५३, ५४ । चौदहवां समय के ५२, ५३, ५४, ५५ । पंद्रहवां समय के ५३, ५४, ५५, ५६ । सोलहवां समय के ५४, ५५, ५६, ५७ खंड जानने ।

जातै ऊपरि-ऊपरि सर्वधन एक-एक ऊर्ध्व चय करि अधिक है । इहा सर्व जघन्य खंड जो प्रथम समय का प्रथम खंड, ताके परिणामनि के अर सर्वोत्कृष्ट खंड अंत समय का अंत का खंड, ताके परिणामनि के किस ही खंड के परिणामनि करि सहित समानता नाही है; जातै अवशेष समस्त ऊपरि के वा नीचले समय संबंधी खडनि का परिणाम पुंजनि कै यथासंभव समानता संभवै है । बहुरि इहां ऊर्ध्व रचना विषै 'भुहभूमि जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि' इस सूत्र करि मुख एक सौ बासठि, अर भूमि दोय सौ बाइस, इनिकौं जोड़ि ३८४ । आधा करि १९२ गच्छ, सोलह करि गुणै सर्वधन तीन हजार बहत्तरी हो है । अथवा मुख १६२, भूमि २२२ कौ जोड़ै ३८४, आधा कीये मध्यधन का प्रमाण एक सौ बाणवै होइ, ताकौ गच्छ सोलह करि गुणै सर्वधन का प्रमाण हो है । अथवा 'पहदतमुखमादिधनं' इस सूत्र करि गच्छ सोलह करि मुख एक सौ बासठि कौ गुणै, पचीस सै बाणवै सर्वसमय संबंधी आदि धन हो है । बहुरि उत्तरधन पूर्वे च्यारि सै असी कहा है, इनि दोऊनि कौ मिलाएं सर्वधन का प्रमाण हो है । बहुरि गच्छ का प्रमाण जानने कौ 'आदी अंते सुध्दे वट्टिहदे रूवसंजुदे ठाणे' इस सूत्र करि आदि एक सौ बासठि, सो अत दोय सै बाइस में घटाएं अवशेष साठि, ताकौ वृद्धिरूप चय च्यारि का भाग दीएं पद्रह, तामै एक जोड़े गच्छ का प्रमाण सोलह आवै है । अैसे दृष्टांतमात्र सर्वधनादिक का प्रमाण कल्पना करि वर्णन किया है, सो याका प्रयोजन यहु - जो इस दृष्टांत करि अर्थ का प्रयोजन नीकै समझने मे आवै ।

अब यथार्थ वर्णन करिए है - सो ताका स्थापन असंख्यात लोकादिक की अर्थ-संदृष्टि करि वा सदृष्टि के अर्थ समच्छेदादि विधान करि संस्कृत टीका विषै दिखाया है, सो इहा भाषा टीका विषै आगै सदृष्टि अधिकार जुदा कहैगे, तहां इनिकी भी अर्थ-सदृष्टि का अर्थ-विधान लिखैगे तहा जानना । इहां प्रयोजन मात्र कथन करिए है । आगै भी जहां अर्थसंदृष्टि होय, ताका अर्थ वा विधान आगै सदृष्टि अधिकार विषै ही देख लेना । जायगा-जायगा संदृष्टि का अर्थ लिखने तै ग्रथ प्रचुर होइ, अर कठिन होइ; तातै न लिखिए है । सो इहां त्रिकालवर्ती नाना जीव संबंधी समस्त अधः-प्रवृत्तकरण के परिणाम असंख्यात लोकमात्र है; सो सर्वधन जानना । बहुरि अधः-

प्रवृत्तकरण का काल अंतर्मूर्तमात्र, ताके जेते समय होंइ, सो इहां गच्छ जानना । वहुरि सर्वधन कौ गच्छ का वर्ग करि, ताका भाग दीजिए । वहुरि यथासभव संख्यात का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै; सो ऊर्ध्वचय जानना । वहुरि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि चय कौ गुणि, वहुरि गच्छ का प्रमाण करि गुणै जो प्रमाण आवै, सो उत्तरधन जानना । वहुरि इस उत्तरधन कौ सर्वधन विषै घटाइ, अवशेष कौ ऊर्ध्वगच्छ का भाग दीए, त्रिकालवर्ती समस्त जीवनि का अधःप्रवृत्तकरण काल के प्रथम समय विषै संभवते परिणामनि का पुज का प्रमाण हो है । वहुरि याके विषै एक उर्ध्व चय जोडे, द्वितीय समय सबधी नाना जीवनि के समस्त परिणामनि के पुंज का प्रमाण हो है । अैसे ही ऊपरि भी समय-समय प्रति एक-एक ऊर्ध्वचय जोडें, परिणाम पुज का प्रमाण जानना ।

तहां प्रथम समय संबंधी परिणाम पुंज विषै एक घाटि गच्छ प्रमाण चय जोडे अंत समय संबंधी नाना जीवनि के समस्त परिणामनि के पुज का प्रमाण हो है; सो ही कहिए है — ‘व्येकं पदं चयाभ्यस्तं तत्साद्यंतधनं भवेत्’ इस करण सूत्र करि एक घाटि गच्छ का प्रमाण करि चय कौ गुणै जो प्रमाण होइ, ताकौ प्रथम समय संबंधी परिणाम पुंज प्रमाण विषै जोडे, अंत समय संबंधी परिणाम पुज का प्रमाण हो है । वहुरि या विषै एक चय घटाए, द्विचरम समयवर्ती नाना जीव संबंधी समस्त विशुद्ध परिणाम पुंज का प्रमाण हो है । अैसे ऊर्ध्वरचना जो ऊपरि-ऊपरि रचना, तीहि विषै समय-समय संबंधी अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम पुज का प्रमाण कह्या ।

भावार्थ — आगे कषायाधिकार विषै विशुद्ध परिणामनि की संख्या कहैगे, तिस विषै अधःकरण विषै संभवते शुभलेश्यामय संज्वलन कषाय का देशघातो स्पर्धकनि का उदय संयुक्त विशुद्ध परिणामनि की संख्या त्रिकालवर्ती नाना जीवनि के असंख्यात लोकमात्र है । तिनि विषै जिनि जीवनि कौ अधःप्रवृत्तकरण मांडे पहला समय है, अैसे त्रिकाल संबंधी अनेक जीवनि के जे परिणाम संभवै, तिनि के समूह कौ प्रथम समय परिणाम पुज कहिए । वहुरि जिनि जीवनि कौ अधःकरण मांडे, दूसरा समय भया, अैसे त्रिकाल सबधी अनेक जीवनि के जे परिणाम संभवै, तिनि के समूह कौ द्वितीय समय परिणाम पुंज कहिए । अैसे ही क्रम तै अन्त समय पर्यंत जानना ।

तहा प्रथमादि समय संबंधी परिणाम पुंज का प्रमाण श्रेणी व्यवहार गणित का विधान करि जुदा-जुदा कह्या, सो सर्वसमय संबंधी परिणाम पुजनि कौ जोडें

असंख्यात लोकमात्र प्रमाण होइ है । बहुरि इन अध प्रवृत्तकरण काल का प्रथमादि समय सबंधी परिणामनि विषै त्रिकालवर्ती नाना जीव सबन्धी प्रथम समय के जघन्य मध्यम, उत्कृष्ट भेद लीए जो परिणाम पुज कह्या, ताके अधःप्रवृत्तकरण काल के जेते समय, तिनकौ संख्यात का भाग दीए जेता प्रमाण आवै, तितना खंड करिए । ते खंड निर्वर्गणा कांडक के जेते समय, तितने हो है । वर्गणा कहिए समयनि की समानता, तीहिकरि रहित जे ऊपरि-ऊपरि समयवर्ती परिणाम खंड, तिनका जो कांडक कहिए पर्व प्रमाण; सो निर्वर्गणा कांडक है । तिनिके समयनि का जो प्रमाण सो अधःप्रवृत्तकरण कालरूप जो ऊर्ध्वगच्छ, ताके संख्यातवे भागमात्र है, सो यह प्रमाण अनुकृष्टि के गच्छ का जानना । इस अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण एक-एक समय सबंधी परिणामनि विषै खंड हो है । बहुरि ते खंड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक हैं । तहां ऊर्ध्व रचना विषै जो चय का प्रमाण कह्या, ताकौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए जो पाइए; सो अनुकृष्टि के चय का प्रमाण है ।

बहुरि 'व्येकपदार्धघनचयगुणो गच्छ उत्तरघनं' इस सूत्र करि एक घाटि अनुकृष्टि के गच्छ का आधा प्रमाण कौ अनुकृष्टि चय करि गुणी, बहुरि अनुकृष्टि गच्छ करि गुणो जो प्रमाण होइ; सो अनुकृष्टि का चयघन हो है । याकौ ऊर्ध्व रचना विषै जो प्रथम समय सबंधी समस्त परिणाम पुज का प्रमाणरूप सर्वघन, तीहि विषै घटाइ, अवशेष जो रहै, ताकौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए जो प्रमाण होइ; सोई प्रथम समय सबंधी प्रथम खंड का प्रमाण है । बहुरि या विषै एक अनुकृष्टि चय कौ जोडे, प्रथम समय सम्बन्धी समस्त परिणामनि के द्वितीय खंड का प्रमाण हो है । अैसे ही तृतीयादिक खंड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक अपने अत खंड पर्यन्त क्रम तै स्थापन करने ।

तहा अनुकृष्टि का प्रथम खंड विषै एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ का प्रमाण अनुकृष्टि चय जोडे जो प्रमाण होइ, सोई अंत खंड का प्रमाण जानना । यामे एक अनुकृष्टि चय घटाएं, प्रथम समय संबंधी द्विचरम खंड का प्रमाण हो है । अैसे प्रथम समय संबंधी परिणाम पुजरूप खंड संख्यात आवली प्रमाण है, ते क्रम तै जानने । इहां तीन वार संख्यात करि गुणित आवली प्रमाण जो अध करण का काल, ताके संख्यातवे भाग खंडनि का प्रमाण, सो दोड वार संख्यात करि गुणित आवली प्रमाण है, अैसा जानना ।

बहुरि द्वितीय समय संबन्धी परिणाम पुज का प्रथम खंड है, सो प्रथम समय संबन्धी प्रथम खंड तै अनुकृष्टि चय करि अधिक है । काहै तै ? जातै द्वितीय समय संबन्धी समस्त परिणाम पुजरूप जो सर्वधन, तामै पूर्वोक्त प्रमाण अनुकृष्टि का चय-धन घटाएं अवशेष रहै, ताकौ अनुकृष्टि का भाग दीएं, सो प्रथम खंड सिद्ध हो है । बहुरि इस द्वितीय समय का प्रथम खंड विषै एक अनुकृष्टि चय कौ जोड़ै, द्वितीय समय संबन्धी परिणामानि का द्वितीय खंड का प्रमाण हो है । ऐसै तृतीयादिक खंड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक स्थापन करने । तहा एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ, प्रमाण चय द्वितीय समय परिणाम का प्रथम खंड विषै जोड़ै, द्वितीय समय संबन्धी अंत खंड का प्रमाण हो है । यामै एक अनुकृष्टि चय घटाएं द्वितीय समय संबन्धी द्विचरम खंड का प्रमाण हो है । बहुरि इहा द्वितीय समय का प्रथम खंड अर प्रथम समय का द्वितीय खंड, ए दोऊ समान है । तैसैं ही द्वितीय समय का द्वितीयादि खंड अर प्रथम समय का तृतीयादि खण्ड दोऊ समान हो है । इतना विशेष द्वितीय समय का अंत खंड, सो प्रथम समय का खंडनि विषै किसीही करि समान नाही । बहुरि याके आगे ऊपरि तृतीयादि समयनि विषै अनुकृष्टि का प्रथमादिक खंड, ते नीचला समय सम्बन्धी प्रथमादि अनुकृष्टि खंडनि तै एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है । ऐसै अवःप्रवृत्तकरण काल का अंत समय पर्यन्त जानने । तहां अन्त समय का समस्त परिणामरूप सर्वधन विषै अनुकृष्टि का चयधन कौ घटाई, अवशेष कौ अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीएं, अत समय सम्बन्धी परिणाम का प्रथम अनुकृष्टि खंड हो है । यामै एक अनुकृष्टि चय जोड़ै, अंत समय का द्वितीय अनुकृष्टि खंड हो है । ऐसै तृतीयादि खण्ड एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक जानने । तहां एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ, प्रमाण अनुकृष्टि चय अन्त समय सम्बन्धी परिणाम का प्रथम खण्ड विषै जोड़ै, अंत समय सम्बन्धी अंत अनुकृष्टि खण्ड के परिणाम पुज का प्रमाण हो है । बहुरि यामै एक अनुकृष्टि चय घटाएं, अन्त समय सम्बन्धी द्विचरम खण्ड के परिणाम पुज का प्रमाण हो है । ऐसै अत समय संबन्धी अनुकृष्टि खंड, ते अनुकृष्टि के गच्छ प्रमाण है ; ते वरोवरि आगे-आगे क्रम तै स्थापने । बहुरि अत समय सबन्धी अनुकृष्टि का प्रथम खंड विषै एक अनुकृष्टि चय घटाएं, अवशेष द्विचरम समय संबन्धी प्रथम खंड का परिणाम पुज का प्रमाण हो है । बहुरि यामै एक अनुकृष्टि चय जोड़ै, द्विचरम समय संबन्धी द्वितीय खंड का परिणाम पुज हो है । बहुरि ऐसै ही तृतीयादि खंड एक-एक चय अधिक जानने । तहां एक घाटि अनुकृष्टि गच्छ प्रमाण अनुकृष्टि चय द्विचरम

भावार्थ - पूर्वे अधःकरण का एक-एक समय विषे संभवते नाना जीवनि के परिणामनि का प्रमाण कह्या था । अब तिस विषे जुदे जुदे संभवते अैसे एक-एक समय संबंधी खंडनि विषे परिणामनि का प्रमाण इहा कह्या है । सो ऊपरि के अर नीचै के समय संबंधी खंडनि विषे परस्पर समानता पाइए है । तातें अनुकृष्टि अैसा नाम इहां संभवै है । जितनी सख्या लीये ऊपरि के समय विषे परिणाम खंड हो है, तितनी संख्या लीये नीचले समय विषे भी परिणाम खण्ड होइ है । अैसे नीचले समय संबंधी परिणाम खंड तें ऊपरि के समय संबंधी परिणाम खण्ड विषे समानता जानि इसका नाम अधःप्रवृत्तकरण कह्या है ।

बहुरि इहां विशेष है, सो कहिए है । प्रथम समय संबधी अनुकृष्टि का प्रथम खण्ड, सो सर्व तै जघन्य खण्ड है; जातै सर्वखण्डनि तै याकी संख्या घाटि है । बहुरि अंतसमय संबधी अत का अनुकृष्टि खण्ड, सो सर्वोत्कृष्ट है; जातै याकी संख्या सर्व खण्डनि तै अधिक है; सो इन दोऊनि कै कही अन्य खण्ड करि समानता नाही है । बहुरि अवशेष ऊपरि समय सबधी खण्डनि के नीचले समय सबधी खण्डनि सहित अथवा नीचले समय संबधी खण्डनि कै ऊपरि समय सबधी खण्डनि सहित यथासंभव समानता है । तहां द्वितीय समय तै लगाय द्विचरम समय पर्यंत जे समय, तिनका पहला-पहला खण्ड अर अंत समय का प्रथम खण्ड तै लगाइ द्विचरम खण्ड पर्यंत खण्ड, ते अपने-अपने ऊपरि के समय सबधी खण्डनि करि समान नाही है । तातै असदृश है, सो द्वितीयादि द्विचरम पर्यन्त समय सबधी प्रथम खण्डनि की ऊर्ध्वरचना कीए । अर ऊपरि अत समय के प्रथमादि द्विचरम पर्यन्त खण्डनि की तिर्यक् रचना कीए अकुश के आकार रचना हो है । तातै याकी अंकुश रचना कहिए ।

यहू अरु महर्षि  
वपेक्षा अकुश-  
रचना

34  
44  
45





असंख्यातभाग, संख्यातभाग, संख्यातगुण, असंख्यातगुण, अनंतगुण वृद्धिरूप षट्स्थानपतित वृद्धि संभव है। तहां तिस अनुक्रम के अनुसार एक अधिक जो सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग, ताका घन करि ताही का वर्ग कौ गुणिए।

भावार्थ ऐसा — पांच जायगा मांडि परस्पर गुणिये जो प्रमाण आवै, तितने विशुद्धि परिणाम विषै एक बार षट्स्थानपतित वृद्धि हो है। ऐसे क्रम तै प्रथम परिणाम तै लगाइ, इतने-इतने परिणाम भये पीछै एक-एक बार षट्स्थान वृद्धि पूर्ण होते असंख्यात लोकमात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धि भए, तिस प्रथम खंड के सब परिणामनि की संख्या पूर्ण होइ है। यातै असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानपतित वृद्धि करि वर्धमान प्रथम खंड के परिणाम है। बहुरि तैसै ही द्वितीय समय के प्रथम खंड का परिणाम एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है, ते जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टभेद लिये है। सो ए भी पूर्वोक्त प्रकार असंख्यात लोकमात्र षट्स्थानपतित वृद्धि करि वर्धमान है।

भावार्थ — एक अधिक सूच्यंगुल के असंख्यातवा भाग का घन करि गुणित तिस ही का वर्गमात्र परिणामनि विषै जो एक बार षट्स्थान होइ, तो अनुकृष्टि चय प्रमाण परिणामनि विषै केती बार षट्स्थान होइ ? ऐसे त्रैराशिक किये जितने पावै, तितनी बार अधिक षट्स्थानपतित वृद्धि प्रथम समय के प्रथम खण्ड तै द्वितीय समय के प्रथम खण्ड विषै संभव है। ऐसे ही तृतीयादिक अत पर्यन्त समयनि के प्रथम-प्रथम खंड के परिणाम एक-एक अनुकृष्टि चय करि अधिक है। बहुरि तैसै ही प्रथमादि समयनि के अपने-अपने प्रथम खण्ड तै द्वितीयादि खण्डनि के परिणाम भी क्रम तै एक-एक चय अधिक है। तहा यथासम्भव षट्स्थानपतित वृद्धि जेती बार होइ, तिनका प्रमाण जानना।

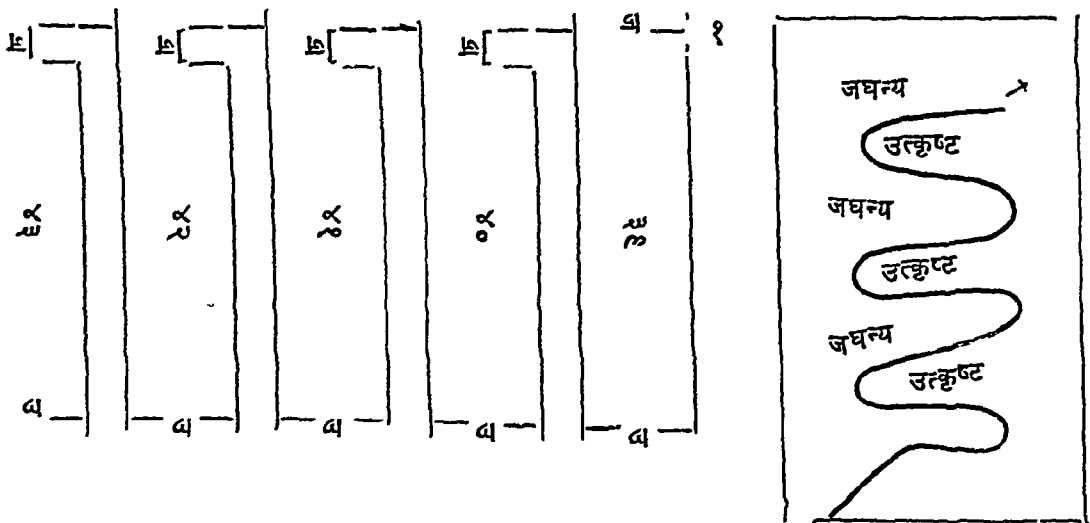
अथ तिन खण्डनि के विशुद्धता का अविभागप्रतिच्छेदन की अपेक्षा अल्प-बहुत्व कहिये है। प्रथम समय सम्बन्धी प्रथम खण्ड का जघन्य परिणाम की विशुद्धता अन्य सर्व तै स्तोक है। तथापि जीव राशि का जो प्रमाण, तातै अनंतगुणा अविभाग-प्रतिच्छेदन के समूह कौ धरै है। बहुरि यातै तिस ही प्रथम समय का प्रथम खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम की विशुद्धता अनंतगुणी है। बहुरि तातै द्वितीय खण्ड का जघन्य परिणाम की विशुद्धता अनंतगुणी है। तातै तिस हि का उत्कृष्ट परिणाम की विशुद्धता अनंतगुणी है। ऐसे ही क्रम तै तृतीयादि खण्डनि विषै भी जघन्य,

उत्कृष्ट परिणामनि की विशुद्धता अनंतगुणी-अनंतगुणी अंत के खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त प्रवर्तते हैं ।

बहुरि प्रथम समय संबंधी प्रथम खण्ड का उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता तै द्वितीय समय के प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । तातै तिस ही की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है ।

बहुरि तातै द्वितीय खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । तातै तिस ही की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । ऐसे तृतीयादि खण्डनि विषे भी जघन्य उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणा अनुक्रम करि द्वितीय समय का अंत का खण्डकी उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त प्राप्त हो है । बहुरि इस ही मार्ग करि तृतीयादि समयनि विषे भी पूर्वोक्त लक्षणयुक्त जो निर्वर्गणाकांडक, ताका द्विचरम समय पर्यन्त जघन्य उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणा अनुक्रम करि ल्यावनी ।

बहुरि निर्वर्गणाकांडक का अंत समय संबंधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता तै प्रथम समय का अंत खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । तातै दूसरा निर्वर्गणाकांडक का प्रथम समय संबंधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । तातै तिस प्रथम निर्वर्गणाकांडक का द्वितीय समय संबंधी अंत के खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । तातै द्वितीय निर्वर्गणाकांडक का द्वितीय समय संबंधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम



१ - भाषाटीका में सर्प का आकार बनाकर बीच में जघन्य उत्कृष्ट तीन-तीन बार लिखकर सहस्रि निम्नी है, परंतु मंदप्रबोधिका में इस प्रकार है ।

विशुद्धता अनंतगुणी है। ताते प्रथम निर्वर्गणाकांडक का तृतीय समय सबधी उत्कृष्ट खण्ड की उत्कृष्ट विशुद्धता अनंतगुणी है। या प्रकार जैसे सर्प की चाल इधर ते ऊधर, ऊधर ते इधर पलटनिरूप हो है; तैसे जघन्य ते उत्कृष्ट, उत्कृष्ट ते जघन्य ऐसे पलटनि विषे अनंतगुणी अनुक्रम करि विशुद्धता प्राप्त करिए, पीछे अंत का निर्वर्गणाकांडक का अंत समय संबधी प्रथम खण्ड की जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतानंतगुणी है। काहै ते ? जाते पूर्व-पूर्व विशुद्धता ते अनंतानंतगुणापनौ सिद्ध है। बहुरि ताते अंत का निर्वर्गणाकांडक का प्रथम समय संबधी उत्कृष्ट खण्ड की परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है। ताते ताके ऊपरि अंत का निर्वर्गणाकांडक का अंत समय संबधी अंत खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यन्त उत्कृष्ट खण्ड की उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतानंतगुणा अनुक्रम करि प्राप्त हो है। तिनि विषे जे जघन्य ते उत्कृष्ट परिणामनि की विशुद्धता अनंतानंतगुणी है, ते इहा विवक्षारूप नाही है; असा जानना।

या प्रकार विशुद्धता विशेष धरै जे अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम, तिनि विषे गुणश्रेणिनिर्जरा, गुणसक्रमण, स्थितिकांडकोत्करण, अनुभागकांडकोत्करण भए च्यारि आवश्यक न सभवै है। जाते तिस अधःकरण के परिणामनि के तैसा गुण-श्रेणि निर्जरा आदि कार्य करने की समर्थता का अभाव है। इनका स्वरूप आगे अपूर्वकरण के कथन विषे लिखैगे।

तौ इस करण विषे कहा हो है ?

केवल प्रथम समय ते लगाइ समय-समय प्रति <sup>(१)</sup> अनंतगुणी-अनंतगुणी विशुद्धता की वृद्धि हो है। बहुरि <sup>(२)</sup> स्थितिबधापसरण हो है। पूर्वे जेता प्रमाण लीए कर्मनि का स्थितिबध होता था, ताते घटाइ-घटाइ स्थितिबध करै है। बहुरि साता <sup>(३)</sup> वेदनीय कौ आदि दैकरि प्रशस्त कर्मप्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनंतगुणा-अनंतगुणा बधता गुड, खड, शर्करा, अमृत समान चतुस्थान लीए अनुभाग बंध हो है। बहुरि असाता वेदनीय आदि अप्रशस्त कर्म प्रकृतिनि का समय-समय प्रति अनंतगुणा-अनंतगुणा घटता निब, काजीर समान द्विस्थान लीए अनुभाग बध हो है, विष-हलाहल रूप न हो है। ऐसे च्यारि आवश्यक इहां संभवै है। अवश्य हो हैं, ताते इनिकौ आवश्यक कहिए है।

बहुरि ऐसे यहु कहा जो अर्थ, ताकी रचना अंकसंदृष्टि अपेक्षा लिखिए है।

### अंकसंदृष्टि अपेक्षा अधःकरण रचना

सोलह सम-  
यनि की  
ऊर्ध्व रचना

अनुकृष्टिरूप एक-एक समय  
सवधी च्यारि-च्यारि खडनि  
की तिर्यक् रचना

	प्रथम खड	द्वितीय खड	तृतीय खड	चतुर्थ खड
२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

अर्थसंदृष्टि अपेक्षा रचना है, सो  
आगे सदृष्टि अधिकार विषे लिखेगे ।  
तथा याका यहु अभिप्राय है — एक  
जीव एकै काल असा कहिए, तहां  
विवक्षित अधःप्रवृत्तकरण का परिणाम-  
रूप परिणया जो एक जीव, ताका  
परमार्थवृत्ति करि वर्तमान अपेक्षा काल  
एक समय मात्र ही है; तातै एक जीव  
का एकै काल समय प्रमाण जानना ।  
बहुरि एक जीव नानाकाल असा कहिए,  
तहा अधःप्रवृत्तकरण का नानाकालरूप  
अंतर्मुहूर्त के समय ते अनुक्रम ते एक  
जीव करि चढिए है, यातै एक जीव  
का नानाकाल अंतर्मुहूर्त का समय मात्र  
है । बहुरि नानाजीवनि का एक काल असा  
कहिए, तहां विवक्षित एक समय अपेक्षा  
अधःप्रवृत्तकाल के असंख्यात समय है,  
तथापि तिनिविषे यथासंभव एक सौ  
आठ समयरूप जे स्थान, तिनिविषे  
संग्रहरूप जीवनि की विवक्षा करि एक  
काल है; जातै वर्तमान एक कोई समय  
विषे अनेक जीव है, ते पहिला, दूसरा  
तीसरा आदि अधःकरण के असंख्यात  
समयनि विषे यथासंभव एक सौ आठ  
समय विषे ही प्रवर्तते पाइए है । तातै  
अनेक जीवनि का एक काल एक सौ  
आठ समय प्रमाण है । बहुरि नाना

जीव, नानाकाल असा कहिए; तहा अधःप्रवृत्तकरण के परिणाम असंख्यात लोकमात्र  
है, ते त्रिकालवर्ती अनेक जीव संबंधी है । बहुरि जिस परिणाम को कह्या, तिसको

फेर न कहना; अैसे अपुनरुक्तरूप है । तिनकौ अनेक जीव अनेक काल विषे आश्रय करै है । सो एक-एक परिणाम का एक-एक समय की विवक्षा करि नाना जीवनि का नानाकाल असंख्यातलोक प्रमाण समय मात्र है; अैसा जानना ।

बहुरि अब अधःप्रवृत्तकरण का काल विषे प्रथमादि समय संबधी स्थापे जे विशुद्धतारूप कषाय परिणाम, तिनिविषे प्रमाण के अवधारने कौ कारणभूत जे करणसूत्र, तिनिका गोपालिक विधान करि बीजगणित का स्थापन कहिए है; जातै पूर्वोक्त करणसूत्रनि का अर्थ विषे संशय का अभाव है । तहा 'व्येकपदार्धघ्नचय-गुणो गच्छ उत्तरधनं' इस करणसूत्र की वासना अकसंदृष्टि अपेक्षा दिखाइए है । 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ' अैसा शब्द करि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण चय सर्वस्थानकनि विषे ग्रहण कीया, ताका प्रयोजन यहु जो ऊपरि वा नीचे के स्थान-कनि विषे हीनाधिक चय पाइए, तिनकौ समान करि स्थापै, एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण चय सर्व स्थानकनि विषे समान हो है । सो इहां एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण साड़ा सात है, सो इतने-इतने चय सोलह समयनि विषे समान हो है । कैसै ? सो कहिए है — प्रथम समय विषे तो आदि प्रमाण ही है, ताके चय की वृद्धि वा हानि नाही है । बहुरि अंत समय विषे एक घाटि गच्छ का प्रमाण चय है, यातै व्येकपद शब्द करि एक घाटि गच्छ प्रमाण चयनि की संख्या कही । बहुरि अर्ध शब्द करि अंत समय के पंद्रह चयनि विषे साड़ा सात चय काढि प्रथम समय का स्थान विषे रचे दोऊ जायगा साड़ा सात, साड़ा सात चय समान भए । अैसे ही ताके नीचे पंद्रहवां समय के चौदह चयनि विषे साड़ा छह चय काढि, द्वितीय समय का एक चय के आगे रचनारूप कीएं, दोऊ जाएगा साड़ा सात, साड़ा सात चय हो है । बहुरि ताके नीचे चौदहवां समय के तेरह चयनि विषे साड़ा पाच चय काढि, तीसरा समय का स्थान विषे दोय चय के आगे रचे दोऊ जायगा साड़ा सात, साड़ा सात चय हो है । अैसे ही ऊपरि तै चौथा स्थान तेरहवा समय, ताकौ आदि देकरि समयनि के साड़ा च्यारि आदि चय काढि नीचे तै चौथा समय आदि स्थानकनि के तीन आदि चयनि के आगे स्थापै सर्वत्र साड़ा सात, साड़ा सात चय हो है । अैसे सोलह स्थानकनि विषे जैसै समपाटीका आकार हो है, तैसे साड़ा सात, साड़ा सात चय स्थापिए है । इहां का यंत्र है—

यह अंक संदृष्टि अपेक्षा 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'  
इस सूत्र की वासना कहने की रचना है ।

सर्वस्थानकनि विपै समानरूप कीए चयनि की रचना इहा च्यारि-च्यारि तौ एक-एक चय का प्रमाण, आगै दोय आधा चय का प्रमाण जानना	ऊपरि समयवर्ती चयकादि नीचले समय स्थान विपै स्थापे, तिनकी रचना
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।४।४।४।४।४।४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।४।४।४।४।४।४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।४।४।४।४।४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।४।४।४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।४।४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	४।२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	२
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	
१६२ ४।४।४।४।४।४।४।२	





ऐसे हैं; ता कारण तै अपूर्व है करण कहिए परिणाम जा विषै, सो अपूर्वकरण गुण-स्थान है - ऐसा निरुक्ति करि लक्षण कहा है ।

भिन्नसमयदिठियेहिं दु, जीवेहिं एा होदि सब्बदा सरिसो ।

करणोहिं एवकसमयदिठियेहिं सरिसो विसरिसो वा ॥५२॥ १

भिन्नसमयस्थितैस्तु, जीवैर्न भवति सर्वदा सादृश्यम् ।

करणैरेकसमयस्थितैः सादृश्यं वैसादृश्यं वा ॥५२॥

टीका - जैसे अध.प्रवृत्तकरण विषै भिन्न-भिन्न ऊपरि नीचै के समयनि विषै तिष्ठते जीवनि के परिणामनि की संख्या अर विशुद्धता समान संभवै है; तैसे इहां अपूर्वकरण गुणस्थान विषै सर्वकाल विषै भी कोई ही जीव कै सो समानता न संभवै है । वहुनि एक समय विषै स्थित करण के परिणाम, तिनके मध्य विवक्षित एक परिणाम की अपेक्षा समानता अर नाना परिणाम की अपेक्षा असमानता जीवनि के अध करणवत् इहां भी संभवै है, नियम नाही; असा जानना ।

भावार्थ - इस अपूर्वकरण विषै ऊपरि के समयवर्ती जीवनि कै अर नीचले समयवर्ती जीवनि कै समान परिणाम कदाचित् न होइ । वहुनि एक समयवर्ती जीवनि के तिस समय सबधी परिणामनि विषै परस्पर समान भी होइ अर समान नाही भी होइ ।

ताका उदाहरण - जैसे जिनि जीवनि कौ अपूर्वकरण मांडै पांचवा समय भया, तहां तिन जीवनि के जैसे परिणाम होहि, तैसे परिणाम जिन जीवनि कौ अपूर्वकरण मांडै प्रथमादि चतुर्थ समय पर्यन्त वा पष्ठमादि अंत समय पर्यन्त भए होहि, तिनके कदाचित् न होइ, यह नियम है । वहुनि जिनि जीवनि कौ अपूर्वकरण मांडै पांचवां समय भया, अैसे अनेक जीवनि के परिणाम परस्पर समान भी होइ, जैसा एक जीव का परिणाम होइ, तैसा अन्य का भी होइ अथवा असमान भी होइ । एक जीव का औरसा परिणाम होइ, एक जीव का औरसा परिणाम होइ । अैसे ही अन्य-अन्य समयवर्ती जीवनि के तौ जैसे अध करण विषै परस्पर समानता भी थी, तैसे इहां नाही है । वहुनि एक समयवर्ती जीवनि के जैसे अध करण विषै

समानता वा असमानता थी, तैसै इहा भी है । या प्रकार त्रिकालवर्ती नाना जीवनि के परिणाम इस अपूर्वकरण विषै प्रवर्तते जानने ।

अंतोमुहुत्तमेत्ते, पडिसमयमसंखलोगपरिणामा ।

कमउड्ढा पुव्वगुणे, अणुकट्ठी एत्थि शियमेण ॥५३॥

अंतर्मुहूर्तमात्रे, प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामाः ।

क्रमवृद्धा अपूर्वगुणे, अनुकृष्टिर्नास्ति नियमेन ॥५३॥

टीका — अंतर्मुहूर्तमात्र जो अपूर्वकरण का काल, तीहि विषै समय-समय प्रति क्रम तै एक-एक चय बधता असख्यात लोकमात्र परिणाम है । तहा नियम करि पूर्वापर समय संबंधी परिणामनि के समानता का अभाव तै अनुकृष्टि विधान नाही है ।

इहा भी अंक सदृष्टि करि दृष्टांतमात्र प्रमाण कल्पना करि रचना का अनुक्रम दिखाइये है । अपूर्वकरण के परिणाम च्यारि हजार छिनवै, सो सर्वधन है । बहुरि अपूर्वकरण का काल आठ समय मात्र, सो गच्छ है । बहुरि सख्यात का प्रमाण च्यारि (४) है । सो 'पदकदिसंखेण भाजिदे पच्चयो होदि' इस सूत्र करि गच्छ ८ का वर्ग ६४ अर सख्यात च्यारि का भाग सर्वधन ४०९६ कौ दीए चय होइ, ताका प्रमाण सोलह भयो । बहुरि 'व्येकंपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्र करि एक घाटि गच्छ ७, ताका आधा  $\frac{७}{२}$  कौ चय १६ करि गुणै जो प्रमाण

५६ होय, ताका गच्छ (८) आठ करि गुणै चय धन च्यारि सै अडतालीस (४४८) होइ । याकौ सर्वधन ४०९६ में घटाइ, अवशेष ३६४८ कौ गच्छ आठ (८) का भाग दीए, प्रथम समय संबंधी परिणाम च्यारि सै छप्पन (४५६) हो है । यामै एक चय १६ मिलाए द्वितीय समय संबंधी हो है । अैसे तृतीयादि समयनि विषै एक-एक चय बधता परिणाम पुज है, तहां एक घाटि गच्छ मात्र चय का प्रमाण एक सौ बारह, सो प्रथम समय संबंधी धन विषै जोडे, अत समय संबंधी परिणाम पुज पांच सै अडसठि हो है । यामै एक चय घटाए द्विचरम समय संबंधी परिणाम पुज पांच सै बावन हो है । अैसे ही एक चय घटाए आठौ गच्छ कौ प्रमाण जानना ।

अंकसंहृष्टि अपेक्षा अव यथार्थ कथन करिये है । तहां अर्थसंदृष्टि करि  
 समय-समयसंबंधी अपूर्व-रचना है, सो आगे संदृष्टि अधिकार विषे लिखेगे । सो  
 करण परिणाम रचना त्रिकालवर्ती नाना जीव संबंधी अपूर्वकरण के विशुद्धतारूप  
 ५६८ परिणाम, ते सर्व ही अधःप्रवृत्तकरण के जेते परिणाम हैं,  
 ५५२ तिनतैं असंख्यात लोक गुणे है । काहे तैं ? जातैं अधःप्रवृत्त-  
 ५३६ करण काल का अंत समय संबंधी जे विशुद्ध परिणाम  
 ५२० है, तिनका अपूर्वकरण काल का प्रथम समय विषे प्रत्येक  
 ५०४ एक-एक परिणाम के असंख्यात लोक प्रमाण भेदनि की  
 ४८८ उत्पत्ति का सद्भाव है । तातैं अपूर्वकरण का सर्व परिणाम-  
 ४७२ रूप सर्वधन, सो असंख्यात लोक कौ असंख्यात लोक करि  
 ४५६ गुणें जो प्रमाण होइ, तितना है; सो सर्वधन जानना ।  
 सर्व परिणाम जोड वहरि ताका काल अंतमुहूर्तमात्र है; ताके जेते समय, सो  
 ४८६ गच्छ जानना । वहरि 'पदकदिसंखेण भांजिदं पचयं' इस  
 सूत्र करि गच्छ का वर्ग का अर संख्यात का भाग सर्वधन कौ दीए जो प्रमाण होइ;  
 सो चय जानना । वहरि 'व्येकपदार्धधनचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्र करि एक  
 घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि चय कौ गुणि गच्छ कौ गुणें जो प्रमाण होइ,  
 सो चय धन जानना । याकौ सर्वधन विषे घटाइ अवशेष कौ गच्छ का भाग दीएं जो  
 प्रमाण आवैं, सोई प्रथम समयवर्ती त्रिकाल गोचर नाना जीव संबंधी अपूर्वकरण  
 परिणाम का प्रमाण हो है । वहरि यामैं एक चय जोडै, द्वितीय समयवर्ती नाना जीव  
 संबंधी अपूर्वकरण परिणामनि का पुंज प्रमाण हो है । ऐसे ही तृतीयादि समयनि विषे  
 एक-एक चय की वृद्धि का अनुक्रम करि परिणाम पुंज का प्रमाण ल्याएं संतैं अंत  
 समय विषे परिणाम धन है । सो एक घाटि गच्छ का प्रमाण चयनि कौ प्रथम समय  
 संबंधी धन विषे जोडै जितना प्रमाण होइ, तितना हो है । वहरि यामैं एक चय  
 घटाएं, द्विचरम समयवर्ती नाना जीव संबंधी विशुद्ध परिणामनि का पुंज प्रमाण  
 हो है । ऐसे समय-समय संबंधी परिणाम क्रम तैं बधते जानने ।

वहरि इस अपूर्वकरण गुणस्थान विषे पूर्वोत्तर समय संबंधी परिणामनि के  
 मग ही समानता का अभाव है; तातैं इहां खंडरूप अनुकृष्टि रचना नाही है ।

भावार्थ - आगे कपायाधिकार विषे शुक्ल लेश्या संबंधी विशुद्ध परिणामनि  
 का प्रमाण कहेंगे । तिसविषे इहां अपूर्वकरण विषे संभवते जे परिणाम, तिनिविषे

अपूर्वकरण काल का प्रथमादि समयनि विषे जेते-जेते परिणाम संभवै, तिनका प्रमाण कहा है । बहुरि इहां पूर्वापर विषे समानता का अभाव है; तातै खंड करि अनुकृष्टि विधान न कहा है । बहुरि इस अपूर्वकरण काल विषे प्रथमादिक अंत समय पर्यंत स्थित जे परिणाम स्थान, ते पूर्वोक्त विधान करि असंख्यात लोक बार षट्स्थान पतित वृद्धि कौ लीएं जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद संयुक्त है । तिनका समय-समय प्रति अर परिणाम-परिणाम प्रति विशुद्धता का अविभागप्रतिच्छेदनि का प्रमाण अवधारणे के अर्थ अल्पबहुत्व कहिए है ।

तहां प्रथम समयवर्ती सर्वजघन्य परिणाम विशुद्धता, सो अधःप्रवृत्तकरण का अंत समय संबंधी अंत खंड की उत्कृष्ट विशुद्धता तै भी अनंतगुणा अविभागप्रतिच्छेदमयी है, तथापि अन्य अपूर्वकरण के परिणामनि की विशुद्धता तै स्तोक है । बहुरि तातै प्रथम समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । बहुरि तातै द्वितीय समयवर्ती जघन्य परिणाम विशुद्धता अनंतगुणी है । जातै प्रथम समय उत्कृष्ट विशुद्धता तै असंख्यात लोक मात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धिरूप अंतराल करि सो द्वितीय समयवर्ती जघन्य विशुद्धता उपजै है । बहुरि तातै तिस द्वितीय समयवर्ती उत्कृष्ट विशुद्धता अनंतगुणी है । असै उत्कृष्ट तै जघन्य अर जघन्य तै उत्कृष्ट विशुद्ध स्थान अनंतगुणा-अनंतगुणा है । या प्रकार सर्प की चालवत् जघन्य तै उत्कृष्ट, उत्कृष्ट तै जघन्यरूप अनुक्रम लीए अपूर्वकरण का अंत समयवर्ती उत्कृष्ट परिणाम विशुद्धता पर्यंत जघन्य, उत्कृष्ट विशुद्धता का अल्पबहुत्व जानना ।

या प्रकार इस अपूर्वकरण परिणाम का जो कार्य है, ताके विशेष कौ गाथा दोय करि कहै है —

तारिसपरिणामट्टियजीवा हु जिरोंहिं गलियतिमिरेहिं ।  
मोहस्सपुव्वकरणा, खवणुवसमणुज्जया भणिया ॥५४॥<sup>१</sup>

तादृशपरिणामस्थितजीवा हि जिनैर्गलिततिमिरैः ।

मोहस्यापूर्वकरणा, क्षणोपशमनोद्यता भणिताः ॥८४॥

टीका — तादृश कहिए तैसा पूर्व-उत्तर समयनि विषे असमान जे अपूर्वकरण के परिणाम, तिनिविषे स्थिताः कहिए परिणाम ऐसे जीव, ते अपूर्वकरण है ।

ऐसें गल्या है जानावरणादि कर्मरूप अंधकार जिनिका, ऐसे जिनदेवनि करि कहा है ।

बहुरि ते अपूर्वकरण जीव सर्व ही प्रथम समय ते लगाइ चारित्र मोहनीय नामा कर्म के अपावने कौं वा उपशम करने कौं उद्यमव्रंत हो हैं । याका अर्थ यह — जो गुणश्रेणिनिर्जरा, गुणसंक्रमण, स्थितिखंडन, अनुभागखंडन ऐसे लक्षण धरें जे चारि आवश्यक, तिनको करें हैं ।

तहां पूर्वे वांध्या था ऐसा सत्तारूप जो कर्म परमाणुरूप द्रव्य, तामें सौं काढि जो द्रव्य गुणश्रेणी विपै दीया, ताका गुणश्रेणी का काल विपै समय-समय प्रति असंख्यात-असंख्यातगुणा अनुक्रम लिए पंक्तिबंध जो निर्जरा का होना, सो गुणश्रेणि-निर्जरा है ।

बहुरि समय-समय प्रति गुणकार का अनुक्रम ते विवक्षित प्रकृति के परमाणु पलटि करि अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणामें, सो गुण संक्रमण है ।

बहुरि पूर्वे वांधी थी ऐसी सत्तारूप कर्म प्रकृतिनि की स्थिति, ताका घटावना; सो स्थिति खंडन कहिए ।

बहुरि पूर्वे वांध्या था ऐसा सत्तारूप अप्रशस्त कर्म प्रकृतिनि का अनुभाग, ताका घटावना सो अनुभाग खंडन कहिए । ऐसे चारि कार्य अपूर्वकरण विपै अवश्य हो हैं । इनिका विशेष वर्णन आगे लव्विसार, अपराणार अनुसार अर्थ निखेंगे, तहां जानना ।

णिहापयले राठ्ठे, सदि आऊ उवसमंति उवसमया ।

खवयं दुक्के खवया, राणयमेण खवंति मोहं तु ॥५५॥

निद्राप्रचने नष्टे, सति आयुपि उपशमयंति उपशमकाः ।

अपकं ढौकमानाः, अपका नियमेन अपयंति मोहं तु ॥५५॥

टीका — इस अपूर्वकरण गुणस्थान विपै विद्यमान मनुष्य आयु जाकें पाटा, ऐना अपूर्वकरण जीव के प्रथम भाग विपै निद्रा अर प्रचला — ए दोय प्रकृति बंध होने न व्युच्छिन्निरूप हो है ।

अर्थ यह - जो उपशम श्रेणी चढनेवाले अपूर्वकरण जीव का प्रथम भाग विषे मरण न होइ, बहुरि निद्रा-प्रचला का बंध व्युच्छेद होइ, तिसको होतै ते अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव जो उपशम श्रेणी प्रति चढै तो चारित्रमोह को नियमकरि उपशमावै है । बहुरि क्षपक श्रेणी प्रति चढनेवाले क्षपक, ते नियम करि तिस चारित्र मोह को क्षपावै है । बहुरि क्षपक श्रेणी विषे सर्वत्र नियमकरि मरण नाही है ।

आगे अनिवृत्तिकरण गुणस्थान का स्वरूप कौ गाथा दोय करि प्ररूपै है -

एकस्मि कालसमये, संस्थानादीहिं जह शिवद्वंति ।

ए शिवद्वंति तहावि य, परिणामेहिं मिहो जेहिं ॥५६॥

होति अणियद्विदणो ते, पडिसमयं जेस्सिमेकपरिणामा ।

विमलयरभाणहुयवहसिहाहिं णिह्द्वकस्सवणा ॥५७॥<sup>१</sup> (जुग्गम्)

एकस्मिन् कालसमये, संस्थानादिभिर्यथा निवर्तते ।

न निवर्तते तथापि च, परिणामैर्मिथो यैः ॥५६॥

भवन्ति अनिवर्तितस्ते, प्रतिसमयं येषामेकपरिणामाः ।

विमलतरध्यानहुतवहसिखाभिर्निर्दग्धकर्मवना ॥५७॥ (युग्गम्)

टीका - अनिवृत्तिकरण काल विषे एक समय विषे वर्तमान जे त्रिकालवर्ती अनेक जीव, ते जैसे शरीर का सस्थान, वर्ण, वय, अवगाहना अर क्षयोपशमरूप ज्ञान उपयोगादिक, तिनकरि परस्पर भेद कौ प्राप्त है; तैसे विशुद्ध परिणामनि करि भेद कौ प्राप्त न हो है प्रगटपने, ते जीव अनिवृत्तिकरण है, अैसे सम्यक् जानना । जातै नाही विद्यमान है निवृत्ति कहिए विशुद्ध परिणामनि विषे भेद जिनके, ते अनिवृत्तिकरण है, ऐसी निरुक्ति हो है ।

भावार्थ - जिन जीवनि कौ अनिवृत्तिकरण माडे पहला, दूसरा आदि समान समय भए होहि, तिनि त्रिकालवर्ती अनेक जीवनि के परिणाम समान ही होइ । जैसे अध.करण, अपूर्वकरण विषे समान वा असमान होते थे, तैसे इहा नाही । बहुरि अनिवृत्तिकरण काल का प्रथम समय कौ आदि दैकरि समय-समय प्रति वर्त-

मान जे सर्व जीव, ते हीन-अधिकपना तै रहित समान विशुद्ध परिणाम धरै हैं । तहां समय-समय प्रति ते विशुद्ध परिणाम अनंतगुणे-अनंतगुणे उपजै है । तहां प्रथम समय विषै जे विशुद्ध परिणाम है; तिनतै द्वितीय समय विषै विशुद्ध परिणाम अनंतगुणे हो है । असैं पूर्व-पूर्व समयवर्ती विशुद्ध परिणामनि तै जीवनि के उत्तरोत्तर समयवर्ती विशुद्ध परिणाम अविभागप्रतिच्छेदनि की अपेक्षा अनंतगुणा-अनंतगुणा अनुक्रम करि वधता हुआ प्रवर्तै हैं । ऐसा यहु विशेष जैनसिद्धांत विषै प्रतिपादन किया है, सो प्रतीति में ल्यावना ।

भावार्थ — अनिवृत्तिकरण विषै एक समयवर्ती जीवनि के परिणामनि विषै समानता है । बहुरि ऊपरि-ऊपरि समयवर्तीनि के अनंतगुणी-अनंतगुणी विशुद्धता वधती है ।

ताका उदाहरण — जैसे जिनको अनिवृत्तिकरण मांडै पांचवां समय भया, ऐसे त्रिकालवर्ती अनेक जीव, तिनके विशुद्ध परिणाम परस्पर समान ही होइ, कदाचित् हीन-अधिक न होइ । बहुरि ते विशुद्ध परिणाम जिनको अनिवृत्तिकरण मांडै चौथा समय भया, तिनके विशुद्ध परिणामनि तै अनंतगुणे हैं । बहुरि इनतै जिनको अनिवृत्तिकरण मांडै छठा समय भया, तिनके अनंतगुणे विशुद्ध परिणाम हो है; ऐसें सर्वत्र जानना । बहुरि तिस अनिवृत्तिकरण परिणाम संयुक्त जीव, ते अति निर्मल ध्यानरूपी हुतभुक् कहिए अग्नि, ताकी शिखानि करि दग्ध कीए हैं कर्मरूपी वन जिनने ऐसे है । इस विघेषण करि चारित्र मोह का उपशमावना वा क्षय करना अनिवृत्तिकरण परिणामनि का कार्य है; ऐसा सूच्या है ।

आगे सूक्ष्म सांपराय गुणस्थान के स्वरूप कौ कहै है —

धुदकोसुं भयवत्थं, होदि जहा सुहमरायसंजुतं ।  
एवं सुहमकसाओ, सुहमसरागो त्ति सादव्वो ॥५८॥

धौतकोसुं भवस्त्रं भवति यथा सूक्ष्मरागसंयुक्तं ।

एवं सूक्ष्मकषायः, सूक्ष्मसांपराय इति ज्ञातव्यः ॥५८॥

टीका — जैसे बोया हुआ कसूंमल वस्त्र, सो सूक्ष्म लाल रंग करि संयुक्त हो है । तैसे अग्निना मृत्र विषै कहा विवान करि सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त जो लोभ कषाय, नाहिकरि जो संयुक्त, सो सूक्ष्मसांपराय है; ऐसा जानना ।

आगै सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्तपने का स्वभाव कौ गाथा दोय करि प्ररूपै है -

पुव्वापुव्वप्फड्डय, बादरसुहमगयकिट्ठिअणुभागा ।

हीणकमाणंतगुणेणवराहु वरं च हेट्ठस्स ॥५६॥ १

पूर्वापूर्वस्पर्धकबादरसूक्ष्मगतकृष्टचनुभागाः ।

हीनक्रमा अनंतगुणेन, अवरात्तु वरं चाधस्तनस्य ॥५९॥

टीका - पूर्व अनिवृत्तिकरण गुणस्थान विषे वा संसार अवस्था विषे जे सभवै ऐसै कर्म की शक्ति समूहरूप पूर्वस्पर्धक, बहुरि अनिवृत्तिकरण परिणामनि करि कीए तिनके अनंतवे भाग प्रमाण अपूर्वस्पर्धक, बहुरि तिनहि करि करी जे बादर-कृष्टि, बहुरि तिनही करि करी जे कर्म शक्ति का सूक्ष्म खंडरूप सूक्ष्मकृष्टि, इनिका क्रम तै अनुभाग अपने उत्कृष्ट तै अपना जघन्य, अर ऊपरि के जघन्य तै नीचला उत्कृष्ट ऐसा अनंतगुणा घाटि क्रम लीए है ।

वे वर्णन जो ऊपरि  
दिखाया है

भावार्थ - पूर्व स्पर्धकनि का उत्कृष्ट अनुभाग, सो अविभागप्रतिच्छेद अपेक्षा जो प्रमाण धरै है, ताके अनंतवें भाग पूर्व स्पर्धकनि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग अपूर्वस्पर्धकनि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग अपूर्वस्पर्धकनि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग बादरकृष्टि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग बादरकृष्टि का जघन्य अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग सूक्ष्मकृष्टि का उत्कृष्ट अनुभाग है । बहुरि ताके अनंतवे भाग सूक्ष्मकृष्टि का जघन्य अनुभाग है; ऐसा अनुक्रम जानना ।

बहुरि इन पूर्वस्पर्धकादिकनि का स्वरूप आगै लब्धिसार-क्षपणासार का कथन लिखेगे, तहा नीकै जानना । तथापि इनिका स्वरूप जानने के अर्थि इहां भी किंचित् वर्णन करिये है ।

कर्म प्रकृतिरूप परिणए जे परमाणु, तिनिविषे अपने फल देने की जो शक्ति, ताकी अनुभाग कहिये । तिस अनुभाग का ऐसा कोई केवलज्ञानगम्य अण, जाका दूसरा भाग न होइ, सो इहां अविभागप्रतिच्छेद जानना ।

बहुरि एक परमाणु विषे जेते अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनके समूह का नाम वर्ग है ।



बहुरि जिन परमाणुनि विषे परस्पर समान गणना लीए अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनिके समूह का नाम वर्गणा है ।

तहां अन्य परमाणुनि तै जाविषे थोरे अविभागप्रतिच्छेद पाइए, ताका नाम जघन्य वर्ग है ।

बहुरि तिस परमाणु के समान जिन परमाणुनि विषे अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तिनिके समूह का नाम जघन्य वर्गणा है । बहुरि जघन्य वर्ग तै एक अविभाग-प्रतिच्छेद अधिक जिनिविषे पाइए असी परमाणुनि का समूह; सो द्वितीय वर्गणा है । असे जहां ताई एक-एक अविभागप्रतिच्छेद वधने का क्रम लीए जेती वर्गणा होइ, तितनी वर्गणा के समूह का नाम जघन्य स्पर्धक है । बहुरि यातै ऊपरि जघन्य वर्गणा के वर्गनि विषे जेते अविभागप्रतिच्छेद थे, तिनतै दूणे जिस वर्गणा के वर्गनि विषे अविभागप्रतिच्छेद होहि, तहांतै द्वितीय स्पर्धक का प्रारंभ भया । तहां भी पूर्वोक्त प्रकार एक-एक अविभागप्रतिच्छेद वधने का क्रमयुक्त वर्गनि के समूहरूप जेती वर्गणा होइ, तिनिके समूह का नाम द्वितीय स्पर्धक है । बहुरि प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के वर्गनि विषे जेते अविभागप्रतिच्छेद थे, तिनतै तिगुणे जिस वर्गणा के वर्गनि विषे अविभागप्रतिच्छेद पाइए, तहांतै तीसरे स्पर्धक का प्रारंभ भया, तहां भी पूर्वोक्त क्रम जानना ।

अर्थ इहां यह - जो यावत् वर्गणा के वर्गनि विषे क्रम तै एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद वधे, तावत् सोई स्पर्धक कहिए । बहुरि जहां युगपत् अनेक अविभागप्रति-च्छेद वधे, तहांतै नवीन अन्य स्पर्धक का प्रारंभ कहिए । सो चतुर्थादि स्पर्धकनि की आदि वर्गणा का वर्ग विषे अविभागप्रतिच्छेद प्रथम स्पर्धक की आदि वर्गणा के वर्गनि विषे जेते थे, तिनतै चौगुणा, पंचगुणा आदि क्रम लीए जानने । बहुरि अपनी-अपनी द्वितीयादि वर्गणा के वर्ग विषे अपनी-अपनी प्रथम वर्गणा के वर्ग तै एक-एक अविभागप्रतिच्छेद वधता अनुक्रम तै जानना । असे स्पर्धकनि के समूह का नाम प्रथम गुणहानि है । इस प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषे जेता परमाणुरूप वर्ग पाइए है, तिनितै एक-एक चय प्रमाण घटते द्वितीयादि वर्गणानि विषे वर्ग जानने । असे क्रम तै जहां प्रथम गुणहानि की वर्गणा के वर्गनि तै आधा जिस वर्गणा विषे वर्ग होइ, तहांतै दूसरी गुणहानि का प्रारंभ भया । तहां द्रव्य, चय आदि का प्रमाण आधा-आधा जानना । इस क्रम तै जेती गुणहानि सर्व कर्म परमाणुनि विषे पाइए, तिनिके समूह का नाम नानागुणहानि है ।

इहां वर्गणादि विषे परमाणुनि का प्रमाण-ल्यावने कौ द्रव्य<sup>①</sup>, स्थिति<sup>②</sup>, गुण-<sup>③</sup>हानि, दोगुणहानि, नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि ए छह जानने ।

तहां सर्व कर्म परमाणुनि का प्रमाण त्रिकोण यंत्र के अनुसारि स्थिति संबंधी किंचित्ऊन द्व्यर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्ध प्रमाण, सो सर्वद्रव्य जानना ।

बहुरि नानागुणहानि करि गुणहानि आयाम कौ गुणै जो सर्वद्रव्य विषे वर्गणानि का प्रमाण होई, सो स्थिति जाननी ।

बहुरि एक गुणहानि विषे अनंतगुणा अनंत प्रमाण वर्गणा पाइए है, सो गुणहानि आयाम जानना ।

याकौ दूरा किए जो प्रमाण होई, सो दोगुणहानि है ।

बहुरि सर्वद्रव्य विषे जे गुणहानि प्रमाण अनंत पाइए, तिनिका नाम नाना-गुणहानि है; जातै दोय का गुणकार रूप घटता-घटता जाविषे द्रव्यादिक पाइए, सो गुणहानि; अनेक जो गुणहानि, सो नानागुणहानि जानना ।

बहुरि नानागुणहानि प्रमाण दुये मांडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण होई, सो अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना ।

तहा एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए जो प्रमाण होई, सो अंत की गुणहानि के द्रव्य का प्रमाण है । यातै दूरा-दूरा प्रथम गुणहानि पर्यन्त द्रव्य का प्रमाण है । बहुरि 'दिवड्गुणहानिभाजिदे पढमा' इस सूत्र करि साधिक डचोढ गुणहानि आयाम का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए जो प्रमाण होइ, सोई प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषे परमाणुनि का प्रमाण है । बहुरि याकौ दो गुणहानि का भाग दीए चय का प्रमाण आवै है, सो द्वितीयादि वर्गणानि विषे एक-एक चय घटता परमाणुनि का प्रमाण जानना । अैसे क्रम तै जहा प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा तै जिस वर्गणा विषे आधा परमाणुनि का प्रमाण है. सो द्वितीय गुणहानि की प्रथम वर्गणा है । याके पहले जेती वर्गणा भई, ते सर्व प्रथम गुणहानि संबंधी जाननी ।

बहुरि इहां द्वितीय गुणहानि विषे भी द्वितीयादि वर्गणानि विषे एक-एक चय घटता परमाणुनि का प्रमाण जानना । इहा द्रव्य, चय आदि का प्रमाण प्रथम गुण-

हानि तै सर्वत्र आधा-आधा जानना, अैसे क्रम तै सर्वद्रव्य विषै नानागुणहानि अनंत हैं । बहुरि इहां प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा तै लगाइ अंत वर्गणा पर्यन्त जे वर्गणा, तिनिके वर्गनि विषै अविभागप्रतिच्छेदनि का प्रमाण प्रवाहरूप पूर्वोक्त प्रकार अनुक्रमरूप बधता-बधता जानना ।

अब इस कथन कौ अंकसंदृष्टि करि दिखाइए है ।

सर्वद्रव्य इकतीस सै ३१००, स्थिति चालीस ४०, गुणहानि आयाम आठ ८, दोगुण हानि सोलह १६, नानागुणहानि पांच ५, अन्योन्याभ्यस्त राशि वत्तीस ३२, तहां एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि ३१ का भाग सर्वद्रव्य ३१०० कौ दीएं सौ पाये, सो अंत गुणहानि का द्रव्य है । यातै दूणा-दूणा प्रथम गुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना । १६००, ८००, ४००, २००, १०० । बहुरि साधिक ड्योढ गुणहानि का भाग सर्वद्रव्य कौ दीए, दोय सै छप्पन (२५६) पाए, सो प्रथम गुणहानि विषै प्रथम गुणहानि की प्रथम वर्गणा विषै इतना-इतना घटता वर्ग जानना ऐसे वर्गनि का प्रमाण है । याकौ दो

गुणहानि सोलह (१६) का भाग दीए सोलह पाए, सो चय का प्रमाण है । सो द्वितीयादि वर्गणा विषै इतना-इतना घटता वर्ग जानना । अैसे आठ वर्गणा प्रथम गुणहानि विषै जाननी । बहुरि द्वितीय गुणहानि विषै आठ वर्गणा हैं । तिनिके विषै पूर्व तै द्रव्य वा चय का प्रमाण आधा-आधा जानना । अैसे आधा-आधा क्रम करि पांच नानागुणहानि सर्व द्रव्य विषै हो हैं ।

अंकसंदृष्टी अपेक्षा गुणहानि की वर्गणानि विषै वर्गनि के प्रमाण का यंत्र है ।

	प्रथम	द्वितीय	तृतीय	चतुर्थ	पंचम
गुणहानि	गुणहानि	गुणहानि	गुणहानि	गुणहानि	गुणहानि
१४४	७२	३६	१८	९	
१६०	८०	४०	२०	१०	
१७६	८८	४४	२२	११	
१९२	९६	४८	२४	१२	
२०८	१०४	५२	२६	१३	
२२४	११२	५६	२८	१४	
२४०	१२०	६०	३०	१५	
२५६	१२८	६४	३२	१६	

इनकी रचना —

जोड़	जोड़	जोड़	जोड़	जोड़
१६००	८००	४००	२००	१००

बहुिर च्यारि-च्यारि वर्गणा का समूह एक-एक स्पर्धक है, तातै एक-एक गुणहानि विषै दोय-दोय स्पर्धक हैं। तहां प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथमवर्गणा का वर्गनि विषै आठ-आठ अविभागप्रतिच्छेद पाइये है। दूसरी वर्गणा का वर्गनि विषै नव-नव, तीसरी का विषै दश-दश, चौथी का विषै ग्यारह-ग्यारह जानने। बहुरि प्रथम गुणहानि का द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का वर्गनि विषै सोलह-सोलह, दूसरीकानि विषै सतरह-सतरह, तीसरीकानि विषै अठारह-अठारह, चौथीकानि विषै उगणीस-उगणीस अविभागप्रतिच्छेद है। बहुरि द्वितीय गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के वर्गनि विषै चौईस-चौईस, ऊपरि एक-एक बधती ऐसे ही अनंतगुणहानि का अंत स्पर्धक की अन्त वर्गणा पर्यन्त अनुक्रम जानना। इनकी रचना -

### अंकसद्विष्ट अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेदनि की रचना का यंत्र

16  
18

प्रथम गुणहानि		द्वितीय गुणहानि		तृतीय गुणहानि		चतुर्थ गुणहानि		पञ्चम गुणहानि	
प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक	प्रथम स्पर्धक	द्वितीय स्पर्धक
११	१६	२७	३५	४३	५१	५६	६७	७५	८३
१०।१०	१८।१८	२६।२६	३४।३४	४२।४२	५०।५०	५८।५८	६६।६६	७४।७४	८२।८२
९।९।९	१७।१७।१७	२५।२५।२५	३३।३३।३३	४१।४१।४१	४९।४९।४९	५७।५७।५७	६५।६५।६५	७३।७३।७३	८१।८१।८१
८।८।८।८	१६।१६।१६।१६	२४।२४।२४।२४	३२।३२।३२।३२	४०।४०।४०।४०	४८।४८।४८।४८	५६।५६।५६।५६	६४।६४।६४।६४	७२।७२।७२।७२	८०।८०।८०।८०

इहा च्यारि, तीन आदि स्थानकनि विषे आठ, नव आदि अविभागप्रतिच्छेद स्थापे है । तिनकी सहनानी करि अपनी-अपनी वर्गणा विषे जेते-जेते वर्ग हैं; तितने-तितने स्थानकनि विषे तिन अविभागप्रतिच्छेदनि का स्थापन जानना ।

ऐसै अंकसंदृष्टि करि जैसे दृष्टांत कहा, तैसे ही पूर्वोक्त यथार्थ कथन का अवधारण करना । या प्रकार कहे जे अनुभागरूप स्पर्धक, ते पूर्वे संसार अवस्था विषे जीवनि के संभवै है; ताते इनिकौ पूर्वस्पर्धक कहिये । इनि विषे जघन्य स्पर्धक ते लगाइ लताभागादिकरूप स्पर्धक प्रवर्तै है । तिनि विषे लताभागादिरूप केई स्पर्धक देशघाती है । ऊपरि के केई स्पर्धक सर्वघाती है, तिनिका विभाग आगे लिखेंगे । बहुरि अनिवृत्तिकरण परिणामनि करि कबहु पूर्वे न भए ऐसे अपूर्वस्पर्धक हो है । तिनि विषे जघन्य पूर्वस्पर्धक ते भी अनंतवे भाग उत्कृष्ट अपूर्व स्पर्धक विषे भी अनुभाग शक्ति पाइए है । विशुद्धता का माहात्म्य तै अनुभाग शक्ति घटाए कर्म परमाणुनि कौ ऐसै परिणामावै है । इहां विशेष इतना ही भया — जो पूर्वस्पर्धक की जघन्य वर्गणा के वर्ग ते इस अपूर्वस्पर्धक की अंत वर्गणा के वर्ग विषे अनंतवे भाग अनुभाग है । बहुरि ताते अन्य वर्गणानि विषे अनुभाग घटता है, ताका विधान पूर्वस्पर्धकवत् ही जानना । बहुरि वर्गणानि विषे परमाणुनि का प्रमाण पूर्वस्पर्धक की जघन्य वर्गणा ते एक-एक चय वधता पूर्व स्पर्धकवत् क्रम ते जानना । इहां चय का प्रमाण पूर्वस्पर्धक की आदि गुणहानि का चय ते दूरा है । बहुरि पीछे अनिवृत्तिकरण के परिणामनि ही करि कृष्टि करिये है । अनुभाग का कृष करना, घटावना, सो कृष्टि कहिये । तहां संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ का अनुभाग घटाइ स्थूल खण्ड करना, सो वादरकृष्टि है । तहां उत्कृष्ट वादरकृष्टि विषे भी जघन्य अपूर्वस्पर्धक ते भी अनंतगुणा अनुभाग घटता हो है । तहां च्यारों कषायनि की वारह संग्रहकृष्टि हो है । अर एक-एक संग्रहकृष्टि के विषे अनन्त-अनन्त अतर कृष्टि हो है । तिनि विषे लोभ की प्रथम संग्रह की प्रथमकृष्टि ते लगाइ क्रोध की तृतीय संग्रह की अतकृष्टि पर्यन्त क्रम ते अनन्तगुणा-अनन्तगुणा अनुभाग है । तिस क्रोध की तृतीय कृष्टि की अतकृष्टि ते अपूर्वस्पर्धकनि की प्रथम वर्गणा विषे अनन्तगुणा अनुभाग है । सो स्पर्धकनि विषे तौ पूर्वोक्त प्रकार अनुभाग का अनुक्रम था । इहां अनन्तगुणा घटता अनुभाग का क्रम भया, सोई स्पर्धक अर कृष्टि विषे विशेष जानना । बहुरि तहां परमाणुनि का प्रमाण लोभ की प्रथम संग्रह की जघन्य कृष्टि विषे यथासभव बहुत है, ताते क्रोध की तृतीय संग्रह की अंतकृष्टि पर्यन्त चय घटता क्रम लीए है । सो याका विशेष आगे लिखेंगे, सो जानना । सो यह अपूर्व

स्पर्धक अर बादरकृष्टि क्षपक श्रेणी विषे ही हो है, उपशम श्रेणी विषे न हो है ।  
 बहुरि अनिवृत्तिकरण के परिणामनि करि ही कषायनि के सर्व परमाणु आनुपूर्वी  
 संक्रमादि विधान करि एक लोभरूप परिणमाइ बादरकृष्टिगत लोभरूप करि पीछे  
 तिनिकौ सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणमावै है, सो सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त भया लोभ, ताका  
 जघन्य बादरकृष्टि तै भी अनतवे भाग उत्कृष्ट सूक्ष्मकृष्टि विषे अनुभाग हो है ।  
 तहां अनंती कृष्टिनि विषे क्रम तै अनंतगुणा अनुभाग घटता है । बहुरि परमाणुनि  
 का प्रमाण जघन्य कृष्टि तै लगाइ उत्कृष्ट कृष्टि पर्यन्त चय घटता क्रम लीए है,  
 सो विशेष आगे लिखैगे सो जानना । सो यहु विधान क्षपक श्रेणी विषे हो है ।

उपशम श्रेणी विषे पूर्वस्पर्धकरूप जे लोभ के केई परमाणु, तिन ही कौ  
 सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमावै है, ताका विशेष आगे लिखैगे ।

बहुरि अैसे अनिवृत्तिकरण विषे करी जो सत्ता विषे सूक्ष्म कृष्टि, सो जहां  
 उदयरूप होइ प्रवर्ते, तहां सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान हो है अैसा जानना ।

१) अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा ।  
 सो सुह्रमसांपराओ, जहखादेणूराओ किंचि ॥६०॥  
 अणुलोभं विदन्, जीवः उपशामको व क्षपको वा ।  
 स सूक्ष्मसांपरायो, यथाख्यातेनोनः किंचित् ॥६०॥

टीका — अनिवृत्तिकरण काल का अत समय के अनतरि सूक्ष्मसांपराय  
 गुणस्थान कौ पाइ, सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त जो लोभ, ताके उदय कौ भोगवता संता  
 उपशमावनेवाला वा क्षय करने वाला जीव, सो सूक्ष्मसांपराय है; अैसा कहिए है ।

सोई सामायिक, छेदोपस्थापना संयम की विशुद्धता तै अति अधिक विशुद्धता-  
 मय जो सूक्ष्मसांपराय संयम, तीहिकरि संयुक्त जो जीव, सो यथाख्यातचारित्र  
 संयुक्त जीव तै किंचित् मात्र ही हीन है । जातै सूक्ष्म कहिए सूक्ष्म कृष्टि कौ प्राप्त  
 अैसा जो सांपराय कहिए लोभ कषाय, सो जाकै पाइए, सो सूक्ष्मसांपराय है अैसा  
 सार्थक नाम है ।

आगे, उपशांत कषाय गुणस्थान के स्वरूप का निर्देश करे है ।

१) कदकफलजुदजलं ? वा, सरए सरवाणियं व रिम्मलयं ।  
 सयलोवसंतमोहो, उवसंतकसायओ होदि ॥६१॥ २

१. 'कदकफलजुदजल' के स्थान पर 'सकयगहल जल' ऐसा पाठान्तर है ।

२. षट्खण्डागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ १६०, गथा १२२

कतकफलयुतजलं वा शरदि सरःपानीयं व निर्मलं ।

सकलोपशांतमोह, उपशांत कषायको भवति ॥६१॥

टीका - कतकफल का चूर्ण करि संयुक्त जो जल, सो जैसे प्रसन्न हो है अथवा मेघपटल रहित जो शरत्काल, तीहि विषे जैसे सरोवर का पानी प्रसन्न हो है, ऊपरि तें निर्मल हो है; तैसे समस्तपने करि उपशांत भया है मोहनीय कर्म जाका, सो उपशांत कषाय है । उपशांतः कहिए समस्तपनेकरि उदय होने को अयोग्य कीए है कषाय-नोकषाय जानें, सो उपशांत कषाय है । ऐसी निरुक्त करि अत्यंत प्रसन्न-चित्तपना सूचन किया है ।

आगे क्षीण कषाय गुणस्थान का स्वरूप को प्ररूपै है -

रिगस्सेसखीणमोहो, फलिहामलभायणुदयसमचित्तो ।

खीणकसाओ भण्णदि, रिगगंथो वीयरार्येहिं ॥६२॥<sup>१</sup>

निश्शेषक्षीणमोहः, स्फटिकामलभाजनोदकसमचित्तः ।

क्षीणकषायो भण्यते, निर्ग्रन्थो वीतरागैः ॥६२॥

टीका - अवशेष रहित क्षीण कहिए प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश करि रहित भई है मोहनीय कर्म की प्रकृति जाके; सो निःशेष क्षीणकषाय है । जैसे निःशेष मोह प्रकृतिनि का सत्त्व करि रहित जीव, सो क्षीण कषाय है । ता कारण तें स्फटिक का भाजन विषे तिष्ठता जल सदृश प्रसन्न - सर्वथा निर्मल है चित्त जाका ऐसा क्षीणकषाय जीव है, ऐसे वीतराग सर्वजदेवनि करि कहिए है । सोई परमार्थ करि निर्ग्रन्थ है । उपशांत कषाय भी यथाख्यात चारित्र की समानता करि निर्ग्रन्थ है, ऐसे जिनवचन विषे प्रतिपादन करिए है ।

भावार्थ - उपशांत कषाय के तौ मोह के उदय का अभाव है, सत्त्व विद्यमान है । वहुनि क्षीणकषाय के उदय, सत्त्व सर्वथा नष्ट भए हैं; परन्तु दोऊनि के परिणामनि विषे कषायनि का अभाव है । ताते दोऊनि के यथाख्यात चारित्र समान है । तीहिकरि दोऊ वाह्य, अभ्यंतर परिग्रह रहित निर्ग्रन्थ कहे है ।

आगे सयोगकेवलगुणस्थान को गाथा दोय करि कहै है -

केवलगाराणदिवायरकिरणकलावप्पणासियण्णाराणो ।

रावकेवललद्धुग्गमसुजरिणियपरमप्पववएसो ॥६३॥<sup>२</sup>

१. पट्ठगंठागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १६१, गाथा १२३

२. पट्ठगंठागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १६२, गाथा १२४

केवलज्ञानदिवाकरकिरणकलापप्रणाशिताज्ञानः ।

नवकेवललब्ध्युद्गमसुजनितपरमात्मव्यपदेशः ॥६३॥

टीका — केवलज्ञानदिवाकरकिरणकलापप्रणाशिताज्ञानः कहिए केवलज्ञान-  
रूपी दिवाकर जो सूर्य, ताके किरणानि का कलाप कहिए समूह, पदार्थनि के प्रकाशने  
विषै प्रवीण दिव्यध्वनि के विशेष, तिनकरि प्रनष्ट कीया है शिष्य जननि का अज्ञानां-  
धकार जानै असा सयोगकेवली है । इस विशेषण करि सयोगी भट्टारक कै भव्यलोक  
कों उपकारीपना है लक्षण जाका, असी परार्थरूप संपदा कही । बहुरि नवकेवल-  
लब्ध्युद्गमसुजनितपरमात्मव्यपदेशः' कहिए क्षायिकसम्यक्त्व, क्षायिकचारित्र, ज्ञान,  
दर्शन, दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्यरूप लक्षण धरै जे नव केवललब्धि, तिनिका  
उदय कहिए प्रकट होना, ताकरि सुजनित कहिए वस्तुवृत्ति करि निपज्या है परमात्मा,  
असा व्यपदेश कहिए नाम जाका, असा सयोगकेवली है । इस विशेषण करि भगवान  
३ अर्हत्परमेष्ठी कै अनंत ज्ञानादि लक्षण धरै स्वार्थरूप संपदा दिखाइए है ।

असहायणाणदंसणसहिओ इदि केवली हु जोगेण ।

जुत्तो त्ति सजोगिजिणो,<sup>१</sup> अणाइणिहणारिसे उत्तो ॥६४॥ <sup>२</sup>

असहायज्ञानदर्शनसहितः इति केवली हि योगेन ।

युक्त इति सयोगिजिनः अनादिनिधनार्थे उक्तः ॥६४॥

टीका — योग करि सहित सो सयोग, अर परसहाय रहित जो ज्ञान-दर्शन,  
तिनिकरि सहित सो केवली, सयोग सो ही केवली, सो सयोगकेवली । बहुरि घाति-  
कर्मनि का निर्मूल नाशकर्ता, सो जिन सयोगकेवली सोई जिन, सो सयोगकेवलजिन  
कहिए । असै अनादि-निधन ऋषिप्रणीत आगम विषै कहा है ।

१५ आगै अयोग केवलि गुणस्थान कौ निरूपै है —

सीलेसिं संपत्तो, णिरुद्धणिस्सेसआसवो जीवो ।

कम्मरयविप्पमुक्को, गयजोगो केवली होदि ॥६५॥ <sup>३</sup>

१. 'सजोगिजिणो' इसके स्थान पर 'सजोगो इदि' ऐसा पाठान्तर है ।

२. पट्खण्डागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ १६३, गाथा १२५

३. पट्खण्डागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ २००, गाथा १२६



शीलेश्यं संप्राप्तो निरुद्धनिशेषास्त्रवो जीवः ।

कर्मरजोविप्रमुक्तो गतयोगः केवली भवति ॥६५॥

टीका - अठारह हजार शील का स्वामित्वपना कौ प्राप्त भया । बहुरि निरोधे है समस्त आस्त्रव जानै; तातै नवीन बध्यमान कर्मरूपी रज करि सर्वथा रहित भया । बहुरि मन, वचन, काय योग करि रहितपना तै अयोग भया । सो नाही विद्यमान है योग जाकै, असा अयोग अर अयोग सोई केवली, सो अयोग केवली भगवान परमेष्ठी जीव असा है ।

या प्रकार कहे चौदह गुणस्थान, तिनिविषै अपने आयु बिना सात कर्मनि की गुणश्रेणी निर्जरा संभवै है । ताका अर तिस गुणश्रेणी निर्जरा का काल विशेष कौ गाथा दोय करि कहै है -

सम्पत्तुप्पत्तौ, सावयविरदे अणंतकर्मसे ।

दंसणमोहद्वखगे, कसायउदसामगे य उवसंते ॥६६॥

खदगे य खीणमोहे, जिणेषु दव्वा असंखगुणिकमा ।

तद्विदरोया काला, संखेज्जगुणिकमा होति ॥६७॥

सम्यक्त्वोत्पत्तौ, श्रावकविरते अनंतकर्मणि ।

दर्शनमोहक्षपके, कषायोपशमके चोपशान्ते ॥६८॥

क्षपके च क्षीणमोहे, जिनेषु द्रव्याण्यसंख्यगुणितक्रमाणि ।

तद्विपरीताः कालाः सख्यातगुणक्रमा भवन्ति ॥६९॥

टीका - प्रथमोपशम सम्यक्त्व की उत्पत्ति जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व कौ कारण तीन करणनि के परिणामनि का अत समय, तीहिविषै प्रवर्तमान असा जो विशुद्धता का विषेय धरै मिथ्यादृष्टि जीव, ताकै आयु बिना अवशेष जानावरणादि कर्मनि का जो गुणश्रेणी निर्जरा का द्रव्य है; तातै देशसंयत कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यातगुणा है । बहुरि तातै सकलसंयमी के गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । तातै अनंतानुबंधी कषाय का विसयोजन करनहारा जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । तातै दर्शन मोह का क्षय करने वाले कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै कषाय उपशम करने वाले अपूर्वकरणादि

तीन गुणस्थानवर्ती जीवनि कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै उपशात कषाय गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै क्षपक श्रेणीवाले अपूर्वकरणादि तीन गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै क्षीण कषाय गुणस्थानवर्ती जीव कै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै समुद्घात रहित जो स्वस्थान केवली जिन, ताकै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । बहुरि तातै समुद्घात सहित जो स्वस्थान समुद्घात केवली जिन, ताकै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य असंख्यात गुणा है । असै ग्यारह स्थानकनि विषै गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य के स्थान-स्थान प्रति असंख्यातगुणापना कह्या ।

अब तिस गुणश्रेणी निर्जरा द्रव्य का प्रमाण कहिए है । कर्मप्रकृतिरूप परिणए पुद्गल परमाणु, तिनका नाम इहां द्रव्य जानना । अनादि संसार के हेतु तै बंध का संबध करि बंधरूप भया जो जगच्छ्रेणी का घनमात्र लोक, तीहि प्रमाण एक जीव के प्रदेशनि विषै तिष्ठता ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति संबंधी सत्तारूप सर्वद्रव्य, सो आगै कहिएगा जो त्रिकोण रचना, ताका अभिप्राय करि किचित् ऊन ड्योढ गुणहानि आयाम का प्रमाण करि समयप्रबद्ध का प्रमाण कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना है ।

बहुरि इस विषै आयु कर्म का स्तोक द्रव्य है, तातै या विषै किचित् ऊन किए अवशेष द्रव्य सात कर्मनि का है । तातै याकौ सात का भाग दीए एक भाग प्रमाण ज्ञानावरण कर्म का द्रव्य हो है । बहुरि याकौ देशघाती, सर्वघाती द्रव्य का विभाग के अर्थ जिनदेव करि देखा यथासंभव अनंत, ताका भाग दीए एक भाग प्रमाण तौ सर्वघाती केवलज्ञानावरण का द्रव्य है । अवशेष बहुभाग प्रमाण मति-ज्ञानादि देशघाति प्रकृतिनि का द्रव्य है । बहुरि इस देशघाती द्रव्य कौ मति, श्रुत, अवधि, मन.पर्यय, ज्ञानावरणरूप च्यारि देशघाती प्रकृतिनि का विभाग के अर्थ च्यारि का भाग दीए एक भाग प्रमाण मतिज्ञानावरण का द्रव्य हो है ।

भावार्थ — इहा मतिज्ञानावरण के द्रव्य की गुणश्रेणी का उदाहरण करि कथन कीया है । तातै मतिज्ञानावरण द्रव्य का ही ग्रहण कीया है । असै ही अन्य प्रकृतिनि का भी यथासंभव जानि लेना । बहुरि इस मतिज्ञानावरण द्रव्य कौ अपकर्षण भागहार का भाग देइ, तहां बहुभाग तौ तैसे ही तिष्ठै है; असा जानि एक भाग का ग्रहण कीया ।

वहुरि गुणश्रेणी आयाम का काल ताते विपरीत उल्टा अनुक्रम धरै है, सोई कहिए है - 'समुद्घात जिनका आदि देकरि विषुद्ध मिथ्यादृष्टि पर्यंत गुणश्रेणी आयाम का काल क्रम करि संख्यातगुणा-संख्यातगुणा है' । समुद्घात जिनका गुणश्रेणी आयामकाल अन्तर्मुहूर्तमात्र है । ताते स्वस्थान जिनका गुणश्रेणी आयामकाल संख्यात गुणा है । ताते क्षीणमोह का संख्यातगुणा है । अैसे ही क्रम तें पीछे तें क्षपकश्रेणी वाले आदि विषे संख्यात-संख्यात गुणा जानना ।

तहां अंत विषे बहुत बार संख्यातगुणा भया, ती भी करण परिणाम संयुक्त विषुद्ध मिथ्यादृष्टि के गुणश्रेणी आयाम का काल अंतर्मुहूर्तमात्र ही है, अधिक नाही । काहे तें ?

जाते अंतर्मुहूर्त के भेद बहुत हैं । तहां जघन्य अंतर्मुहूर्त एक आवली प्रमाण है, सो सर्व तें स्तोक है । वहुरि याते एक समय अधिक आवली तें लगाइ एक-एक समय वधता मध्यम अंतर्मुहूर्त होइ । अंत का उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त एक समय घाटि दोय घटिकारूप मुहूर्त प्रमाण है । तहां ताके उच्छ्वास तीन हजार सात सैं तेहत्तरि अर एक उच्छ्वास की आवली संख्यात, याते दोय बार संख्यातगुणी आवली प्रमाण उत्कृष्ट मुहूर्त है । वहुरि - 'आदि अंते सुद्धे वद्धिहृदे रुवसंजुदे ठाणे' इस सूत्र करि आवलीमात्र जघन्य अंतर्मुहूर्त कौ दोय बार संख्यातगुणित आवली प्रमाण उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त विषे घटाइ, वृद्धि का प्रमाण एक समय का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामें एक और जोड़ें जो प्रमाण होइ, तितने अंतर्मुहूर्त के भेद संख्यात आवली प्रमाण हो हैं ।

आगे अैसे कर्म सहित जीवनि का गुणस्थानकनि का आश्रय लीए स्वरूप अर तिस-तिस का कर्म की निर्जरा का द्रव्य वा काल आयाम का प्रमाण, ताका निरूपण करि अब निर्जरे हैं सर्व कर्म जिनकरि अैसे जे सिद्ध परमेष्ठी, तिनका स्वरूप कौ अन्यमत के विवाद का निराकरण लीए गाथा दोय करि कहैं हैं -

अट्ठवियकम्मवियला, सीदीभूदा गिरंजणा गिच्छा ।

अट्ठगुणा किदकिच्छा, लोयगगिवासिणो सिद्धा ॥६८॥<sup>१</sup>

अष्टवियकर्मविकलाः, जीतोभूता निरंजना नित्याः ।

अष्टगुणाः कृतकृत्याः, लोकाग्रनिवासिनः सिद्धाः ॥६८॥

१. पट्ठंङगम - वचना पुस्तक १, पृष्ठ २०१, सूत्र २३, गाथा १२७

टीका — केवल कहे जे गुणस्थानवर्ती जीव, तेई नाही है सिद्ध कहिये अपने आत्मस्वरूप की प्राप्तिरूप लक्षण धरै जो सिद्धि, ताकरि सयुक्त मुक्त जीव भी लोक विषै है । ते कैसे है ? अष्टविधकर्मविकलाः कहिये अनेक प्रकार उत्तर प्रकृतिरूप भेद जिन विषै गर्भित ऐसे जो ज्ञानावरणादिक आठ प्रकार कर्म आठ गुणनि के प्रतिपक्षी, तिनका सर्वथा क्षय करि प्रतिपक्ष रहित भए है । कैसे आठ कर्म आठ गुणनि के प्रतिपक्षी है ? सो कहै है —

उक्तं च

मोहो खाइय सम्मं, केवलणाणं च केवलालोयं ।  
हणदि उ आवरणदुगं, अणंतविरयं हणेदि विग्घं तु ॥  
सुहमं च णामकम्मं, हणेदि, आऊ हणेदि अवगहरां ।  
अगुरुलहुगं गोदं अच्चाबाहं हणेइ वेयणियं ॥

इनिका अर्थ — मोहकर्म क्षायिक सम्यक्त्व कौ घातै है । केवलज्ञान अर केवलदर्शन कौ आवरणद्विक जो ज्ञानावरण-दर्शनावरण, सो घातै है । अनंतवीर्य कौ विघन जो अंतराय कर्म, सो घातै है । सूक्ष्मगुण कौ नाम कर्म घातै है । आयुकर्म अवगाहन गुण कौ घातै है । अगुरुलघु कौ गोत्र कर्म घातै है । अव्याबाध कौ वेदनीयकर्म घातै है । ऐसै आठ गुणनि के प्रतिपक्षी आठ कर्म जानने ।

इस विशेषण करि जीव के मुक्ति नाहीं है, ऐसा मीमांसक मत, बहुरि सर्वदा कर्ममलनि करि स्पर्शा नाही, तातै सदाकाल मुक्त ही है, सदा ही ईश्वर है ऐसा सदाशिव मत, सो निराकरण किया है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? शीतीभूता कहिये जन्म-मरणादिरूप सहज दु ख अर रोगादिक तै निपज्या शरीर दु ख अर सर्पादिक तै उपज्या आगंतुक दु ख अर आकुल-तादिरूप मानसदु ख इत्यादि नानाप्रकार संसार सबधी दु ख, तिनकी जो वेदना, सोई भया आतप, ताका सर्वथा नाश करि शीतल भए है, सुखी भए है । इस विशेषण करि मुक्ति विषै आत्मा के सुख का अभाव है, ऐसै कहता जो साध्यमत, सो निराकरण किया है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? निरंजनाः कहिये नवीन आस्रवरूप जो कर्ममल, सो ही भया अजन, ताकरि रहित है । इस विशेषण करि मुक्ति भए पीछै, बहुरि कर्म अंजन का सयोग करि संसार हो है, ऐसै कहता जो सन्यासी मत, सो निराकरण किया है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? नित्याः कहिये यद्यपि समय-समयवर्ती अर्थपर्यायिनि करि परिणामए सिद्ध अपने विषे उत्पाद, व्यय कौ करे है; तथापि विशुद्ध चैतन्य स्वभाव का सामान्यभावरूप जो द्रव्य का आकार, सो अन्वयरूप है, भिन्न न हो है, ताके माहात्म्य तै सर्वकाल विषे अविनाशीपणा कौ आश्रित है, तातै ते सिद्ध नित्यपना कौ नाही छोडै है । इस विशेषण करि क्षण-क्षण प्रति विनाशीक चैतन्य के पर्याय ते, एक संतानवर्ती है, परमार्थ तै कोई नित्य द्रव्य नाही है, ऐसे कहता जो बौद्धमती की प्रतिज्ञा, सो निराकरण करी है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? अष्टगुणाः कहिए क्षायिक सम्यक्त्व, ज्ञान, दर्शन, वीर्य, सूक्ष्मत्व, अवगाहन, अगुरुलघुत्व, अव्याबाध नाम धारक जे आठ गुण, तिनकरि संयुक्त है । सो यहु विशेषण उपलक्षणरूप है, ताकरि तिनि गुणनि के अनुसार अनंतानंत गुणनि का तिन ही विषे अंतर्भूतपना जानना । इस विशेषण करि ज्ञानादि गुणनि का अत्यन्त अभाव होना, सोई आत्मा के मुक्ति है ऐसे कहता जो नैयायिक अर वैशेषिक मत का अभिप्राय, सो निराकरण किया है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? कृतकृत्याः कहिए संपूर्ण किया है कृत्य कहिए सकल कर्म का नाश अर ताका कारण चारित्रादिक जिनकरि अैसे है । इस विशेषण करि ईश्वर सदा मुक्त है, तथापि जगत का निर्माण विषे आदर किया है, तीहि करि कृतकृत्य नाही, वाकै भी किछू करना है, अैसे कहता जो ईश्वर सृष्टिवाद का अभिप्राय, सो निराकरण किया है ।

बहुरि कैसे है सिद्ध ? लोकाग्रनिवासिनः कहिए विलोकिए है जीवादि पदार्थ जाविषे, अैसा जो तीन लोक, ताका अग्रभाग, जो तनुवात का भी अंत, तीहिविषे निवासी है; तिष्ठै है । यद्यपि कर्म क्षय जहां किया, तिस क्षेत्र तै ऊपरि ही कर्मक्षय के अनंतरि ऊर्ध्वगमन स्वभाव तै ते गमन करै है; तथापि लोक का अग्रभाग पर्यंत न हो है, अैसै लोक का अग्रभाग विषे ही निवासीपणा तिन सिद्धनि के युक्त है । अन्यथा कहिए तां लोक-अलोक के विभाग का अभाव होइ । इस विशेषण करि आत्मा के ऊर्ध्वगमन स्वभाव तै मुक्त अवस्था विषे कही भी विश्राम के अभाव तै उपरि-उपरि गमन हुवा ही करै है; अैसे कहता जो मांडलिक मत, सो निराकरण किया है ।

आगे श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव ते 'अष्टविधकर्मविकलाः' इत्यादि सात विशेषणानि का प्रयोजन दिखावै है —

सदाशिवसंख्यो मक्कडि, बुद्धो रौयाइयो य वेसेसी ।

ईसरमंडलिदंसण,—विदूसणट्ठं कयं एदं ॥ ६६ ॥

सदाशिवः सांख्यः मस्करी, बुद्धो नैयायिकश्च वैशेषिकः ।

ईश्वरमंडलिदर्शनविदूषणार्थं कृतमेतत् ॥ ३९ ॥

टीका — सदाशिवमत, सांख्यमत, मस्करी सन्यासी मत, बौद्धमत, नैयायिक मत, वैशेषिकमत, ईश्वरमत, मंडलिमत ए जु दर्शन कहिए मत, तिनके दूषने के अर्थ ए पूर्वोक्त विशेषण कीए है ।

उक्तं च —

सदाशिवः सदाकर्म, सांख्यो मुक्तं सुखोज्झितम् ।

मस्करी किल मुक्तानां, मन्यते पुनरागतिम् ॥

क्षणिकं निर्गुणं चैव, बुद्धो यौगश्च मन्यते ।

कृतकृत्यं तमीशानो, मंडली चोर्ध्वगामिनम् ॥

इनिके अर्थ — सदाशिव मतवाला सदा कर्म रहित मानै है । सांख्य मतवाला मुक्त जीव कौ सुख रहित मानै है । मस्करी सन्यासी, सो मुक्त जीव के संसार विषे बहुरि आवना मानै है । बहुरि बौद्ध अर योग मतवाले क्षणिक अर निर्गुण आत्मा कौ मानै है । बहुरि ईशान जो सृष्टिवादी, सो ईश्वर कौ अकृतकृत्य मानै है । बहुरि मांडलिक आत्मा कौ ऊर्ध्वगमन रूप ही मानै है । असै माननेवाले मतनि का पूर्वोक्त विशेषण तै निराकरण करि यथार्थ सिद्धपरमेष्ठी का स्वरूप निरूपण कीया । ते सिद्ध भगवान आनन्दकर्ता होहु ।

इति श्रीआचार्य नेमिवद्र विरचित गोम्मतसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रन्थ की जीव तत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नाम भाषा टीका के विषे जीव काडविषे कही जे वीस प्ररूणा तिन विषे गुणस्थान प्ररूपणा है नाम जाका असा प्रथम अविकार सपूर्ण भया ॥१॥

## दूसरा अधिकार : जीवसमास प्ररूपण

कर्मधातिया जीति जिन, पाय चतुष्टय सारं ।

विश्वस्वरूप प्रकाशियो, नमौ अजित सुखकार ॥

टीका — जैसे गुणस्थान संबन्धी संख्यादिक प्ररूपण के अनन्तर जीवसमास प्ररूपण का रचना संता निरुक्ति पूर्वक सामान्यपन तिस जीवसमास का लक्षण कहें है —

जेहि अणेया जीवा, राज्जन्ते बहुविधा वि तज्जादी ।

ते पुण संगहिदत्था, जीवसमासा त्ति विज्जेया ॥ ७० ॥

येरनेके जीवाज, ज्ञायन्ते बहुविधा अपि तज्जातयः ।

ते पुनः संगृहीतार्था, जीवसमासा इति विज्जेयाः ॥ ७० ॥

टीका — येः कहिए जिनि समान पर्यायरूप धर्मनि करि जीवा कहिए जीव हैं, ते अनेके अपि कहिए यद्यपि बहुत हैं, बहुविधाः कहिए बहुत प्रकार हैं, तथापि तज्जातयः कहिए विवक्षित सामान्यभाव करि एकठा करने तें एक जाति विषे प्राप्त कीए हुए ज्ञायन्ते कहिए जानिए ते कहिये जीव समान पर्यायरूप धर्मसंगृहीतार्थाः कहिए अतर्भूत करी हैं अनेक व्यक्ति जिनिकरि जैसे जीवसमासाः कहिए जीवसमास हैं, ऐसे जानना ।

भावार्थ — जैसे एक गऊ जाति विषे अनेक खांडी, मुडी, सावरी गऊरूप व्यक्ति सास्नादिमन्त्र समान धर्म करि अंतर्गर्भित हो हैं । तैसे एकेद्रियत्वादि जाति विषे अनेक पृथ्वीकायादिक व्यक्ति जिनि एकेद्रियत्वादि युक्त लक्षणनि करि अंतर्गर्भित करिण, निनिका नाम जीवसमास हैं । काहे तें ? जातें 'जीवाः समस्यन्ते यैर्येषु वा ते जीवनमासाः' जीव हैं ते संग्रहरूप करिए जिनि समानधर्मनि करि वा जिनि समान लक्षणनि विषे ते वे समानरूप लक्षण जीवसमास हैं, असी निरुक्ति हो हैं । इस विवेचण करि समस्त संसारी जीवनि का संग्रहरूप ग्रहण करना है प्रयोजन जाका, ऐसा जीवसमास का प्ररूपण है, जो प्रारंभ किया है, ऐसा जानना । अथवा अन्य ग्रंथ कहें हैं 'जीवा अनेया अपि' कहिए यद्यपि जीव अज्ञात हैं । काहे तें ? बहुविध-  
न्यान् कहिए जानें जीव बहुत प्रकार हैं । नानाप्रकार आत्मा की पर्यायरूप व्यक्ति तें

१. 'गर्भ' के स्थान पर 'ग्रन्थ' ऐसा पाठान्तर है ।

२. 'जीवसमास' के स्थान पर 'जीवसमास' ऐसा पाठान्तर है ।

समस्तपना करि केवलज्ञान विना न जानिये है, यातै सर्वपर्यायरूप जीव जानने कौ असमर्थपना है, तथापि तज्जातयः कहिए सोई एकेन्द्रियत्वादिरूप है जाति जिनकी । बहुरि संगृहीतार्थाः कहिए समस्तपना करि गर्भित कीए है, एकठे कीये है व्यक्ति जिनकरि, ऐसे जीव है, तेई जीवसमास है, ऐसा जानना । अथवा अन्य अर्थ कहै है — संगृहीतार्थाः कहिए समस्तपना करि गर्भित करी है, एकठी करी है व्यक्ति जिन करि ऐसी तज्जातयः कहिए ते जाति है । जातै विशेष विना सामान्य न होइ । काहे ते ? जातै असा वचन है — ‘निर्विशेषं हि सामान्यं भवेच्छशविषाणवत्’ याका अर्थ — विशेष रहित जो सामान्य, सो ससा के सीग समान अभावरूप है, तातै संगृहीतार्थ जे वे जाति, तिनका कारणभूत जातिनि करि जीव प्राणी है, ते ‘अनेकेऽपि’ कहिए यद्यपि अनेक है, बहुविधा अपि कहिए बहुत प्रकार है ; तथापि ज्ञायते कहिए जानिए है, ते वे जाति जीवसमास है, असा जानना ।

**भावार्थ** — जीवसमास शब्द के तीन अर्थ कहै । तहां एक अर्थ विषै एकेन्द्रिय-युक्तत्वादि समान धर्मनि कौ जीवसमास कहै । एक अर्थ विषै एकेन्द्रियादि जीवनि कौ जीवसमास कहै । एक अर्थ विषै एकेन्द्रियत्वादि जातिनि कौ जीवसमास कहै, असै विवक्षा भेद करि तीन अर्थ जानने ।

आगै जीवसमास की उत्पत्ति का कारण बहुरि जीवसमास का लक्षण कहै है —

तसचदुजुगाणमज्भे, अविरुद्धेहि जुदजादिकम्मुदये ।

जीवसमासा होंति हु, तद्भवसारिच्छसामण्या ॥ ७१ ॥

त्रसचतुर्युगलानां मध्ये, अविरुद्धैर्युतजातिकम्मोदये ।

जीवसमासा भवन्ति हि, तद्भवसादृश्यसामान्याः ॥ ७२ ॥

**टीका** — त्रस-स्थावर, बहुरि बादर-सूक्ष्म, बहुरि पर्याप्त-अपर्याप्त, बहुरि प्रत्येक-साधारण ऐसे नाम कर्म की प्रकृतिनि के च्यारि युगल है । तिनिके विषै यथासभव परस्पर विरोध रहित जे प्रकृति, तिनिकरि सहित मिल्या ऐसा जो एकेन्द्रियादि जातिरूप नाम कर्म का उदय, ताकौ होते सतै प्रकट भए ऐसे तद्भवसादृश्य सामान्य-रूप जीव के धर्म, ते जीवसमास है ।



तहां तद्भव सामान्य का अर्थ कहै है — विवक्षित एकद्रव्य विषे प्राप्त जो त्रिकाल संबंधी पर्याय, ते भवन्ति कहिए विद्यमान जाविषे होइ, सो तद्भव सामान्य है । ऊर्ध्वता सामान्य का नाम तद्भव सामान्य है । जहां अनेक काल संबंधी पर्याय का ग्रहण होइ, तहां ऊर्ध्वता सामान्य कहिए । जातै काल के समय है, ते ऊपरि-ऊपरि क्रम तै प्रवर्तै है, युगपत् चौड़ाईरूप नाही प्रवर्तै है; तातै इहां नाना काल विषे एक विवक्षित व्यक्ति विषे प्राप्त जे पर्याय, तिनिका अन्वयरूप ऊर्ध्वता सामान्य है; सो एक द्रव्य के आश्रय जो पर्याय, सो अन्वरूप है । जैसे स्थास, कोश, कुशूल, घट, कपालक आदि विषे माटी अन्वरूप आकार धरै द्रव्य है ।

भावार्थ — माटी क्रम तै इतने पर्यायरूप परिणया । प्रथम स्थास कहिए पिडरूप भया । बहुरि कोश कहिए चाक के ऊपरि ऊभा कीया, पिडरूप भया । बहुरि कुशूल कहिए हाथ अगूँठनि करि कीया आकाररूप भया । बहुरि घट कहिए घडारूप भया । बहुरि कपाल कहिए फूटचा घडारूप भया । जैसे एक माटीरूप व्यक्ति विषे अनेक कालवर्ती पर्याय हो हैं । तनि सवनि विषे माटीपना पाइए है । ताकरि सर्वत्र माटी द्रव्य अवलोकिए है । जैसे इहां भी अनेक कालवर्ती अनेक अवस्थानि विषे एकेद्रिय आदि जीव द्रव्यरूप व्यक्ति, सो अन्वरूप द्रव्य जानना । सो याका नाम तद्भव सामान्य वा ऊर्ध्वता सामान्य है । तीहि तद्भव सामान्य करि उपलक्षणरूप संयुक्त जैसे जो सादृश्य सामान्य कहिए, तिर्यक् सामान्य ते जीवसमास हैं । सो एक काल विषे नाना व्यक्तिनि कौ प्राप्त भया असा एक जातिरूप अन्वय, सो तिर्यक् सामान्य है । याका अर्थ यहु — जो समान धर्म का नाम सादृश्य सामान्य है । जैसे खांडी, मूंडी, सावरी इत्यादि नाना प्रकार की व्यक्तिनि विषे गऊपणा समान धर्म है ।

भावार्थ — एक कालवर्ती खांडा, मूंडा, सांवला इत्यादि अनेक वैल, तनि विषे वैलपना समान धर्म है; सो यहु सादृश्य सामान्य है । तैसे एक कालवर्ती पृथ्वीकायिक आदि नाना प्रकार जीवनि विषे एकेद्रिय युक्तपना आदि धर्म हैं, ते समान परिणामरूप है; तातै इनिकौ सादृश्य सामान्य कहिए । जैसे जे सादृश्य सामान्य, तेई जीवसमास हैं; असा तात्पर्य जानना । बहुरि तनि च्यारि युगलनि की आठ प्रकृतिनि विषे एकेद्रिय जाति नाम कर्म सहित त्रस नाम कर्म का उदय विरोधी है । बहुरि द्वीन्द्रियादिक जातिरूप नाम कर्म की च्यारि प्रकृतिनि का उदय सहित स्यावर-सूक्ष्म-साधारण नाम प्रकृतिनि का उदय विरोधी है, अन्य कर्म का

उदय अविरोधी है । बहुरि तैसे ही त्रस नाम कर्म सहित स्थावर-सूक्ष्म-साधारण नाम कर्म का उदय विरोधी है, अन्य कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि स्थावर नाम कर्म सहित त्रस नाम कर्म का उदय एक ही विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि बादर नाम कर्म सहित सूक्ष्म नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष प्रकृतिनि का उदय अविरोधी है । बहुरि सूक्ष्म नाम कर्म सहित त्रस बादर नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि पर्याप्त नाम कर्म सहित अपर्याप्त नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष सर्व कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि अपर्याप्त नाम कर्म का उदय सहित पर्याप्त नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष सर्व कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि प्रत्येक शरीर नाम कर्म का उदय सहित साधारण शरीर नाम कर्म का उदय विरोधी है, अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । बहुरि साधारण शरीर नाम कर्म का उदय सहित प्रत्येक शरीर नाम कर्म का उदय अत्र त्रस नाम कर्म का उदय विरोधी है; अवशेष कर्म का उदय अविरोधी है । अैसे अविरोधी प्रकृतिनि का उदय करि निपजे जे सदृश परिणामरूप धर्म, ते जीवसमास है; अैसा जानना ।

आगै संक्षेप करि जीवसमास के स्थानकनि कौ प्ररूपै है -

**बादरसूक्ष्मेन्द्रिय, बित्तिचउरिन्द्रिय असणिसण्णी य ।**

**पज्जत्तापज्जत्ता, एवं ते चोद्दसा होंति ॥७२॥**

बादरसूक्ष्मेन्द्रियद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिसंज्ञिनश्च ।

पर्याप्तापर्याप्ता, एवं ते चतुर्दश भवन्ति ॥७२॥

टीका - एकेन्द्रिय के बादर, सूक्ष्म ए दोय भेद । बहुरि विकलत्रय के द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ए तीन भेद । बहुरि पंचेन्द्रिय के सज्ञी, असज्ञी ए दोय भेद, अैसे सात जीवभेद भए । ये एक-एक भेद पर्याप्त, अपर्याप्त रूप है । अैसे संक्षेप करि चौदह जीवसमास हो है ।

आगै विस्तार तै जीवसमास कौ प्ररूपै है -

**भूआउतैउवाऊ, णिच्चचदुग्गदिणिगोदथूलिदरा ।**

**पत्तेयपदिट्ठदरा, तसपण पुण्णा अपुण्णदुगा ॥७३॥**

भ्वप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदस्थूलेतराः ।

प्रत्येकप्रतिष्ठेतराः, त्रसपंच पूर्णा अपूर्णद्विकाः ॥७३॥

टीका — पृथ्वीकायिक, अण्कायिक, तेज कायिक, वायुकायिक, अर वनस्पति-कायिकनि विषे दोय भेद नित्यनिगोद साधारण, चतुर्गतिनिगोद साधारण ए छह भेद भए । ते एक-एक भेद बादर, सूक्ष्म करि दोय-दोय भेदरूप है; असै वारह भए । बहुरि प्रत्येक शरीररूप वनस्पतीकायिक के सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित ए दोय भेद है । बहुरि विकलेद्रिय के बेइद्री, तेइद्री, चौइद्री, ए तीव्र भेद । बहुरि पचेद्रिय के संजी पचेद्रिय, असंजी पचेद्रिय ए दोय भेद । ए सर्व मिलि सामान्य अपेक्षा उगणीस जीवसमास हो है । बहुरि ए सर्व ही प्रत्येक पर्याप्तक, निर्वृत्ति अपर्याप्तक, लब्धि अपर्याप्तक असै तीन-तीन भेद लीए हैं । तातै विस्तार तै जीवसमास सत्तावन भेद सयुक्त हो है ।

आगै इनि सत्तावन जीव-भेदनि के गर्भित विशेष दिखावने के अर्थि स्थानादिक च्यारि अधिकार कहै है —

**ठाणेहिं वि जोणीहिं वि, देहोगाहणकुलाण भेदेहिं ।**

**जीवसमासा सव्वे, परुविदव्वा जहाकमसो ॥७४॥**

स्थानैरपि योनिभिरपि, देहावगाहनकुलानां भेदैः ।

जीवसमासाः सर्वे, प्ररूपितव्या यथाक्रमशः ॥७४॥

टीका — स्थानकनि करि, बहुरि योनि भेदनि करि, बहुरि देह की अवगाहना के भेदनि करि, बहुरि कुलभेदनि, करि सर्व ही ते जीवसमास यथाक्रम सिद्धांत परिपाटी का उल्लंघन जैसै न होइ, तैसै प्ररूपण करने योग्य है ।

आगै जैसै उद्देश कहिए नाम का क्रम होइ, तैसै ही निर्देश कहिए स्वरूप निर्णय क्रम करि करना । इस न्याय करि प्रथम कह्या जो जीवसमास विषे स्थानाधिकार, ताकाँ गाथा च्यारि करि कहै है —

**सामण्णजीव तसथावरेसु, इगिविगलसयलचरिमदुगे ।**

**इंदियकाये चरिमस्स य, दुत्तिचदुपणगभेदजुदे ॥७५॥**

सामान्यजीवः त्रसथावरयोः, एकविकलसकलचरमद्विके ।

इंद्रियकाययोः चरमस्य च, द्वित्रिचतुःपंचभेदयुते ॥७५॥

टीका - तहां उपयोग लक्षण धरै सामान्यमात्र जीवद्रव्य, सो द्रव्यार्थिक नय करि ग्रहण कीए जीवसमास का स्थान एक है । बहुरि संग्रहनय करि ग्रह्या जो अर्थ, ताका भेद करणहारा जो व्यवहारनय, ताकी विवक्षा विषै संसारी जीव के मुख्य भेद त्रस-स्थावर, ते अधिकाररूप है; अैसे जीवसमास के स्थान दोय है । बहुरि अन्य प्रकार करि व्यवहारनय की विवक्षा होतै एकेद्रिय, विकलेद्रिय, सकलेद्रिय, जीवनि कौ अधिकाररूप करि जीवसमास के स्थान तीन है । बहुरि अैसे ही आगै भी सर्वत्र अन्य-अन्य प्रकारनि करि व्यवहारनय की विवक्षा जाननी । सो कहै हैं - एकेद्रिय, विकलेद्रिय दोय तौ ए, अर सकलेद्रिय जो पंचेद्रिय, ताके असंज्ञी, संज्ञी ए दोय भेद, अैसे मिलि जीवसमास के स्थान च्यारि हो हैं । बहुरि तैसे ही एकेद्रिय, बेइंद्री तेइंद्री, चौइंद्री, पंचेद्री भेद तै जीवसमास के स्थान पांच है । बहुरि तैसे ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति, त्रसकायिक भेद तै जीवसमास के स्थान छह है । बहुरि तैसे ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति ए पांच स्थावर अर अन्य त्रसकाय के विकलेद्रिय, सकलेद्रिय ए दोय भेद, अैसे मिलि जीवसमास के स्थानक सप्त हो है । बहुरि तैसे ही पृथ्वी आदि स्थावरकाय पांच, विकलेद्रिय, असंज्ञी पंचेद्रिय, संज्ञी पंचेद्रिय ए तीन मिलि करि जीवसमास के स्थान आठ हो है । बहुरि स्थावरकाय पांच अर बेद्री, तेइंद्री, चौद्री, पंचेद्री ए च्यारि मिलि करि जीवसमास के स्थान नव हो है । बहुरि तैसे ही स्थावरकाय पांच, अर बेद्री, तेद्री, चौद्री, असंज्ञी पंचेद्री, सज्ञी पंचेद्री ए पांच मिलि करि जीवसमास के स्थान दश हो है ।

पणजुगले तससहिये, तसस्स दुलिचदुरपणगभेदजुदे ।

छद्दुगपत्तेयहि य, तसस्स तियचदुरपणगभेदजुदे ॥७६॥

पंचयुगले त्रससहिते, त्रसस्य द्वित्रिचतुःपंचकभेदयुते ।

षड्विकप्रत्येके च, त्रसस्य त्रिचतुःपंचभेदयुते ॥७६॥

टीका - तैसे ही स्थावरकाय पांच, ते प्रत्येक बादर-सूक्ष्म भेद सयुक्त, ताके दश अर त्रसकाय ए मिलि जीवसमास के स्थान ग्यारह हो है । बहुरि तैसे ही स्थावरकाय दश अर विकलेद्रिय सकलेद्रिय, मिलि करि जीवसमास के स्थान बारह हो है । बहुरि तैसे ही स्थावरकाय दश अर त्रसकाय के विकलेद्रिय, सज्ञी, असज्ञी पंचेद्रिय ए तीन मिलि करि जीवसमास के स्थान तेरह हो है । बहुरि स्थावरकाय दश अर त्रसकाय के बेद्री, तेद्री, चौद्री, पंचेद्री ए च्यारि भेद मिलि जीवसमास के

स्थान चौदह हो है । वहरि तैसे ही स्थावरकाय के दश, वहरि त्रसकाय के वेद्री, तेद्री, चौद्री, असंजी पंचेद्री, संजी पंचेद्री ए पांच मिलि करि जीवसमास के स्थान पंद्रह हो है । वहरि तैसे ही पृथिवी, अप्, तेज, वायु ए च्यारि अर साधारण वनस्पति के नित्यनिगोद, इतरनिगोद ए दोय भेद मिलि छह भए । ते ए जुदे-जुदे वादर सूक्ष्म भेद लीए है । ताके वारह अर एक प्रत्येक वनस्पती, अैसे स्थावरकाय तेरह अर त्रसकाय विकलेद्रिय, असंजी पंचेद्रिय, संजी पंचेद्रिय ए तीनि मिलि जीवसमास के स्थान सोलह हो हैं । वहरि तैसे ही स्थावरकाय के तेरह अर त्रसकाय के वेद्री, तेद्री, चौद्री, पंचेद्री ए च्यारि भेद मिलि करि जीवसमास के स्थान सतरह हो है । वहरि स्थावरकाय के तेरह अर त्रसकाय के वेद्री, तेद्री, चौद्री, असंजी पंचेद्री, संजी पंचेद्री ए पांच मिलि जीवसमास के स्थान अठारह हो है ।

सगजुगलहितसस्स य, पणभंगजुदेसु होंति उणवीसा ।

एयादुणवीसो त्ति य, इगिवित्तिगुणिदे हवे ठाणा ॥७७॥

सप्तयुगले त्रसस्य च, पंचभंगयुतेषु भवन्ति एकोनविंशतिः ।

एकादेकोनविंशतिरिति च, एकद्वित्रिगुणिते भवेयुः स्थानानि ॥७७॥

टीका - तैसैं ही पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद, इतरनिगोद ए छहों वादर-सूक्ष्मरूप, ताके वारह अर प्रत्येक वनस्पति के सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित ए दोय अर त्रस के वेद्री, तेद्री, चौद्री असंजी पंचेद्रिय, संजी पंचेद्रिय ए पांच मिलि जीवसमास के स्थान उगणीस हो है । अैसे कहे जे ए सामान्य जीवरूप एक स्थान काँ आदि देकरि उगणीस भेदरूप स्थान पर्यन्त स्थान, तिनि काँ एक, दोय तीन करि गुणें, अनुक्रम तै अंत विषें उगणीस भेदस्थान, अड़तीस भेदस्थान, सत्तावन भेदस्थान हो है ।

सामण्णेण तिपंती, पढमा बिदिया अपुण्णागे इदरे ।

पज्जत्ते लद्धिअपज्जत्तेऽपढमा हवे पंती ॥७८॥

सामान्येन त्रिपंक्तयः, प्रथमा द्वितीया अपूर्णके इतरस्मिन् ।

पर्याप्ते लब्ध्यपर्याप्तेऽप्रथमा भवेत् पंक्तिः ॥७८॥

टीका - पूर्वे कहे जे एक काँ आदि देकरि एक-एक वधते उगणीस भेदरूप स्थान, तिनि काँ तीन पंक्ति नीच-नीच करनी । तिनि विषें प्रथम पंक्ति तौ पर्याप्तादिक

की विवक्षा कौ न करि सामान्य आलाप करि गुणनी । बहुरि दूसरी पंक्ति दोय जे पर्याप्त, अपर्याप्त भेद, तिनि करि गुणनी । बहुरि अप्रथमा कहिए तीसरी पक्ति, सो तीन जे पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद तिनि करि गुणनी । इहां दूसरी, तीसरी दोय पक्ति अप्रथमा है । तथापि दूसरी पक्ति कांठै ही कही, तीहिकरि अप्रथमा असै शब्द करि अवशेष रही पक्ति तीसरी सोई ग्रहण करी है ।

**भावार्थ** — एक कौ आदि देकरि उगणीस पर्यन्त जीवसमास के स्थान कहे । तिनिका सामान्यरूप ग्रहण कीएं एक आदि एक-एक बधते उगणीस पर्यन्त, स्थान हो है । इहां सामान्य विषै पर्याप्तादि भेद गर्भित जानने । बहुरि तिन ही एक-एक के पर्याप्त, अपर्याप्त भेद कीएं दोय कौ आदि देकरि दोय-दोय बधते अडतीस पर्यन्त स्थान हो है । इहा अपर्याप्त विषै निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त दोऊ गर्भित जानने । बहुरि तिन ही एक-एक के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद कीये तिनिकौ आदि देकरि तीन-तीन बधते सत्तावन पर्यन्त स्थान हो है । इहा जुदे-जुदे भेद जानने ।

अब कहे भेदनि की यंत्र में रचना अकनि करि लिखिये है ।

### जीवसमास के स्थानकनि का यंत्र

सामान्य अपेक्षा स्थान	पर्याप्त, अपर्याप्त अपेक्षा स्थान	पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त अपेक्षा स्थान
१	२	३
२	४	६
३	६	९
४	८	१२
५	१०	१५
६	१२	१८
७	१४	२१
८	१६	२४
९	१८	२७
१०	२०	३०
११	२२	३३
१२	२४	३६
१३	२६	३९
१४	२८	४२
१५	३०	४५
१६	३२	४८
१७	३४	५१
१८	३६	५४
१९	३८	५७
१९०	३८०	५७०

अब इनि पक्तिनि का जोड देने के अर्थि करणसूत्र कहिए है 'मुहभूमीजोग-दले पदगुणिदे पदधणं होदि' मुख आदि अर भूमी अंत, इनिकी जोडै, आधा करि पद जो स्थान प्रमाण, तीहि करि गुणै, सर्वपदधन हो है ।

सो प्रथम पक्ति विषै मुख एक अर भूमी उगणीस जोडै बीस, ताका आधा दश, पद उगणीस करि गुणै एक सौ नब्बे सर्व जोड हो है ।

बहुरि द्वितीय पंक्ति विषै मुख दोय, भूमी अड़तीस जोडै चालीस, आधा कीए बीस पद, उगणीस करि गुणै, तीन सै असी सर्व जोड हो है ।

बहुरि तीसरी पक्ति विषै मुख तीन, भूमी सत्तावन जोडै साठि, आधा कीए तीस, पद उगणीस करि गुणै पांच सै सत्तरि सर्व जोड हो है ।

आगै एकैद्रिय, विकलत्रय जीवसमासनि करि मिले हुए असै पंचेद्रिय संबंधी जीवसमास स्थान कै विशेषनि कौ गाथा दोय करि कहै है —

इगिवर्णां इगिविगले, असर्णिगसर्णिगयजलथलखगारां ।  
गणभभवे समुच्छे, दुतिगं भोगथलखेचरे दो दो ॥७६॥  
अज्जवमलेच्छमणुए, तिहु भोगकुभोगभूमिजे दो दो ।  
सुरणिरये दो दो इदि, जीवसमासा हु अडणउदी ॥७७॥

एकपंचाशत् एकद्विकले, असंज्ञिसंज्ञिगतजलस्थलखगानाम् ।  
गर्भभवे सम्मूर्छे, द्वित्रिकं भोगस्थलखेचरे द्वौ द्वौ ॥७८॥

आर्यम्लेच्छमनुष्ययोस्त्रयो द्वौ भोगकुभोगभूमिजयोर्द्वौ द्वौ ।  
सुरनिरयोर्द्वौ द्वौ इति, जीवसमासा हि अष्टानवतिः ॥७९॥

टीका — पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, नित्यनिगोद-इतरनिगोद के सूक्ष्म, बादर भेद करि छह युगल अर प्रत्येक वनस्पती का सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित भेद करि एक युगल, ऐस एकैन्द्रिय के सात युगल । बहुरि बेद्री, तेद्री, चौद्री ए तीन ऐसै ए सतरह भेद पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त भेद करि तीन-तीन प्रकार है । ऐसै एकैद्रिय, विकलेन्द्रियनि विषै इक्यावन भेद भये । बहुरि पंचेद्रियरूप तिर्यंच गति विषै कर्मभूमि के तिर्यंच तीन प्रकार हैं । तहा जे जल विषै गमनादि करै, ते जलचर; अर जे भूमि

विषै गमनादि करै, ते स्थलचर, अर जे आकाश विषै उडना आदि गमनादि करै, ते नभचर; ते तीनों प्रत्येक संज्ञी, असंज्ञी भेदरूप है, तिनिके छह भए । बहुरि ते छहौ गर्भज अर सम्मूर्छन हो हैं । तहां गर्भज विषै पर्याप्त अर निर्वृत्ति अपर्याप्त ए दोय-दोय भेद संभवै है, तिनिके बारह भए । बहुरि सम्मूर्छन विषै पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त ए तीन-तीन भेद संभवै है, तिनिके अठारह भए । असै कर्मभूमिया पंचेद्रिय तिर्यच के तीस भेद भये ।

बहुरि भोगभूमि विषै सज्ञी ही है, असंज्ञी नाहीं । बहुरि स्थलचर अर नभचर ही है, जलचर नाहीं । बहुरि पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त ही है, लब्धि अपर्याप्त नाहीं । तातै संज्ञी स्थलचर, नभचर के पर्याप्त, अपर्याप्त भेद करि च्यारि ए भए; असै तिर्यच पंचेद्रिय के चौतीस भेद भये ।

बहुरि मनुष्यनि के कर्मभूमि विषै, आर्यखंड विषै तौ गर्भज के पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय भेद अर सम्मूर्छन का लब्धि अपर्याप्तरूप एक भेद असै तीन भए । बहुरि म्लेच्छखंड विषै गर्भज ही है । ताके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय भेद । बहुरि भोगभूमि अर कुभोगभूमि इन दोऊनि विषै गर्भज ही है । तिनके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त करि दोय-दोय भेद भए । च्यारि भेद मिलि करि मनुष्यगति विषै नव भेद भए ।

बहुरि देव, नारकी औपपादिक है, तिनिके पर्याप्त, निर्वृत्ति अपर्याप्त भेद करि दोय-दोय भेद होई च्यारि भेद । असै च्यारि गतिनि विषै पंचेद्रिय के जीवसमास के स्थान सैतालीस है ।

बहुरि ए सैतालीस अर एकेद्री, विकलेद्रिय के इक्यावन मिलि करि अठ्याणवै जीवसमास स्थान हो है, असा सूत्रनि का तात्पर्य जानना ।

इहां विवक्षा करि स्थावरनि के बियालीस, विकलेद्रियनि के नव, तिर्यच पंचेद्रियनि के चौतीस, देवनि के दोय, नारकीनि के दोय, मनुष्यनि के नव, सर्व मिलि अठ्याणवे भए । असै ए कहे जीवसमास के स्थान, ते ससारी जीवनि के ही जानने, मुक्त जीवनि के नाहीं है । जातै विशुद्ध चैतन्यभाव ज्ञान-दर्शन उपयोग का संयुक्तपनां करि तिन मुक्त जीवनि के त्रस-स्थावर भेदनि का अभाव है । अथवा 'संसारिणस्त्रस-स्थावराः' असा तत्त्वार्थसूत्र विषै वचन है, तातै ए भेद ससारी जीवनि के ही जानने ।



ताका समाधान — जीव पर भव कौ गमन करै, ताकी विदिशा करि वर्जित च्यारि दिशा वा अधः, ऊर्ध्व विषे गमन क्रिया होइ है, सो च्यारि प्रकार है - ऋजु गति, पाणिमुक्ता गति, लांगल गति, गोमूत्रिका गति । तहां सूधा गमन होइ, सो ऋजु गति है । जामै बीच एक बार मुडे, सो पाणिमुक्ता गति है । जामै बीच दोय बार मुडे, सो लांगल गति है । जामै बीच तीन बार मुडे, सो गोमूत्रिका गति है । सो मुडने रूप जो विग्रह गति, ताविषे जीव योगनि की वृद्धि करि युक्त हो है । ताकरि शरीर की अवगाहना भी वृद्धिरूप हो है । तातें ऋजुगति करि उपज्या जीव के जघन्य अवगाहना कही, सो सर्वजघन्य अवगाहन का प्रमाणक है है । घनागुल रूप जो प्रमाण, ताका पल्य का असंख्यातवां भाग उगणीस बार, बहुरि आवली का असंख्यातवा भाग नव बार, बहुरि एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग बाईस बार, बहुरि संख्यात का भाग नव बार इतने तौ भागहार जानने । बहुरि तिस घनागुल कों आवली का असंख्यातवां भाग का बाईस बार गुणकार जानने । तहां पूर्वोक्त भागहारनि कौ मांडि परस्पर गुणन कीए, जेता प्रमाण आवै, तितना भागहार का प्रमाण जानना । बहुरि बाईस जायगा आवली का असंख्यातवा भाग कौ मांडि परस्पर गुणै जो प्रमाण आवै, तितना गुणकार का प्रमाण जानना । तहां घनागुल के प्रमाण कौ भागहार के प्रमाण का भाग दीए, अर गुणकार का प्रमाण करि गुणै जो प्रमाण आवै, तितना जघन्य अवगाहना के प्रदेशनि का प्रमाण जानना । अैसे ही आगै भी गुणकार, भागहार का अनुक्रम जानना ।

आगै इद्रिय आश्रय करि उत्कृष्ट अवगाहनानि का प्रमाण, तिनिके स्वामीनि कौ निर्देश करै है —

साह्यसहस्रमेकं, बारं कोसूरामेकमेकं च ।  
जोयणसहस्रदीहं, पद्मे विथले सहामच्छे ॥६५॥

साधिकसहस्रमेकं, द्वादश क्रोशोनमेकमेकं च ।  
योजनसहस्रदीर्घं, पद्मे विकले महामत्स्ये ॥६५॥

टीका — एकेद्रियनि विषे स्वयंभूरमण द्वीप के मध्यवर्ती जो स्वयंप्रभ नामा पर्वत, ताका परला भाग संबन्धी कर्मभूमिरूप क्षेत्र विषे उपज्या अँसा जो कमल, तीहि विषे किछू अधिक एक हजार योजन लवा, एक योजन चौडा अँसा उत्कृष्ट

अवगाह है । याका क्षेत्रफल कहिए है - समान प्रमाण लीए खंड कल्पे जितने खंड होइ, तिस प्रमाण का नाम क्षेत्रफल है । तहां ऊचा, लम्बा, चौडा क्षेत्र का ग्रहण जहां होइ, तहा घन क्षेत्रफल वा खात क्षेत्रफल जानना । बहुरि जहां ऊचापना की विवक्षा न होइ अर लम्बा-चौडा ही का ग्रहण होइ, तहां प्रतर क्षेत्रफल वा वर्ग क्षेत्रफल जानना । बहुरि जहा ऊचा-चौडापना की विवक्षा न होइ, एक लम्बाई का ही ग्रहण होइ, तहां श्रेणी क्षेत्रफल जानना ।

सो इहा खात क्षेत्रफल कहिए है । तहा कमल गोल है, तातें गोल क्षेत्र का क्षेत्रफल साधनरूप करण सूत्र करि साधिए है -

वासोत्तिगुणो परिही, वासचउत्थाहदो दु खेत्तफलं ।

खेत्तफलं वेहगुणं, खादफलं होइ सच्चत्थ ॥

याका अर्थ - व्यास, जो चौडाई का प्रमाण, तातें तिगुणा गिरदभ्रमणरूप जो परिधि, ताका प्रमाण हो है । बहुरि परिधि कौ व्यास का चौथा भाग करि गुणें, प्रतररूप क्षेत्रफल हो है । बहुरि याकौ वेध, जो ऊचाई का प्रमाण, ताकरि गुणें सर्वत्र खातफल हो है । सो इहा कमल विषे व्यास एक योजन, ताकौ तिगुणा कीए परिधि तीन योजन हो है । याकौ व्यास का चौथा भाग पाव योजन करि गुणें, प्रतर क्षेत्रफल पाँच योजन हो है । याकौ वेध हजार योजन करि गुणें, च्यारि करि अपवर्तन कीए, योजन स्वरूप कमल का क्षेत्रफल साड़ा सात सौ योजन प्रमाण हो है ।

भातार्थ - एक-एक योजन लम्बा, चौडा, ऊचा खंड कल्पे इतने खंड हो है ।

बहुरि द्वीद्वियनि विषे तीहि स्वयभूरमण समुद्रवर्ती शख विषे वारह योजन लम्बा, योजन का पाच चौथा भाग प्रमाण चौडा, च्यारि योजन मुख व्यास करि युक्त, अैसा उत्कृष्ट अवगाह है । याका क्षेत्रफल करणसूत्र करि साधिए है -

व्यासस्तावद् गुणितो, वदनदलोनी मुखार्धवर्गयुतः ।

द्विगुणश्चतुर्भिर्भक्तः, पंचगुणः शंखखातफलं ॥

याका अर्थ - प्रथम व्यास कौ व्यास करि गुणिए, तामे मुख का आधा प्रमाण अटाइ, तामे मुख का आधा प्रमाण का वर्ग जोडिए, ताका दूणा करिए, ताकौ च्यारि

का भाग दीजिए, ताकौ पाचगुणा करिए, अैसे करते शंख क्षेत्र का खातफल हो है । सो इहां व्यास बारह योजन कौ याही करि गुणै एक सौ चवालीस होइ । यामें मुख का आधा प्रमाण दोय घटाए, एक सौ ब्यालीस होइ । यामें मुख का आधा प्रमाण का वर्ग च्यारि जोडै, एक सौ छियालीस होइ । याकौ दूणा कीए दोय सै बाणवे होइ । याकौ च्यारि का भाग दीए तेहत्तरि होइ । याकौ पांच करि गुणै, तीन सौ पैसठि योजन प्रमाण शंख का क्षेत्रफल हो है ।

बहुरि त्रीद्वियनि विषै स्वयंभूरमण द्वीप का परला भाग विषै जो कर्मभूमि संबंधी क्षेत्र है, तहा रक्त बीछू जीव है । तीहि विषै योजन का तीन चौथा भाग प्रमाण  $(\frac{3}{4})$  लम्बा, लम्बाई के आठवें भाग  $(\frac{3}{32})$  चौडा, चौडाई तै आधा  $(\frac{3}{64})$  ऊंचा अैसा उत्कृष्ट अवगाह है । यह क्षेत्र आयत चतुरस्र है । लम्बाई लीए चौकोर है, सो याका प्रतर क्षेत्रफल भुज कोटि बधतैं हो है । सन्मुख दोय दिशानि विषै कोई एक दिशा विषै जितना प्रमाण, ताका नाम भुज है । बहुरि अन्य दोय दिशा विषै कोई एक दिशा विषै जितना प्रमाण, ताका नाम कोटि है । अर्थ यह जो लम्बाई-चौडाई विषै एक का नाम भुज, एक का नाम कोटि जानना । इनिका वेध कहिए परस्पर गुणना, तीहि थकी प्रतर क्षेत्रफल हो है । सो इहा लम्बाई तीन चौथा भाग, चौडाई तीन बत्तीसवां भाग, इनिको परस्पर गुणै नव का एक सौ अठाईसवां भाग  $(\frac{6}{128})$  भया । बहुरि याकौ वेध ऊंचाई का प्रमाण तिनिका चौसठिवा भाग, ताकरि गुणै, सत्ताईस योजन को इक्यासी सै बाणवै का भाग दीए एक भाग  $(\frac{27}{512})$  प्रमाण रक्त बीछू का घन क्षेत्रफल हो है ।

बहुरि चतुरिद्वियनि विषै स्वयंभूरमण द्वीप का परला भागवर्ती कर्मभूमि संबंधी क्षेत्र विषै भ्रमर हो है । सो तिहि विषै एक योजन लांबा, पौन योजन  $(\frac{1}{2})$  चौडा, आधा योजन  $(\frac{1}{2})$  ऊंचा उत्कृष्ट अवगाह है । ताकौ भुज कोटि वेध - एक योजन अर तीन योजन का चौथा भाग, अर एक योजन का दूसरा भाग, इनिको परस्पर गुणै, तीन योजन का आठवां भाग  $(\frac{3}{8})$  प्रमाण घन क्षेत्रफल हो है ।

बहुरि पंचेद्वियनि विषै स्वयंभूरमण समुद्र के मध्यवर्ती महामच्छ, तीहि विषै हजार  $(1000)$  योजन लांबा, पांच सै  $(500)$  योजन चौडा, पचास अधिक दोय सै  $(250)$  योजन ऊंचा उत्कृष्ट अवगाह है । तहां भुज, कोटि, वेध हजार

(१०००) अर पांच सै (५००) अर अडाई सै (२५०) योजन प्रमाण, इनिकों परस्पर गुणें नाडे बारा कोडि (१२५००००००) योजन प्रमाण बनकल हो है । जैसे कहें जो योजन रूप बनफल, तिनके प्रदेशनि का प्रमाण कीए एकेंद्रिय के चारि बार संख्यातगुणा घनांगुल प्रमाण, द्वीन्द्रिय के तीन बार संख्यातगुणा घनांगुल प्रमाण, त्रीन्द्रिय के एक बार संख्यातगुणा घनांगुल प्रमाण, चतुरिन्द्रिय के दोय बार संख्यातगुणा घनांगुल प्रमाण, पंचेंद्रिय के पांच बार संख्यातगुणा घनांगुल प्रमाण प्रदेश उत्कृष्ट अवगाहना विषे हो है ।

आगे पर्याप्त द्वीन्द्रियादिक जीवनि का जवन्य अवगाहना का प्रमाण अर ताका स्वामी का निर्देश कों कहें हैं -

त्रितिचपपुष्पलहण, अणुं धरीकुं थुकारामच्छीसु ।

सिचछयमच्छे विदंगुलसंखं संखगुणितक्रमा ॥६६॥

द्वित्रिचपपुष्पलघन्यमनुं धरीकुं थुकारामक्षिकासु ।

सिचयकनत्स्ये वृदंगुलसंखं संखगुणितक्रमाः ॥६७॥

टीका - पर्याप्त द्वीन्द्रिय विषे अनुं धरी, त्रीन्द्रियनि विषे कुं थु, चतुरिन्द्रियनि विषे कारामक्षिका, पंचेंद्रियनि विषे उंडुलमच्छ इति जीवनि विषे जवन्य अवगाहना विशेष अरें जो शरीर, तजरि रोक्या हुवा क्षेत्र (प्रदेशनि) का प्रमाण घनांगुल का संख्यातवां भाग तै लगाइ, संख्यातगुणा अनुक्रम करि जानना । तहां द्वीन्द्रिय विषे चारि बार, त्रीन्द्रिय विषे तीन बार, चतुरिन्द्रिय विषे दोय बार, पंचेंद्रिय विषे एक बार, संख्यात का भाग आकों दीजिग, ऐसा घनांगुल मात्र पर्याप्तनि की जवन्य अवगाहना के प्रदेशनि का प्रमाण जानना । इनिका अब चौडाई, लम्बाई, ऊंचाई का उद्देश इहां नाहीं है । बनकल कीए जो प्रदेशनि का प्रमाण भया, सो इहां कहा है ।

आगे भवे तें जवन्य अवगाहना कों आदि देकरि उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत शरीर की अवगाहना के भेद, तिनिका स्वामी वा अत्यवहुत्व वा क्रम तें गुणकार, तिनिकों गाय पंच करि इहां दिखावै हैं -

सुहस्रगिवातेआनू वातेआपुणिपदिठिदं इदरं ।

त्रितिचपमादित्ताणं, एयाराणं तिसेढीय ॥६८॥

सृष्टमनिवातेआनू, वातेअपृनिप्रतिष्ठितमितरत् ।

द्वित्रिचपमाद्यानामेकादशानां त्रिश्रेणयः ॥६९॥

टीका - इहां नाम का एक देश, सो संपूर्ण नाम विषै वर्तै है । इस लघु-करण न्याय कौ आश्रय करि गाथा विषै कह्या हुवा णिवा इत्यादि आदि अक्षरनि करि निगोद वायुकायिक आदि जीवनि का ग्रहण करना । सो इहां अवगाहना के भेद जानने के अर्थि एक यंत्र करना ।

तहां सूक्ष्म निगोदिया, सूक्ष्म वायुकायिक, सूक्ष्म तेजःकायिक, सूक्ष्म अप्-कायिक, सूक्ष्म पृथ्वीकायिक नाम धारक पांच सूक्ष्म तिस यंत्र के प्रथम कोठे विषै लिखे हो हैं ।

बहुरि ताकी बरोबरि आगै बादर - वायु, तेज, जल, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक नाम धारक ये छह बादर पूर्ववत् अनुक्रम करि दूसरा कोठा विषै लिखे हो है । पहिले जिनिके नाम लीए थे, तिन ही के फेरी लीए, इस प्रयोजन की समर्थता तै प्रथम कोठा विषै सूक्ष्म कहे थे; इहां दूसरा कोठा विषै बादर ही है, अइसा जानना ।

बहुरि ताके आगै अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय नाम धारक ए पांच बादर तीसरा कोठा विषै लिखे हो है । इनि सोलहौ विषै आदि के सूक्ष्म निगोदादिक ग्यारह, तिनिके आगै तीन पंक्ति करनी । तहां एक-एक पंक्ति विषै दोय-दोय कोठे जानने । कैसे ? सो कहिए है - पूर्वे तीसरा कोठा कह्या था, ताके आगै दोय कोठे करने । तनि विषै जैसे पहला, दूसरा कोठा विषै पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे थे, तैसे इहां भी लिखे हो है । बहुरि तनि दोऊ कोठानि के नीचै पंक्ति विषै दोय कोठे और करने । तहां भी तैसे ही पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हो है । बहुरि तिनिके नीचै पंक्ति विषै दोय कोठे और करने, तहा भी तैसे ही पांच सूक्ष्म, छह बादर लिखे हो है । अइसे सूक्ष्म निगोदादि ग्यारह स्थानकनि का दोय-दोय कोठानि करि संयुक्त तीन पंक्ति भई । या प्रकार ऊपरि की पंक्ति विषै पांच कोठे, ताते नीचली पंक्ति विषै दोय कोठे, ताते नीचली पंक्ति विषै दोय कोठे मिलि नव कोठे भए ।

अपदिट्ठदपत्तेयं, बितिचपतिचबि-अपदिट्ठदं सयलं ।

तिचवि-अपदिट्ठिदं च य, सयलं बादालगुणितकमा ॥६८॥

अप्रतिष्ठितप्रत्येकं द्वित्रिचपत्रिचद्वचप्रतिष्ठितं सकलम् ।

त्रिचद्वचप्रतिष्ठितं च च सकलं द्वाचत्वारिंशद्गुणितक्रमाः ॥९८॥

टीका - बहुरि तिनि तीनि पंक्तिनि के आगे ऊपर पंक्ति विषे दशवां कोठा करना तीहि विषे अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय नाम धारक पांच वादर लिखे हो हैं । बहुरि ताके आगे ग्यारहवां कोठा विषे त्रीन्द्रिय, चौद्विन्द्रिय, वेन्द्रिय, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पंचेन्द्रिय नाम धारक पांच वादर लिखे हो हैं । बहुरि ताके आगे बारहवां कोठा विषे त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पंचेन्द्रिय नाम धारक पांच वादर लिखे हो हैं । अैसे ए चौसठि जीवसमासनि की अवगाहना के भेद हैं । तिनि विषे ऊपरि की पंक्तिनि के आठ कोठानि विषे प्राप्त अैसे जे वियालीस जीवसमास, तिनकी अवगाहना के स्थान, ते गुणितक्रम हैं । अनुक्रम ते पूर्वे स्थान कीं यथासंभव गुणकार करि गुणै उत्तरस्थान हो हैं । बहुरि ताते इनि नीचे की दोय पंक्तिनि विषे प्राप्त भए वाईस स्थान, ते 'सिद्धिगया अहिया तत्थेकपडिभागो' इस वचन ते अधिक रूप है । तहां एक प्रतिभाग का अधिकपना जानना । पूर्वस्थान कीं सभवता भागहार का भाग देइ एक भाग कीं पूर्वस्थान विषे अधिक कीए उत्तरस्थान हो हैं; अैसा सूचन कीया है ।

अवरमपुण्णं पढसं, सोलं पुण पढसबिदियतदियोली ।  
पुण्णिदरपुण्णियारंगं, जहणसुद्धकस्ससुद्धकस्सं ॥६६॥

अवरमपूर्णं प्रथमे, षोडश पुनः प्रथमद्वितीयतृतीयावलिः ।  
पूर्णतरपूणिनां, जघन्यमुत्कृष्टमुत्कृष्टं ॥९९॥

टीका - पहलै तीन कोठेनि विषे प्राप्त जे सोलह जीवसमास, तिनकी अपर्याप्त विषे जघन्य अवगाहना जाननी । बहुरि आगे ऊपरि ते पहली, दूसरी, तीसरी पंक्तिनि विषे एक-एक पक्ति विषे दोय-दोय कोठे कीए, ते क्रम ते पर्याप्त, अपर्याप्त, पर्याप्तद्वय तीन प्रकार जीव की जघन्य, उत्कृष्ट अर उत्कृष्ट अवगाहना है । याका अर्थ यह - जो ऊपरि ते प्रथम पक्ति के दोय कोठानि विषे पांच सूक्ष्म, छह वादर इनि ग्याह् पर्याप्त जीवसमासनि की जघन्य अवगाहना के स्थान है । तैसे ही नीचे दूसरी पक्ति विषे प्राप्त तिनि ग्यारह अपर्याप्त जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है । तेम ही तीसरी पंक्ति विषे प्राप्त तिनि ग्यारह पर्याप्त जीव समासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है ।

पुण्णजहण्णं तत्तो, वरं अपुण्णस्स पुण्णउक्कस्सं ।  
 बीपुण्णजहण्णो त्ति, असंखं संखं गुणं तत्तो ॥१००॥

पूर्णजघन्यं ततो, वरमपूर्णस्य पूर्णोत्कृष्टं ।  
 द्विपूर्णजघन्यमिति असंख्यं संख्यं गुणं ततः ॥१००॥

टीका — ताके आगै दशवां कोठा विषै प्राप्त पर्याप्ति पांच जीवसमासनि की जघन्य अवगाहना के स्थान है । बहुरि तहां तै आगै ग्यारहवां कोठा विषै अपर्याप्ति पांच जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है । बहुरि ताके आगै बारहवां कोठा विषै पर्याप्ति पंच जीवसमासनि की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान है । अैसे ए कहे स्थान, तिनि विषै प्रथम कोठा विषै प्राप्त सूक्ष्म अपर्याप्ति निगोदिया जीव की जघन्य अवगाहना तै लगाइ दशवा कोठा विषै प्राप्त बादर पर्याप्ति द्वीन्द्रिय की जघन्य अवगाहना पर्यंत ऊपरि की पंक्ति संबंधी गुणतीस अवगाहना के स्थान, ते असंख्यात-असंख्यात गुणा क्रम लीए है । बहुरि तिसतैं आगै बादर पर्याप्ति पंचेन्द्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत तेरह अवगाहना के स्थान, ते संख्यातगुणां, संख्यातगुणां अनुक्रम लीए है; अैसा जानना ।

सुहमेदरगुणगारो, आवलिपल्ला असंखभागो दु ।  
 सट्ठाणे सेढिगया, अहिया तत्थेकपडिभागो ॥१०१॥

सूक्ष्मेतरगुणकार, आवलिपल्यासंख्येयभागस्तु ।  
 स्वस्थाने श्रेणिगता, अधिकास्तत्रैकप्रतिभागः ॥१०१॥

टीका — इहां गुणतीस स्थान असंख्यातगुणे कहे, तिनिविषै जे सूक्ष्म जीवनि के अवगाहना के स्थान है, ते आवली का असंख्यातवा भाग करि गुणित जानने । पूर्वस्थान कौ घनावली<sup>१</sup> का असंख्यातवां भाग करि तहां एक भाग करि गुणै उत्तर स्थान हो है । बहुरि जे बादर जीवनि के अवगाहन के स्थान है, ते पल्य का असंख्यातवां भाग करि गुणित है । पल्य का असंख्यात भाग करि तहां एक भाग करि पूर्वस्थान कौ गुणै, उत्तर स्थान हो है । अैसे स्वस्थान विषै गुणकार है, या प्रकार असंख्यात का गुणकार विषै भेद है, सो देखना । बहुरि नीचली दूसरी, तीसरी पंक्ति

१. अ प्रति मे 'आवली' है, वाकी चार प्रतियो मे 'घनावली' है ।





विषे प्राप्त जे अवगाहना के स्थान ते अधिक अनुक्रम धरै है । तहां सूक्ष्म निगोद अपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना के स्थान कौं आदि देकरि उत्तर-उत्तर स्थान पूर्व-पूर्व अवगाहना स्थान तै ताही कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीए, तहां एक भागमात्र अधिक है । पूर्वस्थान कौ आवली का असंख्यातवा (भाग का) भाग दीए जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वस्थान विषे अधिक कीए उत्तरस्थान विषे प्रमाण हो है । इहां अधिक का प्रमाण ल्यावने के अर्थ भागहार वा भागहार का भागहार, सो आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण है । असै परमगुरु का उपदेश तै चल्या आया प्रमाण जानना । बहुरि यहां यहु जानना - सूक्ष्मनिगोदिया का तीनो पंक्ति विषे अनुक्रम करि पीछे सूक्ष्म वातकायिक का तीनो पंक्तिनि विषे अनुक्रम करना । असै ही क्रम तै ग्यारह जीवसमासनि का अनुक्रम जानना ।

यहु यंत्र जीवसमासनि की अवगाहना का है । इहां ऊपरि की पंक्ति विषे प्राप्त बियालीस स्थान गुणकाररूप है । तहा पहला, चौथा कोठा विषे सूक्ष्म जीव कहे, ते क्रम तै पूर्वस्थान तै उत्तरस्थान आवली का असंख्यातवां भाग करि गुणित है । बहुरि दूसरा, तीसरा, सातवां कोठा विषे बादर कहे अर दशवा कोठा विषे अप्रतिष्ठित प्रत्येक वा बेद्री कहे, ते क्रम तै पत्य के असंख्यातवां भाग करि गुणित है । बहुरि दशवां कोठा विषे तेद्री सौ लगाइ बारहवा कोठा विषे प्राप्त पंचेद्री पर्यंत संख्यात करि गुणित है । बहुरि नीचली दोय पंक्तिनि के च्यारि कोठानि विषे जे स्थान कहे, ते आवली का असंख्यातवां भाग करि भाजित पूर्वस्थान प्रमाण अधिक है ।

( देखिए पृष्ठ २०६ )

अब इहा कहे जे अवगाहना के स्थान, तिनके गुणकार का विधान कहिए है । सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना का स्थान, सो आगै कहैगे गुणकार, तिनकी अपेक्षा अैसा है । उगणीस बार पत्य का भाग, नव बार आवली का असंख्यातवां भाग, बाईस बार एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग, नव बार संख्यात, इनिका तौ जाकौ भाग दीजिए । बहुरि बाईस बार आवली का असंख्यातवां भाग करि जाकौ गुणिए अैसा जो घनागुल, तीहि प्रमाण है, सो याकौ आदिभूत स्थान स्थापि, यातै सूक्ष्म अपर्याप्तक वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असंख्यातवा भाग करि गुणित है, सो याका गुणकार आवली का असंख्यातवां भाग अर पूर्वे आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार

नव वार कह्या था, तामें एक वार आवली का असंख्यातवा भाग मद्रुण देखि दोऊनि का अपवर्तन कीए, पूर्वे जहां नव वार कह्या था, तहां इहां आठ वार आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार जानना । जैसे ही आगे भी गुणकार भागहार कौ समान देखि, तिनि दोऊनि का अपवर्तन करना । वहुरि यातें सूक्ष्म अपर्याप्त तेजस्-कायिक की जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहां भी पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन कीए आठ वार की जायगा सात वार आवली का असंख्यात भाग का भागहार हो है । वहुरि यातें सूक्ष्म अपर्याप्त अपकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहां पूर्ववत् अपवर्तन करना । वहुरि यातें सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान आवली का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहां भी पूर्ववत् अपवर्तन करना । जैसे इहां आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार तौ पांच वार रह्या, अन्य सर्व गुणकार भागहार पूर्ववत् जानने । वहुरि इहां पर्यंत सूक्ष्म तै सूक्ष्म का गुणकार भया, तातें स्वस्थान गुणकार कहिए है । अब सूक्ष्म तै वादर का गुणकार कहिए है, सो यह परस्थान गुणकार जानना । आगे भी सूक्ष्म तै वादर, वादर तै सूक्ष्म का जहां गुणकार होइ, सो परस्थान गुणकार है; जैसा विज्ञेय जानना । वहुरि इस सूक्ष्म अपर्याप्त पृथिवीकायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै स्वस्थान गुणकार कौ उर्लधि परस्थानरूप वादर अपर्याप्त वातकायिक का जघन्य अवगाहना स्थान पत्य का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहां इस गुणकार करि उगणीस वार पत्य का असंख्यातवा भाग का भागहार था, तामें एक वार का अपवर्तन करना । वहुरि यातें वादर तेजःकायिक अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान पत्य का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहां भी पूर्ववत् अपवर्तन करना । जैसे ही पत्य का असंख्यातवा भाग गुणा अनुक्रम करि अपर्याप्त वादर, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येकनि के जघन्य अवगाहना स्थान, अर अपर्याप्त अप्रतिष्ठित प्रत्येक, वेद्री, तेद्री, चौइंद्री पंचेद्री, के जघन्य अवगाहना स्थान, इन नव स्थानकनि कौ प्राप्त करि पूर्ववत् अपवर्तन करतें अपर्याप्त पंचेन्द्रिय का जघन्य अवगाहना स्थान विपे आठ वार पत्य का असंख्यातवा भाग का भागहार रहै हैं । अन्य भागहार गुणकार पूर्ववत् जानना । वहुरि यातें सूक्ष्म निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान, सो परस्थानरूप आवली का असंख्यातवा भाग गुणा है । सो पूर्वे आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार पांच वार रह्या था, तामें एक वार करि इस गुणकार का अपवर्तन करना ।

बहुरि यातै सूक्ष्म निगोद अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहना स्थान विशेष करि अधिक है । विशेष का प्रमाण कह्या सूक्ष्म निगोद पर्याप्ति का जघन्य अवगाहना स्थान कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीए, तहा एक भाग मात्र विशेष का प्रमाण है । याकौ तिस ही सूक्ष्म निगोद पर्याप्ति का जघन्य स्थान विषै समच्छेद विधान करि मिलाइ राशि कौ अपवर्तन कीए, सूक्ष्म निगोद अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहना हो है ।

अपवर्तन कैसे करिए ?

जहा जिस राशि का भागहार देइ एक भाग कोई विवक्षित राशि विषै जोडना होइ, तहा तिस राशि तै एक अधिक का तौ गुणकार अर तिस पूर्णराशि का भागहार विवक्षित राशि कौ दीजिए । जैसे चौसठि का चौथा भाग चौसठि विषै मिलावना होइ तौ चौसठि कौ पांच गुणा करि च्यारि का भाग दीजिए । तैसे इहा भी आवली का असंख्यातवा भाग का भाग देइ एक भाग मिलावना है, तातै एक अधिक आवली का असंख्यातवा भाग का गुणकार अर आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार करना । बहुरि पूर्वे राशि विषै बाईस बार एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग का भागहार है । अर बाईस बार ही आवली का असंख्यात भाग का गुणकार, है । सो इनि विषै एक बार का भागहार गुणकार करि अबै कहे जे गुणकार भागहार, तिनिका अपवर्तन कीए बाईस बार की जायगा गुणकार भागहार इकईस बार ही रहै है । जैसे ही आगै भी जहा विशेष अधिक होइ, तहां अपवर्तन करि आवली का असंख्यातवां भाग का गुणकार अर एक अधिक आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार एक-एक बार घटावना । बहुरि सूक्ष्म निगोद अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन तै सूक्ष्म निगोद पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहना विशेष करि अधिक है । इहा विशेष का प्रमाण सूक्ष्म निगोद अपर्याप्ति की उत्कृष्ट अवगाहनां कौ आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीए एक भागमात्र है । याकौ पूर्व अवगाहन विषै जोडि, पूर्ववत् अपवर्तन करना । बहुरि यातै सूक्ष्म वायुकायिक पर्याप्ति का जघन्य अवगाह आवली का असंख्यातवा भाग गुणा है । सोई यहा अपवर्तन कीए च्यारि बार आवली का असंख्यातवा भाग का भाग था, सो तीन बार ही रहै है । बहुरि यातै सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । इहा विशेष का प्रमाण पूर्वरशि कौ आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीए एक भागमात्र है, ताकौ जोडि अपवर्तन करना । बहुरि यातै याके नीचे सूक्ष्म वायुकायिक

पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन, सो विशेष करि अधिक है । पूर्वेराशि की आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीये, तहां एक भाग करि अधिक जानना । इहा भी अपवर्तन करना । बहुरि यातै सूक्ष्म तेजकायिक पर्याप्तक का जघन्य अवगाहन आवली का असंख्यातवां भाग गुणा है । इहां अपवर्तन करिए, तहा आवली का असंख्यातवा भाग का भागहार तीन बार की जायगा दोय बार ही रहै है; ऐसै ही यातै सूक्ष्म तेज कायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै सूक्ष्म तेज.कायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै सूक्ष्म अपकायिक पर्याप्तक का जघन्य अवगाहन आवली का असंख्यातवां भाग गुणा है । यातै सूक्ष्म अपकायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै सूक्ष्म अपकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन आवली का असंख्यातवां भाग-गुणा है, यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है, ऐसै दोय-दोय तौ आवली का असंख्यातवां भाग करि भाजित पूर्वेराशि प्रमाण विशेष करि अधिक अर एक-एक अपना-अपना पूर्वेराशि तै आवली का असंख्यातवां भाग गुणा जानना । अैसे आठ अवगाहना स्थाननि कौ उलंघि तहां आठवां सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन, सो पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन करते बारह बार आवली का असंख्यातवां भाग का गुणकार अर आठ बार पल्य का असंख्यात भाग, बारह बार एक अधिक आवली का असंख्यातवां भाग, नव बार सख्यात का भाग जाके पाडए, अैसा घनांगुल प्रमाण हो है । बहुरि यातै वादर वायुकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन परस्थानरूप है, तातै पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है । इहां पल्य का असंख्यातवां भाग का भागहार आठ बार था, तामै एकवार करि अपवर्तन कीए सात बार रहै है । बहुरि यातै आगें दोय-दोय स्थान तौ विशेष करि अधिक अर एक-एक स्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा जानना । तहा विशेष का प्रमाण अपना-अपना पूर्वेराशि कौ आवली का असंख्यातवां भागरूप प्रतिभाग का भाग दीए एक भाग प्रमाण जानना । सो जहां अधिक होइ, तहां अपवर्तन कीए बारह बार आवली का असंख्यातवां भाग का गुणकार अर एक अधिक आवली का जघन्य भाग का भागहार ये, तिनिविषे एक-एक बार घटता हो है । बहुरि जहां पल्य का अनन्य भाग का गुणकार होइ, तहां अपवर्तन कीए सात बार पल्य का

असंख्यातवां भाग का भागहार थे, तिनि विषे एक-एक बार घटता हो है, असा क्रम जानना । सो बादर वायुकायिक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन तै बादर वायुकायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर वायुकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर तेजकाय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है, यातै बादर तेजकाय अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर तेजकायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर अप्कायिक अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है । यातै बादर अप्कायिक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष करि अधिक है । यातै बादर अप्कायिक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर पृथ्वी पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है । यातै बादर पृथ्वी अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर पृथ्वी पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर निगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है । यातै बादर निगोद अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै बादर निगोद पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य के असंख्यातवां भाग गुणा है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । यातै प्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन विशेष अधिक है । असा सतरह अवगाहन स्थाननि कौ उलंघि पूर्वोक्त प्रकार अपवर्तन कीए सतरहवा बादर पर्याप्त प्रतिष्ठित प्रत्येक का उत्कृष्ट अवगाहन दोय बार पल्य का असंख्यातवा भाग अर नव बार सख्यात का भाग जाकौ दीजिए, असा घनागुल प्रमाण हो है । बहुरि यातै अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवा भाग गुणा है, इहा भी अपवर्तन करना ।

बहुरि यातै बेद्री पर्याप्त का जघन्य अवगाहन पल्य का असंख्यातवा भाग गुणा है । इहा भी अपवर्तन कीए पल्य का असंख्यातवा भाग का भागहार था, सो दूरि होइ घनागुल का नव बार सख्यात का भागहार रह्या । बहुरि यातै तेद्री, चौद्री, पचेद्री पर्याप्तनि के जघन्य अवगाहन ते क्रम तै पूर्व-पूर्व तै सख्यात-सख्यात गुणै है । यातै तेद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै चौद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात गुणा है । यातै बेद्री अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । यातै अप्रतिष्ठित प्रत्येक अपर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन सख्यात

गुणा है । यातें पंचेद्री अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । जैसे एक-एक बार संख्यात का गुणकार करि नव बार संख्यात का भागहार विषे एक-एक बार का अपवर्तन करतें पंचेद्री अपर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन एक बार संख्यात करि भाजित घनांगुल प्रमाण हो है । वदुरि यातें त्रीद्विय पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है, सो अपवर्तन करिए; तथापि इहां गुणकार के संख्यात का प्रमाण भागहार के संख्यात का प्रमाण तें बहुत है । तातें त्रीद्विय पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा घनांगुल प्रमाण है । यातें चौदंड्री पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । यातें वेद्री पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । यातें अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । यातें पंचेद्री पर्याप्ति का उत्कृष्ट अवगाहन संख्यात गुणा है । जैसे क्रम तें अवगाहन के स्थान जानने ।

आगे सूक्ष्म निगोद लव्वि अपर्याप्ति का जघन्य अवगाहन तें नृक्ष्म वायु-कायिक लव्वि अपर्याप्ति के जघन्य अवगाहन का गुणकार स्वरूप आवली का असंख्यात भाग कह्या । ताकी उत्पत्ति का अनुक्रम को अर तिन दोऊनि के मध्य अवगाहन के भेद है, तिनके प्रकारनि को गाथा नव करि कहै है -

अवरोपरि इगिपदेसे, जुदे असंखेज्जभागवड्ढीए ।

आदी सिरंतरमदो, एगेपदेसपरिवड्ढी ॥१०२॥

अवरोपरि एकप्रदेगे, युते असंख्यातभागवृद्धेः ।

आदिः निरंतरस्तः, एकैकप्रदेशपरिवृद्धिः ॥१०२॥

टीका - सूक्ष्म निगोद लव्वि अपर्याप्तक जीव का जघन्य अवगाहन प्रवृत्त प्रमाण, ताकी लघु संदृष्टि करि यहु सर्व तें जघन्य भेद है, तातें याका आदि प्रथम जेना स्थापन करि वदुरि यातें दूसरा अवगाहना का भेद के अर्थ इस जघन्य अवगाहन विषे एक प्रदेश जोडै, सूक्ष्म निगोद लव्वि अपर्याप्तक का दूसरा अवगाहन का भेद हो है । वदुरि ऐसे ही एक-एक प्रदेश वधता अनुक्रम करि तावत् ज्ञान होना । यावत् सूक्ष्म वायुकायिक अपर्याप्ति का जघन्य अवगाहना, सो सूक्ष्म निगोद लव्वि अपर्याप्तक का जघन्य अवगाहना तें आवली का असंख्यात भाग गुण होत । नहां असंख्यात भाग वृद्धि, संख्यात भाग वृद्धि, संख्यात गुण वृद्धि असंख्यात गुण वृद्धि तें अनुस्थान पतिन वृद्धि अर बीच-बीच अवक्तव्य भाग वृद्धि

वा अवक्तव्य गुण वृद्धि, तिनिकरि बधते जे अवगाहना के स्थान, तिनिके उपजने का विधान कहिए है ।

**भावार्थ** — जघन्य अवगाहना का जेता प्रदेशनि का प्रमाण, ताकौ जघन्य अवगाहना प्रमाण असंख्यात तै लगाइ जघन्य परीतासंख्यात पर्यंत जिस-जिसका भाग देना संभवे, तिस-तिस असंख्यात का भाग देते (जघन्य अवगाहना) जिस-जिस अवगाहना भेद विषै प्रदेश बधती का प्रमाण होइ, तहा-तहा असंख्यात भाग वृद्धि कहिए । बहुरि तिस जघन्य अवगाहना का प्रदेश प्रमाण कौ उत्कृष्ट संख्यात तै लगाइ यथा संभव दोय पर्यंत संख्यात के भेदनि का भाग देतै जघन्य अवगाहना तै जिस-जिस अवगाहना विषै बधती का प्रमाण होइ, तहा-तहा संख्यात भाग वृद्धि कहिये । बहुरि दोय तै लगाइ उत्कृष्ट संख्यात पर्यंत (संख्यात के भेदनि करि) १ जघन्य अवगाहना कौ गुण जिस-जिस अवगाहना विषै प्रदेशनि का प्रमाण होइ, तहा-तहा संख्यात गुण वृद्धि कहिए । बहुरि जघन्य परीतासंख्यात तै लगाइ आवली का असंख्यातवां भाग पर्यंत असंख्यात के भेदनि करि जघन्य अवगाहना कौ गुण, जिस-जिस अवगाहना के भेद विषै प्रदेशनि का प्रमाण होइ तहा-तहा असंख्यात गुण वृद्धि कहिए । बहुरि जहा-जहा इनि संख्यात वा असंख्यात के भेदनि का भागहार गुणकार न संभवै ऐसे प्रदेश जघन्य अवगाहना तै जहा-जहा बधती होइ, सो अवक्तव्य भाग वृद्धि वा अवक्तव्य गुण वृद्धि कहिए । सो यहु (अवक्तव्य) वृद्धि पूर्वोक्त चतु स्थान पतित वृद्धि के बीच-बीच होइ है । बहुरि यहाँ जघन्य अवगाहना प्रमाण तै बधता असंख्यात का अर अनन्त का भाग की वृद्धि न संभवै है, जातै इनिका भाग जघन्य अवगाहना कौ न वनै है । बहुरि इहा आवली का असंख्यातवा भाग तै बधता असंख्यात का अर अनन्त का गुणकाररूप वृद्धि न संभवै है, जातै इनि करि जघन्य अवगाहना कौ गुण प्रमाण बधता होइ । इहा सूक्ष्म अपर्याप्त वायुकायिक का जघन्य अवगाहना पर्यंत ही विवक्षा है ।

अैसे इहा प्रदेश वृद्धि का स्वरूप जानना, सोई विशेष करि कहिए हैं । सर्व तै जघन्य अवगाहना कौ इस जघन्य अवगाहना प्रमाण असंख्यात का भाग दीए एक पाया, सो जघन्य अवगाहना के ऊपरि एक प्रदेश जोड़, दूसरा अवगाहना का भेद हो है, सो यहु असंख्यात भाग वृद्धि का आदि स्थान हैं । बहुरि जघन्य अवगाहना तै आधा प्रमाणरूप असंख्यात का भाग तिस जघन्य अवगाहना का दीए दोय पाए,

सो जघन्य अवगाहना विषे जोडैं, तीसरा अवगाहना का भेद होइ, सो यह असंख्यात भाग वृद्धि का दूसरा स्थान है । अंसैं ही क्रम करि जघन्य अवगाहना की यथायोग्य असंख्यात का भाग दीए तीन, च्यारि, पाच इत्यादि सख्यात असख्यात पाए, ते जघन्य अवगाहना विषे जोडैं निरतर एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि संयुक्त अवगाहना के स्थान असंख्यात हो है । तिनिकौ उलघि कहा होइ सो कहै है -

अवरोगाहणमाणे, जहणपरिमिदअसंखरासिहिदे ।

अवरस्सुवरि उड्ढे, जेट्ठमसंखेज्जभागस्स ॥१०३॥

अवरावगाहनाप्रमाणे, जघन्यपरिमितासंख्यातराशिहते ।

अवरस्योपरि वृद्धे, ज्येष्ठमसंख्यातभागस्य ॥१०३॥

टीका - एक जायगा जघन्य अवगाहना कौ जघन्य परिमित असंख्यात राशि का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य अवगाहना विषे जोडैं जितने होइ, तितने प्रदेश जहां अवगाहना भेद विषे होइ, तहा असंख्यात भाग वृद्धिरूप अवगाहना स्थाननि का अंतस्थान हो है । एते ए असंख्यात भाग वृद्धि के स्थान कितने भए ? सो कहिए है - 'आदी अंते सुद्धे वट्ठिहिदे ख्वसंजुदे ठाणे' इस करण सूत्र करि असंख्यात भाग वृद्धिरूप अवगाहना का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण कौ अंतस्थान का प्रदेश प्रमाण मे स्यौ घटाए अवशेष रहै, ताकौ स्थान-स्थान प्रति एक-एक प्रदेश वधता है, तातैं एक का भाग दीए भी तितने ही रहै, तिनमे एक और जोडैं जितने होइ, तितने असंख्यात भाग वृद्धि के स्थान जानने ।

तस्सुवरि इगिपदेसे, जुदे अवत्तव्यभागप्रारंभो ।

वरसंखमवहिदवरे, रूऊणे अवरउवरिजुदे ॥१०४॥

तस्योपरि एकप्रदेशे, युते अवत्तव्यभागप्रारंभः ।

वरसंख्यातावहितावरे, रूपोने अवरोपरियुते ॥१०४॥

टीका - पूर्वोक्त असंख्यात भाग वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान, तीहि विषे एक प्रदेश जुडैं अवत्तव्य भाग वृद्धि का प्रारंभरूप प्रथम अवगाहना स्थान हो है । बहुरि ताके आगे एक-एक प्रदेश वधता अनुक्रम करि अवत्तव्य भाग वृद्धि के स्थानकनि उलघि एक बार उत्कृष्ट सख्यात का भाग जघन्य अवगाहना कौ दीए जो



प्रमाण आवै, तामै एक घटाए जितने होइ, तितने प्रदेश जघन्य अवगाहना के ऊपरि जुडै कहा होइ, सो कहै है -

**तव्वड्ढीए चरिमो, तस्सुवरिं रूवसंजुदे पढमा ।**

**संखेज्जभागउड्ढी, उवरिमदो रूवपरिवड्ढी ॥१०५॥**

**तद्वृद्धेश्वरमः, तस्योपरि रूपसंयुते प्रथमा ।**

**संख्यातभागवृद्धिः उपर्यतो रूपपरिवृद्धिः ॥१०५॥**

टीका - तीहि अवक्तव्य भाग वृद्धि का अंत अवगाहन स्थान हो है । बहुरि ए अवक्तव्य भाग वृद्धि स्थानकनि के भेद कितने है ? सो कहिए है - 'आदी अंते सुद्धे वट्ठिहिदे रूवसंजुदे ठाणे' इस करण सूत्र करि अवक्तव्य भाग वृद्धि का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण अतस्थान का प्रदेश प्रमाण विषै घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि प्रमाण एक-एक का भाग देइ जे पाए तिनि में एक जोडै जितने होइ, तितने अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान है ।

बहुरि अब अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थानकनि की उत्पत्ति कौ अंक सदृष्टि करि व्यक्त करे है । जैसै जघन्य अवगाहना का प्रमाण अडतालीस सै (४८००), जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण सोलह, उत्कृष्ट संख्यात का प्रमाण १५, तहा भागहारभूत जघन्य परीतासंख्यात सोलह (१६) का भाग जघन्य अवगाहना अडतालीस सै (४८००) कौ दीए तीन सै पाए, सो इतने जघन्य अवगाहना तैं वधैं असंख्यात भाग वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान हो है । बहुरि तिस जघन्य अवगाहना अडतालीस सै कौ उत्कृष्ट संख्यात पंद्रह, ताका भाग दीए तीन सै बीस (३२०) पाए, सो इतने वधैं संख्यात भाग वृद्धि का प्रथम अवगाहना स्थान हो है । बहुरि इनि दोऊनि के बीच अंतराल विषै तीन सै एक कौ आदि देकरि तीन सै उगणीस ३०१, ३०२, ३०३, ३०४, ३०५, ३०६, ३०७, ३०८, ३०९, ३१०, ३११, ३१२, ३१३, ३१४, ३१५, ३१६, ३१७, ३१८, ३१९ पर्यन्त वधैं जे ए उगणीस स्थान भेद हो है, ते असंख्यात भाग वृद्धिरूप वा संख्यात भाग वृद्धिरूप न कहे जाड, जातैं जघन्य असंख्यात का भी वा उत्कृष्ट संख्यात का भी भाग दीए ते तीन सै एक आदि न पाइए है । काहे तैं ? जातैं जघन्य असंख्यात का भाग दीए तीन सै पाए, उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीए तीन सै बीस पाए, इनि तैं तिनकी सख्या हीन अधिक है । तातैं इनिकौ अवक्तव्य भाग वृद्धिरूप स्थान कहिए तां इहां अवक्तव्य भाग वृद्धि विषै भागहार का प्रमाण कैसा सभवै है ? सो कहिए है - जघन्य का प्रमाण अट्ठान्नीस

सै, ताकौ इस तीन सै एक प्रमाण भागहार का भाग दीए जो पाडाग, तितने का भागहार संभवै है । तहां 'हारस्य हारो गुणकौशराशेः' डम करण सूत्र करि भागहार का भागहार है, सो भाज्य राशि का गुणकार होइ, अंसै भिन्न गणित का आश्रय करि अडतालीस सै कौ तीन सै एक करि ताका अडतालीस सै का भाग दीए इतने प्रमाण तिस अवक्तव्य भागवृद्धि का प्रथम अवगाहन भेद के वृद्धि का प्रमाण हो है । सो अपवर्तन कीए तीन सै एक ही आवे है । सो यहु संख्यात-असंख्यातरूप भागहाररूप न कहा जाय; तातै अवक्तव्य भाग वृद्धिरूप कहा है ।

भावार्थ — इहां असा जो भिन्न गणित का आश्रय करि इहा भागहार का प्रमाण असा आवे है । बहुरि जैसे यहु अंकसंदृष्टि करि कथन कीया, अंसै ही अर्थ-संदृष्टि करि कथन जोडना । इस ही अनुक्रम करि अवक्तव्य भाग वृद्धि के अंतस्थान पर्यन्त स्थान ल्यावने । बहुरि तिस अवक्तव्य भाग वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान विषे एक प्रदेश जुडे संख्यात भाग वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । ताके आगे एक-एक प्रदेश की वृद्धि का अनुक्रम करि अवगाहन स्थान असंख्यात प्राप्त हो है ।

अवरद्धे अवर्ध्वारि, उद्धे तद्वृद्धिपरिसमत्तीह ।

रूपे तदुपरि उद्धे, होदि अवक्तव्यपदमपदं ॥१०६॥

अवरार्धे अवरोपरिवृद्धे तद्वृद्धिपरिसमाप्तिहि ।

रूपे तदुपरिवृद्धे, भवति अवक्तव्यप्रथमपदम् ॥१०६॥

टीका — जघन्य अवगाहना का आधा प्रमाणरूप प्रदेश जघन्य अवगाहना के ऊपरि वधते सते संख्यात भाग वृद्धि का अंतस्थान हो है । जातं जघन्य संख्यात का प्रमाण दोय है, ताका भाग दीए राशि का आधा प्रमाण हो है । बहुरि ए संख्यात भाग वृद्धि के स्थान केते हैं ? सो कहिए है - 'आदी अंते सुद्धे वद्विहिदे ख्वसजुदे ठाणे' इस सूत्र करि संख्यात भाग वृद्धि का आदिस्थान का प्रदेश प्रमाण कौ अंतस्थान का प्रदेश प्रमाण विषे घटाइ अवशेष कौ वृद्धि का प्रमाण एक का भाग दीए भी तितने ही रहे । तहा एक जोडे जो प्रमाण होइ, तितने संख्यात भाग वृद्धि के स्थान है । बहुरि संख्यात भाग वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान विषे एक प्रदेश जुडे, अवक्तव्य भागवृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान उपजै है । बहुरि ताके आगे एक-एक प्रदेश वधता अनुक्रम करि अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान असंख्यात उलंघि एक जायगा कहा, सो कहै है ।

रूऊणवरे अवरुस्सुवरिं संवड्ढिदे तदुक्कस्सं ।

तस्मिं पदेसे उड्ढे, पढमा संखेज्जगुणवड्ढि ॥१०७॥

रूपोनावरे अवरस्योपरि संवर्धिते तदुत्कृष्टं ।

तस्मिन् प्रदेशे वृद्धे प्रथमा संख्यातगुणवृद्धिः ॥१०७॥

टीका — एक घाटि जघन्य अवगाहना का प्रदेश प्रमाण जघन्य अवगाहना के ऊपरि बधतै सतै अवक्तव्य भाग वृद्धि का अंत उत्कृष्ट अवगाहना स्थान हो है । जातै जघन्य संख्यात का प्रमाण दोय है, सो दूणा भए संख्यात गुण वृद्धि का आदि स्थान होइ । तातै एक घाटि भए, याका अतस्थान हो है । इहा अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है — ‘आदी अंते सुद्धे’ इत्यादि सूत्र करि याके आदि कौ अत विषे घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि एक का भाग देइ एक जोडै जो प्रमाण होइ, तितने अवक्तव्य भाग वृद्धि के स्थान हो है । बहुरि तिस अवक्तव्य भाग वृद्धि का अंत स्थान विषे एक प्रदेश जुडै, संख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । ताकै आगे एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि संख्यात गुण वृद्धि के असंख्यात अवगाहना स्थान कौ प्राप्त होइ, एक स्थान विषे कह्या, सो कहै है —

अवरे वरसंखगुणे, तच्चरिमो तस्मिं रूपसंजुत्ते ।

उगाहणहि पढमा, होदि अवत्तव्वगुणवड्ढी ॥१०८॥

अवरे वरसंख्यगुणे, तच्चरमः तस्मिन् रूपसयुक्ते ।

अवगाहने प्रथमा, भवति अवक्तव्यगुणवृद्धिः ॥१०८॥

टीका — जघन्य अवगाहना कौ उत्कृष्ट संख्यात करि गुण जितने होइ, तितने प्रदेश जहां पाइए, सो संख्यात गुण वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान है । बहुरि ए संख्यात गुण वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है — पूर्ववत् ‘आदी अंते सुद्धे वट्ठिहिदे रूपसंजुदे ठाणे’ इत्यादि सूत्र करि याका आदि कौ अत विषे घटाइ, वृद्धि एक का भाग देई, एक जोडै, जितने पावै तितने है । बहुरि आगे संख्यात गुण वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान विषे एक प्रदेश जोडै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । यातै आगे एक-एक प्रदेश की वृद्धि करि अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान असंख्यात प्राप्त करि एक स्थान विषे कह्या, सो कहै है —

अवरपरितासंख्येनावरं संगुणिय रूपपरिहीणे ।  
तच्चरिमो रूपजुदे, तस्मि असंखेज्जगुणपढमं ॥१०६॥

अवरपरीतासंख्येनावरं संगुण्य रूपपरिहीने ।  
तच्चरमो रूपयुते, तस्मिन् असंख्यातगुणप्रथमम् ॥१०९॥

टीका - जघन्य परीता असंख्यात करि जघन्य अवगाहना कौं गुणि, तामै एक घटाए जो प्रमाण होइ, तितने प्रदेशरूप तिस अवक्तव्य गुण वृद्धि का अंत अवगाहना स्थान हो है । ए अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान केते है ? सो कहिए है - पूर्ववत् 'आदी अंते सुद्धे' इत्यादि सूत्र करि याका आदि कौं अंत विषे घटाए, अवशेष कौं वृद्धि एक का भाग देइ एक जोड़, जितने होइ तितने हैं । वहरि इहां अवक्तव्य गुण वृद्धि का स्वरूप अंकसंदृष्टि करि अवलोकिए हैं । जैसे जघन्य अवगाहना का प्रमाण सोलह (१६), एक घाटि जघन्य परीता असंख्यात प्रमाण जो उत्कृष्ट संख्यात, ताका प्रमाण तीन, ताकरि जघन्य कौं गुण अडतालीस होइ । वहरि जघन्य परिमित असंख्यात का प्रमाण च्यारि, ताकरि जघन्य कौं गुण चौसठि होइ, इनिके त्रीवि जे भेद, ते अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान है । जातैं इनि कौ संख्यात वा असंख्यात गुण वृद्धि रूप कहे न जाइ, तहां जघन्य अवगाहन सोलह कौ एक घाटि परीता संख्यात तीन करि गुण अडतालीस होइ, तामें एक जोड़ें अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान हो है । याकौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग दीए पाया गुणचास का सोलहवा भाग प्रमाण अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान ल्यावने कौ गुणकार हो है । याकरि जघन्य अवगाहन कौ गुणि अपवर्तन कीए अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान गुणचास प्रदेश प्रमाण हो है । अथवा अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम स्थान एक अधिक तिगुणां सोलह, ताकौ जघन्य अवगाहना सोलह, ताका भाग देइ पाया एक सोलहवा भाग अधिक तीन, ताकरि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुण गुणचास पाए, तितने ही प्रदेश प्रमाण अवक्तव्य गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है । जैसे अन्य उत्तरोत्तर भेदनि विषे भी गुणकार का अनुक्रम जानना । तहा अवक्तव्य गुण वृद्धि का अंत का अवगाहना स्थान, सो जघन्य अवगाहन सोलह कौ जघन्य परिमिता संख्यात च्यारि करि गुण जो पाया, तामें एक च्याट, तरेसठि होइ, सो इतने प्रदेश प्रमाण है । वहरि याकौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग देइ, पाया तरेसठि का सोलहवां भाग, सोई अवक्तव्य गुण वृद्धि का

अंत अवगाहना स्थान ल्यावने विषै गुणकार हो है । याकरि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुणै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहन स्थान की उत्पत्ति हो है; सो अवलोकनी । अथवा अवक्तव्य गुण वृद्धि के अत अवगाहन स्थान तरेसठि कौ जघन्य अवगाहन सोलह का भाग देइ पाया तीन अर पंद्रह सोलहवा भाग, इस करि जघन्य अवगाहन सोलह कौ गुणै, अवक्तव्य गुण वृद्धि का अत अवगाहना स्थान का प्रदेश प्रमाण हो है । सो सर्व अवक्तव्य गुण वृद्धि का स्थापन गुणचास आदि एक-एक बधता तरेसठि पर्यन्त जानना । ४६, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३ । बहुरि इस ही अनुक्रम करि अर्थसदृष्टि विषै भी एक घाटि जघन्य अवगाहन प्रमाण इस अवक्तव्य गुण वृद्धि के स्थान जानने । बहुरि अब पूर्वोक्त अवक्तव्य गुण वृद्धि का अंत अवगाहन स्थान विषै एक प्रदेश जुडै, असंख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान हो है ।

**रूपोत्तरेण ततो, आवलियासंख्यभागगुणगारे ।**

**तप्पाउगो जादे, वाउस्सोगाहणं कमसो ॥११०॥**

रूपोत्तरेण तत, आवलिकासंख्यभागगुणकारे ।

तत्प्रायोग्ये जाते, वायोरवगाहन क्रमशः ॥११०॥

टीका — ततः कहिए तीहि असंख्यात गुण वृद्धि का प्रथम अवगाहन स्थान तै आगे एक-एक प्रदेश वृद्धि करि असंख्यात गुण वृद्धि के अवगाहन स्थान असंख्यात हो है । तिनिकौ उलघि एक स्थान विषै यथायोग्य आवलि का असंख्यातवा भाग प्रमाण असंख्यात का गुणकार, सो सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्त निगोद का जघन्य अवगाहन गुण्य का होते सते सूक्ष्म वायुकायिक लब्धि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान की उत्पत्ति हो है । इहा ए केते स्थान भए ? तहा 'आदी अंते सुद्धे' इत्यादि सूत्र करि आदि स्थान कौ अत स्थान विषै घटाइ, अवशेष कौ वृद्धि एक का भाग देइ लब्ध राशि विषै एक जोडै, स्थानकनि का प्रमाण हो है ।

आगे सर्व अवगाहन के स्थानकनि का गुणकार की उत्पत्ति का अनुक्रम कहै हैं—

**एवं उवरि वि रोओ, पदेसवड्ढिक्कमो जहाजोगं ।**

**सव्वत्थेक्केकहि य, जीवसमासाण विच्चाले ॥१११॥**

एवमुपर्यपि ज्ञेयः, प्रदेशवृद्धिक्रमो यथायोग्यम् ।

सर्वत्रैकैकस्मिंश्च जीवसमासानामंतराले ॥१११॥

टीका - एवं कहिए इस ही प्रकार जैसे सूक्ष्म निगोद लव्वि अपर्याप्तक का जघन्य अवगाहना स्थान कौं आदि देकरि सूक्ष्म लव्वि अपर्याप्त वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यन्त पूर्वोक्त प्रकार चतुःस्थान पतित प्रदेश वृद्धि का अनुक्रम विधान कह्या, तैसें ऊपरि भी सूक्ष्म लव्वि अपर्याप्तक तेजकाय का जघन्य अवगाहन तै लगाइ द्वीन्द्रिय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यन्त जीवसमास का अवगाहना स्थानकनि का अंतरालनि विपै प्रत्येक जुदा-जुदा चतुःस्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम करि प्राप्त होइ यथायोग्य गुणकार की उत्पत्ति का विधान जानना ।

भावार्थ - जैसे सूक्ष्मनिगोद लव्वि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान अर सूक्ष्म वायुकायिक लव्वि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान के बीच अंतराल विपै चतुःस्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम विधान कह्या । तैसें ही सूक्ष्म वायुकायिक लव्वि अपर्याप्त अर सूक्ष्म तेजकायिक लव्वि अपर्याप्तकनि का अंतराल विपै वा असें ही द्वीन्द्रिय पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान पर्यंत अगिले अंतरालनि विपै चतुःस्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम विधान जानना । विषेप इतना - तहां आदि अवगाहन स्थान का वा भाग वृद्धि, गुण वृद्धि विपै असंख्यात का प्रमाण वा अनुक्रम वा स्थानकनि का प्रमाण इत्यादि यथासंभव जानने ।

बहुरि तैसें ही ताके आगे तेइंद्री पर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान आदि देकरि मजी पंचेद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत अवगाहन स्थानकनि का एक-एक अंतराल विपै असंख्यात गुण वृद्धि विना त्रिस्थान पतित प्रदेशनि की वृद्धि का अनुक्रम करि प्राप्त होइ यथायोग्य गुणकार की उत्पत्ति का विधान जानना ।

भावार्थ - इहां पूर्वस्थान तै अगिला स्थान संख्यात गुणा ही है । ताते तहां अनन्यात गुण वृद्धि न संभवै है, त्रिस्थान पतित वृद्धि ही संभवै है । इहां भी विषेप इतना - जो आदि अवगाहना स्थान का वा भाग वृद्धि विपै असंख्यात का वा गुण वृद्धि विपै नन्यात का प्रमाण वा अनुक्रम वा स्थानकनि का प्रमाण इत्यादिक यथासंभव जानने । ऐसे इहा प्रसंग पाइ चतुःस्थान पतित वृद्धि का वर्णन कीया है ।

बहुरि कही पदस्थान पतित, कही पंचस्थान पतित, कही चतुःस्थान पतित, कही त्रिस्थान पतित, कही द्विस्थान पतित, कही एकस्थान पतित वृद्धि संभवै है । प्रत्येक कही तेनें ही हानि संभवै है, तहां भी ऐसे ही विधान जानना । तहां जाका विधान होत तेना जो विवक्षित, ताके आदि स्थान के प्रमाण तै अगले स्थान विपै

अर उत्कृष्ट असंख्यात पंद्रह तै भी याका प्रमाण अधिक भया, तातै याकीं असंख्यात भागरूप न कहा जाय । जातै उत्कृष्ट तै अधिक अर जघन्य तै हीन कहना असंभव है, तातै इहां अवक्तव्य भाग का ग्रहण कीया । जैसे ही आगे भी यथासंभव अवक्तव्य भाग वृद्धि वा गुण वृद्धि वा अवक्तव्य भाग हानि वा गुण हानि का स्वरूप जानना । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान पचीस सै साठि प्रमाण रूप भया, तहां असंख्यात भाग वृद्धि आदि संभवै है । जातै उत्कृष्ट असंख्यात पंद्रह का भाग आदि स्थान कीं दीए एक सौ साठि पाए, सोई इहां आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण है । बहुरि ऐसे ही जिस-जिस स्थान त्रिपै आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण संभवने असंख्यात के भेद का भाग आदि स्थान कीं दीए आवै, तहां-तहां असंख्यात भाग वृद्धि संभवै है । तहां जो स्थान अठाइस सै प्रमाणरूप भया, तहां असंख्यात भाग वृद्धि का अंत जानना । जातै जघन्य असंख्यात छह, ताका भाग आदि स्थान कीं दीए चारि सै पाए, सोई इहां इतने आदि स्थान तै अधिक है । बहुरि जे स्थान अठ्ठाइस सै एक आदि अठ्ठाईस सै गुण्यासी पर्यंत प्रमाणरूप हैं, तहां अवक्तव्य भाग वृद्धि संभवै है । जातै जघन्य असंख्यात का भी वा उत्कृष्ट संख्यात का भी भाग की वृद्धिरूप प्रमाण तै इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान अठ्ठाईस सै असी प्रमाणरूप भया, तहां संख्यात भाग वृद्धि का आदि संभवै है । जातै उत्कृष्ट संख्यात पाच, ताका भाग आदि स्थान कीं दीए चारि सै असी पाए, सोई इतने इहां आदि स्थान तै अधिक हैं । बहुरि जैसे ही जिस-जिस स्थान त्रिपै आदि स्थान तै अधिक का प्रमाण संभवने संख्यात के भेद का भाग आदि स्थान कीं दीए आवै, तहां-तहां संख्यात भाग वृद्धि संभवै है । यहां जो स्थान छत्तीस सै प्रमाणरूप भया, तहां संख्यात भाग वृद्धि का अंत जानना । जातै जघन्य संख्यात दोय, ताका भाग आदि स्थान कीं दीए बारह सै पाए, सो इतने इहां आदि स्थान तै अधिक हैं । बहुरि जे स्थान छत्तीस सै एक आदि सैतालीस सै निन्याणवे पर्यंत प्रमाणरूप हैं, तहां अवक्तव्य भाग वृद्धि संभवै है । जातै जघन्य संख्यात भाग वृद्धि वा जघन्य संख्यात गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होइ जो स्थान अडतालीस सै प्रमाणरूप भया, तहां संख्यात गुण वृद्धि का आदि संभवै है; जातै जघन्य संख्यात दोय, ताकरि आदि स्थान कीं गुण इतना प्रमाण हो है । जैसे ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण संभवने संख्यात के भेद करि आदि स्थान कीं गुण आवै, तहां-तहां संख्यात गुण वृद्धि संभवै है । तहां जो स्थान बारह हजार प्रमाणरूप भया, तहां संख्यात

गुण वृद्धि का अंत जानना । जातें उत्कृष्ट संख्यात पांच, ताकरि आदि स्थान कौ गुण इतना प्रमाण हो है । बहुरि जे स्थान बारह हजार एक तै लगाई चौदह हजार तीन सौ निन्याणवै पर्यंत प्रमाणरूप हैं, तहां अवक्तव्य गुण वृद्धि संभव है । जातें उत्कृष्ट संख्यात गुण वृद्धि वा जघन्य असंख्यात गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होई जो स्थान चौदह च्यारि सै प्रमाणरूप भया, तहा असंख्यात भागवृद्धि<sup>१</sup> का आदि संभव है । जातें जघन्य असंख्यात छह, ताकरि आदि स्थान कौ गुण, इतना प्रमाण हो है । बहुरि असै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सभवते असंख्यात के भेद करि आदि स्थान कौ गुण आवै, तहां-तहा असंख्यात गुण वृद्धि<sup>२</sup> संभव है । तहां जो स्थान छत्तीस हजार प्रमाणरूप भया, तहां असंख्यात गुण वृद्धि<sup>३</sup> का अंत जानना । जातें उत्कृष्ट असंख्यात पंद्रह, ताकरि आदि स्थान कौ गुण इतना प्रमाण हो है । बहुरि जे स्थान छत्तीस हजार एक आदि अड़तीस हजार तीन सै निन्याणवै पर्यंत प्रमाणरूप है, तहां अवक्तव्य गुण वृद्धि संभव है । जातें उत्कृष्ट असंख्यात गुण वृद्धि वा जघन्य अनंत गुण वृद्धिरूप प्रमाण तै भी इनिका प्रमाण अधिक हीन है । बहुरि वृद्धिरूप होई जो स्थान अड़तीस हजार च्यारि सै प्रमाणरूप भया, तहां अनंत गुणवृद्धि का आदि संभव है, जातें जघन्य अनंत सोलह, ताकरि आदि स्थान कौ गुण इतना प्रमाण हो है ।

बहुरि असै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण सम्भव तै अनन्त का भेद करि आदि स्थान कौ गुण आवै, तहां अनन्त गुण वृद्धि सम्भव है । तहां जो स्थान दोय लाख चालीस हजार प्रमाण रूप भया, तहा अनन्त गुण वृद्धि का अंत जानना । जातें यद्यपि अनन्त का प्रमाण बहुत है, तथापि इहां जिस अनन्त के भेद करि गुणित अंतस्थान होई, सोई अनन्त का भेद इहा अंत विषे ग्रहण करना । सो अंकसंदृष्टि विषे एक सौ प्रमाण अनन्त के भेद का अंत विषे ग्रहण किया । तीहिकरि आदि स्थान कौ गुण दोय लाख चालीस हजार होई, सोई विवक्षित के अतस्थान का प्रमाण जानना । असै इहां षट्स्थान पतित वृद्धि का विधान दिखाया ।

अब षट्स्थान पतित हानि का विधान दिखाइए है । इहा विवक्षित का आदि स्थान दोय लाख चालीस हजार प्रमाणरूप स्थापन किया । यातें घटि करि दूसरा स्थान जो दोय लाख गुणतालीस हजार नौ सै निन्याणवै प्रमाणरूप भया, सो

१. ख प्रति मे गुणवृद्धि है । २ व प्रति मे यहा भागवृद्धि है । ३ ब प्रति मे यहा भागवृद्धि है ।



स्थान कौं कीए जो प्रमाण होइ, तिन तै इनिका प्रमाण हीन अधिक है । वहुँरि हानिरूप होइ जो स्थान पंद्रह हजार प्रमाणरूप भया, तहां अनंत गुणहानि का आदि जानना । जातै जघन्य अनंत सोलह, सो आदि स्थान कौं सोलह गुणा घाटि कीए इतना प्रमाण आवै है । वहुँरि अंसै ही जिस-जिस स्थान का प्रमाण संभवते अनंत का भेद करि गुण आदि स्थान मात्र होइ, सो-सो स्थान अनंत गुणहानिरूप जानना । तहां जो स्थान चौबीस सै प्रमाण रूप भया, सो स्थान अनंत गुणहानि का अंतरूप है । जातै यद्यपि अनंत का प्रमाण बहुत है; तथापि इहा आदि स्थान तै अंत स्थान जितने गुणा घाटि होइ, तितने प्रमाण ही अनंत का अंत विषे ग्रहण करना, सो अंकसंदृष्टि विषे जो प्रमाण अनंत का भेद ग्रहण किया, सो आदि स्थान कौं सौ गुणा घाटि कीए इतना ही प्रमाण आवै है । या प्रकार जैसे अंक-संदृष्टि करि कथन किया, तैसे ही यथार्थ कथन अवधारण करना । इतना विशेष — तहां जघन्य संख्यात का प्रमाण दोय है । उत्कृष्ट संख्यात का एक घाटि जघन्य परीतासंख्यात मात्र है । जघन्य असंख्यात का जघन्य परीतासंख्यात प्रमाण है । उत्कृष्ट असंख्यात का उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात मात्र है । जघन्य अनंत का जघन्यपरीतानत प्रमाण है । उत्कृष्ट अनंत का केवलज्ञानमात्र है, तथापि इहां भाग वृद्धि वा हानि विषे तौ आदि स्थान प्रमाण अर गुण वृद्धि वा हानि विषे आदि स्थान तै अंत स्थान जितने गुणा वधता वा घटता होइ, तीहि प्रमाण अनंत का ही अंत विषे ग्रहण करना । वहुँरि जाका निरूपण कीजिए, ताकौं विवक्षित कहिए, ताका आदि भेद विषे जितना प्रमाण होइ, सो आदि स्थान का प्रमाण जानना । ताके आगे अगिले स्थान वृद्धिरूप वा हानिरूप होइ, तिनिका प्रमाण यथासम्भव जानना । इत्यादिक विशेष होइ, सो विशेष जानना अर अन्य विधान अंकसंदृष्टि करि जानना । वहुँरि जहां आदि स्थान का प्रमाण असंख्यातरूप ही होइ, तहां अनंत भाग की वृद्धि वा हानि न संभवै, जहा आदि स्थान का प्रमाण संख्यातरूप ही होइ, तहा अनंत भाग अर असंख्यात भाग की वृद्धि वा हानि न संभवै है । वहुँरि जहाँ आदि स्थान तै अंत स्थान का प्रमाण असंख्यात गुणा ही अधिक वा हीन होइ, तहां अनंत गुण वृद्धि वा हानि न संभवै है । जहां आदि स्थान तै अंत स्थान का प्रमाण संख्यात गुणा ही अधिक वा हीन होइ, तहां अनंत वा असंख्यात गुणी वृद्धि वा गुणहानि न संभवै है; नाने वही पत्र स्थान पतित, कही चतुस्थान पतित, कहीं त्रीस्थान पतित, कहीं द्विस्थान पतित, कहीं एकस्थान पतित वृद्धि वा हानि यथासंभव जाननी । जैसे

ही आदि स्थान की अपेक्षा लीए वृद्धि-हानि का स्वरूप कह्या । बहुरि कही एक स्थान का प्रमाण की अपेक्षा दूसरा स्थान विषै वृद्धि वा हानि कही, दूसरा स्थान का प्रमाण की अपेक्षा तीसरा स्थान विषै वृद्धि वा हानि कही; अैसे स्थान-स्थान प्रति वृद्धि वा हानि का अनुक्रम हो है । तहां अनंत भागादिरूप वृद्धि वा हानि होइ, सो यथासंभव जाननी । बहुरि पर्यायसमास नामा श्रुतज्ञान के भेद वा कषाय स्थान इत्यादिकनि विषै संभवती षट्स्थान पतित वृद्धि वा हानि के अनुक्रम का विधान आगै ज्ञानमार्गणा अधिकार विषै लिखेंगे, सो जानना । अैसे वृद्धि-हानि का विधान अनुक्रम अनेक प्रकार है, सो यथासंभव है । अैसे प्रसंग पाइ षट्गुणी आदि हानि-वृद्धि का वर्णन कीया ।

आगै जिस-जिस जीवसमास के अवगाहन कहे, तिस-तिसके सर्व अवगाहन के भेदनि के प्रमाण कौ ल्यावै है —

हेट्ठा जेसिं जहण्णं, उवरिं उक्कस्सयं हवे जत्थ ।  
तत्थंतरगा सव्वे, तेसिं उग्गाहणविअप्पा ॥११२॥

अधस्तनं येषां, जघन्यमुपर्युत्कृष्टकं भवेद्यत्र ।  
तत्रांतरगाः सर्वे, तेषामवगाहनविकल्पाः ॥११२॥

टीका — इहा मत्स्यरचना कौ मन विषै विचारि यहु कहिये है — जो जिन अवगाहना स्थाननि का प्रदेश प्रमाण थोरा होइ, ते अधस्तन स्थान है । बहुरि जिन अवगाहना स्थाननि का प्रदेश प्रमाण बहुत होइ, ते उपरितन स्थान है, ऐसा कहिये है । सो जिन जीवनि का जघन्य अवगाहना स्थान तौ नीचै तिष्ठै अर जहां उत्कृष्ट अवगाहना स्थान ऊपरि तिष्ठै, तिनि दोऊनि का अतराल विषै वर्तमान सर्व ही अवगाहना के स्थान तिन जीवनि के मध्य अवगाहना स्थान के भेदरूप है — ऐसा सिद्धात विषै प्रतिपादन कीया है ।

भावार्थ — पूर्वे अवगाहन के स्थान कहे, तिनि विषै जिसका जघन्य स्थान जहा कह्या होइ, तहातै लगाइ एक-एक प्रदेश की वृद्धि का अनुक्रम लीए जहा तिस ही का उत्कृष्ट स्थान कह्या होइ, तहा पर्यंत जेते भेद होंइ, ते सर्वे ही भेद तिस जीव की अवगाहना के जानने । तहां सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्त का पूर्वोक्त प्रमाणरूप जो जघन्य स्थान, सो तो आदि जानना । बहुरि इस ही का पूर्वोक्त प्रमाणरूप जो

उत्कृष्ट स्थान, सो अंत जानना । तहा 'आदी अंत सुद्धे वट्टिहिदे ह्वसंजुदे ठाणे' इस करण मूत्र करि आदि का प्रमाण कीं अंत का प्रमाण समच्छेद विपे अपवर्तनादि विधान करि घटाए जो अवशेष प्रमाण रहै, ताका स्थान-स्थान प्रति वृद्धिरूप जो एक प्रदेश, ताका भाग दीए भी तेता ही रहै, तामें एक जोड़ जो प्रमाण होइ, तितने मूक्षम निगोद लव्वि अपर्याप्तक जीवनि के सब अवगाहना के भेद है । इनमें आदि स्थान अर अंत स्थान, इनि दोऊनि की घटाये अवशेष तिस ही जीव के मध्यम अवगाहना के स्थान हो हैं । वहरि इस ही प्रकार मूक्षम लव्वि अपर्याप्तक वायुकायिक जीव आदि देकरि संजी पंचैत्री पर्याप्त पर्यंत जीवनि के अपने-अपने जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, अपने-अपने उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यंत सर्व अवगाहना के स्थान, अर तिनि विपे जघन्य-उत्कृष्ट दोय स्थान घटाये तिन ही के मध्य अवगाहना स्थान, ते मूत्र के अनुसारि ल्याईये ।

अब मत्स्यरचना के मध्य प्राप्त भए ऐसे सर्व अवगाहना स्थान, तिनिके स्थापना का अनुक्रम कहिये है । पूर्वे अवगाहना के स्थान चौसठि कहे थे, तिनि विपे ऊपरि की पंक्ति विपे प्राप्त जे वियालीस गुणकाररूप स्थान, तिनिकी गुणित क्रमस्थान कहिये । वहरि नीचै की दोय पंक्तिनि विपे प्राप्त जे बाबीस अविकरूप स्थान, तिनिकी अविक स्थान कहिये । तहां चौसठि स्थाननि विपे गुणित क्रमरूप वा अविकरूप स्थान अपने-अपने जघन्य तै लगाइ अपने-अपने उत्कृष्ट पर्यंत जेते-जेते होइ, तिनि एक-एक स्थान की दोय-दोय विंदी बरोवरि लिखनी; जातै एक-एक स्थान के बीचि अवगाहना के भेद बहुत हैं । तिनिकी संदृष्टि के अर्थि दोय विंदी म्यापी, वहरि तिनि जीवसमासनि विपे सभवते स्थाननि की नीचै-नीचै पंक्ति करनी । ऐसे स्थापे माछलेकासा आकार हो है, सो कहिए है । ( देखिए पृष्ठ २२६-२३० )

प्रथम मूक्षम निगोद लव्वि अपर्याप्त का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ ताही का उत्कृष्ट पर्यंत सतरह स्थान हैं । तहां सोलह गुणित स्थान हैं । एक अधिकम्यान है । सो प्रथमादि एक-एक स्थान की दोय-दोय विंदी की संदृष्टि करने करि चानीस विंदी बरोवरि ऊपरि पंक्ति विपे लिखनी । इहां मूक्षम निगोद लव्वि अपर्याप्त का जघन्य स्थान पहला है, उत्कृष्ट अठारहवां है, तथापि गुणाकारपना वा अधिकपनारूप अंतराल सतरह ही है; तातै सतरह ही स्थान अहे है । ऐसे आगे भी जानना । वहरि तैसे ही तिस पंक्ति के नीचै दूसरी पंक्ति विपे सूक्ष्म लव्वि वायुकायिक जीव का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ ताके उत्कृष्ट

[illegible]



अवगाहना स्थान पर्यंत उगणीस स्थान है, तिनकी अड़तीस बिंदी लिखना । सो इहा दूसरा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पक्ति विषै दोय बिंदी प्रथम स्थान की लिखी थी, तिनकी नीचा कौ छोडि द्वितीय स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ आगै बरोबरि अड़तीस बिंदी लिखनी । बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै तीसरी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक तेजस्कायिक का जघन्य अवगाहन तै उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत इकईस स्थान है, तिनकी बियालीस बिंदी लिखनी । सो इहा तीजा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि की पक्ति विषै दूसरा स्थान की दोइ बिंदी लिखी थी, तिनके नीचा कौ भी छोडि तीसरी स्थानक की दोइ बिंदी तै लगाइ बियालीस बिंदी लिखनी । बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै चौथी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक अप्कायिक का जघन्य अवगाहन स्थान तै लगाइ, ताका उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यंत तेवीस स्थाननि की छियालीस बिंदी लिखनी । सो इहा चौथा स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै तीसरा स्थानक की दोय बिंदी का नीचा कौ छोडि चौथा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ छियालीस बिंदी लिखनी । बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै पाचमी पक्ति विषै सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक पृथ्वीकायिक का जघन्य अवगाहन तै लगाइ ताका उत्कृष्ट अवगाहन पर्यंत पचीस स्थान है; तिनकी पचास बिंदी लिखनी । सो इहा पांचवां स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै चौथा स्थान की दोय बिंदी का भी नीचा कौ छोडि पाचवा स्थानक की दोय बिंदी तै लगाइ पचास बिंदी लिखनी । बहुरि तैसै ही तिस पक्ति के नीचै-नीचै छठी, सातमी, आठवी, नवमी, दशमी, ग्यारहमी बारहवी, तेरहवी, चौदहवी, पंद्रहवी, सोलहवी पक्ति विषै बादर लब्धि अपर्याप्तक वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक, अप्रतिष्ठित प्रत्येक, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिद्रिय, पचेद्रिय इनि ग्यारहनि का अपना-अपना जघन्य स्थान तै लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यंत अनुक्रम तै सत्ताईस, गुणतीस, इकतीस, तेतीस, पैतीस, सैतीस, छियालिस, चवालीस, इकतालीस, इकतालीस, तियालीस स्थान है । तिनकी चौवन, अठावन, बासठि, छ्यासठि, सत्तरि, चौहत्तरि, बाणवै, अठासी, बियासी, छियासी बिंदी लिखनी । सो इहा छठा, सातवा आदि स्थान तै लगाइ स्थान है, तातै ऊपरि पक्ति का आदि स्थान की दोय-दोय बिंदी का नीचा कौ छोडि छठा, सातवा आदि स्थान की दोय बिंदी तै लगाइ ए बिंदी तिन पंक्तिनि विषै क्रम तै लिखनी ।

बहुरि तिस पचेद्रिय लब्धि अपर्याप्तक की पक्ति के नीचे सतरहवी पंक्ति विषै सूक्ष्मनिगोद पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट अवगाहना स्थान

पर्यन्त दोय स्थान है, तिनिकी च्यारि विदी लिखनी । वहरि इस ही प्रकार आगै  
 इस एक ही पंक्ति विषै सूक्ष्म पर्याप्त वायु, तेज, अप्, पृथ्वी, वहरि बादर पर्याप्त वायु,  
 तेज, पृथ्वी, अप्, निगोद, प्रतिष्ठित प्रत्येक इनिका अपना-अपना जघन्य अवगाहना  
 स्थान कौ आदि देकरि अपना-अपना उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यन्त दोय-दोय  
 स्थाननि की च्यारि-च्यारि विदी लिखनी । वहरि अैसे ही प्रतिष्ठित प्रत्येक का  
 उत्कृष्ट अवगाहन स्थान तै आगै तिस ही पक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक पर्याप्त का  
 जघन्य अवगाहना स्थान तै लग इ उत्कृष्ट अवगाहना स्थान पर्यन्त तेरह स्थान हैं ।  
 तिनिकी छव्वीस विदी लिखनी । अैसे इस एक ही पंक्ति विषै विदी लिखनी कही ।  
 तहां पर्याप्त सूक्ष्म निगोद का आदि स्थान सतरहवा है, तातै इनिके दोय स्थाननि  
 की सोलहवां स्थान की दोय विदीनि का नीचा कौ छोडि सतरहवां अठारहवां स्थान की  
 च्यारि विदी लिखनी । वहरि सूक्ष्म पर्याप्त का आदि स्थान बीसवां है । तातै तिस ही  
 पक्ति विषै उगणीसवां स्थान की दोय विदी का नीचा कौ छोडि बीसवां, इकईसवां  
 दोय स्थाननि की च्यारि विदी लिखनी । अैसे ही बीचि-बीचि एक स्थान की दोय-  
 दोय विदी का नीचा कौ छोडि-छोडि सूक्ष्म पर्याप्त तेज आदिक के दोय-दोय स्थाननि  
 की च्यारि-च्यारि विदी लिखनी । वहरि तिस ही पंक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक के  
 पचासवा तै लगाइ स्थान है, तातै पचासवा स्थानक की विदीनि तै लगाइ तेरह  
 स्थाननि की छव्वीस विदी लिखनी, अंसे एक-एक पक्ति विषै कहे । वहरि तिस  
 पक्ति के नीचे-नीचे अठारमी, उगणीसमी, बीसमी, इकवीसमी पक्ति विषै पर्याप्त  
 द्रोत्रिय, त्रोत्रिय, चतुरिद्रिय, पंचेंद्रिय जीवनि का अपना-अपना जघन्य अवगाहन स्थान  
 तै लगाइ उत्कृष्ट स्थान पर्यन्त ग्यारह, आठ, आठ, दश स्थान हैं । तिनिकी क्रम तै  
 बाईस, सोलह, सोलह, बीस विदी लिखनि । तहा पर्याप्त वेन्द्रिय के इक्यावन तै  
 लगाइ स्थान हैं, तातै सतरहवी पक्ति विषै अप्रतिष्ठित प्रत्येक की छव्वीस विदी  
 निखी थी, तिनिके नीचे आदि की पचासवा स्थान की दोय विदी का नीचा कौ  
 छोडि आगै बाईस विदी लिखनी । वहरि अैसे ही नीचे-नीचे आदि की दोय-दोय  
 विदी का नीचा कौ छोडि बावनवां, तरेपनवां, चावनवा स्थानक की विदी तै लगाइ  
 क्रम तै सोलह, सोलह, बीस विदी लिखनी । या प्रकार मत्स्यरचना विषै सूक्ष्म  
 निगोद निचि पर्याप्त का जघन्य अवगाहना स्थान कौ आदि देकरि सजी पंचेंद्री  
 पर्याप्त का उत्कृष्ट अवगाहन स्थान पर्यन्त सर्व अवगाहन स्थाननि की प्रत्येक दोय-  
 दोय स्थान की विद्या करि तिन स्थानकनि की गगुती के आश्रय अैसा हीनाधिक तै

रहित बिदीनि के स्थापन का अनुक्रम, सो अनादिनिधन ऋषि प्रणीत आगम विषे कह्या है । ऐसै जीवसमासनि की अवगाहना कहि ।

अब तिनके कुल की सख्या का जो विशेष, ताकौ गाथा च्यारि करि कहै है —

बावीस सत्त तिण्णि य, सत्त य कुलकोडिसयसहस्साइं ।  
गोया पुढविदगागणि, वाउक्कायाण परिसंखा ॥११३॥

द्वाविंशतिः सप्त त्रीणि, च सप्त च कुलकोटिशतसहस्राणि ।  
ज्ञेया पृथिवीदकाग्निवायुकायिकानां परिसंख्या ॥११३॥

टीका — पृथ्वी कायिकनि के कुल बाईस लाख कोडि है । अप् कायिकनि के कुल सात लाख कोडि है । तेज कायिकनि के कुल तीन लाख कोडि है । वायु कायिकनि के कुल सात लाख कोडि है; अैसे जानना ।

कोडिसयसहस्साइं, सत्तट्ठणव य अट्ठवीसाइं ।  
बेइंदिय-तेइंदिय-चउरिंदियहरिदकायाणां ॥११४॥

कोटिशतसहस्राणि, सप्ताष्ट नव च अष्टाविंशतिः ।  
द्वौद्रियत्रौद्रियचतुरिंद्रियहरितकायानाम् ॥११४॥

टीका — बेद्रिय के कुल सात लाख कोडि है । त्रीद्रियनि के कुल आठ लाख कोडि है । चतुरिंद्रियनि के कुल नव लाख कोडि है । वनस्पति कायिकनि के कुल अठाईस लाख कोडि है ।

अद्धत्तेरस बारस, दसयं कुलकोडिसदसहस्साइं ।  
जलचर-पक्खि-चउप्पय-उरपरिसप्पेसु णव होंति ॥११५॥

अर्धत्रयोदश द्वादश, दशकं कुलकोटिशतसहस्राणि ।  
जलचरपक्षिचतुष्पदोरुपरिसर्पेषु नव भवन्ति ॥११५॥

टीका — पंचेद्रिय विषे जलचरनि के कुल साडा बारा लाख कोडि है । पक्षीनि के कुल बारा लाख कोडि है । चौपदनि के कुल दण लाख कोडि है । उरसर्प जे सरीसृप आदि, तिनके कुल नव लाख कोडि है ।



छप्पंचाधियवीसं, बारसकुलकोडिसदसहस्साइं ।  
सुर-णेरइय-णराणं, जहाकमं होंति णेयाणि ॥११६॥

षट्पंचाधिकविंशतिः, द्वादश कुलकोटिशतसहस्राणि ।  
सुरनैरयिकनराणां, यथाक्रम भवति ज्ञेयानि ॥११६॥

टीका - देवनि के कुल छब्बीस लाख कोडि है । नारकीनि के कुल पचीस लाख कोडि है । मनुष्यनि के कुल बारह लाख कोडि है । ए सर्व कुल यथाक्रम करि कहे, ते भव्य जीवनि करि जानने योग्य है ।

आगै सर्व जीवसमासनि के कुलनि के जोड कौ निर्देश करै है -

एया य कोडिकोडी, सत्ताणउदी य सदसहस्साइं ।  
पण्णं कोडिसहस्सा, सव्वंगीणं कुलाणं य ॥११७॥

एका च कोटिकोटी, सप्तनवतिश्च शतसहस्राणि ।  
पचाशत्कोटिसहस्राणि सर्वाणिनां कुलानां च ॥११७॥

टीका - जैसे कहे जे पृथ्वीकायिकादि मनुष्य पर्यन्त सर्व प्राणी, तिनके कुलनि का जोड एक कोडा-कोडि अर सत्याणत्रै लाख पचास हजार कोडि प्रमाण (१८७५००००००००००००) है ।

इहा कोऊ कहै कि कुल अर जाति विपै भेद कहा ?

ताका समाधन - जाति है सो तो योनि है, तहा उपजने के स्थानरूप पुद्गल स्कंध के भेदनि का ग्रहण करना । बहुरि कुल है सो जिनि पुद्गलनि करि शरीर निपजै, तिनके भेदरूप हैं । जैसे शरीररूप पुद्गल आकारादि भेद करि पचेद्रिय निर्यच विपै हाथी, घोडा इत्यादि भेद है, जैसे यथासभव जानने ।

इनि आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रन्थ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चंद्रिका नामा इस भाषाटीका विपै जीवकाण्ड विपै प्ररूपित जे बीस प्रत्युणा, तिनि विपै जीवसमास प्ररूपणा है नाम जाका, असा दूसरा अधिकार सपूर्ण भया ॥२॥

## तीसरा अधिकार : पर्याप्ति प्ररूपणा

संभव स्वामि नमौ सदा, घातिकर्म विनसाय ।

पाय चतुष्टय जो भयो, तीजो श्रीजिनराय ॥

अब इहां जहां-तहां अलौकिक गणित का प्रयोजन पाइए, तातै अलौकिक गणित कहिए है संदृष्टि इनिकी आगै संदृष्टि अधिकार विषै जानना ।

मान दोय प्रकार है, एक लौकिक एक अलौकिक । तहां लौकिक मान छह प्रकार — मान, उन्मान, अवमान, गणितमान, प्रतिमान, तत्प्रतिमान एवं छह प्रकार जानना । तहां पाइ माणी इत्यादिक मान जानना । ताखडी का तौल उन्मान जानना । चल इत्यादिक का प्रमाण (परिमाण) अवमान जानना । एक-दोय कौ आदि देकरि गणितमान जानना । चरिम तोला, मासा, इत्यादिक प्रतिमान जानना । घोडा का मोल इत्यादि तत्प्रतिमान जानना ।

बहुरि अलौकिक मान के च्यारि भेद है — द्रव्य मान, क्षेत्र मान, काल मान, भाव मान । तहा द्रव्य मान विषै जघन्य एक परमाणु अर उत्कृष्ट सब पदार्थनि का परिमाण । क्षेत्र मान विषै जघन्य एक प्रदेश अर उत्कृष्ट सब आकाश । काल मान विषै जघन्य एक समय अर उत्कृष्ट तीन काल का समय समूह । भाव मान विषै जघन्य सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक का लब्धि अक्षर ज्ञान अर उत्कृष्ट केवलज्ञान ।

बहुरि द्रव्य मान के दोय भेद — एक सख्या मान एक उपमा मान । तहा सख्या मान के तीन भेद — सख्यात, असख्यात, अनत । तहा संख्यात जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट तै तीन प्रकार है । बहुरि असख्यात है, सो परीतासख्यात, युक्तासख्यात, असख्याता-सख्यात इनि तीनों के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि नव प्रकार है । बहुरि अनत है, सो परीतानत, युक्तानत, अनंतानत इनि तीनों के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि नव प्रकार है — ऐसं सख्यामान के इकईस भेद भए । तिनि विषै जघन्य मख्यात दोय सख्यामात्र है । इहां एक का गुणकार भागहार कीए किछू वृद्धि-हानि होइ नाही, तातै दोय के ही भेद का ग्राहकपना है, एक के नाही है । बहुरि तीनि आदिकनि के मध्यम संख्यात का भेदपना हे, तातै दोय ही को जघन्य मख्यात



तरेसठि लाख तरेसठि हजार छ सै छत्तीस सरसौ अर च्यारि सरसौ का ग्यारहवां भाग ( १६१७, ११२६३८४, ५१३१६३६, ३६३६३६३, ६३६३६३६, ३६ ३६ ३६३ ६३ ६३ ६३६ ।  $\frac{४}{११}$  ) इतनी सरसौ करि अनवस्था कुंड सिधाऊ भरचा ।

सो भरि करि अन्य एक सरसौ कौ शलाका कुड में नाखि, तिस अनवस्था कुड की सर्व सरसौनि कौ मनुष्य है, सो बुद्धि करि अथवा देव है, सो हस्तादि करि ग्रहण करि जबूंदीपादिक द्वीप-समुद्रनि विषे अनुक्रम तै एक द्वीप विषे एक समुद्र विषे गेरता गया, वे सरिस्यो जहा द्वीप विषे वा समुद्र विषे पूर्ण होइ, तहां तिस द्वीप वा समुद्र की सूची प्रमाण चौडा अर औडा पूर्वोक्त हजार ही योजन असा दूसरा अनवस्था कुड तहां ही करना ।

सूची कहा कहिए ?

विवक्षित के सन्मुख अंत के दोऊ तटनि के बीचि जेता चौडाई का परिणाम होइ, सोई सूची जाननी । जैसै लवण समुद्र की सूची पांच लाख योजन है । जिस द्वीप की वा समुद्र की सूची कहिए, तिस तै पहिले द्वीप वा समुद्र ते वाकी सूची के मध्य आय गये । असा वहां कीया हुवा अनवस्था कुड कौ सरसौनि करि सिधाऊ भरना । भरि करि अन्य एक सरिसौ उस ही शलाका कुंड विषे गेरणी । अर इस दूसरे अनवस्था कुड की सरिसौनि कौ लेइ, तहा तै आगे एक द्वीप विषे, एक समुद्र विषे गेरते जाइए, तेऊ जहा द्वीप वा समुद्र विषे पूर्ण होइ तिस सहित पूर्व के द्वीप समुद्र तिनि का व्यासरूप जो सूची, तीहि प्रमाण चौडा अर औडा पूर्वोक्त हजार योजन असा तीसरा अनवस्था कुंड सिधाऊ सरिसौनि करि भरना । भरि करि अन्य एक सरिसौ उस ही शलाका कुड मे गेरि, इस तीसरे अनवस्था कुड की सरिसौ लेइ, तहा तै आगे एक द्वीप विषे एक समुद्र विषे गेरणी । वह जहा पूर्ण होइ, तहा तिस की सूची प्रमाण चौथा अनवस्था कुड करना, ताकौ सरिसौ करि सिधाऊ भरना । भरि करि अन्य एक सरिसौ शलाका कुड विषे गेरिए, इनि सरसौ को तहां तै आगे एक द्वीप विषे एक समुद्र विषे गेरणी, असा ही व्यास करि वधता-वधता अनवस्था कुड करि एक-एक सरिसौ शलाका कुड विषे गेरते जहा शलाका कुड भरि जाइ, तव एक सरिसौ प्रतिशलाका कुड विषे गेरिए । असा एक नव आदि अक प्रमाण जितनी सरिसौ पहिला अनवस्था कुड विषे माई थी, तितने प्रमाण अनवस्था कुंड भए शलाका कुड एक बार सिधाऊ भरचा गया । बहुरि इस शलाका कुंड की रीता

कीया अर पिछला अनवस्था कुंड की सरिसौ तहां तै आगै एक द्वीप विषै एक समुद्र विषै गेरता जहां पूर्ण भई, तहां फेरि उसकी सूची प्रमाण चौडा अनवस्था कुंड करि एक सरिसौ जो रीता कीया था शलाका कुंड, तिस विषै गेरी । अंसै ही पूर्ववत् व्यास करि वधता-वधता तितना ही अनवस्था कुंड कीजिए, तव दूसरी बार शलाका कुंड पूर्ण होइ । तव प्रतिशलाका कुंड विषै एक सरिसौ और गेरणी । पीछै फेरी शलाका कुंड रीता करि तैसै ही भरणा । जब भरे, तव एक सरिसौ प्रतिशलाका कुंड विषै और गेरणी । अंसै ही जब एक, नव आदिक प्रमाण की एक नवादिक अंकनि तै गुणै जो परिणाम होइ, तितने अनवस्था कुंड जब होंइ, तव प्रतिशलाका कुंड संपूर्ण भरै; तव ही एक सरिसौ महाशलाका कुंड विषै गेरणी । वहुरि वे शलाका कुंड वा प्रतिशलाका कुंड दोऊ रीते करणे । वहुरि पूर्वोक्त रीति करि एक-एक अनवस्था कुंड करि एक-एक सरिसौ शलाका कुंड विषै गेरणी । जब शलाका कुंड भरे, तव एक सरिसौ प्रतिशलाका कुंड विषै गेरणी । अंसै करते-करते प्रतिशलाका कुंड फेरी संपूर्ण भरै, तव दूसरी सरिसौ महाशलाका कुंड विषै फेरी गेरणी । वहुरि वैसे ही शलाका प्रतिशलाका कुंड रीता करि उस ही रीति सौ प्रतिशलाका कुंड भरे, तव सपूर्ण तीसरी सरिसौ महाशलाका कुंड विषै गेरणी । अंसै करते-करते एक नव नै आदि देकरि जे अंकनि का घन कीये जो परिणाम होइ, तितने अनवस्था कुंड जब होइ, तव महाशलाका कुंड भी सपूर्ण भरे, तव प्रतिशलाका का शलाका, अनवस्था कुंड भी भरै । इहा जे एक नव नै आदि देकरि अंकनि का घन प्रमाण अनवस्था कुंड कहें, तै सर्व ऊडे ती हजार योजन ही जानने । वहुरि इनिका व्यास, अपना द्वीप वा समुद्र की सूची प्रमाण वधता-वधता जानना । सो लक्ष योजन का जेथवा द्वीप वा समुद्र होइ, तितनी बार दूणा कीये तिस द्वीप वा समुद्र का व्यास आवै है । वहुरि व्यास की चौगुणा करि तामै तीन लाख योजन घटायें सूची का प्रमाण आवै है । तातै तहां प्रथम अनवस्था कुंड का व्यास का प्रमाण लाख योजन है । वहुरि पहला कुंड मे जिननी सरिसौ माई थी, तितनी ही बार लक्ष योजन का दूणा-दूणा कीयें जहा द्वीप वा समुद्र विषै वे सरिसौ पूर्ण भई थी, तिस द्वीप वा समुद्र के व्यास का परिमाण आवै है । वहुरि व्यास का परिमाण की चौगुणा करि तीहि में तीन लाख योजन घटाइए, तव तिस ही द्वीप वा समुद्र का सूची परिमाण आवै । जो सूची परिमाण आवै, सो ही दूसरा कुंड का व्यास परिमाण जानना । वहुरि पहिला वा दूसरा कुंड जिननी सरिसौ माई, तितनी बार लक्ष योजन की दूणा-दूणा करि

जो परिमाण आवै, ताकौ चौगुणा करि तीन लाख योजन घटाइए, तब तीसरा अनवस्था कुंड का व्यास परिमाण आवै है । बहुरि पहिला वा दूसरा वा तीसरा अनवस्था कुंड विषै जेती सरिसों माई होइ, तेती बार लक्ष योजन कौ दूणा-दूणा करि जो परिमाण आवै, ताकौ चौगुणा करि तीन लाख योजन घटाएं, चौथे अनवस्था कुंड का व्यास परिमाण आवै, ऐसे बधता-बधता व्यास परिमाण अंत का अनवस्था कुंड पर्यन्त जानना । तहां जो अंत का अनवस्था कुंड भया, तीहि विषै जेती सरिसों का परिमाण होइ, तितना जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण जानना । इहां शलाका कुंड विषै एक सरिसों गेरै जो एक अनवस्था कुंड होइ, तो शलाका कुंड विषै एक, नव आदि अंक प्रमाण सरिसों गेरै केते अनवस्था कुंड होइ ? ऐसे त्रैराशिक करिये, तब प्रमाण राशि एक, फल राशि एक, इच्छा राशि एक नवादि अंक प्रमाण । तहां फल राशि करि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए लब्ध राशि एक नवादि अंक प्रमाण हो है । बहुरि प्रतिशलाका कुंड विषै एक सरिसौ गेरै एक नवादि अंक प्रमाण अनवस्था कुंड होइ, तो प्रतिशलाका कुंड विषै एक नवादि अंक प्रमाण सरिसों गेरै केते होइ ? ऐसे त्रैराशिक कीए प्रमाण १ फल १६=इच्छा १६==लब्धराशि एक नवादि अंकनि का वर्ग प्रमाण हो है । बहुरि महाशलाका कुंड विषै एक सरिसो गेरै, अनवस्था कुंड एक नवादि (अंकनि) का वर्ग प्रमाण होइ, तो महाशलाका कुंड विषै एक नवादि अंक प्रमाण सरिसौ गेरै केते अनवस्था कुंड होइ ? ऐसे त्रैराशिक कीए, प्रमाण १, फल १६= वर्ग इच्छा १६= लब्धराशि एक नवादि अंकनि का घन प्रमाण हो है । सो इतना अनवस्था कुंड होइ है, ऐसा अनवस्था कुंडनि का प्रमाण जानना । बहुरि जघन्य परीतासंख्यात के ऊपरि एक-एक बधता क्रम करि एक घाटि उत्कृष्ट परीतासंख्यात पर्यन्त मध्य परीतासंख्यात के भेद जानने । बहुरि एक घाटि जघन्य युक्तासंख्यात परिमाण उत्कृष्ट परीतासंख्यात जानना ।

अब जघन्य युक्तासंख्यात का परिमाण कहिए है — जघन्य परीतासंख्यात का विरलन कीजिए । विरलन कहा ? जेता वाका परिमाण होइ, तितना ही एक-एक करि जुदा-जुदा स्थापन कीजिये । बहुरि एक-एक की जायगा एक-एक परीतासंख्यात माडिए, पीछै सबनि कौ परस्पर गुणिए, पहिला जघन्य परीतासंख्यात कौ दूसरा जघन्य परीतासंख्यात करि गुणिए, जो परिमाण आवै, ताहि तीसरा जघन्य परीतासंख्यात करि गुणिये । बहुरि जो परिमाण आवै, तीनै चौथा करि गुणिए, अैसे अंत

ताई परस्पर गुणै जो परिमाण आवै, सो परिमाण जघन्य युक्तासंख्यात का जानना ।  
याही कौ अक सदृष्टि करि दिखाइए है -

जघन्य परीतासंख्यात का परिमाण च्यारि (४) याका विरलन कीया १, १  
४ ४ ४ ४

१, १ । बहुरि एक-एक के स्थानक, सोहि दीया १ १ १ १ परस्पर गुणन कीया, तब  
दोय सै छप्पन भया । अैसे ही जानना । सो इस ही जघन्य युक्तासंख्यात का नाम  
आवली है, जातै एक आवली के समय जघन्य युक्तासंख्यात परिमाण है । बहुरि  
याके ऊपरि एक-एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट युक्तासंख्यात पर्यन्त मध्यम युक्तासंख्यात  
के भेद जानने । बहुरि एक घाटि जघन्य असंख्यातासंख्यात परिमाण उत्कृष्ट युक्ता-  
संख्यात जानना ।

अब जघन्य असंख्यातासंख्यात कहिए है - जघन्य युक्तासंख्यात कौ जघन्य  
युक्तासंख्यात करि एक बार परस्पर गुणै, जो परिमाण आवै, सो जघन्य असंख्याता-  
संख्यात जानना । याके ऊपरि एक-एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात  
पर्यन्त मध्यम असंख्यातासंख्यात जानने । एक घाटि जघन्य परीतानंत प्रमाण उत्कृष्ट  
असंख्यातासंख्यात जानना ।

अब जघन्य परीतानंत कहिए है - जघन्य असंख्यातासंख्यात परिमाण तीन  
राशि करना - एक शलाका राशि, एक विरलन राशि, एक देय राशि । तहां विरलन  
राशि का ती विरलन करना, बखेरि करि जुदा-जुदा एक-एक रूप करना, अर एक-एक  
के ऊपरि एक-एक देय राशि धरना ।

भावार्थ - यह जघन्य असंख्यातासंख्यात प्रमाण स्थानकनि द्विपे जघन्य  
असंख्यातासंख्यात जुदे-जुदे मांडने । बहुरि तिनिकौ परस्पर गुणिए, अैसे करि उस  
शलाका राशि मै स्यों एक घटाइ देना । बहुरि अैसे कीए जो परिमाण आया, तितने  
परिमाण दोय राशि करना, एक विरलन राशि, एक देय राशि । तहा विरलन राशि  
का विरलन करि एक-एक ऊपरि एक-एक देय राशि कौ स्थापन करि, परस्पर  
गुणिए । अैसे करि उस शलाका राशि मै स्यों एक और घटाइ देना । बहुरि ऐसे कीए  
जो परिमाण आया, तितने प्रमाण विरलन-देय स्थापि, विरलन राशि का विरलन  
करि एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ परस्पर गुणिये, तब शलाका राशिसुं एक और  
घटाइ देना, अैसे करते-करते जब यह पहिली बार किया शलाका राशि सर्व संपूर्ण  
होइ, तब तहा जो किछू परिमाण हुवा, सो यह महाराशि असंख्यातासंख्यात का मध्य

भेद है, सो तितने-तितने परिमाण तीन राशि बहुरि करना — एक शलाका राशि, एक विरलन राशि, एक देय राशि । तहां विरलन राशि का विरलन करि एक-एक के स्थान के देय राशि का स्थापन करि परस्पर गुणीये, तब शलाका राशि में सौ एक काढि लेना बहुरि जो परिमाण आया, ताका विरलन करि एक-एक प्रति तिस ही परिमाण को स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब एक और शलाका राशि में सौ एक काढि लेना । अैसे करते-करते जब दूसरी बार भी किया हुआ शलाका राशि संपूर्ण होइ, तब अैसे करता जो परिमाण मध्यम असंख्यातासंख्यात का भेदरूप आया, तिस परिमाण तीन राशि स्थापन करनी — शलाका, विरलन, देय । तहां विरलन राशि कौ बखेरि एक-एक स्थानक विषै देय राशि कौ स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब तीसरी शलाका राशि में सौ एक काढि लेना । बहुरि अैसे करते जो परिमाण आया था, तिस परिमाण राशि का विरलन करि एक-एक स्थानक विषै तिस परिमाण ही का स्थापन करि परस्पर गुणिये, तब शलाका राशि में स्यो एक और काढि लेना । अैसे करते-करते जब तीसरी बार भी शलाका राशि संपूर्ण भया, तब शलाका त्रय निष्ठापन हुवा कहिये । आगे भी जहां शलाका त्रय निष्ठापन कहियेगा, तहां अैसा ही विधान जानना । विशेष इतना जो शलाका, विरलन, देय का परिमाण वहां जैसा होइ, तैसा जानना । अब अैसे करते जो मध्यम असंख्यातासंख्यात का भेदरूप राशि उपज्या, तीहि विषै ये छह राशि मिलावना । लोक प्रमाण धर्म द्रव्य के प्रदेश, लोक प्रमाण अधर्म द्रव्य के प्रदेश, लोक प्रमाण एक जीव के प्रदेश, लोक प्रमाण लोकाकाश के प्रदेश, तातै असंख्यातगुणा अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक जीवनि का परिमाण, तातै असंख्यात लोकगुणा तो भी सामान्यपनै असंख्यातलोक प्रमाण सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति कायिक जीवनि का परिमाण — ये छहों राशि पूर्वोक्त प्रमाण विषै जोडने । जोडै जो परिमाण होइ, तीहि परिमाण शलाका, विरलन देय राशि करनी । पीछे अनुक्रम तै पूर्वोक्त प्रकार करि शलाका त्रय निष्ठापन करना अैसे करते जो कोई महाराशि मध्य असंख्यातासंख्यात का भेदरूप भया, तीहि विषै च्यारि राशि और मिलावने । बीस कोडाकोडी सागर प्रमाण उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी दोय कालरूप कल्पकाल के संख्यात पल्यमात्र समय; बहुरि असंख्यात लोकमात्र अनुभाग बंध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनिके स्थान; बहुरि इनि तै असंख्यात लोकगुणै तो भी असंख्यात लोकमात्र अनुभाग बंध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनिके स्थान; बहुरि इनितै असंख्यात लोकगुणै तो भी असंख्यात लोकमात्र मन,



वचन, काय योगनि के अविभाग प्रतिच्छेद; अैसे ये च्यारि राशि पूर्वोक्त परिमाण विपे मिलावने । मिलाये जो परिमाण होइ, तीहि महाराशि प्रमाण शलाका, विरलन, देय राशि करि अनुक्रम ते पूर्वोक्त प्रकार शलाका त्रय निष्ठापन करना । अैसें करते जो परिमाण होइ, सो जघन्य परीतानंत है । वहुरि याके ऊपरि एक-एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट परीतानंत पर्यन्त मध्यम परीतानत जानना । वहुरि एक घाटि जघन्य युक्तानंत परिमाण उत्कृष्ट परीतानंत जानना ।

अब जघन्य युक्तानंत कहिये है — जघन्य परीतानंत का विरलन करि-करि वखेरि एक-एक स्थान विपे एक-एक जघन्य परीतानंत का स्थापन करि परस्पर गुणे जो परिमाण आवै, सो जघन्य युक्तानंत जानना । सो यहु अभव्य राशि समान है । अभव्य जीव राशि जघन्य युक्तानंत परिमाण है । वहुरि याके ऊपरि एक-एक वधता एक घाटि उत्कृष्ट युक्तानंत पर्यन्त मध्यम युक्तानंत के भेद जानना । वहुरि एक घाटि जघन्य अनंतानन्त परिमाण उत्कृष्ट युक्तानन्त जानना ।

अब जघन्य अनंतानंत कहिये है — जघन्य युक्तानंत कौं जघन्य युक्तानंत करि एक ही वार गुण जघन्य अनंतानंत होइ है । वहुरि याके ऊपरि एक-एक वधता एक घाटि केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद प्रमाण उत्कृष्ट अनंतानंत पर्यन्त मध्यम अनंतानत जानने । सो याके भेदनि कौं जानता संता अैसें विधान करै — जघन्य अनंतानंत परिमाण शलाका, विरलन, देयरूप तीन राशि करि अनुक्रम ते शलाका त्रय निष्ठापन पूर्वोक्त प्रकार करि करना । अैसें करते जो मध्यम अनंतानंत भेदरूप परिमाण होइ, तीहि विपे ए छह राशि और मिलावना । जीव राशि के अनंतवे भाग मिद्ध राशि, वहुरि तातै अनंतगुणा अैसा पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, त्रस राशि रहित संसारी जीव राशि मात्र निगोद राशि, वहुरि प्रत्येक वनस्पति सहित निगोद राशि प्रमाण वनस्पति राशि, वहुरि जीव राशि तें अनंतगुणा पुद्गल राशि, वहुरि याने अनन्तानन्त गुणा व्यवहार काल के समयनि की राशि, वहुरि यातै अनन्तानन्त गुणा अन्तोकाकाश के प्रदेशनि की राशि — अैसें छहो राशि के परिमाण पूर्व परिमाण द्विपे मिलावने । वहुरि मिलाए जो परिमाण होइ, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय करि क्रम ते पूर्ववत् शलाका त्रय निष्ठापन कीयें जो कोई मध्यम अनन्तानन्त का भेदरूप परिमाण पावै, तीहि विपे वर्मद्रव्य, अधर्मद्रव्य के अगुरुलघु गुण का अविभाग प्रतिच्छेदनि का परिमाण अनंतानंत है, सो जोडिए । यौं करते जो मह ।

पाच में छत्तीस (६५५३६) प्रमाण का नाम पणट्ठी कहिये है । बहुरि याका वर्ग पाचवा स्थान बादाल, सो बियालीस चौराणवै, छिनवै, बहत्तरि, छिनवै ये अंक लिखें जो प्रमाण होइ, ताको बादाल कहिये (४२ ६४ ६६ ७२ ६६) ।

बहुरि याका वर्ग छठा स्थान एकट्ठी, सो एक, आठ, च्यारि-च्यारि, छह, सात, च्यारि-च्यारि, बिदी, सात, तीन, सात, बिदी, नव, पांच, पांच, एक, छह, एक, छह इनि अकनि करि जो प्रमाण होइ ताकूं एकट्ठी कहिये है (१ ८ ४ ४ ६ ७ ४ ४ ० ७ ३ ७ ० ६ ५ ५ १ ६ १ ६) । बहुरि याका वर्ग सातवां स्थान असै ही पहला-पहला स्थाननि का वर्ग कीए एक-एक स्थान होइ । तहां सख्यात स्थान भए जघन्य परीतासख्यात की वर्गशलाका होइ ।

सो वर्गशलाका कहा कहिए ?

दोय के वर्ग तै लगाइ जितनी बार वर्ग कीए विवक्षित राशि होइ, तितनी ही विवक्षित राशि की वर्गशलाका जाननी । तातै द्विरूप वर्गधारा आदि तीन धारानि विषै जितने स्थान भए जो राशि होइ, तीहि राशि की तितनी वर्गशलाका है । जैसे पणठो की वर्ग शलाका च्यारि, बादाल की पाच, इत्यादि जाननी । बहुरि जघन्य परीता-सख्यात की वर्गशलाका स्थान तै लगाइ सख्यात स्थान भए, तब जघन्य परीता-सख्यात के अर्धच्छेदनि का परिमाण होइ ।

सो अर्धच्छेद कहा कहिए ?

विवक्षित राशि का जेती बार आधा-आधा होइ, तितने तिस राशि के अर्धच्छेद जानने । जैसे सोलह को एक बार आधा कीये आठ होइ, दूसरा आधा कीये च्यारि होइ, तीसरा आधा कीये दोय होइ, चौथा आधा कीये एक होइ, असै च्यारि बार आधा भया, तातै सोलह का अर्धच्छेद च्यारि जानने । असै ही चौसठि के अर्धच्छेद छह होइ । असै सर्व के अर्धच्छेद जानने । बहुरि तिस जघन्य परीतासख्यात के अर्धच्छेदरूप स्थान तै संख्यात वर्ग स्थान गये जघन्य परीतासख्यात का वर्गमूल होइ, यातै एक स्थान गये इस वर्गमूल का वर्ग कीये जघन्य परीतासख्यात होइ । बहुरि यातै सख्यात स्थान गये जघन्य युक्तासख्यात होइ, सोई आवली का परिमाण है । इहा वर्गशलाकादिक न कहे, ताका कारण आगे कहियेगा । बहुरि याने एक स्थान जाइये, याका एक बार वर्ग कीजिये, तब प्रतरावली होइ; जातै आवली के वर्ग ही को प्रतरावली कहिये है ।

बहुरि इहातै असंख्यात स्थान जाइ अद्वापत्य का वर्ग शलाका राशि होइ है । बहुरि यातै असंख्यात स्थान जाइ, अद्वापत्य का अर्धच्छेद राशि होइ । बहुरि यातै असंख्यात स्थान जाइ अद्वापत्य का वर्गमूल होइ । बहुरि यातै असंख्यात स्थान गये सूच्यंगुल होइ । बहुरि यातै एक स्थान गये प्रतरागुल होइ । बहुरि यातै असंख्यात स्थान गये जगत् श्रेणी का घनमूल होइ । बहुरि यातै असंख्यात संख्यात स्थान गये क्रम तै जघन्य परीतानत का वर्गशलाका राशि अर अर्द्धच्छेद राशि अर वर्गमूल होइ । यातै एक स्थान गये जघन्य परीतानत होइ । बहुरि यातै असंख्यात स्थान गये जघन्य युक्तानत होइ । बहुरि यातै एक स्थान गये जघन्य अनतानत होइ । बहुरि यातै अनतानत अनतानत स्थान गये क्रम तै जीव राशि का वर्गशलाका राशि अर अर्द्धच्छेद राशि अर वर्गमूल होइ । यातै एक स्थान गये जीव राशि होइ । बहुरि अब इहां तै आगे जे राशि कहिए है, तिनिका वर्गशलाका राशि, अर्धच्छेद राशि, वर्गमूल सबका अैसे कहि लेना । सो जीवराशि तै अनतानत वर्गस्थान गए पुद्गल परमाणुनि का परिमाण होइ । यातै अनतानत वर्गस्थान गए तीनि काल के समयनि का परिमाण होइ । यातै अनतानत स्थान गये श्रेणीरूप आकाश के प्रदेशनि का परिमाण होइ, सो यहु लोक-अलोक रूप सब आकाश के लंबाईरूप प्रदेशनि का परिमाण है । यामै चौडाई-ऊचाई न लीनी । बहुरि यातै एक स्थान गये प्रतराकाश के प्रदेशनि का परिमाण है, सो यहु लोक-अलोक रूप सर्व आकाश के प्रदेशनि का लंबाईरूप वा चौडाईरूप प्रदेशनि का परिमाण है, यामै ऊचाई न लीनी । ऊचाई सहित घनरूप सर्व आकाश के प्रदेशनि का प्रमाण द्विरूप घनधारा विपै है, इस धारा विपै नाही है । बहुरि यातै अनतानत स्थान जाइ धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य के अगुरुलघु गुणनि का अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ । जिसका भाग न होइ अंसा कोई शक्ति का सूक्ष्म अण, ताका नाम अविभाग प्रतिच्छेद है । बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गये एक जीव के अगुरुलघु गुण के षट्स्थान पतित वृद्धि-हानि रूप अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ है । बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गये सूक्ष्म निगोदिया के जो लब्धक्षर नामा जघन्य जान होइ है, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का परिमाण होइ । बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गए असयत सम्यग्दृष्टी तिर्यच के जो जघन्य सम्यक्त्व-रूप धाग्रिक लब्धि हो है, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ । बहुरि यातै अनतानत स्थान गए केवलज्ञान का वर्गशलाका राशि होइ । बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान गए केवलज्ञान का अर्धच्छेद राशि होइ । बहुरि यातै अनतानत वर्गस्थान

गये केवलज्ञान का अष्टम वर्गमूल होइ । बहुरि यातै एक-एक स्थान गए क्रम तै केवलज्ञान का सप्तम, षष्ठम, पचम, चतुर्थ, तृतीय, द्वितीय, प्रथम वर्गमूल होइ ।

जो विवक्षित राशि का वर्गमूल होइ, ताको प्रथम वर्गमूल कहिए । बहुरि उस प्रथम वर्गमूल का वर्गमूल कू द्वितीय वर्गमूल कहिए । बहुरि तिस द्वितीय वर्गमूल का भी वर्गमूल होइ, ताको तृतीय वर्गमूल कहिए । अैसे ही चतुर्थादिक वर्गमूल जानने । बहुरि उस प्रथम वर्गमूल तै एक स्थान जाइए, वाका वर्ग कीजिए, तब गुण-पर्याय सयुक्त जे त्रिलोक के मध्यवर्ती त्रिलोक सबधी जीवादिक पदार्थनि का समूह, ताका प्रकाशक जो केवलज्ञान सूर्य, ताकी प्रभा के प्रतिपक्षी कर्मनि के सर्वथा नाश तै प्रकट भए समस्त अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूहरूप सर्वोत्कृष्ट भाग प्रमाण उपजै है; सोई उत्कृष्ट क्षायिक लब्धि है । इहां ही इस धारा का अत स्थान है । यह ही सर्वोत्कृष्ट परिमाण है । यातै कोऊ अधिक परिमाण नाही । अैसे यहु द्विरूप वर्ग-धारा कहो । याके वर्गरूप सर्वस्थान केवलज्ञान की वर्गशलाका परिमाण जानने ।

अब इहा केतेइक नियम दिखाइए है — जो राशि विरलन देय क्रम करि निपजै, सो राशि जिस धारा विषै कही होइ, तिस धारा विषै ही तीहि राशि की वर्गशलाका वा अर्धच्छेद न होइ । जैसे विरलन राशि सोलह (१६), ताका विरलन करि एक-एक प्रति सोलहौ जायगा देय राशि जो सोलह सो स्थापि, परस्पर गुणन कीए एकट्ठी प्रमाण होइ, सो एकट्ठी प्रमाण राशि द्विरूप वर्गधारा विषै पाइये है । याके अर्धच्छेद चौसठि (६४), वर्गशलाका छह, सो इस धारा मे न पाइये, अैसे ही सूच्यगुल वा जगत्श्रेणी इत्यादिक का जानना । अैसा नियम इस द्विरूप वर्गधारा विषै अर द्विरूप घनधारा अर द्विरूप घनाघनधारा विषै जानना । तहातै सूच्यगुलादिक द्विरूप वर्गधारा विषै अपनी-अपनी देय राशि के स्थान तै ऊपरि विरलन राशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तितने वर्गस्थान गये उपजे है । तहा सूच्यगुल का विरलन राशि पत्य का अर्धच्छेद प्रमाण है, देय राशि पत्य प्रमाण है । बहुरि जगच्छ्रेणी की विरलन राशि पत्य का अर्धच्छेदनि का असख्यातवा भागमात्र जानना, देय राशि घनागुलमात्र जानना । तहा अपना-अपना विरलन राशि का विरलन करि एक-एक बखेरि तहा एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ परस्पर गुणै जो-जो राशि उपजै है, सो आगे कथन करेंगे । बहुरि द्विरूप वर्गधारादिक तीनि धारानि विषै पहला-पहला वर्गस्थान तै ऊपरला-ऊपरला वर्गस्थान विषै अर्धच्छेद-अर्धच्छेद तौ दूणे-दूणे जानने अर वर्गशलाका एक-एक अधिक जाननी । जैसे दूसरा

वर्गस्थान सोलह, ताका अर्धच्छेद च्यारि अर तीसरा वर्गस्थान दोय सै छप्पन, ताका अर्धच्छेद आठ, असै ही दूणे-दूणे जानने । बहुरि वर्गशलाका सोलह की दोय, दोय सै छप्पन की तीन असै एक अधिक जाननी । बहुरि तीहि ऊपरला स्थानक के निकटवर्ती जेथवां ऊपरला स्थानक होइ, तेथवा अन्य धारा विषे स्थान होइ, तौ तहां तिस पहिले स्थान तै अर्धच्छेद तिगुणे होंइ, जैसै द्विरूप वर्गधारा का द्वितीय स्थान सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, अर तातै ऊपरिला द्विरूप घनधारा का तीसरा स्थान च्यारि हजार छिनवै, ताके अर्धच्छेद वारह, असै सर्वत्र जानना । बहुरि वर्गशलाका दोऊ की समान जाननी, जैसै दोय सै छप्पन की भी तीन वर्गशलाका, च्यारि हजार छिनवै की भी तीन वर्गशलाका हो है । बहुरि राशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनि अर्धच्छेदनि के जेते अर्धच्छेद होइ, तितनी राशि की वर्गशलाका जाननी । जैसै राशि का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, याहू के अर्धच्छेद दोय, राशि सोलह, ताकी वर्गशलाका दोय है, असै सर्वत्र जानना । बहुरि जेती वर्गशलाका होइ, तितनी जायगा दोय-दोय मांडि परस्पर गुणिए, तब अर्धच्छेदनि का परिमाण आवै । जैसै सोलह की वर्गशलाका दोय, सो दोय जायगा दोय-दोय मांडि परस्पर गुणिए, तब च्यारि होइ, सो सोलह के च्यारि अर्धच्छेद है, सो यहू नियम द्विरूप वर्गधारा विषे ही है । बहुरि जेते अर्धच्छेद होइ, तितना दुवा मांडि परस्पर गुणिए, तब राशि का परिमाण होइ । जेमे च्यारि अर्धच्छेद के च्यारि जायगा दुवा मांडि परस्पर गुणिए, तब जो राशि सोलह, तीहिका परिमाण आवै ।

वर्गशलाका कहा ?

जेती वार वर्ग कीये राशि होइ, सो वर्गशलाका है । अथवा द्विरूप धारा विषे अर्धच्छेदनि का अर्धच्छेद प्रमाण वर्गशलाका हो है ।

बहुरि अर्धच्छेद कहा ?

राशि का जेता वार आधा-आधा होइ, सो अर्धच्छेद राशि है । इत्यादि यथा नभव जानना ।

बहुरि द्विरूप का घन की आदि देकरि पहला-पहला वर्ग करते संख्या विशेष जिन धाना विषे होइ, सो द्विरूप घनधारा है । सो दोय का घन आठ हो है, सो तीसरा पहिला स्थान । बहुरि याका वर्ग चौसठि, सो दूसरा स्थान । बहुरि याका वर्ग च्यालि हजार छिनवै, सो तीसरा स्थान, सो यहू सोलह का घन है । बहुरि

याका वर्ग दोय सै छप्पन का घन सो चौथा स्थान । बहुरि पण्ढी का घन पांचवां स्थान । बादाल का घन छठा स्थान । अैसे पहला-पहला स्थानक का वर्ग कीए एक-एक स्थान होइ, सो अैसे सख्यात स्थान गए जघन्य परीतासंख्यात का घन होइ । यातै सख्यात स्थान गए आवली का घन होइ । यातै एक स्थान गए प्रतरावली का घन होइ । यातै असख्यात असंख्यात स्थान गए क्रम तै पल्य की वर्गशलाका का घन अर अर्धच्छेद का घन अर वर्गमूल का घन होइ । यातै एक स्थान गए पल्य का घन होइ । बहुरि यातै असंख्यात स्थान गए घनांगुल होइ । यातै असख्यात स्थान गए जगच्छेणी होइ । यातै एक स्थान गए जगत्प्रतर होइ । यातै अनंतानंत-अनंतानंत स्थान गए क्रम तै जीवराशि की वर्गशलाका का घन अर अर्धच्छेद का घन अर वर्गमूल का घन होइ । यातै एक स्थान गये जीवराशि का घन होइ । यातै अनंतानत स्थान गए श्रेणीरूप सर्व आकाश की वर्गशलाका का घन होइ । तातै अनंतानत वर्ग स्थान जाइ, ताही का अर्धच्छेद का घन होइ । तातै अनंतानंत वर्गस्थान जाइ, ताही का प्रथम मूल का घन होइ । तातै एक स्थान जाइ श्रेणी आकाश का घन होइ, सोई सर्व आकाश के प्रदेशनि का परिमाण है ।

बहुरि यातै अनंतानत स्थान गए केवलज्ञान का द्वितीय वर्गमूल का घन होइ, सो याही कौ अत स्थान जानना । प्रथम वर्गमूल अर द्वितीय वर्गमूल कौ परस्पर गुणै जो परिमाण होइ, सोई द्वितीय वर्गमूल का घन जानना । जैसे सोलह का प्रथम वर्गमूल च्यारि, द्वितीय वर्गमूल दोय, याका परस्पर गुणन कीए आठ होइ, सोई द्वितीय वर्गमूल जो दोय, ताका घन भी आठ ही होइ, बहुरि द्वितीय वर्गमूल के अनंतरि वर्ग केवलज्ञान का प्रथम मूल, ताका घन कीए केवलज्ञान तै उलघन होइ, सो केवलज्ञान तै अधिक संख्या का अभाव है, तातै सोई अत स्थान कह्या । अैसे या धारा के सर्वस्थान दोय घाटि केवलज्ञान की वर्गशलाका मात्र जानने । द्विरूपवर्ग-धारा विषै जिस राशि का जहा वर्ग ग्रहण कीया, तहा तिसका घन इस धारा विषै जानना । बहुरि दोय रूप का घन का जो घन, ताकौ आदि देकरि पहला-पहला स्थान का वर्ग करते जो सख्या विशेष होइ, ते जिस धारा विषै पाइये, सो द्विरूप घनाघन-धारा है । सो दोय का घन आठ, ताका घन पांच सै बारा, सो याका आदि स्थान जानना । बहुरि याका वर्ग दोय लाख बासठि हजार एक सौ चवालीस (२६२१४४), सो याका दूसरा स्थान जानना । अैसे ही पहला-पहला स्थान का वर्ग करते याके स्थान होंहि । अैसे असंख्यात वर्ग स्थान गये लोकाकाश के प्रदेशनि का परिमाण

होइ । वहुरि यातै असंख्यात वर्गस्थान गये अग्निकायिक जीवनि की गुणकार जलाका होहि । जेती बार गुणन कीये अग्निकायिक जीवनि का परिमाण होइ, तितनी गुणकार जलाका जाननी । सो याके परिमाण दिखावने के निमित्त कहिये — लोकाकाश के प्रदेश प्रमाण जुदा-जुदा तीन राशि करना जलाका, विरलन, देय । तहां विरलन राशि कौ एक-एक स्थान विषै देय राशि कौ स्थापन करि परस्पर गुणन करना । जैसे कीये संतै जलाका राशि मे स्यों एक काढि लेना । इहा जो राशि भया, ताकी गुणकार जलाका एक भई अर वर्ग जलाका पत्य के असंख्यातवे भागमात्र हुई, जातै विरलन राशि के अर्धच्छेद देय राशि के अर्धच्छेद के अर्धच्छेदनि विषै जोई विवक्षित राशि की वर्गजलाका का प्रमाण होइ है । वहुरि अर्धच्छेद राशि असंख्यात लोक प्रमाण भया, जातै देय राशि के अर्धच्छेदनि करि विरलन राशि कौ गुणं विवक्षित राशि का अर्धच्छेदनि का प्रमाण हो है । वहुरि उत्पन्न भया राशि सो असंख्यात लोक प्रमाण हो है । वहुरि यौं करते जो राशि भया, तीहि प्रमाण विरलन देय राशि करि विरलन राशि का विरलन करना, एक-एक प्रति देय राशि कौ देना, पीछे परस्पर गुणन करना, तव जलाका राशि में स्यों एक और काढि लेना । इहा गुणकार जलाका दोय भई, अर वर्गजलाका राशि अर अर्धच्छेद राशि अर यो करतां जो राशि उत्पन्न भया, सो ये तीनों ही असंख्यात लोक प्रमाण भये । वहुरि जहां ताई वह लोकमात्र जलाका राशि एक-एक काढने तै पूर्ण होइ, तहा ताई जैसे ही करना । जैसे करते जो राशि उपज्या, ताकी गुणकार जलाका तौ लोकमात्र भई, अर सब तीनों राशि असंख्यात लोकमात्र असंख्यात लोकमात्र भये । वहुरि जो यह राशि का प्रमाण भया, तीहि प्रमाण जुदा-जुदा जलाका, विरलन, देय, जैसे तीन राशि स्थापि, तहां विरलन राशि कौ एक-एक वखेरि, एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ, परस्पर गुणनि करि दूसरी बार स्थाप्या हुआ जलाका राशि तै एक और काढि लेना । इहां जो राशि उपज्या, ताकी गुणकार जलाका एक अधिक लोकप्रमाण है, अवशेष तीनों राशि असंख्यात लोकमात्र असंख्यात लोकमात्र हैं । वहुरि जो राशि भया तीहि प्रमाण विरलन देय राशि स्थापि, विरलन राशि कौ वखेरि, एक-एक प्रति देय राशि कौ देइ, परस्पर गुणन कर दूसरा जलाका राशि तै एक और काढि लेना । तव गुणकार जलाका दोय अधिक लोक प्रमाण भई । अवशेष तीनों राशि असंख्यात लोकमात्र असंख्यात लोकमात्र भई । वहुरि याही प्रकार दोय घाटि असंख्यात लोकमात्र गुणकार जलाका प्राप्त करि इन विषै पूर्वोक्त दोय अधिक लोकप्रमाण गुणकार जलाका जोडिये । तव गुणकार जलाका भी असंख्यात लोकप्रमाण

भई, तब इहा तै लगाइ गुणाकार शलाका, वर्गशलाका, अर्धच्छेद राशि, उत्पन्न भई राशि चारि (४) । ये च्यारौ विशेष करि हीनाधिक है । तथापि सामान्य-पनै असख्यात लोक असंख्यात लोकप्रमाण जाननी । असै क्रम तै जाइ दूसरी बार स्थापी हुई शलाका राशि कौ भी एक-एक काढने तै पूर्ण करै । बहुरि तहां उत्पन्न भया जो राशि, तीहि प्रमाण शलाका विरलन, देय जुदा-जुदा तीन राशि स्थापना । पूर्वोक्त प्रकार तै इस तीसरी बार स्थाप्या हुवा शलाका राशि कौ भी पूर्ण करि बहुरि तहा जो राशि उत्पन्न भया, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, तीन राशि स्थापना । तहां जो पूर्व कही तीन गुणाकार शलाका राशि, तिनिका प्रमाण इस चौथी बार स्थाप्या हुवा शलाका राशि मे स्यो घटाये जो अवशेष प्रमाण रहै, सो पूर्वोक्त प्रकार करि एक-एक काढने तै जब पूर्ण होइ, तब तहा जो उत्पन्न राशि होइ, तीहि प्रमाण अग्निकायिक जीवराशि है । असै देखि—

‘आउड्डराशिदारं लोगे अण्णोणसंगुणे तेओ’

अैसा आचार्यनि करि कह्या है । याका अर्थ यहु — जो साढा तीन बार शलाका राशि करि लोक कौ परस्पर गुणौ अग्निकायिक जीवराशि हो है । या प्रकार अग्निकायिक जीवराशि की गुणकार शलाका तै ऊपरि असंख्यात-असंख्यात वर्ग-स्थान जाइ ताका वर्गशलाका, अर्धच्छेद राशि अर प्रथम मूल होइ, ताकौ एक बार वर्गरूप कीये तेजस्कायिक जीवनि का प्रमाण होइ है । बहुरि यातै असख्यात असंख्यात वर्गस्थान जाइ तेजस्कायिक की स्थिति की वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल होइ है । यातै एक स्थान जाइ तेजस्कायिक की स्थिति हो है, सो स्थिति कहा कहिये ? अन्य काय तै आय करि तेजस्काय विषै जीव उपज्या, तहा उत्कृष्टपने जेते काल और काय न धरै, तेजस्काय ही के पर्यायनि को धार्या करै, तिस काल के समयनि का प्रमाण जानना ।

बहुरि यातै असंख्यात-असंख्यात वर्गस्थान जाइ अवधि सबधी उत्कृष्ट क्षेत्र की वर्गशलाका, अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है । ताकौ एक बार वर्गरूप कीये, अवधि सबधी उत्कृष्ट क्षेत्र हो है, सो कहा ?

सर्वावधि ज्ञान के जेता क्षेत्र पर्यंत जानने की शक्ति, ताके प्रदेशनि का प्रमाण हो है, सो यहु क्षेत्र असंख्यात लोकप्रमाण है ।

इहां कोऊ कहै अवधिज्ञान तो रूपी पदार्थनि कौ जानै, सो रूपी पदार्थ एक लोक प्रमाण क्षेत्र विषै ही है । इहा इतना क्षेत्र कैसे कह्या ?



ताका समाधान - जंसे अहमिद्वनि के सप्तम नरक पृथ्वी पर्यंत गमन शक्ति है, नगपि इच्छा विना कदाचित् गमन न हो है । तैसे सर्वाविधि विषे ऐसी शक्ति है - इतने क्षेत्र विषे जो रूपी पदार्थ होइ तौ तितने कौ जानै, परंतु तहां रूपी पदार्थ नाही, तातें सो शक्ति व्यक्त न हो है ।

बहुरि तातें असंख्यात-असंख्यात स्थान जाइ स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननि की वर्गजालाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है । ताकौ एक बार वर्गरूप कीये स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान हो है, ते कहा ?

सो कहिये है ज्ञानावरणादिक कर्मनि का ज्ञान कौ आवरना इत्यादिक स्वभाव करि संयुक्त रहने का जो काल, ताकौ स्थिति कहिये । तिसके बंध कौ कारणभूत जे परिणामनि के स्थान, तिनिका नाम स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान है ।

बहुरि तातें असंख्यात-असंख्यात वर्गस्थान जाइ अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थाननि की वर्गजालाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है । ताकौ एक बार वर्ग-रूप कीये अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थान हो है । ते कहा ?

सो कहिये है - ज्ञानावरणादि कर्मनि का वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि स्थाननि निष्ठता जो अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूहरूप अनुभाग, ताके बंध कौ कारणभूत जे परिणाम, तिनके स्थाननि का नाम अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थान है । तिसके स्थितिबन्धाध्यवसाय स्थान अर अनुभागबन्धाध्यवसाय स्थाननि का विशेष व्याख्यान आगे कर्मकांड के अंत अधिकार विषे लिखेगे । बहुरि तातें असंख्यात-असंख्यात वर्गस्थान जाइ निगोद जरीरनि की उत्कृष्ट संख्या का वर्गजालाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है ।

छोड़ै, तिस काल के समयनि का प्रमाण जानना । इहां निगोद जीव निगोद पर्यायि कौ छोड़ि अन्य पर्यायि उत्कृष्टपनै यावत् काल न धरै, तिस काल का ग्रहण न करना; जातै सो काल अढाई पुद्गल परिवर्तन परिमाण है, सो अनंत है; तातै ताका इहां ग्रहण नाहीं । बहुरि तातै असंख्यात असंख्यात वर्गस्थान जाइ, उत्कृष्ट योग स्थाननि के अविभाग प्रतिच्छेदनि का वर्गशलाका अर अर्धच्छेद अर प्रथम मूल हो है । याका एक बार वर्ग कीए एक-एक समान प्रमाणरूप चय करि अधिक अैसे जो जगतश्रेणी के असंख्यातवै भाग प्रमाण योग स्थान है, तिनिविषै जो उत्कृष्ट योग स्थान हैं, ताके अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है । ते लोक प्रमाण जे एक जीव के प्रदेश, तिनिविषै कर्म-नोकर्म पर्यायरूप परिणमने को योग्य जे तेइस वर्गणानि विषै कार्माण वर्गणा अर आहार वर्गणा, तिनिकौ तिस कर्म-नोकर्म पर्यायरूप परिणमने विषै प्रकृतिबंध अर प्रदेशबंध का कारणभूत जानने । बहुरि तातै अनंतानंत वर्गस्थान जाइ केवलज्ञान का चौथा मूल का घन का घन हो है, सो केवलज्ञान का प्रथम मूल अर चतुर्थ मूल कौ परस्पर गुणै जो प्रमाण होइ, तीहि मात्र है । जैसे अंकसंदृष्टि करि केवलज्ञान का प्रथम पण्ठी (६५५३६), ताका प्रथम मूल दोय सै छप्पन, चतुर्थ मूल दोय, इनिकौ परस्पर गुणै पांच सै बारह होई, चतुर्थ मूल दोय का घन आठ, ताका घन पांच सै बारह हो है, सो यहु द्विरूप घनाघनधारा का अंतस्थान है, यातै अधिक का घनाघन कीए केवलज्ञान तै उल्लघन हो है, सो है नही । बहुत कहने करि कहा ? द्विरूप वर्गधारा विषै जिस-जिस स्थान विषै जिस-जिस राशि का वर्ग ग्रहण कीया, तिस-तिस राशि कौ तिस-तिस स्थान विषै नव जायगा माडि, परस्पर गुणै इस द्विरूप घनाघन धारा विषै प्रमाण हो है । इस धारा के सर्वस्थान च्यारि घाटि केवलज्ञान का वर्गशलाका मात्र है । अैसे इहा सर्वधारा अर द्विरूपवर्गादिक तीन धारानि का प्रयोजन जानि विशेष कथन कह्या ।

अब शेष सम, विषम, कृति, अकृति, कृतिमूल, अकृतिमूल, घन, अघन, घनमूल अघनमूल इन धारानि का विशेष प्रयोजन न जानि सामान्य कथन कीया, जो इनिका विशेष जान्या चाहै ते त्रिलोकसार विषै बृहद्द्वारा परिकर्मा नाम ग्रंथ विषै जानहु ।

अब उपमा मान आठ प्रकार का वर्णन करिए है । अथ एक, दोय गणना करि कहने कौ असमर्थ रूप अैसा जो राशि, ताका कोई उपमा करि प्रतिपादन, सो उपमा मान है । तिसरूप प्रमाण (तिस उपमा मान के) आठ प्रकार है । १. पल्य, २. सागर,

३ नूच्यगुल, ४ प्रतरागुल, ५ घनांगुल, ६ जगत श्रेणी, ७ जगत्प्रतर ८ जगद्धन । तहां पल्य तीन प्रकार है — व्यवहार पल्य, उद्धार पल्य, अद्धा पल्य । तहां पहिला पल्य करि वालनि की संख्या कहिए है । दूसरा करि द्वीप-समुद्रनि की संख्या वर्णिए है । तीसरा करि कर्मनि की वा देवादिकनि की स्थिति वर्णित है । अब परिभाषा का कथनपूर्वक तिनि पल्यनि का स्वरूप कहिए है ।

जो तीक्ष्ण शस्त्रनि करि भी छेदने भेदने मोडने को समर्थ न हूजे अैसा है, वहुरि जल-अग्नि आदिनि करि नाश कौ न प्राप्त हो है, वहुरि एक-एक तो रस, वर्ण, गंध अर दोय स्पर्श अैसे पाच गुण संयुक्त है; वहुरि शब्दरूप स्कंध का कारण है, आप शब्द रहित है, वहुरि स्कंध रहित भया है, वहुरि आदि-मध्य-अंत जाका कह्या न जाइ अैसा है; वहुरि बहु प्रदेशनि के अभाव तै अप्रदेशी है, वहुरि इंद्रियनि करि जानने योग्य नही है, वहुरि जाका विभाग न होइ अैसा है — अैसा जो द्रव्य, सो परमाणु कहिए । सो परमाणु अंतरंग वहिरंग कारणनि तै अपने वर्ण, रस, गंध, स्पर्शनि करि सदा काल पूरे कहिए जुडै अर गलै कहिए बिखरै, तव स्कंधवान आपकौ करै है; तातै पुद्गल अैसा नाम है ।

वहुरि तिनि अनंतानंत परमाणुनि करि जो स्कंध होइ, सो अवसन्नासन्न नाम धारक है । वहुरि तातै सन्नासन्न, तृटरेणु, त्रसरेणु, उत्तम भोगभूमिवालों का वाल का अग्रभाग, रथरेणु, मध्यम भोगभूमिवालों का वाल का अग्रभाग, जघन्य भोगभूमिवालों का वाल का अग्रभाग, कर्मभूमिवालों का वाल का अग्रभाग, लीख, सरिसौ, यद अंगुल ५ बारह पहिला पहिला तै क्रम करि आठ-आठ गुणे है ।

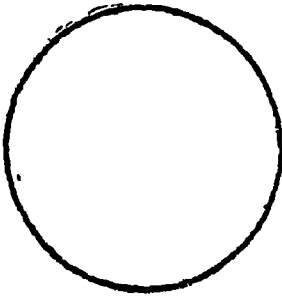
तहां अंगुल तीन प्रकार है उत्सेधागुल, प्रमाणागुल, आत्मांगुल । तहां पूर्वोक्त क्रम करि उक्त्या मो उत्सेधागुल है । याकरि नारकी, तिर्यच, मनुष्य, देवनि के शरीर वा भस्मवासी आदि च्यानि प्रकार देवनि के नगर अर मंदिर इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णन करिग है । वहुरि निम उत्सेधागुल तै पाच सो गुणा जो भरत क्षेत्र का अवसन्निधि वाल विपै पहिला चक्रवर्ती का अंगुल है; मोई प्रमाणागुल है । याकरि द्वीप, शम्भु, पर्वत, वेदी, नदी, कुंड, जगती, वर्ष इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णिए है । तै भरत, जम्बवत क्षेत्र के मनुष्यनि का अपने-अपने वर्तमान काल विपै जो अंगुल ३ आठ-आठ है । याकरि भारी, कलज, आरमा, धनुष, डोल, जूडा, शय्या, गाडा, जाल, जाल, मिट्टानन, वाण, चमर, दुहुभि, पीठ, छत्र, मनुष्यनि के मंदिर

वा नगर वा उद्यान इत्यादिकनि का प्रमाण वर्णिए है । अैसे जहाँ जैसा सभवै, तहा तैसा ही अंगुल करी निपज्या प्रमाण जानना ।

बहुरि छह अंगुलनि करि पद होइ है । बहुरि तातै दोय पाद की एक विलस्ति, दोय विलस्ति का एक हाथ, दोय हाथ का बीख, दोय बीख का एक धनुष, बहुरि दोय हजार धनुषनि करि एक कोश, तिन च्यारि कोशनि करि एक योजन हो है । सो प्रमाणांगुलनि करि निपज्या अैसा एक योजन प्रमाण औडा वा चौडा अैसा एक गर्त — खाड़ा करना ।

चौडा १ योजन

औडा १ योजन



सो गर्त उत्तम भोगभूमि विषै निपज्या जो जन्म तै लगाइ एक आदि सात दिन पर्यंत ग्रहे जे मीठा का युगल, तिनिके बालनि का अग्रभाग, तिनिकी लंबाई चौडाईनि करि अत्यंत गाढा भूमि समान भरना, सिघाऊ न भरना । केते बाल माये सो प्रमाण ल्याइये है —

विवर्खंभवग्गदहगुण, करणी वट्टस्स परिरयो होदि ।

विवर्खंभवउत्थाभे, परिरयगुणिदे हवे गुणियं ॥

इस करण सूत्र कर गोल क्षेत्र का फल प्रथम ही ल्याइए है । या सूत्र का अर्थ — व्यास का वर्ग कौ दश गुणा कीए वृत्त क्षेत्र का करणिरूप परिधि हो है । जिस राशि का वर्गमूल ग्रहण करना होइ, तिस राशि कौ करण कहिए । बहुरि व्यास का चौथा भाग करि परिधि कौ गुणै क्षेत्रफल हो है । सो इहां व्यास एक योजन, ताका वर्ग भी एक योजन, ताकौ दश गुणा कीए दश योजन प्रमाण करणिरूप परिधि होइ सो याका वर्गमूल ग्रहण करना । सो नव का मूल तीन अर अवशेष एक रह्या, ताकौ दूणा मूल का भाग देना, सो एक का छठा भाग भया । इनिकौ समच्छेद करि मिलाए उगणीस का छठा भाग प्रमाण परिधि भया (१६) याकौ व्यास का चौथा भाग

पाव योजन (  $\frac{१}{४}$  ), ताकरि गुणै उगणीस का चौबीसवा भाग प्रमाण (  $\frac{१६}{२४}$  ) क्षेत्रफल

भया । बहुरि याकौ वेध एक योजन करि गुणै, उगणीस का चौबीसवा भाग प्रमाण ही घन क्षेत्रफल भया । अब इहाँ एक योजन के आठ हजार (८०००) धनुष, एक धनुष का छिनवै (६६) अंगुल, एक प्रमाण अंगुल के पांच सै (५००) उत्सेवांगुल,

[illegible]

सो इहां एक वर्ष के दो अयन, एक अयन का तीन ऋतु, एक ऋतु का दोय मास, एक मास का तीस अहोरात्र, एक अहोरात्र के तीस मुहूर्त, एक मुहूर्त की नव्यान आवली, एक आवली के जवन्य युक्तासंख्यात प्रमाण समय, सो क्रम तै गुणन कीये तिम काल के समयनि का प्रमाण हो है ।

वहूँ तिस एक-एक रोम के अग्रभाग का अमंख्यात कोडि वर्ष के जेने समय होइ तिनने-तितने खंड कीए दूसरा उद्धार पल्य के रोम खंड होइ है। इहा याके समय भी जाने ही जानने। सो ए कितने है? सो ल्याइये है - विरलन राजि काँ देय राजि का अर्बच्छेदनि करि गुणें उत्पन्न राजि के अर्बच्छेदनि का प्रमाण हो है। तातें अद्धा-पन्न का अर्बच्छेद राजि काँ अद्धापल्य का अर्बच्छेद राजि ही करि गुणें सूच्यगुल का

अर्धच्छेद राशि हो है । बहुरि याकौ तिगुणी कीए घनागुल का अर्धच्छेद राशि हो है । बहुरि याकरि अद्वापल्य का अर्धच्छेद राशि का असंख्यातवां भाग कौं गुणौ जगत् श्रेणी का अर्धच्छेद राशि हो है । यामैं तीन घटाए एक राजू के अर्धच्छेदनि के प्रमाण हो है । इहा एक अर्धच्छेद तो बीच मेरु के मस्तक विषे प्राप्त भया । तीहि सहित लाख योजननि के संख्यात अर्धच्छेद भये एक योजन रहै । अर एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अंगुल होइ, सो इनके संख्याते अर्धच्छेद भये एक अंगुल होय, सो ये सर्व मिलि संख्याते अर्धच्छेद भए, तिनिकरि अधिक एक सूच्यगुल रही थी, ताके अर्धच्छेदनि का जो प्रमाण होइ, सो घटाइए, तब समस्त द्वीप-समुद्रनि की संख्या हो है । सो घटावना कैसे होइ ? इहां तिगुणा सूच्यंगुल का अर्धच्छेद प्रमाण गुणकार है, सो इतने घटावने होइ, तहां अद्वापल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग प्रमाण मे सौ एक घटाइए तौ इहा संख्यात अधिक सूच्यंगुल का अर्धच्छेद घटावना होइ, तो कितना घटाइए ? अैसे त्रैराशिक करि किछू अधिक त्रिभाग घटाइए, अैसे साधिक एक का तीसरा भाग कर हीन पल्य के अर्धच्छेद का असंख्यातवां भाग कौं पल्य के अर्धच्छेद के वर्ग तै तिगुणा प्रमाणकरि गुणौ समस्त द्वीप-समुद्रनि की संख्या हो है । सो इतने ए द्वीप-समुद्र अढाई उद्धार सागर प्रमाण है, तिनके पचीस कोडाकोडि पल्य भए, सो इतने पल्य की पूर्वोक्त संख्या होइ, तौ एक उद्धार पल्य की केती होइ ? अैसे त्रैराशिक कीए पूर्वोक्त द्वीप-समुद्रनि की संख्या कौ पचीस कोडाकोडि का भाग दीजिए, तहां जो प्रमाण आवै तितनी उद्धार पल्य के रोम खंडनि की संख्या जानना । बहुरि इनि एक-एक रोम खंडनि के असंख्यात वर्ष के जेते समय होहि, तितने खंड कीए जेते होइ, तितने अद्वापल्य के रोम खंड है, ताके समय भी इतने ही है । जातै एक-एक समय विषे एक-एक रोम खंड काढै सर्व जेते कालकरि पूर्ण होइ, सो अद्वा पल्य का काल है ।

ते असंख्यात वर्ष के समय कितने है ?

सो कहिए है — उद्धार पल्य के सर्व रोम खंडनि का प्रत्येक असंख्यात वर्ष समय प्रमाण खंड कीए एक अद्वा पल्य प्रमाण होइ, तो एक रोम खंडनि के खंडनि का केता प्रमाण होइ ? अैसे त्रैराशिक करि जितना लब्ध राशि का प्रमाण होइ, तितने एक उद्धार पल्य का रोम खंड के खंडनि का प्रमाण जानना । बहुरि अद्वा पल्य है, सो द्विरूप वर्गधारा मे अपने अर्धच्छेद राशि तै ऊपरि असंख्यात वर्गस्थान जाइ उपजै है । याकों तिगुणा पल्य का अर्धच्छेद राशि का वर्ग कौ किंचिदून पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग करि गुणौ जो प्रमाण आवै, ताकौ पचीस कोडाकोडि

का भाग दीए जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीए जितने पावै, तितने असख्यात वर्षनि के समय जानने । इस प्रमाण करि तिस उद्धार पत्य के रोम खंडनि की गुणें अद्वा पत्य के रोमनि की संख्या आवै है । जैसे तीन प्रकार पत्य कहे । जैसे खास विपै अन्न भरिए, तैसे इहां गर्त विषे रोम भरि प्रमाण कह्या, तातै याका नाम पत्योपम कह्या है ।

बहुरि इनिकौ प्रत्येक दश कोडाकोडि करि गुणै अपने-अपने नाम का सागर होइ । दश कोडाकोडि व्यवहार पत्य करि व्यवहार सागर, उद्धार पत्य करि उद्धार सागर, अद्वा पत्य करि अद्वा सागर जानना ।

इहां लवण समुद्र की उपमा है, तातै याका नाम सागरोपम है, सो याकी उत्पत्ति कहिए है — लवण समुद्र की छेहड की सूची पाच लाख योजन ५००००० (५ ल) आदिकी सूची एक लाख योजन (१०००००) इनिकौ मिलाय ६ ल आधा व्यास का प्रमाण लाख योजन करि गुणिये, तव ६ ल ल । बहुरि याके वर्ग कों दशगुणा करिये, तव करणिरूप सूक्ष्म क्षेत्र होइ ६ ल ल ६ ल ल १० । याका वर्गमूल प्रमाण लवण समुद्र का सूक्ष्म क्षेत्रफल है । बहुरि तिस करणिरूप लवण समुद्र के क्षेत्रफल कौ पत्य का गर्त एक योजन मात्र, ताका करणिरूप सूक्ष्म क्षेत्रफल एक योजन का वर्ग दशगुणा कौ योजन का चौथा भाग के वर्ग का भाग दीए जो होइ, तीहि प्रमाण है । ताका भाग देना ६ ल ल ६ ल ल १० । सो इहां दश करणि

$$\frac{1}{4} \quad \frac{1}{4} \quad 10$$

करि दश करणि का अपवर्तन करना । बहुरि भागहार का भागहार राशि का गुणकार होइ, इस न्याय करि भागहार दोय जायगा च्यारि करि राशि का दोय जायगा छक्का का गुणकार करना २४ ल ल २४ ल ल, तव पत्य गर्तनि के प्रमाण का वर्ग होइ । याका वर्गमूल ग्रहै सर्व गर्तनि का प्रमाण लाख गुणा चोवीस लाख प्रमाण हो है । याकी हजार योजन का औडापन करि गुणै सर्व लवण समुद्र विपै पत्यगर्त मारिखे गर्तनि का प्रमाण हो है — २४ ल ल १००० । याकी अपने-अपने विवक्षित पत्य के रोम खंडनि करि गुणै गर्तनि के रोमनि का प्रमाण हो है । बहुरि छह रोम जितना क्षेत्र रोकै, तितने क्षेत्र का जल निकासने विपै पचीस समय व्यतीत होय, तौ सर्व रोमनि के क्षेत्र का जल निकासने मे केते समय होय ? जैसे त्रैराशिक करना । तहा प्रमाण गणि रोम छह (६), फल राशि समय पचीस (२५), इच्छा राशि सर्व

गर्तनि के रोमनि का प्रमाण । तहा फल करि इच्छा कौ गुणि प्रमाण का भाग दीए समयनि का प्रमाण आवै । बहुरि पूर्वोक्त अपना-अपना समयनि का प्रमाणकरि एक पल्य-होय, तौ इतने इहां समय भए, तिनके केते पल्य होय ? औसै त्रैराशिक कीए, दश कोडाकोडि पल्यनि का प्रमाण हो है । तातै दश कोडाकोडि पल्यनि के समूह का नाम सागर कह्या है । बहुरि अद्धा पल्य का अर्धच्छेद राशि का विरलन करि एक-एक करि बखेरि एक-एक रूप प्रति अद्धा पल्य कौ देइ परस्पर गुणन कीए सूच्यंगुल उपजै है । एक प्रमाणांगुल का प्रमाण लंबा, एक प्रदेश प्रमाण चौड़ा-ऊंचा क्षेत्र का इतने प्रदेश जानने । जैसे पल्य का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, तिनिका विरलन करि । १ । १ । १ । १ । एक-एक प्रति-प्रति पल्य सोलह कों देइ, १६ । १६ । १६ । १६ ।

१ १ १ १

परस्पर गुणै पण्डी प्रमाण (६५५३६) होइ, तैसे इहां जानना । बहुरि सूच्यंगुल का जो वर्ग सो प्रतरांगुल है । एक अंगुल चौड़ा, एक अंगुल लम्बा, एक प्रदेश ऊंचा क्षेत्र का इतना प्रदेशनि का प्रमाण है । जैसे पण्डी कौ पण्डी करि गुणै बादाल होइ, तैसे इहा सूच्यंगुल कौ सूच्यंगुल करि गुणै प्रतरांगुल हो है । बहुरि सूच्यंगुल का घन, सो घनांगुल है । एक अंगुल चौड़ा, एक अंगुल लम्बा, एक अंगुल ऊंचा क्षेत्र का इतना प्रदेशनि का प्रमाण है । जैसे बादाल को पण्डी करि गुणै पण्डी का घन होई, तैसे प्रतरांगुल को सूच्यंगुल करि गुणै घनांगुल हो है । बहुरि अद्धापल्य के जेते अर्धच्छेद, तिनिका असंख्यातवा भाग का जो प्रमाण, ताकौ विरलनि करि एक-एक प्रति घनांगुल देय परस्पर गुणै जगत्श्रेणी उपजै है । क्षेत्रखंडन विधान करि हीनाधिक कौ समान कीये, लोक का लम्बा श्रेणीबद्ध प्रदेशनि का प्रमाण इतना है । जातै जगत्श्रेणी का सातवां भाग राजू है । सात राजू का घनप्रमाण लोक है । जैसे पल्य का अर्धच्छेद च्यारि, ताका असंख्यातवां भाग दोय, सो दोय जायगा पण्डी गुणा बादाल कौ माडि परस्पर गुणै विवक्षित प्रमाण होइ, तैसे इहां भी जगत्श्रेणी का प्रमाण जानना । बहुरि जगत्श्रेणी का वर्ग, सो जगत्प्रतर है । क्षेत्रखंडन विधान करि हीनाधिक समान कीए लम्बा-चौड़ा लोक के प्रदेशनि का इतना प्रमाण है ।

भावार्थ यह — यह जगत्श्रेणी कौ जगत्श्रेणी करि गुणै प्रतर हो है । बहुरि जगत्श्रेणी का घन सो लोक है । लम्बा, चौड़ा, ऊंचा, सर्व लोक के प्रदेशनि का प्रमाण इतना है ।

भावार्थ यह — जगत्प्रतर कौ जगत्श्रेणी करि गुणै लोक का प्रमाण हो है ।



अब इनके अर्धच्छेद अर वर्गशलाकनि का प्रमाण कहिए है - तहां प्रथम अद्धा पल्य के अर्धच्छेद द्विरूप वर्गधारा विषै अद्धा पल्य के स्थान तै पहिले असख्यात वर्ग स्थान नीचें उतरि जो राशि भया, तीहि प्रमाण हैं । बहुरि अद्धा पल्य की वर्गशलाका तिमही द्विरूप वर्गधारा विषै तिस पल्य ही के अर्धच्छेद स्थान तै पहले असख्यात वर्गस्थान नीचें उतरि उपजी है । बहुरि सागरोपम के अर्धच्छेद सर्वधारा विषै पाइए है, ते पल्य के अर्धच्छेदनि विषै गुणकार जो दश कोडाकोडि, ताके संख्यात अर्धच्छेद जोड़ें जो प्रमाण होइ, तितने है । बहुरि ताकी वर्गशलाका इहां पल्य राशि तै गुणकार संख्यात ही का है, तातें न बने है । बहुरि सूच्यगुल है सो द्विरूप वर्गधारा विषै प्राप्त है, सो यहु राशि विरलन देय का अनुक्रम करि उपज्या है, तातें याके अर्धच्छेद अर वर्गशलाका सर्वधारा आदि यथासंभव धारानि विषै प्राप्त है, द्विरूप वर्गधारा आदि तीन धारानि विषै प्राप्त नाही है । तहां विरलन राशि पल्य के अर्धच्छेद, इनिकों देय राशि पल्य, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने तौ सूच्यगुल के अर्धच्छेद है । बहुरि द्विरूप वर्गधारा विषै पल्यरूप स्थान तै ऊपरि सूच्यगुल का विरलन राशि जो पल्य के अर्धच्छेद, ताके जेते अर्धच्छेद है तितने वर्गस्थान जाइ सूच्यगुल स्थान उपजै है । तातें पल्य की वर्गशलाका का प्रमाण तै सूच्यगुल की वर्गशलाका का प्रमाण दूणा है । तातें पल्य पर्यन्त एक बार पल्य की वर्गशलाका प्रमाण स्थान भए पीछें पल्य के अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि का जो प्रमाण होय, सोई पल्य की वर्गशलाका का प्रमाण, सो पल्य तै ऊपरि दूसरी बार पल्य की वर्गशलाका प्रमाण स्थान भए सूच्यगुल हो है । तातें दूणी पल्य की वर्गशलाका प्रमाण सूच्यगुल की वर्गशलाका कही । अथवा विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेद, तिनिके जेते अर्धच्छेद, तिनिविषै देय राशि पल्य, ताका अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि कौ जोड़ें, सूच्यगुल की वर्गशलाका हो है । सो पल्य के अर्धच्छेदनि का अर्धच्छेद प्रमाण पल्य की वर्गशलाका है । सो इहां भी दूणी भई, सो या प्रकार भी पल्य की वर्गशलाका तै दूणी सूच्यगुल की वर्गशलाका है । बहुरि प्रतरागुल है, सो द्विरूप वर्गधारा विषै प्राप्त है । ताकी वर्गशलाका अर्धच्छेद यथा योग्य धारानि विषै प्राप्त जानने । तहां 'अस्य द्वावन्मिबगो दुगुणा-दुगुणा हवति अद्विचिदा' इस सूत्र करि वर्ग तै ऊपरला वर्ग स्थान विषै दूणा-दूणा अर्धच्छेद कहे, तातें इहां सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि तै दूणै प्रतरांगुल के अर्धच्छेद जानने । अथवा गुण्य अर गुणकार का अर्धच्छेद जोड़ें राशि का अर्धच्छेद होइ, ताने इहां सूच्यगुल गुण्य की सूच्यगुल का गुणकार है, तातें दोय सूच्यगुल

के अर्धच्छेद मिलाए भी सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि तै दूणे प्रतरांगुल के अर्धच्छेद हो है। बहुरि 'वर्गशलाका रूवहिया' इस सूत्र करि वर्गशलाका ऊपरला स्थान विषै एक अधिक होइ, तातै इहा सूच्यगुल के अनतर प्रतरांगुल का वर्गस्थान है, तातै सूच्यगुल की वर्गशलाका तै एक अधिक प्रतरांगुल की वर्गशलाका है। बहुरि घनांगुल है, सो द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त है, सो यहु अन्य धारा विषै उत्पन्न है, सो 'तिगुणा तिगुणा पर-द्विगुणे' इस सूत्र करि अन्य धारा का ऊपरला स्थान विषै तिगुणा-तिगुणा अर्धच्छेद होहि, तातै सूच्यगुल के अर्धच्छेदनि तै तिगुणे घनांगुल के अर्धच्छेद है। अथवा तीन जायगा सूच्यगुल माडि परस्पर गुणै, घनांगुल हो है। तातै गुण्य-गुणकार रूप तीन सूच्यगुल, तिनका अर्धच्छेद जोडै भी घनांगुल के अर्धच्छेद तितने ही हो है। बहुरि 'परसम' इस सूत्र करि अन्य धारा विषै वर्गशलाका समान हो है। सो इहा द्विरूप वर्गधारा विषै जेथवा स्थान विषै सूच्यगुल है, तेथवां ही स्थान विषै द्विरूप घनधारा विषै घनांगुल है। तातै जेती सूच्यगुल की वर्गशलाका, तितनी ही घनांगुल की वर्गशलाका जानना। बहुरि जगत्श्रेणी है, सो द्विरूप घनधारा विषै प्राप्त है; सो याके अर्ध-च्छेद वर्गशलाका अन्य धारा विषै उपजै है। तहां 'विरलज्जमाणरासि दिण्णस्सद्धि-दीहि संगुणिदे लद्धेदा होंति' इस सूत्र करि विरलनरूप राशि कौ देय राशि का अर्धच्छेदनि करि गुणै लब्ध राशि के अर्धच्छेद होहि। तातै इहा विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवा भाग, ताको देय राशि घनांगुल, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै जो प्रमाण होइ, तितने जगत् श्रेणी के अर्धच्छेद है। बहुरि दूणा जघन्य परीता-संख्यात का भाग अद्धा पल्य की वर्गशलाका कौ दीए जो प्रमाण होइ, तितना विर-लन राशि का अर्धच्छेद है। ताकौ देय राशि घनांगुल की वर्गशलाका विषै जोडै जो प्रमाण होइ, तितनी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका है। अथवा जगत्श्रेणी विषै देय राशि घनांगुल, तीहिरूप द्विरूप घनधारा का स्थान तै ऊपरि विरलन राशि पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तितने वर्गस्थान जाइ जगत्श्रेणीरूप स्थान उपजै है। तातै भी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका पूर्वोक्त प्रमाण जाननी।

सो जगत्श्रेणी विषै विरलन राशि का प्रमाण कितना है ?

सो कहिए है, अद्धा पल्य का जो अर्धच्छेद राशि ताका प्रथम वर्गमूल, द्वितीय वर्गमूल इत्यादि क्रम तै दूणा जघन्य परीतासंख्यात के जेते अर्धच्छेद होहि, तितने

वर्गमूल करने, सो द्विरूप वर्गधारा के स्थाननि विषे पत्य का अर्धच्छेदरूप स्थान तं नीचं तितने स्थान आइ अंत विषे जो वर्गमूलरूप स्थान होइ, ताके अर्धच्छेद दूगा जघन्य परीतासंख्यात का भाग पत्य की वर्गशलाका को दीये जो प्रमाण होइ, तितने होइ । वहुनि 'तस्मिन्तदुगे गुणोरासी' इस सूत्र करि अर्धच्छेदनि का जेता प्रमाण, तितने दुवे मांडि परस्पर गुण राशि होइ, सो इहां पत्य की वर्गशलाका का प्रमाण भाज्य है, सो तितने दुवे मांडि परस्पर गुण तो पत्य का अर्धच्छेद राशि होय; अर दूगा जघन्य परीतासंख्यात का प्रमाण भागहार है, सो तितने दुवे मांडि परस्पर गुण यथासंभव असंख्यात होइ । अैसे तिस अंत के मूल का प्रमाण पत्य के अर्धच्छेदनि के असंख्यातवे भाग प्रमाण जानना, सोई इहां जगत्श्रेणी विषे विरलन राशि है । वहुनि जगत्प्रतर है, सो द्विरूप घनधारा विषे प्राप्त है, सो याके अर्धच्छेद वर्गशलाका अन्य धारानि विषे प्राप्त जानने । तहा जगत्श्रेणी के अर्धच्छेदनि तं दूणे जगत्प्रतर के अर्धच्छेद है । 'वर्गसला रूवहिया' इस सूत्र करि जगत्श्रेणी की वर्गशलाका तं एक अधिक जगत्प्रतर की वर्गशलाका है । वहुनि घनरूप लोक, सो द्विरूप घनाघन धारा विषे उपजै है । तहां 'तिगुणा तिगुणा परद्वारे' इस सूत्र करि द्विरूप घनधारा विषे प्राप्त जो जगत्श्रेणी, ताके अर्धच्छेदनि ते लोक के अर्धच्छेद तिगुणे जानने । अथवा तीन जायगा जगत्श्रेणी मांडि परस्पर गुण लोक होइ, सो गुण्य-गुणकार तीन जगत्श्रेणी के अर्धच्छेद जोड भी तितने ही लोक के अर्धच्छेद हो है । वहुनि 'परसम' इस सूत्र करि जगत्श्रेणी की वर्गशलाका नात्र ही लोक की वर्गशलाका है । इहां प्रयोजनरूप गाथा सूत्र कहिये हैं । उक्त च -

गुणयारद्वच्छेदा, गुणिज्जमाणास्स अद्वच्छेदजुदा ।

लदस्सद्वच्छेदा, अहियस्सच्छेदणा णत्थि ॥

याका अर्थ - गुणकार के अर्धच्छेद गुण्यराशि के अर्धच्छेद सहित जोड लब्धराशि के अर्धच्छेद होहि । जैसे गुणकार आठ, ताके अर्धच्छेद तीन अर गुण्य सोलह, ताके अर्धच्छेद चारि, इनको जोड लब्धराशि एक सौ अठ्ठाईस के अर्धच्छेद सात हो है । अने ही गुणकार दज कांडाकोडि के संख्यात अर्धच्छेद गुण्यराशि पत्य, ताके अर्धच्छेदनि में जोड, लब्धराशि सागर के अर्धच्छेद हो है । वहुनि अधिक के छेद नाही हैं, गणनं नो कहिये है, अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेद प्रमाण वर्गशलाका होइ, सो इहां पत्य के अर्धच्छेदनि तं गणनं अर्धच्छेद सागर के अधिक कहें । सो इनि अधिक अर्धच्छेदनि के

अर्धच्छेद हों, परन्तु वर्गशलाकारूप प्रयोजन की सिद्धि नाही, तातें अधिक के अर्धच्छेद नाही करने असा कहा, याही तै सागर की वर्गशलाका का अभाव है । उक्त च -

भज्जस्सद्धछेदा, हारद्धछेदणाहि परिहीणा ।

अद्धच्छेदसलागा, लद्धस्स हवति सव्वत्थ ॥

अर्थ - भाज्यराशि के अर्धच्छेद भागहार के अर्धच्छेदनि करि हीन करिए, तब लब्धराशि की अर्धच्छेद शलाका सर्वत्र हो है । जैसे एक सौ अट्ठाईस के भाज्य के अर्धच्छेद सात, इनमे भागहार आठ के तीन अर्धच्छेद घटाए लब्धराशि सोलह के चारि अर्धच्छेद हो है, अैसे ही अन्यत्र जानना ।

विरलज्जमाणरासिं, दिण्णस्सद्धच्छिदीहि संगुणिदे ।

अद्धच्छेदा होंति हु, सव्वत्थुपण्णरासिस्स ॥

अर्थ - विरलन राशि कौ देय राशि के अर्धच्छेदनि करि गुणै उत्पन्न राशि के अर्धच्छेद सर्वत्र हो है । जैसे विरलन राशि चारि, ताकौ देय राशि सोलह के अर्धच्छेद चारि करि (गुणै) उत्पन्न राशि पण्णटी के सोलह अर्धच्छेद हो है । अैसे इहां भी पत्य अर्धच्छेद प्रमाण विरलन राशि कौ देय राशि पत्य, ताके अर्धच्छेदनि करि गुणै उत्पन्न राशि सूच्यगुल के अर्धच्छेद हो है । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

विरलिदराशिच्छेदा, दिण्णद्धच्छेदच्छेदसंमिलिदा ।

वग्गसलागपमाणं, होंति समुप्पण्णरासिस्स ॥

अर्थ - विरलन राशि के अर्धच्छेद देयराशि के अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेदनि करि सहित जोडै उत्पन्न राशि की वर्गशलाका का प्रमाण हो है । जैसे विरलन राशि चारि के अर्धच्छेद दोय अर देय राशि सोलह के अर्धच्छेद चारि, तिनिके अर्धच्छेद दोय, इनको मिलाए उत्पन्न राशि पण्णटी की वर्गशलाका चारि हो है । अैसे ही विरलन राशि पत्य के अर्धच्छेद, तिनिके अर्धच्छेद तिनिविषै देय राशि पत्य, ताके अर्धच्छेदनि के अर्धच्छेद जोडै उत्पन्न राशि सूच्यगुल के वर्गशलाका का प्रमाण हो है । अैसे ही अन्यत्र जानना ।

दुगुणपरित्तासखेणवहरिदद्वारपल्लवग्गसला ।

विदंगुलवग्गसला, सहिया सेढिस्स वग्गसला ॥

अर्थ — दूणा जघन्य परीतासंख्यात का भाग अष्टापत्य की वर्गशलाका कौं दीए जो प्रमाण होइ, तीहि करि संयुक्त घनांगुल की वर्गशलाका का जो प्रमाण, तितनी जगत्श्रेणी की वर्गशलाका हो है ।

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि अहियरुवाणि ।

तेसि अण्णोण्हदी, गुणयारो लद्धरासिस्स ॥

अर्थ — विरलन राशि तैं जेते अधिक रूप होइ, तिनिका परस्पर गुणन कीए लब्ध राशि का गुणकार होइ । जैसे च्यारि अर्धच्छेदरूप विरलन राशि अर तीन अर्ध-च्छेद अधिक राशि, तहा विरलन राशि के अर्धच्छेद प्रमाण दुवा मांडि परस्पर गुण २ × २ × २ × २ सोलह १६ लब्ध राशि होइ । अर अधिक राशि तीन अर्धच्छेद प्रमाण दुवा मांडि २ × २ × २ परस्पर गुण आठ गुणकार होय, सो लब्ध राशि कौ गुणकार करि गुण सात अर्धच्छेद जाका पाइए, ऐसा एक सौ अठ्ठाईस होइ । असैं ही पत्य के अर्धच्छेद विरलन राशि, सो इतने दुवा मांडि परस्पर गुण लब्ध राशि पत्य होइ अर अधिक राशि संख्यात अर्धच्छेद, सो इतने दुवे मांडि परस्पर गुण दश कोडा-कोडि गुणकार होइ । सो पत्य कौ दश कोडाकोडि करि गुण सागर का प्रमाण हो है । असैं ही अन्यत्र जानना ।

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरुवाणि ।

तेसि अण्णोण्हदी, हारो उप्पणरारसिस्स ॥

अर्थ — विरलन राशि तैं जेते हीनरूप होइ, तिनिका परस्पर गुणन कीए उत्पन्न राशि का भागहार होइ । जैसे विरलन राशि अर्धच्छेद सात अर हीनरूप अर्धच्छेद तीन, तहा विरलन राशिमात्र दुवा मांडि २ × २ × २ × २ × २ × २ परस्पर गुण एक सौ अठ्ठाईस उत्पन्न राशि होइ । वदुरि हीनरूप प्रमाण दुवा मांडि २ × २ परस्पर गुण आठ भागहार राशि होइ, सो उत्पन्न राशि कौ भागहाररूप राशि का भाग दीए च्यारि अर्धच्छेद जाका पाइए ऐसा सोलह हो है, असैं ही अन्यत्र जानना । असैं मान वर्णन कीया ।

सो अने मान भेदनि करि द्रव्य, श्रेत्र, काल, भाव का परिमाण कीजिए है; ता परा द्रव्य का परिमाण होइ, तहा तितने पदार्थ जुड़े-जुड़े जानने ।

अर जे अत्र का परिमाण होय, तहां तितने प्रदेज जानने ।

का आवरण अर वीर्यान्तराय के क्षायोपशम विशेष करि गुण-दोष का विचार, अतीत का याद करना, अनागत विषय याद रखना, इत्यादिकरूप भावमन के परिणामावने की शक्ति होइ, ताकौ मन-पर्याप्ति कहिए है । अैसे छह पर्याप्ति जानना ।

**पञ्जत्तीपट्ठवणं, जुगवं तु कमेण होदि णिट्ठवणं ।**

**अन्तो मुहुत्तकालेणहियकमा तत्तियालावा ॥१२०॥**

पर्याप्तिप्रस्थापनं, युगपत्तु क्रमेण भवति निष्ठापनम् ।

अंतर्मुहूर्तकालेन, अधिकक्रमास्तावदालापात् ॥१२०॥

टीका — जेते-जेते अपने पर्याप्ति होइ, तिनि सवनि का प्रतिष्ठापन कहिए प्रारंभ, सो तो युगपत् शरीर नामा नामकर्म का उदय के पहिले ही समय हो है । वहुरि निष्ठापन कहिए तिनि की संपूर्णता, सो अनुक्रम करि हो है । सो निष्ठापन का काल अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त करि अधिक है, तथापि तिनि सवनि का काल सामान्य आलाप करि अंतर्मुहूर्त ही कहिए जातै अंतर्मुहूर्त के भेद बहुत है ।

कैसे निष्ठापन का काल है ?

सो कहै है — आहार पर्याप्ति का निष्ठापन का काल सवनि तै स्तोक है, तथापि अंतर्मुहूर्त मात्र है । वहुरि याकौ सख्यात का भाग दीए जो काल का परिमाण आवै, सो भी अंतर्मुहूर्त है । सो यहु अंतर्मुहूर्त उस आहार पर्याप्ति का अंतर्मुहूर्त में मिलाये जा परिमाण होइ, सो शरीर पर्याप्ति का निष्ठापन काल जानना । सो यहु भी अंतर्मुहूर्त ही जानना । वहुरि याहु का सख्यातवां भाग प्रमाण अंतर्मुहूर्त याही में मिलाये इन्द्रिय पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अंतर्मुहूर्त ही है । वहुरि याका सख्यातवां भाग प्रमाण अंतर्मुहूर्त याही में मिलाए स्वासोज्वास पर्याप्ति काल होइ, सो भी अंतर्मुहूर्त ही है । अैसे एकेंद्रिय पर्याप्ति के तीं ए चारि ही पर्याप्ति इस अनुक्रम करि संपूर्ण होइ है । वहुरि स्वानोज्वास पर्याप्ति काल का सख्यातवां भाग का प्रमाण अंतर्मुहूर्त याही में मिलाए भाषा पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अंतर्मुहूर्त ही है । अैसे विकलेन्द्रिय पर्याप्ति त्रींनि के ए पांच पर्याप्ति इस अनुक्रम करि संपूर्ण होइ हैं । वहुरि भाषा पर्याप्ति काल का सख्यातवां भाग प्रमाण अंतर्मुहूर्त याही में मिलाए मन पर्याप्ति का काल होइ, सो भी अंतर्मुहूर्त ही है । अैसे संजी पंचेन्द्रिय पर्याप्ति के छह पर्याप्ति इस अनुक्रम करि संपूर्ण होइ हैं । अैसे इनका निष्ठापन काल कह्या ।

आगे पर्याप्ति, निवृत्ति अपर्याप्ति काल का विभाग कहै हैं —

पज्जत्तस्स य उदये, णियणियपज्जत्तिणिट्ठदो होदि ।  
जाव शरीरमपुण्णं, णिव्वत्तिअपुण्णगो ताव ॥ १२१ ॥

पर्याप्तस्य च उदये, निजनिजपर्याप्तिनिष्ठतो भवति ।  
यावत् शरीरमपूर्णं, निर्वृत्यपूर्णकस्तावत् ॥ १२१ ॥

टीका — पर्याप्ति नामा नामकर्म के उदय होते अपने-अपने एकेन्द्रिय के च्यारि, विकलेन्द्रिय के पांच, सैनी पंचेन्द्रिय के छह पर्याप्तिनि करि 'निष्ठताः' कहिए संपूर्ण शक्ति युक्त होंइ, तेई यावत् काल शरीर पर्याप्ति दूसरा, ताकरि पूर्ण न होइ, तावत् काल एक समय घाटि शरीर पर्याप्ति संबंधी अंतर्मुहूर्त पर्यन्त निवृत्ति अपर्याप्ति कहिए । जातै निवृत्ति कहिए शरीर पर्याप्ति की निष्पत्ति, तीहि करि जे अपर्याप्त कहिए संपूर्ण न भए, ते निवृत्ति अपर्याप्ति कहिए है ।

आगे लब्धि अपर्याप्ति का स्वरूप कहै है —

उदये दु अपुण्णस्स य, सगसगपज्जत्तियं ण णिट्ठवदि ।  
अन्तोमुहुत्तमरणं, लब्धिअपज्जत्तगो सो दु ॥ १२२ ॥

उदये तु अपूर्णस्य च, स्वकस्वकपर्याप्तिर्न निष्ठापयति ।  
अन्तर्मुहूर्तमरणं, लब्ध्यपर्याप्तकः स तु ॥ १२२ ॥

टीका — अपर्याप्ति नामा नामकर्म के उदय होते सतै, अपने-अपने एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय, सैनी जीव च्यारि, पांच, छह पर्याप्ति, तिनिकौ न 'निष्ठापयति' कहिए सम्पूर्ण न करै, उसास का अठारहवा भाग प्रमाण अंतर्मुहूर्त ही विषे मरण पावै, ते जीव लब्धि अपर्याप्त कहिए । जातै लब्धि कहिए अपने-अपने पर्याप्तिनि की संपूर्णता की योग्यता, तीहि करि 'अपर्याप्त' कहिए निष्पन्न न भए, ते लब्धि अपर्याप्त कहिए ।

आगे एकेन्द्रियादिक संज्ञी पर्यन्त लब्धि अपर्याप्तक जीवनि का निरंतर जन्म वा मरण का कालप्रमाण कौ कहै है —

तिणिसया छत्तीसा, छावट्टिसहस्सगाणि मरणाणि ।  
अन्तोमुहुत्तकाले, तावदिया चेव खुद्दभवा ॥ १२३ ॥

त्रीणि शतानि षट्त्रिंशत्, षट्षष्टिसहस्रकानि मरणानि ।

अंतर्मुहूर्तकाले, तावन्तश्चेव क्षुद्रभवाः ॥ १२३ ॥

टीका - क्षुद्रभव कहिए लब्धि अपर्याप्तक जीव, तिनकी जो वीचि विपै पर्याप्तिपनौ विना पाया निरन्तरपनै उत्कृष्ट होइ, तौ अंतर्मुहूर्त काल विपै छद्यासठि हजार तीन सौ छत्तीस (६६३३६) मरण होंइ; वहुनि इतने ही भव कहिए जन्म होइ ।

आगे ते जन्म-मरण एकेद्रियादि जीवनि के केते-केते सभवै अर तिनिके काल का प्रमाण कहा ? सो विशेष कहिए है -

सीदौ सट्ठी तालं, वियले चउवीस होंति पञ्चकखे ।

छावट्ठिं च सहस्सा, सयं च वत्तीसमेयकखे ॥ १२४ ॥

अशीतिः षष्टिः चत्वारिंशत्, विकले चतुर्विंशतिर्भवन्ति पञ्चाक्षे ।

षष्टिश्च सहस्राणि, शतं च द्वात्रिंशमेकाक्षे ॥ १२४ ॥

टीका - पूर्वे कहे थे लब्धि अपर्याप्तकनि के निरन्तर क्षुद्रभव, तिनविपै एकेद्रियनि के छद्यासठि हजार एक सौ वत्तीस निरन्तर क्षुद्रभव हो है; सो कहिए है - कोऊ एकेद्रिय लब्धि अपर्याप्तक जीव, सो तिस क्षुद्रभव का प्रथम समय तै लगाइ सांस के अठारहवे भाग अपनी आयु प्रमाण जीय करि मरै, वहुनि एकेद्रिय भया तहां तितनी ही आयु कौ भोगि, मरि करि वहुनि एकेद्रिय होइ । जैसे निरन्तर लब्धि अपर्याप्त करि क्षुद्रभव एकेद्रिय के उत्कृष्ट होइ तौ छद्यासठि हजार एक सौ वत्तीस होइ, अधिक न होइ । जैसे ही लब्धि अपर्याप्तक द्वेन्द्रिय के असी (८०) होइ । तेइन्द्रिय लब्धि अपर्याप्तक के साठि (६०) होइ । चौइन्द्रिय लब्धि अपर्याप्तक के चालीस (४०) होइ । पंचेन्द्रिय लब्धि अपर्याप्त के चौवीस होई, तीहिविपै भी मनुष्य के आठ (८) असेनी तिर्यच के आठ, (८) सैनी तिर्यच के आठ (८) जैसे पंचेन्द्रिय के चौवीस (२४) होइ । जैसे लब्धि अपर्याप्तकनि का निरन्तर क्षुद्रभवनि का परिमाण कह्या ।

अब एकेद्रिय लब्धि अपर्याप्तक के निरन्तर क्षुद्रभव कहे, तिनकी सख्या स्वामीनि की अपेक्षा कहे है -

पुढविदगागणिमारुद, साहारणथूलसुहमपत्तेया ।

एदेसु अपुण्णेषु य, एक्केक्के वार खं छक्कं ॥ १२५ ॥



पृथ्वीदकाग्निमारुतसाधारणस्थूलसूक्ष्मप्रत्येकाः ।

एतेषु अपूर्णेषु च एकैकस्मिन् द्वादश खं षट्कम् ॥ १२५ ॥

टीका - पृथ्वी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पति इनि - पांचों के सूक्ष्म-बादर करि दश भेद भये अर एक प्रत्येक वनस्पती - इनि ग्यारह लब्धि अपर्याप्तिकनि विषै एक-एक भेद विषै बारह, बिंदी, छह इनि अंकनिकरि छह हजार बारह (६०१२) निरंतर क्षुद्रभव जानने । पूर्वे निरंतर क्षुद्रभव एकेद्रिय के छयासठि हजार एक सौ बत्तीस कहे । तिनिकौ ग्यारह का भाग दीए एक-एक के छह हजार बारह क्षुद्र भवनि का प्रमाण आवै है । अैसे लब्धि अपर्याप्त के निरंतर क्षुद्रभव कहे, तहां तिनकी सख्या वा काल का निर्णय करने कौ च्यारि प्रकार अपवर्तन त्रैराशिक करि दिखावै हैं । सो त्रैराशिक का स्वरूप ग्रंथ का पीठबंध विषै कह्या था, सो जानना । सो यहां दिखाइये है - जो एक क्षुद्रभव का काल सांस का अठारहवां भाग होइ, तो छया-सठि हजार तीन सौ छत्तीस निरंतर क्षुद्रभवनि का कितना काल होइ ? तहां प्रमाण राशि १, फलराशि एक का अठारहवां भाग  $\frac{१}{१८}$  अर इच्छा राशि छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस (६६३३६), तहां फल कौ इच्छा करि गुरौ प्रमाण का भाग दिए लब्ध राशि विषै छत्तीस सै पिच्यासी अर एक का त्रिभाग  $\frac{३६८५१}{३}$  इतना उस्वास भए; अैसे सब क्षुद्रभवनि का काल का परिमाण भया । यहां इतने प्रमाण अंतर्मुहूर्त जानना । जातै अैसा वचन है, उक्तम् च-

आढ्यानलसानुपहतमनुजोच्छवासैस्त्रिसप्तसप्तत्रिप्रमितैः ।

आहुर्मुहूर्तमंतर्मुहूर्तमष्टाष्टवर्जितैस्त्रिभागयुतैः ॥

याका अर्थ - सुखी, धनवान, आलस रहित, निरोगी मनुष्य का सैतीस सै तेहत्तरि (३७७३) उस्वासनि का एक मुहूर्त; तहां अठ्यासी उस्वास अर एक उस्वास का तीसरा भाग (हीन) घटाए सर्व क्षुद्रभवनि का काल अंतर्मुहूर्त होइ । वहरि उक्तम् च-

आयुरंतर्मुहूर्तः स्यादेषोस्याष्टादशांशकः ।

उच्छवासस्य जघन्य च नृतिरश्चां लब्ध्यपूर्णके ॥

याका अर्थ - लब्धि अपर्याप्तिक मनुष्य तिर्यचनि का आयु एक उस्वास का अठारहवां भाग प्रमाण अंतर्मुहूर्त मात्र है । सो अैसे कह्या नांन का अठान्हवा भाग

काल का एक क्षुद्रभव होइ, तौ छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग प्रमाण उसासनि का कितना क्षुद्रभव होइ? इहां प्रमाण राशि १, फलराशि १, इच्छाराशि  $\frac{३६८५}{३}$  १८

यथोक्त करतै लव्व राशि छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस ( ६६३३६ ) क्षुद्रभवनि का परिमाण आया । व्हुरि जो छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस क्षुद्रभवनि का काल छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग इतना उस्वास होइ, तौ एक क्षुद्रभवनि का कितना काल होइ? इहां प्रमाण राशि ६६३३६, फलराशि  $\frac{३६८५}{३}$  १, इच्छा राशि १, यथोक्त करतं लव्व राशि एक सांस का अठारहवां भाग १, एक क्षुद्रभव का काल १८

भया । व्हुरि छत्तीस सौ पिच्यासी अर एक का त्रिभाग  $\frac{३६८५}{३}$  इतना सांस का

छयासठि हजार तीन सौ छत्तीस क्षुद्रभव होइ, तौ सांस का अठारहवां भाग का कितना क्षुद्रभव होइ ? इहां प्रमाण राशि  $\frac{६६३३६}{३}$  १, फल राशि ६६३३६, इच्छा राशि एक का

अठारहवां भाग १, यथोक्त करतं लव्व राशि १ क्षुद्रभव हुआ । इहां सर्व फल राशि १८

कों इच्छा राशि करि गुणना, प्रमाण राशि का भाग देना, तव लव्व राशि प्रमाण हो है । जैसे एक क्षुद्रभव का काल समस्त क्षुद्रभव, समस्त क्षुद्रभव का काल इनिकों क्रम तै प्रमाण राशि करने तै च्यारि प्रकार त्रैराजिक किया है । और भी जायगा जहां त्रैराजिक का वर्णन होइ, तहां अमें ही यथासंभव जानना ।

आगें समुद्रातकेवली के अपर्याप्तपनै का संभव कहै हैं —

पज्जत्तसरोरस्स य, पज्जत्तुदयस्स कायजोगस्स ।

जोगिस्स अपुण्णत्तं, अपुण्णजोगोत्ति सिद्धिट्ठं ॥१२६॥

पर्याप्तशरीरस्य च, पर्याप्त्युदयस्य काययोगस्य ।

योगिनोऽपूर्णत्वमपूर्णयोगः इति निर्दिष्टम् ॥१२६॥

टीका — संपूर्ण परम आन्तरिक शरीर जाकें पाइए, व्हुरि पर्याप्ति नामा नानकर्म का उदय करि संयुक्त, व्हुरि काययोग का घारी — ऐसा जो सयोगकेवली भट्टारक, नाके समुद्रात करने कपाट का करिवा विषे अर संहार विषे अपूर्ण काय-योग कह्या है । जाने तहां संजी पर्याप्तवत् पर्याप्तिनि का आरंभ करि क्रम तै निष्ठा-

पन करै है । तातैं औदारिक मिश्र काययोग का धारी केवली भगवान, सो कपाट युगल का काल विषै अपर्याप्तपना कौ भजै है, ऐसा सिद्धात विषै कह्य है ।

आगै लब्धि अपर्याप्तिकादि जीवनि कै गुणस्थाननि का सभवने-असंभवने का विशेष कहै है -

**लब्धिअपुण्णं मिच्छे, तत्थवि विदिये चउत्थ-छट्ठे य ।**

**णिव्वत्तिअपज्जत्ती, तत्थ वि सेसेसु पज्जत्ती ॥ १२७ ॥**

लब्ध्यपूर्ण मिथ्यात्वे, तत्रापि द्वितीये चतुर्थषष्ठे च ।

निर्वृत्यपर्याप्तिस्तत्रापि शेषेषु पर्याप्तिः ॥ १२७ ॥

टीका - लब्धि अपर्याप्तक जीव मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषै ही पाइए है, और गुणस्थान वाकै संभवै नाही; जातैं सासादनपना आदि विशेष गुणानि का ताकै अभाव है । बहुरि तीहि पहिला मिथ्यादृष्टि विषै, दूसरा सासादन विषै, चौथा असंयत विषै, छठा प्रमत्त विषै - इनि चारों गुणस्थाननि विषै निर्वृत्ति अपर्याप्तक पाइए है । तहां पहला वा चौथा सू तो मरि करि जीव चारों गतिनि विषै उपजै है । अर सासादन सौ मरि करि नरक विना तीनि गतिनि विषै उपजै है । सो इनि तीनो गुणस्थान विषै जन्म का प्रथम समय तै लगाइ यावत् औदारिक, वैक्रियिक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ, तावत् एक समय घाटि शरीर पर्याप्ति का काल पर्यंत निर्वृत्ति अपर्याप्तक है । बहुरि प्रमत्त गुणस्थान विषै यावत् आहारक शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ, तावत् एक समय घाटि आहारक शरीर पर्याप्ति काल पर्यंत निर्वृत्ति अपर्याप्तक है । बहुरि इन कहे चारो गुणस्थाननि विषै अर अद्वेषेण रहे मिश्रादिक सयोगी पर्यन्त नव गुणस्थान विषै पर्याप्तक जीव पाइए है, जातैं ताका कारणभूत पर्याप्ति नामा नामकर्म का उदय सर्वत्र संभवै है ।

भावार्थ - लब्धि अपर्याप्तकनि के गुणस्थान एक पहिला, निर्वृत्ति अपर्याप्तकनि के गुणस्थान च्यारि - पहिला, दूसरा, चौथा, छठा; पर्याप्तनि के गुणस्थान सर्वसयोगी पर्यन्त जानना ।

आगै अपर्याप्त काल विषै सासादन अर असंयत गुणस्थान जहां नियम करि न संभवै, सो कहै है -

हेट्टिमछप्पुढवीणां, जोइसिवणभवणसव्वइत्थीणां ।

पुण्णिदरे णहि सम्मो, ण सासणो णारयापुण्णे ॥ १२८ ॥

अधस्तनषट्पृथ्वीनां, ज्योतिष्कवानभवनसर्वस्त्रीणाम् ।

पूर्णतरस्मिन् नहि सम्यक्त्वं न सासनो नारकापूर्णे ॥ १२८ ॥

टीका - नरक गति विषै रत्नप्रभा विना छह पृथ्वी संवंधी नारकीनि कै अर ज्योतिपी, व्यंतर, भवनवासी देवनि के अर सर्व ही स्त्री - देवांगना, मनुष्यणी, तिर्यचनी, तिनिकै निर्वृत्ति अपर्याप्त दशा विषै सम्यक्त्व न पाइए । जातै तीहि दशा विषै सम्यक्त्व ग्रहणे कौ योग्य काल नाही । अर सम्यक्त्व सहित मरै तिर्यच मनुष्य, सो तहां उपजै नाही । वहुरि सम्यक्त्व तै भ्रष्ट होइ जो जीव मिथ्यादृष्टि वा सासादन होइ, तो तिनिका यथासंभव तहां नरकादि विषै उपजने का विरोध है नाही । वहुरि सर्व ही सातो पृथ्वी के नारकी, तिनिकै निर्वृत्ति अपर्याप्त दशा विषै सासादन गुणस्थान न पाइए, अैसा नियम जानना । जातै नरक विषै उपज्या जीव के तिस काल विषै सासादनपने का अभाव है ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्रसिद्धांतचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसंग्रह ग्रंथ  
जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसार इस सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा  
भाषाटीका विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनिविषै पर्याप्त  
प्ररूपण नामा तीसरा अधिकार पूर्ण भया ॥ ३ ॥

## चौथा अधिकार : प्राण प्ररूपणा

अभिनंदन वंदौ सदा, त्रेसठि प्रकृति खिपाय ।  
जगतनमतपद पाय, जिनधर्म कह्यो सुखदाय ॥

अथ प्राण प्ररूपणा कौ निरूपै हैं —

बाहिरपारोहिं जहा, तहेव अब्भंतरेहिं पारोहिं ।  
पारोहिं जेहि जीवा, पाणा ते होति सिद्धिठा ॥ १२६ ॥

बाह्यप्राणैर्यथा, तथैवाभ्यंतरैः प्राणैः ।  
प्राणंति यैर्जीवाः, प्राणास्ते भवन्ति निर्दिष्टाः ॥ १२९ ॥

टीका — जिनि अभ्यंतर भाव प्राणनि करि जीव हैं, ते प्राणंति कहिए जीव है; जीवन के व्यवहार योग्य हो है, कौनवत् ? जैसे बाह्य द्रव्य प्राणनि करि जीवजीव है, जातै यथा शब्द दृष्टातवाचक है; तातै जे आत्मा के भाव है, तेई प्राण हैं असा कह्या है । ऐसे कहने ही करि प्राण शब्द का अर्थ का जानने का समर्थपणा हो है, तातै तिस प्राण का लक्षण जुदा न कह्या है । तहा पुद्गल द्रव्य करि निपजे जे द्रव्य इन्द्रियादिक, तिनके प्रवर्तनरूप तो द्रव्य प्राण है । बहुरि तिनिका कारणभूत ज्ञानावरण अर वीर्यन्तराय के क्षयोपशमादिक तै प्रकट भए चैतन्य उपयोग के प्रवर्तनरूप भाव प्राण हैं ।

इहां प्रश्न — जो पर्याप्ति अर प्राण विषे भेद कहा ?

ताका समाधान — पंच इन्द्रियनि का आवरण का क्षयोपशम तै निपजे असे पाच इन्द्रिय प्राण है । बहुरि तिस क्षयोपशम तै भया जो पदार्थनि के ग्रहण का समर्थपना, ताकरि जन्म का प्रथम समय तै लगाइ अतर्मुहूर्त ऊपरि निपजै असी इन्द्रिय पर्याप्ति है । इहां कारण-कार्य का विशेष है ।

बहुरि मन सम्बन्धी ज्ञानावरण का क्षयोपशम का निकट तै प्रकट भई असी मनोवर्गणा करि निपज्या द्रव्य मन करि निपजी जो जीव की शक्ति, सो अनुभया पदार्थ को ग्रहण करि उपजी, सो अंतर्मुहूर्त मनःपर्याप्ति काल के अन्ति सपूर्णा भई,

अैसी मन.पर्याप्ति है । बहुरि अनुभया पदार्थ का ग्रहण करना अर अनुभया पदार्थ का ग्रहण करने का योग्यपना का होना, सो मन.प्राण है ।

बहुरि नोकर्मरूप शरीर का संचयरूप शक्ति की जो संपूर्णता, सो जीव के योग्य काल विषे प्राप्त भई जो भाषा वर्गणा, तिनिकौ विशेष परिणमन की करण-हारी, सो भाषा पर्याप्ति है ।

बहुरि स्वर नामा नामकर्म का उदय है सहकारी जाका, अैसी भाषा पर्याप्ति पूर्ण भए पीछे वचन का विशेषरूप उपयोगादिक का परिणमावना, तीहि स्वरूप वचन प्राण है ।

बहुरि कायवर्गणा का अवलबन करि निपजी जो आत्मा के प्रदेशनि का समु-च्चयरूप होने की शक्ति, सो कायबल प्राण है ।

बहुरि खल भाग, रस भागरूप परिणए नोकर्मरूप पुद्गलनि कौ हाड आदि स्थिररूप अर रुधिर आदि अस्थिररूप अवयव करि परिणमावने की शक्ति का संपूर्ण होना, सो जीव के शरीर पर्याप्ति है ।

बहुरि उस्वास-निस्वास के निकसने की शक्ति का निपजना, सो आनपान पर्याप्ति है । बहुरि सासोस्वास का परिणमन, सो सासोस्वास प्राण है । अैसे कारण-कार्यादि का विशेष करि पर्याप्ति अर प्राणनि विषे भेद जानना ।

आगे प्राण के भेदनि कौ कहै है —

पंचवि इंदियप्राणा, मणवचकायेसु तिणिण बलपाणा ।

आणापाणप्पाणा, आउगपाणेण हौति दह पाणा ॥१३०॥

पंचापि इंद्रियप्राणाः, मनोवचःकायेषु त्रयो बलप्राणाः ।

आनपानप्राणा, आयुष्कप्राणेन भवंति दश प्राणाः ॥१३०॥

टोका — पांच इंद्रिय प्राण है — १. स्पर्शन, २. रसन, ३. घ्राण, ४. चक्षु, ५. श्रोत्र । बहुरि तीन बलप्राण है — १. मनोबल, २. वचनबल ३. कायबल । बहुरि एक आनपान कहिए सासोस्वास प्राण है । बहुरि एक आयु प्राण है । अैसे प्राण दश है, अधिक नाही है ।

आगे तिनि द्रव्य-भाव प्राणनि का उपजने की सामग्री कौ कहै है -

**वीरियजुदमदिखउवसमुत्था णोइंदियेंदियेसु बला ।  
देहुदये कायाणा, वचीबला आउ आउदये ॥ १३१ ॥**

वीर्ययुतमतिक्षयोपशमोत्था नोइन्द्रियेन्द्रियेषु बलाः ।  
देहोदए कायानौ, वचोबल आयुः आयुरुदये ॥१३१॥

टीका - स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र करि निपजे पांच इन्द्रिय प्राण अर नो इन्द्रिय करि निपज्या एक मनोबल प्राण, ए छहो तो मतिज्ञानावरण अर वीर्यान्तराय, तिनके क्षयोपशम तै हो है । बहुरि शरीर नामा नामकर्म के उदय होतै काय-बल अर सासोस्वास प्राण हो है । बहुरि शरीर नामा नामकर्म का उदय होतै अर स्वर नामा कर्म का उदय होतै वचनबल प्राण हो है । बहुरि आयुकर्म का उदय होतै आयु प्राण हो है । अैसे प्राणनि के उपजने की सामग्री कही ।

आगे ए प्राण कौन-कौन के पाइए सो भेद कहै है -

**इंदियकायाऊरिण य, पुण्णापुण्णेषु पुण्णगे आणा ।  
बीइंदियादिपुण्णे, वचीमणो सण्णिपुण्णेव ॥१३२॥**

इन्द्रियकायायूषि च, पूर्णापूर्णेष्ु पूर्णके आनः ।  
द्वीन्द्रियादिपूर्णे, वचो मनः संज्ञिपूर्णे एव ॥ १३२ ॥

टीका - इन्द्रिय प्राण, कायबल प्राण, आयु प्राण - ए तो तीन प्राण पर्याप्ति वा अपर्याप्ति दोऊ दशा विषै समान पाइए है । बहुरि सासोस्वास प्राण पर्याप्ति दशा विषै ही पाइए, जातै ताका कारण उच्छ्वास निश्वास नामा नाम कर्म का उदय पर्याप्ति काल विषै सभवै है । बहुरि वचनबल प्राण बेइन्द्रियादिक पचेन्द्रिय पर्यंत जीवनि के पर्याप्ति दशा ही विषै पाइए है, जातै ताका कारणभूत स्वर नामा नामकर्म का उदय अन्यत्र न सभवै है । बहुरि मनबल प्राण सैनी पचेन्द्रिय के पर्याप्ति दशा विषै ही पाइए है, जातै ताका कारण वीर्यान्तराय अर मन आवरण का क्षयोपशम, सो अन्यत्र न सभवै है ।

आगे एकेन्द्रियादिक जीवनि के केते-केते प्राण पाइए, सो कहै है -

दश सण्णीरां प्राणा, सेसेगूणांतिमस्स वेऊणा ।  
पज्जत्तेसिदरेसु य, सत्त दुगे सेसगेगूणा ॥ १३३ ॥

दश संज्ञिनां प्राणाः शेषैकोनमंतिमस्य व्यूनाः ।

पर्याप्तिष्वितरेषु च, सप्त द्विके शेषैकोनाः ॥१३३॥

टीका — पहिलै कह्या जो प्राणनि के स्वामीनि का नियम, ताही करि अैसे भेद पाइए है, सो कहिए है । सैनी पचेद्री पर्याप्त के तौ दश प्राण सर्व ही पाइए । पीछे अवशेष असंजी आदि द्वीन्द्रिय पर्यन्त पर्याप्त जीवनि के एक-एक घाटि प्राण पाइए । तहा असैनी पचेन्द्रिय के मन विना नव प्राण पाइए । चौइन्द्रिय के मन अर कर्ण इन्द्रिय विना आठ प्राण पाइए , तेइन्द्रिय के मन, कर्ण, नेत्र इन्द्रिय विना सात प्राण पाइए । द्वीन्द्रिय के मन, कर्ण, नेत्र, नासिका विना छह प्राण पाइए । बहुरि अंतिम एकद्रिय विपै द्वीन्द्रिय के प्राणनि तै दोय घटावना, सो मन, कर्ण, नेत्र, नासिका अर रसना इन्द्रिय अर वचनवल, इनि विना एकेन्द्रिय के च्यारि ही प्राण पाइए हैं । अैसे ए प्राण पर्याप्त दशा की अपेक्षा कहे ।

अब इतर जो अपर्याप्त दशा, ताकी अपेक्षा कहिए है — सैनी वा असैनी पचेन्द्रिय के तौ सात-सात प्राण हैं । जाते पर्याप्तकाल विपै संभवै अैसे सासोस्वास, वचन वल, मनोवल ए तीन प्राण तहा न होइ । बहुरि चौइन्द्रिय के श्रोत्र विना छह पाइए, तेद्री के नेत्र विना पाच पाइए, वेद्री के नासिका विना च्यारि पाइए, एकेद्री के रसना विना तीन पाइए, अैसे प्राण पाइए है ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह  
ग्रथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा सस्कृत टीका के अनुसार सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा  
इस भाषाटीका विपै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनि विपै प्राण प्ररूपणा  
नामा चौथा अधिकार सपूर्ण भया ॥ ४ ॥



## पाँचवां अधिकार : संज्ञा प्ररूपणा

### मंगलाचरण

गुण अनंत पाए सकल, रज रहस्य अरि जीति ।  
दोषरहित जगस्वामि सो, सुमति नमौ जुत प्रीति ॥

अथ संज्ञा प्ररूपणा कहै है —

इह जाहि बाह्यावि य, जीवा पावन्ति दारुणं दुःखं ।  
सेवन्तावि य उभये, ताश्चो चत्तारि सण्णाओ ॥ १३४ ॥

इह याभिर्बाधिता अपि च, जीवाः प्राप्नुवन्ति दारुणं दुःखं ।  
सेवमाना अपि च, उभयस्मिन् ताश्चतस्रः संज्ञाः ॥ १३४ ॥

टीका — आहार, भय, मैथुन, परिग्रह इनके निमित्त तै जो वांछा होइ, ते च्यारि संज्ञा कहिए । सो जिनि संज्ञानि करि बाधित, पीडित हुए जीव ससार विषे विषयनि कौ सेवते भी इहलोक अर परलोक विषे तिनि विषयनि की प्राप्ति वा अप्राप्ति होतै दारुण भयानक महा दुःख कौ पावै है, ते च्यारि संज्ञा जाननी। वाछा का नाम संज्ञा है । वांछा है, सो सर्व दुःख का कारण है ।

आगे आहार संज्ञा उपजने के बाह्य, अभ्यंतर कारण कहै है —

आहारदंसरणेण य, तस्सुवजोगेण ओमकोठाए ।  
सादिदरुदीरणेण, हवदि हु आहारसण्णा हु ॥ १३५ ॥

आहारदर्शनेन च, तस्योपयोगेन अवमकोष्ठतया ।  
सात्तेतरोदीरणया, भवति हि आहारसंज्ञा हि ॥ १३५ ॥

टीका — विणिष्ट अन्नादिक च्यारि प्रकार आहार का देखना, वहरि आहार का यादि करना, कथा सुनना इत्यादिक उपयोग का होना, वहरि कोठा जो उदर, ताका खाली होनी क्षुधा होनी ए तौ बाह्य कारण है । वहरि असाता वेदनीय कर्म का तीव्र उदय होना वा उदीरणा होनी अतरंग कारण है । इन कारणनि तै आहार

संज्ञा हो है । आहार कहिए अन्नादिक, तीहिविपै संज्ञा कहिए वांछा, सो आहार संज्ञा जाननी ।

आगे भय संज्ञा उपजने के कारण कहै है -

अइभीमदंसरणेण य, तस्सुवजोगेण ओमसत्तीए ।  
भयकम्मदीरणेण, भयसंज्ञा जायदे चटुहिं ॥१३६॥

अतिभीमदर्शनेन, च, तस्योपयोगेन अवमसत्त्वेन ।

भयकर्मोदीरणया, भयसंज्ञा जायते चतुर्भिः ॥१३६॥

टोका - अतिभयकारी व्याघ्र आदि वा क्रूर मृगादिक वा भूतादिक का देखना वा उनकी कथादिक का सुनना, उनको याद करना इत्यादिक उपयोग का होना, वहुरि अपनी हीन शक्ति का होना ए तौ बाह्य कारण हैं । वहुरि भय नामा नोकपाय-रूप मोह कर्म, ताका तीव्र उदय होना, यहु अंतरंग कारण है । इनि कारणनि करि भय संज्ञा हो है । भय करि भई जो भागि जाना, छिपि जाना इत्यादिक रूप वांछा, सो भय संज्ञा कहिए ।

आगे मैथुन संज्ञा उपजने के कारण कहै हैं -

पणिदरसभोयणेण य, तस्सुवजोगे कुसीलसेवाए ।  
वेदस्सुदीरणेण, मेहुसंज्ञा हवदि एवं ॥ १३७ ॥

प्रणोतरसभोजनेन च, तस्योपयोगे कुशीलसेवया ।

वेदस्योदीरणया, मैथुनसंज्ञा भवति एवं ॥ १३७ ॥

टोका - वृष्य जो कामोत्पादक गरिष्ठ भोजन, ताका खाना अर काम कथा वा सुनना अर भोगे हवे काम विषयादिक का याद करना इत्यादिकरूप उपयोग होना, वहुरि कुशीलवान कामी पुरुषनि करि सहित संगति करनी, गोप्ती करनी ए तौ बाह्य कारण हैं । वहुरि स्त्री, पुंष्य, नपुंसक वेदनि विषे किसी ही वेदरूप नोकपाय की उदी-रणा मो अंतरंग कारण हैं । इनि कारणनि तै मैथुन संज्ञा हो है । मैथुन जो कामसेवन-रूप स्त्री-पुंष्य वा युगल मन्वन्थी कर्म, तीहिविपै वांछा, मैथुनसंज्ञा जाननी ।

आगे परिग्रह संज्ञा उपजने के कारण कहै हैं -

उपकरणदंसणेण य, तस्सुवजोगेण मुच्छिदाए य ।  
लोहस्सुदीरणाए परिग्रहे जायदे सण्णा ॥ १३८ ॥

उपकरणदर्शनेन च, तस्योपयोगेन मूर्छिताये च ।  
लोभस्योदीरणया परिग्रहे जायते संज्ञा ॥ १३८ ॥

टीका — धन-धान्यादिक बाह्य परिग्रहरूप उपकरण सामग्री का देखना और तीहि धनादिक की कथा का सुनना, यादि करना इत्यादिक उपयोग होना, मूर्छित जो लोभी, ताकै परिग्रह उपजावने विषै आसक्तता, ताका इस जीव सहित सम्बन्धी होना इत्यादिक बाह्य कारण है । बहुरि लोभ कषाय की उदीरणा, सो अंतरंग कारण है । इनि कारणनि करि परिग्रह संज्ञा हो है । परिग्रह जो धन-धान्यादिक, तिनिके उपजावने आदिरूप वांछा, सो परिग्रह संज्ञा जाननी ।

आगे ए संज्ञा कौनके पाइए, सो भेद कहै है —

एट्ठपमाए पढमा, सण्णा एहि तत्थ कारणाभावा ।  
सेसा कम्मत्थित्तेणुवयारेणत्थि णहि कज्जे ॥ १३९ ॥

नष्टप्रमादे प्रथमा, संज्ञा नहि तत्र कारणाभावात् ।  
शेषाः कर्मास्तित्वेन उपचारेण संति नहि कार्ये ॥ १३९ ॥

टीका — नष्ट भये है प्रमाद जिनिके, ऐसे जे अप्रमत्तादि गुणस्थानवर्ती जीव, तिनिके प्रथम आहार संज्ञा नाही है । जातै आहार संज्ञा का कारणभूत जो असाता वेदनीय की उदीरणा, ताकी व्युच्छित्ति प्रमत्त गुणस्थान ही विषै भई है; तातै कारण के अभाव तै कार्य का भी अभाव है । ऐसे प्रमाद रहित जीवनि कै पहिली संज्ञा नाही है । बहुरि इनि कै जो अवशेष तीन संज्ञा है, सो भी उपचार मात्र है; जातै उन संज्ञानि का कारणभूत जे कर्म, तिनिका उदय पाइए है; तीहि अपेक्षा है । बहुरि ते भय, मैथुन, परिग्रह संज्ञा अप्रमादी जीवनि के कार्यरूप नाही है ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका  
नामा संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषा टीका विषै जीवकाण्ड  
विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै संज्ञा प्ररूपणा नाम पंचम  
अधिकार सम्पूर्ण भया ॥ ५ ॥

## छठवां अधिकार : गति प्ररूपणा

पद्मप्रभ जिनकौं भजौं, जीति घाति सब कर्म ।  
गुण समूह फुनि पाय जिनि, प्रगट कियो हितधर्म ॥

आगे अरहंतदेव कौं नमस्काररूप मंगलपूर्वक मार्गणा महा अधिकार प्ररूपण की प्रतिज्ञा करै हैं -

धम्मगुणमग्गणाहयमोहारिबलं जिणं एमंसित्ता ।  
मग्गणमहाहियारं, विविहहियारं भणिस्सामो ॥१४०॥

धर्मगुणमार्गणाहतमोहारिबलं जिनं नमस्कृत्वा ।  
मार्गणमहाधिकारं, विविधाधिकारं भणिष्यामः ॥१४०॥

टीका - हम जो ग्रंथकर्ता, ते नानाप्रकार का गति, इंद्रियादिक अधिकार संयुक्त जो मार्गणा का महा अधिकार ताहि कहेंगे, वैसी आचार्य प्रतिज्ञा करी । कहा करिके ? जिन जो अरहन्त भट्टारक, तिसहिं नमस्कार करिकैं । कैसा है जिन भगवान ? रत्नत्रय स्वरूप धर्म, सोही भया वनुप, वहुरि ताका उपकारी जे जाना-दिक धर्म, ते ही भए गुण कहिये चिल्ला, वहुरि ताके आश्रयभूत जे चौदह मार्गणा, तेही भए मार्गण कहिए वारण, तिनिकरि हत्या है मोहनीय कर्मरूप अरि कहिये वैरी का बल जानै, ऐसा जिन-देव है ।

आगे मार्गणा शब्द की निरुक्ति ने लिया लक्षण कहै हैं -

जाहि व जासु व जीवा, मग्गिज्जंते जहा तहा दिट्ठा ।  
ताओ चोदस जाणे, सुयणाणे मग्गणा होति ॥१४१॥१

याभिर्वा यामु वा, जीवा मृग्यंते यथा तथा दृष्टाः ।  
ताश्चतुर्दश जानीहि, श्रुतज्ञाने मार्गणा भवति ॥१४१॥

१. मग्गणा - शब्दार्थ पुस्तक १, पृष्ठ १३३, शाला ८५.

टीका — जैसे श्रुतज्ञान विषे उपदेश्या तैसे ही जीव नाम्ना पदार्थ, जिनकरि वा जिनिविषे जानिए, ते चौदह मार्गणा है । पूर्वे तौ सामान्यता करि गुणस्थान जीव-समास, पर्याप्ति, प्राण, सज्ञा इनिकरि त्रिलोक के मध्यवर्ती समस्त जीव लक्षण करि वा भेद करि विचारे ।

बहुरि अब विशेषरूप गति-इन्द्रियादि मार्गणानि करि तिन ही कौ विचारै है, जैसे हे शिष्य, तू जानि । गति आदि जे मार्गणा जब एक जीव कें नारकादि पर्यायनि की विवक्षा लीजिए, तब तौ जिनि मार्गणानि करि जीव जानिए जैसे तृतीया विभक्ति करि कहिए । बहुरि जब एक द्रव्य प्रति पर्यायनि के अधिकरण की विवक्षा 'इनि विषे जीव पाइए है' असी लीजिए, तब जिनि मार्गणानि विषे जीव जानिए जैसे सप्तमी विभक्ति करि कहिए । जातै विवक्षा के वश तें कर्ता, कर्म इत्यादि कारकनि की प्रवृत्ति है ऐसा न्याय का सद्भाव है ।

आगे तिन चौदह मार्गणानि के नाम कहै है —

गइइंदियेसु काये, जोगे वेदे कसायणाणेय ।

संजमदंसणलेस्सा-भविया-सम्मत्तसण्णि-आहारे ॥१४२॥

गतीन्द्रियेषु काये, योगे वेदे कषायज्ञाने च ।

संयमदर्शनलेश्याभव्यतासम्यक्त्वसंज्ञाहारे ॥ १४२ ॥

टीका — १. गति, २. इन्द्रिय, ३. काय, ४. योग, ५. वेद, ६. कषाय, ७. ज्ञान, ८. संयम, ९. दर्शन, १०. लेश्या, ११. भव्य, १२. सम्यक्त्व, १३. सज्ञी, १४. आहार जैसे ए गति आदि पद है । ते तृतीया विभक्ति वा सप्तमी विभक्ति का अंत लीए है । तातै गति करि वा गति विषे इत्यादिक जैसे व्याख्यान करने । सो इनिकरि वा इनिविषे जीव मार्ग्यन्ते कहिए जानिये, ते चौदह मार्गणा जैसे अनुक्रम करि नाम है, तैसे कहैगे ।

आगे तिनविषे आठ सांतर मार्गणा है, तिनिका स्वरूप, संख्या, विधान निरूपण के अर्थ गाथा तीन कहै है —

उवसमसुहमाहारे, वेगुव्वियमिस्स णरअयज्जत्ते ।

सासणसम्मे मिस्से, सांतरगा मग्गणा अट्ठ ॥ १४३ ॥

सप्तदिणाष्टमासा, वासपुधत्तं च बारसमुहुता ।  
पल्लासंखं तिण्हं, वरमवरं एगसमयो दु ॥१४४॥

उपशमसूक्ष्माहारे, वैगूर्विकमिश्रनरापर्याप्ते ।  
सासनसम्यक्त्वे मिश्रे, सांतरका मार्गणा अष्ट ॥१४३॥  
सप्तदिनानि षण्मासा, वर्षपृथक्त्वं च द्वादश मुहूर्ताः ।  
पल्यासंख्यं त्रयाणां, वरमवरमेकसमयस्तु ॥ १४४ ॥

टीका - नाना जीवनि की अपेक्षा विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान नै छोडि, अन्य कोई गुणस्थान वा मार्गणास्थान में प्राप्त होइ, बहुरि उस ही विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान कौ यावत् काल प्राप्त न होइ, तिसकाल का नाम अंतर है ।

सो उपशम सम्यग्दृष्टी जीवनि का लोक विषे नाना जीव अपेक्षा अंतर सात दिन है । तीन लोक विषे कोऊ जीव उपशम सम्यक्त्वी न होइ तो उत्कृष्टपत्ते सात ताई न होइ, पीछे कोऊ होय ही होय । ऐसे ही सब का अंतर जानना ।

बहुरि सूक्ष्म सांपराय संयमी, तिनिका उत्कृष्ट अंतर छह महीना है । पीछे कोऊ होय ही होय ।

बहुरि आहारक अर आहारकमिश्र काययोगवाले, तिनिका उत्कृष्ट अंतर वर्ष पृथक्त्व का है । तीन तै ऊपर अर नव तै नीचे पृथक्त्व संज्ञा है, तातै यहां तीन वर्ष के ऊपर अर नव वर्ष के नीचे अंतर जानना । पीछे कोई होय ही होय ।

बहुरि वैक्रियिकमिश्र काययोगवाले का उत्कृष्ट अंतर बारह मुहूर्त का है, पीछे कोऊ होय ही होय ।

बहुरि लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य अर सासादन गुणस्थानवर्ती जीव अर मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव, इनि तीनों का अंतर एक-एक का पल्य के असंख्यातवे भाग मात्र जानना, पीछे कोई होय ही होय । अैसे ए सांतर मार्गणा आठ है । इनि सबनि का अपन्य अंतर एक समय जानना ।

पढमुवसमसहिदाए, विरदाविरदीए चोद्दसा दिवसा ।  
विरदीए पण्णरसा, विरहिदकालो दु बोधव्वो ॥१४५॥

प्रथमोपशमसहितायाः, विरताविरतेश्चतुर्दश दिवसाः ।

विरतेः पंचदश, विरहितकालस्तु बोद्धव्यः ॥ १४५ ॥

टीका — विरह काल कहिए उत्कृष्ट अंतर, सो प्रथमोपशम सम्यक्त्व करि संयुक्त जे विरताविरत पंचम गुणस्थानवर्ती जीव, तिनिका चौदह दिन का जानना । बहुरि तिस प्रथमोपशम सम्यक्त्व संयुक्त षष्ठमादि गुणस्थानवर्ती, तिनिका पंद्रह दिन जानना । वा दूसरा सिद्धान्त की अपेक्षा करि चौबीस दिन जानना । अैसे नाना जीव अपेक्षा अंतर कह्या । बहुरि इनि मार्गणानि का एक जीव अपेक्षा अन्तर अन्य ग्रन्थ के अनुसारि जानना ।

यहा प्रसंग पाइ कार्यकारी जानि, तत्त्वार्थसूत्र की टीका के अनुसारि काल अन्तर का कथन करिए है ।

तहां प्रथम काल का वर्णन दोय प्रकार — नाना जीव अपेक्षा अर एक जीव अपेक्षा ।

तहां विवक्षित गुणस्थाननि का वा मार्गणास्थाननि विषै संभवते गुणस्थाननि का सर्व जीवनि विषै कोई जीव कै जेता काल सद्भाव पाइए, सो नाना जीव अपेक्षा काल जानाना । अर तिनही का विवक्षित एक जीव कै जेते काल सद्भाव पाइए, सो एक जीव अपेक्षा काल जानना ।

तिनिविषै प्रथम नाना जीव अपेक्षा काल कहिए है, सो सामान्य-विशेष करि दोय प्रकार । तहां गुणस्थाननि विषै कहिए सो सामान्य अर मार्गणा विषै कहिए गो विशेष जानना ।

तहां सामान्य करि मिथ्यादृष्टि, असयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, नयोग केवलनि का सर्व काल है । इनिका कवहू अभाव होता नाही । बहुरि सामादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पत्य का असंख्यातवा भाग । बहुरि मिश्र का जघन्य अन्तर्मुहर्त, उत्कृष्ट पत्य का असंख्यातवा भाग । बहुरि च्यारो उपशम श्रेणी बान्दो का जघन्य एक समय उत्कृष्ट अन्तर्मुहर्त । उहां जघन्य एक समय मरणा अपेक्षा कह्या है । बहुरि च्यारों क्षणकश्रेणीवाले अर अयोग केवलीनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अन्तर्मुहर्त माय काल है ।

अब विषे करि कहिए है । तहा गति मार्गणा विषे सातो पृथ्वीनि के नार-  
कीनि विषे मिथ्यादृष्ट्यादि च्यारि गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । तिर्यञ्च  
गति विषे मिथ्यादृष्ट्यादि पंच गुणस्थाननि विषे सामान्यवत् काल है । मनुष्यगति  
विषे सासादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अर मिश्र का जघन्य वा  
उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त अर अन्य सर्व गुणस्थाननि विषे सामान्यवत् काल है । देवगति विषे  
मिथ्यादृष्ट्यादि च्यारि गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि इंद्रिय मार्गणा अर काय मार्गणा विषे इंद्रिय-काय अपेक्षा सर्वकाल है ।  
गुणस्थान अपेक्षा एकेद्री, विकलेद्री, अर पंच स्थावरनि विषे मिथ्यादृष्टि का सर्वकाल  
है । अर पंचेन्द्रिय वा त्रस विषे सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि योग मार्गणा विषे तीनों योगनि मिथ्यादृष्ट्यादि सयोगी पर्यन्तनि का  
अर अयोगी का सामान्यवत् काल है । विषे इतना — मिश्र का जघन्य काल एक  
समय ही है । अर क्षपकनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अन्तर्मुहूर्त मात्र काल है ।

बहुरि वेद मार्गणा विषे तीन वेदनि विषे अर वेदरहित विषे मिथ्यादृष्ट्यादि  
अनिवृत्तिकरण पर्यन्तनि का वा (ऊपरि) सामान्यवत् काल है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषे च्यारि कषायनि विषे मिथ्यादृष्ट्यादि अप्रमत्त  
पर्यन्तनि का मनोयोगीवत् अर दोय उपशमक वा क्षपक अर केवल लोभयुत सूक्ष्मसांप-  
गय अर अकषाय, इनिका सामान्यवत् काल है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषे तीन कुज्ञान, पांच मुज्ञाननि विषे अपने-अपने गुण-  
स्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि संयम मार्गणा विषे सात भेदनि विषे अपने-अपने गुणस्थाननि का  
सामान्यवत् काल है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषे च्यारि भेदनि विषे अपने-अपने स्थाननि का  
सामान्यवत् काल है ।

बहुरि नेत्र्या रहितनि विषे अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषे दोऊ भेदनि विषे अपने-अपने गुणस्थाननि का  
सामान्यवत् काल है ।



बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छह भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना — औपशमिक सम्यक्त्व विषै असंयत, देशसंयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट पत्य का असंख्यातवां भाग अर प्रमत्त, अप्रमत्त का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है ।

बहुरि संज्ञी मार्गणा विषै दोऊ भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि आहार मार्गणा विषै आहारक विषै मिथ्यादृष्ट्यादि सयोगी पर्यन्तनि का सामान्यवत् काल है । अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि का सर्वकाल, सासादन असंयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग, सयोगी का जघन्य तीन समय, उत्कृष्ट संख्यात समय, अयोगी का सामान्यवत् काल है ।

अब एक जीव अपेक्षा काल कहिए है, तहां प्रथम सामान्य करि मिथ्यादृष्टि का काल विषै तीन भंग — अनादि अनंत, अनादि सांत, सादि सांत । तहां सादि सांत काल जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्धपुद्गल परिवर्तन मात्र है । किंचित हीन का नाम देशोन जानना । बहुरि सासादन का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह आवली; मिश्र का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त; बहुरि असंयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तेतीस सागर, संयतासंयत का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व; प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त; च्यारौ उपशम श्रेणीवालों का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त; च्यारौ क्षपक श्रेणीवाले वा अयोगिनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, सयोगी का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व काल है ।

अब विशेष करि कहिए है — गति मार्गणा विषै सातौ पृथ्वीनि के नारकीनि विषै मिथ्यादृष्टि का काल जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट क्रम तैं एक, तीन, सात, दश, सतरह, बाईस, तेतीस सागर । सासादन मिश्र का सामान्यवत्, असंयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन; मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट कालप्रमाण काल है ।

तिर्यचगति विषै — मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र अनंत काल है । सासादन, मिश्र, संयतासंयत का सामान्यवत्, तहां असंयत का जघन्य अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तीन पत्य काल है ।

मनुष्यगति विषै - मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोटि पूर्व अधिक तीन पल्य । सासादन का, मिश्र का सामान्यवत् । असंयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तीन पल्य, अवशेषनि का सामान्यवत् काल है ।

देवगति विषै - मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट एकतीस सागर; सासादन, मिश्र का सामान्यवत्; असंयत का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तेतीस सागर काल हैं ।

बहुरि इंद्रिय मार्गणा विषै एकेन्द्रिय का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र है । बहुरि विकलत्रय का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट संख्यात हजार वर्ष । पचेन्द्रिय विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक हजार सागर । अवशेषनि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि काय मार्गणा विषै पृथ्वी, अप, तेज, वायु का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असंख्यात लोक प्रमाण काल है । वनस्पतिकाय का एकेन्द्रियवत् काल है ।

त्रसकाय विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर; अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । इहां छह के ऊपरि नव के नीचे, ताका नाम पृथक्त्व जानना । अर उस्वास का अठारहवां भाग मात्र क्षुद्रभव जानना ।

बहुरि योग मार्गणा विषै वचन, मन योग विषै मिथ्यादृष्टि, असंयत, संयता-मयत, प्रमत्त, अप्रमत्त च्यारों उपजमक, क्षपक, सयोगिनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त, सासादन-मिश्र का सामान्यवत् काल है । काय योग विषै मिथ्या-दृष्टि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन, अवशेषनि का मनोयोगवत् काल है । अयोगि विषै सामान्यवत् काल है ।

वेद मार्गणा विषै तीनो वेदनि विषै मिथ्यादृष्टि आदि अनिवृत्तिकरण पर्यंत अर अवेदीनि विषै सामान्यवत् काल है । विज्ञेय इतना - जो स्त्री वेद विषै मिथ्या-दृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य प्रमाण अर असंयत का उत्कृष्ट काल देशोन पचावन पल्य है । बहुरि पुरुष वेद विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल पृथक्त्व सौ पल्य प्रमाण है । अर नपुंसक वेद विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल असंख्यात पुद्-गल परिवर्तन मात्र अर असंयत का उत्कृष्ट काल देशोन तेतीस सागर काल है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै च्यारो कषायनि विषै मिथ्यादृष्ट्यादि अप्रमत्त पर्यंत का मनोयोगवत् अर दोऊ उपशमक वा क्षपक वा सूक्ष्म लोभ अर अकषाय इनिका सामान्यवत् काल है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषै तीन कुज्ञाननि विषै वा पाच सुज्ञाननि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना — विभग विषै मिथ्यादृष्टि का काल देशोन तेतीस सागर है ।

बहुरि संयम मार्गणा विषै सात भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै च्यारि भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना — चक्षुदर्शन विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल दोय हजार सागर है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विषै छह भेदनि विषै वा अलेश्यानि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना — कृष्ण, नील, कापोत विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल क्रम तै साधिक तेतीस, सतरह, सात सागर अर असंयत का उत्कृष्ट काल क्रम तै देशोन तेतीस, सतरह, सात सागर है । अर पीत-पद्म विषै मिथ्यादृष्टि वा असंयत का उत्कृष्ट काल क्रम तै दोय, अठारह सागर है । संयतासंयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है । बहुरि शुक्ल लेश्या विषै मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट काल साधिक इकतीस सागर, संयतासंयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै भव्य विषै मिथ्यादृष्टि का अनादि सांत वा सादि सात काल है । तहा सादि सांत जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन मात्र है । अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । अभव्य विषै अनादि अनत काल है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छहौ भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् काल है । विशेष इतना — उपशम सम्यक्त्व विषै असयत, सयतासयत का जघन्य वा उत्कृष्ट काल अंतर्मुहूर्त मात्र है ।

बहुरि संज्ञी मार्गणा विषै संज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि आदिअनिवृत्ति करण पर्यं तनि का पुरुष वेदवत्, अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । असंज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि वा

जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन काल है । दोऊ व्यपदेशरहितनि विषै सामान्यवत् काल है ।

बहुरि आहार मार्गणा विषै आहारक विषै मिथ्यादृष्टि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात कल्पकाल प्रमाण जो अगुल का असंख्यातवां भाग, तीहि प्रमाण काल है । अवशेषनि का सामान्यवत् काल है । अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि जघन्य एक समय, उत्कृष्ट तीन समय । सासादन, असयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट दोय समय; सयोगी का जघन्य वा उत्कृष्ट तीन समय, अयोगी का सामान्यवत् काल है ।

इहा मार्गणास्थाननि विषै काल कह्या, तहां अैसा जानना — विवक्षित मार्गणा के भेद का काल विषै विवक्षित, गुणस्थान का सद्भाव जेते काल पाइए, ताका वर्णन हे । मार्गणा के भेद का वा तिस विषै गुणस्थान का पलटना भए, तिस काल का अभाव हो है ।

अब अंतर निरूपण करिए है — सो दोय प्रकार, नाना जीव अपेक्षा अर एक जीव अपेक्षा । तहा विवक्षित गुणस्थाननि विषै वा गुणस्थान अपेक्षा लीए मार्गणास्थान विषै कोई ही जीव जेते काल न पाइए, सो नाना जीव अपेक्षा अंतर जानना । बहुरि विवक्षित स्थान विषै जो जीव वतें था, सोई जीव अन्य स्थान को प्राप्त होई करि बहुरि निम ही स्थान को प्राप्त होई, तहां बीच विषै जेता काल का प्रमाण, सो एक जीव अपेक्षा अंतर जानना ।

तहा प्रथम नाना जीव अपेक्षा कहिए है, सो सामान्य विशेष करि दोय प्रकार । नाना सामान्य करि मिथ्यादृष्टि, असयत, देशसयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, सयोगीनि का अंतर नाहीं है । सासादन का वा मिथ्य का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पत्य का असंख्यातवां भाग मात्र अंतर है । च्यारि उपशमकनि का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व का अंतर है । च्यारि क्षपकनि का वा अयोगी का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट छह भाग अंतर है ।

अरि विशेष करि गति मार्गणा विषै नारकी, तिर्यच, मनुष्य, देवनि विषै अंतर है । मिथ्यादृष्ट्यादि च्यारि.पांच, चांदह, च्यारि गुणस्थाननि विषै सामान्यवत्

बहुरि इन्द्रिय मार्गणा विषै एकेन्द्रिय विकलेन्द्रिय का अंतर नाही है । पचेन्द्रिय विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि काय मार्गणा विषै पंच स्थावरनि का अंतर नाही है । तस विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि योग मार्गणा विषै तीनो योगनि विषै आदि के तेरह गुणस्थाननि का वा अयोगी का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि वेद मार्गणा विषै तीनो वेदनि विषै आदि के नव गुणस्थाननि वा अवेदीनि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना दोऊ क्षपकनि का उत्कृष्ट अंतर स्त्री-नपुंसक वेद विषै पृथक्त्व वर्ष मात्र अरु पुरुष वेद विषै साधिक वर्ष प्रमाण है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विष च्यारि कषायनि विषै वा अकषायनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — दोय क्षपकनि का उत्कृष्ट अंतर साधिक वर्षमात्र है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषै तीन कुज्ञान, पांच सुज्ञाननि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — अवधि, मन-पर्ययज्ञान विषै क्षपकनि का उत्कृष्ट अंतर साधिक वर्षमात्र है ।

बहुरि संयम मार्गणा विषै सात भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषै च्यारि भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — अवधि दर्शन विषै क्षपकनि का अंतर साधिक वर्षमात्र है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विषै छहो भेदनि विषै वा अलेश्या विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि भव्य मार्गणा विषै दोय भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै छह भेदनि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — उपशम सम्यक्त्व विषै असयतादिक का जघन्य

अंतर एक समय है । अर उत्कृष्ट अंतर असंयत का सात दिन-राति, देग संयत का चौदह दिन-राति, प्रमत्त-अप्रमत्त का पद्रह दिन-राति अंतर है ।

बहुरि संजी मार्गणा विपे दोय भेदनि विपे वा दोळ व्यपदेशगहितनि विपे अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि आहार मार्गणा विपे दोळ भेदनि विपे अपने-अपने गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — अनाहारक विपे असंयत का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व मास ।

सयोगी का जघन्य एक समय, उत्कृष्ट पृथक्त्व वर्षमात्र अंतर है ।

अब एक जीव अपेक्षा अंतर कहिए है,

सो सामान्य-विशेष करि दोय प्रकार । तहाँ सामान्य करि मिथ्यादृष्टि का अंतर जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन दूरां छयासठि सागर । बहुरि सामान्य का जघन्य पल्य का असंख्यातवे भाग, उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन । बहुरि मिथ्र, असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त, चारि उपशमक, इनिका जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन अर्ध पुद्गल परिवर्तन । बहुरि चारि क्षपक, सयोगी, अयोगी इनिका अंतर नाही है ।

बहुरि विशेष करि गति मार्गणा विपे नारक विपे मिथ्यादृष्टि आदि असंयत पर्यतनि का जघन्य अंतर सामान्यवत् । उत्कृष्ट अंतर सात पृथ्वीनि विपे क्रम तैं एक, तीन, सात, द्वा, सतरह, वाईस, तेत्तीस देशोन सागर जानना ।

बहुरि तिर्यञ्चनि विपे मिथ्यादृष्ट्यादि देशसंयत पर्यतनि का सामान्यवत् अंतर है । विशेष इतना — मिथ्यादृष्टि का उत्कृष्ट अंतर देशोन तीन पल्य है ।

बहुरि मनुष्य गति विपे मिथ्यादृष्ट्यादि चारि उपशमक पर्यत जघन्य अंतर सामान्यवत् । उत्कृष्ट अंतर मिथ्यादृष्टि का तिर्यञ्चवत् । सासादन, मिथ्र, असंयत का पृथक्त्व कोडि पूर्व अत्रिक तीन पल्य, देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त । चारि उपशमक का पृथक्त्व कोडि पूर्व प्रमाण है । अर क्षपक, सयोगी, अयोगीनि का सामान्यवत् है ।

बहुरि देव विपे मिथ्यादृष्ट्यादि असंयत पर्यतनि का जघन्य अंतर सामान्यवत् । उत्कृष्ट अंतर देशोन इकतीस सागर है ।

बहुरि इंद्रिय मार्गणा विषै एकेन्द्रिय का जघन्य अंतर क्षुद्रभव, उत्कृष्ट अंतर पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर । विकलेन्द्रिय का जघन्य अंतर क्षुद्रभव, उत्कृष्ट अंतर असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र है । यह अंतर एकेन्द्रियादिक पर्यायनि का कह्या है, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि ही है, ताका तहा अंतर है नाही । पचेन्द्रिय विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य अंतर सामान्यवत्, उत्कृष्ट अंतर पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक हजार सागर है । अवशेषनि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि काय मार्गणा विषै पृथ्वी, अप, तेज, वायुकाय का जघन्य क्षुद्रभव उत्कृष्ट असंख्यात पुद्गल परिवर्तन अर वनस्पति का जघन्य क्षुद्रभव, उत्कृष्ट असंख्यात लोक मात्र अंतर है । यह अंतर पृथ्वीकायिकादि का कह्या है, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि है । ताका तहा अंतर है नाही ।

त्रसकायिक विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट पृथक्त्व कोडि पूर्व अधिक दोय हजार सागर अंतर है । अवशेषनि का सामान्यवत् अंतर है ।

बहुरि योग मार्गणा विषै मन, वचन, काय योगनि विषै संभवते गुणस्थाननि का वा अयोगी का अंतर नाही, जातै एक ही योग विषै गुणस्थानांतर को प्राप्त होइ करि विवक्षित गुणस्थान विषै प्राप्त होता नाही ।

बहुरि वेद मार्गणा विषै स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेदनि विषै मिथ्यादृष्टि आदि दोऊ उपशमक पर्यंत जघन्य अंतर सामान्यवत् है । उत्कृष्ट अंतर स्त्रीवेद विषै मिथ्यादृष्टि का देशोन पंचावन पत्य, औरनि का पृथक्त्व सौ पत्य पुरुषवेद विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, औरनि का पृथक्त्व सौ सागर । नपुंसकवेद विषै मिथ्यादृष्टि का तेतीस सागर देशोन, औरनि का सामान्यवत् अंतर है । दोय क्षपकनि का सामान्यवत् अंतर है । बहुरि वेदरहितनि विषै उपशम अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्म सापराय का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर अतर्मुहूर्त है, औरनि का अंतर नाही है ।

बहुरि कषाय मार्गणा विषै क्रोध, मान, माया, लोभ विषै मिथ्यादृष्ट्यादि उपशम अनिवृत्तिकरण पर्यंत का मनोयोगवत्, दोय क्षपकनि का अर केवल लोभ विषै सूक्ष्मसापराय के उपशम वा क्षपक का अर अकषाय विषै उपशातकषायादि का अंतर नाही है ।

बहुरि ज्ञान मार्गणा विषे कुमति, कुश्रुत, विभग विपे मिथ्यादृष्टि सासादन का अतर नाही । मति, श्रुत, अवधि विषे असयत का अतर जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व । देश संयत का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक छ्यासठि सागर । प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक तेतीस सागर । च्यारि उपशमकनि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट साधिक छ्यासठि सागर । च्यारि क्षपकनि का सामान्यवत् अंतर है । बहुरि मन पर्यय विषे प्रमत्तादि क्षीण कषाय पर्यतनि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना — प्रमत्त-अप्रमत्त का अतर्मुहूर्त, च्यारि उपशमकनि का देशोन कोडि पूर्व प्रमाण उत्कृष्ट अंतर है । बहुरि केवलज्ञान विषे सयोगी, अयोगी का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि संयम मार्गणा विषे सामायिक, छेदोपस्थापन विपे प्रमत्त-अप्रमत्त का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर अतर्मुहूर्त है । दोळ उपशमक का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन कोडि पूर्व अर दोळ क्षपकनि का सामान्यवत् अंतर है । परिहारविशुद्धि विषे प्रमत्त-अप्रमत्त विषे जघन्य वा उत्कृष्ट अतर अतर्मुहूर्त है । सूक्ष्मसापराय विपे उपशमक वा क्षपक का अर यथाख्यात विषे उपशांत कषायादिक का अर सयतासंयत विषे देश संयत का अंतर नाही है । असयम विपे मिथ्यादृष्टि का जघन्य अतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट देशोन तेतीस सागर । सासादन, मिश्र, असयत का सामान्यवत् अतर है ।

बहुरि दर्शन मार्गणा विषे चक्षु, अचक्षुदर्शन विपे मिथ्यादृष्ट्यादि क्षीणकषाय पर्यन्तनि का सामान्यवत् अतर है । विशेष इतना — चक्षुदर्शन विपे सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यतनि का उत्कृष्ट अतर देशोन दोय हजार सागर है । अवधिदर्शन विषे अवधिज्ञानवत् अतर है । केवलदर्शन विपे सयोगी, अयोगी का अतर नाही है ।

बहुरि लेश्या मार्गणा विपे कृष्ण, नील, कापोत विपे मिथ्यादृष्ट्यादि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत् है । उत्कृष्ट अतर क्रम तै देशोन तेतीस, सतरह, अर सात सागर प्रमाण है । पीत, पद्म विषे मिथ्यादृष्ट्यादि असयत पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत्, उत्कृष्ट अतर क्रम तै साविक दोय अर अठारह सागर है । देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त का अतर नाही है । शुक्ल लेश्या विषे मिथ्यादृष्ट्यादि अनयन पर्यतनि का जघन्य अतर सामान्यवत् है, उत्कृष्ट अतर देशोन इकतीस सागर है । देशसंयत, प्रमत्त का अतर नाही है । अप्रमत्त, तीन उपशमक का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर अतर्मुहूर्त है । उपशांत कषाय, च्यारि क्षपक, सयोगीनि का अंतर नाही है । अनेग्या विपे अयोगीनि का अतर नाही है ।



बहुरि भव्य मार्गणा विषै भव्य विषै सर्व गुणस्थाननि का सामान्यवत् अंतर है । अभव्य विषै मिथ्यादृष्टि का अंतर नाही है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषै क्षायिक सम्यक्त्व विषै असंयतादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंयत का देशोन कोडि पूर्व, औरनि का साधिक तेतीस सागर अंतर है । च्यारि क्षपक, सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है । क्षायोपशमिक विषै असंयतादि अप्रमत्त पर्यंतनि का जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट असंयत का देशोन कोडि पूर्व, देशसंयत का देशोन छयासठि सागर, प्रमत्त-अप्रमत्त का साधिक तेतीस सागर अंतर है । औपशमिक विषै असंयतादि तीन उपशमक पर्यंतनि का जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर अंतर्मुहूर्तमात्र है । उपशान्त कषाय का अंतर नाही है । मिश्र, सासादन, मिथ्यादृष्टि विषै अपने-अपने गुणस्थाननि का अंतर नाही है ।

बहुरि संज्ञी मार्गणा विषै संज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट पृथक्त्व सौ सागर, च्यारि क्षपकनि का सामान्यवत् अंतर है । असंज्ञी विषै मिथ्यादृष्टि का अंतर नाही है । उभयरहित विषै सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है ।

बहुरि आहारक मार्गणा विषै आहारक मिथ्यादृष्टि का सामान्यवत्, सासादनादि च्यारि उपशमक पर्यंतनि का जघन्य सामान्यवत्, उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात कल्पकाल मात्र सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग अंतर है । च्यारि क्षपक सयोगीनि का अंतर नाही है । अनाहारक विषै मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, सयोगी, अयोगी का अंतर नाही है ।

इहा मार्गणास्थान विषै अंतर कह्या है, तहां असा जानना — विवक्षित मार्गणा के भेद का काल विषै विवक्षित गुणस्थान का अंतराल जेते काल पाइए, ताका वर्णन है । मार्गणा के भेद का पलटना भए अथवा मार्गणा के भेद का सद्भाव होतै विवक्षित गुणस्थान का अंतराल भया था, ताकी बहुरि प्राप्ति भए, तिस अंतराल का अभाव हो है । ऐसे प्रसंग पाइ काल का अर अंतर का कथन को कीया है, सो जानना ।

आगे इनि चौदह मार्गणानि विषै गति मार्गणा का स्वरूप कौ कहै है —

गइउदयजपज्जाया, चउगइगमणस्स हेउ वा हु गइ ।

एारयतिरिक्खमाणुस, देवगइ त्ति य हवे चदुधा ॥१४६॥

गत्युदयजपर्यायः, चतुर्गतिगमनस्य हेतुर्वा हि गतिः ।

नारकतिर्यग्मानुषदेवगतिरिति च भवेत् चतुर्धा ॥१४६॥

गम्यते कहिये गमन करिए, सो गति है ।

इहां तर्क — जो ऐसे कहें गमन क्रियारूप परिणया जीव को पावने योग्य द्रव्यादिक को भी गति कहना संभव है ।

तहां समाधान — जो ऐसे नाही है, जो गतिनामा नामकर्म के उदय तें जो जीव के पर्याय उत्पन्न होइ, तिसही को गति कहिए । सो गति चारि प्रकार — १. नारक गति २. तिर्यच गति ३. मनुष्यगति ४. देव गति ए चारि गति हैं ।

आगे नारक गति को निर्देश करे हैं —

ण रमंति जदो णिच्चं, दब्बे खेत्ते य काल-भावे य ।

अण्णोण्णोहिं य जह्मा, तह्मा ते णारया भणिया ॥१४७॥

नरमंते यतो नित्यं, द्रव्य क्षेत्रे च कालभावे च ।

अन्योन्यैश्च यस्मात्तस्मात्ते नारता (का) भणिताः ॥१४७॥

टीका — जा कारण तें जे जीव द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषे अथवा परस्पर में रमे नाही—जहां क्रीडा न करे, तहां नरक संबंधी अन्न-पानादिक वस्तु, सो द्रव्य कहिए । बहुरि तहांकी पृथ्वी सो क्षेत्र कहिए । बहुरि तिस गति संबंधी प्रथम समय तें लगाइ अपनी आयु पर्यंत जो काल, सो काल कहिए । तिन जीवनी के चैतन्यरूप परिणाम, सो भाव कहिए । इनि चारोंनि विषे जे कबहुं रति न मानें । बहुरि अन्य भव संबंधी बर करि इस भव में उपजे क्रोधादिक, तिनिकरि नवीन-पुराणे नारकी परस्पर रमे नाही है 'रति कहिए प्रीतिरूप कब ही तार्ते' 'न रताः' कहिए नरत, तेई 'नारत' जानने । जातें स्वार्थ विषे अण् प्रत्यय का विधान है, तिनकी जो गति, सो नारतगति जानना । अथवा नरकविषे उपजे ते नारक, तिनकी जो गति, सो नारक गति जाननी । अथवा हिंसादिक आचरण विषे निरता कहिए प्रवर्ते, अंसे जो निरत, तिनकी जो गति, सो निरतगति जाननी । अथवा नरक, तिनकी कायति कहिए पीडे दुःख दैइ,

अैसे जे नरक कहिए पापकर्म, ताका अपत्य कहिए तीहि का उदय तै निपजे जे नारक तिनकी जो गति, सो नारक गति जाननी । अथवा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि विषे वा परस्पर रत कहिए प्रीतिरूप नाही तै नरत, तिनकी जो गति सो नरतगति जाननी । निर्गत कहिए गया है अयः कहिए पुण्यकर्म, जिनितै अैसे जे निरय, तिनकी जो गति सो निरय गति जाननी । अैसे निरुक्ति करि नारकगति का लक्षण कह्या ।

आगे तिर्यचगति का स्वरूप कहै है —

**तिरियंति कुडिलभावं, सुविउलसंण्ण णिगिट्ठमण्णाणा ।**

**अच्चंतपावबहुला, तह्मा तेरिच्छया भणिया<sup>१</sup> ॥१४८॥**

**तिरोंचंति कुडिलभावं, सुविवृतसंज्ञा निकृष्टमज्ञाना ।**

**अत्यंतपावबहुलास्तस्मात्तैरश्चिका भणिताः ॥१४८॥**

टीका — जातै जो जीव सुविवृतसंज्ञाः कहिए प्रकट है आहार नै आदि देकरि संज्ञा जिनके अैसे है । बहुरि प्रभाव, सुख, द्युति, लेश्या की विशुद्धता इत्यादिक करि हीन है, तातै निकृष्ट है । बहुरि हेयोपादेय का ज्ञान रहित है, तातै अज्ञान है । बहुरि नित्यनिगोद की अपेक्षा अत्यंत पाप की है बहुलता जिनिकै अैसे है, तातै तिरोभाव जो कुडिलभाव, मायारूप परिणाम ताहि अंचंति कहिए प्राप्त होइ, ते तिर्यच कहे है । बहुरि तिर्यच ही तैरश्च कहिए । इहा स्वार्थ विषे अण् प्रत्यय का विधान हो है । अैसे जो तिर्यक् पर्याय, सोही तिर्यग्गति है, अैसा कह्या है ।

आगे मनुष्य गति का स्वरूप कहै है —

**मण्णंति जदो णिच्चं, मणेण णिउणा मणुक्कडा जह्मा ।**

**मण्णुवभवा य सव्वे, तह्मा ते माणुसा भणिदा<sup>२</sup> ॥१४९॥**

**मन्यंते यतो नित्यं, मनसा निपुणा मनसोत्कटा यस्मात् ।**

**मनूद्भवाश्च सर्वे, तस्मात्ते मानुषा भणिताः ॥१४९॥**

टीका — जातै जे जीव नित्य ही मन्यंते कहिए हेयोपादेय के विशेष कौ जानै है । अथवा मनसा निपुणाः कहिए अनेक शिल्पी आदि कलानि विषे प्रवीण है । अथवा

१. षट्खडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०३, गाथा १२६

२. षट्खडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ २०४, गाथा १३०

गत्युदयजपर्यायः, चतुर्गतिगमनस्य हेतुर्वा हि गतिः ।  
नारकतिर्यग्मानुषदेवगतिरिति च भवेत् चतुर्धा ॥१४६॥

गम्यते कहिये गमन करिए, सो गति है ।

इहां तर्क - जो ऐसे कहै गमन क्रियारूप परिणया जीव कौ पावने योग्य  
द्रव्यादिक कौ भी गति कहना संभवै ।

तहां समाधान - जो ऐसे नाही है, जो गतिनामा नामकर्म के उदय तैं जो जीव  
के पर्याय उत्पन्न होइ, तिसही कौ गति कहिए । सो गति च्यारि प्रकार - १. नारक  
गति २. तिर्यच गति ३. मनुष्यगति ४. देव गति ए च्यारि गति है ।

आगे नारक गति कौ निर्देश करै है -

ण रमन्ति जदो णिच्चं, दब्बे खेत्ते य काल-भावे य ।  
अण्णोण्णेहिं य जह्मा, तह्मा ते एारया भणिया ॥१४७॥

नरमन्ते यतो नित्यं, द्रव्य क्षेत्रे च कालभावे च ।

अन्योन्यंश्च यस्मात्तस्मात्ते नारता (का) भणिताः ॥१४७॥

टीका - जा कारण तैं जे जीव द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषे अथवा परस्पर में  
रमै नाही-जहा क्रीडा न करै, तहा नरक सवंधी अन्न-पानादिक वस्तु, सो द्रव्य कहिए ।  
वहुरि तहांकी पृथ्वी सो क्षेत्र कहिए । वहुरि तिस गति सवंधी प्रथम समय तैं लगाइ  
आनी आयु पर्यंत जो काल, सो काल कहिए । तिन जीवनी के चैतन्यरूप परिणाम,  
सो भाव कहिए । इन च्यारोनि विषे जे बबहुं रति न मानै । वहुरि अन्य भव सवंधी  
हैं नरक जिन भव में उपजे क्रोधादिक, तिनिकरि नवीन-पुराणे नारकी परस्पर रमै नाहि  
हैं 'गति रति' प्रीतिरूप कब ही तातैं 'न रताः' कहिए नरत, तेई 'नारत' जानने । जातैं  
आगे विषे अन् प्रत्यय का विधान है, तिनकी जो गति, सो नारतगति जानना ।  
जहां नरकविषे उरजै ते नारक तिनकी जो गति, सो नारक गति जाननी । अथवा  
'नारत' आचरण विषे निरता कहिए प्रवर्तैं, अने जो निरत, तिनकी जो गति, सो  
नारतगति जाननी । अथवा नर कहिए प्राणी, तिनिकों कायति कहिए पीड़े दुःख दैइ,

दीव्यंति यतो नित्यं, गुणैरष्टाभिर्दिव्यभावाः ।

भासमानदिव्यकायाः, तस्मात्ते वर्णिता देवाः ॥१५१॥

टीका — जाते जे जीव नित्य ही दीव्यंति कहिए कुलाचल समुद्रादिकनि विषे क्रीड़ा करे है, हर्ष करे है, मदनरूप हो है—कामरूप हो है । बहुरि अणिमा कौ आदि देकरि मनुष्य अगोचर दिव्यप्रभाव लीए गुण, तिनिकरि प्रकाशमान है । बहुरि-धातु-मल रोगादिक दोष, तिनिकरि रहित है । देदीप्यमान, मनोहर शरीर जिनिका अैसे है । ताते ते जीव देव है, अैसे आगम विषे कह्या है । अैसे निरुक्तिपूर्वक लक्षण करि च्यारि गति कही ।

यहा जे जीव सातौ नरकनि विषे महा दुख पीडित है, ते नारक जानने । बहुरि एकेंद्री, बेद्री, तेद्री, चौइंद्री, असंज्ञी पंचेद्री पर्यंत सर्व ही अर जलचरादि पंचेद्री ते सर्व तिर्यच जानने । बहुरि आर्य, म्लेच्छ, भोगभूमि, कुभोगभूमि विषे उत्पन्न मनुष्य जानने । भवनवासी, व्यंतर ज्योतिषी, वैमानिक भेद लीए देव जानने ।

आगे संसार दशा का लक्षण रहित जो सिद्धगति ताहि कहै है —

जाइजरामरणभया, संजोगविजोगदुःखसङ्गाओ ।

रोगादिगा य जिस्से, न संति सा होदि सिद्धगई<sup>१</sup> ॥१५२॥

जातिजरामरणभयाः, संयोगवियोगदुःखसङ्गाः ।

रोगादिकाश्च यस्या, न संति सा भवति सिद्धगतिः ॥१५२॥

टीका — जन्म, जरा, मरण, भय, अनिष्ट सयोग, इष्टवियोग, दुख, सङ्गा, रोगादिक नानाप्रकार वेदना जिहिविषे न होइ सो समस्तकर्म का सर्वथा नाश तै प्रकट भया सिद्ध पर्यायरूप लक्षण कौ धरै, सो सिद्धगति जाननी । इस गति विषे संसारीक भाव नाही, ताते संसारीक गति की अपेक्षा गति मार्गणा च्यारि प्रकार ही कही ।

मुक्तिगति की अपेक्षा तीहि मुक्तिगति का नाम कर्मोदयरूप लक्षण नाही है । ताते याकी गतिमार्गणा विषे विवक्षा नाही है ।

आगे गतिमार्गणा विषे जीवनि की संख्या कहै है । तहा प्रथम ही नरक गति विषे गाथा दोयकरि कहै है—

‘मनसोत्कटाः’ कहिए अववारना आदि दृढ उपयोग के धारी हैं । अथवा ‘मनोरुद्धवाः’ कहिए कुलकरादिक तै निपजे है, तातें ते जीव सर्व ही मनुष्य हैं, अैसें आगम विषे कहै हैं ।

आगे तिर्यच, मनुष्य गति के जीवनि का भेद दिखावैं हैं -

**सामण्या पंचिंदी, पज्जत्ता जोणिणी अपज्जत्ता ।**

**तिरिया णरा तहावि य, पंचिंदियभंगदो हीणा ॥१५०॥**

सामान्याः पंचेन्द्रियाः, पर्याप्ता योनिमत्यः अपर्याप्ताः ।

तिर्यचो नरास्तथापि च, पंचेन्द्रियभंगतो हीनाः ॥१५०॥

टोका - तिर्यच पांच प्रकार - १. सामान्य तिर्यच २. पंचेद्री तिर्यच ३. पर्याप्त तिर्यच ४. योनिमती तिर्यच ५. अपर्याप्त तिर्यच । तहां सर्व ही तिर्यच भेदनि का समुदायरूप, सो तौ सामान्य तिर्यच है । बहुरि जो एकेन्द्रियादिक विना केवल पंचेद्री तिर्यच, सो पंचेद्री तिर्यच है । बहुरि जो अपर्याप्त विना केवल पर्याप्त तिर्यच, सो पर्याप्त तिर्यच है । बहुरि जो स्त्रीवेदरूप तिर्यचणी, सो योनिमती तिर्यच है । बहुरि जो लव्वि अपर्याप्त तिर्यच है, सो अपर्याप्त तिर्यच है । अैसें तिर्यच पंच प्रकार हैं ।

बहुरि तैसें ही मनुष्य हैं । इतना विज्ञेय - जो पंचेन्द्रिय भेद करि हीन है, तातें सामान्यादिरूप करि च्यारि प्रकार है । जातें मनुष्य सर्व ही पंचेद्री है, तातें जुदा भेद तिर्यचवत् न होइ । तातें १. सामान्य मनुष्य २. पर्याप्त मनुष्य ३. योनिमती मनुष्य ४. अपर्याप्त मनुष्य ए च्यारि भेद मनुष्य के जानने ।

तहां सर्व मनुष्य भेदनि का समुदायरूप, सो सामान्य मनुष्य है । केवल पर्याप्त मनुष्य, सो पर्याप्त मनुष्य है । स्त्रीवेदरूप मनुष्यणी, सो योनिमती मनुष्य है । लव्वि अपर्याप्त मनुष्य सो अपर्याप्त मनुष्य है ।

आगे देवगति कों कहै हैं -

**दिव्वंति जदो णिच्चं, गुणेहिं अट्ठेहिं दिव्वभावेहिं ।**

**भासंतदिव्वकाया, तह्सा ते वणिगया देवाः ॥१५१॥**

दीव्यंति यतो नित्यं, गुणैरष्टाभिर्दिव्यभावैः ।

भासमानदिव्यकायाः, तस्मात्ते वर्णिता देवाः ॥१५१॥

टीका — जाते जे जीव नित्य ही दीव्यंति कहिए कुलाचल समुद्रादिकनि विषै क्रीडा करै है, हर्ष करै है, मदनरूप हो है—कामरूप हो है । बहुरि अणिमा कौ आदि देकरि मनुष्य अगोचर दिव्यप्रभाव लीए गुण, तिनिकरि प्रकाशमान है । बहुरि-धातु-मल रोगादिक दोष, तिनिकरि रहित है । देदीप्यमान, मनोहर शरीर जिनिका अैसे है । ताते ते जीव देव है, अैसे आगम विषै कह्या है । अैसे निरुक्तिपूर्वक लक्षण करि च्यारि गति कही ।

यहा जे जीव सातौ नरकनि विषै महा दु ख पीडित है, ते नारक जानने । बहुरि एकेद्री, बेद्री, तेद्री, चौइंद्री, असंजी पचेद्री पर्यंत सर्व ही अर जलचरादि पंचेद्री ते सर्व तिर्यच जानने । बहुरि आर्य, म्लेच्छ, भोगभूमि, कुभोगभूमि विषै उत्पन्न मनुष्य जानने । भवनवासी, व्यंतर ज्योतिषी, वैमानिक भेद लीएं देव जानने ।

आगे संसार दशा का लक्षण रहित जो सिद्धगति ताहि कहै है —

जाइजरामरणभया, संजोगविजोगदुःखसङ्गाओ ।

रोगादिगा य जिस्से, न संति सा होदि सिद्धगई ॥१५२॥

जातिजरामरणभयाः, संयोगवियोगदुःखसङ्गाः ।

रोगादिकाश्च यस्या, न संति सा भवति सिद्धगतिः ॥१५२॥

टीका — जन्म, जरा, मरण, भय, अनिष्ट संयोग, इष्टवियोग, दुख, सङ्गा, रोगादिक नानाप्रकार वेदना जिहिविषै न होइ सो समस्तकर्म का सर्वथा नाश तै प्रकट भया सिद्ध पर्यायरूप लक्षण कौ धरै, सो सिद्धगति जाननी । इस गति विषै संसारीक भाव नाही, ताते संसारीक गति की अपेक्षा गति मार्गणा च्यारि प्रकार ही कही ।

मुक्तिगति की अपेक्षा तीहि मुक्तिगति का नाम कर्मोदयरूप लक्षण नाही है । ताते याकी गतिमार्गणा विषै विवक्षा नाही है ।

आगे गतिमार्गणा विषै जीवनि की संख्या कहै है । तहा प्रथम ही नरक गति विषै गाथा दोयकरि कहै है—

सामण्या णेरइया, घणांगुलबिदियमूलगुणसेढी ।  
बिदियादि वारदसअड, छत्तिदुणिजपदहिदा सेढी ॥१५३॥

सामान्या नैरयिका, घनांगुलद्वितीयमूलगुण श्रेणी ।  
द्वितीयादिः द्वादश दशाष्टषट्त्रिद्विनिजपदहिता श्रेणी ॥१५३॥

टीका - सामान्य सर्व सातौ ही पृथ्वी के मिले हुवे नारकी जगत श्रेणी कौ घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल करि गुणै, जो परिमाण होइ, तिहि प्रमित हैं । इहां घनांगुल का वर्गमूल करि उस प्रथम वर्गमूल का दूसरी बार वर्गमूल कीजिए, सो घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल जानना । जैसे अंकसंदृष्टि करि घनांगुल का प्रमाण सोलह, ताका वर्गमूल च्यारि, ताका द्वितीय वर्गमूल दोय होय, ताकरि जगत श्रेणी का प्रमाण दोय सै छप्पन कौ गुणै, पांचसै बारह होय; तैसे इहां यथार्थ परिमाण जानना । व्हुरि दूसरी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का वारह्वां वर्गमूल, ताका भाग जगत श्रेणी कौ दीएं जो प्रमाण होइ, तीहि प्रमित हैं । इहां जगत श्रेणी का वर्गमूल करिए सो प्रथम मूल, व्हुरि उसका वर्गमूल कीजिए, सो द्वितीय वर्गमूल, व्हुरि उस द्वितीय वर्गमूल का वर्गमूल कीजिए सो तृतीय वर्गमूल, इत्यादिक अैसे ही इहां अन्य वर्गमूल जानना । व्हुरि तीसरी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का दशवां वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीएं जो प्रमाण आवै तितने जानने । व्हुरि चौथी पृथ्वी के नारकी जगत श्रेणी का आठवां वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीएं जो परिमाण आवै, तितने जानने । व्हुरि अैसे ही पांचवी पृथ्वी, छठी पृथ्वी, सातवीं पृथ्वी के नारकी अनुक्रम तै जगत श्रेणी का छठा, तीसरा, दूसरा वर्गमूल का भाग जगत श्रेणी कौ दीएं, जो जो परिमाण आवै, तितने तितने जानने । जैसे दोय सै छप्पन का प्रथम वर्गमूल सोलह, द्वितीय वर्गमूल च्यारि, तृतीय वर्गमूल दोय, इनिका भाग त्रय तै दोय सै छप्पन कौ दीएं सोलह, चौसठि, एक सौ अट्ठाईस होइ । तैसे एहा भी यथासंभव परिमाण जानना ।

हेट्ठिमछप्पुढवीणं, रासिविहीणो दु सव्वरासी दु ।  
पढमावणिहि रासी, णेरइयाणं तु णिदिट्ठो ॥१५४॥

अधस्तनपट्पृथ्वीनां, रासिविहीनस्तु सर्वराशिस्तु ।  
प्रयमावर्णो राशिः, नैरयिकाणां तु निर्दिष्टः ॥१५४॥



टीका — नीचली जे दूसरी वंशा पृथ्वी सौं लगाइ सातवी पृथ्वी पर्यंत छह पृथ्वी के नारकीनि का जोड़ दीएं साधिक जगत श्रेणी का बारह्वा मूल करि भाजित जगत श्रेणी प्रमाण होइ सो पूर्वे सामान्य सर्वनारकीनि का परिमाण कह्या, तामें घटाएं, जितने रहैं, तितने पहिली धम्मा पृथ्वी के नारकी जानने । इहां घटावनेरूप त्रैराशिक अैसें करना । सामान्य नारकीनि का प्रमाण विषैं जगच्छ्रेणी गुण्य है । बहुरि घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल गुणकार है, सो इस प्रमाण विषै जगच्छ्रेणीमात्र घटावना होइ, तौ गुणकार का परिमाण में स्यों एक घटाइए तौ जो जगच्छ्रेणी का बारह्वा वर्गमूल करि भाजित साधिक जगच्छ्रेणीमात्र घटावना होइ, तौ गुणकार में स्यों कितना घटै, इहां प्रमाणराशि जगत श्रेणी, फलराशि एक, इच्छाराशि जगत श्रेणी का बारह्वा वर्गमूल करि भाजित जगत श्रेणी, सो इहा फल करि इच्छा कौ गुणै प्रमाण का भाग दीएं साधिक एक का बारह्वा भाग जगत श्रेणी के वर्गमूल का भाग आया । सो इतना घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल में स्यों घटाइ अवशेष करि जगत श्रेणी कौ गुणै, धर्मा पृथ्वी के नारकीनि का प्रमाण हो है ।

आगै तिर्यच जीवां की संख्या दोय गाथा करि कहै है—

**संसारी पंचक्खा, तप्पुण्णा तिगदिहीणया कमसो ।**

**सामण्णा पंचिदी, पंचिदियपुण्णतेरिक्खा ॥१५५॥**

संसारिणः पंचाक्षाः, तत्पूर्णाः त्रिगतिहीनकाः क्रमशः ।

सामान्याः पंचेन्द्रियाः, पंचेन्द्रियपूर्णतैरश्चाः ॥१५५॥

टीका — संसारी जीवनि का जो परिमाण तीहिविषै नारकी, मनुष्य, देव इनि तीनौ गतिनि के जीवनि का परिमाण घटाएं, जो परिमाण रहै, तितने प्रमाण सर्व सामान्य तिर्यच राशि जानने । बहुरि आगै इन्द्रिय मार्गणाविषै जो सामान्य पंचेन्द्रिय जीवनि का परिमाण कहिएगा, तामैसौ नारकी, मनुष्य, देवनि का परिमाण घटाएं, पंचेन्द्रिय तिर्यचनि का प्रमाण हो है ।

बहुरि आगै पर्याप्त पंचेन्द्रियनि का प्रमाण कहिएगा, तामेस्यो पर्याप्त नारकी, मनुष्य, देवनि का परिमाण घटाएं, पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यचनि का परिमाण हो है ।

छस्सयजोयणकदिहदजगपद्वरं जोणिस्सीण परिमाणं ।  
पुण्णूणा पंचकद्धा, तिरियअपज्जत्तपरिसंखा ॥१५६॥

षट्शतयोजनकृतिहतजगत्प्रतरं योनिमतीनां परिमाणं ।  
पूर्णोनाः पंचाक्षाः, तिर्यगपर्याप्तिपरिसंख्या ॥ १५६ ॥

टीका - छस्से योजन के वर्ग का भाग जगत प्रतर कौं दीएं, जो परिमाण होई, सो योनिमती द्रव्य तिर्यचणीनि का परिमाण जानना । छस्सै योजन लंबा, छस्सै योजन चौड़ा, एक प्रदेश ऊंचा असा क्षेत्र विपै जितने आकाश प्रदेश होई, ताको भाग जगत प्रतर कौ देना, सो इनि योजननिकी प्रतरांगुल कीजिए, तब चौगुणा पण्णूठी कौं इक्यासी हजार कोडि करि गुणिए, इतने प्रतरांगुल होई तिनिका भाग जगत प्रतर कौं दीजिए, तब एक भाग प्रमाण द्रव्य तिर्यचणी जाननीं । वहुरि पंचेंद्रिय तिर्यचनि का परिमाण विपै पंचेंद्रिय पर्याप्ति तिर्यचनि का प्रमाण घटाएं, अवशेष पर्याप्ति पंचेंद्रियनि का परिमाण हो है ।

आगे मनुष्य गति के जीवनि की संख्या तीन गाथानि करि कहै हैं-

सेढी सूईअंगुलआदिमत्तदियपदभाजिहेगूणा ।

सामण्णसणुसराली, पंचमकदिघणससा पुण्णा ॥१५७॥

श्रेणी सूच्यंगुलादिमत्ततृतीयपदभाजितैकोना ।

सामान्यमनुष्यराजिः, पंचमकृतिघनसनाः पूर्णाः ॥१५७॥

टीका - जगतक्षेत्री कौं सूच्यंगुल के प्रथम वर्गमूल का भाग दीजिए, जो परिमाण आवै, ताका सूच्यंगुल का तृतीय वर्गमूल का भाग दीजिए, जो परिमाण आवै, तामे एक घटाएं, जितने अवशेष रहैं तितने सामान्य सर्व मनुष्य जानने । वहुरि द्वितीय वर्गद्वारा संबंधी पंचम वर्गस्थान बाढाल है, ताका घन कीजिए जितने होई तितने पर्याप्त मनुष्य जानने । ने कितने हैं ?-

तल्लोनिमधुगविमलं, धूमसिलागादिचोरभयमेह ।

तटहरिखभसा होति हु, माणुसपज्जत्तसंखंका ॥१५८॥

तन्लोनिमधुगविमलं, धूमसिलागाविचोरभयमेह ।

तटहरिखभसा भवति हि, मानुसपर्याप्तसंख्यांकाः ॥१५८॥

टीका — इहां अक्षर संज्ञा करि वामभाग तैं अनुक्रम करि अंक कहै है । सो अक्षर संज्ञा करि अंक कहने का सूत्र उक्तं च कहिए है—आर्या—

कटपयपुरस्थवर्णैर्नवनवपंचाष्टकल्पितैः क्रमशः ।

खरजनशून्यं संख्या मात्रौपरिमाक्षरं त्याज्यं ॥

याका अर्थ — ककार को आदि देकरि नव अक्षर, तिनिकरि अनुक्रम तैं एक, दोय, तीन इत्यादिक अंक जानने । जैसे ककार लिख्या होइ, तहां एका जानना, खकार होइ तहां दूवा जानना । गकार लिख्या होइ तहां तीया जानना । असै ही भकार पर्यंत नव ताई अंक जानने । क ख ग घ ङ च छ ज झ । बहुरि असै ही टकार  
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९

ने आदि देकरि । नव अक्षरनि तैं एक, दोय, तीन आदि नव पर्यंत अंक जानने  
ट ठ ड ढ ण त थ द ध । बहुरि ऐसे ही पकारने आदि देकरि पच अक्षरनि तैं एक, दोय  
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९

प्रादि पच अंक जानने । प फ ब भ म । बहुरि ऐसे ही यकार नें आदि देकरि अष्ट  
१ २ ३ ४ ५

अक्षरनि तैं एक आदि अष्ट पर्यंत अंक जानने । य र ल व श ष स ह । बहुरि जहां  
१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८

प्रकार आदि स्वर लिखे हो वा जकार वा नकार लिख्या होइ, तहां बिदी जानना ।

बहुरि अक्षर के जो मात्रा होइ तथा कोई ऊपरि अक्षर लिख्या होइ, तौ उनका कछू प्रयोजन नाही लेना । सो इस सूत्र अपेक्षा इहां अक्षर संज्ञा करि अंक कहे है । आगै भी श्रुतज्ञानादि का वर्णन विषे ऐसे ही जानना । सो इहां त कहिए छह, ल कहिए तीन, ली कहिए तीन, न कहिए बिदी, म कहिए पांच, धु कहिए नव, ग कहिए तीन, इत्यादि अनुक्रम तैं च्यारि, पांच, तीन, नव, पांच, सात, तीन, तीन, च्यारि, छह, दोय, च्यारि, एक, पांच, दोय, छह, एक, आठ, दोय, दोय, नव, सात ए अंक जानने ।

‘अंकानां वामतो गतिः’ तातैं ए अंक बाई तरफ तैं लिखने । ‘७, ६२२८१६२, ५१४२६४३, ३७५६३५४, ३६५०३३६’ सो ए सात कोडाकोडि कोडाकोडि बाणवै लाख अठाईस हजार एक सौ बासठि कोडा कोडि कोडि इकावन लाख बियालीस हजार छ सौ तियालीस कोडाकोडि सैंतीस लाख गुणसठि हजार तीन सौ चौवन कोडि गुणतालीस लाख पचास हजार तीन सौ छत्तीस पर्याप्त मनुष्य जानने । इनिके अंक दाहिणी तरफ सौ अक्षर संज्ञा करि अन्यत्र भी कहे है —

साधूरराजकीतरेणांको भारतीबिलोलसमधीः ।

गुणवर्गधर्मनिगलितसंख्यावन्मानवेषु वर्णक्रमाः ॥

सो इहां सा कहिए सात, घू कहिए नव, र कहिए दोय, रा कहिए दोय, ज कहिए आठ, की कहिए एक, तें कहिए छह, इत्यादि दक्षिण भाग तें अंक जानने ।

पञ्जत्तमणुस्साणं, तिचउत्थो माणुसीण परिमाणं ।

सामण्णा पूण्ण्णा, मणुवअपञ्जत्तगा होंति ॥१५६॥

पर्याप्तमनुष्याणां, त्रिचतुर्थो मानुषीणां परिमाणं ।

सामान्याः पूर्योना, मानवा अपर्याप्तका भवति ॥१५९॥

टीका - पर्याप्त मनुष्यनि का प्रमाण कह्या, ताका च्यारि भाग कीजिए, तामें तीन भाग प्रमाण मनुषिणी द्रव्य स्त्री जाननी । वहुनि सामान्य मनुष्य राशि में स्यो पर्याप्त मनुष्यनि का परिमाण घटाएं, अवशेष अपर्याप्त मनुष्यनि का परिमाण हो है । इहां 'प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः' इस सूत्र करि पैतालीस लाख योजन व्यास वरे मनुष्य लोक है । ताका 'विष्वक्भवागदहगुण' इत्यादि सूत्र करि एक कोडि वियालीस लाख तीस हजार दोय सै गुणचास योजन, एक कोण, सतरह सै छयासठि वनुप, पाच अंगुल प्रमाण परिधि हो है । वहुनि याकौ व्यास की चौथाई ग्यारह लाख पचीस हजार योजन करि गुणे, सोलह लाख नव सै तीन कोडि छह लाख चावन हजार छ सै एक योजन अर एक लाख योजन का दोय सै छप्पन भाग विषै उगगीम भाग इतना क्षेत्रफल हो है । वहुनि याके अंगुल करने सो एक योजन के मान लाख अडमठि हजार अंगुल है । सो वर्गराशि का गुणकार वर्गरूप होइ, इस ग्याय करि मात लाख अडमठि हजार का वर्ग करि तिस क्षेत्रफल कौ गुणौ नव हजार च्यारि सै वियालीस कोडाकोडि कोडि इक्यावन लाख च्यारि हजार नव सै अडसठि कोडाकोडि उगगीम लाख नियालीस हजार च्यारि सै कोडि प्रतरांगुल हैं । वहुनि ए प्रमाणानुल हैं, सो इहां उत्मेधागुल न करने, जातैं चौथा काल की आदि विषै वा उत्तमपिगी काल का तीसरा काल का अन्तविषै वा विदेहादि क्षेत्र विषै आत्मांगुल का भी प्रमाण प्रमाणानुल के समान ही है । सो इनि प्रतरांगुलनि के प्रमाण तैं भी पर्याप्त मनुष्य संन्याय गुणे हैं । तथापि आकाश की अवगाहन की विचित्रता जानि नदेह न रगना ।

आगे देवगति के जीवनि की संख्या च्यारि गाथानि करि कहै है —

**तिणिसयजोयणाणं, बेसदछप्पणअंगुलाणं च ।**

**कदिहदपदरं वेत्तर, जोइसियाणं च परिमाणं ॥१६०॥**

**त्रिशतयोजनानां, द्विशतषट्पंचाशदंगुलानां च ।**

**कृतिहतप्रतरं व्यंतरज्योतिष्काणां च परिमाणम् ॥१६०॥**

टीका — तीन सै योजन के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो परिमाण होइ, तितना व्यंतरनि का प्रमाण जानना । तीन सै योजन लंबा, तीन सै योजन चौड़ा, एक प्रदेश ऊंचा ऐसा क्षेत्र का जितने आकाश का प्रदेश होइ, ताका भाग दीजिए, सो याका प्रतरांगुल कीए, पैसठि हजार पांच सै छत्तीस कौ इक्यासी हजार कोडि गुणा करिए इतने प्रतरांगुल होइ, तिनिका भाग जगत्प्रतर कौ दीए व्यतरनि का प्रमाण होइ है ।

बहुरि दोय सै छप्पन अंगुल के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ भाग दीएं, जो परिमाण आवै, तितना ज्योतिषीनि का परिमाण जानना । दोय सै छप्पन अंगुल चौड़ा इतना ही लम्बा एक प्रदेश ऊंचा, अैसा क्षेत्र का जितना आकाश का प्रदेश होइ ताका भाग दीजिए, सो याका प्रतरांगुल पैसठि हजार पांच सै छत्तीस है । ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए ज्योतिषी देवनि का परिमाण हो है ।

**घणअंगुलपठमपदं, तदियपदं सेढिसंगुणं कमसो ।**

**भवणे सोहम्सदुगे, देवाणं होदि परिमाणं ॥१६१॥**

**घनांगुलप्रथमपदं, तृतीयपदं श्रेणिसंगुणं क्रमशः ।**

**भवने सौधर्मद्विके, देवानां भवति परिमाणम् ॥१६१॥**

टीका — घनांगुल का जो प्रथम वर्गमूल, तिहिने जगत्श्रेणी करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने भवनवासीनि का परिमाण जानना ।

बहुरि घनांगुल का जो तृतीय वर्गमूल तिहिने जगत्श्रेणी करि गुणै जो परिमाण होइ, तितने सौधर्म अरु ईशान स्वर्ग का वासी देवनि का परिमाण जानना ।

ततो एगारणवसगणचउशियमूलभाजिदा सेढी ।

पल्लासंखेज्जदिमा, पत्तेयं आणदादिसुरा<sup>१</sup> ॥१६२॥

तत एकादशनवसप्तपंचचतुर्निजमूलभाजिता श्रेणी ।

पल्यासंख्यातकाः, प्रत्येकमानतादिसुराः ॥ १६२ ॥

टीका - बहुरि तहां ते ऊपरि सनत्कुमार-माहेद्र, बहुरि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, बहुरि लांतव - कापिष्ठ, शुक्र - महाशुक्र, बहुरि शतार - सहस्रार इनि पांच युगलनि विपै अनुक्रमतें जगत्श्रेणी का ग्यारहवां, नवमां, सातवां, पाचवा, चौथा जो वर्गमूल, तिनिका भाग जगत्श्रेणी कौ दीएं, जितना-जितना परिमाण आवै, तिनना-तितना तहां के वासी देवनि का प्रमाण जानना ।

बहुरि ता ऊपरि आनत-प्राणत युगल, बहुरि आरण-अच्युत युगल, बहुरि तीन अधोऽग्रेवेयक, तीन मध्य ग्रेवेयक, तीन उपरिम ग्रेवेयक, बहुरि नव अनुदिश विमान, बहुरि सर्वार्थसिद्धि विमान विना च्यारि अनुत्तर विमान इन एक-एक विपै देव पल्य के असंख्यातवै भाग प्रमाण जानने ।

तिगुणा सत्तगुणा वा, सव्वट्ठा माणुसीपमाणदो ।

साधज्जदेवरासी, जोइसियादो विसेसहिया ॥१६३॥

तिगुणा सप्तगुणा वा, सर्वार्था माणुपीप्रमाणतः ।

सानान्यदेवराणिः, ज्योतिष्कतो विशेषाधिकः ॥१६३॥

टीका - बहुरि सर्वार्थसिद्धि के वासी ब्रह्मिष्ठ देव, मनुषिणीनि का जो परिमाण, पर्याप्त मनुष्यनि का च्यारि भाग में तीन भाग प्रमाण कह्या था, तातें तिगुणा जानना । बहुरि कोई आचार्य का अभिप्रायतें सात गुणा है । बहुरि ज्योतिषी देवनि का परिमाण विपै भवनवासी, कल्पवासी, देवनि का प्रमाण करि नाष्टिक जैसा ज्योतिषी देवनि के संख्यातवै भाग, जो व्यतर राणि, सो जोड़ै, सर्व सामान्य देवनि का परिमाण हो है ।

इनि श्री आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती विरचित गोष्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह ग्रंथ की जीव-तन्त्रप्रदीपिका नाम संस्कृतटीका के अनुसारि इस सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विपै प्ररूपिन जे घोस प्ररूपणा, तिनिविपै गतिप्ररूपणा नामा छठा अधिकार सपूर्ण भया ॥६॥

१. 'दुग्धालय' - ब्रजना पुस्तक ३, पृष्ठ १७, गाय १३ ।

## सातवां अधिकार : इन्द्रिय-मार्गणा-प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

लोकालोकप्रकाशकर, जगत पूज्य श्रीमान् ।

सप्तम तीर्थकर नमो, श्रीसुपाश्व भगवान् ॥

अथ इन्द्रियमार्गणा का आरंभ करें है । तहां प्रथम इन्द्रिय शब्द का निरुक्ति पूर्वक अर्थ कहै है -

अहमिंदा जह देवा, अविसेसं अहमहंति मण्णंता ।

ईसंति एक्कमेक्कं, इंदा इव इंदिये जाण १ ॥१६४॥

अहमिंद्रा यथा देवा, अविशेषमहमहमिति मन्यमानाः ।

ईशते एकैकमिंद्रा, इव इन्द्रियाणि जानीहि ॥१६४॥

टीका - जैसे ग्रैवेयकादिक विषे उपजे, ऐसे अहमिंद्र देव; ते चाकर ठाकुर के (सेवक स्वामी के) भेद रहित 'मै ही मै हौ' ऐसे मानते सते, जुदे-जुदे एक-एक होइ, आज्ञादिक करि पराधीनताते रहित होते सते, ईश्वरता कौ धरै है । प्रभाव कौ धरै हैं । स्वामीपना कौ धरै है । तैसे स्पर्शनादिक इन्द्रिय भी अपने-अपने स्पर्शादिविषय विषे ज्ञान उपजावने विषे कोई किसी के आधीन नाही, जुदे-जुदे एक-एक इन्द्रिय पर की अपेक्षा रहित ईश्वरता कौ धरै है । प्रभाव कौ धरै है । ताते अहमिंद्रवत् इन्द्रिय है । ऐसे समानतारूप निरुक्ति करि सिद्ध भया, ऐसा इन्द्रिय शब्द का अर्थ कौं हे शिष्य ! तू जानि ।

आगे इन्द्रियनि के भेद स्वरूप कहै है—

अदिआवरणखओवसमुत्थविसुद्धी हु तज्जबोहो वा ।

भाविंदियं तु द्रव्यं, देहोदयजदेहचिहं तु ॥१६५॥

मत्यावरणक्षयोपशमोत्थविशुद्धिर्हि तज्जबोधो वा ।

भावोदियं तु द्रव्यं, देहोदयजदेहचिह्नं तु ॥१६५॥

टीका - इंद्रिय दोय प्रकार है - एक भावेन्द्रिय, एक द्रव्येन्द्रिय ।

तहां लब्धि-उपयोगरूप तौ भावेन्द्रिय है । तहां मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै भई जो विशुद्धता इंद्रियनि के जे विषय, तिनके जानने की शक्ति जीव के भई, सो ही है लक्षण जाका, सो लब्धि कहिए ।

वहुरि मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै निपज्या ज्ञान, विषय जानने का प्रवर्तनरूप सो, उपयोग कहिए । जैसे किसी जीव के सुनने की शक्ति है । परंतु उपयोग कहीं और जायगां लागि रह्या है, सो विना उपयोग किछु सुनै नाही । वहुरि कोऊ जान्या चाहै है अरु क्षयोपशम शक्ति नाही, तौ कैसे जानै ? तातै लब्धि अरु उपयोग दोऊ मिलै विषय का ज्ञान होइ । तातै इनिकौं भावेन्द्रिय कहिए ।

भाव कहिए चेतना परिणाम, तीहिस्वरूप जो इंद्रिय, सो भावेन्द्रिय कहिए ।

जातै इंद्र जो आत्मा, ताका जो लिंग कहिए चित्त, सो इंद्रिय है । अैसी निश्क्ति करि भी लब्धि-उपयोगरूप भावेन्द्रिय का ही दृढपनां हो है ।

वहुरि निर्वृत्ति अरु उपकरण रूप द्रव्येन्द्रिय है । तहां जिनि प्रदेशनि करि विषयनि कौ जानै, सो निर्वृत्ति कहिए । वहुरि वाके सहकारी निकटवर्ती जे होइ, तिनिकौ उपकरण कहिए । सो जातिनामा नामकर्म के उदय सहित शरीरनामा नामकर्म के उदयतै निपज्या जो निर्वृत्ति-उपकरणरूप देह का चित्त, एकेन्द्रियादिक का शरीर का यथायोग्य अपने-अपने ठिकाने आकार का प्रकट करनहारा पुद्गल द्रव्य-स्वरूप इंद्रिय, सो द्रव्येन्द्रिय है । जैसे इंद्रिय द्रव्य-भाव भेद करि दोय प्रकार है । तहां लब्धि-उपयोग भावेन्द्रिय है ।

तहां विषय के ग्रहण करने की शक्ति, सो लब्धि है । अरु विषय के ग्रहणरूप व्यापार, सो उपयोग है ।

अथ इंद्रिय शब्द ५	लक्षण	
१. लब्धि	१. ३।	५। प्रति जो प्रवर्तै,
सो प्रत्यक्ष कहिए	५	।
वहिए, व्यापार		५।



इहां तर्क — जो इस लक्षण विषे विशेष के अभाव तै तिन इंद्रियनि के संकर व्यतिकररूप करि प्रवृत्ति प्राप्त होय; जो परस्पर इंद्रियनि का स्वभाव मिलि जाय, सो संकर कहिए । अपने स्वभावतै जुदापना का होना, सो व्यतिकर कहिए ।

तहां समाधान — जो इहां 'प्रत्यक्षे नियमिते रतानि इंद्रियाणि' अपने-अपने नियमरूप प्रत्यक्ष विषे जे रत, ते इंद्रिय है, अैसा लक्षण का प्रतिपादन है । तातै नियमरूप कहने करि अपना-अपना विशेष का ग्रहण भया । अथवा सकर व्यतिकर दोष निवारणे के अर्थ 'स्वविषयनिरतानि इंद्रियाणि' स्वविषय कहिए अपना-अपना विषय, तिहि विषे 'नि' कहिए निश्चय करि-निर्णय करि रतानि कहिए प्रवर्तै, ते इंद्रिय है, अैसा कहना ।

इहां तर्क — जो संशय, विपर्यय विषे निर्णयरूप रत नाही है । तातै इस लक्षण करि संशय, विपर्ययरूप विषय ग्रहण विषे आत्मा कै अतीन्द्रियपना होइ ।

तहां समाधान — जो रूढि के बल तै निर्णय विषे वा संशय विपर्यय विषे दोऊ जायगा तिस लक्षण की प्रवृत्ति का विरोध नाही । जैसे 'गच्छतीति गो' गमन करै, ताहि गो कहिए; सो समभिरूढ-नय करि गमन करतै वा शयनादि करतै भी गो कहिए । तैसे इहां भी जानना । अथवा 'स्ववृत्तिनिरतानि इंद्रियाणि' स्ववृत्ति कहिए संशय, विपर्यय रूप वा निर्णयरूप अपना प्रवर्तन, तीहि विषे निरतानि कहिये व्यापार रूप प्रवर्तै, ते इंद्रिय है; अैसा लक्षण कहना ।

इहां तर्क — जो अैसा लक्षण कीएं अपने विषय का ग्रहण रूप व्यापार विषे जब न प्रवर्तै, तीहि अवस्था विषे अतीन्द्रियपना कहना होइ ।

तहां समाधान — अैसे नाही, जातै पूर्वे ही उत्तर दीया है । रूढि करि विषय-ग्रहण व्यापार होतै वा न होतै पूर्वोक्त लक्षण सभवै है । अथवा 'स्वार्थनिरतानि इंद्रियाणि' अर्थते कहिए जानिए, सो अर्थ, सो अपने विषे वा विषयरूप अर्थ विषे जे निरत, ते इंद्रिय है । सो इस लक्षण विषे कोऊ दोष नाही; तातै इहा किछू नर्क रूप कहना ही नाही । अथवा 'इंदनात् इंद्रियाणि' इंदनात् कहिए स्वामीपनां तै इंद्रिय है । स्पर्श, रस, गंध, वर्ण, शब्द इनिका जाननेरूप ज्ञान का आवरणभूत जे कर्म, तिनिका क्षयोपगमतै अपना-अपना विषय जाननेरूप स्वामित्व का धरै द्रव्येन्द्रिय है कारण जिनिका, ते इंद्रिय हैं । अैसा अर्थ जानना । उक्तं च—

टीका — इंद्रिय दोय प्रकार है — एक भावेन्द्रिय, एक द्रव्येन्द्रिय ।

तहां लब्धि-उपयोगरूप तौ भावेन्द्रिय है । तहां मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै भई जो विशुद्धता इंद्रियनि के जे विषय, तिनके जानने की शक्ति जीव के भई, सो ही है लक्षण जाका, सो लब्धि कहिए ।

बहुरि मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम तै निपज्या ज्ञान, विषय जानने का प्रवर्तनरूप सो, उपयोग कहिए । जैसे किसी जीव के सुनने की शक्ति है । परंतु उपयोग कही और जायगां लागि रह्या है, सो विना उपयोग किछू सुनै नाही । बहुरि कोऊ जान्या चाहै है अर क्षयोपशम शक्ति नाही, तौ कैसे जानै ? तातै लब्धि अर उपयोग दोऊ मिलै विषय का ज्ञान होंइ । तातै इनिकौं भावेन्द्रिय कहिए ।

भाव कहिए चेतना परिणाम, तीहिस्वरूप जो इंद्रिय, सो भावेन्द्रिय कहिए ।

जातै इंद्र जो आत्मा, ताका जो लिग कहिए चित्त, सो इंद्रिय है । अैसे निरुक्ति करि भी लब्धि-उपयोगरूप भावेन्द्रिय का ही दृढपनां हो है ।

बहुरि निर्वृत्ति अर उपकरण रूप द्रव्येन्द्रिय है । तहां जिनि प्रदेशनि करि विषयनि कौ जानै, सो निर्वृत्ति कहिए । बहुरि बाके सहकारी निकटवर्ती जे होंइ, तिनिकौं उपकरण कहिए । सो जातिनामा नामकर्म के उदय सहित शरीरनामा नामकर्म के उदयतै निपज्या जो निर्वृत्ति-उपकरणरूप देह का चित्त, एकेन्द्रियादिक का गरीर का यथायोग्य अपने-अपने ठिकाने आकार का प्रकट करनहारा पृथगल द्रव्य-स्वरूप इंद्रिय, सो द्रव्येन्द्रिय है । अैसे इंद्रिय द्रव्य-भाव भेद करि दोय प्रकार है । तहां लब्धि-उपयोग भावेन्द्रिय है ।

तहा विषय के ग्रहण करने की शक्ति, सो लब्धि है । अर विषय के ग्रहणरूप व्यापार, सो उपयोग है ।

अब इंद्रिय शब्द की निरुक्ति करि लक्षण कहै हैं—

‘प्रत्यक्षनिरतानि इंद्रियाणि’ अक्ष कहिए इन्द्रिय, सो अक्ष अक्ष प्रति जो प्रवर्तै, सो प्रत्यक्ष कहिए । अैसा प्रत्यक्षरूप विषय अथवा इंद्रिय ज्ञान तिहि विषे निरतानि रहि, व्यापार रूप प्रवर्तै, ते इंद्रिय है ।

टीका - एकेन्द्रिय जीव के स्पर्शन इन्द्रिय के विषय का क्षेत्र, बीस की कृति (वर्ग) चारि सै धनुष प्रमाण जानना । वहरि वेइन्द्रियादिक असैनी पंचेन्द्रिय पर्यंत के दूणां-दूणा जानना, सो द्वीन्द्रिय के आठ सै धनुष । त्रीन्द्रिय के सोला सै धनुष । चतुरिन्द्रिय के बत्तीस सै धनुष । असैनी पंचेन्द्रिय के चोसठि सै धनुष-स्पर्शन इन्द्रिय का विषय-क्षेत्र जानना । इतना-इतना क्षेत्र पर्यंत तिष्ठता जो स्पर्शनरूप विषय ताकी जानै ।

वहरि द्वीन्द्रिय जीव के रसना इन्द्रिय का विषय-क्षेत्र, आठ की कृति चौसठि धनुष प्रमाण जानना । आगे दूणां-दूणां, सो तेइन्द्रिय के एक सौ अठाईस धनुष । चतुरिन्द्रिय के दोय सै छप्पन धनुष । असैनी पंचेन्द्रिय के पाच सै वारा धनुष-रसना इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण जानना ।

वहरि ते इन्द्रिय के घ्राण इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र दण की कृति, सौ धनुष प्रमाण जाना । आगे दूणां-दूणां सो, चौइंद्री के दोय सै धनुष । असैनी पंचेन्द्रिय के चारि सै धनुष । घ्राण इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र का प्रमाण जानना ।

वहरि चौ इन्द्रिय के नेत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र छियालीस घाटि तीन हजार योजन जानना । यातें दूणां पांच हजार नौ सै आठ योजन असैनी पंचेन्द्रिय के नेत्र इन्द्रिय का विषयभूत क्षेत्र जानना । वहरि असैनी पंचेन्द्रिय के श्रोत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र का परिमाण आठ हजार धनुष प्रमाण जानना ।

सण्णस्स बार सोदे, तिण्हं णव जोयणाणि चक्षुस्स ।

सत्तेतालसहस्सा बेसदत्तेसट्ठमदिरेया ॥ १६८ ॥

संजिनो द्वादश श्रोत्रे, त्रयाणां नव योजनानि चक्षुषः ।

सप्तचत्वारिंशत्सहस्राणि द्विंशत्त्रिषष्ट्यनिरेकाणि ॥ १६९ ॥

टीका - सैनी पंचेन्द्रिय के स्पर्शन, रसना, घ्राण इनि तीनी इन्द्रियनि का नव-नव योजन विषय क्षेत्र है । वहरि नेत्र इन्द्रिय का विषय क्षेत्र सैतालीस हजार दोय सै नरेमठि योजन, वहरि सात योजन का बोसवां भागकरि अधिक है । वहरि श्रोत्र इन्द्रिय का विषयक्षेत्र बारह योजन है ।

तिणिसयसट्ठिविरहिद, लक्खं दशमूलताडिदे मूलं ।  
णवगुणिदे सट्ठिहिदे, चक्खुप्फासस्स अद्धाणं ॥१७०॥

त्रिशतषष्टिविरहितलक्षं दशमूलताडिते मूलम् ।  
नवगुणिते षष्टिहते, चक्षुःस्पर्शस्य अध्वा ॥१७०॥

टीका — सूर्य का चार ( भ्रमण ) क्षेत्र पांच सै बारा योजन चौड़ा है, तामै एक सै अस्सी योजन तौ जबूद्वीप विषै है । अर तीन सै बत्तीस योजन लवण समुद्र विषै है । सो जब सूर्य श्रावण मास कर्कसंक्रांति विषै अभ्यंतर परिधि विषै आवै, तब जंबूद्वीप का अन्त सौ एक सौ अस्सी योजन उरै भ्रमण करै है, सो इस अभ्यंतर परिधि का प्रमाण कहै हैं — लाख योजन जंबूद्वीप का व्यास में सौ दोनों तरफ का चार क्षेत्र का परिमाण तीन सै साठि योजन घटाया, तब निन्याणवै हजार छ सै च्यालीस योजन व्यास रह्या । याका परिधि के निमित्त 'विक्रंभवग्गदहगुण' इत्यादि सूत्र अनुसारि याका वर्ग करि ताकौ दश गुणा कहिए, पीछै जो परिमाण होइ, ताका वर्गमूल ग्रहण कीजिए, यों करतै तीन लाख पन्द्रह हजार निवासी योजन प्रमाण याका परिधि भया, सो दोय सूर्यनि की अपेक्षा साठि मुहूर्त में इतने क्षेत्र विषै भ्रमण होइ, तौ अभ्यंतर परिधि विषै दिन का प्रमाण अठारह मुहूर्त, सो मध्याह्न समय सूर्य मध्य आवै तब अयोध्या की बराबर होइ; तातै नौ मुहूर्त मै कितने क्षेत्र में भ्रमण होइ, असै त्रैराशिक करना । इहां प्रमाणराशि साठि ( ६० ), फलराशि ( ३१५,०८६ ), इच्छाराशि ६ स्थापि, उस परिधि के प्रमाण कौ नौ करि गुणे, साठि का भाग दीजिए, तहां लब्ध प्रमाण सैतालीस हजार दोय सै त्रैसठि योजन अर सात योजन का बीसवां भाग इतना चक्षु इन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय क्षेत्र जानना ।

भावार्थ याका यह है — जो अयोध्या का चक्री अभ्यंतर परिधि विषै तिष्ठता सूर्य कौ इहातै पूर्वोक्त प्रमाण योजन परै देखै है । तातै इतना चक्षु इन्द्रिय का उत्कृष्ट विषय क्षेत्र कह्या है ।

एकेन्द्रियादि पचन्द्रिय जीवनि के स्पर्शनादि इन्द्रियनि के उत्कृष्ट विषय ज्ञान का यत्र

इन्द्रियनि के नाम	एकेन्द्रिय	द्विन्द्रिय	त्रीन्द्रिय	चतुरिन्द्रिय		असंज्ञी पचन्द्रिय		संज्ञी पचन्द्रिय
०	धनुष	धनुष	धनुष	धनुष	योजन	धनुष	योजन	योजन
स्पर्शन	४००	८००	१६००	३२००	०	६४००	०	६
रसन	०	६४	१२८	२५६	०	५१२	०	६
घ्राण	०	०	१००	२००	०	४००	०	६
चक्षु	०	०	०	०	२६५४	०	५६०८	४७२६३।७ प्रमाण २० योजन
श्रोत्र	०	०	०	०	०	८०००	०	१२

आगे इन्द्रियनि का आकार कहै है—

चक्षुः सोढं घ्राणं, जिह्वायारं मसूरजवणात्ती ।

अतिमुक्तखुरप्पसमं, फासं तु अणोयसंठाणं ॥१७१॥

चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वाकारं मसूरयवनाल्यः ।

अतिमुक्तक्षुरप्पसमं, स्पर्शनं तु अनेकसंस्थानम् ॥१७२॥

टोका — चक्षु इंद्री ती मसूर की दालि का आकार है । वहरि श्रोत्र इंद्री जव की जो नाली, तीहिके आकार है । वहरि घ्राण इन्द्रिय अतिमुक्तक जो कदब का फूल, ताके आकार है । वहरि जिह्वा इन्द्रिय खुरपा के आकार है । वहरि स्पर्शन इन्द्रिय अनेक आकार है जातें पृथ्वी आदि जीवनि का शरीर का आकार अनेक प्रकार का है त स्पर्शन भी आकार अनेक प्रकार कह्या, जातें स्पर्शन है

आगै निर्वृत्तिरूप द्रव्येन्द्रिय स्पर्शनादिकनि का आकार कह्या, सो कितने-कितने क्षेत्र प्रदेश कौ रोकै—असै अवगाहना का प्रमाण कहै है —

अंगुलअसंखभागं, संखेज्जगुणं तदो विसेसहियं ।

ततो असंखगुणिदं, अंगुलसंखेज्जयं तत्तु ॥१७२॥

अंगुलासंख्यभागं, संख्यातगुणं ततो विशेषाधिकं ।

ततोऽसंख्यगुणितमंगुलसंख्यातं तत्तु ॥ १७२ ॥

टीका — घनांगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण आकाश प्रदेशनि कौ चक्षु इन्द्रिय रोकै है । सो घनांगुल कौ पत्य का असख्यातवा भाग करि तौ गुणीए अर एक अधिक पत्य का असख्यातवां भाग का अर दोय वार सख्यात का अर पत्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये, जो प्रमाण आवै, तितना चक्षु इन्द्रिय की अवगाहना है । बहुरि यातै सख्यातगुणा श्रोत्र इन्द्रिय की अवगाहना है । यहां इस गुणकार करि एक बार संख्यात के भागहार का अपवर्तन करना । बहुरि याको पत्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना उस ही श्रोत्रइन्द्रिय की अवगाहना विषै मिलाए, घ्राण इन्द्रिय की अवगाहना होइ । सो इहा इस अधिक प्रमाण करि एक अधिक पत्य का असख्यातवा भाग का भागहार अर पत्य का असख्यातवा भाग गुणकार का अपवर्तन करना । बहुरि याकौ पत्य का असख्यातवां भाग करि गणीए, तब जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना होइ । इस गुणकार करि पत्य का असख्यातवां भागहार का अपवर्तन करना । ऐसै यहु जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना घनांगुल के सख्यातवे भाग मात्र जानना ।

आगै स्पर्शन इन्द्रिय के प्रदेशनि की अवगाहना का प्रमाण कहै है —

सुहसणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स तदियसमयहि ।

अंगुलअसंखभागं, जहण्णसुक्कस्सयं सच्छे ॥१७३॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य तृतीयसमये ।

अंगुलासंख्यभागं, जघन्यनुत्कृष्टकं सत्स्ये ॥१७३॥

टीका — स्पर्शन इन्द्रिय की जघन्य अवगाहना सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक के उपजनै तै तीसरा समय विषै जो जघन्य शरीर का अवगाहना घनांगुल के

एकेंद्रियादि पचन्द्रिय जीवनि के स्पर्शनादि इन्द्रियनि के उत्कृष्ट विषय ज्ञान का यत्र

इन्द्रियनि के नाम	एकेंद्रिय	द्वीन्द्रिय	त्रीन्द्रिय	चतुरिन्द्रिय	असंज्ञी पचेंद्रिय	संज्ञी पचेंद्रिय		
०	धनुष	धनुष	धनुष	धनुष	योजन	धनुष	योजन	योजन
स्पर्शन	४००	८००	१६००	३२००	०	६४००	०	६
रसन	०	६४	१२८	२५६	०	५१२	०	६
घ्राण	०	०	१००	२००	०	४००	०	६
चक्षु	०	०	०	०	२६५४	०	५६०८	४७२६३। ७ प्रमाण २० योजन
श्रोत्र	०	०	०	०	०	८०००	०	१२

आगे इन्द्रियनि का आकार कहै है—

चक्षुः सोढं घ्राणं, जिह्वायारं मसूरजवणाली ।

अतिमुक्तक्षुरप्रसमं, फासं तु अणोयसंठाणं ॥१७१॥

चक्षुःश्रोत्रघ्राणजिह्वाकारं मसूरयवणालयः ।

अतिमुक्तक्षुरप्रसमं, स्पर्शनं तु अनेकसंस्थानम् ॥१७२॥

टोका — चक्षु इन्द्री तो मसूर की दालि का आकार है । वहुनि श्रोत्र इन्द्री मूँ की जों नानी, तीहिके आकार है । वहुनि घ्राण इन्द्रिय अतिमुक्तक जो कदब का फास, नाके आकार है । वहुनि जिह्वा इन्द्रिय खुरपा के आकार है । वहुनि स्पर्शन इन्द्रिय अनेक आकार है । जातै पृथ्वी आदि वा वेद्री आदि जीवनि का शरीर का आकार अनेक प्रकार है । तातें स्पर्शन इन्द्रिय का भी आकार अनेक प्रकार कह्या, तातें स्पर्शन इन्द्रिय सर्व शरीर विषे व्याप्त है ।

आगे निर्वृत्तिरूप द्रव्येद्रिय स्पर्शनादिकनि का आकार कह्या, सो कितने-कितने क्षेत्र प्रदेश कौ रोकै—अैसा अवगाहना का प्रमाण कहै है —

**अंगुलअसंखभागं, संखेज्जगुणं तदो विसेसहियं ।**

**ततो असंखगुणिदं, अंगुलसंखेज्जयं तत्तु ॥१७२॥**

**अंगुलासंख्यभागं, संख्यातगुणं ततो विशेषाधिक ।**

**ततोऽसंख्यगुणितमंगुलसंख्यातं तत्तु ॥ १७२ ॥**

टीका — घनांगुल के असख्यातवे भाग प्रमाण आकाश प्रदेशनि कौ चक्षु इन्द्रिय रोकै है । सो घनांगुल कौ पत्य का असख्यातवा भाग करि तौ गुणीए अर एक अधिक पत्य का असख्यातवा भाग का अर दोय वार सख्यात का अर पत्य का असख्यातवा भाग का भाग दीजिये, जो प्रमाण आवै, तितना चक्षु इन्द्रिय की अवगाहना है । बहुरि यातै संख्यातगुणा श्रोत्र इन्द्रिय की अवगाहना है । यहां इस गुणकार करि एक बार संख्यात के भागहार का अपवर्तन करना । बहुरि याको पत्य का असख्यातवा भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना उस ही श्रोत्रइन्द्रिय की अवगाहना विषे मिलाए, घ्राण इन्द्रिय की अवगाहना होइ । सो इहा इस अधिक प्रमाण करि एक अधिक पत्य का असख्यातवा भाग का भागहार अर पत्य का असख्यातवा भाग गुणकार का अपवर्तन करना । बहुरि याकौ पत्य का असख्यातवा भाग करि गणीए, तब जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना होइ । इस गुणकार करि पत्य का असंख्यातवा भागहार का अपवर्तन करना । ऐसै यहु जिह्वा इन्द्रिय की अवगाहना घनांगुल के सख्यातवे भाग मात्र जानना ।

आगे स्पर्शन इन्द्रिय के प्रदेशनि की अवगाहना का प्रमाण कहै है —

**सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स तदियसमयहि ।**

**अंगुलअसंखभागं, जहण्णमुक्कस्सयं मच्छे ॥१७३॥**

**सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य तृतीयसमये ।**

**अंगुलासंख्यभागं, जघन्यनुत्कृष्टक्रं भत्स्ये ॥१७३॥**

टीका — स्पर्शन इन्द्रिय की जघन्य अवगाहना सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक के उपजनै तै तीसरा समय विषे जो जघन्य शरीर का अवगाहना घनांगुल के



असंख्यातवै भाग मात्र हो है, सोइ है । बहुरि उत्कृष्ट अवगाहना स्वयंभू रमण समुद्र विषे महामच्छ का उत्कृष्ट शरीर संख्यात घनागुल मात्र हो है, सो है -

आगे इन्द्रियज्ञानवाले जीवनि कौ कहि । अब अतीन्द्रिय ज्ञानवाले जीवनि का निरूपण करे है -

ण वि इन्द्रियकरणजुदा, अवग्रहादीहिं गाह्या अत्थे ।  
एव य इन्द्रियसौख्या, अणिन्द्रियाणंतणाणसुहा<sup>१</sup> ॥१७४॥

नापि इन्द्रियकरणयुता, अवग्रहादिभिः ग्राहकाः अर्थे ।

नैव च इन्द्रियसौख्या, अणिन्द्रियानंतज्ञानसुखाः ॥१७४॥

टीका - जे जीव नियम करि इन्द्रियनि के करण भोहै टिमकारना आदि व्यापार, तिनिकरि संयुक्त नाही है, तातै ही अवग्रहादिक क्षयोपशम ज्ञान करि पदार्थ का ग्रहण न करै है । बहुरि इन्द्रियजनित विषय संबंध करि निपज्या सुख, तिहिकरि संयुक्त नाही है, ते अर्हत वा सिद्ध अतीन्द्रिय अनंत ज्ञान वा अतीन्द्रिय अनंत सुखकरि विराजमान जानने; जातै तिनिका ज्ञान अर सुख सो शुद्धात्मतत्त्व की उपलब्धि तै उत्पन्न भया है ।

आगे एकेन्द्रियादि जीवनि की सामान्यपनै संख्या कहै है -

स्थावरसंखपिपीलिय, भ्रमरमणुस्सादिगा सभेदा जे ।  
जुगवारमसंखेज्जा, एंताएंता णिगोदभवा ॥१७५॥

स्थावरसंखपिपीलिकाभ्रमरमणुष्यादिकाः सभेदा ये ।

युगवारमसंख्येया, अनंतानंता निगोदभवाः ॥१७५॥

टीका - स्थावर जो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पती ए - पंच प्रकार तौ एकेद्री । बहुरि संख, कौडी, लट इत्यादि बेद्री । बहुरि कीडी, मकोडा इत्यादि तेद्री । बहुरि भ्रमर, माखी, पतंग इत्यादि चौ इन्द्री । बहुरि मणुष्य, देव, नारकी अर जलचरादि तिर्यच, ते पंचेद्री । ए जुदे-जुदे एक-एक असंख्यातासंख्यात प्रमाण हैं । बहुरि निगोदिया जो साधारण वनस्पती रूप एकेद्री ते अनंतानत है ।

१. पद्मटागम - घवना पुस्तक १, पृष्ठ २५१, गाथा १४० ।

है — आगे विशेष संख्या कहै है । तहां प्रथम ही एकेद्रिय जीवनि की संख्या कहै है —

**तसहीणो संसारी, एयक्खा ताण संखगा भागा ।**

**पुण्णाणं परिमाणं, संखेज्जदिमं अपुण्णाणं ॥१७६॥**

**त्रसहीनाः संसारिणः, एकाक्षाः तेषां संख्यका भागाः ।**

**पूर्णानां परिमाणं, संख्येयकमपूर्णानाम् ॥ १७६ ॥**

टीका — सर्व जीव-राशि प्रमाण मै स्यों सिद्धनि का प्रमाण घटाए, संसारी-राशि होइ । सोइ संसारी जीवनि का परिमाण मै स्यौ त्रस जीवनि का परिमाण घटाएं, एकेद्रिय जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि तीहि एकेद्रिय जीवनि का परिमाण कौ संख्यात का भाग दीजिये, तामै एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त एकेद्रियनि का परिमाण है । बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण पर्याप्त एकेद्रियनि का परिमाण है ।

आगे एकेद्रियनि के भेदनि की संख्या का विशेष कहै है —

**बादरसुहमा तेसिं पुण्णापुण्णे त्ति छव्विहाणं पि ।**

**तत्कायमगगणाये, भणिज्जमाणक्कमो रोयो ॥१७७॥**

**बादरसूक्ष्मास्तेषां, पूर्णापूर्णा इति षड्विधानामपि ।**

**तत्कायमार्गणायां, भणिष्यमाणक्रमो ज्ञेयः ॥१७७॥**

टीका — सामान्य एकेद्रिय राशि के बादर अर सूक्ष्म ए दोय भेद । बहुरि एक-एक भेद के पर्याप्त — अपर्याप्त ए दोय-दोय भेद — अैसे च्यारि भए, तिनिका परिमाण आगे कायमार्गणा विषे कहिएगा, सो अनुक्रम जानना सो कहिए है । सामान्य पनै एकेद्रिय का जो परिमाण, ताकौ असंख्यात लोक का भाग दीजिए, तामै एक भाग प्रमाण तौ बादर एकेद्रिय जानने । अर अवशेष बहुभाग प्रमाण सूक्ष्म एकेद्रिय जानने । बहुरि बादर एकेद्रियनिके परिमाण कौ असंख्यात लोक का भाग दीजिए । तामै एक भाग प्रमाण तौ पर्याप्त है । अर अवशेष बहुभाग प्रमाण अपर्याप्त है । बहुरि सूक्ष्म एकेद्रिय का परिमाण कौ संख्यात का भाग दीजिए, तामै एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त है । बहुरि अवशेष भाग प्रमाण पर्याप्त है । बादर विषे तौ पर्याप्त थोरे है; अपर्याप्त घने है । बहुरि सूक्ष्म विषे पर्याप्त घने है, अपर्याप्त थोरे है; अैसा भेद जानना ।

आगे त्रस जीवनि की सख्या तीन गाथानि करि कहै है—

ब्रित्तिचपसाणमसंखेणवह्निदपदरंगुलेण हिदपदरं ।

हीणकसं पडिभागो, आवलियासंखभागो दु ॥१७८॥

द्वित्रिचतुः पंचमानमसंख्येनावहितप्रतरांगुलेनहितप्रतरम् ।

हीनक्रमं प्रतिभाग, आवलिकासंख्यभागस्तु ॥१७८॥

टीका - द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय - इनि सर्व त्रसनि का मिलाया हुआ प्रमाण, प्रतरांगुल कौ असंख्यात का भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीएं यो करतै जितना होइ, तितना जानना । इहां द्वीन्द्रिय राशि का प्रमाण सर्वतै अधिक है । वहुरि तातै त्रीन्द्रिय विशेष घाटि है । तातै चौइन्द्रिय विशेष घाटि है । तातै पंचेन्द्रिय विशेष घाटि है, सो घाटि कितने-कितने है - अइसा विशेष का प्रमाण जानने के निमित्त भागहार अर भागहार का भागहार आवली का असंख्यातवां भाग मात्र जानना ।

सो भागहार का अनुक्रम कैसे है ? सो कहिये है—

बहुभागे समभागो, चउण्णमेदोक्षिमेदकभागहि ।

उत्तकसो तत्थ वि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥१७९॥

बहुभागे समभागश्चतुर्णामेतेषामेकभागे ।

उत्तक्रमस्तत्रापि बहुभागो बहुकस्य देयरतु ॥१७९॥

टीका - त्रस जीवनि का जो परिमाण कहा, तीहिने आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिये । तामै एक भाग तौ जुदा राखिये अर जे अवशेष बहु भाग रहे, निनिके च्यारि वट (वटवारा) कीजिये, सो एक-एक वट द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रियनि की वगैरि दीजिये । वहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताका आवली का असंख्यातवां भाग कौ भाग दीजिये । तामै एक भाग तौ जुदा राखिए अर अवशेष बहुभाग द्वीन्द्रियनि कौ दीजिये । जातै सर्व विषे बहुत प्रमाण द्वीन्द्रिय का है । वहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताका वहुरि आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए । तामै एक भाग तौ जुदा राखिये, वहुरि अवशेष भाग त्रीन्द्रियनि कौ दीजिए । वहुरि जो एक भाग जुदा राख्या था, ताका वहुरि आवली

का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिये । तामै बहु भाग तौ चौइद्रियनि कौ दीजिए । अर एक भाग पचेन्द्रिय कौ दीजिए । अैसे दीएं हूवे परिमाण कहै, ते नीचै स्थापिए । बहुरि पूर्वे जे बराबरि च्यारि बट किए थे, तिनिकौ ऊपरि स्थापिए । बहुरि अपने-अपने नीचै ऊपरि के परिमाण कौ मिलाएं, द्वीद्रियादि जीवनि का परिमाण हो है ।

**तिबिपचपुण्णपमाणं, पदरंगुलसंखभागहिदपदरं ।**

**हीणकमं पुण्णूणा, बितिचपजीवा अपज्जत्ता ॥१८०॥**

त्रिद्विपंचचतुः पूर्णप्रमाणं, प्रतरांगुलासंख्यभागहितप्रतरम् ।

हीनक्रमं पूर्णोत्ता, द्वित्रिचतुः पंचजीवा अपर्याप्ताः ॥१८०॥

टीका — बहुरि पर्याप्ति त्रसजीव प्रतरांगुल का संख्यातवां भाग का भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो परिमाण आवै, तितने है, तिति विषै घने तौ तेइंद्रिय है । तीहिस्यो घाटि द्वीद्रिय है । तिहिस्यों घाटि पचेन्द्रिय है । तिहिसौ घाटि चौइंद्रिय है, सो इहां भी पूर्वोक्त 'बहुभागे समभागो' इत्यादि सूत्रोक्त प्रकार करि सामान्य पर्याप्ति त्रस-राशि कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि अवशेष बहुभागनि के च्यारि समान भाग करि, एक-एक भाग तेद्री, बेद्री, पंचेद्री, चौद्रीनि कौ दैनां । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार आवली का असंख्यातवां भाग का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग तेइंद्रियनि कौ देना । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग द्वीद्रियनि कौ दैनां । बहुरि तिस एक भाग कौ भागहार का भाग देइ, एक भाग जुदा राखि, बहुभाग पचेन्द्रियनि देना । अर एक भाग चौइंद्रियनि कौ देना । अैसे अपना-अपना समभाग ऊपरि स्थापि, देय भाग नीचै स्थापि, जोडै, तेद्री, आदि पर्याप्ति जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि पूर्वे जो सामान्यपनै बेइंद्रिय आदि जीवनि का प्रमाण कह्या था, तामै सौ इहा कह्या जो अपना-अपना पर्याप्ति का परिमाण सो घटाय दीए, अपना-अपना बेद्री, आदि पंचेद्री पर्यंत अपर्याप्ति जीवनि का परिमाण हो है । सो अपर्याप्तिनि विषै घने तौ बेइंद्रिय, तिहिस्यो घाटि तेइंद्रिय, तिहिसौ घाटि चौइंद्रिय, तिहिसौ घाटि पचेन्द्रिय है—अैसे इतिका परीमाण कह्या ।

## आठवां अधिकार : काय-मार्गणा प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

चंद्रप्रभ जिन कौं भजौं चंद्रकोटि सम जोति ।

जाकै केवल लब्धि नव समवसरण जुत होति ॥

अथ काय-मार्गणा कौ कहै है -

जाई अविणाभावी, तसथावरउदयजो हवे काओ ।

सो जिणमदह्नि भणिओ, पृथ्वीकायादिछब्भेओ ॥१८१॥

जात्यविनाभावित्रसस्थावरोदयजो भवेत्कायः ।

स जिनमते भणितः, पृथ्वीकायादिषड्भेदः ॥१८१॥

टीका - एकेद्रियादिक जाति नामा नामकर्म का उदय सहित जो त्र-स्थावर नामा नामकर्म का उदय करि निपज्या त्रस-स्थावर पर्याय जीव कैं होइ, सो काय कहिए । सो काय छह प्रकार जिनमत विषै कह्या है । पृथ्वीकाय १, अपकाय २, तेजकाय ३, वायुकाय ४, वनस्पतीकाय ५, त्रसकाय ६-ए छ भेद जानना ।

कायते कहिए ए त्रस है, ए स्थावरहै, अंसा कहिए, सो काय जानना । तहा जो भयादिक तैं उद्वेगरूप होइ भागना आदि क्रिया संयुक्त हो है, सो त्रस कहिए । वहुरि जो भयादिक आए स्थिति क्रिया युक्त होइ, सो स्थावर कहिए । अथवा चीयते कहिए पुद्गल स्कंधनि करि संचयरूप कीजिये, पुष्टता कौं प्राप्त कीजिए, सो काय औदारिकादि शरीर का नाम काय है । वहुरि काय विषै तिष्ठता जो आत्मा की पर्याय, ताकौ भी उपचार करि काय कहिए । जातैं जीव विपाकी जो त्रस-स्थावर प्रकृति, तिनिकैं उदय तैं जो जीव की पर्याय होइ, सो काय है । ऐसा व्यवहार की सिद्धि है । वहुरि पुद्गलविपाकी शरीर नामा नाम कर्म की प्रकृति के उदय तैं भया शरीर, ताका इहां काय गन्द करि ग्रहण नाही है ।

आगौ स्थावरकाय के पाच भेद कहै है -

**पृथ्वी आऊतेऊ, वाऊ कम्मोदयेण तत्थेव ।**

**णियवण्णच्चउक्कजुदो, तांणं देहो हवे णियमा ॥१८२॥**

**पृथिव्यप्तेजोवायुकम्मोदयेन तत्रैव ।**

**निजवर्णचतुष्कयुतस्तेषां देहो भवेन्नियमात् ॥१८२॥**

टीका - पृथ्वी, अप, तेज, वायु विशेष धरै जो नाम कर्म की स्थावर प्रकृति के भेदरूप उत्तरोत्तर प्रकृति, ताके उदय करि जीवनि के तहां ही पृथिवी, अप, तेज, वायु रूप परिणये जे पुद्गलस्कध, तिनि विषै अपने-अपने पृथिवी आदि रूप वर्णादिक चतुष्क संयुक्त शरीर नियम करि हो है । असै होतै पृथिवीकायिक, अप्कायिक, तेज-कायिक, वातकायिक जीव हो है ।

तहा पृथिवी विशेष लीए स्थावर पर्याय जिनकै होइ, ते पृथिवीकायिक कहिये । अथवा पृथिवी है काय कहिये शरीर जिनका, ते पृथिवीकायिक कहिए । असै ही अप्कायिक, तेजकायिक, वातकायिक जानने । तिर्यच गति, एकेद्री जाति औदारिक शरीर, स्थावर काय इत्यादिक नामकर्म की प्रकृतिनि के उदय अपेक्षा असी निरुक्ति सभवै है ।

बहुरि जो जीव पूर्वं पर्याय को छोड़ि, पृथ्वी विषै उपजने कौं सन्मुख भया होइ, सो विग्रह गति विषै अंतराल में यावत् रहै, तावत् वाकौं पृथ्वी जीव कहिये । जातै इहा केवल पृथिवी का जीव ही है, शरीर नाही ।

बहुरि जो पृथिवीरूप शरीर कौ धरै होइ, सो पृथिवीकायिक कहिए । जातै वहा पृथिवी का शरीर वा जीव दोऊ पाइए है ।

बहुरि जीव तौ निकसि गया होइ, वाका शरीर ही होइ, ताकौ पृथिवीकाय कहिये । जातै वहां केवल पृथिवी का शरीर ही पाइए है । असै तीन भेद जानने ।

बहुरि अन्य ग्रंथिनि विषै चारि भेद कहे है । तहां ए तीनों भेद जिस विषै गर्भित होइ, सो सामान्य रूप पृथिवी असा एक भेद जानना । जातै पूर्वोक्त तीनों भेद पृथिवी के ही है । असै ही अप्जीव, अप्कायिक, अप्काय । बहुरि तेजःजीव, तेजःकायिक, तेज.काय । बहुरि वातजीव, वातकायिक, वातकायरूप तीन-तीन भेद जानने ।

वादरसूक्ष्मोदयेण य, वादरसूक्ष्मा भवंति तद्देहा ।  
घातशरीरं स्थूलं, अघातदेहं हवे सुहृमं ॥१८३॥

वादरसूक्ष्मोदयेन च, वादरसूक्ष्मा भवंति तद्देहाः ।  
घातशरीरं स्थूलं, अघातदेहं भवेत्सूक्ष्मम् ॥१८३॥

टीका - पूर्वे कहे जे पृथिवीकायिकादिक जीव, ते वादर नामा नाम कर्म की प्रकृति के उदय तै वादर शरीर धरै, वादर हो है । वहुरि सूक्ष्म नामा नामकर्म की प्रकृति के उदय तै सूक्ष्म होइ । जातै वादर, सूक्ष्म प्रकृति जीवविपाकी हैं । तिनके उदय करि जीव कौ वादर-सूक्ष्म कहिए । वहुरि उनका शरीर भी वादर सूक्ष्म ही हो है । तहां इंद्रिय विषय का संयोग करि निपज्या सुख-दुख की ज्यों अन्य पदार्थ करि आपका घात होइ, रुकै वा आप करि और पदार्थ का घात होइ, रुकि जाय, अैसा घात शरीर ताको स्थूल वा वादर-शरीर कहिए । वहुरि जो किसी कौ घातै नाही वा आपका घात अन्य करि जाकै न होइ, अैसा अघात-शरीर, सो सूक्ष्म-शरीर कहिए । वहुरि तिनि शरीरनि के धारक जे जीव, ते घात करि युक्त है शरीर जिनिका ते घातदेह तौ वादर जानने । वहुरि अघातरूप है देह जिनका, ते अघातदेह सूक्ष्म जानने । अैसै शरीरनि कै रुकना वा न रुकना संभवै है ।

तद्देहभंगुलस्स, असंखभागस्स विद्वन्नाणं तु ।  
आधारे स्थूला ओ, सच्चत्थ गिरंतरा सुहृमा ॥१८४॥

तद्देहभंगुलस्यासंख्यभागस्य वृद्धमानं तु ।  
आधारे स्थूला ओ, सर्वत्र निरंतराः सूक्ष्माः ॥१८४॥

टीका - तिनि वादर वा सूक्ष्म पृथ्वीकायिक, अपकायिक, तेज कायिक, वातकायिक जीवनि के शरीर घनांगुल के असंख्यातवै भाग प्रमाण हैं । जातै पूर्वे जीवममानाधिकार विषे अवगाहन का कथन कीया है । तहां सूक्ष्म वायुकायिक अर्याप्तक की जघन्य शरीर अवगाहना तै लगाइ वादर पर्याप्त पृथिवीकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत वियालीस स्थान कहे, तिनि सवनि विषे घनांगुल कौ पल्य के अनंन्यातवा भाग का भागहार संभवै है । अथवा तहां ही 'वीपुण्णजहण्णोत्तिय अमं वसंगं गुणं तत्तो' इस सूत्र करि वियालीसवां स्थान कौ असंख्यात का गुणकार

कीए अगले स्थान विषे सख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहना हो है ताते तिस बियालीसवा स्थान विषे घनांगुल कौ असख्यात का भासहार प्रकट ही सिद्धि भया । तहां सूक्ष्म अपर्याप्त वातकाय की जघन्य अवगाहना वा पृथ्वीकाय बादर पर्याप्त की उत्कृष्ट अवगाहना का प्रमाण, तहां ही जीवसमासाधिकार विषे कह्या है, सो जानना । बहुरि 'आधारे थूलाओ' आधारे कहिए अन्य पुद्गलनि का आश्रय, तीहि विषे वर्तमान शरीर संयुक्त जे जीव, ते सर्व स्थूलः कहिए बादर जानने । यद्यपि आधार करि तिनके शरीर का बादर स्वभाव रुकना न हो है; तथापि नीचे गिरना रूप जो गमन, ताका रुकना हो है, सो तहां प्रतिघात संभव है । ताते पूर्वोक्त घातरूप लक्षण ही बादर शरीरनि का दृढ भया ।

बहुरि सर्वत्र लोक विषे, जल विषे वा स्थल विषे वा आकाश विषे निरंतर आधार की अपेक्षा रहित जिनके शरीर पाइए, ते जीव सूक्ष्म है । जल-स्थल रूप आधार करि तिनके शरीर के गमन का नीचे ऊपरि इत्यादि कही भी रुकना न हो है । अत्यंत सूक्ष्म परिणामन ते ते जीव सूक्ष्म कहिए है । अंतरयति कहिए अंतराल करै है, ऐसा जो अंतर कहिए आधार, ताते रहित ते निरंतर कहिए । इस विशेषण करि भी पूर्वोक्त ही लक्षण दृढ भया । 'ओ' ऐसा संबोधन पद जानना । याका अर्थ यहु— जो हे शिष्य । असै तू जानि । बहुरि यद्यपि बादर अपर्याप्त वायुकायिकादि जीवनि की अवगाहना स्तोक है । बहुरि योंते सूक्ष्म पर्याप्त वायुकायिकादिक पृथ्वीकायिक पर्यंत जीवनि की जघन्य वा उत्कृष्ट अवगाहना असख्यात गुणी है । तथापि सूक्ष्म नामकर्म के उदय की समर्थता ते अन्य पर्वतादिक ते भी तिनका रुकना न हो है; निकसि जाय है । जैसे जल का बिंदु वस्त्रते निकसि जाय; रुकै नाही, तैसे सूक्ष्म शरीर जानना ।

बहुरि बादर नामकर्म के उदय के वण ते अन्यकरि रुकना हो है । जैसे सरिसौ वस्त्र ते निकसै नाही, तैसे बादर शरीर जानना ।

बहुरि यद्यपि ऋद्धि कौ प्राप्त भए मुनि, देव इत्यादिक, तिनका शरीर बादर है; तौ भी ते वज्र पर्वतादिक ते रुकै नाही, निकसि जाय है, सो यहु तपजनित अतिशय की महिमा है, जाते तप, विद्या, सणि, मंत्र, औषधि इनिकी शक्ति के अतिशय का महिमा अचित्य है, सो दीखै है । ऐसा ही द्रव्यत्व का स्वभाव है । बहुरि स्वभाव विषे किछू तर्क नाही । यहु समस्त वादी मानै है । सो इहां अतिशयवानों का ग्रहण



नाही । तातें अतिशय रहित वस्तु का विचार विषे पूर्वोक्त शास्त्र का उपदेश ही बादर सूक्ष्म जीवनि का सिद्ध भया ।

**उदये दु वणप्फदिकम्मस्स य जीवा वणप्फदी होंति ।  
पत्तेयं सामण्णं, पदिट्ठिदिदरे त्ति पत्तेयं ॥१८५॥**

उदये तु वनस्पतिकर्मणश्च जीवा वनस्पतयो भवन्ति ।  
प्रत्येकं सामान्यं, प्रतिष्ठितेतरे इति प्रत्येकं ॥१८५॥

टीका - वनस्पती रूप विशेष कौं धरें स्थावर नामा नामकर्म की उत्तरोत्तर प्रकृति के उदय होते, जीव वनस्पतीकायिक हो है । ते दोय प्रकार - एक प्रत्येक शरीर, एक सामान्य कहिए साधारण शरीर । तहां एक प्रति नियम रूप होइ, एक जीव प्रति एक शरीर होइ, सो प्रत्येक-शरीर है । प्रत्येक है शरीर जिनिका, ते प्रत्येक-शरीर जीव जानने । बहुरि समान का भाव, सो सामान्य, सामान्य है शरीर जिनिका ते सामान्य-शरीर जीव है ।

भावार्थ- बहुत जीवनि का एक ही शरीर साधारण समानरूप होइ, सो साधारण-शरीर कहिए । असा शरीर जिनिके होइ ते साधारणशरीर जानने । तहां प्रत्येक-शरीर के दोय भेद - एक प्रतिष्ठित, एक अप्रतिष्ठित । इहां गाथा विषे इति शब्द प्रकारवाची जानना । तहां प्रत्येक वनस्पती के शरीर बादर निगोद जीवनि करि आश्रित संयुक्त होंइ, ते प्रतिष्ठित जानने । जे बादर निगोद के आश्रित होंइ, ते अप्रतिष्ठित जानने ।

**मूलगगपोरबीजा, कंदा तह खंदबीजबीजरुहा ।  
समुच्छिमा य भणिया, पत्तेयाणंतकाया य ॥१८६॥**

मूलाग्रपर्वबीजाः, कंदास्तथा स्कंधबीजबीजरुहाः ।  
सम्पूर्छिमाश्च भणिता, प्रत्येकानंतकायाश्च ॥१८६॥

टीका - जिनिका मूल जो जड़, सोइ बीज होइ, ते आदा, हलद आदि मूल-बीज जानने । बहुरि जिनिका अग्र, जो अग्रभाग सो ही बीज होंइ ते आर्यक आदि अग्रबीज जानने । बहुरि जिनिका पर्व जो पेली, सो ही बीज होंइ, ते सांठा आदि पर्वबीज जानने । बहुरि कंद है, बीज जिनिका, ते पिंडालु, सूरणा आदि कंदबीज

जानने । बहुरि स्कंध, जो पेड, सो ही है बीज जिनिका ते सालरि, पलास आदि स्कंध-बीज जानने । बहुरि जे बीज ही ते लगे ते गेहू, शालि आदि बीजरुह जानने । बहुरि जे मूल आदि निश्चित बीज की अपेक्षा ते रहित, आपै आप उपजै ते सम्मूर्छिम कहिए, समतते भए पुद्गल स्कंध, तिन विषे उपजै, अैसे दोब आदि सम्मूर्छिम जानने ।

अैसे ए कहे ते सर्व ही प्रत्येक वनस्पती है । ते अनंत जे निगोद जीव, तिनके 'कायः' कहिए शरीर जिनिविषे पाइए अैसे 'अनंतकायाः' कहिए प्रतिष्ठित-प्रत्येक है । बहुरि चकार ते अप्रतिष्ठित-प्रत्येक है । अैसे प्रतिष्ठित कहिए साधारण शरीरनि करि आश्रित है, प्रत्येक शरीर जिनका ते प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर है । बहुरि तिनकरि आश्रित नाही है, प्रत्येक-शरीर जिनिका, ते अप्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर है । अैसे ए मूलबीज आदि संमूर्छिम पर्यंत सर्व दोय-दोय अवस्था लीएं जानने । बहुरि कोऊ जानैगा कि इनिविषे संमूर्छिम कै तौ संमूर्छिम जन्म होगा, अन्यकै गर्भादिक होगा, सो नाही है । ते सर्व ही प्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीरी जीव संमूर्छिम ही है । बहुरि प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर की सर्वोत्कृष्ट भी अवगाहना घनांगुल के असंख्यात भाग मात्र ही है । ताते पूर्वोक्त आदा आदि देकरि एक-एक स्कंध विषे असंख्यात प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर पाइए है । कैसे ? घनांगुल कौ दोय बार पल्य का असंख्यातवां भाग, अर नव बार संख्यात का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ, तितने क्षेत्र विषे जो एक प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर होइ, तो संख्यात घनांगुल प्रमाण आदा, मूला आदि स्कंध विषे केते पाइए ? अैसे त्रैराशिक कीएं, लब्ध राशि दोय बार पल्य का असंख्यातवा भाग, दश बार संख्यात मांडि, परस्पर गुणै, जितना प्रमाण होइ, तितने एक-एक आदा आदि स्कंध विषे प्रतिष्ठित प्रत्येक-शरीर पाइए है । बहुरि एक स्कंध विषे अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती जीवनि के शरीर यथासंभव असंख्यात भी होंइ, वा संख्यात भी होंइ । बहुरि जेते प्रत्येक शरीर है, तितने ही तहां वनस्पती जीव जानने; जाते तहा एक-एक शरीर प्रति एक-एक ही जीव होने का नियम है ।

**बीजे जोरणीभूदे, जीवो चंकमदि सो व अण्णो वा ।**

**जे वि य मूलादीया, ते पत्तेया पढमदाए ॥१८७॥**

बीजे योनीभूते, जीवः चंकामति स वा अन्यो वा ।

येऽपि च मूलादिकास्ते प्रत्येकाः प्रथमतायाम् ॥१८७॥

टोका — बीजे कहिए पूर्वे जे कहे, मूल को आदि देकरि, बीज पर्यंत बीजजीव उपजने का आधारभूत पुद्गल स्कंध, सो योनीभूते कहिए; जिस विषे जीव उपजै असी शक्ति संयुक्त होते सतै जल वा कालादिक का निमित्त पाइ, सोई जीव वा और जीव आनि उपजै है ।

भावार्थ — पूर्वे जो बीज विषे जीव तिष्ठै था, सो जीव तौ निकसी गया अरु उस बीज विषे असी शक्ति रही जो इस विषे जीव आनि उपजै, तहां जलादिक का निमित्त होतै पूर्व जो जीव उस बीजे को अपना प्रत्येक शरीर करि पीछे अपना आयु के नाश ते मरण पाइ निकसि गयो था, सोई जीव बहुरि तिस ही अपने योग्य जो मूलादि बीज, तीहि विषे आनि उपजै है । अथवा जो वह जीव और ठिकाने उपज्या होइ, तौ इस बीज विषे अन्य कोई शरीरांतर विषे तिष्ठता जीव अपना आयु के नाश ते मरण पाइ, आनि उपजै है । किंचु विरोध नाही ।

जैसे गेहू विषे जीव था, सो निकसि गया । बहुरि याकौ बोया, तब उस ही विषे सोई जीव वा अन्य जीव आनि उपज्या; सो यावत् काल जीव उपजने की शक्ति होइ तावत् काल योनीभूत कहिए । बहुरि जब उगने की शक्ति न होइ तब अयोनीभूत कहिए, असा भेद जानना । बहुरि जे मूलतै आदि देकरि वनस्पति काय प्रत्येक रूप प्रतिष्ठित प्रसिद्ध हैं । तेऊ प्रथम अवस्था विषे जन्म के प्रथम समय तै लगाइ अतर्महर्त काल पर्यंत अप्रतिष्ठित प्रत्येक ही रहै है । पीछे निगोदजीव जब आश्रय करै है, तब सप्रतिष्ठित प्रत्येक होय है ।

आगे श्री माध्वचंद्र नामा आचार्य त्रैविद्यदेव सो सप्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित जीवनि का विशेष लक्षण तीन गाथानि करि कहै है—

गूढसिरसंधिपर्व, समभंगमहीरुहं (यं) च छिण्णरुहं ।  
साधारणं शरीरं, तद्विवरीयं च पत्तयेयं ॥१८८॥

गूढशिरासंधिपर्व, समभंगमहीरुहं च छिन्नरुहम् ॥  
साधारणं शरीरं, तद्विवरीयं च प्रत्येकम् ॥१८८॥

टोका — जिस प्रत्येक वनस्पती शरीर का सिरा, सवि, पर्व, गूढ होइ; बाह्य नाम नहीं, तहा सिरा तौ लवी लकीरसी जैसे कांकडी विषे होइ । बहुरि संधि बीच

में छेहा जैसे दाड्यौ वा नारंगी विषै हो है । बहुरि पर्व, गांठि जैसे साठा विषै हो है, सो कच्ची अवस्था विषै जाके ए बाह्य दीखै नाही, ऐसा वनस्पती बहुरि समभंग कहिए जाका टूक ग्रहण कीजिये, तो कोऊ तातू लगा न रहै, समान बराबरि टूटे असा । बहुरि अहीरुहं कहिए जाके विषै सूत सारिखा तातू न होइ असा । बहुरि छिन्नरुहं कहिए जो काट्या हुवा ऊगै असा वनस्पती सो साधारण है । इहा प्रतिष्ठित प्रत्येक साधारण जीवनि करि आश्रित की उपचार करि साधारण कह्या है । बहुरि तद्विपरीतं कहिये पूर्वोक्त गूढ, सिरा आदि लक्षण रहित नालियर, आम्रादि शरीर अप्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर जानना । गाथा विषै कह्या है जो चकार सो इस भेद कौं सूचै है ।

**मूले कंदे छल्ली, पवाल सालदलकुसुम फलबीजे ।**

**समभंगे सदि एंता, असमे सदि होंति पत्तेया ॥१८६॥**

मूले कंदे त्वक्प्रवालशालादलकुसुमफलबीजे ।

समभंगे सति नांता, असमे सति भवंति प्रत्येकाः ॥१८९॥

टीका — मूल कहिये जड़, कंद कहिये पेड़, छल्ली कहिए छालि, प्रवाल कहिए कोपल, अकुरा; शाला कहिए छोटी डाहली, शाखा कहिए बडी डाहली, दल कहिए पान, कुसुम कहिए फूल, फल कहिए फल, बीज कहिये जातै फेरि उपजै, सो बीज; सो ए समभग होइ, तो अनत कहिए; अनतकायरूप प्रतिष्ठित प्रत्येक है । बहुरि जो मूल आदि वनस्पती समभग न होइ, सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है । जीहि वनस्पति का मूल, कंद, छाल इत्यादिक समभग होइ, सो प्रतिष्ठित प्रत्येक है । अर जाका समभग न होइ सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है । तोडचा थका तांतू कोई लग्या न रहै, बराबरि टूटे, सो समभंग कहिए ।

**कंदस्स व मूलस्स व, सालाखंदस्स वावि बहुलतरी ।**

**छल्ली साणंतजिया, पत्तेयजिया तु तणुकदरी ॥१८०॥**

कंदस्य वा मूलस्य वा, शालास्कंधस्य वापि बहुलतरी ।

त्वक् सा अनंतजीवा, प्रत्येकजीवास्तु तनुकतरी ॥१९०॥

टीका — जिस वनस्पती का कंद की वा मूल की वा क्षुद्र शाखा की वा स्कंध को छालि मोटो हाइ, सो अनतकाय है । निगोद जीव सहित प्रतिष्ठित प्रत्येक

है । बहुरि जिस वनस्पती का कंदादिक की छालि पतली होइ, सो अप्रतिष्ठित प्रत्येक है ।

आगै श्री नेमिचंद्र सिद्धातचक्रवर्ती साधारण वनस्पती का स्वरूप सात गाथानि करि कहै है—

**साधारणोदयेण निगोदशरीरा हवंति सामण्या ।**

**ते पुण दुविधा जीवा, बादर सुहमा त्ति विण्णेया ॥१६१॥**

साधारणोदयेन निगोदशरीरा भवंति सामान्याः ।

ते पुनर्द्विविधा जीवा, बादर-सूक्ष्मा इति विज्ञेयाः ॥१६१॥

टीका — साधारण नामा नामकर्म की प्रकृति के उदय तै निगोद शरीर के धारक साधारण जीव हो है । नि — कहिये नियतज अनंत जीव, तिनिकौ गो कहिये एक ही क्षेत्र कौ, द कहिये देइ, सो निगोद शरीर जानना । सो जिनके पाइए ते निगोदशरीरी है । बहुरि तेई सामान्य कहिये साधारण जीव है । बहुरि ते बादर अर सूक्ष्म अैसे भेद तै दोय प्रकार पूर्वोक्त बादर सूक्ष्मपना लक्षण के धारक जानने ।

**साधारणमाहारो, साधारणमाणाणग्रहणं च ।**

**साधारणजीवाणं, साधारणलक्षणं भणियं' ॥१६२॥**

साधारणमाहारः, साधारणमानपानग्रहणं च ।

साधारणजीवानां, साधारणलक्षणं भणितम् ॥१६२॥

टीका — साधारण नामा नामकर्म के उदय के वशवर्ती, जे साधारण जीव, तिनिके उपजते पहला समय विषे आहार पर्याप्ति हो है, सो साधारण कहिए अनंत जीवनि के युगपत एक काल हो है । सो आहार पर्याप्ति का कार्य यह जो आहार वर्गणारूप जे पुद्गल स्कंध, तिनिकौ खल-रस भागरूप परिणामावै है । बहुरि तिनही आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कंधनि कौ शरीर के आकार परिणामावनेरूप है कार्य जाका, अैसा शरीर पर्याप्ति, सो भी तनि जीवनि के साधारण हो है । बहुरि तिनही कौ स्पर्जन इन्द्रिय के आकार परिणामावना है कार्य जाका, अैसा इन्द्रिय पर्याप्ति, सो भी साधारण हो है । बहुरि सासोस्वास ग्रहणारूप है कार्य जाका, अैसा आनपान

पर्याप्ति, सो भी साधारण हो है । बहुरि एक निगोद शरीर है, तीहि विषै पूर्वे अनंत जीव थे । बहुरि दूसरा, तीसरा आदि समय विषै नये अनंत जीव उस ही विषै अन्य आनि उपजै, तौ तहां जैसे वे नये उपजे जे जीव आहार आदि पर्याप्ति कौ धरै है, तैसे ही पूर्वे पूर्व समय विषै उपजे थे जे अनंतानंत जीव, ते भी उन ही की साथि आहारादिक पर्याप्तिनि कौ धरै है सदृश युगपत् सर्व जीवनि के आहारादिक हो है । तातै इनिकौ साधारण कहिये है । सो यह साधारण का लक्षण पूर्वाचार्यनि करि कह्या हूवा जानना ।

१ जत्थेक्क मरइ जीवो, तत्थ दु मरणं हवे अणंताणं ।

वक्कमइ जत्थ एक्को, वक्कमणं तत्थ णंताणं ॥१६३॥

यत्रैको म्रियते जीवस्तत्र तु मरणं भवेदनंतानाम् ।

प्रकामति यत्र एकः, प्रक्रमणं तत्रानंतानाम् ॥१९३॥

टीका — एक निगोद शरीर विषै जिस काल एक जीव अपना आयु के नाश तै मरै, तिसही काल विषै जिनकी आयु समान होइ, अैसे अनंतानंत जीव युगपत् मरै है । बहुरि जिस काल विषै एक जीव तहा उपजै है, उस ही काल विषै उस ही जीव की साथि समान स्थिति के धारक अनंतानंत जीव उपजै है, अैसे उपजना मरना का सम-कालपना कौ भी साधारण जीवनि का लक्षण कहिए है । बहुरि द्वितीयादि समयनि विषै उपजे अनंतानंत जीवनि का भी अपना आयु का नाश होतै साथि ही मरना जानना । अैसे एक निगोद शरीर विषै समय-समय प्रति अनंतानंत जीव साथि ही मरै है, साथि ही उपजै है । निगोद शरीर ज्यो का त्यो रहै है, सो निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति असंख्यात कोडाकोडी सागरमात्र है । सो असंख्यात लोकमात्र समय प्रमाण जानना । सो स्थिति यावत् पूर्ण न होइ तावत् अैसे ही जीवनि का उपजना, मरना हुवा करै है ।

इतना विशेष — जो कोई एक बादर निगोद शरीर विषै वा एक सूक्ष्म निगोद शरीर विषै अनंतानंत जीव केवल पर्याप्त ही उपजै है । तहां अपर्याप्त नाही उपजै है । बहुरि कोई एक शरीर विषै केवल अपर्याप्त ही उपजै है, तहां पर्याप्त नाही उपजै है । एक शरीर विषै पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ नाही उपजै है । जातै तिन जीवनि के समान कर्म के उदय का नियम है ।

बहुिर एक साधारण जीव कै कर्म का ग्रहण शक्तिरूप लक्षण धरै, जो काय योग, ताकरि ग्रह्या हूवा, जो पुद्गल-पिड, ताका उपकार कार्य, सो तिस शरीर विषै तिष्ठते अनंतानंत अन्य जीवनि का अर तिस जीव का उपकारी हो है । बहुिर अनतानत साधारण जीवनि का जो काय योग रूप शक्ति, ताकरि ग्रहे हूये पुद्गलपिडनि का कार्यरूप उपकार, सो कोई एक जीव का वा तिन अनतानत साधारण जीवनि का उपकारी समान एकै साथि-पनै हो है । बहुिर एक वादर निगोद शरीर विषै वा सूक्ष्म निगोद शरीर विषै क्रम तै पर्याप्त वादर निगोद जीव वा सूक्ष्म निगोद जीव उपजै है । तहा पहले समय अनंतानत उपजै है । बहुिर दूसरे समय तिनतै असंख्यात गुणा घाटि उपजै है । असै ही आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत समय-समय प्रति निरंतर असंख्यात गुणा घाटि क्रमकरि जीव उपजै है । तातै परै जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण काल का अंतराल हो है । तहा कोऊ जीव न उपजै है । तहां पीछै बहुिर जघन्य एक समय, उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत निरंतर असंख्यात गुणा घाटि क्रम करि तिस निगोद शरीर विषै जीव उपजै है । असै अन्तर सहित वा निरंतर निगोद शरीर विषै जीव उपजै है । सो यावत् प्रथम समय विषै उपज्या साधारण जीव का जघन्य निर्वृति अपर्याप्त अवस्था का काल अवशेष रहै, तावत् असै ही उपजना होइ । बहुिर पीछै तिनि प्रथमादि समयनि विषै उपजे सर्व साधारण जीव, तिनिकै आहार, शरीर, इंद्रिय, सामोस्वास, पर्याप्तिनि की सपूर्णता अपने-अपने योग्य काल विषै होइ है ।

खंधा असंखलोका, अंडरावासपुलविदेहा वि ।

हेट्ठिल्लजोरिगाओ, असंखलोगेण गुणिदकमा ॥१६४॥

स्कंधा असंखलोकाः, अंडरावासपुलविदेहा अपि ।

अध्वन्तनयोनिना, असंखलोकेन गुणितक्रमाः ॥१६४॥

टीका - वादर निगोद जीवनि के शरीर की संख्या जानने निमित्त उदाहरण-रूप यह कथन करिा है । इस लोकाकाज विषै स्कंध यथा योग्य असंख्यात लोक प्रमाण है । ते प्रतिष्ठित प्रत्येक जीवनि के शरीर, तिनिकी स्कंध कहिये है । सो यह प्रमाण प्रमाणित करि ताव के प्रदेश गुण, जो प्रमाण होइ, तितने प्रतिष्ठित प्रमाण प्रमाणित होइ । बहुिर एक-एक स्कंध विषै असंख्यात लोक प्रमाण प्रमाणित है ।

इहां प्रश्न — जो एक स्कंध विषै असख्यात लोक प्रमाण अडर कैसें सभवै ?

ताका समाधान — यह अवगाहन की समर्थता है । जैसे जगत श्रेणी का घन प्रमाण लोक के प्रदेशनि विषै अनंतानत पुद्गल परमाणू पाइए । जैसे जहां एक निगोद जीव का कार्माण स्कंध है, तहा ही अनंतानंत जीवनि के कार्माण शरीर पाइये है । तैसे ही एक-एक स्कंध विषै असख्यात लोक प्रमाण अडर है । जे प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर के अवयवरूप विशेष है । जैसे मनुष्य शरीर विषै हस्तादिक हो है, तैसे स्कंध विषै अन्डर जानने । बहुरि एक-एक अन्डर विषै असख्यात लोक प्रमाण आवास पाइए है । ते आवास भी प्रतिष्ठित प्रत्येक के शरीर के अवयव रूप विशेष ही जानने । जैसे हस्त विषै अंगुरी आदि हो है । बहुरि एक-एक आवास विषै असख्यात लोक प्रमाण पुलवी है । ते पुणि प्रतिष्ठित प्रत्येक शरीर के अवयव रूप विशेष ही जानने । जैसे एक अंगुली विषै रेखा आदि हो है । बहुरि एक-एक पुलवी विषै असख्यात लोक प्रमाण बादर निगोद के शरीर जानने । जैसे ए अंडरादिक अधस्तन योनि कहे । इनि विषै अधस्तन जो पीछे कहा भेद, ताकी सख्या की उत्पत्ति कौ कारण ऊपरि का भेद जानना । जैसे तहा एक स्कंध विषै असख्यात लोक प्रमाण अन्डर है, तौ असख्यात लोक प्रमाण स्कंधन विषै केते अडर है ? जैसे त्रैराशिक करि लब्धराशि असख्यात लोक गुणे असख्यात लोक प्रमाण अडर जानने । बहुरि जैसे ही आवासादि विषै त्रैराशिक कीए तिनतै असख्यात लोक गुणे आवास जानने । बहुरि तिनतै असख्यात लोक गुणे पुलवी जानने । बहुरि तिनतै असख्यात लोक गुणे बादर निगोद शरीर जानने । ते सर्व निगोद शरीर पाच जायगा असख्यात लोक माडि, परस्पर गुणै, जेता प्रमाण होइ तितने जानने ।

जंबूद्वीवं भरहो, कोसलसागेदतग्धराइं वा ।

खंधंडरआवासा, पुलविसरीराणि द्दिट्ठंता ॥१६५॥

जंबूद्वीपो भरतः कोशल साकेततद्गृहाणि वा ।

स्कंधांडरावासाः, पुलविशरीराणि द्दिट्ठंताः ॥१९५॥

टीका — स्कधनि का दृष्टांत जंबूद्वीपादिक जानने । जैसे मध्य लोक विषै जंबूद्वीपादिक द्वीप है, तैसे लोक विषै स्कध है । बहुरि अंडरनि का दृष्टांत भरतादि क्षेत्र जानने । जैसे एक जंबूद्वीप विषै भरतक्षेत्र आदि क्षेत्र पाइए; तैसे स्कंध विषै



अंडर जानने । वहुरि आवासनि का दृष्टांत कोशल आदि देश जानने । जैसे भरतक्षेत्र विपे कोशल देश आदि अनेक देश पाइए, तैसे अंडर विपे आवास जानने । वहुरि पुलवीनि का दृष्टांत अयोध्यादि नगर जानने । जैसे एक कोशलदेश विपे अयोध्या नगर आदि अनेक नगर पाइए, तैसे आवास विपे पुलवी जानने । वहुरि शरीरनि का दृष्टांत अयोध्या के गृहादिक जानने, जैसे अयोध्या विपे मदरादिक पाइए, तैसे पुलवी विपे वादर निगोद शरीर जानने । वहुरि वा शब्द करि यहु दृष्टांत दीया । जैसे ही और कोऊ उचित दृष्टांत जानने ।

एकनिगोदशरीरे, जीवा द्रव्यप्रमाणदो दिट्ठा ।  
सिद्धेहि अणंतगुणा, सव्वेण वितीतकालेण<sup>१</sup> ॥१६६॥

एकनिगोदशरीरे, जीवा द्रव्यप्रमाणतो दृष्टाः ।  
सिद्धेरनंतगुणाः सर्वेण व्यतीतकालेन ॥१६६॥

टीका — एक निगोद शरीर विपे वर्तमान निगोद जीव, ते द्रव्यप्रमाण, जो द्रव्य अपेक्षा सख्या, तातैं अनंतानंत है; सर्व जीव राशि कौ अनंत का भाग दीजिए, तामैं एक भाग प्रमाण सिद्ध हैं । सो अनादिकाल तैं जेते सिद्ध भए, तिनितैं अनंता गुणें हैं । वहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण मंसारी है । तिनके असख्यातवैं भाग प्रमाण एक निगोद शरीर विपे जीव विद्यमान हैं, ते अक्षयानंत प्रमाण हैं । जैसे परमागम विपे कहिए हैं ।

वहुरि तैसे ही अतीतकाल के समयनि तैं अनंत गुणें हैं । इस करि काल अपेक्षा एक शरीर विपे निगोदजीवनि की संख्या कही ।

वहुरि जैसे ही क्षेत्र, भाव अपेक्षा तिनकी सख्या आगम अनुसारि जोडिए । तहा क्षेत्र प्रमाण तैं सर्व आकाश के प्रदेशनि के अनंतवैं भाग वा लोकाकाश के प्रदेशनि तैं अनंत गुणें जानने ।

भाव प्रमाण तैं केवल ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि के अनंतवैं भाग अर नवाविधि ज्ञान गोचर जे भाव, तिनितैं अनंत गुणें जानने । जैसे एक निगोद शरीर विपे जीवनि का प्रमाण कह्या ।

१. पदुत्तमज्ञान — बबला पुस्तक १, पृष्ठ २७३, गाथा १४७ तथा पृष्ठ ३६६ गाथा २१० तथा बबला पुस्तक ४, पृष्ठ ४७६ गाथा ४३.

इहां प्रश्न — जो छह महीना अर आठ समय के मांही छः सै आठ जीव कर्म नाश करि सिद्ध होइ, सो अैसे सिद्ध बधते जांहि संसारी घटते जांहि, तातैं तुम सदा काल सिद्धनि तैं अनंत गुणे एक निगोद शरीर विषै जीव कैसे कहो हो ? सर्व जीव राशि तैं अनंत गुणा अनागत काल का समय समूह है । सो यथायोग्य अनंतवां भाग प्रमाण काल गए, संसारी-राशि का नाश अर सिद्ध-राशि का बहुत्व होइ, तातैं सर्वदा काल सिद्धनि तैं निगोद शरीर विषै निगोद जीवनि का प्रमाण अनंत गुणा संभवै नांही ?

ताका समाधान — कहै है — रे तर्किक भव्य ! संसारी जीवनि का परिमाण अक्षयानत है । सो केवली केवल ज्ञान दृष्टि करि अर श्रुतकेवली श्रुतज्ञान दृष्टि करि अैसे ही देखा है । सो यह सूक्ष्मता तर्क गोचर नांही, जातैं प्रत्यक्ष प्रमाण अर आगम प्रमाण करि विरुद्ध होइ, सो तर्क अप्रमाण है जैसे किसी ने कहा अग्नि उष्ण नांही; जाते अग्नि है, सो पदार्थ है; जो जो पदार्थ है, सो सो उष्ण नांही; जैसे जल उष्ण नांही है; अैसी तर्क करी, परि यहु तर्क प्रत्यक्ष प्रमाण करि विरुद्ध है । अग्नि प्रत्यक्ष उष्ण है; तातैं यहु तर्क प्रमाण नांही । बहुरि किसीने कहा धर्म है परलोक विषै दुःखदायक है; जातैं धर्म है, सो पुरुषाश्रित है । जो जो पुरुषाश्रित है, सो सो परलोक विषै दुःखदायक है, जैसे अधर्म है; अैसी तर्क करी, परि यहु तर्क आगम प्रमाण करि खडित है । आगम विषै धर्म परलोक विषै सुख दायक कहा है; तातैं प्रमाण नही । अैसे ही जे केवली प्रत्यक्ष अर आगमोक्त कथन तातैं विरुद्ध तेरी तर्क प्रमाण नांही ।

इहां बहुरि तर्क करी—जो तर्क करि विरोधी आगम कैसे प्रमाण होइ ?

ताका समाधान—जो प्रत्यक्ष प्रमाण अर अन्य तर्क प्रमाण करि संभवता जो आगम, ताकें अविरुद्धपणां करि प्रमाणपना हो है । तौ सो अन्य तर्क कहा ? सो कहिए है—सर्व भव्य संसारी राशि अनंतकाल करि भी क्षय कौ प्राप्त न होइ, जातैं यहु राशि अक्षयानत है । जो जो अक्षयानत है, सो सो अनंतकाल करि भी क्षयकौ प्राप्त न होइ । जैसे तीन काल के समयनि का परिमाण कहा कि इतनां है, परि कवहू अत नांही वा सर्वद्रव्यनि का अगुरुलघु के अविभाग प्रतिच्छेद के समूह का परिमाण कहा, परि अंत नही । तैसे संसारी जीवनी का भी अक्षयानत प्रमाण जानना । अैसा यहु अनुमान तैं आया जो तर्क, सो प्रमाण है ।

बहुरि प्रश्न—जो अनन्तकाल करि भी क्षय न होना साध्य, सो अक्षयानन्त के हेतु तै दृढ किया । तातै इहा हेतु कै साध्यसमत्व भया ?

ताका ससाधान—भव्यराशि का अक्षयानन्तपना आप्त के आगम करि सिद्ध है । तातै साध्यसमत्व का अभाव है । बहुत कहने करि कहा ? सर्व तत्त्वनि का वक्ता पुरुष जो है आप्त, ताकी सिद्धि होतै तिस आप्त के वचनरूप जो आगम, ताकी सूक्ष्म, अतिरिक्त, दूरि पदार्थनि विषै प्रमाणता की सिद्धि हो है । तातै तिस आगमोक्त पदार्थनि विषै मेरा चित्त निस्सदेह रूप है । बहुत वादी होने करि कहा साध्य है ?

बहुरि आप्त की सिद्धि कैसे ?

सो कहिए है 'विश्वतश्चक्षुरन्त विश्वतो मुखः' असा वेद का वचन करि, बहुरि 'प्रणम्य शंभुं' इत्यादि नैयायिक वचन करि, बहुरि 'बुद्धो भवेयं' इत्यादि बौद्ध वचन करि, बहुरि मोक्षमार्गस्य नेतारं, इत्यादि जैन वचन करि, बहुरि अन्य अपना-अपना मत का देवता का स्तवनरूप वचननि करि सामान्यपनै सर्व मतनि विषै आप्त मानै है । बहुरि विशेषपनै सर्वज्ञ, वीतरागदेव स्याद्वादी ही आप्त है । ताका युक्ति करि साधन कीया है । सो विस्तार तै स्याद्वादरूप जैन न्यायशास्त्र विषै आप्त की सिद्धि जाननी । असै हो निश्चयरूप जहाँ खंडने वाला प्रमाण न संभवै है, तातै आप्त अर आप्त करि प्ररूपित आगम की सिद्धि हो है । तातै आप्त आगम करि प्ररूपित ज्यो मोक्षतत्त्व अर वधतत्त्व सो अवश्य प्रमाण करना असै आगम प्रमाण तै एक शरीर विषै निगोद जीवनि कै सिद्ध-राशि तै अनन्त गुणापनो सभवै है । बहुरि अक्षयानन्त-पना भी नर्व मतवाने जानै है । कौऊ ईश्वर विषै मानै है । कौऊ स्वभाव विषै मानै है । तातै कहा हूवा कथन प्रमाण है ॥

अस्थि अणन्ता जीवा, जेहिं ण पत्तो तत्साण परिणामो ।

भावकलंकसुपञ्चरा, णिगोदवासं ण मुञ्चन्ति ॥ १६७ ॥

सनि अणन्ता जीवा, येनं प्राप्तस्त्रसानां परिणामः ।

भावकलंकसुप्रचुरा, निगोदवासं न मुञ्चन्ति ॥ १९७ ॥

१ पदसंग्रहगम धरमा पुस्तक १, पृष्ठ २७३, गाथा १४८ पदखण्डागम-धरमा पुस्तक ४ पृष्ठ ४७७  
गाथा १२ जिनु नय भावकल-कौञ्जरा उति पाठ ।

**टीका** — इस गाथा विषै नित्यनिगोद का लक्षण कह्या है । अनादि ससार विषै निगोद पर्याय ही कौ भोगवते अनन्ते जीव नित्यनिगोद नाम धारक सदाकाल हैं । ते कैसे हैं ? जिनि करि त्रस जे बेइन्द्रियादिक, तिनिका परिणाम जो पर्याय, सो कबहुं न पाया । बहुरि भाव जो निगोद पर्याय, तिहिनै कारणभूत जो कलंक कहिये कषायनि का उदय करि प्रगट भया अशुभ लेश्यारूप, तीहिं करि प्रचुरा कहिये अत्यंत संबंधरूप है । अैसे ए नित्यनिगोद जीव कदाचित् निगोदवास कौ न छोडै है । याहीतै निगोद पर्याय कै आदि अंत रहितपनां जानि, अनंतानंत जीवनि कै नित्य निगोदपना कह्या । नित्य विशेषण करि अनित्य निगोदिया चतुर्गति निगोदरूप आदि अंत निगोद पर्याय संयुक्त केई जीव है, अैसा सूचै है । जातै शिञ्चचदुग्गदिणिगोद इत्यादिक परमागम विषै निगोद जीव दोय प्रकार कहै है ।

**भावार्थ** — जे अनादि तै निगोद पर्याय ही कौ धरै हैं, ते नित्यनिगोद जीव है । बहुरि बीच अन्य पर्याय पाय, बहुरि निगोद पर्याय धरै, ते इतर निगोद जीव जानना । सो वे आदि अत लीये है । बहुरि जिनिके प्रचुर भाव कलंक है, ते निगोद-वास कौ न छोडै, सो इहां प्रचुर शब्द है, सो एकोदेश का अभावरूप है, सकल अर्थ का वाचक है; तातै याकरि यहु जान्या, जिनकै भाव कलंक थोरा हो है, ते जीव कदा-चित् नित्यनिगोद तै निकसि, चतुर्गति में आवै है । सो छह महीना अर आठ समय मै छः सै आठ जीव नित्यनिगोद मै सौ निकसै है, सो ही छह महीना आठ समय मै छः सै आठ जीव संसार सौ निकलि करि मुक्ति पहुँचै है ॥ १६७ ॥

आगें त्रसकाय की प्ररूपणा दोय गाथा करि कहै है—

बिहि तिहि चहुहिं पंचहिं, सहिया जे इंदिएहिं लोयहि ।  
ते तसकाया जीवा, रोया वीरोवदेसेण ॥१६८॥

द्वाभ्यां त्रिभिश्चतुर्भिः पंचभिः सहिता ये इन्द्रियैर्लोके ।  
ते त्रसकाया जीवा, ज्ञेया वीरोपदेजेन ॥ १९८ ॥

**टीका** — दोय इद्री स्पर्शन-रसन, तिनि करि संयुक्त द्वीन्द्रिय, बहुरि तीन इन्द्रिय स्पर्शन-रसन-घ्राण, तिनि करि संयुक्त त्रीन्द्रिय, बहुरि च्यारि इन्द्रिय स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षु, इनि करि संयुक्त चतुरिन्द्रिय बहुरि पाच इन्द्रिय स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षु-श्रोत्र, इनि करि संयुक्त पचेन्द्रिय, ए कहे जे जीव, ते त्रसकाय जानने । अैसे श्री वर्धमान

तीर्थकर परमदेव के उपदेश तै परपराय क्रम करि चल्या आया संप्रदाय करि शास्त्र का अर्थ धरि करि हमहूँ कहे है; ते जानने ॥

**उपपादभारणंतिय, परिणतसमुज्झिऊण सेसतसा ।**

**तसणालिवाहिरहि य, णत्थि त्ति जिणेहिं णिद्विट्ठ ॥ १६६ ॥**

**उपपादभारणांतिकपरिणतत्रसमुज्झित्वा शेषत्रसाः ।**

**त्रसनालीवाह्ये च, न संतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥ १९९ ॥**

टोका — विवक्षित पर्याय का पहला समय विषै पर्याय की प्राप्ति, सो उप-पाद कहिए । बहुरि मरण जो प्राण त्याग अर अंत जो पर्याय का अंत जाकै होइ, सो मरणांतकाल, वर्तमान पर्याय के आयु का अंत अतर्मुहूर्त मात्र जानना । तीहि मरणांतकाल विषै उपज्या, सो मारणांतिकसमुद्धात कहिए । आगामी पर्याय के उपजने का स्थान पर्यंत आत्मप्रदेशनि का फैलना, सो मारणांतिकसमुद्धात जानना । अैसा उपपादरूप परिणम्या अर मारणांतिक समुद्धातरूप परिणम्या अर चकार तै केवल समुद्धात रूप परिणम्या जो त्रस, तीहि बिना स्थाननि विषै अवशेष स्वस्थान-स्वस्थान अर विहारवत्स्वस्थान अर अवशेष पांच समुद्धातरूप परिणमे सर्व ही त्रस-जीव, त्रसनाली वारै जो लोक क्षेत्र, तीहि विषै न पाइए है; अैसा जिन जे अर्हतादिक, तिनिकरि कह्या है । तातै जैसै नाली होइ, तैसै त्रस रहने का स्थान, सो त्रसनाली जाननी । त्रस नाली इस लोक के मध्यभाग विषै चौदह राजु ऊंची, एक राजू चौड़ी-लंबी सार्थक नाम धारक जाननी । त्रस जीव त्रसनाली विषै ही है । बहुरि जो जीव त्रसनाली के बाह्य वातवलय विषै तिष्ठता स्थावर था, उसनै त्रस का आयु बाधा । बहुरि सो पूर्व वायुकायिक स्थावर पर्याय कौ छोड़ि, आगला विग्रहगति का प्रथम समय विषै त्रस नामा नामकर्म का उदय अपेक्षा करि त्रसनाली के बाह्य त्रस हूवा, तातै उपपादवाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य कह्या । बहुरि कोई जीव त्रसनाली के माहि त्रस है, बहुरि त्रसनाली बाहिर तनुवातवलय सवधी वायुकायिक स्थावर का बंध किया था । सो आयु का अतर्मुहूर्त अवशेष रहै, तव आत्मप्रदेशनि का फैलाव त्रस का बंध किया था, निम स्थानक त्रसनाली के बाह्य तनुवातवलय पर्यन्त गमन करै । तातै मारणांतिक समुद्धातवाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य कह्या ।

बहुरि केवली दंड-कपाटादि आकार करि त्रसनाली बाह्य अपने प्रदेशनि का संसर्ग नमुद्धान करै है । तातै केवलसमुद्धात वाले त्रस का अस्तित्व त्रसनाली

बाह्य कह्या । इनि बिना और त्रस का अस्तित्व त्रसनाली बाह्य नाही है, ऐसा अभिप्राय शास्त्र के कर्ता का जानना ।

आगे वनस्पतीवत् अन्य भी जीवनि कै प्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठितपना का भेद दिखावै है—

**पृथ्वीआदिचउण्हं, केवलिआहारदेवरिगरयंगा ।  
अपदिट्ठिदा णिगोदहिं, पट्ठिदंता हवे सेसा ॥२००॥**

पृथिव्यादिचतुर्णां, केवल्याहारदेवनिरयांगानि ।  
अप्रतिष्ठितानि निगोदैः, प्रतिष्ठितांगा भवन्ति शेषाः ॥२००॥

टीका — पृथ्वी आदि चारि प्रकार जीव पृथ्वी — अप — तेज — वायु इनि का शरीर, बहुरि केवली का शरीर, बहुरि आहारक शरीर, बहुरि देवनि का शरीर, बहुरि नारकीनि का शरीर ए सर्व निगोद शरीरनि करि अप्रतिष्ठित है; आश्रित नाहीं । इनि विषे निगोद शरीर न पाइए है । बहुरि अवशेष रहे जे जीव, तिनि के शरीर प्रतिष्ठित जानने । इनि विषे निगोद शरीर पाइए है । तातें अवशेष सर्व निगोद शरीरनि करि प्रतिष्ठित है, आश्रित है । तहा सप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय, तिर्यच अर पूर्वे कहे तिनि बिना अवशेष मनुष्य इनि सबनि कै शरीर विषे निगोद पाइए है ।

आगे स्थावरकायिक, त्रसकायिक जीवनि के शरीर का आकार कहै है—

**मसूरंबुबिंदुसूई—कलावधयसण्णिहो हवे देहो ।  
पृथ्वीआदिचउण्हं, तरुतसकाया अणेयविहा ॥२०१॥**

मसूरंबुबिंदुसूचीकलापध्वजसन्निभो भवेद्देहः ।  
पृथिव्यादिचतुर्णां, तरुत्रसकाया अनेकविधाः ॥ २०१ ॥

टीका — पृथिवीकायिक जीवनि का शरीर मसूर अन्न समान गोल आकार धरै है । बहुरि अपकायिक जीवनि का शरीर जल की बूंद के समान गोल आकार धरै है । बहुरि अग्निकायिक जीवनि का शरीर सुईनि का समूह के समान लंबा अर ऊर्ध्व विषे चौड़ा बहुमुखरूप आकार धरै है । बहुरि वातकायिक जीवनि का शरीर

ध्वजा समान लवा, चौकौर आकार धरै है । असै इनिके आकार कहे । तथापि इनिकी अवगाहना घनांगुल के असंख्यातवें भागमात्र है; ताते जुदे-जुदे दीसं नाही । जो पृथ्वी आदि इंद्रियगोचर है, सो घने शरीरनि का समुदाय है, असा जानना । बहुरि तरु, जे वनस्पतीकायिक अरु द्वीद्रियादिक त्रसकायिक, इनिके शरीर अनेक प्रकार आकार धरै है, नियम नाही । ते घनांगुल का असंख्यातवां भाग तै लगाइ, संख्यात घनांगुल पर्यंत अवगाहना धरै है; असै जानना ।

आगे काय मार्गणा के कथन के अनंतर काय सहित संसारी जीवनि का दृष्टांतपूर्वक व्यवहार कहै है—

जह भारवहो पुरिसो, वहइ भरं गेहिऊण कावलियं ।  
एमेव वहइ जीवो, कम्मभरं कायकावलियं ॥ २०२ ॥

यथा भारवहः पुरुषो, वहति भारं गृहीत्वा कावटिकम् ।  
एवमेव वहति जीवः, कर्मभारं कायकावटिकम् ॥ २०२ ॥

टीका — लोक विषै जैसें बोझ का वहनहारा कोऊ पुरुष, कावडिया सो कावडि में भर्या जो बोझ-भार, ताहि लेकरि विवक्षित स्थानक पहुंचावै है । तैसें ही यहु संसारी जीव, औदारिक आदि नोकर्मशरीर विषै भर्या हूवा जानावरणादिक द्रव्यकर्म का भार, ताहि लेकरि नानाप्रकार योनिस्थानकनि की प्राप्त करै है । बहुरि जैसें सोई पुरुष कावडि का भार कौं गेरि, कोई एक इष्ट स्थानक विषै विश्राम करि तिस भार करि निपज्या दुःख के वियोग करि मुखी होइ तिष्ठै है । तैसें कोई भव्य, जीव, कालादि लब्धिनि करि अंगीकार कीनी जो मय्यदर्शनादि सामिगी, तीहि करि युक्त होता सता, संसारी कावडि का विषै भर्या कर्म भार कौं छाड़ि, तिस भार करि निपज्या नाना प्रकार दुःख-पीडा का वियोग करि, इस लोक का अग्रभाग विषै मुखी होइ तिष्ठै है । असा हित उपदेश नन्द आचार्य का अभिप्राय है ।

आगे दृष्टांतपूर्वक कायमार्गणा रहित जे सिद्ध, तिनिका उपाय सहित नन्द की कहै है —

जह कंचणमग्नि-गयं, मुंचइ किट्टेण कालियाए य ।  
तह कायबंध-मुक्का, अकाइया भाण-जोगेण<sup>१</sup> ॥२०३॥

यथा कांचनमग्निगतं, मुच्यते किट्टेन कालिकया च ।  
तथा कायबंधमुक्ता, अकायिका ध्यानयोगेन ॥२०३॥

टीका — जैसे लोक विषै मल युक्त सोना, सो अग्नि कौ प्राप्त संता, अंतरंग पारा आदि की भावना करि संवार्या हुवा बाह्य मल तौ कीटिका अर अंतरंग मल श्वेतादि रूप अन्य वर्ण, ताकरि रहित हो है । देदीप्यमान सोलहबान निज स्वरूप की लब्धि कौ पाइ, सर्व जननि करि सराहिए है । तैसे ध्यानयोग जो धर्म ध्यान, शुक्ल ध्यान रूप भावना, ताकरि अर बहिरंग तपरूपी अग्नि का सस्कार करि, निकट भव्य जीव है, ते भी औदारिक, तैजस शरीर सहित कार्माण शरीर का सबंध रूप करि मुक्त होइ । अकायिका: कहिए शरीर रहित सिद्ध परमेष्ठी, ते अनंत ज्ञानादि स्वरूप की उपलब्धि कौ पाइ; लोकाग्र विषै सर्व इन्द्रादि लोक करि स्तुति, नमस्कार, पूजनादि करि सराहिए है । काय जिनि कै पाइए ते कायिक, शरीरधारक संसारी जानने । तिनतै विपरीत काय रहित अकायिक मुक्त जीव जानने ।

आगै श्री माधवचंद्र त्रैविद्यदेव ग्यारह गाथा सूत्रनि करि पृथिवीकायिक आदि जीवनि की सख्या कहै है—

आउड्ढरासिवारं, लोणे अण्णोण्णसंगुणे तेऊ ।  
भूजलवाऊ अहिया, पडिभागोऽसंखलोगो दु ॥२०४॥

सार्धत्रयराशिवारं, लोके अन्योन्यसंगुणे तेजः ।  
भूजलवायवः अधिकाः, प्रतिभागोऽसंख्यलोकस्तु ॥२०४॥

7471

टीका — जगत्त्रयी घन प्रमाण लोक के प्रदेश, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय—ए तीनि राशि करि तहा विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक जुदा-जुदा बखेरि, तहा एक-एक प्रति देयराशि कौ स्थापि, वर्गितसंवर्ग करना । जाका वर्ग कीया, ताका समतपनै वर्ग करना । सो इहां परस्पर गुणने का नाम वर्गितसंवर्ग



है । ताहि करि शलाकाराणि मैं स्यो एक घटावना । वहुरि अँसै करतैं जो राशि उपज्या, ताहि विरलन करि एक-एक प्रति सोई राशि देइ, वर्गितसंवर्ग करि शलाकाराणि मैं सौ एक और घटावना । अँसै लोक प्रमाण शलाका राशि यावत् पूर्ण होइ तावत् करना । अँसै करतैं जो राशि उपज्या, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय-राशि, स्थापि, विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक प्रति देयराशि कौ देइ, वर्गितसंवर्ग करि दूसरी वार स्थाप्या हूवा, शलाकाराणि मैं सौ एक घटावना । वहुरि तहा उपज्या हूवा राशि का विरलन करि, एक-एक प्रति सोई राशि स्थापि, वर्गितसंवर्ग करि, तिस शलाकाराणि मैं सौ एक और घटावना । अँसै दूसरी वार स्थाप्या हूवा शलाकाराणि कौ भी समाप्त करि, तहा अंत विपै जो महाराशि भया, तीहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, स्थापि; विरलनराशि का विरलन करि, एक-एक प्रति देयराशि कौ देइ, वर्गितसंवर्ग करि, तीसरी वार स्थाप्या शलाकाराणि तै एक घटावना । वहुरि तहा जो राशि भया, ताका विरलन करि, एक-एक प्रति सोई राशि देइ, वर्गितसंवर्ग करि, तिस शलाकाराणि तै एक और काटना । अँसै तीसरी वार स्थाप्या हूवा शलाकाराणि कौ समाप्त करि, तहां अंत विपै उपज्या महाराशि, तिहि प्रमाण शलाका, विरलन, देय, स्थापि; विरलनराशि कौ वखेरि, एक-एक प्रति देयराशि कौ देइ वर्गितसंवर्ग करि, चौथी वार स्थाप्या हूवा शलाकाराणि तै एक काटना । वहुरि तहां जो राशि भया, ताकौ विरलन करि, एक-एक प्रति तिस ही कौ देइ, वर्गितसंवर्ग करि, तिस शलाकाराणि मैं सौ एक और काटना । अँसै ही क्रम करि पहिली वार, दूसरी वार, तीसरी वार जो स्थापे शलाकाराणि, निनिकौ जोड़ें, जो प्रमाण होइ, तितने चौथी वार स्थाप्या हूवा शलाकाराणि मैं सौ घटाएं, अवशेष जितना प्रमाण रह्या, तिनकौ एक-एक घटावने करि, पूर्ण होतैं अंत विपै जो महाराशि उपज्या, तीहि प्रमाण तेजस्कायिक जीवराशि है । इस राशि का परस्पर गुणकार शलाकाराणि, वर्ग शलाकाराणि, अर्द्धच्छेद राशि तिनिका प्रमाण वा अल्पबहुत्व पूर्वे द्विरूप घनाघन धारा का कथन करतैं कह्या है, तैसैं इहां भी जानना । अँसै सामान्यपरौ साढा तीन वार वा विशेषपरौ किचित् घाटि, च्यारि शलाकाराणि, पूर्ण जैसैं होइ, तैसैं लोक का परस्पर गुणन कीए, जो राशि होइ, तितने अग्निकायिक जीवराशि का प्रमाण है । वहुरि इनि तै पृथ्वीकायिक के जीव अधिक हैं । इनि तै अपकाय के जीव अधिक है । इनितै वातकाय के जीव अधिक है । इहां अधिक कितने है ? अँसा जानने के निमित्त भागहार असंख्यात लोक

प्रमाण जानना । सो कहिए है- असंख्यात लोकमात्र अग्निकायिक जीवनि का परिमाण ताकौ यथायोग्य छोटा असंख्यात् लोक का भाग दीएं, जेता परिमाण आवै, तितने अग्निकायिक के जीवनि का परिमाण विषै मिलाये, पृथ्वीकायिक जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि इस पृथ्वीकायिक राशि कौ असंख्यात् लोक का भाग दीए, जेता परिमाण आवै, तितने पृथ्वीकायिक राशि विषै मिलाये, तितना अपकायिक जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि अपकायिक राशि कौ असंख्यात लोक का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना अपकायिक राशि विषै मिलाए, वातकायिक जीवनि का परिमाण हो है; अैसे अधिक-अधिक जानने ।

**अपदिट्ठदपत्तेया, असंखलोगप्पमाणया होति ।**

**तत्तो पदिट्ठिदा पुण, असंखलोगेण संगुणिदा ॥२०५॥**

अप्रतिष्ठितप्रत्येका, असंख्यलोकप्रमाणका भवन्ति ।

ततः प्रतिष्ठिताः पुनः, असंख्यलोकेन संगुणिताः ॥२०५॥

टीका — अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीव यथायोग्य असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि इनि कौ असंख्यात लोक करि गुणौ, जो परिमाण होइ, तितने प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीव जानने । दोऊनि कौ मिलाएं सामान्य प्रत्येक वनस्पतीकायिक जीवनि का प्रमाण हो है ।

**तसरासिपुढविआदी, चउक्कपत्तेयहीणसंसारी ।**

**साधारणजीवाणं, परिमाणं होदि जिणदिट्ठं ॥२०६॥**

त्रसराशिपृथिव्यादि चतुष्कप्रत्येकहीनसंसारी ।

साधारणजीवानां, परिमाणं भवति जिनदिष्टम् ॥२०६॥

टीका — आगे कहिए है - आवली का असंख्यातवा भाग करि भाजित प्रतरा-गुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो होइ, तितना त्रसराशि का प्रमाण अर पृथ्वी-अप-तेज-वायु इनि च्यारिनि का मिल्या हूवा साधिक चौगुणा तेजकायिक राशि प्रमाण, बहुरि इस प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती का मिल्या हूवा परिमाण, अैसे इनि तीन राशिनि कौ संसारी जीवनि का परिमाण मे घटाए, जो अवशेष रहै, तितना साधारण वनस्पती, जे निगोद जीव, तिनिका परिमाण अनंतानत जानना; अैसा जिनदेव ने कह्या ।

सगसगअसंखभागे, वादरकायाण होदि परिमाणं ।  
सेसा सुहुमप्रमाणं, पडिभागे पुव्वणिदिट्ठो ॥२०७॥

स्वकस्वकासंख्यभागे, वादरकायानां भवति परिमाणम् ।  
शेषाः सूक्ष्मप्रमाणं, प्रतिभागः पूर्वनिर्दिष्टः ॥ २०७ ॥

टीका - पृथिवी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पतीकायिकनि का जो पूर्वे परिमाण कह्या, तिस अपने-अपने परिमाण का असंख्यात का भाग देना । तहां एक भाग प्रमाण तौ अपना-अपना वादर कायिकनि का प्रमाण है । अवशेष बहुभाग प्रमाण सूक्ष्म कायिकनि का प्रमाण है । पृथ्वीकायिक के परिमाण का असंख्यात का भाग दीजिए । तहा एक भाग प्रमाण वादर पृथ्वीकायिकनि का परिमाण है । अवशेष बहुभाग परिमाण सूक्ष्म पृथ्वीकायिकनि का परिमाण है । जैसे ही सब का जानना । इहां भी भागहार का परिमाण पूर्वे कह्या था, असंख्यात लोक प्रमाण सोई है । ताते इहा भी अग्निकायादिक विषे पूर्वोक्त प्रकार अधिक-अविकपना जानना ।

सुहमेसु संखभागे, संखा भागा अपुण्णगा इदरा ।  
जस्सि अपुण्णद्धादो, पुण्णद्धा संखगुणिदकमा ॥२०८॥

सूक्ष्मेषु संख्यभागः, संख्या भागा अपूर्णका इतरे ।  
यस्मादपूर्णाद्धातः, पूर्णाद्धा संख्यगुणितक्रमाः ॥२०८॥

टीका - पृथ्वी, अप, तेज, वायु, साधारण वनस्पती, इनिका पूर्वे जो सूक्ष्म जीवनि का परिमाण कह्या, तीहि विषे अपने-अपने सूक्ष्म जीवनि का परिमाण का संख्यात का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण तौ अपर्याप्त है । बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण पर्याप्त हैं । सूक्ष्म जीवनि विषे अपर्याप्त राशि तै पर्याप्त राशि का प्रमाण बहुत जानना । सो कारण कहै है; जाते अपर्याप्त अवस्था का काल अंतर्मुहूर्त मात्र है । इस काल तै पर्याप्त अवस्था का काल संख्यातगुणा है, सो दिखाइए है । कोमल पृथ्वीकायिक का उत्कृष्ट आयु बारह हजार वर्ष प्रमाण है । बहुरि कठिन पृथ्वी कायिक का बाईस हजार वर्ष प्रमाण है । जलकायिक का सात हजार वर्ष प्रमाण है । तेजकायिक का तीन दिन प्रमाण है । वातकायिक का तीन हजार वर्ष प्रमाण है । वनस्पती कायिक का दश हजार वर्ष प्रमाण है ।

इहा प्रसंग पाइ विकलत्रय विषै बेद्री का बारा वर्ष, तेद्री का गुणचास दिन, चौद्री का छह महिना प्रमाण है । अैसे उत्कृष्ट आयु, बल का परिमाण कह्या । तीहि विषै अंतर्मुहूर्त काल विषै तौ अपर्याप्त अवस्था है । अवशेष काल विषै पर्याप्त अवस्था है । तातै अपर्याप्त अवस्था का काल तै पर्याप्त अवस्था का काल सख्यातगुणा जानना । तहां पृथ्वी कायिक का पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ कालनि विषै जो सर्व सूक्ष्म जीव पाइए तौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण अपर्याप्त काल विषै केते पाइए ? अैसे प्रमाण राशि पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ कालनि के समयनि का समुदाय, फलराशि सूक्ष्म जीवनि का प्रमाण, इच्छाराशि अपर्याप्त काल का समयनि का प्रमाण, तहा फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीएं, लब्धराशि का परिमाण आवै, तितने सूक्ष्म पृथ्वीकायिक अपर्याप्त जीव जानने । बहुरि प्रमाण राशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छाराशि पर्याप्त काल कीएं लब्धराशि का जो परिमाण आवै, तितने सूक्ष्म पृथ्वीकायिक पर्याप्त जीवनि का परिमाण जानना । ताही तै सख्यात का भाग दीए, एक भाग प्रमाण अपर्याप्त कहे । अवशेष (बहु) भाग प्रमाण पर्याप्त कहे है । अैसे ही सूक्ष्म अपकायिक, तेजकायिक, वातकायिक, साधारण वनस्पतिकायिक विषै अपना-अपना सर्व काल कौ प्रमाणराशि करि, अपने-अपने प्रमाण कौ फलराशि करि पर्याप्त वा अपर्याप्त काल कौ इच्छाराशि करि लब्धराशि प्रमाण पर्याप्त वा अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । इहा पर्याप्त वा अपर्याप्त काल की अपेक्षा जीवनि का परिमाण सिद्ध हूवा है ।

**पल्लासंखेज्जवहिद, पदरंगुलभाजिदे जगत्पदरे ।**

**जलभूणिपवादरया, पुण्णा आवलिअसंखभजिदकमा ॥२०६॥**

पल्यासंख्यावहितप्रतरांगुलभाजिते जगत्प्रतरे ।

जलभूनिपवादरकाः, पूर्णा आवल्यसंख्यभाजितक्रमाः ॥२०९॥

टीका — पल्य के असख्यातवां भाग का भाग प्रतरांगुल कौ दीये, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर अपकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस राशि कौ आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो परिमाण आवै, तितना बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस राशि कौ भी आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती पर्याप्त-

जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस राशि कौ भी आवली का असख्यातवां भाग का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना ।

इहां 'णि' इस आदि अक्षर तै निगोद शब्द करि प्रतिष्ठित प्रत्येक जानने; जातै साधारण का कथन आगे प्रगट कहै है —

**विंदावलिलोगाणमसंखं संखं च तेउवाऊणं ।**

**पज्जत्ताण पमाणं, तेहिं विहीणा अपज्जत्ता ॥२१०॥**

वृदावलिलोकानामसंख्यं संख्यं च तेजोवायूनाम् ।

पर्याप्तानां प्रमाणं, तैर्विहीना अपर्याप्ताः ॥२१०॥

टीका — आवली के जेते समय है, तिनिका घन कीएं, जो प्रमाण होइ, ताकौ वृदावली कहिए । ताकौ असख्यात का भाग दीएं, जो परिमाण आवै, तितना बादर अग्निकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि लोक कौ सख्यात का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना बादर वातकायिक पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । सूक्ष्म जीवनि का प्रमाण पूर्वे कह्या है, तातै इहा बादर ही ग्रहण करने ।

बहुरि पूर्वे जो पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पतीरूप बादर जीवनि का परिमाण कह्या था, तीहि विषै अपना-अपना पर्याप्त जीवनि का परिमाण घटाए, अवशेष रहै, तितने-तितने बादर अपर्याप्त जीव जानने ।

**साधारणबादरेसु, असंखं भागं असंखगा भागा ।**

**पुण्णाणमपुण्णाणं, परिमाण होदि अणुकमसो ॥२११॥**

साधारणबादरेषु असंख्य भागं संख्यका भागाः ।

पूर्णानामपूर्णानां, परिमाणं भवत्यनुक्रमशः ॥२११॥

टीका — बादर साधारण वनस्पती का जो परिमाण कह्या था, ताकौ अमन्यात का भाग दीजिए । तहा एक भाग प्रमाण तौ बादर निगोद पर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि अवशेष असख्यात बहुभाग प्रमाण बादर निगोद अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण जानना । अैसे अनुक्रम तै इहां काल की अपेक्षा अल्प-बहुत

नाही कह्या है । बादरनि विषे पर्याप्तपना दुर्लभ है । तातै पर्याप्त थोरे; अपर्याप्त घने है, असा आचार्यनि का अनुक्रम जानि कथन कीया है । असा आचार्यनि का अभिप्राय जानना ।

**आवलिअसंखसंखेणवहिदपदरंगुलेण हिदपदरं ।**

**कमसो तसतप्पुण्णा, पुण्णतसा अपुण्णा हु ॥२१२॥**

आवत्यसंख्यसंख्येनावहितप्ररांगुलेन हितप्रतरम् ।

क्रमशस्त्रसतत्पूर्णाः पूर्णानत्रसा अपूर्णा हि ॥२१२॥

टीका — आवली का असंख्यातवां भाग का भाग प्रतरांगुल कौ दीएं, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो परिमाण आवै, तितना सर्व त्रसराशि का प्रमाण जानना । बहुरि संख्यात का भाग प्रतरांगुल कौ दीएं, जो परिमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो परिमाण आवै, तितना पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि सामान्य त्रस जीवनि का परिमाण मै स्यौ पर्याप्त त्रसनि का परिमाण घटाए, जो परिमाण अवशेष रहै, तितना अपर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण जानना । इहा भी पर्याप्तपना दुर्लभ है । तातै पर्याप्त त्रस थोरे है, अपर्याप्त त्रस बहुत है, असा जानना ।

आगे बादर अग्निकायिक आदि छह प्रकार जीवनि का परिमाण का विशेष निर्णय करने के निमित्त दोय गाथा कहै है —

**आवलिअसंखभागेणवहिदपल्लूणसायरद्धच्छिदा ।**

**बादरतेपणिभूजलवादाणं चरिमसायरं पुण्णं ॥२१३॥**

आवत्यसंख्यभागेनावहितपल्योनसागरार्धच्छेदाः ।

बादरतेपनिभूजलवातानां चरमः सागरः पूर्णः ॥२१३॥

टीका — बादर अग्निकायिक, अप्रतिष्ठित-प्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पती, पृथ्वी, अप, वायु इन छहौ राशि के अर्धच्छेदों का परिमाण प्रथम कहिए है । अर्धच्छेद का स्वरूप पूर्वे धारानि का कथन विषे कह्या ही था, सो इहा एक बार आवली का असंख्यातवा भाग का भाग पल्य कौ दीएं, जो एक भाग का परिमाण आवै, तितना सागर मे सो घटाइए, तब बादर अग्निकायिक जीवनि का जो परिमाण, ताके अर्ध-

तितने-तितने प्रमाण करि, पूर्वराशि कौ गुणै, उत्तर राशि का प्रमाण होइ । सो इहां सामान्यपनै गुणकार का प्रमाण सर्वत्र असंख्यात लोकमात्र है । इहा पूर्वोक्त प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणै असंख्यात लोक कैसे होइ ? सो इस कथन कौ प्रकट अक-सदृष्टि करि अर अर्थसंदृष्टि करि दिखाइए है । जैसे सोलह दूवानि कौ परस्पर गुणै, पणट्ठी होइ, तौ चौसठि दूवानि कौ परस्पर गुणै, कितने होइ, अैसे त्रैराशिक करिएं । तहा प्रमाणराशि विषे देयराशि दोय विरलनराशि सोलह, फलराशि पणट्ठी (६५५३६) इच्छाराशि विषे देयराशि दोय विरलनराशि चौसठि ।

अब इहा लब्धराशि का प्रमाण ल्यावने कौ करण सूत्र कहै है -

**दिण्णच्छेदेणवहिद-इट्ठच्छेदेहिं पयदविरलणं भजिदे ।**

**लब्धमिदइट्ठरासीणणोण्हदीए होदि पयदधणं ॥२१५॥**

देयच्छेदेनावहितेष्टच्छेदैः प्रकृतविरलनं भाजिते ।

लब्धमितेष्टराश्यन्योन्यहत्या भवति प्रकृतधनम् ॥२१५॥

टीका - देयराशि के अर्धच्छेद का प्रमाण करि, जे फलराशि के अर्धच्छेद प्रमाणराशि विषे विरलनराशि रूप कहे, तिनिका भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तीहि करि इच्छाराशि रूप प्रकृतराशि विषे जो विरलनराशि का प्रमाण कह्या, ताकौ भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना जायगा फलराशिरूप जो इष्टराशि, ताकौ माडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण आवै, तितना लब्धराशिरूप प्रकृतिधन का प्रमाण हो है । सो इहा देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक, तीहिका जे फलराशि पणट्ठी के अर्धच्छेद प्रमाणराशि विषे विरलनराशिरूप कहे सोलह, तिनिकौ भाग दीए, सोलह ही पाए । इनिका साध्यभूत राशि का इच्छाराशि विषे कह्या, जो विरलनराशि चौसठि, ताकौ भाग दीए, च्यारि पाए । सो च्यारि जायगा फलराशि-रूप पणट्ठी माडि ६५५३६ । ६५५३६ । ६५५३६ । ६५५३६ । परस्पर गुणै, लब्ध-राशि एकट्ठी प्रमाण हो है । अैसे ही यथार्थ कथन जानना ।

जो पूर्वे गणित कथन विषे लोक के अर्धच्छेदनि का जेता परिमाण कह्या है; तितने दूवे माडि परस्पर गुणै; लोक होइ, तौ इहां अग्निकायिक राशि के अर्धच्छेद प्रमाण दूवे माडि, परस्पर गुणै कितने लोक होहि ? अैसे त्रैराशिक करि इहां प्रमाण-राशि विषे देयराशि दोय, विरलनराशि लोक का अर्धच्छेदराशि, अर फलराशि

लोक अर इच्छाराशि विषे देयराशि दोय, विरलनराशि अग्निकायिकराशि के अर्धच्छेद प्रमाण जानना । तहां लब्धराशि ल्यावने कौ देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक, ताका भाग फलराशि (जो) लोक, ताका अर्धच्छेदरूप प्रमाणराशि विषे विरलनराशि है, ताकाँ भाग दीएं लोक का अर्धच्छेद मात्र पाए । इनका साध्यभूत अग्निकायिक राशि का अर्धच्छेदरूप जो इच्छाराशि, ताविषे विरलनराशि अग्निकायिक राशि के अर्धच्छेद, तिनकौ भाग दीएं, जो प्रमाण आया, सो किछू घाटि संख्यात पल्य कौ लोक का अर्धच्छेदराशि का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ तितना यह प्रमाण आया । सो इतने लोक मांडि, परस्पर गुणै, जो असंख्यात लोक मात्र परिमाण भया, सोई लब्धराशिरूप बादर अग्निकायिकराशि का प्रमाण इहां जानना । इहां किंचि-दून संख्यात पल्य प्रमाण लोकनि कौ परस्पर गुणै, जो महत् असंख्यात लोक मात्र परिमाण आया, सो तौ भाज्यराशि जानना । अर लोक का अर्धच्छेद प्रमाण लोकनि कौ परस्पर गुणै, जो छोटा असंख्यात लोकमात्र परिमाण आया, सो भाग-हार जानना । भागहार का भाग भाज्य कौ दीएं, जो प्रमाण होइ, तितना बादर अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण जानना । बहुरि इहां अग्निकायिकराशि विषे जो भागहार कह्या, सो अगले अप्रतिष्ठित प्रत्येक आदि राशिनि विषे जो भागहार का प्रमाण पूर्वोक्त प्रकार कीएं आवै, तिन सबनि तै असंख्यात लोक गुणा जानना । जातै सागर में स्यौ जो-जो राशि घटाया, सो-सो क्रमतै आवली का असंख्यातवां भाग गुणा घाटि । तातै प्रमाणराशि फलराशि पूर्वोक्तवत् स्थापि अर इच्छाराशि विषे विरलनराशि अपने-अपने अर्धच्छेद प्रमाण स्थापि, पूर्वोक्त प्रकार त्रैराशि करि अप्रतिष्ठित प्रत्येक आदि राशि भी सामान्यपनै असंख्यात लोकमात्र है । तथापि उत्तर उत्तरराशि असंख्यात लोक गुणा जानना । भागहार जहा घटता होइ, तहा राशि बधता होइ, सो इहां भागहार असंख्यात लोक गुणा घटता क्रमतै भया; तातै राशि असंख्यात लोक गुणा भया । इहां असंख्यात लोक वा आवली का असंख्यातवां भाग की सदृष्टि स्थापि अर्थसदृष्टि का स्थापन है । सो आगे सदृष्टि अधिकार विषे लिखेगे ।

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम संस्कृतटीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नामा इस भाषा टीका विषे जीवकांड विषे प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनविषे कायप्ररूपणा नामा आठवा अधिकार सपूर्ण भया ॥८॥



## नववां अधिकार : योग-माठोणा-प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

कुंदकुसुमसम दंतजुत, पुष्पदंत जिनराय ।  
वंदौ ज्योति अनंतमय, पुष्पदंतवतकाय ॥९॥

आगे शास्त्रकर्ता योगमार्गणा का निरूपण करे है । तहा प्रथम ही योग का सामान्य लक्षण कहै है -

पुगलविवाइदेहोदयेण मणवयणकायजुत्तस्स ।  
जीवस्स जा हु सत्ती, कम्ममकारणं जोगो ॥२१६॥

पुद्गलविपाकिदेहोदयेन मनोवचनकाययुक्तस्य ।  
जीवस्य या हि शक्तिः, कर्ममकारणं योगः ॥२१६॥

टीका - संसारी जीव के कर्म, जो जानावरणादिक-कर्म अर उपलक्षण ते औदारिकादिक नोकर्म, तिनि का आगम कहिए कर्म-नोकर्म वर्गणारूप पुद्गलस्कधनि का कर्म-नोकर्मरूप परिणमना, ताकौ कारणभूत जो शक्ति वहरि उस शक्ति का धारी जो आत्मा, ताके प्रदेशनि का चचलरूप होना, सो योग कहिए है ।

कैसा है जीव ? पुद्गलविपाकी जो यथामभव अगोपाग नाम प्रकृति वा देह जो गरीर नाम प्रकृति ताका उदय जो फल देना रूप परिणमना, ताकरि मन वा भाषा वा गरीररूप जे पर्याप्त, तिनि कौ धरे है ।

मनोवर्गणा, भाषावर्गणा, कायवर्गणा का अवलंबन करि सयुक्त है । इहा अगोपाग वा गरीर नाना नामकर्म के उदय ते गरीर, भाषा, मनःपर्याप्तिरूप परिणमना वाय, भाषा, मन वर्गणा का अवलंबन युक्त आत्मा, ताको लोकमात्र सर्व प्रदेशनि विषे प्राप्त जो पुद्गलस्कधनि कौ कर्म-नोकर्मरूप परिणमावने कौ कारणभूत शक्ति-नमर्थता; सो भाव-योग है ।

वहरि उस शक्ति का धारी आत्मा के प्रदेशनि विषे किछु चलनरूप सकंप राना सो द्रव्य-योग है ।

इहां यहु अर्थ जानना जैसे अग्नि के संयोग करि लोहे के जलावने की शक्ति हो है । तैसे अंगोपाग शरीर नामा नामकर्म के उदय करि मनो वर्गणा वा भाषा वर्गणा का आए पुद्गल स्कंध अर आहार वर्गणा का आए नोकर्म पुद्गल स्कंध, तिनि का संबंधकरि जीव के प्रदेशनि के कर्म-नोकर्म ग्रहण की शक्ति-समर्थता हो है ।

आगे योगनि का विशेष लक्षण कहै है—

**मणवयणाण पउत्ती, सच्चवासच्चुभयअणुभयत्थेसु ।**

**तण्णामं होदि तदा, तेहिं दु जोगा हु तज्जोगा ॥२१७॥**

मनोवचनयोः प्रवृत्तयः, सत्यासत्योभयानुभयार्थेषु ।

तन्नाम भवति तदा, तैस्तु योगाद्धि तज्जोगाः ॥२१७॥

टीका — सत्य, असत्य, उभय, अनुभय रूप जे पदार्थ, तिनि विषे जो मन, वचन की प्रवृत्ति होइ, उनके जानने कौ वा कहने कौ जीव की प्रयत्नरूप प्रवृत्ति होइ, सो सत्यादिक पदार्थ का संबंध तै, तो सत्य, असत्य, उभय, अनुभय है, विशेषण जिनि का, अैसे च्यारि प्रकार मनोयोग अर च्यारि प्रकार वचनयोग जानने । तहां यथार्थ जैसा का तैसा सांचा जानगोचर जो पदार्थ होइ, ताकौ सत्य कहिए । जैसे जल का जानना के गोचर जल होइ जातै स्नान-पानादिक जल संबंधी क्रिया उसतै सिद्ध हो है; तातै सत्य कहिए ।

बहुरि अयथार्थ अन्यथारूप पदार्थ जो मिथ्याज्ञान के गोचर होइ, ताकौ असत्य कहिए । जैसे जल का जानना के गोचर भाडली ( मृगजल ) होइ, जातै स्नान-पानादिक जल संबंधी क्रिया भाडली स्यो सिद्ध न हो है, तातै असत्य कहिए ।

बहुरि यथार्थ वा अयथार्थ रूप पदार्थ जो उभय ज्ञान गोचर होइ, ताकौ उभय कहिए । जैसे कमडलु विपै घट का जान होइ, जातै घट की ज्यौ जलधारणादि क्रिया कमडलु स्यो सिद्ध हो है, तातै सत्य है । बहुरि घटका-सा आकार नाहीं है, तातै असत्य है; अैसे यहु उभय जानना ।

बहुरि जो यथार्थ अयथार्थ का निर्णय करि रहित पदार्थ, जो अनुभय ज्ञान गोचर होइ, ताकौ अनुभय कहिए । सत्य-असत्यरूप कहने योग्य नाहीं, जैसे यह किछू प्रतिभासै है, अैसे सामान्यरूप पदार्थ प्रतिभास्या, तहा उस पदार्थ करि कोन

क्रिया सिद्ध हो है, असा विशेष निर्णय न भया, तातै सत्य भी न कह्या जाय, वहुरि सामान्यपनै प्रतिभास्या तातै असत्य भी न कह्या जाय तातै याकौ अनुभय कहिए ।

असै च्यारि प्रकार पदार्थनि विषै मन की वा वचन की प्रवृत्ति होंइ सो च्यारि प्रकार मनोयोग वा च्यारि प्रकार वचनयोग जानने ।

इहां घट विषै घट कौ विकल्प, सो सत्य, अर घट विषै पट का विकल्प, सो असत्य, अर कुंडी विषै जलधारण करि घट का विकल्प, सो उभय अर संबोधन आदि विषै हे देवदत्त ! इत्यादि विकल्प सो अनुभय जानना ।

आगे सत्य पदार्थ है गोचर जाकै, असा मनोयोग सो सत्य मनोयोग; इत्यादिक विशेष लक्षण च्यारि गाथानि करि कहै है —

**सबभावमणो सच्चो, जो जोगो तेण सच्चमणजोगो ।**

**तव्विवरीओ मोसो, जाणुभयं सच्चमोसोस्तेन त्ति १ ॥२१८॥**

सद्भावमनः सत्यं, यो योगः स तु सत्यमनोयोगः ।

तद्विपरीतो मृषा, जानीहि उभयं सत्यमृषेति ॥२१८॥

टीका — ‘सद्भावः’ कहिए सत्पदार्थ हो है गोचर जाका, असा जो मन सत्य पदार्थ के जान उपजावनेकी शक्ति लीएं भाव-मन होंइ, तीहि सत्यमन करि निपज्या जो चेष्टा प्रवर्तन रूप योग, सो सत्यमनोयोग कहिये ।

वहुरि असै ही विपरीत असत्य पदार्थरूप विषय के जान उपजावने की शक्ति रूप जो भाव-मन, ताकरि जो चेष्टा प्रवर्तन रूप योग होंइ, सो असत्यमनोयोग कहिए ।

वहुरि युगपत् सत्य-असत्य रूप, पदार्थ के जान उपजावने की शक्तिरूप जो भाव-मन, ताकरि जो प्रवर्तन रूप योग होंइ, सो उभयमनोयोग कहिये—असै हे भव्य ! नृ जानि ।

**ण य सच्चमोसजुत्तो, जो दु मणो सो असच्चमोसमणो ।**

**जो जोगो तेण हवे, असच्चमोसो दु मणजोगो २ ॥२१९॥**

१—पट्टनडागम-धयना पुस्तक १, पृ. स. २६३, गा. म. १५३ । कुछ पाठभेद—मवभावो मच्चमणो, मणिजोगो, मच्चमण नि ।

२ — पट्टनडागम — धयना पुस्तक—१ पृष्ठ स. २०४, गा. सं. १५७ ।

न च सत्यमृषायुक्तं, यत्तु मनस्तदसत्यमृषामनः ।

यो योगस्तेन भवेत्, असत्यमृषा तु मनोयोगः ॥२१९॥

टीका — जो मन सत्य अर मृषा कहिए असत्य, तीहि करि युक्त न होइ बहुरि सत्य असत्य का निर्णय करि रहित जो अनुभय पदार्थ, ताके ज्ञान उपजावने की शक्तिरूप जो भाव मन, तीहि करि निपज्या जो प्रवर्तनरूप योग, सो सत्य-असत्य रहित अनुभय मनोयोग कहिए । असै च्यारि प्रकार मनोयोग कह्या ॥२१९॥

दसविहसच्चे वयणे, जो जोगो सो दु सच्चवचिजोगो ।

तद्विवरीओ मोसो, जाणुभयं सच्चमोसो त्ति ? ॥२२०॥

दशविधसत्ये वचने, यो योगः स तु सत्यवचोयोगः ।

तद्विपरीतो मृषा, जानीहि उभयं सत्यमृषेति ॥२२०॥

टीका — सत्य अर्थ का कहनहारा सो सत्य वचन है । जनपद नै आदि देकरि दस प्रकार सत्यरूप जो पदार्थ, तीहि विषै वचनप्रवृत्ति करने कौ समर्थ, स्वरनामा नामकर्म के उदय तै भया भाषा पर्याप्ति करि निपज्या, जो भाषा वर्गणा आलबन लीएं, आत्मा के प्रदेशनि विषै शक्तिरूप भाववचन करि उत्पन्न भया जो प्रवृत्तिरूप विशेष, सो सत्यवचन योग कहिए ।

बहुरि तीहिस्यों विपरीत असत्य पदार्थ विषै वचनप्रवृत्ति कौ कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो असत्य वचन कहिए ।

बहुरि कमंडलु विषै यहु घट है इत्यादिक सत्य-असत्य पदार्थ विषै वचन प्रवृत्ति कौ कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो उभय वचन योग कहिए, असै हे भव्य । तू जानि ।

जो णेव सच्चमोसो, सो जाण असच्चमोसवचिजोगो ।

अमणाणं जा भासा, सण्णीणामंतणी आदी २ ॥२२१॥

यो नैव सत्यमृषा, स जानीहि असत्यमृषावचोयोगः ।

अमनसां या भाषा, संज्ञिनामामंत्रण्यादिः ॥२२१॥

१. — षट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृ. २८८, गा स १५८.

२. — षट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृ. २८८, गा. स. १५९

टीका — जो सत्य असत्यरूप न होइ असा पदार्थ विषे वचनप्रवृत्ति कौ कारण जो भाव वचन, तीहि करि जो प्रवर्तनरूप योग होइ, सो सत्य असत्य निर्णय रहित अनुभय वचन योग जानना । ताकां उदाहरण — उत्तर आधा सूत्र करि कहै है । जो वेइंद्रियादिक असैनी पंचेद्रिय पर्यंत जीवनि कै केवल अनक्षररूप भाषा है, सो सर्व अनुभय वचन योग जानना । वा सैनी पंचेद्रिय जीवनि के आगै कहिए है, जो आमत्रणी आदि अक्षररूप भाषा, सो सर्व अनुभय वचन योग जानना ।

आगै जनपद आदि दस प्रकार सत्य कौ उदाहरण पूर्वक तीनि गाथानि करि कहै है —

जणवदसम्मदिठवणा, णामे रूवे पडुच्चववहारे ।  
संभावणे य भावे, उवमाए दसविहं सच्चं ॥२२२॥

जनपदसम्मतिस्थापनानाम्नि रूपे प्रतित्यव्यवहारयोः ।  
संभावनायां च भावे, उपमायां दशविधं सत्यम् ॥२२२॥

टीका — जनपद विषे, संवृति वा सम्मति विषे, स्थापना विषे, नाम विषे, रूप विषे, प्रतीत्य विषे, व्यवहार विषे, संभावना विषे, भाव विषे, उपमा विषे असै दस स्थाननि विषे दस प्रकार सत्य जानना ।

भत्तां देवी चंदप्पह, पडिमा तह य होदि जिणदत्तो ।  
सेदो दिग्घो रज्झदि, कूरो ति य जं हवे वयणां ॥२२३॥

भक्तं देवी चंद्रप्रभप्रतिमा तथा च भवति जिनदत्तः ।  
श्वेतो दीर्घो रध्यते, कूरमिति च यद्भूवेद्वचनम् ॥२२३॥

टीका — दस प्रकार सत्य कह्या, ताका उदाहरण अनुक्रम तै कहिए है ।

देशनि विषे, व्यवहारी मनुष्यनि विषे प्रवृत्तिरूप वचन सो जनपद सत्य कहिए । जैसे ओदन कौ महाराष्ट्र देश विषे भातू वा भेटू कहिए । अघ्रदेश विषे बटक वा मुकूडु कहिए । कर्णाट देश विषे कूलु कहिए । द्रविड देश विषे चोरु कहिए, इत्यादिक जानना ।

वट्टि जो संवृति कहिए कल्पना वा सम्मति कहिए बहुत जीवनि करि तैसें जे मानना नव देशनि विषे समान रुदिरूप नाम, सो संवृति सत्य कहिए वा इस

अनुभय भाषा जाननी । जैसे सत्य असत्य लक्षण रहित आमंत्रणी आदि अनुभय भाषा जाननी । इनि विषे सत्य असत्य का निर्णय नाही, सो कारण कहै हैं । जाते जैसे वचननि का सुननेवाला के सामान्यपना करि तौ अर्थ का अवयव प्रगट हूवा, ताते असत्य न कही जाइ । वहुनि विशेषपना करि अर्थ का अवयव प्रगट न हूवा ताते सत्य भी न कहा जाय, ताते अनुभय कहिए । जैसे कही 'तू आव' सो इहां सभी सुननेवाला नै सामान्यपनै जान्या कि बुलाया है, परंतु वह आवैगा कि न आवैगा ऐसा विशेष निर्णय तौ उस वचन में नाही । ताते इसको अनुभय कहिए । जैसे सब का जानना । अन्य भी अनुभय वचन के भेद है । तथापि इन भेदनि विषे गर्भित जानने । अथवा जैसे ही उपलक्षण ते ऐसी ही व्यक्त अव्यक्त वस्तु का अंश की जनावनहारी और भी अनुभय भाषा जुदी जाननी ।

इहां कोऊ कहैगा कि अनक्षर भाषा का तौ सामान्यपना भी व्यक्त नाही हो है, याको अनुभय वचन कैसे कहिए ?

ताको उत्तर — कि अनक्षर भाषावाले जीवनि का संकेतरूप वचन हो है । तिस ते उनका वचन करि उनके सुख-दुख आदि का अवलबन करि हर्षादिक रूप अभिप्राय जानिए हैं । ताते अनक्षर शब्द विषे भी सामान्यपना की व्यक्तता संभव है ।

आगे ए मन वचन योग के भेद कहे, तिनिका कारण कहै हैं—

मणवयणाणं मूलणिमित्तं खलु पुण्णदेहउदओ दु ।

मोसुभयाणं मूलणिमित्तं खलु होदि आवरणं ॥२२७॥

मनोवचनयोर्मूलनिमित्तं खलु पूर्णदेहोदयस्तु ।

मृपोभययोर्मूलनिमित्तं खलु भवत्यावरणम् ॥२२७॥

टीका — सत्यमनोयोग वा अनुभयमनोयोग वहुनि सत्यवचनयोग वा अनुभयवचनयोग, इनिका मुख्य कारण पर्याप्त नामा नामकर्म का उदय अरु जरीर नामा नामकर्म का उदय जानना । जाते सामान्य है, सो विशेष विना न हो है । ताने मन वचन का सामान्य ग्रहण हूवा, तहां उस ही का विशेष जो है, सत्य अनुभय, ताका ग्रहण नहज ही सिद्ध भया । अथवा असत्य-उभय का आगे

निकट ही कथन है । तातै इहां अवशेष रहे सत्य-अनुभय, तिनि का ही ग्रहण करना । बहुरि आवरण का मंद उदय होतै असत्यपना की उत्पत्ति नाही हो है । तातै असत्य वा उभय मनोयोग अर वचनयोग का मुख्य कारण आवरण का तीव्र अनुभाग का उदय जानना । इसहू विषै इतनां विशेष है, तीव्रतर आवरण के अनुभाग का उदय असत्य मन-वचन कौ कारण है । अर तीव्र आवरण के अनुभाग का उदय उभय मन-वचन कौ कारण है ।

इहां कोऊ कहै कि असत्य वा उभय मन-वचन का कारण दर्शन वा चारित्र मोह का उदय क्यौ न कहौ ?

ताकां समाधान — कि असत्य अर उभय मन, वचन, योग मिथ्यादृष्टीवत् असंयत सम्यग्दृष्टी कै वा सयमी कै भी पाइए । तातै तू कहै सो बनै नाही । तातै सर्वत्र मिथ्यादृष्टी आदि जीवनि के सत्य-असत्य योग का कारण मंद वा तीव्र आवरण के अनुभाग का उदय जानना । केवली कै सत्य-अनुभय योग का सद्भाव सर्व आवरण के अभाव तै जानना । अयोग केवली कै शरीर नामा नामकर्म का उदय नाही । तातै सत्य अर अनुभय योग का भी सद्भाव नाही है ।

इहां प्रश्न उपजै है कि—केवली कै दिव्यध्वनि है, ताके सत्य-वचनपना वा अनुभय वचनपना कैसे सिद्धि हो है ?

ताकां समाधान—केवली कै दिव्यध्वनि हो है; सो होते ही तौ अनक्षर हो है; सो सुनने वालों के कर्णप्रदेश कौ यावत् प्राप्त न होइ तावत् काल पर्यंत अनक्षर ही है । तातै अनुभय वचन कहिए । बहुरि जब सुनने वालों के कर्ण विषै प्राप्त हो है; तव अक्षर रूप होइ, यथार्थ वचन का अभिप्राय रूप संशयादिक कौ दूर करै है । तातै सत्य वचन कहिए । केवली का अतिशय करि पुद्गल वर्गणा तैसे ही परिणामि जांय है ।

आगै सयोग केवली कै मनोयोग कैसे संभवै है ? सो दोय गाथानि करि कहै हैं —

मणसहियाणं वयणं, दिट्ठं तप्पुच्चमिदि सजोगम्हि ।

उत्तो मणोवयारेणिंदियणाणेण हीणम्मि ॥२२८॥

मनःसहितानां वचनं, दृष्टं तत्पूर्वमिति सयोगे :

उक्तो मन उपचारेणोद्भियज्ञानेन हीने ॥२२८॥

टीका - इन्द्रिय ज्ञान जो मतिज्ञान, तीहि करि रहित अइसा जु सयोग केवली, तीहि विषे मुख्यपनै तौ मनो योग है नाहीं, उपचारतै है । सो उपचार विषे निमित्त का प्रयोजन है; सो निमित्त इहां यहु जानना - जैसे हम आदि छद्मस्थ जीव मन करि संयुक्त, तिनिके मनोयोग पूर्वक अक्षर, पद, वाक्य, स्वरूप वचनव्यापार देखिए है । तातैं केवली कै भी मनोयोग पूर्वक वचन योग कह्या ।

इहां प्रश्न - कि छद्मस्थ हम आदि अतिशय रहित पुरुषनि विषे जो स्वभाव देखिए, सो सातिशय भगवान केवली विषे कैसे कल्पिए ?

ताकां समाधान - सादृश्यपना नाहीं है; इस ही वास्ते छद्मस्थ कै मनोयोग मुख्य कह्या । अर केवली कै कल्पनामात्र उपचाररूप मनोयोग कहा है ।

सो इस कहने का भी प्रयोजन कहै है—

अंगोवंगुदयादो, द्रव्यमण्डलं जिणंदचंदहि ।

मणवर्गणाखंधाणं, आगमणादो दु मणजोगो ॥२२९॥

अंगोपांगोदयात्, द्रव्यमनोऽर्थं जिनेन्द्रचंद्रे ।

मनोवर्गणास्कंधानामागमनात् तु मनोयोगः ॥२२९॥

टीका - जिन है इद्र कहिए स्वामी जिनिका, अइसे जो सम्यग्दृष्टी, तिनिके चंद्रमा समान ससार-आताप अर अज्ञान अवकार का नाश करनहारा, अइसा जो नयोगी जिन, तीहि विषे अंगोपांग नामा नामकर्म के उदय तै द्रव्यमन फूल्या आठ पांखडी का कमल के आकार हृदय स्थानक के मध्य पाईए है । ताके परिणमने का कारणभूत मन वर्गणा का आगमन तैं द्रव्य मन का परिणमन है । तातैं प्राप्तिरूप प्रयोजन तैं पूर्वोक्त निमित्त तैं मुख्यपनै भावमनोयोग का अभाव है । तथापि मन-योग उपचार मात्र कह्या है । अथवा पूर्व गाथा विषे कह्या था; आत्मप्रदेशनि कै कर्म नोकर्म का ग्रहणरूप शक्ति, सो भावमनोयोग, वहुनि याही तैं उत्पन्न भया मनोवर्गणाखण्ड पृथग्वर्तन का मनरूप परिणमना, सो द्रव्यमनोयोग, सो इस गाथा मूल करि नंभव है । तातैं केवली के मनोयोग कह्या है । तु शब्द करि केवली कै



पूर्वोक्त उपचार कह्या, तिसके प्रयोजनभूत सर्व जीवनि की दया, तत्त्वार्थ का उपदेश शुक्लध्यानादि सर्व जानने ।

आगे काययोग का निरूपण प्रारभ है । तहां प्रथम ही काय योग का भेद औदारिक काययोग, ताकौ निरुक्तिपूर्वक कहै है -

**पुरुमहदुदारुरालं, एयठ्ठो संविजाण तम्मि भवं ।**

**औरालियं तमु (त्तिउ)चचइ औरालियकायजोगो सोः ॥२३०॥**

पुरुमहदुदारुमुरालमेकार्थः संविजानीहि तस्मिन्भवम् ।

औरालिकं तदुच्यते औरालिककाययोगः सः ॥२३०॥

टीका - पुरु वा महत् वा उदार वा उराल वा स्थूल ए एकार्थ है । सो स्वार्थ विषे ठण् प्रत्यय तै जो उदार होइ वा उराल होइ, सो औदारिक कहिए वा औरालिक भी कहिए अथवा भव अर्थ विषे ठण् प्रत्यय तै जो उदार विषे वा उराल विषे उत्पन्न होइ, सो औदारिक कहिए वा औरालिक भी कहिए । बहुरि सचयरूप पुद्गलपिड, सो औदारिक काय कहिए । औदारिक शरीर नामा नामकर्म के उदय तै निपज्या औदारिक शरीर के आकार स्थूल पुद्गलनि का परिणामन, सो औदारिक काय जानना । वैक्रियिक आदि शरीर सूक्ष्म परिणाम है, तिनकी अपेक्षा यहु स्थूल है; तातै औदारिक कहिए है ।

इहां प्रश्न - उपजै है कि सूक्ष्म पृथ्वीकायिकादि जीवनि कै स्थूलपना नाही है, तिनकौ औदारिक शरीर कैसे कहिए है ?

ताकां समाधान - इन हूतै वैक्रियिकादिक शरीर सूक्ष्म परिणाम है, तातै तिनकी अपेक्षा स्थूलपना आया । अथवा परमागम विषे ऐसी रूढि है; तातै समभिरूढि करि सूक्ष्म जीवनि कै औदारिक शरीर कह्या; सो औदारिक शरीर के निमित्त आत्मप्रदेशनि कै कर्म-नोकर्म ग्रहण की शक्ति, सो औदारिक काय योग कहिए है । अथवा औदारिक वर्गणारूप पुद्गल स्कधनि कौ औदारिक शरीररूप परिणामावने कौ कारण, जो आत्मप्रदेशनि का चचलपना, सो औदारिक काययोग हे भव्य ! तू जानि । अथवा औदारिक काय सोई औदारिककाय योग है । इहां कारण

विषै कार्य का उपचार जानना । इहां उपचार है सो निमित्त अर प्रयोजन धरै है । तहां औदारिक काय तै जो योग भया, सो औदारिक काय योग कहिए; सो यहु तौ निमित्त । बहुरि तिस योग तै ग्रहे पुद्गलनि का कर्म-नोकर्मरूप परिणामन, सो प्रयोजन सभवै है । तातै निमित्त अर प्रयोजन की अपेक्षा उपचार कह्या है ।

आगे औदारिक मिश्रकाययोग कौ कहै है —

ओरालिय उत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं ।

जो तेण संपजोगो, ओरालियमिस्सजोगो सो? ॥२३१॥

औरालिकमुक्तार्थं, विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूर्णं तत् ।

यस्तेन संप्रयोगः, औरालिकमिश्रयोगः सः ॥२३१॥

टीका — पूर्वोक्त लक्षण लीएं जो औदारिक शरीर, सो यावत् काल अंतर्मुहूर्त पर्यंत पूर्ण न होइ, अपर्याप्त होइ, तावत् काल औदारिक मिश्र नाम अनेक कै मिलने का है; सो इहां अपर्याप्त काल संबंधी तीन समयनि विषै संभवता जो कार्माणयोग, ताकी उत्कृष्ट कार्माण वर्गणा करि संयुक्त है; तातै मिश्र नाम है । अथवा परमागम विषै अैसे ही रूढि है । जो अपर्याप्त शरीर कौ मिश्र कहिए, सो तीहि औदारिक मिश्र करि सहित संप्रयोग कहिए, ताके अर्थ प्रवर्त्या जो आत्मा कै कर्म-नोकर्म ग्रहणे की शक्ति धरै प्रदेशनि का चचलपना; सो योग है । सो शरीर पर्याप्ति की पूर्णता के अभाव तै औदारिक वर्गणा स्कंधनि कौ संपूर्ण शरीररूप परिणामावने कौ असमर्थ है । असा औदारिक मिश्र काययोग तू जानि ।

आगे विक्रियिक काय योग कौ कहै है—

विविहगुणइड्ढजुत्तं, विक्करियं वा हु होदि वेगुव्वं ।

तिस्से भवं च रोयं, वेगुव्विककायजोगो सो २ ॥२३२॥

विविधगुणद्वियुक्तं, विक्रिय वा हि भवति विगूर्वम् ।

तस्मिन् भवं च ज्ञेयं, वेगूर्विककाययोगः सः ॥२३२॥

१ पट्टपाठगम — धवना पुस्तक १ पृष्ठ २६३, गा स. १६१

२ पट्टपाठगम — धवना पुस्तक १, पृष्ठ २६३, गाथा १६२ ।

टीका — विविध नानाप्रकार शुभ अशुभरूप अणिमा, महिमा आदि गुण तिनकी ऋद्धि जो महत्ता, तीहि करि संयुक्त देव-नारकीनि का शरीर, सो वैगूर्व कहिए वा वैगूर्विक कहिए वा वैक्रियिक कहिए । तहा विगूर्व कहिए नानाप्रकार गुण, तिस विषै भया सो वैगूर्व है । अथवा विगूर्व है प्रयोजन जाका, सो वैगूर्विक है । इहां ठण् प्रत्यय आया है । अथवा विविध नानाप्रकार जो क्रिया, अनेक अणिमा आदि विकार सो विक्रिया । तहां भया होइ, वा सो विक्रिया जाका प्रयोजन होइ, सो वैक्रियिक है । ऐसी निरुक्ति जानना । जो वैगूर्विक शरीर के अर्थ तिस शरीररूप परिणामने योग्य जो आहार वर्णारूप स्कंधनि के ग्रहण करने की शक्ति धरै, आत्म-प्रदेशनि का चंचलपना, सो वैगूर्विक काय योग जानना ।

अथवा वैक्रियिक काय, सोई वैक्रियिक काय योग है । इहां कारण विषै कार्य का उपचार जानना । सो यहु उपचार निमित्त अर प्रयोजन पूर्ववत् धरै है । तहां वैक्रियिक काय तै जो योग भया, सो वैक्रियिक काय योग है । यहु निमित्त अर तिहि योग तै कर्म-नोकर्म का परिणमन होना, सो प्रयोजन सभवै ।

आगे देव-नारकी कै तौ कह्या और भी किसी-किसी कै वैक्रियिक काय योग संभवै है, सो कहै है —

बादरतेऊवाऊ, पंचिदियपुण्णगा विगुर्वन्ति ।  
औरालियं सरीरं, विगुर्वणप्पं हवे जेसिं ॥२३३॥

बादरतेजोवायुपंचेद्रियपूर्णका विगूर्वन्ति ।  
औरालिकं शरीरं, विगूर्वणात्मकं भवेद्येषाम् ॥२३३॥

टीका — बादर तेजकायिक वा वातकायिक जीव, बहुरि कर्मभूमि विषै जे उत्पन्न भए चक्रवर्ति कौ आदि देकरि सैनी पचेद्री पर्याप्त तिर्यच वा मनुष्य, बहुरि भोगभूमिया तिर्यच वा मनुष्य ते औदारिक शरीर कौ विक्रियारूप परिणामावै है । जिनिका औदारिक शरीर ही विक्रिया लीए पाइए है । ते जीव अपृथक् विक्रिया रूप परिणमै है । अर भोगभूमियां, चक्रवर्ति पृथक् विक्रिया भी करै है ।

जो अपने शरीर तै भिन्न अनेक शरीरादिक विकाररूप करै, सो पृथक् विक्रिया कहिए ।

बहुरि जो अपने शरीर ही कौं अनेक विकाररूप करै, सो अपृथक् विक्रिया कहिए ।

आगै वैक्रियिक मिश्रकाय योग कहैं हैं—

वेगुच्चियउत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं ।

जो तेण संपयोगो, वेगुच्चियमिस्सजोगो सो १ ॥२३४॥

वैगुर्विकमुक्तार्थं, विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूणं तत् ।

यस्तेन संप्रयोगो, वैगुर्विकमिश्रयोगः सः ॥२३४॥

टीका — पूर्वोक्त लक्षण ने लीएं जो वैगुर्विक वा वैक्रियिक शरीर, सो यावत् काल अंतर्मुहूर्त पर्यंत पूर्ण न होइ—शरीर पर्याप्ति की संपूर्णता का अभाव करि वैक्रियिक काययोग उपजावने कौं असमर्थ होइ, तावत् काल वैक्रियिक मिश्र कहिए । मिश्रपना इहां भी औदारिक मिश्रवत् जानना । तीहि वैक्रियिक मिश्र करि सहित संप्रयोग कहिए कर्म—नोकर्म ग्रहण की शक्ति कौं प्राप्त अपर्याप्त कालमात्र आत्मा के प्रदेशनि का चंचल होना : सो वैक्रियिक मिश्र काययोग कहिए । अपर्याप्त योग का नाम मिश्र योग जानना ।

आगै आहारक काययोग कौं पांच गाथानि करि कहैं हैं—

आहारस्सुदण य, पमत्तविरदस्स होदि आहारं ।

असंजमपरिहरणट्ठं, संदेहविणासणट्ठं च ॥२३५॥

आहारस्योदयेन च, प्रमत्तविरतस्य भवति आहारकम् ।

असंयमपरिहरणार्थं, संदेहविनाशनार्थं च ॥२३५॥

टीका — प्रमत्त विरति षष्ठम गुणस्थानवर्ती मुनि, ताके आहारक शरीर नामा नामकर्म के उदय तै आहार वर्गणाहप पुद्गल स्कंधनि का आहारक शरीर-रूप परिणमने करि आहारक शरीर हो है । सो किसै अर्थ हो है ? अटार्ई द्वीप विषे तीर्थयात्रादिक निमित्त वा असंयम दूरि करने के निमित्त वा ऋद्धियुक्त होतै

भी श्रुतज्ञानावरण वीर्यतिराय का क्षयोपशम की मंदता होते कौऊ धर्म्यध्यान का विरोधी शास्त्र का अर्थ विषै संदेह उपजै ताके दूर करने के निमित्त आहारक शरीर उपजै है ।

**णियखेत्ते केवलिदुगविरहे णिक्कम्मणपहुदिकल्लाणे ।  
परखेत्ते संवित्ते, जिणजिणघरवंदणट्ठं च ॥२३६॥**

निजक्षेत्रे केवलिद्विकविरहे निष्क्रमणप्रभृतिकल्याणे ।  
परक्षेत्रे संवृत्ते, जिनजिनगृहवंदनार्थं च ॥२३६॥

टीका — निज क्षेत्र जहा अपनी गमनशक्ति होंइ, तहा केवली श्रुतकेवली न पाइए । बहुरि परक्षेत्र, जहां अपने औदारिक शरीर की गमन शक्ति न होंइ, तहां केवली श्रुतकेवली होंइ अथवा तहा तपज्ञान निर्वाण कल्याणक होइ, तौ तहा असंयम दूर करने के निमित्त वा संदेह दूर करने के निमित्त वा जिन अर जिन-मंदिर तिन की वंदना करने के निमित्त, गमन करने कौ उद्यमी भया, जो प्रमत्त संयमी, ताके आहारक शरीर हो है ।

**उत्तमअंगम्हि हवे, धादुविहीणं सुहं असंहणणं ।  
सुहसंठाणं धवलं, हत्थपमाणं पसत्थुदयं ॥२३७॥**

उत्तमांगे भवेत्, धातुविहीनं शुभमसंहननम् ।  
शुभसंस्थानं धवलं हस्तप्रमाणं प्रशस्तोदय ॥२३७॥

टीका — सो आहारक शरीर कैसा हो है ? रसादिक सप्त धातु करि रहित हो है । बहुरि शुभ नामकर्म के उदय तै प्रशस्त अवयव का धारी शुभ हो है । बहुरि संहनन जो हाडों का बंधान तीहि करि रहित हो है । बहुरि शुभ जो सम चतुरस्रसंस्थान वा अगोपाग का आकार, ताका धारक हो है । बहुरि चंद्रकातमणि समान श्वेत वर्ण हो है । बहुरि एक हस्त प्रमाण हो है । इहां चौवीस व्यवहाग-गुल प्रमाण एक हस्त जानना । बहुरि प्रशस्त जो आहारक शरीर वंधनादिक पुण्य-रूप प्रकृति, तिन का है उदय जाके, असा हो है । असा आहारक गरीर उत्तमांग जो है मुनि का मस्तक, तहां उत्पन्न हो है ।

अव्याधादी अंतोमुहुत्तकालदिठदी जहण्णिदरे ।  
पज्जत्तीसंपुण्णे, मरणं पि कदाचि संभवई ॥२३८॥

अव्याधाति अंतर्मुहूर्तकालस्थिती जघन्येतरे ।  
पर्याप्तिसंपूर्णायां, मरणमपि कदाचित् संभवति ॥२३८॥

टीका - सो आहारक शरीर अव्याबाध है; वैक्रियिक शरीर की ज्यों कोई वज्र पर्वतादिक करि रुकि सकै नाही । आप किसी कौ रोकै नाही । बहुरि जाकी जघन्य वा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण स्थिति है; अैसा है । बहुरि जब आहारक शरीर पर्याप्ति पूर्ण होइ, तब कदाचित् कोई आहारक काययोग का धारी प्रमत्त मुनि का आहारक काययोग का काल विषै अपने आयु के क्षय तै मरण भी संभवै है ।

आहरदि अणेण मुणी, सुहमे अत्थे सयस्स संदेहे ।  
गत्ता केवलिपासं, तह्मा आहारगो जोगो ? ॥२३९॥

आहारत्यनेन मुनिः, सूक्ष्मानर्थान् स्वस्य संदेहे ।  
गत्वा केवलिपाश्वं तस्मादाहारको योगः ॥२३९॥

टीका - आहारक ऋद्धि करि संयुक्त प्रमत्त मुनि, सो पदार्थनि विषै आप के संदेह होतै, ताके दूरि करने के अर्थ केवली के चरण के निकट जाइ, आप तै अन्य जो केवली, तीहिकरि जो सूक्ष्म यथार्थ अर्थ कौ आहरति कहिए ग्रहण करै, सो आहारक कहिए । आहारस्वरूप होइ, ताकौ आहारक कहिए । सो ताकै तो शरीर पर्याप्ति पूर्ण होतै, आहार वर्गणानि करि आहारक शरीर योग्य पुद्गल स्कंधनि के ग्रहण करने की शक्ति धरै, आत्मप्रदेशनि का चचलपना; सो आहारक काययोग जानना ।

आगं आहारक मिश्र काययोग कौ कहै है—

आहारयमुत्तत्थं, विजाण मिस्सं तु अपरिपुण्णं तं ।  
जो तेण संपजोगो, आहारयमिस्सजोगो सो ? ॥२४०॥

१. पट्ठगुट्टागम - घवला पुस्तक १, पृष्ठ २६६ गाथा १६४ ।

२. पट्ठगुट्टागम - घवला पुस्तक १, पृष्ठ २६६, गाथा १६५ ।

आहारकमुक्तार्थं विजानीहि मिश्रं तु अपरिपूर्णं तत् ।

यस्तेन संप्रयोगः आहारकमिश्रयोगः सः ॥२४०॥

टीका — पूर्वोक्त लक्षण लीएं आहारक शरीर, सो यावत् काल अंतर्मुहूर्तपर्यंत पूर्ण न होइ, आहार वर्गणारूप पुद्गल स्कंधनि का आहारक शरीररूप परिणामावने कौ असमर्थ होइ, तावत् काल आहारक मिश्र कहिए । इहां पूर्वे जो औदारिक शरीररूप वर्गणा है, ताके मिलाप तै मिश्रपना जानना । तीहि आहारक मिश्र करि सहित जो संप्रयोग कहिए अपूर्ण शक्तियुक्त आत्मा के प्रदेशनि का चंचलपना, सो आहारक मिश्रकाययोग हे भव्य ! तू जानि ।

आगै कार्माण काय योग कौ कहै है—

कस्मेव य कस्मभवं, कस्मइयं जो दु तेण संजोगो ।

कस्मइयकायजोगो, इगिविगतिगसमयकालेसु<sup>१</sup> ॥२४१॥

कर्मैव च कर्मभवं, कार्मणं यस्तु तेन संयोगः ।

कार्मणकाययोगः, एकद्विकत्रिकसमयकालेषु ॥२४१॥

टीका — कर्म कहिए ज्ञानावरणादिरूप पुद्गल स्कंध, सोइ कार्माण शरीर जानना । अथवा कर्म जो कार्माण शरीर नामा नामकर्म, ताके उदय करि भया, सो कार्माण शरीर कहिए । तीहि कार्माण स्कंध सहित वर्तमान जो संप्रयोगः कहिए आत्मा के कर्मग्रहणशक्ति धरै प्रदेशनि का चंचलपना, सो कार्माणकाय योग है । सो विग्रह गति विषे एक समय वा दोय समय वा तीन समय काल प्रमाण हो है । अर केवल समुद्धात विषे प्रतरद्विक अर लोक पूर्ण इनि तीन समयनि विषे हो है । और काल विषे कार्माण योग न हो है । याही तै यहु जान्या, जो कार्माण विना और जे योग कहे, ते रुकै नाही, तौ अंतर्मुहूर्त पर्यंत एक योग का परिणामन उत्कृष्ट रहै; पीछै और योग होइ । बहुरि जो अन्य करि रुकै, तौ एक समयकी आदि देकरि अंतर्मुहूर्त पर्यंत एक योग का परिणामन यथासंभव जानना । सो एक जीव की अपेक्षा तौ अैसे है । अर नाना जीव की अपेक्षा 'उपसम सुहुम' इत्यादि गाथानि करि आठ सांतर मार्गणा विना अन्य मार्गणानि का सर्व काल सद्भाव कह्या ही है ।

आगे योगनि की प्रवृत्ति का विधान दिखावै है—

**वेगुव्विय-आहारयकिरिया ण समं प्रमत्तविरदहि ।**

**जोगोवि एक्ककाले, एक्केव य होदि णियमेण ॥२४२॥**

वेगुव्विकाहारकक्रिया न समं प्रमत्तविरते ।

योगोऽपि एककाले, एक एव च भवति नियमेन ॥२४२॥

टीका — प्रमत्त विरत षष्ठम गुणस्थानवर्ती मुनि के समकाल विषे युगपत् वैक्रियिक काययोग की क्रिया अर आहारक योग की क्रिया नाही । असा नाही कि एक ही काल विषे आहारक शरीर कौ धारि, गमनागमनादि कार्य कौ करे अर विक्रिया ऋद्धि कौ धारि, विक्रिया संबंधी कार्य कौ भी करे, दोऊ मे स्यौ एक ही होइ । यातें यहु जान्या कि गणधरादिकनि के और ऋद्धि युगपत् प्रवर्ते ती विरुद्ध नाही । बहुरि तैसे ही अपने योग्य अतर्मुहूर्त मात्र एक काल विषे एक जीव के युगपत् एक ही योग होइ, दोय वा तीन योग युगपत् न होइ, यहु नियम है । जो एक योग का काल विषे अन्य योग संबंधी गमनादि क्रिया की प्रवृत्ति देखिए है, सो पूर्वे जो योग भया था, ताके संस्कार तै हो है । जैसे कुभार पहिले चाक दंड करि फेर्या था, पीछे कुंभार उस चाक कौ छोडि अन्य कार्य कौ लाग्या, वह चाक संस्कार के बल तै केतेक काल आप ही फिर्या करे; संस्कार मिटि जाय, तव फिरै नाही । तैसे आत्मा पहिले जिस योगरूप परिणया था, सो उसको छोडि अन्य योगरूप परिणया, वह योग संस्कार के बल तै आप ही प्रवर्ते है । संस्कार मिटे जैसे छोड्या हूवा बाण गिरै, तैसे प्रवर्तना मिटे है । तातें संस्कार तै एक काल विषे अनेक योगनि की प्रवृत्ति जानना । बहुरि प्रमत्तविरति के संस्कार की अपेक्षा भी एक काल वैक्रियिक वा आहारक योग की प्रवृत्ति न हो है । अैसे आचार्य करि वर्णन किया है; सो जानना ।

आगे योग रहित आत्मा के स्वरूप कौ कहै है—

**जेसि ण संति जोगा सुहासुहा पुण्यपावसंजणया ।**

**ते होति अजोगिजिणा, अणोवमाणंतबलकलिया ॥२४३॥**

येषां न संति योगाः, शुभाशुभाः पुण्यपापसंजनकाः ।

ते भवंति अयोगिजिनाः, अनुपमानंतबलकलिताः ॥२४३॥



टीका — जिन आत्मनि के पुण्य पापरूप कर्म प्रकृति के वध कौ उपजावन हारे शुभरूप वा अशुभरूप मन, वचन, काय के योग न होहि ते अयोगी जिन, चौदह्वा अंत गुणस्थानवर्ती वा गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान जानने ।

कोऊ जानेगा कि योगनि के अभाव तै उनके बल का अभाव है । जैसे हम सारिखे जीवनि के योगनि के आश्रयभूत बल देखिए है ।

तहा कहिए है । कैसे है—सिद्ध ? ‘अनुपमानंतबलकलिताः’ कहिए जिनके बल कौ हम सारिखे जीवनि का बल की उपमा न बनै है । बहुरि केवलज्ञानवत् अक्षयानंत अविभाग प्रतिच्छेद लीए है, असा बल—वीर्य, जो सर्व द्रव्य-गुण-पर्याय का युगपत् ग्रहण की समर्थता, तीहि करि व्याप्त है । तीहि स्वभाव परिणए है । योगनि का बल कर्माधीन है । तातै प्रमाण लीए है, अनत नाही । परमात्मा का बल केवलज्ञानादिवत् आत्मस्वभावरूप है । तातै प्रमाण रहित अनत है; असा जानना ।

आगै शरीर का कर्म अर नोकर्म भेद दिखावै हैं —

**ओरालियवेगुन्विय, आहारयतेजणामकम्मदये ।**

**चउणोकम्मसरीरा, कम्मेव य होदि कम्मइयं ॥२४४॥**

**ओरालिकवैगूविकाहारकतेजोनामकर्मोदये ।**

**चतुर्नोकर्मशरीराणि, कर्मेव च भवति कार्मणम् ॥२४४॥**

टीका — औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजसरूप जो नामकर्म की प्रकृति तिनके उदय तै जे ए औदारिक आदि च्यारि शरीर होइ, ते नोकर्म शरीर जानने । नो शब्द का दोय अर्थ है, एक तौ निषेधरूप अर एक ईषत् स्तोकरूप । सो इहा कार्मण की ज्यो ए च्यारि शरीर आत्मा के गुण कौ घातै नाही वा गत्यादिकरूप पराधीन न करि सकै । तातै कर्म तै विपरीत लक्षण धरने करि इनिकौ अकर्म शरीर कहिए । वा कर्म शरीर के ए सहकारी है । तातै ईषत् कर्म शरीर कहिए । असे इनिकौ नोकर्म शरीर कहै । जैसे मन को नो-इन्द्रिय कहिए है; तैसे नोकर्म जानने । बहुरि कार्मण शरीर नामा नामकर्म के उदय तै जानावरणादिक कर्म स्कधरूप कर्म, सोई कर्म शरीर जानना ।

आगै जे ए औदारिकादिक शरीर कहै, तिनिका समयप्रबद्धादिक की सख्या दोय गाथानि करि कहिए है -

परमाणूहिं अणंतहिं, वगणसण्णा हु होदि एक्का हु ।  
ताहिं अणंतहिं नियमा, समयप्रबद्धो हवे एक्को ॥२४५॥

परमाणुभिरनंतैः वर्गणासंज्ञा हि भवत्येका हि ।  
ताभिरनंतैर्नियमात्, समयप्रबद्धो भवेदेकः ॥२४५॥

टीका - सिद्धराशि के अनंतवे भाग अर अभव्यराशि स्यौ अनंतगुणा ऐसा जो मध्य अनंतानंत का भेद, तीहि प्रमाण पुद्गल परमाणूनि करि जो एक स्कंध होइ, सो वर्गणा, ऐसा नाम जानना । संख्यात वा असख्यात परमाणूनि करि वर्गणा न हो है । जातै यद्यपि आगै पुद्गल वर्गणा के तेईस भेद कहैगे । तहा अणुवर्गणा, सख्याताणुवर्गणा, असख्याताणुवर्गणा आदि भेद है । तथापि इहा औदारिक आदि शरीरनि का प्रकरण विषै आहारवर्गणा वा तैजसवर्गणा वा कार्माणवर्गणा का ही ग्रहण जानना । बहुरि सिद्धनि के अनंतवे भाग वा अभव्यनि तै अनंतगुणी ऐसी मध्य अनंतानंत प्रमाण वर्गणा, तिनि करि एक समयप्रबद्ध हो है । समय विषै वा समय करि यहु जीव कर्म-नोकर्मरूप पूर्वोक्त प्रमाण वर्गणानि का समूहरूप स्कंध करि सबध करै है । तातै याकौ समयप्रबद्ध कहिए है । ऐसा वर्गणा का वा समय-प्रबद्ध का भेद स्याद्वादमत विषै है, अन्यमत विषै नाही । यहु विशेष नियम शब्द करि जानना ।

इहा कोऊ प्रश्न करै कि एक ही प्रमाण कौ सिद्धराशि का अनंतवा भाग वा अभव्यराशि तै अनंतगुणा असै दोय प्रकार कह्या, सो कौन कारण ?

ताकां समाधान - कि सिद्धराशि का अनंतवा भाग के अनंत भेद है । तहां अभव्यराशि तै अनंतगुणा जो सिद्धराशि का अनंतवा भाग होइ, सो इहा प्रमाण जानना । असै अल्प-बहुत्व करि तिस प्रमाण का विशेष जानने के अर्थि दोय प्रकार कह्या है । अन्य किछु प्रयोजन नाही ।

ताणं समयप्रबद्धा, सेडिअसंखेज्जभागगुणिदकमा ।  
णंतेण य तेजदुगा, परं परं होदि सुहमं खु ॥२४६॥

तेषां समयप्रबद्धाः, श्रेण्यसंख्येयभागगुणितक्रमाः ।

अनन्तेन च तेजोद्विकाः, परं परं भवति सूक्ष्मं खलु ॥२४६॥

टीका — तिन पंच शरीरनि के समयप्रबद्ध सर्व ही परस्पर समान नाही है । उत्तरोत्तर अधिक परमाणूनि का समूह लीए है; सो कहिए है । परमाणूनि का प्रमाण करि औदारिक शरीर का समयप्रबद्ध सर्व तै स्तोक है । यातै श्रेणी का असंख्यातवां भाग गुणा परमाणू प्रमाण वैक्रियिक का समयप्रबद्ध है । बहुरि यातै भी श्रेणिका असंख्यातवां भाग गुणा परमाणू प्रमाण आहारक का समयप्रबद्ध है । अैसे आहारक पर्यंत जगतश्रेणी का असंख्यातवां भाग कौ गुणकार की विवक्षा जाननी । तातै परे आहारक के समयप्रबद्ध तै अनंतगुणा परमाणू प्रमाण तैजस का समयप्रबद्ध है । बहुरि यातै भी अनंतगुणा परमाणू प्रमाण कार्मण का समय प्रबद्ध है । इहा 'अनन्तेन तेजोद्विक' इस करि तैजसकार्मण विषे अनन्तानंत गुणा प्रमाण जानना ।

बहुरि इहा कोऊ आशंका करै कि जो उत्तरोत्तर अधिके-अधिके परमाणू कहे, तो उत्तरोत्तर स्थूलता भी होयगी ?

तहां कहिए है—परं परं सूक्ष्मं भवति कहिए उत्तरोत्तर सूक्ष्म है । औदारिक तै वैक्रियिक सूक्ष्म है । वैक्रियिक तै आहारक सूक्ष्म है । आहारक तै तैजस सूक्ष्म है । तैजस तै कार्मण सूक्ष्म है । यद्यपि परमाणू तौ अधिक अधिक हैं, तथापि स्कंध का बंधन में विशेष है । तातै उत्तरोत्तर सूक्ष्म है । जैसे कपास के पिड तै लोह के पिड में अधिकपना होतै भी कपास के पिड तै लोह का पिड क्षेत्र थोरा रोकै; तैसे जानना ।

आगै औदारिकादिक शरीरनि का समयप्रबद्ध अर वर्गणा, तै कितने-कितने क्षेत्र विपै रहै ? अैसा अवगाहना भेदनि कौ कहै है —

अवगाहणाणि तारां, सभयप्रबद्धाण वर्गणां च ।

अंगुलअसंखभागा, उवस्वरिससंखगुणहीणा ॥२४७॥

अवगाहनानि तेषां, समयप्रबद्धानां वर्गणानां च ।

अंगुलासंख्यभागा, उपर्युपरि असंख्यगुणहीनानि ॥२४७॥

टीका - तिनि औदारिकादिक शरीर सबधी समयप्रबद्ध वा वर्गणा, तिनिका अवगाहनाक्षेत्र घनागुल के असंख्यातवे भागमात्र है । तथापि ऊपरि-ऊपरि असंख्यात-गुणा घाटि क्रम तै जानना । सोई कहिए है - औदारिक शरीर के समयप्रबद्धनि-का अवगाहनाक्षेत्र सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग का भाग घनागुल कौ दीएं, जो परिमाण आवै, तितना जानना । बहुरि याकौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग का भाग दोजिये तब औदारिक शरीर की वर्गणा के अवगाहना क्षेत्र का प्रमाण होइ । बहुरि यातै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण, जो असंख्यात, तिहि असंख्यात-गुणा घटता क्रम तै वैक्रियिकादि शरीर के समयप्रबद्ध का वा वर्गणा की अवगाहना का परिमाण हो है । वैक्रियिक शरीर का समयप्रबद्ध की अवगाहना कौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणि, औदारिक समयप्रबद्ध की अवगाहना हो है । वैक्रियिक शरीर की वर्गणा की अवगाहना कौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणै, औदारिक की वर्गणा की अवगाहना हो है । अैसे ही वैक्रियिक तै आहारक की, आहारक तै तैजस की, तैजस तै कार्माण की समयप्रबद्ध वा वर्गणा की अवगाहना असंख्यातगुणी क्रम तै घाटि जाननी ।

इस ही अर्थ कौ श्री माधवचंद्र त्रैविद्य देव कहै है -

**तत्समयबद्धवर्गणओगाहो सूच्यगुलासंख-**

**भागहिर्दब्दअंगुलमुवर्खरि तेन भजिदकमा ॥२४८॥**

तत्समयबद्धवर्गणावगाहः सूच्यगुलासंख-

भागहितवृदांगुलमुपर्युपरि तेन भजितक्रमाः ॥२४८॥

टीका - तिनि समयप्रबद्ध वा वर्गणा की अवगाहना का परिमाण सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग का भाग घनागुल कौ दीए जो परिमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ऊपरि-ऊपरि पूर्व-पूर्व तै सूच्यगुल के असंख्यातवे भाग मात्र जानने । गुणहानि का अर भाग देने का एक अर्थ है । सो वैक्रियिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना कौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणै, औदारिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना होइ । अथवा औदारिक का समयप्रबद्ध वर्गणा की अवगाहना कौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग का भाग दीये वैक्रियिक शरीर का समयप्रबद्ध वर्गणा का परिमाण होइ । दोऊ एकार्थ है; अैसे ही सब का जानना ।

आगै विस्रसोपचय का स्वरूप कहै हैं —

**जीवादो णंतगुणा, पडिपरमाणुम्हि विस्रसोवचया ।**

**जीवेण य समवेदा, एक्केक्कं पडिसमाणा हु ॥२४६॥**

जीवतोऽनंतगुणाः प्रतिपरमाणौ विस्रसोपचयाः ।

जीवेन च समवेता एकैकं प्रति समानाः हि ॥२४९॥

टीका — कर्म वा नोकर्म के जितने परमाणु है, तिनि एक-एक परमाणूनि प्रति जीवराशि तै अनंतानत गुणा विस्रसोपचयरूप परमाणू जीव के प्रदेशनि स्यों एक क्षेत्रावगाही है । विस्रसा कहिए अपने ही स्वभाव करि आत्मा के परिणाम विना ही उपचीयते कहिए कर्म-नोकर्म रूप विना परिणए अैसे कर्म-नोकर्म रूप स्कध, तीहि विषै स्निग्ध-रूक्ष गुण का विशेष करि मिलि, एक स्कधरूप होहि; ते विस्र-सोपचय कहिए; अैसा निरुक्ति करि ही याका लक्षण आया; तातैं जुदा लक्षण न कहा । विस्रसोपचयरूप परमाणू कर्म-नोकर्मरूप होने को योग्य है । उन ही कर्म नोकर्म के स्कंध विषै एकक्षेत्रावगाही होइ संबंधरूप परिणामि करि एक स्कधरूप हो है । वर्तमान कर्म नोकर्मरूप परिणए है नाही; अैसै विस्रसोपचयरूप परमाणू जानने । ते कितने है ? सो कहिए है—

जो एक कर्म वा नोकर्म सबधो परमाणू के जीवराशि तै अनंत गुणे विस्र-सोपचयरूप परमाणू होइ, तौ किछू घाटि ड्योढ गुणहानि का प्रमाण करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सर्वसत्त्वरूप कर्म वा नोकर्म के परमाणूनि के केते विस्रसोपचय परमाणू होहि; अैसै त्रैराशिक करना । इहा प्रमाणाशिशि एक, फलराशि अनंतगुणा जीवराशि, इच्छाराशि किचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध । तहा इच्छा कौ फलराशि करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए, लब्धराशिमात्र आत्मा के प्रदेशनि विषै तिष्ठते सर्व विस्रसोपचय परमाणूनि का प्रमाण जानना । बहुरि इस विस्रसोपचय परमाणूनि का परिमाण विषै किचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध मात्र कर्म-नोकर्मरूप परमाणूनि का परिमाण कौ मिलाए, विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म का सत्त्व हो है ।

आगै कर्म-नोकर्मनि का उत्कृष्ट सचय का स्वरूप वा स्थान वा लक्षण प्ररूपै है—

उक्कस्सट्ठिदिचरिमे, सगसगउक्कस्ससंचओ होदि ।

पणदेहाणं वरजोगादिससासगिसहियाणं ॥२५०॥

उत्कृष्टस्थितिचरमे, स्वकस्वकोत्कृष्टसंचयो भवति ।

पंचदेहानां वरयोगादिस्वसामग्रीसहितानाम् ॥२५०॥

टीका - उत्कृष्ट योग आदि अपने-अपने उत्कृष्ट बंध होने की सामग्री करि सहित जे जीव, तिनिके औदारिकादिक पंच शरीरनि का उत्कृष्ट संचय जो उत्कृष्ट-पने परमाणूनि का संबंध, सो अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति का अंत समय विषे हो है । तहा स्थिति के पहले समय तै लगाइ एक-एक समय विषे एक-एक समयप्रबद्ध बधे । बहुरि आगे कहिए है, तिसप्रकार एक-एक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक की निर्जरा होइ, अवशेष संचयरूप होते सतै अत समय विषे किछू घाटि, ड्योढगुणहानि करि समयप्रबद्ध कौ गुणै, जो परिमाण होइ, तितना उत्कृष्ट पने सत्त्व हो है ।

आगे श्री माधवचंद्र त्रैविद्य देव उत्कृष्ट संचय होने की सामग्री कहै है—

आवासया हु भवअद्धाउस्सं जोगसंकिलेसो य ।

ओकट्ठुक्कट्ठणया, छच्चवेदे गुणिदकम्मंसे ॥२५१॥

आवश्यकानि हि भवाद्धा आयुष्यं योगसंक्लेशौ च ।

अपकर्षणोत्कर्षणके, षट् चेतै गुणितकर्माणि ॥२५१॥

टीका - गुणितकर्माणि कहिए उत्कृष्ट संचय जाके होइ, असा जो जीव, तीहि विषे उत्कृष्ट संचय कौ कारण ए छह अवश्य होइ । तातै उत्कृष्ट संचय करने वाले जीव के ए छह आवश्यक कहिए । १ भवाद्धा, २ आयुर्बल, ३. योग, ४. संक्लेश, ५. अपकर्षण, ६ उत्कर्षण ए छह जानने । इनिका स्वरूप विस्तार लीए आगे कहिएगा ।

अब पंच शरीरनि का बंध, उदय, सत्त्वादिक विषे परमाणूनि का प्रमाण का विशेष जानने कौ स्थिति आदि कहिए है । तहा औदारिकादिक पंच शरीरनि की उत्कृष्ट स्थिति का परिमाण कहै है—

पल्लतियं उवहीणं, तेत्तीसंतोमुहुत्त उवहीणं ।

छावट्ठी कसट्ठिदि, बंधुक्कस्सट्ठिदी तारणं ॥२५२॥

पत्यत्रयमुदधीनां, त्रयस्त्रिंशदन्तर्मुहूर्त उदधीनाम् ।

षट्षष्टिः कर्मस्थिति, बंधोत्कृष्टस्थितिस्तेषाम् ॥२५२॥

टीका — तिनि औदारिक आदि पच शरीरनि की बंधरूप उत्कृष्ट स्थिति विषै औदारिक शरीर की उत्कृष्ट स्थिति तीन पत्य है । वैक्रियिक शरीर की तेतीस सागर है । आहारक शरीर की अतर्मुहूर्त है । तैजस शरीर की छयासठि सागर है । कामाणि की स्थितिबंध विषै जो उत्कृष्ट कर्म की स्थिति सो जाननी । सो सामान्य-पनै सत्तर कोडाकोडी सागर है । विशेषपनै ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, अत-राय की तीस कोडाकोडी, मोहनीय की सत्तर कोडाकोडी; नाम-गोत्र की बीस कोडाकोडी; आयु की तेतीस सागर प्रमाण जाननी । असै पच शरीरनि की उत्कृष्ट स्थिति कही ।

अब इहा यथार्थ ज्ञान के निमित्त अकसंदृष्टि करि दृष्टांत कहिए है —

जैसे समयप्रबद्ध का परिमाण तरेसठि सै (६३००) परमाणू स्थिति अड-तालीस समय होइ, तैसे इहा पंच शरीरनि की समयप्रबद्ध के परमाणूनि का परिमाण अर स्थिति के जेते समय होहि, तिनि का परमाणू का परिमाण पूर्वोक्त जानना ।

आगै इनि पचशरीरनि की उत्कृष्ट स्थितिनि विषै गुणहानि आयाम का परिमाण कहै है —

अंतोमुहुत्तमेत्तं, गुणहाणी होदि आदिमतिगाणं ।

पल्लासंखेज्जदिमं, गुणहाणी तेजकम्माणं ॥२५३॥

अंतर्मुहूर्तमात्रा, गुणहानिर्भवति आदिमत्रिकानां ।

पल्यासंख्यात भागा गुणहानिस्तेजः कर्मणोः ॥२५३॥

टीका — पूर्व-पूर्व गुणहानि तै उत्तर-उत्तर गुणहानि विषै गुणहानि का वा निपेकनि का द्रव्य दूणा-दूणा घटता होइ है । तातै गुणहानि नाम जानना । सो जैसे अडतालीस समय की स्थिति विषै आठ-आठ समय प्रमाण एक-एक गुणहानि का आयाम हो है । तैसे आदि के तीन शरीर औदारिक, वैक्रियिक, आहारक तिनकी ती उत्कृष्ट स्थिति संबन्धी गुणहानि यथायोग्य अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । अपने-अपने योग्य अंतर्मुहूर्त के जेते

समय होइ, तितना गुणहानि का आयाम जानना । आयाम नाम लबाई का है । सो इहा समय-समय सबधी निषेक क्रम तै होइ । तातै आयाम अैसी संज्ञा कही । बहुरि तैजसकार्माण की उत्कृष्ट स्थिति सबधी गुणहानि अपने-अपने योग्य पत्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । तहां पत्य की जो वर्गशलाका, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तितने पत्य के अर्धच्छेदनि मे घटाएं, जो अवशेष रहै, ताकौ असख्यात करि गुणै, जो परिणाम होइ, तितनी तैजस की सर्व नानागुणहानि है । इस परिमाण का भाग तैजस शरीर की उत्कृष्ट स्थिति सख्यात पत्य प्रमाण है । ताकौ दीए जो परिमाण आवै, तीहि प्रमाण पत्य के असख्यात वे भागमात्र तैजस शरीर की गुणहानि का आयाम है । बहुरि पत्य की वर्गशलाका के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ पत्य के अर्धच्छेदनि मे घटाए जो अवशेष रहै, तितनी कार्माण की सर्वनानागुणहानि है । इस परिमाण का भाग कार्माण की उत्कृष्ट स्थिति सख्यातपत्यप्रमाण है । ताकौ दीए जो परिमाण आवै, तीहि प्रमाण पत्य के असख्यातवे भागमात्र कार्माण शरीर की गुणहानि का आयाम है । अैसे गुणहानि आयाम कह्या ।

बहुरि जैसै आठ समय की एक गुणहानि होइ, तौ अडतालीस समय की केती गुणहानि होइ ? अैसे त्रैराशिक कीए सर्वस्थिति विषै नानागुणहानि का प्रमाण छह आवै । तैसे जो औदारिक शरीर की एक अतर्मुहूर्तमात्र एकगुणहानि शलाका है । तौ तीन पत्य की नानागुणहानि कितनी है ? अैसे त्रैराशिक करिए । तहा प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त के समय, फलराशि एक, इच्छाराशि तीन पत्य के समय तहा फलराशि करि इच्छा राशि कौ गुणि, प्रमाण राशि का भाग दीए, लब्ध प्रमाण तीन पत्य कौ अतर्मुहूर्त का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना आया, सो उत्कृष्ट औदारिक शरीर की स्थिति विषै नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

अैसे ही वैक्रियिक शरीर विषै प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त, फलराशि एक, इच्छाराशि तेतीस सागर कीयें तेतीस सागर कौ अतर्मुहूर्त का भाग दीये, जो प्रमाण आवै, तितना नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

बहुरि आहारक शरीर विषै प्रमाणराशि छोटा अतर्मुहूर्त, फलराशि एक, इच्छाराशि बडा अतर्मुहूर्त कीए, अतर्मुहूर्त कौ स्वयोग्य छोटा अतर्मुहूर्त का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना नानागुणहानि शलाका का प्रमाण जानना ।



बहुरि तैजस शरीर विषे प्रमाणराशि पूर्वोक्त गुणहानि आयाम, फलराशि एक, इच्छाराशि छ्यासठ सागर कीए पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद करि हीन पल्य का अर्धच्छेदनि तै असख्यात गुणा नानागुणहानि का प्रमाण हो है ।

बहुरि कार्माण शरीर विषे प्रमाणराशि पूर्वोक्त गुणहानि आयाम, फलराशि एक, इच्छाराशि मोह की अपेक्षा सत्तरि कोडाकोडि सागर कीए पल्य की वर्ग शलाका का अर्धच्छेद करि हीन पल्य का अर्धच्छेदमात्र नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

अब औदारिक आदि शरीरनि का गुणहानि आयाम साधिए है— जैसे जो छह नानागुणहानि का अडतालीस समय प्रमाणस्थिति आयाम होइ, तौ एकगुणहानि का कितना आयाम होइ ? असै त्रैराशिक करिये । इहा प्रमाणराशि छह, फलराशि अडतालीस, इच्छाराशि एक भया । तहा लब्ध राशिमात्र एकगुणहानि आयाम का प्रमाण आठ आया, तैसे अपना-अपना नानागुणहानि प्रमाण का अपना-अपना स्थिति प्रमाण आयाम होइ, तौ एकगुणहानि का केता आयाम होइ ? असै त्रैराशिक करिए । तहा लब्धराशि मात्र गुणहानि का आयाम हो है ।

तहां औदारिक विषे प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य, फलराशि तीन पल्य इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि वैक्रियिक विषे प्रमाणराशि अतर्मुहूर्त करि भाजित तेतीस सागर, फलराशि तेतीस सागर इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि आहारक विषे प्रमाणराशि सख्यात, फलराशि अतर्मुहूर्त, इच्छाराशि एक कीए लब्धराशि छोटा अतर्मुहूर्त हो है ।

बहुरि तैजस विषे प्रमाणराशि पल्य की वर्ग शलाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेदनि तै असख्यातगुणा, फल छ्यासठ सागर, इच्छा एक कीए लब्ध राशि सख्यात पल्य कौ पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेदनि तै असख्यात गुणे प्रमाण का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना जानना ।

बहुरि कार्माण विषे प्रमाणराशि पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेदनि करि हीन पल्य के अर्धच्छेद मात्र, फलराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर इच्छाराशि एक

कीए लब्धराशि संख्यात पत्य कौ पत्य की वर्गशलाका के अर्धच्छेदनि करि हीन पत्य के अर्धच्छेदराशि का भाग दीए, जितना आवे तितना जानना । औसै लब्धराशि मात्र एकगुणहानि का आयाम जानना । इतने-इतने समयनि के समूह का नाम एकगुणहानि है । सर्व स्थिति विषे जेती गुणहानि पाइए, तिस प्रमाण का नाम नानागुणहानि है; औसा इहा भावार्थ जानना ।

बहुरि नानागुणहानि का जेता प्रमाण तितने दूवे माडि, परस्पर गुणै, जितना प्रमाण होइ, सो अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना । जैसै नानागुणहानि का प्रमाण छह सो छह का विरलन करि एक-एक जायगा दोय के अक मांडि, परस्पर गुणै चौसठि होइ; सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण जानना । तैसै ही औदारिक आदि शरीरनि की स्थिति विषे जो-जो नानागुणहानि का प्रमाण कह्या, ताका विरलन करि एक-एक बखेरि अर एक-एक जायगा दोय-दोय देइ, परस्पर गुणै, अपना-अपना अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण हो है । तहां लोक के जेते अर्धच्छेद है; तितने दूवेनि कौ परस्पर गुणै, लोक होइ । तौ इहां नानागुणहानि प्रमाण दूवे माडि, परस्पर गुणै, केते लोक होइ ? औसे त्रैराशिक करना । तहां लब्धराशि ल्यावने के अर्थ सूत्र कहिए है—

दिण्णच्छेदेणवहिद, इट्टच्छेदेहि पयदविरलणं भजिदे ।

लद्धमिदइट्ठरासी, णण्णोण्हदीए होदि पयदधणं ॥२१४॥

औसा कायमार्गणा विषे सूत्र कह्या था, ताकरि इहां देयराशि दोय, ताका अर्धच्छेद एक ताका भाग इष्टच्छेद लोक के अर्धच्छेद कौ दीए, इतने ही रहे, इनि लोक के अर्धच्छेदनि के प्रमाण का भाग औदारिक शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि के प्रमाण कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितने इष्टराशिरूप लोक माडि, परस्पर गुणै, जो लब्धि प्रमाण होइ, तितना औदारिक शरीर की स्थिति विषे अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण असंख्यातलोकमात्र हो है । बहुरि तैसै ही वैक्रियिक शरीर विषे नानागुणहानि का प्रमाण कौ लोक का अर्धच्छेद राशि का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितने लोक माडि परस्पर गुणै, वैक्रियिक शरीर की स्थिति विषे अन्योन्याभ्यस्त विषे राशि हो है । सो यहु औदारिक शरीर की स्थिति सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि तै असंख्यात लोक गुणा जानना । काहे तै ? जातै अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पत्य तै अतर्मुहूर्त करि भाजित तेतीन सागर कौ एक सौ दश कोडाकोडी का गुणकार संभवै

है । सो यहां एक घाटि एक सौ दश कोडाकोडी गुणा जो औदारिक शरीर की नाना-गुणहानि का प्रमाण, तितना औदारिक शरीर की नानागुणहानि का प्रमाण तै वैक्रियिक शरीर की नानागुणहानि का प्रमाण अधिक भया सो -

विरलनरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।

तेसिं अण्णोण्हदी, गुणयारो लद्धरासिस्स ॥

इस सूत्र करि इस अधिक प्रमाणमात्र दूवे मांडि, परस्पर गुणै, जो असंख्यात-लोकमात्र परिमाण आया, सोई औदारिक का अन्योन्याभ्यस्तराशि तै वैक्रियिक का अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै गुणकार जानना । अथवा जो अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य प्रमाण औदारिक शरीर सबंधी नानागुणहानि का अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यात लोकमात्र होइ, तौ एक सौ दश कोडाकोडि गुणा अतर्मुहूर्त करि भाजित तीन पल्य प्रमाण वैक्रियिक शरीर की नानागुणहानि का अन्योन्याभ्यस्तराशि कितनी होई ? अैसा त्रैराशिक कीए 'दिण्णच्छेदेणवहिद' इत्यादि सूत्र करि एक सौ दश कोडाकोडि बार औदारिक शरीर संबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि मांडि, परस्पर गुणै, वैक्रियिक शरीर संबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि हो है । तातै भी औदारिक सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि तै वैक्रियिक संबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै असंख्यातलोक का गुणकार सिद्ध भया ।

बहुरि आहारक शरीर की नानागुणहानि संख्यात है, सो संख्यात का विरलन करि एक-एक प्रति दोय देइ, परस्पर गुणै, यथायोग्य संख्यात होइ, सो आहारक शरीर का अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना ।

बहुरि तैजस शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि शलाका कार्माण शरीर की स्थिति सबधी नानागुणहानि शलाका तै असंख्यात गुणी है, सो पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद पल्य अर्धच्छेदनि मे घटाए, जो प्रमाण होइ, तातै असंख्यात-गुणी जाननी । सो इहां सुगमता के अर्थ, याकौ पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग देना तहा पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेदराशि कौ असंख्यात करि गुणिए, अर पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग दीजिएं, इतना घटावने योग्य जो ऋणराशि, ताकौ जुदा राखिए, अवशेष ऋण रहित राशि पल्य का अर्धच्छेदराशि कौ असंख्यातगुणा दीजिए पल्य का अर्धच्छेदराशि का भाग दीजिए, इतना रह्या, सो इहां भाज्यराशि विषै अर भागहारराशि विषै पल्य का अर्धच्छेदराशि कौ समान जानि, अपवर्तन

करना । अवशेष गुणकाररूप असख्यात रहि गया, सो इस असख्यात का जेता प्रमाण होइ तितना ही पल्य मांडि, परस्पर गुणन करना, जातै असख्यातगुणा पल्य का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै, जेता प्रमाण होइ, तितना ही पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग दीए, अवशेष गुणकार मात्र असख्यात रह्या, तितना पल्य मांडि, परस्पर गुणै प्रमाण हो है । जैसे पल्य का प्रमाण सोलह, ताके अर्धच्छेद च्यारि, असख्यात का प्रमाण तीन, सो तीनि करि च्यारि कौ गुणै, बारह होइ । सो बारह जायगा दूवा मांडि, परस्पर गुणै, च्यारि हजार छिनवै होइ । सोई बारह कौ च्यारि का भाग दीएं, गुणकार मात्र तीन रह्या, सो तीन जायगा सोलह मांडि, परस्पर-गुणै, च्यारि हजार छिनवै होइ । तातै सुगमता के अर्थ पूर्वोक्त राशि कौ पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग देइ, लब्धिराशि असख्यात प्रमाण पल्य मांडि, परस्पर गुणन कीया । सो इहां यह गुणकाररूप असख्यात है । सो पल्य का अर्धच्छेदनि के असख्यातवे भाग मात्र जानना । पल्य का अर्धच्छेदराशि समान जानना । जो पल्य का अर्धच्छेद समान यह असख्यात होइ, तौ इतने पल्य मांडि, परस्पर गुणै, तैजस शरीर की स्थिति संबंधी अन्योन्याभ्यस्तराशि सूच्यंगुल प्रमाण होइ; सो है नाही; तातै शास्त्र विषे क्षेत्र प्रमाण करि सूच्यंगुल के असख्यातवे भाग मात्र काल प्रमाण करि असख्यात कल्पकाल मात्र तैजस शरीर की स्थिति सबधी अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण कह्या है । तातै पल्य का अर्धच्छेद का असख्यातवा भाग मात्र असख्यात का विरलन करि एक-एक प्रति पल्य कौ देइ, परस्पर गुणै, सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग मात्र प्रमाण हो है । सो द्विरूप वर्गधारा विषे पल्यराशिरूप स्थान तै ऊपरि इहां विरलन-राशिरूप असख्यात के जेते अर्धच्छेद होहि, तितने वर्गस्थान गए यह राशि हो है ।  
बहुरि -

विरलनरासीदो पुण, जेत्तियमेत्तारिण हीणरूवाणि ।

तेसि अण्णोण्हदी, हारो उप्पणरासिस्स ॥

इस सूत्र के अभिप्राय तै जो ऋणरूप राशि जुदा स्थाप्या था, ताका अपवर्तन कीए, एक का असख्यातवा भाग भया । याकौ पल्य करि गुणै, पल्य का असख्यातवा भाग भया, जातै असख्यात गुणा पल्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै, भी इतना ही प्रमाण है । तातै सुगमता के अर्थ इहां पल्य का अर्धच्छेद राशि का भाग देइ, एक का असख्यातवा भाग पाया, ताकरि पल्य का

गुणन कीयां है । सो औसै करतै जो पत्य का असंख्यातवां भाग भया, ताका भाग पूर्वोक्त सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग कौ देना । सो भाग दीए भी आलाप करि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग ही रह्या । सोई तैजस शरीर की स्थिति सम्बन्धी अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना । बहुरि कार्माण शरीर की स्थिति सम्बन्धी नाना-गुणहानि शलाका पत्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद करि हीनपत्य का अर्धच्छेद प्रमाण है । इसका विरलन करि, एक-एक प्रति दोय देइ परस्पर गुणै, ताका अन्योन्याभ्यस्तराशि पत्य की वर्गशलाका का भाग पत्य कौ दीएं, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । जातैं इहां पत्य का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै, पत्य होइ, सो तौ भाज्य भया । अर 'विरलनरासीदो पुणजेत्तिय मेत्ताणि हीणारूवाणि' इत्यादि सूत्र करि हीनराशिरूप पत्य की वर्गशलाका का अर्धच्छेद प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै पत्य की वर्गशलाका होइ, सो भागहार जानना । बहुरि जैसै गुणहानि आयाम आठ, ताकौ दूणा कीएं दोगुणहानि का प्रमाण सोलह हो है । तैसै औदारिक आदि शरीरनि का जो-जो गुणहानि आयाम का प्रमाण है, ताकौ दूणा कीएं, अपनी-अपनी दोगुणहानि हो है । याही का दूसरा नाम निषेकहार जानना ।

औसैं द्रव्यस्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दोगुणहानि का कथन करि, अवस्थिति के समय सम्बन्धी परमाणूनि का प्रमाणरूप निषेकनि का कथन करिए है ।

तहा प्रथम अंक संदृष्टि करि दृष्टात कहिए है । द्रव्य तरेसठि सै (६३००) स्थिति अडतालीस (४८), गुणहानि आयाम आठ (८), नानागुणहानि छह (६), दोगुणहानि सोलह (१६), अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि (६४) ।

तहा औदारिक आदि शरीरनि के समय प्रबद्ध प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप च्यारि प्रकार बध धरै है ।

तहा प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध योग तै हो है, स्थितिबंध, अनुभागबंध कषाय तै हो है । तहा विवक्षित कोई एक समय विषै बध्या कार्माण का समय प्रबद्ध की उत्कृष्ट स्थिति सत्तरि कोडाकोडि सागर की बधी, तिस स्थिति कै पहले समय तै लगाय सात हजार वर्ष पर्यंत तौ आबाधाकाल है । तहां कोई निर्जरा न होइ । तातै इहाँ कोई निषेक रचना नाही । अवशेष स्थिति का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यंत अपना-अपना काल प्रमाण स्थिति धरै, जे परमाणूनि के पुंज, ते निषेक कहिए । तिनकी रचना अंकसंदृष्टि करि प्रथम दिखाइए है ।

विवक्षित एक समय विषै बध्या कार्माण का समयप्रवद्ध, ताका परमाणूनि का प्रमाण रूप द्रव्य तरेसठि सै है । तहा -

रूओरण्णोणवभवहिदद्वं तु चरिम गुणदव्वं ।

होदि तदो दुगुण कमा आदिमगुणहाणि दव्वोत्ति ॥

इस सूत्र अनुसारि एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग सर्वद्रव्य कौ दीएं अंत की गुणहानि का द्रव्य होइ । तातै दूणा-दूणा प्रथमगुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना । सो इहां अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि मे स्यो एक घटाइ, अवशेष ६३ का भाग सर्वद्रव्य ६३०० कौ दीए, सौ (१००) पाए, सोई नानागुणहानि छह, तिनि-विषै अंत की छठी गुणहानि का द्रव्य जानना । तातै दूणा-दूणा प्रथम गुणहानि पर्यंत द्रव्य जानना । असै होतै एक घाटि नानागुणहानि शलाका प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै, जो अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण होइ, ताकरि अंत की गुणहानि के द्रव्य कौ गुणै, प्रथमगुणहानि का द्रव्य हो है । सो एक घाटि नानागुणहानि पाच, तीह प्रमाण दूवा मांडि, परस्पर गुणै बत्तीस होइ, सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि का आधाप्रमाण, ताकरी अंतगुणहानि का द्रव्य सौ कौ गुणै प्रथमगुणहानि का द्रव्य बत्तीस सै हो है । सर्व गुणहानि का द्रव्य अत तै लगाइ आदि पर्यंत एक सै, दोय सै, च्यारि सै, आठ सै, सोलह सै, बत्तीस सै प्रमाण जानना । वहुरि तहा प्रथम गुणहानि का द्रव्य बत्तीस सै । तहा 'अद्धाणेण सव्वधणे, खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि' इस सूत्र करि 'अध्वान' जो गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छ, ताका स्वकीय गुणहानि सबधी द्रव्य कौ भाग दीए, मध्य समय सबधी मध्यधन आवै है । सो इहां बत्तीस सै कौ गच्छ आठ का भाग दीए (मध्यधन) च्यारि सै हो है । वहुरि "रूऊण अद्धाण अद्धेणूणेणसेयहारेण मज्झिमधणमवहरिदेपच्चयं" इस सूत्र के अनुसारि एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण करि हीन जो निषेकहार कहिए दो गुणहानि, ताकरि मध्यधन कौ भाजित कीए, चय का प्रमाण आवै है । स्थान-स्थान प्रति जितना-जितना बधै वा घटै ताका नाम चय जानना । सो इहा एक घाटि गच्छ सात, ताका आधा साढा तीन, सो निषेकहार सोलह मे घटाए, साढा बारह ताका भाग मध्यधन च्यारि सै कौ दीए, बत्तीस पाए । सोई प्रथम गुणहानि विषै चय का प्रमाण जानना । वहुरि इस चय कौ निषेकहार, जो दोगुणहानि, ताकरि गुणै प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक होइ, सो इहा बत्तीस कौ सोलह करि गुणै, प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक पाच सै बारह प्रमाणरूप हो है ।

भावार्थ — जो तरेसठि सै परमाणू का समय प्रबद्ध बंध्या था, ताकी स्थिति विषै आबाधाकाल भए पीछै, पहले समय तिन परमाणूनि विषै पांच सै बारह परमाणू निर्जरे है । असै अन्य समय संबंधी निषेकनि विषै उक्त प्रमाण परमाणूनि की निर्जरा होने का क्रम जानना । बहुरि 'तत्तोविसेसहीणकम' तातै ऊपरि-ऊपरि तिस गुणहानि के अंत निषेक पर्यंत एक-एक चय घटता अनुक्रम जानना । तहां प्रथम निषेक तै एक घाटि गच्छप्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि गुणित चय प्रमाण अंत निषेक हो है । सो इहां द्वितीयादि निषेकनि के विषै बत्तीस-बत्तीस घटावना । तहां एक घाटि गच्छ सात, तीहि प्रमाण चय के भये दोय सै चौबीस, सो इतने प्रथम निषेकनि तै घटै, अत निषेक विषै दोय सै अठ्यासी प्रमाण हो है । सो एक अधिक गुणहानि नव, ताकरि चय बत्तीस कौ गुणै भी दोय सै अठ्यासी हो है । असै प्रथम गुणहानि विषै निषेक रचना जाननी । ५१२, ४८०, ४४८, ४१६, ३८४, ३५२, ३२०, २८८ ।

बहुरि असै ही द्वितीय गुणहानि का द्रव्य सोलह सै, ताकौ गुणहानि आयाम-रूप गच्छ का भाग दीए, मध्यधन दोय सै होइ; याकों एक घाटि गुणहानि आयाम का आधा प्रमाण करि हीन निषेकहार साढा बारह, ताका भाग दीएं, द्वितीय गुणहानि विषै चय का प्रमाण सोलह होइ । बहुरि याकों दो गुणहानि सोलह करि गुणै, द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक दोय सै छप्पन प्रमाण हो है । ऊपरि-ऊपरि द्वितीयादि निषेक, अपना एक-एक चय करि घटता जानना । तहा एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि गुणित, अपना चय प्रमाण अत का निषेक एक सौ चवालीस प्रमाण हो है । बहुरि तृतीय गुणहानि विषै द्रव्य आठ सै कौ गुणहानि का भाग दीए, मध्यमधन सौ (१००), याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा करि हीन दोगुणहानि का भाग दीएं, चय का प्रमाण आठ, याकौ दोगुणहानि करि गुणि प्रथम निषेक एक सौ अठ्ठाईस, यातै ऊपरि अपना एक-एक चय घटता होइ, एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटै, एक अधिक गुणहानि आयाम करि, गुणित स्वकीय चयमात्र अंतनिषेक बहत्तरि हो है ।

असै ही इस क्रम करि चतुर्थ आदि गुणहानि विषै प्राप्त होइ, अंत गुणहानि विषै द्रव्य सौ (१००), ताकौ पूर्वोक्त प्रकार गुणहानि का भाग दीए मध्यधन साढा बारह, याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा प्रमाण करि हीन दोगुणहानि का भाग

दीएं, चय का प्रमाण एक, याकौ दोगुणहानि करि गुणै, प्रथम निषेक का प्रमाण सोलह, तातै ऊपरि अपना एक-एक चय घटता होइ । एक घाटि गच्छ प्रमाण चय घटे, एक अधिक गुणहानि करि गुणित स्वकीय चय मात्र स्थिति के अंतनिषेक का प्रमाण नव हो है । असै द्वितीयादिक अतगुणहानि पर्यंत विषै द्रव्यादिक है । ते गुणकाररूप हानि का अनुक्रम लीए है । तातै गुणहानि असा नाम सार्थक जानना ।

इहां तर्क - जो प्रथम गुणहानि विषै तौ पूर्व गुणहानि के अभाव तै गुणहानिपना नाही ?

ताका समाधान - कि मुख्यपनै ताका गुणहानि नाम नाही है । तथापि ऊपरि की गुणहानि कौ गुणहानिपना कौ कारणभूत जो चय, ताका हीन होने का सद्भाव पाईए है । तातै उपचार करि प्रथम कौ भी गुणहानि कहिए । गुणकार रूप घटता, जहा परिमाण होइ, ताका नाम गुणहानि जानना । असै एक-एक समय प्रबद्ध की सर्वगुणहानिनि विषै प्राप्त सर्वनिषेकनि की रचना जाननी । बहुरि असै प्रथमादि गुणहानिनि के द्रव्य वा चय वा निषेक ऊपरि-ऊपरि गुणहानि विषै आधे-आधे जानने । इतना विशेष यहु जानना-जो अपना-अपना गुणहानि का अंत निषेक विषै अपना-अपना एक चय घटाएं, ऊपरि-ऊपरि का गुणहानि का प्रथम निषेक होइ, जैसे प्रथम गुणहानि का अत निषेक दोय सै अठ्चासी विषै अपना चय बत्तीस घटाएं, द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक दोय सौ छप्पन हो है । असै ही अन्यत्र जानना ।

### ❀ अंक संदृष्टि करि निषेक की रचना ❀

	प्रथम गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	तृतीय गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	पंचम गुणहानि	षष्ठम गुणहानि	
	२८८	१४४	७२	३६	१८	९	
	३२०	१६०	८०	४०	२०	१०	
	३५२	१७६	८८	४४	२२	११	
	३८४	१९२	९६	४८	२४	१२	
	४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३	
	४४८	२२४	११२	५६	२८	१४	
	४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५	
	५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६	
होइ	३२००	१६००	८००	४००	२००	१००	



अैसे उत्कृष्ट स्थिति अपेक्षा कार्माण का अक सदृष्टि करि वर्णन किया । अब यथार्थ वर्णन करिए है -

कार्माण का समयप्रबद्ध विषै जो पूर्वोक्त परमाणूनि का प्रमाण, सो द्रव्य जानना । ताकौ पूर्वोक्त प्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि विषै एक घटाइ, अवशेष का भाग दीएं, अंत गुणहानि का द्रव्य हो है । यातें प्रथम गुणहानि पर्यंत दूना-दूना द्रव्य जानना । तहां अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण करि, अंतगुणहानि के द्रव्य कौं गुणै, प्रथम गुणहानि का द्रव्य हो है । याकौ पूर्वोक्त गुणहानि आयामप्रमाण का भाग दीएं, मध्यमधन होइ है । याकौ एक घाटि गुणहानि आयाम का आधा प्रमाण करि हीन दूना गुणहानि के प्रमाण का भाग दीएं, प्रथम गुणहानि सबधी चय हो है । याकौ दो गुणहानि करि गुणै, प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक हो है । बहुरि तातें अपना-अपना अंत निषेक पर्यंत एक-एक चय घटता होइ । एक घाटि गुणहानि आयाम मात्र चय घटे, एक अधिक गुणहानि करि गुणित अपना चय प्रमाण अंत निषेक हो है । याहीं प्रकार द्वितीयादि गुणहानि विषै अपना-अपना द्रव्य की निषेक रचना जाननी । तहां अंत गुणहानि विषै द्रव्य का गुणहानि आयाम का भाग दीएं, मध्य धन होइ । याकौ एक घाटि गुणहानि का आधा करि हीन दो गुणहानि का भाग दीएं, चय होइ । याकौ दो गुणहानि करि गुणै, प्रथम निषेक होइ । तातें ऊपर अपना एक-एक चय घटता होइ । एक घाटि गुणहानि आयाम मात्र चय घटे, एक अधिक गुणहानि करि अपना चय कौं गुणै, जो प्रमाण होइ, तिह प्रमित अंत निषेक हो है । अैसे कार्माण शरीर की सर्वोत्कृष्ट स्थिति विषै प्राप्त एक समयप्रबद्ध संबधी समस्त गुणहानि की रचना जाननी । अैसे प्रथमादि गुणहानि तै द्वितीयादि गुणहानि के द्रव्य वा चय वा निषेक क्रम तै आधे-आधे जानने । आबाधा रहित स्थिति विषै गुणहानि आयाम का जेता प्रमाण तितना समय पर्यंत तो प्रथम गुणहानि जाननी । तहां विवक्षित समयप्रबद्ध के प्रथम समय विषै जेते परमाणू निर्जरे, तिनिके समूह का नाम प्रथम निषेक जानना । दूसरे समय जेते परमाणू निर्जरे, तिनिके समूह का नाम द्वितीय निषेक जानना । अैसे प्रथम गुणहानि का अंत पर्यंत जानना । पीछै ताके अनंतर समय तै लगाइ गुणहानि आयाम मात्र समय पर्यंत द्वितीय गुणहानि जाननी । तहा भी प्रथमादि समयनि विषै जेते परमाणू निर्जरे, तिनिके समूह का नाम प्रथमादि निषेक जानने । अैसे क्रम तै स्थिति के अंत समय विषै जेते परमाणू निर्जरे, तिनिके समूह का नाम अंत गुणहानि का अंत निषेक जानना ।

बहुरि जैसे कार्माणशरीर का वर्णन किया; तैसे ही औदारिक आदि तैजस पर्यंत नोकर्मशरीर के समयप्रबद्धनि की पूर्वोक्त अपना-अपना स्थिति, गुणहानि, नाना गुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण आदि करि, इहां आबाधाकाल है नाही; ताते अपनी-अपनी स्थिति का प्रथम समय ही तै लगाय नेके रचना करनी । जाते औदारिक आदि शरीरनि का तैसे ही आगे वर्णन कीजिये है ।

आगे औदारिक आदि के समयप्रबद्धनि का बंध, उदय, सत्त्व, अवस्था विषे द्रव्य का प्रमाण निरूपे है -

एकं समयप्रबद्धं, बंधदि एकं उदेदि चरिमस्मि ।

गुणहाणीण दिड्वदं, समयप्रबद्धं हवे सत्तं ॥२५४॥

एकं समयप्रबद्धं, बध्नाति एकमुदेति चरमे ।

गुणहानीनां द्वयर्ध, समयप्रबद्धं भवेत् सत्त्वम् ॥२५४॥

टीका - औदारिक आदि शरीरनि विषे तैजस अर कार्माण इनि दोऊनि का जीव के अनादि तै निरंतर संबंध है । ताते इनिका सदाकाल उदय अर सत्त्व संभव है । ताते जीव मिथ्यादर्शन आदि परिणाम के निमित्त तै समय-समय प्रति तैजस सबधी अर कार्माण सबधी एक-एक समयप्रबद्ध कौ बाधै है । पुद्गलवर्गणानि कौ तैजस शरीर रूप अर ज्ञानावरणादिरूप आठ प्रकार कर्मरूप परिणमावै है । बहुरि इनि दोऊ शरीरनि का समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध उदयरूप हो है । भगना फल देनेरूप परिणतिरूप परिमाण करि फल देइ, तैजस शरीरपना कौ वा कार्माण शरीरपना कौ छोडि गलै है, निर्जरै है । बहुरि विवक्षित समयप्रबद्ध की स्थिति का अत निषेक सबधी समय विषे किचिदून द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है । इतने परमाणू सत्तारूप एकठे हो है । सर्वदा संबध तै परमार्थ करि इनि दोऊनि का सत्त्वद्रव्य, समय-समय प्रति सदा ही इतना संभवै है ।

बहुरि औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि के समय प्रबद्धनि विषे विशेष है, सो कहिए है । तिनि औदारिक वा वैक्रियिक शरीरनि के ग्रहण का प्रथम समय तै लगाइ अपने आयु का अंत समय पर्यंत शरीर नामा नामकर्म के उदय संयुक्त जीव, सो समय-समय प्रति एक-एक तिस शरीर के समय प्रबद्ध कौ बाधै है । पुद्गलवर्गणानि

कौ तिस शरीररूप परिणमावै है । उदय कितना है ? सो कहै है — शरीर ग्रहण का प्रथम समय विषै बंध्या जो समयप्रबद्ध, ताका पहला निषेक उदय हो है ।

इहां प्रश्न — जो गाथा विषै समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय कह्या है । इहां एक निषेक का उदय कैसे कहो हो ?

ताका समाधान — कि निषेक है सो समयप्रबद्ध का एकदेश है । ताका उपचार करि समयप्रबद्ध कहिए है । बहुरि दूसरा समय विषै पहिले समय बंध्या था जो समयप्रबद्ध, ताका तो दूसरा निषेक अर दूसरे समय बंध्या जो समयप्रबद्ध ताका पहिला निषेक, अैसे दोय निषेक उदय हो है । बहुरि अैसे ही तीसरा आदि समय विषै एक-एक बधता निषेक उदय हो है । अैसे क्रम करि अंत समय विषै उदय अर सत्त्वरूप संचय सो युगपत् द्व्यर्धगुण हानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हो है । बहुरि आहारक शरीर का तिस शरीर ग्रहण का समय प्रथम तै लगाय अपना अतर्मुहूर्त मात्र स्थिति का अत समय विषै किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि करि गुणित समय प्रबद्धप्रमाण द्रव्य का उदय अर सत्त्वरूप संचय सो युगपत् हो है इतना विशेष जानना । इहा समय-समय प्रति बंधै सो समयप्रबद्ध कहिए । तातै समय-समय प्रति समयप्रबद्ध का बंधना तौ सभवै अर समयप्रबद्ध का उदय अर किंचिदून द्व्यर्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सत्त्व कैसे हो है, सो वर्णन इहां ही आगे करेगे ।

आगे औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि विषै विशेष कहै है—

नवरि य दुसरीराणं, गलिदवसेसाउमेत्तठिदिबंधो ।

गुणहाणीण दिवड्ढं, संचयमुदयं च चरिमस्मि ॥२५५॥

नवरि च द्विशरीरयोर्गलितावशेषायुर्मात्रस्थितिबधः ।

गुणहानीनां द्व्यर्धं, संचयमुदयं च चरमे ॥२५५॥

टीका — औदारिक, वैक्रियिक शरीरनि का शरीर ग्रहण का प्रथम समय तै लगाइ अपनी स्थिति का अत समय पर्यंत बधै है, जे समयप्रबद्ध तनि का स्थिति-बंध गलितावशेष आयुमात्र जानना । जितना अपना आयु प्रमाण होइ, तीहि विषै जो व्यतीत भया, सो गलित कहिए । अवशेष रह्या सो गलितावशेष आयु कहिए है; तीहि प्रमाण जानना । सोई कहिए हैं—शरीर ग्रहण का प्रथम समय विषै जो समय

प्रबद्ध बंध्या, ताका स्थितिबंध संपूर्ण अपना आयुमात्र हो है । बहुरि दूसरे समय जो समयप्रबद्ध बंध्या, ताका स्थितिबंध एक समय घाटि अपना आयु प्रमाण हो है । बहुरि तीसरे समय बंध्या जो समयप्रबद्ध, ताका स्थितिबंध दोय समय घाटि अपना आयु प्रमाण हो है । अैसे ही चौथा आदि उत्तरोत्तर समयनि विषे बंधे जे समयप्रबद्ध तिनिका स्थितिबंध एक-एक समय घटता होता अंत समय विषे बंध्या हुवा समय-प्रबद्ध का स्थितिबंध, एक समयमात्र हो है । जातें प्रथम समय तें लगाइ अंत समय पर्यंत बंधे जे समयप्रबद्ध, तिनकी अपने आयु का अंत कौ उलघि स्थिति न संभवै है । अैसे जिस-जिस समयप्रबद्ध की जितनी-जितनी स्थिति होइ, तिस-तिस समयप्रबद्ध को तितनी-तितनी स्थितिमात्र निषेक रचना जाननी । अंत विषे एक समय की स्थिति समयप्रबद्ध की कही । तहां एक निषेक संपूर्ण समयप्रबद्धमात्र जानना । बहुरि अत समय विषे गलितावशेष समयप्रबद्ध किचिदूनद्व्यर्धगुणहानिमात्र सत्वरूप एकठे हो है । जे समयप्रबद्ध बंधे, तिन के निषेक पूर्वे गले, निर्जरारूप भए, तिनिते अवशेष निषेकरूप जे समयप्रबद्ध रहे, तिनिकौ गलितावशेष कहिए । ते सर्व एकठे होइ किछू घाटि ड्योढ गुणहानिमात्र समयप्रबद्ध सत्तारूप एकठे अत समय विषे होहि है । बहुरि तीहि अत समय विषे ही तिन सबनि का उदय हो है । आयु के अंत भए पीछे ते रहै नाही । तातें तीहि समय सर्व निर्जरै है; अैसे देव-नारकीनि कै तौ वैक्रियिक गरीर का अर मनुष्य-तिर्यचनि कै औदारिक शरीर का अत समय विषे किचिदून द्व्यर्धगुणहानिमात्र समयप्रबद्धनि का सत्त्व और उदय युगपत् जानना ।

आगै किस स्थान विषे सामग्रीरूप कैसी आवश्यक सयुक्त जीव विषे उत्कृष्ट सचय हो है, सो कहै है—

ओरालियवरसंचं, देवुत्तरकुरुवजादजीवस्स ।

तिरियमणुस्सस्स हवे चरिमदुचरिमे तिपल्लठिदिगस्स ॥२५६॥

औरालिकवरसंचयं, देवोत्तरकुरूपजातजीवस्य ।

तिर्यग्मनुष्यस्य भवेत्, चरमद्विचरमे त्रिपल्यस्थितिकस्य ॥२५६॥

टीका — औदारिक आदि शरीरनि की जहां जीव कै उत्कृष्टपनै बहुत परमाणू एकठे होइ; तहां उत्कृष्ट संचय कहिए । तहां जो जीव तीन पल्य आयु धरै, देवकुरु वा उत्तरकुरु भोंगभूमि का तिर्यच वा मनुष्य होइ उपज्या, तहां उपजने

के पहिले समय तिस जीव कौ तहां योग्य जो उत्कृष्ट योग, ताकरि आहार ग्रहण कीया; बहुरि ताकौ योग्य जो उत्कृष्ट योग की वृद्धि, ताकरि वर्धमान भया, बहुरि सो जीव उत्कृष्ट योग स्थाननि कौ बहुत बार ग्रहण करै है; अर जघन्य योगस्थाननि कौ बहुत बार ग्रहण न करै है, तिस जीव कौ योग्य उत्कृष्ट? योगस्थान, तिनिकौ बहुत बार प्राप्त होइ है; अर तिस जीव कौ योग्य जघन्य योगस्थान, तिनिकौ बहुत बार प्राप्त न हो है । बहुरि अधस्तन स्थितिनि के निषेक का जघन्य पद करै है । याका अर्थ यहू-जो ऊपरि के निषेक सबधी जे परमाणू, तिन थोरे परमाणूनि कौ अपकर्षण करि, स्थिति घटाइ, नीचले निषेकनि विषै निक्षेपण करै है; मिलावै है । बहुरि उपरितन स्थिति के निषेकनि का उत्कृष्टपद करै है । याका अर्थ यहू-जो नीचले निषेकनि विषै तिष्ठते परमाणू, तिन बहुत परमाणूनि का उत्कर्षण करि, स्थिति कौ बधाइ, ऊपरि के निषेकनि विषै निक्षेपण करै है; मिलावै है । बहुरि अंतर विषै गमनविकुवणा कौ न करै है; अतर विषै नखच्छेद न करै है । याका अर्थ मेरे जानने में नीकै न आया है । ताते स्पष्ट नाही लिख्या है; बुद्धिमान जानियो । बहुरि तिस जीव के आयु विषै वचनयोग का काल स्तोक होइ, मनोयोग का काल स्तोक होइ । बहुरि वचनयोग स्तोक बार होइ । मनोयोग स्तोक बार होइ ।

भावार्थ — काययोग का प्रवर्तन बहुत बार होइ, बहुत काल होइ । असै आयु का अंतर्मुहूर्त अवशेष रहै; आगे कर्मकाण्ड विषै योग्यवमध्य रचना कहैगे । ताका ऊपरला भाग विषै जो योगस्थान पाइए है । तहां अंतर्मुहूर्तकाल पर्यंत तिष्ठ्या पीछे आगे जो जीव यवमध्य रचना कहैगे; तहां अंत की गुणहानि सबधी जो योगस्थान, तहां आवली का असंख्यातवां भागमात्र काल पर्यंत तिष्ठ्या । बहुरि आयु का द्विचरम समय विषै अर अंत समय विषै उत्कृष्ट योगस्थान कौ प्राप्त भया । तहां तिस जीव के तिन अत के दोऊ समयनि विषै औदारिक शरीर का उत्कृष्ट संचय हो है । बहुरि वैक्रियिक शरीर का भी वैसे ही कहना । विशेष इतना जो अंतर विषै नखच्छेद न करै है, यहू विशेषण न संभवै है ।

वेगुव्वियवरसंचं, बावीससमुद्द आरणदुग्ग्हि ।

जह्मा वरजोगस्स य, वारा अण्णत्थ ण हि बहुगा ॥२५७॥

वैक्रियिकवरसंचयं, द्वाविंशतिसमुद्र आरणद्विके ।

यस्माद्वरयोगस्य च, वारा अन्यत्र नहि बहुकाः ॥२५७॥

टीका — वैक्रियिक शरीर का उत्कृष्ट संचय, सो आरण-अच्युत दोय स्वर्गनि के ऊपरला पटल सबंधी बाईस सागर आयु संयुक्त देव, तिन विषै संभवै है । अन्यत्र नीचले, ऊपरले पटलनि विषै वा सर्व नारकीनि विषै न संभवैं है; जातै आरण-अच्युत बिना अन्यत्र वैक्रियिक शरीररूप योग का बहुत बार प्रवर्तन न हो है । चकार ते तिस योग्य अन्य सामग्री, सो भी अन्यत्र बहुत बार न संभवैं है ।

आगै तैजस शरीर अर कार्मण शरीरनि का उत्कृष्ट सचयस्थान का विशेष कहै है —

तेजासरीरजेठं, सत्तमचरिमम्हि बिदियवारस्स ।

कम्मस्स वि तत्थेव य, णिरये बहुवारभमिदस्स ॥२५८॥

तैजसशरीरज्येष्ठं, सप्तमचरमे द्वितीयवारस्य ।

कार्मणस्यापि तत्रैव च, निरये बहुवारभ्रमितस्य ॥२५८॥

टीका — तैजसशरीर का भी उत्कृष्ट सचय औदारिकशरीरवत् जानना । विशेष इतना जो सातवी नरक पृथ्वी विषै दूसरी बार जो जीव उपज्या होइ । सातवी पृथ्वी विषै उपजि, मरि, तिर्यच होइ, फेरि सातवी पृथ्वी विषै उपज्या होइ; तिस ही जीवकै हो है ।

बहुरि आहारक शरीर का भी उत्कृष्ट सचय औदारिकशरीरवत् जानना । विशेष इतना जो आहारक शरीर कौ उपजावनहारा प्रमत्तसयमी ही कै हो है ।

बहुरि कार्मणशरीर का उत्कृष्ट सचय सो सातवी नरक पृथ्वी विषै नारकिन विषै जो जीव बहु बार भ्रम्या होइ, तिस ही कै होइ है । किस प्रकार हो है ? सो कहै है—कोई जीव बादर पृथ्वी कायनि विषै अंतर्मुहूर्त घाटि, पृथक्त्व कोडिपूर्व करि अधिक दोय हजार सागर हीन कर्म की स्थिति कौ प्राप्त भया । तहा तिस बादर पृथ्वीकाय सबंधी अपर्याप्त पर्याय थोरे धरै, पर्याप्त पर्याय बहुत धरै, तिनिका एकट्ठा किया हुवा पर्याप्त काल बहुत भया । अपर्याप्त काल थोरा भया । ऐसै इनिकौ पालता सता जव-जव आयु वाधै, तव-तव जघन्य योग करि वाधै, यहु यथायोग्य उत्कृष्ट योग

करि आहार ग्रहण करै । अर उत्कृष्ट योगनि की वृद्धि करि बधै । बहुरि यथायोग्य उत्कृष्ट योगनि कौ बहुत बार प्राप्त होइ, जघन्य योगस्थाननि कौ बहुत बार प्राप्त न होइ । बहुरि संक्लेश परिणामरूप परिणया यथायोग्य मदकषायरूप विशुद्धता करि विशुद्ध होइ, पूर्वोक्त प्रकार अधस्तन स्थितिनि के निषेक का जघन्यपद करै । उपरितन स्थितिनि के निषेक का उत्कृष्ट पद करै है । अैसे भ्रमण करि, बादर त्रसपर्याय विषे उपज्या, तहा भ्रमता तिस जीव के पर्याप्त पर्याय थोरे, अपर्याप्त पर्याय बहुत भएँ, तिनिका एकठा कीया पर्याप्तकाल बहुत भया । अपर्याप्तकाल थोरा भया । अैसे भ्रमण करि पीछला पर्याय का ग्रहण विषे सातवी नरक पृथ्वी के नारक जे विले, तनि विषे उपज्या । तहां तिस पर्याय के ग्रहण का प्रथम समय विषे यथायोग्य उत्कृष्ट योग करि आहार ग्रहण कीया । बहुरि उत्कृष्ट योगवृद्धि करि बध्या । बहुरि थोरा अतर्मुहूर्त काल करि सर्व पर्याप्ति पूर्ण कीए । बहुरि तिस नरक विषे तेतीस सागर काल पर्यंत योग आवश्यक अर संक्लेश आवश्यक कौ प्राप्त भया । अैसे भ्रमण करि आयु का स्तोक काल अवशेष रहै, योगयवमध्य रचना का ऊपरला भागरूप योगस्थान विषे अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत तिष्ठि, अर पीछे जीव यवमध्य रचना की अंत गुणहानिरूप योगस्थान विषे आवली का असंख्यातवां भागमात्र काल पर्यंत तिष्ठि आयु का अंत तै तीसरा, दूसरा समयनि विषे उत्कृष्ट संक्लेश कौ पाइ; अत समय विषे उत्कृष्ट योगस्थान कौ पाइ, तिस पर्याय का अत समय विषे जीव तिष्ठ्या ताके कार्माण शरीर का उत्कृष्ट संचय होइ है । अैसे औदारिक आदि शरीरनि का का उत्कृष्ट संचय होने की सामग्री का विशेष कह्या ।

**भावार्थ** — पूर्वे उत्कृष्ट संचय होने विषे छह आवश्यक कहे थे; ते इहां यथासंभव जानि लेना । पर्याय संबंधी काल तौ भवाद्ध है । अर आयु का प्रमाण सो आयुष्य है । यथासंभव योगस्थान होना, सो योग है । तीव्र कषाय होना सो संक्लेश है । ऊपरले निषेकनि के परमाणू नीचले निषेकनि विषे मिलावना, सो अपकर्षण है । नीचले निषेकनि का परमाणू ऊपरि के निषेकनि विषे मिलावना; सो उत्कर्षण है । अैसे ए छह आवश्यक यथासंभव जानने ।

बहुरि एक प्रश्न उपजै है कि एक समय विषे जीव करि बाध्या जो एक समयप्रबद्ध, ताके आबाधा रहित अपनी स्थिति का प्रथम समय तै लगाइ, अत समय पर्यंत समय-समय प्रति एक-एक निषेक उदय आवै है । पूर्वे गाथा विषे समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय का आवना कैसे कह्या है ?

ताकां समाधान — जो समय-समय प्रति बंधे समय प्रबद्धनि का एक-एक निषेक एकठे होइ, विवक्षित एक समय विषे समय प्रबद्धमात्र हो है ।

कैसे ? सो कहिएहै — अनादिबध का निमित्तक रि बध्या विवक्षित समयप्रबद्ध, ताका जिस काल विषे अंत निषेक उदय हो है, तिस काल विषे, ताके अनतरि बध्या समयप्रबद्ध का अत ते दूसरा निषेक उदय हो है । ताके अनतरि बध्या समयप्रबद्ध का अत ते तीसरा निषेक उदय हो है । अैसे चौथा आदि समयनि विषे वध, समय-प्रबद्धनि का अत ते चौथा आदि निषेकनि का उदय क्रम करि आवाधाकाल रहित विवक्षित स्थिति के जेते समय तितने स्थान जाय, अंत विषे जो समयप्रबद्ध बध्या, ताका आदि निषेक उदय हो है । अैसे सबनि कौ जोडै, विवक्षित एक समय विषे एक समयप्रबद्ध उदय आवै है ।

अंकसदृष्टि करि जैसे जिन समयप्रबद्धनि के सर्व निषेक गलि गए, तिनिका तौ उदय है ही नाही । बहुरि जिस समयप्रबद्ध के सैंतालीस निषेक पूर्वे गले, ताका अत नव का निषेक वर्तमान समय विषे उदय आवै है । बहुरि जाके छियालीस निषेक पूर्वे गले, ताका दश का निषेक उदय हो है । अैसे ही क्रम ते जाका एकहू निषेक पूर्वे न गल्या, ताका प्रथम पांच सैं बारा का निषेक उदय हो है । अैसे वर्तमान कोई एक समय विषे सर्व उदय रूप निषेक । ६ १० ११ १२ १३ १४ १५ १६ । १८ २० २२ २४ २६ २८ ३० ३२ । ३६ ४० ४४ ४८ ५२ ५६ ६० ६४ । ७२ ८० ८८ ९६ १०४ ११२ १२० १२८ । १४४ १६० १७६ १९२ २०८ २२४ २४० २५६ । २८८ ३२० ३५२ ३८४ ४१६ ४४८ ४८० ५१२ । अैसे इनिकौ जोडै सपूर्ण समय प्रबद्धमात्र प्रमाण हो है ।

आगामी काल विषे जैसे नवीन समयप्रबद्ध के निषेकनि का उदय का सद्भाव होता जाइगा, तैसे पुराणे समयप्रबद्ध के निषेकनि के उदय का अभाव होता जायगा । जैसे आगामी समय विषे नवीन समयप्रबद्ध का पांच सैं बारा का निषेक उदय आवैगा, तहा वर्तमान समय विषे जिस समयप्रबद्ध का पांच सैं बारा का निषेक उदय था, ताका पांच सैं बारा का निषेक का अभाव होइ, दूसरा च्यारि सैं असी का निषेक उदय होगा । बहुरि जिस समयप्रबद्ध का वर्तमान समय विषे च्यारि सैं असी का निषेक उदय था, ताका तिस निषेक का अभाव होइ, च्यारि सैं अड़तालीस के निषेक का उदय होगा । अैसे क्रम ते जिस समयप्रबद्ध का वर्तमान समय विषे नव



का निषेक उदय था, ताका आगामी समय विषै सर्व अभाव होगा । अैसे ही क्रम समय प्रति जानना । तातै समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक मिलि, एक-एक समयप्रबद्ध का उदय हो है । बहुरि गलै पीछै अवशेष रहै, सर्व निषेक, तिनिकौ जोडै, किचित् ऊन व्द्वर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है । कैसे ? सो कहिए है - जिस समयप्रबद्ध का एकहू निषेक गल्या नाही, ताके सर्व निषेक नीचै पंक्ति विषै लिखिए । बहुरि ताके ऊपर जिस समयप्रबद्ध का एक निषेक गल्या होइ, ताके आदि निषेक बिना अवशेष निषेक पंक्ति विषै लिखिए । बहुरि ताके ऊपर जिस समय प्रबद्ध के दोय निषेक गले होइ, ताके आदि के दोय निषेक बिना अवशेष निषेक पंक्ति विषै लिखिए । अैसे ही ऊपरि-ऊपरि एक-एक निषेक घटता लिखि, सर्व के ऊपरि जिस समय प्रबद्ध के अन्य निषेक गलि, एक अवशेष रह्या होइ, ताका अंत निषेक लिखना । अैसे करते त्रिकोण रचना हो है ।

षष्ठम गुणहानि	पचम गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	तृतीय गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	प्रथम गुणहानि
८६	११८	३३६	७७२	१६४४	३३८८
१६	१३८	३७६	८५२	१८०४	३७०८
३०	१६०	४२०	९४०	१९८०	४०६०
४२	१८४	४६८	१०३६	२१७२	४४४४
५५	२१०	५२०	११४०	२३८०	४८६०
६६	२३८	५७६	१२५२	२६०४	५३०८
८४	२६८	६३६	१३७२	२८४४	५७८८
१००	३००	७००	१५००	३१००	६३००
जोड ४०८	१६१६	४०३२	८८६४	१८५२८	३७८५६

अकसंदृष्टि करि जैसे नीचै ही नीचै अडतालीस निषेक लिखे, ताके ऊपर पांच सै बारा का बिना सैतालीस निषेक लिखे । ताके ऊपरि पांच सै बारा अर च्यारि सै असी का बिना छियालीस निषेक लिखे । अैसे ही क्रम ते ऊपरि ही ऊपरि नव का निषेक लिख्या; अैसे लिखते त्रिकूटी रचना हो है । तातै इस त्रिकोण यंत्र का जोडा हुवा सर्व द्रव्य, प्रमाण सत्त्व द्रव्य जानना । सो कितना हो है ? सो कहिए है - किचिदून व्द्वर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण हो है । पूर्वे जो गुणहानि

आयाम का प्रमाण कह्या, तामै आधा गुणहानि आयाम का प्रमाण मिलाए, व्द्यर्ध-गुणहानि हो है । तामै किछू घाटि सख्यात गुणी पत्य की वर्गशलाका करि अधिक जो गुणहानि का अठारहवा भाग का प्रमाण सो घटावना, घटाएं जो प्रमाण होइ, ताका नाम इहा किचिदून व्द्यर्धगुणहानि जानना । ताकरि समयप्रबद्ध के विषे जो परमाणूनि का प्रमाण कह्या, ताकौ गुणों, जो प्रमाण होइ, सोइ त्रिकोण यंत्र विषे प्राप्त सर्व निषेकनि के परमाणू जोडै, प्रमाण हो है । जैसे अक संदृष्टि करि कीया हूवा त्रिकोणयंत्र, ताकी सर्वपंक्ति के अकनि कौ जोडै, इकहत्तरी हजार तीन सैं च्यारि हो है । अर गुणहानि आयाम आठ, तामै आधा गुणहानि आयाम च्यारि मिलाए, व्द्यर्धगुणहानि का प्रमाण बारह होइ, ताकरि समयप्रबद्ध तरेसठि सौ कौ गुणों, पिचहत्तरि हजार छ सैं होइ । इहां त्रिकोण यंत्र का जोड़ घटता भया । तातै किचि दून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व कह्या । तहा व्द्यर्धगुणहानि विषे ऊनका प्रमाण दाष्टाति विषे महत्प्रमाण है । तातै पूर्वोक्त जानना ।

इहा अकसंदृष्टि दृष्टांत विषे गुणहानि का अठारहवां भाग करि गुणित समयप्रबद्ध का प्रमाण अठाईस सैं, तामै गुणहानि आठ, नानागुणहानि छै करि गुणित समयप्रबद्ध का तरेसठिवा भाग, अडतालीस सैं, तामै किचित् अधिक आधा समय-प्रबद्ध का प्रमाण तेतीस सैं च्यारि घटाइ, अवशेष चौदह सैं छिनवे जोडै, वियालीस सैं छिनवे भए, सो व्द्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध विषे घटाए, त्रिकोण यंत्र का जोड़ हो है ।

बहुरि इस त्रिकोण यंत्र का जोड़ इतना कैसे भया ? सो जोड़ देने का विधान हीन-हीन सकलन करि वा अधिक-अधिक संकलन करि वा अनुलोम-विलोम सकलन करि तीन प्रकार कह्या है । तहां घटता-घटता प्रमाण लीए निषेकनि का क्रम तै जोड़ना, सो हीन-हीन सकलन कहिए । बधता-बधता प्रमाण लीए निषेकनि का क्रम तै जोड़ना, सो अधिक-अधिक संकलन कहिए । हीन प्रमाण लीएं वा अधिक प्रमाण लीए निषेकनि का जैसे होइ तैसे जोड़ना, सो अनुलोम-विलोम सकलन कहिए सो ऐसे जोड़ देने का विधान आगे सदृष्टि अधिकार विषे लिखैगे; तहा जानना । इहा जोड़ विषे संदृष्टि समझने में न आवती, तातै नाही लिख्या है । ऐसे आयु विना कर्मप्रकृतिनि का समय-समय प्रति बंध, उदय, सत्त्व का लक्षण कह्या ।

बहुरि आयु का अन्यथा लक्षण है, जातै आयु का अपकर्षण कालनि विषै वा असंक्षेप अत काल विषै ही बंध हो है । बहुरि आबाधा काल पूर्व भव विषै व्यतीत हो है । तातै आयु की जितनी स्थिति, तितनी ही निषेकनि की रचना जाननी । आबाधाकाल घटावना नाही । बहुरि आयुकर्म का उत्कृष्ट संचय कोडि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी जलचर जीव कै हो है । तहा कर्मभूमियां मनुष्य कोटि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी यथायोग्य संक्लेश वा उत्कृष्ट योग करि पर भव संबंधी कोटिपूर्व वर्ष का आयु जलचर विषै उपजने का बाध्या, सो आगै कहिएगी योग यवमध्य रचना, ताका ऊपरि स्थान विषै अतर्मुहूर्त तिष्ठ्या, बहुरि अंत जीव गुण-हानि का स्थान विषै आवली का असंख्यातवा भागमात्र काल तिष्ठ्या, क्रम तै काल गमाइ, कोडिपूर्व आयु का धारी जलचर विषै उपज्या । अतर्मुहूर्त करि सर्व पर्याप्तनि करि पर्याप्त भया । अंतर्मुहूर्त करि बहुरि परभव संबंधी जलचर विषै उपजने का कोडिपूर्व आयु कौ बांधै है । तहां दीर्घ आयु का बंध काल करि यथायोग्य संक्लेश करि उत्कृष्ट योग करि उत्कृष्ट योग करि बाधै है । सो योग यवरचना का अंत स्थानवर्ती जीव बहुत बार साता कौ काल करि युक्त होता अपने काल विषै पर भव संबंधी आयु कौ घटावै, ताकै आयु-वेदना द्रव्य का प्रमाण उत्कृष्ट हो है; सो द्रव्य रचना सस्कृत टीका तै जाननी । या प्रकार औदारिक आदि शरीरनि का वध, उदय, सत्त्व विशेष जानने के अर्थ वर्णन कीया ।

आगै श्री माधवचद्र त्रैविद्यदेव बारह गाथानि करि योग मार्गणा विषै जीवनि की संख्या कहै है -

**बादरपुण्णा तेऊ, सगरासीए असंखभागमिदा ।**

**विक्रियसत्तिजुत्ता, पत्तासंखेज्जया वाऊ ॥२५६॥**

बादरपूर्णाः, तैजसाः, स्वकराशेरसंख्यभागमिताः ।

विक्रियाशक्तियुक्ताः, पत्यासख्याता वायवः ॥२५९॥

टीका - बादर पर्याप्त तेजकायिक जीव, तिनि विषै उन ही जीवनि का जो पूर्वे परिमाण आवली के घन का असंख्यातवां भागमात्र कहा था, तिस राजि कौ असंख्यात का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने जीव विक्रिया शक्ति करि सयुक्त जानने ।

बहुरि बादर पर्याप्त वातकायिक जीव लोक के संख्यातवें भाग प्रमाण कहे थे । तिति विषै पल्य का असंख्यातवां भाग प्रमाण जीव, विक्रिया शक्ति युक्त जानने । जातै 'बादरतेऊवाऊपंचेदिययुण्णगा विगुव्वन्ति' इस गाथा करि बादर पर्याप्त अग्नि-कायिक अर पवनकायिक जीवनि के वैक्रियिक योग का सङ्काव कह्या है ।

पल्लासंखेज्जाह्यविंदंगुलगुणितसेढिमेत्ता हु ।  
वेगुव्वियपंचक्खा, भोगभुमा पुह विगुव्वन्ति ॥२६०॥

पल्यासंख्याताहतवृदांगुलगुणित श्रेणिमात्रा हि ।  
वैगुव्विकपंचाक्षा, भोगभुमाः पृथक् विगुव्वन्ति ॥२६०॥

टीका - पल्य का असंख्यातवा भाग करि घनांगुल कौ गुणै, जो परिमाण होइ, ताकरि जगच्छ्रेणी गुणै, जो परिमाण आवै, तितने वैक्रियिक योग के धारक पर्याप्त पंचेद्री तिर्यच वा मनुष्य जानने । तहां भोगभूमि विषै उपजे तिर्यच वा मनुष्य अर कर्मभूमि विषै चक्रवर्ती ए पृथक् विक्रिया कौ भी करै है । इनि विना सर्व कर्म-भूमियानि के अपृथक् विक्रिया ही है ।

जो मूलशरीर तै जुदा शरीरादि करना, सो पृथक् विक्रिया जाननी ।

अपने शरीर ही कौ अनेकरूप करना, सो अपृथक् विक्रिया जाननी ।

देवोहं सादिरेया, तिजोगिणो तेहिं हीण तसपुण्णा ।  
वियजोगिणो तद्वणा, संसारी एक्कजोगा हु ॥२६१॥

देवैः सातिरेकाः, त्रियोगिनस्तैर्हीनाः त्रसपूर्णाः ।

द्वियोगिनस्तद्वना, संसारिणः एकयोगा हि ॥२६१॥

टीका - देवनि का जो परिमाण साधिक ज्योतिष्कराशि मात्र कह्या था; तीहि विषै घनांगुल का द्वितीय मूल करि गुणित जगच्छ्रेणी प्रमाण नारकी अर संख्यात पण्ढी प्रतरांगुल करि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण संज्ञी पर्याप्त तिर्यच अर वादाल का घन प्रमाण पर्याप्त मनुष्य इनिकौ मिलाएं, जो परिमाण होइ, तितने त्रियोगी जानने । इनिकै मन, वचन, काय तीनों योग पाइए है ।

बहुरि जो पूर्वे पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण कह्या था, तामै त्रियोगी जीवनि का परिमाण घटाएं, जो अवशेष परिमाण रहै; तितने द्वियोगी जीव जानने । इनिकै वचन, काय दोय ही योग पाइए है ।

बहुरि संसारी जीवनि का जो परिमाण, तामै द्वियोगी अर त्रियोगी जीवनि का परिमाण घटाएं जो अवशेष परिमाण रहै, तितने जीव एक योगी जानने । इनिकै एक काययोग ही पाइए है; अैसे प्रगट जानना ।

**अंतोमुहुत्तमेत्ता, चउमणजोगा कमेण संखगुणा ।**

**तज्जोगो सामण्णं, चउवचिजोगा तदो दु संखगुणा ॥२६२॥**

**अंतर्मुहूर्तमात्राः, चतुर्मनोयोगाः क्रमेण संख्यगुणाः ।**

**तद्योगः सामान्यं, चतुर्वचोयोगाः ततस्तु संख्यगुणाः ॥२६२॥**

टीका — च्यारि प्रकार मनोयोग प्रत्येक अंतर्मुहूर्त प्रमाण स्थिति लीए है । तथापि अनुक्रम तै संख्यात गुणे जानने । सोई कहिए है — सत्य मनोयोग का काल सबतै थोरा है; सो भी अंतर्मुहूर्त प्रमाण है; ताकी संदृष्टि—एक अंतर्मुहूर्त । बहुरि यातै संख्यातगुणा काल असत्य मनोयोग का है, ताकी संदृष्टि—च्यारि अंतर्मुहूर्त । इहां संख्यात की सहनानी च्यारि जाननी । बहुरि यातै संख्यात गुणा उभय मनोयोग का काल है; ताकी संदृष्टि — सोलह अंतर्मुहूर्त । बहुरि यातै संख्यातगुणा अनुभय मनोयोग का काल है; ताकी संदृष्टि—चौसठि अंतर्मुहूर्त । अैसे च्यारि मनोयोग का काल का जोड दीएं जो परिमाण हूवा, सो सामान्य मनोयोग का काल है, तिहि की संदृष्टि — पिच्चासी अंतर्मुहूर्त । बहुरि सामान्य मनोयोग का काल तै संख्यातगुणा च्यारि वचनयोग काल है । तथापि क्रम तै संख्यातगुणा है, तौ भी प्रत्येक अंतर्मुहूर्त मात्र ही है । तहां सामान्य मनोयोग का कालतै संख्यातगुणा सत्य वचनयोग का काल है; ताकी संदृष्टि—चौगुणा पिच्चासी ( ४×८५ ) अंतर्मुहूर्त । बहुरि यातै संख्यात गुणा असत्य वचनयोग का काल है — ताकी संदृष्टि सोलहगुणा पिच्चासी ( १६×८५ ) अंतर्मुहूर्त । बहुरि यातै संख्यातगुणा उभय वचनयोग का काल है — ताकी संदृष्टि—चौसठिगुणा पिच्चासी ( ६४×८५ ) अंतर्मुहूर्त । बहुरि यातै संख्यात गुणा अनुभय वचनयोग का काल है; ताकी दृष्टि—दोय सै छप्पन गुणा पिच्चासी ( २५६×८५ ) अंतर्मुहूर्त ।

तज्जोगो सामण्यं, काग्रो संखाहदो तिजोगमिदं ।  
सव्वसमासविभजिदं, सगसगगुणसंगुणे दु सगरासी ॥२६३॥

तद्योगः सामान्यं, कायः संख्याहतः त्रियोगिमितम् ।  
सर्वसमासविभक्तं, स्वकस्वकगुणसंगुणे तु स्वकराशिः ॥२६३॥

टीका — बहुरि जो चार्यों वचन योगनि का काल कह्या, ताका जोड दीएं, जो परिमाण होइ, सो सामान्य वचन योग का काल है; ताकी संदृष्टि तीन सै चालीस गुणा पिच्यासी (  $340 \times 55$  ) अंतर्मुहूर्त । यातै संख्यात गुणा काल काययोग का जानना । ताकी संदृष्टि तेरह सै साठि गुणा पिच्यासी (  $1360 \times 55$  ) अंतर्मुहूर्त । असै इनि तीनों योगनि के काल का जोड दीएं, सतरह सै एक गुणा पिच्यासी (  $1701 \times 55$  ) अंतर्मुहूर्त प्रमाण भया । ताके जेते समय होहि, तिस प्रमाण करि त्रियोग कहिए । पूर्वे जो त्रियोगी जीवनि का परिमाण कह्या था, ताकौ भाग दीजिए जो एक भाग का परिमाण आवै, ताकौ सत्यमनोयोग के काल के जेते समय, तिन-करि गुणै, जो परिमाण आवै, तितने सत्य मनोयोगी जीव जानने । बहुरि ताही कौ असत्य मनोयोग काल के जेते समय, तिन करि गुणै, जो परिमाण आवै, तितने असत्य मनोयोगी जीव जानने । असै ही काययोग पर्यंत सर्व का परिमाण जानना । इहां सर्वत्र त्रैराशिक करना । तहां जो सर्व योगनि का काल विषै पूर्वोक्त त्रियोगी सर्व जीव पाइए, तौ विवक्षित योग के काल विषै केते जीव पाइए ? असै तीनों योगनि का जोड दिए जा काल भया, सो प्रमाण राशि, त्रियोगी जीवनि का परिमाण फल राशि, अर जिस योग की विवक्षा होइ तिसका काल इच्छा राशि, असै करि कै फल-राशि कौ इच्छाराशि करि गुणि प्रमाणराशि का भाग दीएं, जो-जो परिमाण आवै, तितने-तितने जीव विवक्षित योग के धारक जानने ।

बहुरि द्वियोगी जीवनि विषै वचनयोग का काल अंतर्मुहूर्त मात्र, ताकी संदृष्टि । एक अंतर्मुहूर्त, यातै संख्यातगुणा काययोग का काल, ताकी संदृष्टि चारि अंतर्मुहूर्त, इनि दोऊनि के काल कौ जोड, जो प्रमाण होइ, ताका भाग द्वियोगी जीव राशि कौ दीएं, जो एक भाग का परिमाण होइ, ताकौ अपना-अपना काल करि गुणै, अपना-अपना राशि हो है । तहा किछू घाटि त्रसराशि के प्रमाण कौ संदृष्टि अपेक्षा पांच करि भाग देइ, एक करि गुणै, द्वियोगीनि विषै वचन योगीनि का

प्रमाण हो है । पांच का भाग देइ, च्योरि करि गुणै द्वियोगीनि विषै काययोगीनि का प्रमाण हो है ।

**कम्मोरालियमिस्सयओरालद्धासु संचिदअणंता ।**

**कम्मोरालियमिस्सय, ओरालियजोगिणो जीवा ॥२६४॥**

**कामंणौदारिकमिश्रकौरालद्धासु संचितानंताः ।**

**कामंणौरालिकमिश्रकौरालिकयोगिनो जीवाः ॥२६४॥**

टीका — कामंण काययोग, औदारिकमिश्र काययोग, औदारिक काययोग इति के कालनि विषै संचित कहिए एकठे भएँ, जे कामंण काययोगी, औदारिक मिश्र काययोगी, औदारिक काययोगी जीव, ते प्रत्येक जुदे-जुदे अनंतानंत जानने, सोई कहिए है ।

**समयत्तयसंखावलिसंखगुणावलिसमासहिदरासी ।**

**सगगुणगुणिदे थोवो, असंखसंखाहदो कमसो ॥२६५॥**

**समयत्रयसंख्यावलिसंखगुणावलिसमासहितराशिम् ।**

**स्वकगुणगुणिते स्तोकः, असंख्यसंख्याहतः क्रमशः ॥२६५॥**

टीक — कामंण काययोग का काल तीन समय है, जातै विग्रह गति विषै अनाहारक तीनि समयनि विषै कामंण काय योग ही संभवै है । बहुरि औदारिक मिश्र काययोग का काल संख्यात आवली प्रमाण है, जातै अंतर्मुहूर्त प्रमाण अपर्याप्त अवस्था विषै औदारिकमिश्र का काल है । बहुरि तातै संख्यातगुणा औदारिक काययोग का काल है; जातै तिनि दोऊ कालनि बिना अवशेष सर्व औदारिक योग का ही काल है; सो इनि सर्व कालनि का जोड दीएं जो समयनि का परिमाण भया, ताकौ द्विसंयोगी त्रिसंयोगी राशि करि हीन ससारी जीव राशिमात्र एक योगी जीव राशि के परिमाण कौ भाग दीए जो एक भाग विषै परिमाण आवै, तीहि कौ कामंण काल करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने कामंण काययोगी है । अर तिस ही एक भाग कौ औदारिक मिश्र काल करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने औदारिक मिश्र योगी जानने । बहुरि तिस ही एक भाग कौ औदारिक के काल करि गुणै, जो परिमाण होइ, तितने औदारिक काययोगी जानने ।

इहां कार्माण काययोगी तौ सब तै स्तोक है । इनि तै असंख्यात गुणै औदारिकमिश्र काययोगी है । इन तै संख्यातगुणै औदारिक काययोगी है । इहां भी जो तीनों काययोग के काल विषै सर्व एक योगी जीव पाइए, तौ कार्माण शरीर आदि विवक्षित के काल विषै केते पाइए ? अैसे त्रैराशिक हो है । तहां तीनों काययोगनि का काल सो प्रमाणराशि, एक योगी जीवनि का परिमाण सो फलराशि, कार्मणादिक विवक्षित का काल सो इच्छाराशि, फलराशि कौ इच्छाराशि करि गुणै, प्रमाण राशि का भाग दीएं, जो-जो प्रमाण पावै, तितने-तितने विवक्षित योग के धारक जीव जानने । क्रमश इस शब्द करि आचार्य ने कहा है कि धवल नामा प्रथम सिद्धांत के अनुसारि यह कथन कीया है । या करि अपना उद्धतता का परिहार प्रगट कीया है ।

**सोपक्रमानुपक्रमकालो संखेज्जवासठिदिवाणे ।**

**आवलिअसंखभागो, संखेज्जावलिपमा कमसो ॥२६६॥**

**सोपक्रमानुपक्रमकालः संख्यातवर्षस्थितिवाने ।**

**आवत्यसंख्यभागः, संख्यातावलिप्रमः क्रमशः ॥२६६॥**

टीका - वैक्रियिक मिश्र अर वैक्रियिक काययोग के धारक जे जीव, तिनकी संख्या च्यारि गाथानि करि कहै है । संख्यात वर्ष की है स्थिति जिनकी अैसे जे मुख्यता करि दश हजार वर्ष प्रमाण जघन्य स्थिति के धारकवान कहिए व्यंतर देव, तिति विषै उनकी स्थिति के दोय भाग है, एक सोपक्रम काल, एक अनुपक्रम काल ।

तहा उपक्रम कहिए उत्पत्ति, तीहि सहित जो काल, सो सोपक्रम काल कहिए । सो आवली के असंख्यातवे भागमात्र है, जो व्यतर देव उपजिवो ही करे, वीधि कोई समय अतर नही पडै, तौ आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण काल पर्यंत उपजिवो करे ।

बहुरि जो उत्पत्ति रहित काल होइ; सो अनुपक्रम काल कहिए । सो संख्यात आवली प्रमाण है । बारह मुहूर्तमात्र जानना । जो कोई ही व्यंतर देव न उपजै, तौ बारह मुहूर्त पर्यंत न उपजै, पीछे कोई उपजै ही उपजै; अैसे अनुक्रम तै काल जानने ।



## दसवां अधिकार : वेद-मार्गणा-प्ररूपणा

॥ संगलाचरण ॥

दूरि करत भव ताप सब, शीतल जाके बँन ।  
तीन भवननायक नमों, शीतल जिन सुखदैन ॥

आगे शास्त्र का कर्ता आचार्य छह गाथानि करि वेदमार्गणा कौ प्ररूपै हैं —

पुरिसिच्छिसंढवेदोदयेण पुरिसिच्छिसंढओ भावे ।  
णामोदयेण दब्बे, पाएण समा कहिं विसमा ॥ २७१ ॥

पुरुषस्त्री षंढवेदोदयेन पुरुषस्त्रीषंढाः भावे ।  
नामोदयेन द्रव्ये, प्रायेण समाः क्वचिद् विषमाः ॥२७१॥

टीका — चारित्र मोहनीय का भेद नोकषाय, तीहरूप पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद नामा प्रकृति, तिनिके उदय तैं भाव जो चैतन्य उपयोग, तीहि विषे पुरुष, स्त्री, नपुंसकरूप जीव हो है । बहुरि निर्माण नामा नामकर्म के उदय करि संयुक्त अंगोपांग का विशेषरूप नामकर्म की प्रकृति के उदय तैं, द्रव्य जो पुद्गलीक पर्याय, तीहिविषे पुरुष, स्त्री, नपुंसक रूप शरीर हो है । सो ही कहिए है—पुरुषवेद के उदयतैं स्त्री का अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारी जीव, सो भाव पुरुष हो है । बहुरि स्त्री वेद के उदय तैं पुरुष का अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारक जीव, सो भाव स्त्री हो है । बहुरि नपुंसकवेद के उदय तैं पुरुष अर स्त्री दोऊनि का युगपत् अभिलाषरूप मैथुन सज्ञा का धारक जीव, सो भाव नपुंसक हो है ।

बहुरि निर्माण नामकर्म का उदय संयुक्त पुरुष वेदरूप आकार का विशेष लीएं, अंगोपांग नामा नामकर्म का उदय तैं मूछ, डाढी, लिगादिक चिह्न संयुक्त शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तैं लगाय अन्त समय पर्यंत द्रव्य पुरुष हो है ।

बहुरि निर्माण नाम का उदय संयुक्त स्त्री वेदरूप आकार का विशेष लीएं अंगोपांग नामा नामकर्म के उदयतैं रोम रहित मुख, स्तन, योनि इत्यादि चिह्न संयुक्त

शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यंत द्रव्य स्त्री होइ है ।

बहुरि निर्माण नामा नामकर्म का उदय तै संयुक्त नपुसक वेदरूप आकार का विशेष लीएं अंगोपांग नामा नामप्रकृति के उदय तै मूछ, डाढी इत्यादि वा स्तन, योनि इत्यादिक दोऊ चिह्न रहित शरीर का धारक जीव, सो पर्याय का प्रथम समय तै लगाइ अंत समय पर्यंत द्रव्य नपुसक हो है ।

सो प्रायेण कहिए बहुलता करि तौ समान वेद हो है । जैसा द्रव्यवेद होइ तैसा ही भाव वेद होइ बहुरि कही समान वेद न हो है, द्रव्यवेद अन्य होइ, भाव वेद अन्य होइ । तहां देव अर नारकी अर भोग भूमिया तिर्यच, मनुष्य इनिके तौ जैसा द्रव्य वेद है, तैसा ही भाव वेद है । बहुरि कर्मभूमियां तिर्यच अर मनुष्य विषे कोई जीवनि के तौ जैसा द्रव्य वेद हो है, तैसा ही भाव वेद है, बहुरि केई जीवनि के द्रव्य वेद अन्य हो है अर भाव वेद अन्य हो है । द्रव्य तैं पुरुष है अर भाव तैं पुरुष का अभिलाषरूप स्त्री वेदी है । वा स्त्री अर पुरुष दोऊनि का अभिलाषरूप नपुंसकवेदी है । अंस ही द्रव्य तैं स्त्रीवेदी है अर भाव तैं स्त्रीका अभिलाषरूप पुरुषवेदी है । वा दोऊनि का अभिलाषरूप नपुंसक वेदी है । बहुरि द्रव्य तैं नपुंसक वेदी है । भाव तैं स्त्री का अभिलाषरूप पुरुष वेदी है । वा पुरुष का अभिलाषरूप स्त्री वेदी है । अैसा विशेष जानना, जातें आगम विषे नवमा गुणस्थान का सवेद भाग पर्यंत भाव तैं तीन वेद है । अर द्रव्य तैं एक पुरुष वेद ही है, अैसा कथन कह्या है ।

**वेदस्सुदीरणाए, परिणामस्स य हवेज्ज संमोहो ।**

**संमोहेण ण जाणदि, जीवो हि गुणं व दोषं वा ॥२७२॥**

वेदस्योदीरणायां, परिणामस्य च भवेत्संमोहः ।

संमोहेन न जानाति, जीवो हि गुणं वा दोषं वा ॥२७२॥

टीका — मोहनीय कर्म की नोकषायरूप वेद नामा प्रकृति, ताका उदीरणा वा उदय, तीहि करि आत्मा के परिणामनि कौ रागादिरूप मैथुन है नाम जाका अैसा सम्मोह कहिए चित्त विक्षेप, सो उपजै है । तहा बिना ही काल आए कर्म का फल निपजै, सो उदीरणा कहिए । काल आए फल निपजै, सो उदय कहिए । बहुरि उस सम्मोह के उपजने तैं जीव गुण कौ वा दोष कौ न जानै, अैसा अविवेक रूप

अनर्थ वेद के उदय तै भया सम्मोह तै-हो है । तातै ज्ञानी जीव कौ परमागम भावना का बल करि यथार्थ स्वरूपानुभवन आदि भाव तै ब्रह्मचर्य अंगीकार करना योग्य है; असा आचार्य का अभिप्राय है ।

**पुरुगुणभोगे सेदे, करेदि लोयस्मि पुरुगुणं कम्मं ।**

**पुरु उत्तमे य जह्मा, तह्मा सो वणिणओ पुरिसो' ॥२७३॥**

पुरुगुणभोगे सेते, करोति लोके पुरुगुणं कर्म ।

पुरुत्तमे च यस्मात्, तस्मात् स वर्णितः पुरुषः ॥२७३॥

टीका - जातै जो जीव पुरुगुण जो उत्कृष्ट सम्यग्ज्ञानादिक, तीहि विषै सेते कहिए स्वामी होइ प्रवर्तै ।

बहुरि पुरुभोग जो उत्कृष्ट इंद्रादिक का भोग, तीहि विषै सेते कहिए भोक्ता होय प्रवर्तै ।

बहुरि पुरुगुण कर्म जो धर्म, अर्थ, काम, मोक्षरूप पुरुषार्थ, तीहिने सेते कहिए करै ।

बहुरि पुरु जो उत्तम परमेष्ठी का पद तीहि विषै सेते कहिए तिष्ठै । तातै सो द्रव्य भाव लक्षण सयुक्त द्रव्य - भाव तै पुरुष कह्या है । पुरुष शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया है ।

धातुनि के अनेक अर्थ है । तातै शीङ् स्वप्ने इस धातु का स्वामी होना, भोगवना, करना, तिष्ठना असै अर्थ कहे, विरोध न उपजावै है । बहुरि इहा पृषोदर शब्द की ज्यो अक्षर विपर्यास जानने । तालवी, शकार का, मूर्धनी षकार करना । अथवा 'षोऽस्तकर्मणि' इस धातु तै निपज्या पुरुष शब्द जानना ।

**छादयदि सयं दोसे, णयदो छाददि परं वि दोसेण ।**

**छादणसीला जह्मा, तह्मा सा वणिण्या इत्थी<sup>२</sup> ॥२७४॥**

छादयति स्वकं दोषैः नयतः छादयति परमपि दोषेण ।

छादनशीला यस्मात् तस्मात् सा वर्णिता स्त्री ॥२७४॥

१ पट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४३, गाथा १७१ ।

२. षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४३, गाथा १७० ।

टीका — जातें जो स्वयं कहिए आपकौ दोषैः कहिए मिथ्यात्व अज्ञान, असं-  
यम, क्रोधादिक, तिनि करि स्तूणाति कहिए आच्छादित करै है । बहुरि नाही केवल  
आप ही कौ आच्छादित करै है; जातें पर जु है पुरुषवेदी जीव, ताहि कोमल वचन  
कटाक्ष सहित विलोकन, -सानुकूल प्रवर्तन इत्यादि प्रवीणतारूप व्यापारनि तै-अपने  
वश करि दोष जे है हिंसादिक पाप, तिनि करि-स्तूणाति कहिए आच्छादै है; असा  
आच्छादन रूप ही है स्वभाव जाका तातें, सो द्रव्य भाव करि स्त्री असा नाम कह्या  
है । असी स्त्री शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया ।

यद्यपि तीर्थकर की माता आदि सम्यग्दृष्टिणी स्त्रीनि विषे दोष नाही,  
तथापि वे स्त्री थोरी अर पूर्वोक्त दोष करि संयुक्त स्त्री घनी । तातें प्रचुर व्यवहार  
अपेक्षा असा लक्षण आचार्य ने स्त्री का कह्या ।

**णैवित्थी एव पुमं, णउंसओ उहय-लिंग-विदिरित्तो ।**

**इठ्ठावगिसमागग-वेदणगरुओ कलुस-चित्तो<sup>१</sup> ॥२७५॥**

नैव स्त्री नैव पुमान्, नपुंसक उभयलिंगव्यतिरिक्तः ।

इष्टापाकाग्निसमानकवेदनागुरुकः कलुषचित्तः ॥२७५॥

टीका — जो जीव पूर्वोक्त पुरुष वा स्त्रीनि के लक्षण के अभाव तें पुरुष नाही  
वा स्त्री नाही; तातें दौऊ ही वेदनि के डाढी, मूछ वा स्तन, योनि इत्यादि चित्त,  
तिनिकरि रहित है । बहुरि इष्ट का-पाक जो ईट पचावने का पंजावा, ताकी अग्नि  
समान तीव्र काम पीडा करि गरवा भर्या है । बहुरि स्त्री वा पुरुष दोऊनि का अभि-  
लाषरूप मैथुन संज्ञा करि मैला है चित्त जाका, असा जीव नपुंसक है ऐसा आगम विषे  
कह्या है । यहु नपुंसक शब्द की निरुक्ति करि वर्णन कीया । स्त्री पुरुष का अभिलाष-  
रूप तीव्र कामवेदना लक्षण धरै, भावनपुंसक है; असा तात्पर्य जानना ॥२७५॥

**तिणकारिसिट्ठपागगि-सरिस-परिणाम-वेयणुम्मुदका ।**

**अवगय-वेदा जीवा, सग-संभवणंत-वरसोक्खा<sup>२</sup> ॥२७६॥**

१. षट्खंडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४४ गाथा सं १७२

पाठभेद — उहय — उभय, इठ्ठावगि — इठ्ठावाग, वेदण — वेयण ।

२. षट्खंडागम — धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३४४, गाथा १७३ ।

पाठभेद — कारिस तण्णिट्ठ — वागगि ।

तृणकारीषेष्टपाकाग्निसदृशपरिणामवेदनोन्मुक्ताः ।

अपगतवेदा जीवाः, स्वकसंभवानंतवरसौख्याः ॥२७६॥

टीका — पुरुष वेदी का परिणाम, त्रिणाकी अग्नि समान है । स्त्री वेदी का परिणाम कारीष का अग्नि समान है । नपुंसक वेद का परिणाम पजावाकी अग्नि समान है । अैसे तीनों ही जाति के परिणामनि की जो पीडा, तीहि करि जे रहित भए हैं; अैसे भाववेद अपेक्षा अनिवृत्तिकरण का अपगत वेदभाग तै लगाय, अयोगी पर्यंत अर द्रव्य भाव वेद अपेक्षा गुणस्थानातीत सिद्ध भगवान जानने ।

कोऊ जावेगा जहा काम सेवन नाही; तहां सुख भी नाही ?

ताकौ कहैं है-कैसे है ते अवेदी ? अपने ज्ञान दर्शन लक्षण विराजमान आत्मतत्त्व तै उत्पन्न भया जो अनाकुल अतीन्द्रिय अनंत सर्वोत्कृष्ट सुख, ताके भोक्ता है । यद्यपि नवमा गुणस्थान के अवेद भाग ही तै वेद उदय तै उत्पन्न कामवेदनारूप सकलेश का अभाव है । तथापि मुख्यपने सिद्धनि ही कै आत्मीक सुख का सद्भाव दिखाइ वर्णन कीया । परमार्थ तै वेदनि का अभाव भए पीछे जानोपयोग की स्वस्थ-तारूप आत्म जनित आनन्द यथायोग्य सबनि कै पाइये है ।

आगे श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव वेद मार्गणा विषे जीवनि की सख्या पांच गाथानि करि कहै है —

जोइसियवाणजोणिणितिरिक्खपुरुसा य सण्णिणो जीवा ।

तत्तेउपम्मलेस्सा, संखगुणूणा कमेणेदे ॥२७७॥

ज्योतिष्कवानयोनितिर्यक्पुरुषाश्च संज्ञिनो जीवाः ।

तत्तेजः पद्मलेश्याः, संखगुणोनाः क्रमेणैते ॥२७७॥

टीका — पैसंठि हजार पांच सै छत्तीस प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो परिमाण आवै, तितने ज्योतिषी है । तातै संख्यात गुणे घाटि व्यतर है । संख्यात गुणे घाटि कहो वा संख्यातवा भाग कहो दोऊ एकार्थ है । बहुरि तातै संख्यात गुणे घाटि योनिमती तिर्यच है । तिर्यच गति विषे द्रव्य स्त्री इतनी है । बहुरि तातै संख्यात गुणे घाटि द्रव्य पुरुष वेदी तिर्यच है । बहुरि तातै संख्यात गुणे घाटि सैनी पचेद्री तिर्यच है । बहुरि तातै संख्यात गुणा घाटि पीत लेश्या का धारक सैनी पंचेद्री तिर्यच है ।

बहुरि तीह स्यों संख्यात गुणा घाटि पद्म-लेश्या का धारक सैनी पंचेद्री तिर्यच हैं ।  
अैसे ए सब संख्यात गुणा घाटि कह्या ।

**इगिपुरिसे बत्तीसं, देवी तज्जोगभजिददेवोघे ।**

**सगगुणगारेण गुणे, पुरुसा महिला य देवेषु ॥२७८॥**

एकपुरुषे द्वात्रिंशद्देव्यः तद्योगभक्तदेवौघे ।

स्वकगुणकारेण गुणे, पुरुषा महिलाश्च देवेषु ॥२७८॥

टीका — देवगति विषै एक पुरुष के बत्तीस देवागना होइ । कोई ही देव कै बत्तीस सौं घाटि देवांगना नाही । अर इंद्रादिकनि के देवागना तिनतौ संख्यात गुणी बहुत है । तथापि जिनके बहुत देवागना है, अैसे देव तौ थोरे है । अर बत्तीस देवांगना जिनके है; अैसे प्रकीर्णकादिक देव घने तिनतौ असंख्यात गुणे है । तातौ एक एक देव कै बत्तीस-बत्तीस देवांगना की विवक्षा करि अधिक की न करि कही । सो बत्तीस देवांगना अर एक देव मिलाएं तैतीस भए, सो पूर्वे जो देवनि का परिमाण कह्या था, ताकौ तैतीस का भाग दीए जो एक भाग का परिमाण आवै, ताकौ एक करि गुणौ तितना ही रह्या, सो इतने तौ देवगति विषै पुरुष जानने । अर याकौ बत्तीस गुणा कीएं जो परिमाण होइ, तितनी देवांगना जाननी ।

भावार्थ — देवराशि का तेतीस भाग मे एक भाग प्रमाण देव है, बत्तीस भाग प्रमाण देवागना है ।

**देवोहिं सादिरेया, पुरिसा देवीहिं साहिया इत्थी ।**

**तेहिं विहीण सवेदो, रासी संढाण परिमाणं ॥२७९॥**

देवैः सातिरेकाः, पुरुषाः देवीभिः साधिकाः स्त्रियः ।

तैर्विहीनः सवेदो, राशिः षण्डानां परिमाणम् ॥२७९॥

टीका — पुरुष वेदी देवनि का जो परिमाण कह्या, तीहि विषै पुरुष वेदी तिर्यच, मनुष्यनि का परिमाण मिलाएं, सर्व पुरुष वेदी जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि देवागना का जो परिमाण कह्या तीहि विषै तिर्यचणी वा मनुष्यणी का परिमाण मिलाएं सर्व स्त्रीवेदी जीवनि का परिमाण हो है । बहुरि नवमा गुणस्थान का वेद रहित भाग तौ लगाइ अयोग केवली पर्यंत जीवनि का संख्या रहित सर्व

संसारी जीवनि का परिमाण में स्यों पुरुष वेदी अर स्त्री वेदी जीवनि का परिमाण घटाएं जो अवशेष प्रमाण रहै; तितने नपुंसकवेदी जीव जानने ।

**गर्भज पुद्गलसंज्ञा, सम्मूर्च्छणसंज्ञापुण्यगुण इदरा ।**

**कुरुजा असंज्ञागर्भजपुद्गलवाणजोइसिया ॥२८०॥**

**थोवा तिसु संखगुणा, ततो आवलिअसंखभागगुणा ।**

**पल्यासंखेज्जगुणा, ततो सब्बत्थ संखगुणा ॥२८१॥**

**गर्भनपुंस्त्रीसंज्ञिनः, सम्मूर्च्छनसंज्ञिपूर्णका इतरे ।**

**कुरुजा असंज्ञिगर्भजनपुंस्त्रीवानज्योतिष्काः ॥२८०॥**

**स्तोकाः त्रिषु संख्यगुणाः, तत आवल्यसंख्यभागगुणाः ।**

**पल्यासंख्येयगुणाः, ततः सर्वत्र संख्यगुणाः ॥२८१॥**

टीका - सैनी पंचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी, बहुरि सैनी पंचेद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि सैनी पंचेद्री गर्भज स्त्री वेदी, बहुरि सम्मूर्च्छन सैनी पंचेद्रीय पर्याप्त नपुंसक वेदी, बहुरि सम्मूर्च्छन सैनी पंचेद्री अपर्याप्त नपुंसक वेदी, बहुरि भोग-भूमिया गर्भज सैनी पंचेद्री पर्याप्त पुरुष वेदी वा स्त्री वेदी, बहुरि असैनी पंचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी, बहुरि असैनी पंचेद्री गर्भज पुरुष वेदी, बहुरि असैनी पंचेद्री गर्भज स्त्री वेदी, बहुरि व्यतरदेव, अर ज्योतिषदेव-ए ग्यारा जीवराशि अनुक्रम तै ऊपरि-ऊपरि लिखनी ।

पूर्वें जो ग्यारा राशि कहे, तिनि विषै नीचली राशि सैनी पंचेद्री गर्भज नपुंसक वेदी सो सर्व तै स्तोक है । आठ बार संख्यात अर आवली का असंख्यातवां भाग अर पल्य का असंख्यातवा भाग अर पैंसठि हजार पांच सै-छत्तीस प्रतरागुल, इनिका भाग जगत्प्रतर कौ दीएं, जो परिमाण आवै, तितने जानने ।

बहुरि याके ऊपरि सैनी पंचेद्री गर्भज पुरुष वेदी स्यों लगाइ, तीन राशि अनुक्रम तै संख्यात गुणा जानना ।

बहुरि चौथी राशि तै पंचम राशि सम्मूर्च्छन सैनी पंचेद्री अपर्याप्त नपुंसक वेदी आवली का असंख्यातवा भाग गुणा जानना ।

बहुरि इस पंचम राशि तै षष्ठराशि पल्य का असख्यातवां भाग गुणा जानना ।

बहुरि यातै असैनी पंचेंद्री गर्भज नपुंसक वेदी स्यों लगाइ, ज्योतिषी पर्यंत सप्तम, अष्टम, नवम, दशम, एकादशम राशि अनुक्रम तै संख्यात गुणा जानना । असै वेद मार्गणा विषै जीवनि की संख्या कही ।

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसारद्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नामा भाषा टीका के विषै जीवकांड विषै प्ररूपित जे बीसप्ररूपणा तिनि विषै वेदमार्गणा प्ररूपणा नामा दशमा अधिकार समाप्त भया ।



## उयाहरवां अधिकार : कषाय-मार्गणा-प्ररूपणा

॥ मंगलाचरण ॥

पावन जाकौ श्रेयमग, मत जाकौ श्रियकार ।

आश्रय श्री श्रेयांस कौ, करहु श्रेय मम सार ॥

आगे शास्त्रकर्ता आचार्य चौदह गाथानि करि कषाय मार्गणा का निरूपण करे है -

सुहृदुखसुबहुसस्यं, कम्मक्खेत्तं कसेदि जीवस्स ।

संसारदूरमेरं, तेण कसाओ त्ति णं बेत्ति ॥२८२॥

सुखदुःखसुबहुसस्यं, कर्मक्षेत्रं कृषति जीवस्य ।

संसारदूरमर्यादं, तेन कषाय इतीमं ब्रुवंति ॥२८२॥

टीका - जा कारण करि संसारो जीव कै कर्म जो है ज्ञानावरणादिक मूल, उत्तर-उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप शुभ-अशुभ कर्म, सोई भया क्षेत्र कहिए, अन्न उपजने का आधार भूत स्थान, ताहि कृषति कहिए हलादिक ते जैसे खेत कौ सवारिए, तैसे जो सवारे है, फल निपजावने योग्य करे है, तीहि कारण करि क्रोधादि जीव के परिणाम कषाय हैं, असा श्रीवर्धमान भट्टारक के गौतम गणधरादिक कहै है । ताते महाधवल<sup>१</sup> द्वितीय नाम कषायप्राभृत आदि विषे गणधर सूत्र के अनुसारि जैसे कषायनि का स्वरूप, संख्या, शक्ति, अवस्था, फल आदि कहे है । तैसे ही मैं कहोंगा । अपनी रुचिपूर्वक रचना न करौगा । असा आचार्य का अभिप्राय जानना ।

कैसा है कर्मक्षेत्र ? इंद्रियनि का विषय संबंध ते उत्पन्न भया हर्ष परिणाम-रूप नानाप्रकार सुख अर शारीरिक, मानसिक पीडा रूप नाना प्रकार दुख सोई बहुसस्य कहिए बहुत प्रकार अन्न, सो जीहि विषे उपज्या है असा है ।

वहुरि कैसा है कर्मक्षेत्र ? अनादि अनंत पंच परावर्तन रूप संसार है, मर्यादा सीमा जाकी असा है ।

१ पट्वडागम - धवला पुस्तक १, पृ १४३, गा स. ६०.

१ यह जयधवल द्वितीय नाम कषायप्राभृत है ।

भावार्थ — जैसे किसी का किंकर पालती सो खेत विषे बोया हुआ बीज, जैसे बहुत फल कौं प्राप्त होइ वा बहुत सीव पर्यंत होइ, तैसे हलादिक ते धरती का फाडना इत्यादिक कृषिकर्म कौ करै है ।

तैसें संसारी जीव का किंकर क्रोधादि कषाय नामा पालती, सो प्रकृति, प्रदेश, स्थिति, अनुभाग रूप कर्म का बंध, सो ही भया खेत, तीहि विषे मिथ्यात्वादिक परिणाम रूप बीज, जैसें कालादिक की सामग्री पाइ, अनेक प्रकार सुख-दुःख रूप बहुत फल कौ प्राप्त होइ वा अनंत संसार पर्यंत फल कौ प्राप्त होइ । तैसे कार्य कौ करै, ताते इन क्रोधादिकनि का कषाय असा नाम कह्या, 'कृषि विलेखने' इस धातु का अर्थ करि कषाय शब्द का निरुक्तिपूर्वक निरूपण आचार्य करि कीया है ।

**सम्मत्तदेससयलचरित्तजहक्खाद-चरणपरिणामे ।**

**घादंति वा कषाया, चउसोलअसंखलोगमिदा ॥२८३॥**

**सम्यक्त्वदेशसकलचरित्रयथाख्यातचरणपरिणामान् ।**

**घातयन्ति वा कषायाः, चतुः षोडशासंख्यलोकमिताः ॥२८३॥**

टीका — अथवा 'कषन्तीति कषायाः' जे हतै, घात करै, तिनिकौ कषाय कहिए । सो ए क्रोधादिक है, ते सम्यक्त्व वा देश चारित्र वा यथाख्यात चारित्र रूप आत्मा के विशुद्ध परिणामनि कौं घातै है । ताते इनिका कषाय असा नाम है । यहु कषाय शब्द का दूसरा अर्थ अपेक्षा लक्षण कह्या ।

तहां अनंतानुबन्धी क्रोधादिक है, तो तत्त्वार्थ श्रद्धानरूप सम्यक्त्व कौ घातै है, जाते अनंत संसार का कारण मिथ्यात्व वा अनंत संसार अवस्थारूप काल, ताहि अनुबन्धन्ति कहिए सबधरूप करै; तिनिकौ अनंतानुबन्धी कहिए ।

बहुरि अप्रत्याख्यानावरण क्रोधादिक कहे, ते अणुव्रतरूप देश चारित्र कौ घातै है, जाते अप्रत्याख्यान कहिए ईषत् प्रत्याख्यान किंचित् त्यागरूप अणुव्रत, ताकौ आवृण्वन्ति कहिए आवरै, नष्ट करै; ताकौ अप्रत्याख्यानावरण कहिए ।

बहुरि प्रत्याख्यानावरण क्रोधादिक है, ते महाव्रतरूप सकल चारित्र कौ घातै है; जाते प्रत्याख्यान कहिए सकल त्यागरूप महाव्रत, ताकौ आवृण्वन्ति कहिए आवरै, नष्ट करै, ताकौ प्रत्याख्यानावरण कहिए ।

बहुरि सज्वलन क्रोधादिक है, ते सकल कषाय का अभावरूप यथाख्यात चारित्र कौ घातै है; जातै 'सं' कहिए समीचीन, निर्मल यथाख्यात चारित्र, ताकौ 'ज्वलन्ति' कहिए दहन करै, तिनकौ संज्वलन कहिए । इस निरुक्ति तै संज्वलन का उदय-होते-सतै भी सामायिकादि अन्य चारित्र होने-का अविरोध सिद्ध हो है ।

ऐसा यह कषाय सामान्यपनै एक प्रकार है । विशेषपनै अनंतानुबंधी; अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, सज्वलन भेद तै चारि प्रकार हैं । बहुरि इनके एक-एक के क्रोध, मान, माया, लोभ करि चारि-चारि भेद कीजिए तब सोलह प्रकार हो है । अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ; संज्वलन क्रोध, मान, माया, लोभ ऐसे सोलह भेद भए ।

बहुरि उदय स्थानको के विशेष की अपेक्षा असंख्यात लोक प्रमाण है, जातै कपायनि का कारणभूत जो चारित्रमोह, ताकि प्रकृति के भेद असंख्यात लोक प्रमाण है ।

**सिल-पुढवि-भेद-धूली-जल-राइ-समाणओ हवे कोहो ।**

**गारय-तिरिय-गरामर-गईसु उप्पायओ कमसो १ ॥२८४॥**

शिलापृथ्वीभेदधूलिजलराशिसमानको भवेत् क्रोधः ।

नारकतिर्यग्नरामरगतिषूत्पादकः क्रमशः ॥२८४॥

टोका—शिला भेद, पृथ्वी भेद, धूलि रेखा, जल रेखा समान क्रोध कषाय सो अनुक्रम तै नारक, तिर्यच, मनुष्य, देव गति विषै जीव कौ उपजावन हारा है । सोई कहिए है—

जैसे शिला, जो पाषाण का भेद खंड होना, सो बहुत घने-काल गए बिना मिलै नाही; तैसे बहुत घने काल गए बिना क्षमारूप मिलन कौ न-प्राप्त होइ, ऐसा जो उत्कृष्ट शक्ति लीए क्रोध, सो जीव कौ नरक गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसे पृथ्वी का भेद-खंड होना, सो घने काल गए बिना मिलै नाही, तैसे घने काल गए बिना, जो क्षमारूप मिलने कौ न प्राप्त होइ, ऐसा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीए क्रोध, सो जीव कौ तिर्यच गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै धूलि विषै करी हुइ लीक, सो थोरा काल गए बिना मिलै नाहीं, तैसै थोरा काल गए बिना जो क्षमारूप मिलन कौ प्राप्त न होइ, अैसा अजघन्य शक्ति लिएं क्रोध, सो जीव कौ मनुष्य गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै जल विषै करी हुई लीक, बहुत-थोरा काल गए बिना मिलै नाहीं, तैसै बहुत थोरा काल गए बिना जो क्षमारूप मिलन को प्राप्त न होइ; अैसा जो जघन्य शक्ति लिए क्रोध, सो जीव कौ देव गति विषै उपजावै है । तिस-तिस उत्कृष्टादि शक्ति युक्त क्रोधरूप परिणाम्या जीव, सो तिस-तिस नरक आदि गति विषै उपजने कौ कारण आयु-गति आनुपूर्वी आदि प्रकृतिनि कौ बांधै है; अैसा अर्थ जानना ।

इहां राजि शब्द रेखा वाचक जानना; पंक्ति वाचक न जानना । बहुरि इहां शिला भेद आदि उपमान अर उत्कृष्ट शक्ति आदि क्रोधादिक उपमेय, ताका समान-पना अतिघना कालादि गए बिना मिलना न होने की अपेक्षा जानना ।

**सेलटिठ्-कटठ्-वेत्ते, गियभेएणहुहरंतओ माणो ।**

**णारय-तिरिय-णरामर-गईसु उप्पायओ कमसो? ॥२८५॥**

शैलास्थिकाष्ठवेत्रान् निजभेदेनानुहरन् मानः ।

नारकतिर्यग्नरामरगतिषूत्पादकः क्रमशः ॥२८५॥

टीका — शैल, अस्थि, काष्ठ, बेंत समान जो अपने भेदनि करि उपमीयमान च्यारि प्रकार मान कषाय, सो क्रम तै नारक, तिर्यच, मनुष्य, देव गति विषै जीव कौ उपजावै है । सो कहिए है —

जैसै शैल जो पाषाण सो बहुत घने काल बिना नमावने योग्य न होइ; तैसै बहुत घने काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ, अैसा जो उत्कृष्ट शक्ति लिएं मान, सो जीवनि कौ नरक गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै अस्थि जो हाड, सो घने काल बिना नमावने योग्य न होइ; तैसै घने काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ । अैसा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लिएं मान, सो जीव कौ तिर्यच गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसे काठ थोरा काल बिना नमावने योग्य न होइ, तैसे थोरा काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ । असा जो अजघन्य शक्ति लीएं मान, सो जीव कौ मनुष्य गति विषे उप जावै है ।

बहुरि जैसे बैत की लकड़ी बहुत थोरे काल बिना नमावने योग्य न होइ, तैसे बहुत थोरा काल बिना जो विनयरूप नमन कौ प्राप्त न होइ । असा जो जघन्य शक्ति लीएं मान, सो जीव कौ देव गति विषे उपजावै है । इहां भी पूर्वोक्त प्रकार प्रकृति बंध होना वा उपमा, उपमेय का समानपना जानना ।

**वेणूवमूलोरब्ध-सिंगे गोमुत्तए य खोरण्ये ।**

**सरिसी माया णारय-तिरिय-णारामर-गईसु खिवदि जियं<sup>१</sup> ॥२८६॥**

वेणूपमूलोरभ्रकशृंगेण गोमूत्रेण च क्षुरप्रेण ।

सदृशी माया नारकतिर्यग्नरामरगतिषु क्षिपति जीवम् ॥२८६॥

**टीका** — वेणूयमूल, उरभ्रकशृंग, गोमूत्र, क्षुर समान माया ठिगनेरूप परिणति, सो क्रम तै नारक, तिर्यंच, मनुष्य, देव गति विषे जीव कौ उपजावै है । सोई कहिए हैं —

जैसे वेणूयमूल, जो बांस की जड़ की गांठ सो बहुत घने काल बिना सरल न होइ, तैसे बहुत घने काल बिना जो सरल न होइ, असा जो उत्कृष्ट शक्ति कौ लीएं माया, सो जीव कौ नरक गति विषे उपजावै है ।

बहुरि जैसे उरभ्रकशृंग, जो मीढे का सींग, सो घने काल बिना सरल न होइ, तैसे घने काल बिना जो सरल न होइ, असा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीएं माया, सो जीव कौ तिर्यंच गति विषे उपजावै है ।

बहुरि जैसे गोमूत्र, जो गायमूत्र की धारा, सो थोरा काल बिना सरल न होइ, तैसे थोरा काल बिना सरल न होइ, असी अजघन्य शक्ति लीएं माया, सो जीव कौ मनुष्य गति विषे उपजावै है ।

बहुरि जैसे खुर, जो पृथ्वी ऊपरि वृषभादिक का खोज, सो बहुत थोरा काल बिना सरल न होइ, तैसे बहुत थोरा काल बिना जो सरल न होइ, असी जो जघन्य शक्ति लीएं माया, सो जीव कौ देव गति विषे उपजावै है । इहां भी पूर्वोक्त प्रकार प्रकृति बन्ध होना वा उपमा उपमेय का समानपना जानना ।

किमिराय-चक्क-तणु-मल-हरिद्-राएण सरिसओ लोहो ।  
णारय-तिरिक्ख-माणुस-देवेसुप्पायओ कमसो? ॥२८७॥

किमिरागचक्रतनुमलहरिद्रारागेण सदृशो लोभः ।

नारकतिर्यग्मानुषदेवेषु उत्पादकः क्रमशः ॥२८७॥

टीका — किमिराग, चक्रमल, तनुमल, हरिद्राराग समान जो लोभ विषया-  
भिलाषरूप परिणाम, सो क्रम तै नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव गति विषै उपजावै है ।  
सोई कहिए है —

जैसै किमिराग कहिए किरमिची रंग, सो बहुत घने काल गये बिना नष्ट न  
होइ, तैसै जो बहुत घने काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो उत्कृष्ट शक्ति लीए लोभ,  
सो जीव कौ नरक गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै चक्रमल जो पहिये का मैल, सो घने काल बिना नष्ट न होइ, तैसै  
घने काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो अनुत्कृष्ट शक्ति लीए लोभ, सो जीवकौ तिर्यच  
गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै तनुमल, जो शरीर का मैल, सो थोरा काल बिना नष्ट न होइ,  
तैसै थोरा काल बिना नष्ट न होइ अैसा जो अजघन्य शक्ति लीए लोभ, सो जीव कौ  
मनु य गति विषै उपजावै है ।

बहुरि जैसै हरिद्राराग कहिए हलद का रंग सो बहुत थोरा काल बिना नष्ट  
न होइ, तैसै बहुत थोरे काल बिना नष्ट न होइ, अैसा जो जघन्य शक्ति लीए लोभ,  
सो जीव कौ देव गति विषै उपजावै है । अैसै जिन-जिन कषायनि तै जो-जो गति का  
उपजना कह्या, तिन-तिन कषायनि तै तिस ही तिस गति सबंधी आयु वा आनुपूर्वी  
इत्यादिक का बंध जानना ।

णारय-तिरिक्ख-णार-सुर-गईसु उप्पण्णपढमकालम्हि ।  
कोहो माया माणो, लोहुदओ अनियमो वाऽपि ॥२८८॥

नारकतिर्यग्नरसुरगतिषूत्पन्नप्रथमकाले ।

क्रोधो माया मानो, लोभोदयः अनियमो वाऽपि ॥२८८॥

टीका — नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव विषे उत्पन्न भया, जीव कै पहिला समय विपे क्रम तै क्रोध, मान, माया लोभ का उदय हो है । नारकी उपजै तहा उपजते ही पहले समय क्रोध कषाय का उदय होइ । अैसे तिर्यच कै माया का, मनुष्य कै मान का, देव कै लोभ का उदय जानना । सो अैसा नियम कषायप्राभृत दूसरा सिद्धांत का कर्त्ता यतिवृषभ नामा आचार्य, ताके अभिप्राय करि जानना ।

बहुरि महाकर्म प्रकृति प्राभृत प्रथम सिद्धांत का कर्त्ता भूतबलि नामा आचार्य, ताके अभिप्राय करि पूर्वोक्त नियम नाही । जिस तिस कोई एक कषाय का उदय हो है । अैसे दोऊ आचार्यनि का अभिप्राय विषे हमारे सदेह है; सो इस भरत क्षेत्र विषे केवली श्रुतकेवली नाही; वा समीपवर्ती आचार्यनि कै उन आचार्यनि तै अधिक ज्ञान का धारक नाही; तातै जो विदेह विषे गये तीर्थकरादिक के निकटि शास्त्रार्थ विषे सजय, विपर्यय, अनध्यवसाय का दूर होने करि निर्णय होइ, तब एक अर्थ का निश्चय होइ तातै हमौने दोऊ कथन कीए है ।

**अप्पपरोभय-बाधण बंधासंजम-णिमित्त-कोहादी ।**

**जेसि णत्थि कसाया, अमला अकसाइणो जीवा<sup>१</sup> ॥२८६॥**

**आत्मपरोभयबाधनबंधासंयमनिमित्तक्रोधादयः ।**

**येषां न संति कषाया, अमला अकषायिणो जीवाः ॥२८९॥**

टीका — आपकौ व परकौ वा दोऊ कौ बधन के वा बाधा के वा असंयम के कारणभूत अैसे जु क्रोधादिक कषाय वा पुरुष वेदादिरूप नोकषाय, ते जिनके न पाइये, ते द्रव्यकर्म, भावकर्म, नोकर्म मल करि रहित सिद्ध भगवान अकषायी जानने । उपशात कषाय से लेकर च्यारि गुणस्थानवर्ती जीव भी अकषाय निर्मल है । तिनके गुणस्थान प्ररूपणा ही करि अकषायपना की सिद्धि जाननी । तहा कोऊ जीव कै तौ क्रोधादि कषाय अैसे हो है, जिनतै आप तै आप को बाधै, आप ही आप के मस्तकादिक का घात करै । आप ही आप के हिसादि रूप असंयम परिणाम करै । बहुरि कोई जीव कै क्रोधादि कषाय अैसे हो है, जिनतै और जीवनि कौ बाधै, मारै, उनके असंयम परिणाम करावै । बहुरि कोई जीव कै क्रोधादि कषाय अैसे हो है, जिनतै आप का वा और जीवनि का बांधना, घात करना, असंयम होना होइ, सो अैसे ए कषाय अनर्थ के मूल है ।

क्रोहादिकसायाणं, चउचउदसवीस होंति पदसंख्या ।  
सत्तिलेस्साआउगबंधाबंधगदभेदेहि ॥२६०॥

क्रोधादिकषायाणां, चत्वारः चतुर्दश विंशतिः भवन्ति पदसंख्याः ।  
शक्तिलेश्यायुष्कबंधाबंधगतभेदैः ॥२९०॥

टीका — क्रोध-मान-माया-लोभ कषाय, तिनकी शक्ति स्थान के भेद करि च्यारि संख्या है । लेश्या स्थान के भेद करि चौदह संख्या है । आयुर्बल के बंधने के अबंधने के स्थान भेद करि बीस संख्या है ।

तै स्थान आगे कहिए है —

सिल-सेल-वेणुमूल-क्विमिरायादी कमेण चत्वारि ।  
क्रोहादिकसायाणं, सत्ति पडि होंति णियमेण ॥२६१॥

शिलाशैलवेणुमूलक्विमिरागादीनि क्रमेण चत्वारि ।  
क्रोधादिकषायाणां, शक्ति प्रति भवन्ति नियमेन ॥२९१॥

टीका — क्रोधादिक जे कषाय, तिनिकें शक्ति कहिए अपना फल देने की सामर्थ्य, ताकी अपेक्षा तै निश्चय करि च्यारि स्थान है । ते अनुक्रम तैं तीव्रतर, तीव्र, मंद, मंदतर, अनुभागरूप वा उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य अनुभाग रूप जानने । तहां शिलाभेद, शैल, वेणुमूल, क्विमिराग ए तौ उत्कृष्ट शक्ति के उदाहरण जानने । आदि शब्द तैं पूर्वोक्त अनुत्कृष्टादि शक्ति के उदाहरण दृष्टातमात्र कहे हैं, ते सर्व जानने । ए दृष्टात प्रगट व्यवहार का अवधारण करि है । अर परमागम का व्यवहारी आचार्यनि करि मंदबुद्धी शिष्य समझावने के अर्थ व्यवहार रूप कीए है । जातै दृष्टात के बल करि ही मंदबुद्धी समझै है । तातै दृष्टांत की मुख्यता करि जे दृष्टांत के नाम, तेई शक्तिनि के नाम प्रसिद्ध कीएं हैं ।

किण्हं सिलासमाणे, किण्हादी छक्कमेण भूसिंह ।  
छक्कादी सुक्को त्ति य, धूलिम्मि जलम्मि सुक्केक्का ॥२६२॥

कृष्णा शिलासमाने, कृष्णादयः षट् क्रमेण भूमी ।  
षट्कादिः शुक्तेति च धूलौ जले शुक्लका ॥२९२॥



टीका — शिला भेद समान जो क्रोध का उत्कृष्ट शक्ति स्थान, तीहि विषै एक कृष्ण लेश्या ही है । यद्यपि इस उत्कृष्ट शक्ति स्थान विषै षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीए असंख्यातलोक प्रमाण कषायनि के उदय स्थान है । बहुरि तथापि ते सर्व-स्थान कृष्णलेश्या ही के है, कृष्णलेश्या ही के उत्कृष्ट, मध्यम, भेदरूप जानने ।

षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि का स्वरूप अँसा जानना — जेते कषायनि के अविभाग प्रतिच्छेद पहिलै थे, तिनसौ घाटि होने लगे ते अनंत भागहानि, असंख्यात भागहानि, संख्यात भागहानि, संख्यात गुणहानि, असंख्यात गुणहानि, अनंत गुणहानि रूप घटे । अँसै तीव्र कषाय घटने का नाम षट्स्थान पतित संक्लेश हानि कहिए । कषायनि के अविभाग प्रतिच्छेद अनंत है । तिनकी अपेक्षा षट्स्थान पतित हानि संभवै है । अरु स्थान भेद असंख्यात लोक प्रमाण ही है । नियम शब्द करि, ताका अतः स्थान विषै उत्कृष्ट शक्ति की व्युच्छित्ति हो है । बहुरि भूमि भेद समान क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्ति स्थान, तीहि विषै अनुक्रम तँ छहों लेश्या पाइए है । सो कहिए है — भूमि भेद समान क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्तिस्थान का पहिला उदय स्थान तँ लगाइ, षट्स्थान पतित संक्लेशहानि लीएँ, असंख्यात लोक प्रमाण उदय स्थानकनि विषै तौ केवल कृष्णलेश्या ही है । कृष्ण लेश्या ही का मध्य भेद पाइए है; जातै अन्य लेश्या का लक्षण तहा नाही ।

बहुरि इहां तँ आगे षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि को लीए असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, उत्कृष्ट नील लेश्या पाइए है । जातै इहां तिनि दोऊ लेश्यानि का लक्षण संभवै है । बहुरि इनि तँ आगे षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीए असंख्यात लोक प्रमाण उदय स्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, मध्यम नील लेश्या, उत्कृष्ट कपोत लेश्या पाइए है, जातै इहा तिनि तीनो लेश्यानि के लक्षण संभवै है । बहुरि इनि तँ आगे षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीए असंख्यात लोक प्रमाण उदयस्थानकनि विषै मध्यम कृष्णलेश्या, मध्यम नील लेश्या, मध्यम कपोत [लेश्या, मध्यम पीत लेश्या अरु जघन्य पद्म लेश्या, जघन्य पीत लेश्या पाइए है;] \* जातै इहां तिनि चार्यो [पांचौ] लेश्यानि के लक्षण संभवै है । बहुरि इनतँ षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीए असंख्यात लोक प्रमाण उदयस्थानकनि विषै मध्यम कृष्ण, नील, कपोत, पीत लेश्या अरु जघन्य पद्म लेश्या पाइए है, जातै इहां तिनि पंच लेश्यानि का लक्षण संभवै है । बहुरि इनि तँ षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीएँ

\* 'य' प्रति में इतना और दिया गया है ।

असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे मध्यम कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म लेश्या अर जघन्य शुक्ल लेश्या पाइए है । जातै इहां तिनि छहौ लेश्यानि का लक्षण संभवै है । जैसे क्रोध का अनुत्कृष्ट शक्तिस्थान का जे स्थान भेद, तिनि विषे क्रम तै छहौ लेश्या के स्थानक जानने । इहा अतस्थान विषे उत्कृष्टशक्ति की व्युच्छित्ति हुई । बहुरि धूली रेखा समान क्रोध का अजघन्य शक्तिस्थान, ताके स्थानकनि विषे छह लेश्या तै एक एक घाटि शुक्ल लेश्या पर्यंत लेश्या पाइए है । सोई कहिए है — धूली रेखा समान क्रोध का प्रथम स्थान तै लगाइ, षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि को लीए असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे जघन्य कृष्ण लेश्या, मध्यम नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है; जातै इहां छहों लेश्यानि के लक्षण संभवै है । इहा अतस्थान विषे कृष्णलेश्या का विच्छेद हुवा । बहुरि इहा तै आगे इस ही शक्ति का षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीएं असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे जघन्य नील लेश्या, मध्यम कपोत, पीत, पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है । जातै इहां तिनि पंच लेश्यानि का लक्षण संभवै है । इहां अतस्थानकनि विषे नील लेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहां तै आगे षट्स्थान पतित संक्लेश-हानि लीएं असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे जघन्य कपोत लेश्या मध्यम पीत, पद्म, शुक्ल, लेश्या पाइए है; जातै इहा तिनि च्यारि लेश्यानि के लक्षण संभवै है । इहा अंतस्थान विषे कपोत लेश्या का विच्छेद हुवा । जैसे संक्लेश परिणामनि की हानि होते सते जो मदकषायरूप परिणाम भया, ताकौ विशुद्ध परिणाम कहिए । ताके अनते अविभाग प्रतिच्छेद है, सो तिनकी अनंत भागवृद्धि, असंख्यात भागवृद्धि, संख्यात भागवृद्धि, संख्यात गुणवृद्धि, असंख्यात गुणवृद्धि, अनंतगुण वृद्धिरूप जो वृद्धि, सो षट्स्थान पतित विशुद्धवृद्धि कहिए, सो उस च्यारि लेश्या का स्थान तै आगे षट्स्थान पतित विशुद्धवृद्धि लीए असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे उत्कृष्ट पीत लेश्या, मध्यम पद्म, शुक्ल लेश्या पाइए है; जातै इहां तीन तिनि लेश्यानि ही का लक्षण संभवै है । इहां अंतस्थानकनि विषे पीतलेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहा तै षट्स्थान पतित विशुद्ध वृद्धि लीएं असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे उत्कृष्ट पद्मलेश्या, मध्यम शुक्ललेश्या ही पाइए है । जातै इहा तिनि दोय ही लेश्यानि के लक्षण संभवै है । इहा अंतस्थान विषे पद्मलेश्या का विच्छेद हुवा ।

बहुरि इहा ते षट्स्थान पतित विशुद्धि वृद्धि लीएं असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे मध्यम शुक्ललेश्या ही पाइए है; जातै इहा तिस ही लेश्या के लक्षण पाइए है । असै धूली रेखा समान क्रोध का अजघन्य शक्तिस्थान के जे उदयरूप स्थानक, तिनि विषे लेश्या कही । इहां अंतस्थान विषे अजघन्य शक्ति की व्युच्छित्ति भई । बहुरि इहां ते आगे जल रेखा समान क्रोध का जघन्य शक्तिस्थान, ताके षट्स्थान पतित विशुद्धि वृद्धि लीएं असंख्यात लोक प्रमाण स्थानकनि विषे मध्यम शुक्ललेश्या पाइए है । बहुरि याही के अंतस्थान विषे उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या पाइए है; असै चारि प्रकार शक्तियुक्त क्रोध विषे लेश्या अपेक्षा चौदह स्थानक कहे । उत्कृष्ट शक्ति स्थान विषे एक, अनुत्कृष्ट शक्तिस्थानकनि विषे छह, अजघन्य शक्तिस्थानक विषे छह, जघन्य शक्तिस्थानक विषे एक असै चौदह कहे ।

इहा किसी कै भ्रम होइगा कि ए चारि शक्तिस्थानक कहे, इन ही का अनंतानुबंधी आदि नाम है ?

सो नाही, जो तैसें कहिए तौ षष्ठगुणस्थान विषे संज्वलन ही है; तहां एक शुक्ललेश्या ही संभवै; जातै इहां जघन्य शक्तिस्थान विषे एक शुक्ल लेश्या ही कही है; सो षष्ठ गुणस्थान विषे तौ लेश्या तीन है । तातै अनंतानुबंधी इत्यादि भेद सम्यक्त्वादि घातने की अपेक्षा है, ते अन्य जानने । बहुरि ये शक्तिस्थान के भेद तीव्र, मद अपेक्षा है, ते अन्य जानने । सो जैसे ए क्रोध के चौदह स्थान लेश्या अपेक्षा कहे, तैसे ही उत्कृष्टादिक शक्तिस्थानकनि विषे मान के वा माया के वा लोभ के भी जानने ।

सेलगकिण्हे सुण्णं, गिरयं च य भूगएगबिट्ठाणे ।

गिरयं इगिबित्तिआऊ, तिट्ठाणे चारि सेसपदे ॥२६३॥

शैलगकृष्णे शून्यं, निरयं च च भूगैकद्विस्थाने ।

निरयमेकद्वित्र्यायुस्त्रिस्थाने चत्वारि शेषपदे ॥२९३॥

टीका - शिला भेद समान उत्कृष्ट क्रोध का शक्तिस्थान विषे असंख्यात-लोक प्रमाण उदयस्थान कहे; तिनि विषे केई स्थान असै है जिनिविषे कोऊ आयु वंधै नाही । सो यंत्र विषे तहा शून्य लिखना । जातै जहां अति तीव्र कषाय होइ, तहा आयु का वध होइ नाही । बहुरि तहां ही ऊपरि के कई स्थान थोरे कषाय

लीएं है । तिनिविषै एक नरकायु ही बंधै है, सो इहां एक का अंक लिखना । बहुरि ताते अनंतगुण घटता सल्लेश लीए पृथ्वी भेद समान कषाय विषै के जे कृष्णलेश्या के स्थान है वा कृष्ण वा नील दोय लेश्या के जे स्थान हैं, तिनिविषै एक नरक आयु ही बंधै है । सो तिनि दोय स्थाननि विषै एक-एक का अंक लिखना । बहुरि तिस ही विषै केइ अगले स्थान कृष्ण, नील, कपोत तीन लेश्या के है, सो तिनिविषै केई स्थाननि विषै तौ एक नरकायु ही का बंध हो है । बहुरि केई अगले स्थाननि विषै नरक वा तिर्यच दोय आयु बंधै है । बहुरि केई अगले स्थाननि विषै नरक, तिर्यच मनुष्य तीन आयु बंधै है । सो तीन लेश्या के स्थान विषै एक, दोय, तीन का अंक लिखना । बहुरि तिस ही पृथ्वी के भेद समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्ण नील, कपोत, पीत इनि च्यारि लेश्या के स्थान है । केइक कृष्णादि पद्म लेश्या पर्यंत पच के स्थान है । केइक कृष्णादिक शुक्ल लेश्या पर्यंत षटलेश्या के स्थान है । सो इन तीन ही जायगा नरक, तिर्यच, मनुष्य, देव संबंधी च्यार्यो ही आयु बंधै है, सो तीनों जायगा च्यारि-च्यारि का अंक लिखना ।

**धूलिगच्छकट्ठाणे, चउराऊतिगदुगं च उवरिल्लं ।  
पराचदुठाणे देवं, देवं सुण्णं च तिदुठाणे ॥२६४॥**

धूलिगच्छकस्थाने, चतुरायूषि त्रिकद्विकं चोपरितनम् ।  
पंचचतुर्थस्थाने देवं देवं शून्यं च तृतीयस्थाने ॥२९४॥

टीका - बहुरि पूर्वोक्त स्थान ते अनंतानंतगुणा घाटि संक्लेश लीए धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्णादि शुक्ललेश्या पर्यंत षटलेश्या के स्थान है । तिनि विषै केई स्थाननि विषै तौ नरकादिक च्यार्यो आयु बंधे है । केई अगले स्थाननि विषै नरकायु बिना तीन आयु ही बंधे है । केई अगले स्थाननि विषै मनुष्य, देव दोय ही आयु बंधे है । सो तहां च्यारि, तीन, दोय के अंक लिखने । बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई कृष्ण लेश्या बिना पच लेश्या के स्थान है । केई कृष्ण नील बिना च्यारि लेश्या के स्थान है । इनि दोऊ जायगा एक देवायु ही बंधे है । सो दोऊ जायगा एक-एक का अंक लिखना । बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषै केई पीतादि तीन शुभलेश्या संबंधी स्थान है । तिनिविषै केई स्थाननि विषै तौ एक देवायु ही बंधे है, तहा एक का अंक लिखना । बहुरि केई

अगले स्थान तीव्र विशुद्धता को लीए है, तहा किसी ही आयु का बंध न हो है, सो तहां शून्य लिखना ।

**सुण्णं दुग्गिठाणे, जलम्हि सुण्णं असंखभजिदकमा ।**

**चउ-चोदस-वीसपदा, असंखलोगा हु पत्तेयं ॥२६५॥**

शून्यं द्विकैकस्थाने, जले शून्यमसंख्यभजितक्रमाः ।

चतुश्चतुर्दशविंशतिपदा असंख्यलोका हि प्रत्येकम् ॥२९५॥

टीका — बहुरि तिस ही धूलि रेखा समान शक्तिस्थान विषे केई स्थान पद्म, शुक्ल दोय लेश्या सबधी है । केई स्थान एक शुक्ल लेश्या संबंधी है । सो इनि दोऊ ही जायगा किसी ही आयु का बंध नाही; सो दोऊ जायगा शून्य लिखना । बहुरि तातै अनंतगुणी बधती विशुद्धता लीएं जल रेखा समान शक्तिस्थान के सर्व स्थान केवल शुक्ल लेश्या संबंधी है । तिनि विषे किसी ही आयु का बंध नाही हो है । सो तहां शून्य लिखना । जातै अति तीव्र विशुद्धता आयु के बंध का कारण नाही हैं; अैसे कषायनि के शक्तिस्थान च्यारि कहे । अर लेश्या स्थान चौदह कहे । अर आयु के बधने के वा न बंधने के स्थान बीस कहे । ते सर्व ही स्थान असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण, असख्यात लोक प्रमाण जानने । परन्तु उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ जघन्य स्थान पर्यंत असंख्यात गुणे घाटि जानने । असख्यात के भेद घने है । तातै सामान्यपनै सर्व ही असख्यात लोक प्रमाण कहे । सोई कहिए है — सर्व कषायनि के उदयस्थान असंख्यातलोक प्रमाण है । तिनिकौ यथा योग्य असख्यात लोक का भाग दीजिए, तिनिविषे एक भाग बिना अवशेष बहुभाग प्रमाण शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्ति संबंधी उदय स्थान है । ते भी असख्यात लोक प्रमाण बहुरि जो वह एक भाग अवशेष रह्या, ताकौ असंख्यात लोक का भाग दीए एक भाग बिना अवशेष बहुभाग प्रमाण पृथ्वी भेद समान अनुत्कृष्ट शक्ति संबंधी उदयस्थान है । ते भी असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि जो एक भाग अवशेष रह्या, ताकौ असख्यात लोक का भाग दीए, एक का भाग बिना अवशेष भाग प्रमाण धूलि रेखा समान अजघन्य शक्तिस्थान सबधी उदयस्थान है । ते भी असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि अवशेष एक भाग रह्या, तीहि प्रमाण जल रेखा समान जघन्य शक्ति संबंधी उदय स्थान है, ते भी असंख्यात लोक प्रमाण है ।

असै च्यारि शक्तिस्थान विषे उदयस्थान का प्रमाण कहा । अब चौदह लेश्या स्थाननि विषे उदयस्थाननि का प्रमाण कहिए है — पहिले कृष्ण लेश्या स्थाननि विषे जेते शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्तिस्थान विषे उदयस्थान है । ते-ते सर्व तिस उत्कृष्ट शक्ति कौ प्राप्त कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ यथा-योग्य कृष्ण लेश्या के मध्य स्थान पर्यंत षट्स्थानपतित सकलेश-हानि लीए, असंख्यात-लोकमात्रस्थान है; ते उत्कृष्ट शक्ति के स्थान समान जानने ।

बहुरि इनि तै असंख्यात गुणे घाटि पृथ्वी भेद समान शक्तिस्थान विषे प्राप्त कृष्ण लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है, जातै ते स्थान पृथ्वी भेद समान शक्ति स्थान विषे जेते उदय स्थान है, तिनिकौ यथा योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं एक भाग बिना बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही कृष्ण, नील दोय लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण ते तिस अवशेष एक भाग कौ यथा योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं, बहुभाग मात्र है । एक भाग बिना अवशेष भाग मात्र प्रमाण की बहुभाग संज्ञा जाननी ।

बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही कृष्ण, नील, कपोत तीन लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है; ते तिस अवशेष एक भाग कौ योग्य असंख्यात लोक का भाग का दीए, बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहां ही कृष्णादि च्यारि लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते अवशेष एक भाग कौ योग्य असंख्यात लोक का भाग दीयै बहुभाग मात्र है ।

बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही कृष्णादि पंच लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते अवशेष एक भाग कौ योग्य असंख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात लोक गुणे घाटि तहां ही कृष्णादि छह लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एक भाग मात्र है । इहा पूर्व स्थान तै बहुभागरूप असंख्यात लोकमात्र गुणकार प्रदया, ताने असंख्यात गुणा घाटि कहा है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि ध्वनि रंगा समान शक्तिस्थान विषे प्राप्त कृष्णादि छह लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण

है । ते धूलि रेखा समान शक्तिस्थान संबंधी सर्व स्थाननि के प्रमाण की योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं, एकभाग बिना बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही कृष्ण रहित पंच लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एक भाग की योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहां ही कृष्ण नील रहित च्यारि लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एकभाग की योग्य असंख्यातलोक का भाग दीएं बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही तीन शुभ लेश्या के स्थान असंख्यात लोक मात्र है । ते अवशेष एक भाग की योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, पीत रहित दोय शुभ लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस एक भाग की योग्य असंख्यात लोक का भाग दीएं, बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहां ही केवल शुक्ल लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते तिस अवशेष एकभाग मात्र जानने । इहां बहुभाग रूप असंख्यात लोक मात्र गुणकार घट्या; तातै असंख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि जल रेखा समान शक्ति विषे प्राप्त सर्व शुक्ल लेश्या के स्थान असंख्यात लोक प्रमाण है । ते जल रेखा शक्ति विषे प्राप्त स्थाननि का प्रमाणमात्र है । इहां धूलि रेखा समान शक्ति के सर्व स्थाननि विषे जे केवल शुक्ल लेश्या के स्थान कहे, तहां भागहार अधिक है । परन्तु गुणकारभूत असंख्यात लोक का तहां बहुभाग है । इहां एक भाग है । तातै असंख्यात गुणा घाटि कह्या है । अब आयु के बध-अबन्ध के बीस स्थान, तिन विषे उदय स्थाननि का प्रमाण कहिए है -

प्रथम शिला भेद समान उत्कृष्ट शक्ति विषे प्राप्त कृष्ण लेश्या के स्थान, तिन विषे कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान तै लगाइ, असंख्यात लोक प्रमाण आयु के अबन्ध स्थान है । ते उत्कृष्ट शक्ति विषे प्राप्त सर्व स्थाननि का प्रमाण की असंख्यात लोक का भाग दीएं, बहुभाग मात्र है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहां ही नरकायु बन्धने की कारण असंख्यात लोक प्रमाण स्थान है । ते तिस अवशेष एक भाग मात्र है । पूर्वे बहुभाग इहां एक भाग तातै असंख्यातगुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि पृथ्वी भेद समान अनुत्कृष्ट शक्ति विषे प्राप्त कृष्ण लेश्या के पूर्वोक्त सर्व स्थान, ते नरकायु बन्ध की कारण असंख्यात लोक

प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा ही कृष्णनील लेश्या के पूर्वोक्त सर्व स्थान ते नरकायु बन्ध कौ कारण असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहा ही कृष्णादि तीन लेश्या के स्थाननि विषे नरकायु बन्ध कौ कारण स्थान, ते तिन कृष्णादि तीन लेश्या स्थाननि के प्रमाण कौ योग्य असंख्यात लोक का भाग दीए बहुभाग मात्र असंख्यात लोकप्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि तहां ही कृष्णादि तीन लेश्या के स्थाननि विषे नरक, तिर्यच आयु के बन्ध कौ कारण स्थान, ते तिस अवशेष एक भाग कौ योग्य असंख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा कृष्णादि तीन लेश्या के स्थाननि विषे नरक, तिर्यच, मनुष्य आयुबन्ध के कारण स्थान, ते अवशेष एक भाग मात्र असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यातगुणे घाटि, तहां ही पूर्वोक्त कृष्णादि च्यारि लेश्या के स्थान, सर्व ही च्यार्यों आयुबन्ध के कारण, ते असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यातगुणे घाटि, तहां ही पूर्वोक्त कृष्णादि पच लेश्या के स्थान, सर्व ही च्यार्यों आयुबन्ध के कारण, ते असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यातगुणे घाटि, तहां ही पूर्वोक्त कृष्णादि छहौ लेश्या के स्थान सर्व ही च्यार्यो आयुबन्ध के कारण, ते असंख्यात लोक प्रमाण है । पूर्व स्थान विषे गुणकार बहुभाग था, इहा एक भाग रह्या, ताते असंख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, धूलि रेखा समान शक्ति विषे प्राप्त षट्लेश्या स्थाननि विषे च्यार्यो आयुबन्ध के कारण स्थान, ते तिन अजघन्य शक्ति विषे प्राप्त षट्लेश्या स्थाननि के प्रमाण कौ असंख्यात लोक का भाग दीए, बहुभाग मात्र असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा ही षट्लेश्या के स्थाननि विषे नरक बिना तीन आयुबन्ध के कारण स्थान, ते तिस अवशेष एकभाग कौ असंख्यात का भाग दीए, बहुभागमात्र असंख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा ही षट्लेश्या के स्थान विषे मनुष्य देवायु बन्ध के कारण स्थान, ते तिस अवशेष एकभाग मात्र असंख्यात लोक प्रमाण है । इहा पूर्वे बहुभाग थे, इहा एक भाग है । ताते असंख्यात गुणा घाटि कह्या । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्ण विना पच लेख्या के स्थान सर्व ही देवायु के बन्ध के कारण है । ते असंख्यात लोक प्रमाण जानने । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणे घाटि, तहा ही पूर्वोक्त कृष्ण, नील रहित च्यारि लेश्या के



स्थान सर्व ही देवायु बन्ध कौ कारण है । ते असंख्यात लोक प्रमाण जानने । बहुरि तिनितै असख्यात गुणो घाटि, तहां ही शुभ तीन लेश्या के स्थाननि विषे देवायु बन्ध कौ कारण स्थान, ते तिस अजघन्य शक्ति विषे प्राप्त त्रिलेश्या स्थाननि का प्रमाण कौ योग्य असख्यात लोक का भाग दीएं, बहुभाग मात्र असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि तिनितै असख्यात गुणो घाटि, तहां ही शुभ तीन लेश्या के स्थाननि विषे किसी ही आयु बन्ध कौ कारण नाहीं; अैसे स्थान तिस अवशेष एक भागमात्र असंख्यात लोक प्रमाण जानने । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणो घाटि, तहां ही पूर्वोक्त पद्म शुक्ल दोय लेश्या के स्थान सर्व ही आयु बन्ध कौ कारण नाही । ते असंख्यात लोक प्रमाण है । यातै पूर्व स्थान विषे भागहार असख्यात गुणा घटता है । तातै असख्यात गुणा घाटि कह्या है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणो घाटि, तहां ही पूर्वोक्त शुक्ल लेश्या के स्थान सर्व ही आयुबन्ध कौ कारण नाही । ते असंख्यात लोक प्रमाण है । पूर्वे बहुभाग का गुणकार था, इहां एक भाग का गुणकार भया । तातै असंख्यात गुणा घटता कह्या है । बहुरि तिनितै असंख्यात गुणो घाटि, पूर्वोक्त जल रेखा समान शक्ति विषे प्राप्त शुक्ल लेश्या के स्थान, सर्व ही किसी ही आयु बन्ध कौ कारण नाही । ते असंख्यात लोक प्रमाण है । पूर्व स्थान विषे जे भागहार कहें, तिनितै तिस ही भागहार का गुणकार असंख्यात गुणा है, तातै असंख्यात गुणा घाटि कह्या है । अैसे च्यारि पद चौदह पद बीस पद क्रम तै असंख्यात गुणा घाटि कहे, तथापि असंख्यात के बहुभेद है । तातै सामान्यपने सबनि कौ असंख्यात लोक प्रमाण कहे । विशेषपने यथासभव असंख्यात का प्रमाण जानना । अैसे ही भागहार विषे भी यथासभव असंख्यात का प्रमाण जानना ।

आगे श्री माधवचंद्र त्रैविद्यदेव, तीन गाथानि करि कषाय-मार्गणा विषे जीवनि की संख्या कहै है -

पुह पुह कसायकालो, गिरये अंतोमुहुत्तपरिमाणो ।

लोहादी संखगुणो, देवेसु य कोहपहुदीदो ॥२६६॥

पृथक् पृथक् कषायकालः, निरये अंतर्मुहूर्तपरिमाणः ।

लोभादिः संख्यगुणः देवेषु च क्रोधप्रभृतितः ॥२६६॥

काषायनि के शक्तिस्थान च्यादि, लेह्यास्थान चौदह, प्रायुर्बधावंधस्थान बीस, तिनिका पंध ।

शक्तिस्थान ४	शिलाभेद समान १	पृथ्वी भेद समान १										धूलिरेखासमान १										अतरेणा समान १			
लेह्यास्थान १४	कुष्ण	१	कुष्ण	२	कुष्णादि	४	कुष्णादि	५	कुष्णादि	६	कुष्णादि	७	कुष्णादि	८	कुष्णादि	९	कुष्णादि	१०	कुष्णादि	११	कुष्णादि	१२	कुष्णादि	१३	कुष्णादि
		१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
	शुक्ल	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
		१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
	शुक्ल	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
		१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
	प्रायुर्बधावंध स्थान २०	१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			
		१	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८	१९	२०			

टीका - नरक गति विषै नारकीनि कै लोभादि कषायनि का उदय काल अंतर्मुहूर्त मात्र है । तथापि पूर्व-पूर्व कषाय तै पिछले-पिछले कषाय का काल संख्यात गुणा है । अंतर्मुहूर्त के भेद घने, तातै हीनाधिक होतै भी अंतर्मुहूर्त ही कहिए । सोई कहिए है - सर्व तै स्तोक अंतर्मुहूर्त प्रमाण लोभ कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा माया कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा मान कषाय का काल है । यातै संख्यात गुणा क्रोध कषाय का काल है ।

बहुरि देव गति विषै क्रोधादि कषायनि का काल प्रत्येक अंतर्मुहूर्त मात्र है । तथापि उत्तरोत्तर संख्यात गुणा है । सोई कहिए है - स्तोक अंतर्मुहूर्त प्रमाण ती क्रोध कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा मान कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा माया कषाय का काल है । तातै संख्यात गुणा लोभ कषाय का काल है ।

भावार्थ - नरक गति विषै क्रोध कषायरूप परिणति बहुतर हो है । और कषायनिरूप क्रम तै स्तोक रहै है ।

देव गति विषै लोभ कषायरूप परिणति बहुतर रहै हैं । और कषायनिरूप क्रम तै स्तोक-स्तोक रहै है ।

सर्वसमासेणवह्निदसगसगरासी पुणो वि संगुणिदे ।

सगसगगुणगारेहिं य, सगसगरासीण परिमाणं ॥२६७॥

सर्वसमासेनावहितस्वकस्वकराशौ पुनरपि संगुणिते ।

स्वकस्वकगुणकारैश्च, स्वकस्वकराशीनां परिमाणम् ॥२९७॥

टीका - सर्व च्यार्यो कषायनि का जो काल कह्या, ताके जेते समय होंहि, तिनिका समास कहिए, जोड दीएं, जो परिमाण आवै, ताका भाग अपनी-अपनी गति नवंधी जीवनि के प्रमाण कौ दीएं, जो एक भाग विषै प्रमाण होइ, ताहि अपना-अपना कषाय के काल का समयनि के प्रमाणरूप गुणकार करि गुणै, जो-जो परिमाण होइ, सोई अपना-अपना क्रोधादिक कषाय सयुक्त जीवनि का परिमाण जानना । अपि शब्द नमुच्चय वाचक है; तातै नरक गति वा देव गति विषै अैसे ही करना । सोई दिखाइ है - च्यार्यो कषायनि का काल के समयनि का जोड दीएं,

जो परिमाण होइ, तितने काल विषे जो नरक गति विषे जीवनि का जो परिमाण कह्या, तितने सर्व जीव पाइए, तौ लोभ कषाय के काल का समयनि का जो परिमाण होइ है. तितने काल विषे केते जीव पाइए ? अैसे त्रैराशिक कीएं, प्रमाणराशि सर्वकषायनि का काल, फलराशि सर्व नारकराशि, इच्छाराशि लोभकषाय का काल तहां प्रमाणराशि का भाग फलराशि कौ देइ, इच्छाराशि करि गुणौ जो लब्धराशि का परिमाण आवै, तितने जीव लोभकषाय वाले नरक गति विषे जानने । बहुरि अैसे ही प्रमाणराशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छाराशि मांयादि कषायनि का काल कीए, लब्धराशि मात्र अनुक्रमतैं मायावाले, मानवाले, क्रोधवाले जीवनि का परिमाण नरक गति विषे जानना ।

इहां दृष्टांत — जैसे लोभ का काल का प्रमाण एक (१), माया का च्यारि (४), मान का सोलह (१६), क्रोध का चौसठि (६४) सब का जोड़ दीए पिच्यासी भए । नारकी जीवनि का परिमाण सतरा सैं ( १७०० ), ताहि पिच्यासी का भाग दीएं, पाए बीस (२०), ताकौ एक करि गुणौ बीस (२०) हुवा, सो लोभ कषायवालों का परिमाण है । च्यारि करि गुणौ असी ( ८० ) भए सो मायावालों का परिमाण है । सोला करि गुणौ तीन सौ बीस ( ३२० ) हुवा सो, मानवालों का परिमाण है चौसठि करि गुणौ बार सैं असी ( १२८० ) भए सो, क्रोधवालों का परिमाण है; अैसे दृष्टांत करि यथोक्त नरक गति विषे जीव कहे । अैसे ही देव गति विषे जेता जीवनि का परिमाण है, ताहि सर्व कषायनि के काल का जोड़्या हुवा समयनि का परिमाण का भाग दीए, जो परिमाण आवै, ताहि अनुक्रमतैं क्रोध, मान, माया, लोभ का काल का परिमाण करि गुणौ, अनुक्रमतैं क्रोधवाले, मानवाले, मायावाले, लोभवाले जीवनि का परिमाण देव गति विषे जानना ।

**णरतिरिय लोह-माया-कोहो माणो बिइंदियादिव्व ।**

**आवलिअसंखभज्जा, सगकालं वा समासेज्ज ॥२६८॥**

नरतिरश्चोः लोभमायाक्रोधो मानो द्वीन्द्रियादिवत् ।

आवत्यसंख्यभाज्याः, स्वककालं वा समासाद्य ॥२९८॥

टीका — मनुष्य-तिर्यच गति विषे लोभ, माया, क्रोध, मानवाले जीवनि की संख्या पूर्वे इंद्रिय-मार्गणा का अधिकार विषे जैसे वेद्री, तेद्री, चौइंद्री, पंचेद्री विषे

जीवनि की संख्या 'बहु भागे समभागो' इत्यादि गाथा करि कही श्री । तैसे इहां भी संख्या का साधन करना । सोई कहिये है - मनुष्यगति विषे जो जीवनि का परिमाण है, तामें कषाय रहित मनुष्यनि का प्रमाण घटाए, जो अवशेष रहै, ताकाँ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीएं, तहा एक भाग जुदा राखि, अवशेष बहुभाग का प्रमाण रह्या, ताके च्यारि भाग करि च्यार्यों कषायनि के स्थाननि विषे समान देने । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकाँ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहे, तिनिकौ लोभ कषाय के स्थान समान भाग विषे जो प्रमाण था, तामें जोड़ै, जो परिमाण होइ, तितने लोभकषाय वाले मनुष्य जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहे, तिनिकौ माया कषाय के स्थान समान भाग विषे जो परिमाण था, तामें मिलाएं, जो परिमाण होइ, तितने मायाकषाय वाले मनुष्य जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहै, तिनिकौ क्रोधकषाय के स्थान समान भाग विषे जो परिमाण था, तिस विषे मिलाएं, क्रोधकषाय वाले मनुष्यनि का परिमाण होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग का जेता परिमाण होइ, ताकाँ मानकषाय के स्थान समान भाग विषे जो परिमाण था, तामें मिलाएं, मानकषाय वाले मनुष्यनि का परिमाण होइ, अैसे ही तिर्यच गति विषे जानना । विशेष इतना जो वहां मनुष्य गति के जीवनि का परिमाण विषे भाग दीया था । इहां तिर्यच गति के जीवनि का जो देव, नारक, मनुष्यराशि करि हीन सर्व संसारी जीवराशि मात्र परिमाण, ताकाँ भाग देना; अन्य सर्व विधान तैसे ही जानना । अैसे कषायनि विषे तिर्यच जीवनि का परिमाण जानिए । अथवा अपना-अपना कषायनि का काल की अपेक्षा जीवनि की संख्या जानिए, सो दिखाइए है । च्यार्यौ कषायनि का काल के समयनि का जो अंतर्मुहूर्त मात्र परिमाण है, ताकाँ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए । तहा एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष के च्यारि भाग करि, च्यारौ जायगा समान दीजिए । बहुरि अवशेष एक भाग कौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग देइ, एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहे, तिनिकौ समान भाग विषे जो परिमाण था, तामें मिलाएं, लोभकषाय के काल का परिमाण होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग को तैसे भाग देइ, एक भाग बिना अवशेष बहुभाग समान भाग का प्रमाण विषे मिलाएं, माया का काल होइ । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ तैसे भाग

देइ, एक भाग को जुदा राखि, अवशेष बहुभाग समान भाग संबंधी परिमाण विषे मिलाएं क्रोध का काल होइ । बहुरि जो अवशेष एक भाग रह्या, ताको समान भाग संबंधी परिमाण विषे मिलाएं, मानकषाय का काल होइ ।

अब इहां त्रैराशिक करना — जो च्यारि कषायनि के काल का परिमाण विषे सर्व मनुष्य पाइए, तो लोभ कषाय का काल विषे केते मनुष्य पाइए ?

इहां प्रमाणराशि च्यारों कषायनि का समुच्चयरूप काल का परिमाण अर फलराशि मनुष्य गति के जीवनि का परिमाण अर इच्छाराशि लोभ कषाय के काल का परिमाण । तहां फलराशि को इच्छाराशि करि गुणि, प्रमाण राशि का भाग दीएं, जो लब्धराशि का प्रमाण आवै, तितने लोभकषायवाले मनुष्य जानने । अैसे ही प्रमाण फलराशि पूर्वोक्त कीएं, माया क्रोध मान काल को इच्छाराशि कीएं, लब्धराशि मात्र मायावाले वा क्रोधवाले वा मानवाले मनुष्यनि की संख्या जाननी । बहुरि याही प्रकार तिर्यच गति विषे भी लोभवाले, मायावाले, क्रोधवाले, मानवाले जीवनि की संख्या का साधन करना । विशेष इतना जो उहां फलराशि मनुष्यनि का परिमाण था, इहां फलराशि तिर्यच जीवनि का परिमाण जानना । अन्य विधान तैसे ही करना । अैसे कषायमार्गणा विषे जीवनि की संख्या है ।

इति आचार्य श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह  
ग्रन्थ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

नाम भाषाटीका विषे जीवकांड विषे प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा

तिनि विषे कषायमार्गणा प्ररूपणा नाम ग्यारमा

अधिकार सम्पूर्ण भया ॥११॥

## बारहवां अधिकार : ज्ञानमार्गणाधिकार

मंगलाचरण

बंदौ वासव पूज्यपद, वास पूज्य जिन सोय ।

गर्भादिक में पूज्य जो, रत्न द्रव्य तै होय ॥

आगे श्री नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती ज्ञान मार्गणा का प्रारंभ करे है । तहां प्रथम ही निरुक्ति लीएं, ज्ञान का सामान्य लक्षण कहै है -

जाणइ तिकालविसए, द्रव्यगुणो पज्जए य बहुभेदे<sup>१</sup> ।

पचचक्खं च परोक्खं, अणोण णाणे त्ति एं वेति ॥२६६॥

जानाति त्रिकालविषयान्, द्रव्यगुणान् पर्यायांश्च बहुभेदान् ।

प्रत्यक्षं च परोक्षमनेन ज्ञानमिति इदं ब्रुवंति ॥२९९॥

टीका - त्रिकाल संबंधी हुए, हों है, होहिगे जैसे जीवादि द्रव्य वा ज्ञानादि गुण वा स्थावरादि पर्याय नाना प्रकार है । तहां जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल ए द्रव्य है । बहुरि ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, सुख, वीर्य आदि वा स्पर्श, रस, गंध, वर्ण आदि वा गतिहेतुत्व, स्थितिहेतुत्व, अवगाहनहेतुत्व, वर्तनाहेतुत्व आदि गुण हैं । बहुरि स्थावर, त्रस आदि वा अणु, स्कंधपणा आदि वा अन्य अर्थ, व्यंजन आदि भेद लीए अनेक पर्याय है । तिनकौ प्रत्यक्ष वा परोक्ष जीव नामा पदार्थ, इस करि जाने है, तातै याकौ ज्ञान कहिए । 'जायते अनेनेति ज्ञानं' ऐसी ज्ञान शब्द की निरुक्ति जाननी । इहा जाननरूप क्रिया का आत्मा कर्ता, तहा करणस्वरूप ज्ञान, अपने विषयभूत अर्थनि का जाननहारा जीव का गुण है - जैसे अरहंतादिक कहै है । असाधारण कारण का नाम करण है । बहुरि यह सम्यग्ज्ञान है; सोई प्रत्यक्ष वा परोक्षरूप प्रमाण है । जो ज्ञान अपने विषय कौ स्पष्ट विशद जानै, ताकौ प्रत्यक्ष कहिए । जो अपने विषय कौ अस्पष्ट - अविशद जानै, ताकौ परोक्ष कहिए । सो इस प्रमाण का स्वरूप वा संख्या वा विषय वा फल वा लक्षण बहुरि ताके अन्यथा वाद

<sup>१</sup> पट्खडागम धवला पुस्तक १, गाथा स. ६१, पृष्ठ १४५ ।

पाठभेद-तिकात्तविसए-तिकात्तसहित-णाणे णाण ।

का निराकरण वा स्याद्वाद मत के प्रमाण का स्थापन विशेषपने जैन के तर्कशास्त्र है, तिनि विषे विचारना ।

इहां अहेतुवावरूप आगम विषे हेतुवाद का अधिकार नाही । ताते सविशेष न कहा । हेतु करि जहां अर्थ कौ दृढ कीजिए ताका नाम हेतुवाद है, सो न्यायशास्त्रनि विषे हेतुवाद है । इहां तो जिनागम अनुसारि वस्तु का स्वरूप कहने का अधिकार जानना ।

आगे ज्ञान के भेद कहैं हैं —

**पंचेव होंति णाणा, मदि-सुद-ओही-मरां च केवल्यं ।**

**खयउवसमिया चउरो, केवलणाणं हवे खइयं ॥३००॥**

पंचेव भवन्ति ज्ञानानि, मतिश्रुतावधिमनश्च केवलम् ।

क्षायोपशमिकानि चत्वारि, केवलज्ञानं भवेत् क्षायिकम् ॥३००॥

**टीका—**मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय, केवल ए सम्यग्ज्ञान पंच ही है; हीन अधिक नाही । यद्यपि संग्रहनयरूप द्रव्यार्थिक नय करि सामान्यपने ज्ञान एक ही है । तथापि पर्यायार्थिक नय करि विशेष कीएं पंच भेद ही हैं । तिनि विषे मति, श्रुति, अवधि, मनःपर्यय ए च्यारि ज्ञान क्षायोपशमिक हैं ।

जाते मतिज्ञानावरणादिक कर्म वा वीर्यान्तराय कर्म, ताके अनुभाग के जे सर्वघातिया स्पर्धक हैं; तिनिका उदय नाही, सोई क्षय जानना । बहुरि जे उदय अवस्था कौ न प्राप्त भए, ते सत्तारूप तिष्ठे है, सोई उपशम जानना । उपशम वा क्षय करि उपजै, ताकी क्षयोपशम कहिए अथवा क्षयोपशम है प्रयोजन जिनिका, ते क्षायोपशमिक कहिए । यद्यपि क्षायोपशमिक विषे तिस आवरण के देशघातिया स्पर्धकनि का उदय पाइए है । तथापि वह तिस ज्ञान का घात करने कौ समर्थ नाही है; ताते ताकी मुख्यता न करी ।

याका उदाहरण कहिए है — अवधिज्ञानावरण कर्म सामान्यपने देशघाती है । तथापि अनुभाग का विशेष कीएं, याके केई स्पर्धक सर्वघाती है; केई स्पर्धक देशघाती है । तहां जिनिके अवधिज्ञान किछू भी नाही, तिनिके सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय जानना । बहुरि जिनिके अवधिज्ञान पाइए है अर आवरण उदय पाइए है; तहां



देशघाती स्पर्धकनि का उदय जानना । बहुरि केवलज्ञान क्षायिक ही है, जातें केवल-ज्ञानावरण, वीर्यातराय का सर्वथा नाश करि केवलज्ञान प्रकट हो है । क्षय होतें उपज्या वा क्षय है प्रयोजन जाका, ताकीं क्षायिक कहिए । यद्यपि सावरण अवस्था विषे आत्मा के शक्तिरूप केवलज्ञान है, तथापि व्यक्तरूप आवरण के नाश करि ही है, तातें व्यक्तता की अपेक्षा केवलज्ञान क्षायिक कहा; जातें व्यक्त भए ही कार्य सिद्धि संभव है ।

आगे मिथ्याज्ञान उपजने का कारण वा स्वरूप वा स्वामित्व वा भेद कहै है—

अण्णाणतियं होदि हु, सण्णाणतियं खु मिच्छ अणउदये ।  
णवरि विभागं णाणं, पंचिंद्रियसण्णिपुण्णेव ॥३०१॥

अज्ञानत्रिकं भवति खलु, सज्ज्ञानत्रिकं खलु मिथ्यात्वानोदये ।  
नवरि विभंगं ज्ञानं, पंचेन्द्रियसंज्ञिपूर्ण एव ॥३०१॥

टीका — जे सम्यग्दृष्टी के मति, श्रुति, अवधि ए तीन सम्यग्ज्ञान है; संजी पंचेद्री पर्याप्त वा निर्वृत्ति अपर्याप्त जीव के विशेष ग्रहरूप जेयाकार सहित उपयोग रूप है लक्षण जिनिका असै है; तेई तीनों मिथ्यात्व वा अनंतानुबन्धी कोई कषाय के उदय होतें तत्त्वार्थ का अश्रद्धान रूप परिणया जीव के तीनों मिथ्याज्ञान हो है । कुमति, कुश्रुति, विभंग ए नाम हो है । एवरि असा प्राकृत भाणा विषे विशेष अर्थ कौ लीए अव्यय जानना । सो विशेष यहु — जो अवधि ज्ञान का विपर्ययरूप होना सोई विभंग कहिए । सो विभंग अज्ञान सैनी पंचेद्री पर्याप्त ही के हो है । याही तै कुमति, कुश्रुति, एकेन्द्रिय आदि पर्याप्त अपर्याप्त सर्व मिथ्यादृष्टी जीवनि के अर सासादन गुणस्थानवर्ती सर्व जीवनि के संभव है ।

आगे सम्यग्दृष्टि नामा तीसरा गुणस्थान विषे ज्ञान का स्वरूप कहै है —

मिस्सुदये सम्मिस्सं, अण्णाणतियेण णाणतियमेव ।  
संजमविसेससहिए, मणपज्जवरणाणमुद्दिट्ठं ॥३०२॥

मिश्रोदये संमिश्रं, अज्ञानत्रयेण ज्ञानत्रयमेव ।

संयमविशेषसहिते, मनःपर्ययज्ञानमुद्दिष्टम् ॥३०२॥

टीका — मिश्र कहिए सम्यग्मिथ्यात्व नामा मोहनीय कर्म की प्रकृति, ताके उदय होतै, तीनों अज्ञान करि मिल्या तीनों सम्यग्ज्ञान इहा हो है, जातै जुदा कीया जाता नाही, तातै सम्यग्मिथ्यामति, सम्यग्मिथ्याश्रुत, सम्यग्मिथ्या अवधि अैसे इहां नाम हो है । जैसें इहां एक काल विषै सम्यग्रूप वा मिथ्यारूप मिल्या हुवा श्रद्धान पाइए है । तैसें ही ज्ञानरूप वा अज्ञानरूप मिल्या हुवा ज्ञान पाइए है । इहा न तौ केवल सम्यग्ज्ञान ही है, न केवल मिथ्याज्ञान है, मिथ्याज्ञान करि मिल्या सम्यग्ज्ञान-रूप मिश्र जानने ।

बहुरि मन पर्यय ज्ञान विशेष सयम का धारक छठा गुणस्थान तै बारहवा गुणस्थान पर्यंत सात गुणस्थानवर्ती तप विशेष करि वृद्धिरूप विशुद्धताके धारी महा-मुनि, तिन ही कै पाइए है; जातै अन्य देशसयतादि विषै तैसा तप का विशेष न संभवै है ।

आगे मिथ्याज्ञान का विशेष लक्षण तीन गाथानि करि कहै है —

**विस-जंत-कूड-पंजर-बंधादिसु विणुवएस-करणेण ।**

**जा खलु पवद्दए मइ, मइ-अण्णाणं ति एं बेति ॥३०३॥<sup>१</sup>**

विषयंत्रकूटपंजरबंधादिषु विनोपदेशकरणेन ।

या खलु प्रवर्तते मतिः, मत्यज्ञानमितीदं ब्रुवंति ॥३०३॥

टीका — परस्पर वस्तु का संयोग करि मारने की शक्ति जिस विषै होइ अैसा तैल, कर्पूरादिक वस्तु, सो विष कहिए ।

बहुरि सिंह, व्याघ्रादि क्रूर जीवनि के धारन के अर्थि जाके अभ्यतर छैला आदि रखिए । अर तिस विषै तिस क्रूर जीव कौ पाव धरते ही किवाड जुडि जाय, अैसा सूत्र की कल करि संयुक्त होइ, काष्ठादिक करि रच्या हुवा हो है, सो यन्त्र कहिए ।

बहुरि माछला, काछिवा, मूसा, कोल इत्यादिक जीवनि कै पकड़ने के निमित्त काष्ठादिकमय बने, सो कूट कहिए ।

बहुरि तीतर, लवा, हिरण इत्यादि जीवनि के पकड़ने के निमित्त फद की लीए जो डोरि का जाल बनै, सो पीजर कहिए ।

बहुरि हाथी, ऊंट आदि के पकड़ने निमित्त खाड़ा के ऊपर गांठ का विशेष लीएं जेवरा की रचनारूप विशेष, सो बंध कहिए ।

आदि शब्द करि पंखीनि का पांख लगने निमित्त ऊंचे दड के ऊपर चिंगटास लगावना, सो बंध वा हरिणादिक का सींग के अग्रभाग सूत्र की गांठ देना इत्यादि विशेष जानने । अैसें जीवनि के मारणे, बांधने के कारणरूप कार्यनि विषे अन्य के उपदेश विना ही स्वयमेव बुद्धि प्रवर्तै; सो कुमति ज्ञान कहिए ।

उपदेश तै प्रवर्तै तो कुश्रुत ज्ञान हो जाइ । तातै विना ही उपदेश असा विचाररूप विकल्प लीएं हिसा, अनृत, स्तेय, अब्रह्म, परिग्रह का कारण आर्तरौद्र ध्यान कौ कारण शल्य, दंड, गारव आदि अशुभोपयोगों का कारण जो मन, इंद्रिय करि विशेष ग्रहणरूप मिथ्याज्ञान प्रवर्तै; सो मति अज्ञान सर्वज्ञदेव कहै है ।

**आभीयमासुरक्खं, भारह-रामायणादि-उवएसा ।**

**तुच्छा असाहणीया, सुय-अण्णाणं ति णं बेति ॥३०४॥<sup>१</sup>**

**आभीतमासुरक्षं भारतरामायणाद्युपदेशाः ।**

**तुच्छा असाधनीयाः श्रुताज्ञानमिति इदं ब्रुवन्ति ॥३०४॥**

टीका — आभीताः कहिए ( समतपनै ) भयवान, जे चौरादिक, तिनिका शास्त्र सो आभीत है । बहुरि असु जे प्राण, तिनिकी चौरादिक तै रक्षा जिनि तै होइ, अैसे कोटपाल, राजादिक, तिनिका जो शास्त्र सो असुरक्ष हैं । बहुरि कौरव पांडवो का युद्धादिक वा एक भार्या के पंच भर्ता इत्यादिक विपरीत कथन जिस विषे पाइए, अैसा शास्त्र सो भारत है । बहुरि रामचंद्र के बानरो की सेना, रावण राक्षस है, तिनिका परस्पर युद्ध होना इत्यादिक अपनी इच्छा करि रच्या हुवा शास्त्र, सो रामायण है । आदि शब्द तै जो एकातवाद करि दूषित अपनी इच्छा के अनुसारि रच्या हुवा शास्त्र, जिनिविषे हिसारूप यज्ञादिक गृहस्थ का कर्म है; जटा धारण, त्रिदंड धारणादिरूप तपस्वी का कर्म है, सोलह पदार्थ है; वा छह पदार्थ है; वा भावन, विधि, नियोग, भूत ए च्यारि है; वा पचीस सत्त्व है; वा अद्वैत ब्रह्म का स्वरूप है वा सर्व शून्य है इत्यादि वर्णन पाइए है; ते शास्त्र 'तुच्छाः' कहिए परमार्थ

तैं रहित है । बहुरि 'असाधनीया' कहिए प्रमाण करने योग्य नाही । याही तैं संत पुरुषनि कौ आदरने योग्य नाही । अैसे शास्त्राभ्यासनि तैं भया जो श्रुतज्ञान की सी आभासा लीएं कुज्ञान, सो श्रुत अज्ञान कहिए । जातैं प्रमाणीक इष्ट अर्थ तैं विपरीत अर्थ याका विषय हो है । इहां मति, श्रुत अज्ञान का वर्णन उपदेश लीए किया है ।

अर सामान्यपनै तौ स्व-पर भेदविज्ञान रहित इंद्रिय, मन जनित जानना, सो सर्व कुमति, कुश्रुत है ।

**विवरीयमोहिणाणं, खओवसमियं च कम्मबीजं च ।**

**वेभंगो त्ति पउच्चइ, समत्तणाणीण समयम्हि ॥३०५॥<sup>१</sup>**

विपरीतमवधिज्ञानं, क्षायोपशमिकं च कर्मबीजं च ।

विभंग इति प्रोच्यते, समाप्तज्ञानिनां समये ॥३०५॥

टीका — मिथ्यादृष्टी जीवनि कैं अवधिज्ञानावरण, वीर्यातराय के क्षयोपशम तैं उत्पन्न भया; अैसा द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की मर्यादा लीएं रूपी पदार्थ है विषय जाका, अैसा आप्त, आगम, पदार्थनि विषे विपरीत का ग्राहक, सो विभंग नाम पावै है । बि कहिए विशिष्ट जो अवधिज्ञान, ताका भंग कहिए विपरीत भाव, सो विभंग कहिए; सो तिर्यच-मनुष्य गति विषे तौ तीव्र कायक्लेशरूप द्रव्य सयमादिक करि उपजै है; सो गुणप्रत्यय हो है ।

बहुरि देवनरक गति विषे भवप्रत्यय हो है । सो सब ही विभंगज्ञान मिथ्या-त्वादि कर्मबध का बीज कहिए कारण हैं । चकार तैं कदाचित् नारकादिक गति विषे पूर्वभव सम्बन्धी दुराचार के दुःख फल कौ जानि, कही सम्यग्दर्शनज्ञानरूप धर्म का भी बीज हो है; अैसा विभंगज्ञान, समाप्तज्ञानी - जो सपूर्ण ज्ञानी केवली, तिनिके मत विषे कह्या है ।

आगै स्वरूप वा उपजने का कारण वा भेद वा विषय, इनिका आश्रय करि मतिज्ञान का निरूपण नव गाथानि करि कहै है —

**अहिमुह-णियमिय-बोहरणमाभिणिबोहियमणिदि-इंदियजं ।**

**अवगहईहावायाधारणगा होति पत्तेयं ॥३०६॥<sup>२</sup>**

१ पट्खडागम — धवला पुस्तक १, गाथा १८१, पृष्ठ ३६१ ।

२ पट्खडागम — धवला पुस्तक १, गाथा १८२, पृष्ठ ३६१ ।

३. पाठभेद — बहु ओगहईणा खलुकय-छत्तीस-त्ति-सय-भेय ।

अभिमुखनियमितबोधनमाभिनिबोधिकमनिद्रियेन्द्रियजं ।

अवग्रहेहावायधारणाका भवंति प्रत्येकं ॥३०६॥

टीका — स्थूल, वर्तमान जिस क्षेत्र विषे इंद्रिय-मन की प्रवृत्ति होइ, तहां तिष्ठता असा जो इंद्रिय - मन के ग्रहण योग्य पदार्थ, सो अभिमुख कहिए । बहुरि इस इंद्रिय का यह ही विषय है, असा नियमरूप जो पदार्थ, सो नियमित कहिए, असे पदार्थ का जो जानना, सो अभिनिबोध कहिए । अभि कहिए अभिमुख अर 'नि' कहिए नियमित जो अर्थ, ताका निबोध कहिए जानना, असा अभिनिबोध, सोई अभिनिबोधिक है । इहा स्वार्थ विषे ठण् प्रत्यय आया है । सो यह अभिनिबोधिक मतिज्ञान का नाम जानना । इंद्रियनि के स्थूल रूप स्पर्शादिक अपने विषय के ज्ञान उपजावने की शक्ति है । बहुरि सूक्ष्म, अंतरित, दूर पदार्थ के ज्ञान उपजावने की शक्ति नाही है । तहां सूक्ष्म पदार्थ तो परमाणु आदिक, अंतरित पदार्थ अतीत अनागत काल संबंधी, दूर पदार्थ मेरु गिरि, स्वर्ग, नरक, पटल आदि दूर क्षेत्रवर्ती जानने । असे मतिज्ञान का स्वरूप कह्या है ।

सो मतिज्ञान कैसा है ?

अनिद्रिय जो मन, अर इंद्रिय स्पर्शन, रसन, घ्राण, चक्षु, श्रोत्र, इनि करि उपजै है । मतिज्ञान उपजने के कारण इंद्रिय अर मन हैं । कारण के भेद तें कार्य विषे भी भेद कहिए, तातें मतिज्ञान छह प्रकार है । तहा एक-एक के च्यारि-च्यारि भेद है — अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा । सो मन तें वा स्पर्शन तें वा रसना तें वा घ्राण तें वा चक्षु तें वा श्रोत्र तें ए अवग्रहादि च्यारि-च्यारि उत्पन्न होइ, तातें चौबीस भेद भए ।

अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा का लक्षण शास्त्रकर्ता आगे स्वयमेव कहैगे ।

वैजणअत्थअवग्रहभेदा हु हवंति पत्तपत्तत्थे ।

कमसो ते वावरिदा, पढमं ण हि चक्खुमणसाणां ॥३०७॥

व्यंजनार्थाविग्रहभेदौ, हि भवतः प्राप्ताप्राप्तार्थे ।

क्रमशस्तौ व्यापृतौ, प्रथमो नहि चक्षुर्मनसोः ॥३०७॥

टीका — मतिज्ञान का विषय दोय प्रकार एक व्यंजन, एक अर्थ । तहां जो विषय इंद्रियनि करि प्राप्त होइ, स्पर्शित होइ, सो व्यंजन कहिए । जो प्राप्त न होइ, सो अर्थ कहिए । तिनिका विशेष ग्रहणरूप व्यंजनावग्रह अरु अर्थाविग्रह भेद प्रवर्तै है ।

इहां प्रश्न — जो तत्त्वार्थ सूत्र की टीका विषेँ तौ अर्थ अैसा कीया है — जो व्यंजन नाम अव्यक्त शब्दादिक का है, इहां प्राप्त अर्थ कौ व्यंजन कह्या सो कैसेँ है ?

ताका समाधान — व्यंजन शब्द के दोऊ अर्थ हो है । विगतं अंजनं व्यंजनं' दूरि भया है अंजन कहिए व्यक्त भाव जाकै, सो व्यंजन कहिए । सो तत्त्वार्थ सूत्र की टीका विषेँ तौ इस अर्थ का मुख्य ग्रहण कीया है । अरु 'व्यज्यते अक्षयते प्राप्यते इति व्यंजनं' जो प्राप्त होइ ताकौ व्यंजन कहिए । सो इहा यहु अर्थ मुख्य ग्रहण कीया है । तातै अंजु धातु गति, व्यक्ति, अक्षण अर्थ विषेँ प्रवर्तै है । तातै व्यक्ति अर्थ का अरु अक्षण अर्थ का ग्रहण करने तै कर्णादिक इंद्रियनि करि शब्दादिक अर्थ प्राप्त हूवे भी यावत् व्यक्त न होइ, तावत् व्यंजनावग्रह है, व्यक्त भएँ अर्थाविग्रह हो है । जैसेँ नवा माटी का शरावा, जल की बूंदनि करि सींचिए, तहां एक दोय बार आदि जल की बूंद परें व्यक्त न होइ; शोषित होइ जाय; बहुत बार जल की बूंद परें, व्यक्त होइ, तैसेँ कर्णादिक करि प्राप्त हुवा जो शब्दादिक, तिनिका यावत् व्यक्तरूप ज्ञान न होइ, जो मैनेँ शब्द सुन्या, अैसा व्यक्त ज्ञान न होइ, तावत् व्यंजनावग्रह कहिए । बहुरि बहुत समय पर्यंत इंद्रिय अरु विषय का सयोग रहै; व्यक्तरूप ज्ञान भएँ अर्थाविग्रह कहिए । बहुरि नेत्र इंद्रिय अरु मन, ए दूरही तै पदार्थ कौ जानै है; तातै इनि दोऊनि कै व्यंजनावग्रह नाहीं, अर्थाविग्रह ही है ।

इहां प्रश्न — जैसेँ कर्णादिक करि दूरि तै शब्दादिक जानिए है, तैसेँ ही नेत्र करि वर्ण जानिए है, वाकौँ प्राप्त कह्या, अरु याकौ अप्राप्त कह्या सो कैसेँ है ?

ताका समाधान — दूरि जो शब्द हो है, ताकौ यहु नाही जानै है । जो दूरि भया शब्द, ताके निमित्त तै आकाश विषेँ जे अनेक स्कंध तिष्ठै है । ते शब्दरूप परिणए है । तहा कर्ण इंद्रिय के समीपवर्ती भी स्कंध शब्दरूप परिणए है, सो तिनिका कर्ण इंद्रिय करि स्पर्श भया है; तब शब्द का ज्ञान हो है । अैसेँ ही दूरि तिष्ठता सुगंध, दुर्गंध वस्तु के निमित्त तै पुद्गल स्कंध तत्काल तद्रूप परिणवै है । तहां जो नासिका इंद्रिय के समीपवर्ती स्कंध परिणए है; तिनिके स्पर्श तैँ गंध का ज्ञान हो है । अैसेँ ही अग्न्यादिक के निमित्त तै पुद्गल स्कंध उष्णादिरूप परिणवै है; तहां जो

न्यूनं इंद्रिय के समीपवर्ती स्कंध परिणए है; तिनिके स्पर्श तै स्पर्श ज्ञान हो है । अरु ही आम्नादि वस्तु के निमित्त तै स्कंध तद्रूप परिणवै है, तहां रसना इंद्रिय के समीपवर्ती जो स्कंध परिणए, तिनिके संयोग तैं रस का ज्ञान हो है । बहुरि यहु श्रुत ज्ञान के बल करि, जाके निमित्त तै शब्द आदि भए ताकौ जानि, अँसा मानै है कि भे दूरवर्ती वस्तु को जान्या, अँसे दूरवर्ती वस्तु के जानने विषे भी प्राप्त होना सिद्ध भया । अरु समीपवर्ती कौ तो प्राप्त होकर जानै ही है । इहां शब्दादिक परमाणु अरु रणादिक इंद्रिय परस्पर प्राप्त होइ, अरु यावत् जीव कै व्यक्त ज्ञान न होइ तावत् व्यजनावग्रह है, व्यक्तज्ञान भए अर्थावग्रह हो है । बहुरि मन अरु नेत्र दूर ही तै जानै है, अँसा नाही; जो शब्दादिक की ज्यो जानै है, तातै पदार्थ तौ दूरि तिष्ठै है ही, जब उन नै ग्रहै, तव व्यक्त ही ग्रहै; तातै व्यजनावग्रह इनि दोऊनि कै नाही; अर्थावग्रह ही है । उक्त च—

पुट्ठ सुणेदि सद्धं, अपुट्ठं पुण पस्सदे-रूवं ।

गंधं रसं च फासं, बद्धं पुट्ठं वियाणादि ॥१॥

बहुरि नैयायिकमतवाले अँसा कहै है — मन अरु नेत्र भी प्राप्त होइ करि ही वस्तु कौ जानै है । ताका निराकरण जैनन्याय के शास्त्रनि विषे अनेक प्रकार कीया है । बहुरि व्यंजन जो अव्यक्त शब्दादिक, तनि विषे स्पर्शन, रसन, घ्राण, श्रोत्र इंद्रियनि करि केवल अवग्रह ही हो है; ईहादिक न हो है । जातै ईहादिक तौ एक-देग वा सर्वदेग व्यक्त भए ही हो है । व्यंजन नाम अव्यक्त का है, तातै चारि इंद्रियनि करि व्यजनावग्रह के चारि भेद है ।

विसयाणां विसईणं, संजोगाणंतरं हवे णियमा ।

अवग्रहणाणं गहिदे, विसेसकंखा हवे ईहा ॥३०८॥

विषयाणां विषयिणां, संयोगानंतरं भवेन्नियमात् ।

अवग्रहज्ञानं गृहीते, विशेषाकांक्षा भवेदोहा ॥३०८॥

टीका — विषय जो शब्दादिक पदार्थ अरु विषयी जे कर्णादिक इंद्रिया, इनिका तैं समीप ग्रहीते योग्य क्षेत्र विषे निष्ठनेरूप सवग्र, ताकौ होतैं संतै ताके अनंतर ही वस्तु तैं अवग्रह रूप निष्क्रिय अवग्रह तौ बहुत है, इतना प्रकाणरूप, सो दर्शन नियम-

करि हो है । ताके अनन्तर पीछे ही देख्या जो पदार्थ ताके वर्ण संस्थानादि विशेष ग्रहरूप अवग्रह नामा ज्ञान हो है ।

इहां प्रश्न — जो गाथा विषेँ तौ पहिलें दर्शन न कह्या, तुम कैसेँ कहो हो ?

ताकां समाधान — जो अन्य ग्रंथनि में कह्या है—‘अक्षार्थयोगे सत्तालोकोर्था-कारविकल्पधीरवग्रहः’ इन्द्रिय अर विषय के संयोग होतै प्रथम सत्तावलोकन मात्र दर्शन हो है, पीछे पदार्थ का आकार विशेष जानेरूप अवग्रह हो है — ऐसा अकलंकाचार्य करि कह्या है । बहुरि ‘दंसरणपुर्व्वं णाणं छद्मत्थाणं हवेदि णियमेण’ छद्मस्थ जीवन के नियम तै दर्शन पूर्व्वक ही ज्ञान हो है ऐसा नेमिचंद्राचार्यने द्रव्य - संग्रह नामा ग्रंथ में कह्या है । बहुरि तत्त्वार्थ सूत्र की टीकावाले नै ऐसा ही कह्या है; तातै इहा ज्ञानाधिकार विषेँ दर्शन का कथन न कीया तौ भी अन्य ग्रंथनि तै अैसे ही जानवा । सो अवग्रह करि तौ इतना ग्रहण भया ।

जो यहु श्वेत वस्तु है, बहुरि श्वेत तौ बुगलनि की पंक्ति भी हो है, ध्वजा रूप भी हो है; परि बुगलेनि की पंक्तिरूप विषय कौं अवलंबि यहु बुगलेनि की पंक्ति ही होसी वा ध्वजारूप विषय कौं अवलंबि यहु ध्वजा होसी अैसा विशेष वाछारूप जो ज्ञान, ताकौ ईहा कहिए । बहुरि बुगलनि की यहु पंक्ति ही होसी कि ध्वजा होसी अैसा सशयरूप ज्ञान का नाम ईहा नाही है । वा बुगलनि पंक्ति विषे यहु ध्वजा होसी अैसा विपर्यय ज्ञान का नाम ईहा नाही है, तातै इहां सम्यग्ज्ञान का अधिकार है । सम्यग्ज्ञान प्रमाण है । अर सशय, विपर्यय है, सो मिथ्याज्ञान है । तातै सशय विपर्यय का नाम ईहा नाही । जो वस्तु है, ताका यथार्थरूप अैसा ज्ञान करना कि यहु अमुक ही वस्तु होसी; अैसे होसीरूप जो प्रतीति, ताका नाम ईहा है । अवग्रह तै ईहा विषे विशेष ग्रहण भया; तातै याके वाके विषे मतिज्ञानावरण के क्षयोपशम का तारतम्य करि भेद जानना ।

ईहणकरणेण जदा, सुणिण्णओ होदि सो अवाओ दु ।

कालांतरे वि णिणिण्णद-वत्थु-समरणस्स कारणं तुरियं ॥३०६॥

ईहणकरणेन यदा, सुनिर्णयो भवति स अवायस्तु ।

कालांतरेऽपि निर्णीतवस्तुस्मरणस्य कारणं तुर्यम् ॥३०९॥



टीका — ईहा के करने करि ताके पीछे जिस वस्तु की ईहा भई थी, ताका भले प्रकार निर्णय रूप जो ज्ञान, ताकीं अवाय कहिए ।

जैसे पांखनि का हलावना आदि चिह्न करि यह निश्चय कीया जो वुगलनि की पंक्ति ही है, निश्चयकरि और किछू नाही; असा निर्णय का नाम अवाय है । तु शब्द करि पूर्वे जो ईहा विषे वांछित वस्तु था, ताही का भले प्रकार निर्णय, सो अवाय है । बहुरि जो वस्तु किछू और है; अर और ही वस्तु का निश्चय करि लीया है, तो वाका नाम अवाय नाही, वह मिथ्याज्ञान है ।

बहुरि तहां पीछे बार-बार निश्चयरूप अभ्यास ते उपज्या जो सस्कार, तीहि स्वरूप होइ, केते इक काल कीं व्यतीत भए भी यादि आवने की कारणभूत जो ज्ञान सो धारणा नाम चौथा ज्ञान का भेद हो है । जैसे ही सर्व इंद्रिय वा मन संबंधी अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा भेद जानने ।

**बहु बहुविधं च खिप्पाणिस्सिदणुत्तं ध्रुवं च इदरं च ।  
तत्थेक्केक्के जादे, छत्तीसं तिसयभेदं तु ॥३१०॥**

**बहु बहुविधं च क्षिप्रानिःसृदनुत्तं ध्रुवं च इतरच्च ।  
तत्रैकैस्मिन् जाते, षट्त्रिंशत्त्रिंशतभेदं तु ॥३१०॥**

टीका — अर्थरूप वा व्यंजनरूप जो मतिज्ञान का विषय, ताके बारह भेद है — बहु, बहुविध, क्षिप्र, अनिसृत, अनुक्त, ध्रुव, ए छह । बहुरि इतर जे छहौ इनके प्रतिपक्षी एक, एकविध, अक्षिप्र, निसृत, उक्त, अध्रुव ए छह; जैसे बारह भेद जानने । सो व्यजनावग्रह के चारि इंद्रियनि करि चारि भेद भए, अर अर्थ के अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा ते पंच इंद्रिय छठा मन करि चौबीस भेद भए । मिलाएं ते अठाईस भेद भए । सो व्यंजन रूप बहु विषय का चारि इंद्रियनि करि अवग्रह हो है । सो चारि भेद तौ ए भए । अर अर्थ रूप बहु विषय का पंच इंद्रिय, छठा मन करि गुण अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा हो है । तातें चौबीस भए । जैसे एक, बहु विषय संबंधी अठाईस भेद भए । जैसे ही बहुविध आदि भेदनि विषे अठाईस-अठाईस भेद हो हैं । सब कीं मिलाएं बारह विषयनि विषे मतिज्ञान के तीन सैं छत्तीस (३३६) भेद हो है । जो एक विषय विषे अठाईस मतिज्ञान के भेद होइ तौ बारह विषयनि

आगे श्रुतज्ञान के अक्षरात्मक अनक्षरात्मक भेदनि कौ दिखावै है—

लोगाणमसंख्यमिदा, अणवखरणे हवन्ति छट्ठाणा ।

वेरुवछट्ठवगपमाणं रूऊणमखरणं ॥३१६॥

लोकानामसंख्यमितानि, अनक्षरात्मके भवन्ति षट्स्थानानि ।

द्विरूपषष्ठवर्गप्रमाणं रूपोनमखरणं ॥३१६॥

टीका — अनक्षरात्मक श्रुतज्ञान के भेद पर्याय अर पर्यायसमास, तीहि विषे जघन्य सौ लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत असख्यात लोक प्रमाण ज्ञान के भेद हो है । ते भेद असख्यात लोक बार षट्स्थानपतित वृद्धि कौ लीए है । वहुनि अक्षरात्मक श्रुतज्ञान है, सो द्विरूप वर्गधारा विषे जो एकट्ठी नामा छठा स्थानक कह्या, तामै एक घटाएं, जो प्रमाण रहै, तितने अपुनरुक्त अक्षर है । तिनकी अपेक्षा सख्यात भेद लीएं है । विवक्षित अर्थ कौ प्रकट करने निमित्त बार बार जिन अक्षरनि कौ कहिए; अैसे पुनरुक्त अक्षरनि का प्रमाण अधिक संभवै है । सो कथन आगे होइगा ।

आगे श्रुतज्ञान का अन्य प्रकार करि भेद कहने के निमित्त दोय गाथा कहै है —

पञ्जायकखरणपदसंघादं<sup>१</sup> पडिवत्तियाणिजोगं च ।

दुगवारपाहुडं च य, पाहुडयं वत्थुपुव्वं च ॥३१७॥

तेसिं च समासेहि य, बीसविहं वा हु होदि सुदणाणं ।

आवरणस्स वि भेदा, तत्तियमेत्ता हवन्ति त्ति ॥३१८॥<sup>२</sup>

पर्यायक्षरपदसंघातं प्रतिपत्तिकानुयोगं च ।

द्विकवारप्राभृतं च, च प्राभृतकं वस्तु पूर्व च ॥३१७॥

तेषां च समासेश्च, विंशविधं वा हि भवति श्रुतज्ञानम् ।

आवरणस्यापि भेदाः, तावन्मात्रा भवन्ति इति ॥३१८॥

टीका — १. पर्याय, २. अक्षर, ३. पद, ४. संघात, ५. प्रतिपत्तिक, ६. अनु-योग, ७. प्राभृत-प्राभृत, ८. प्राभृत, ९. वस्तु, १०. पूर्व दश तौ ए कहे ।

१ पट्खडागम — धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २१ की टीका ।

२ पट्खडागम — धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २१ की टीका ।

ते पर्याय आदिक दश भेद कहे, तिनके समासनि करि दश भेद भए, मिलि-  
करि श्रुतज्ञान के बीस भेद भए । ते कहिए है — १. पर्याय, २. पर्यायसमास,  
३. अक्षर, ४. अक्षरसमास, ५. पद, ६. पदसमास, ७. सघात, ८. संघातसमास,  
९. प्रतिपत्तिक, १०. प्रतिपत्तिकसमास, ११. अनुयोग, १२. अनुयोगसमास,  
१३. प्राभृतक-प्राभृतक, १४. प्राभृतक-प्राभृतकसमास, १५. प्राभृत, १६. प्राभृत-  
समास, १७. वस्तु, १८. वस्तुसमास, १९. पूर्व २०. पूर्वसमास औसैं बीस भेद है ।

इहां अक्षरादि गोचर जो अर्थ, ताके जाननेरूप जो भाव श्रुतज्ञान, ताकी  
मुख्यता जाननी । बहुरि जातै श्रुतज्ञानावरण के भी तितने ही बीस भेद है; तातैं  
श्रुतज्ञान के भी बीस भेद ही कहे हैं ।

आगे पर्याय नामा प्रथम श्रुतज्ञान का भेद, ताका निरूपण के अर्थ च्यारि  
गाथा कहै है—

नवरि विसेसं जाणो, सुहमजहणं तु पज्जयं जाणं ।  
पज्जायावरणं पुण, तदणंतरणाणभेदं हि ॥३१६॥

नवरि विशेषं जानीहि, सूक्ष्मजघन्यं तु पर्यायं ज्ञानम् ।  
पर्यायावरणं पुनः, तदनंतरज्ञानभेदे ॥३१९॥

टीका — यहु नवीन विशेष जानहु, जो पर्याय नामा प्रथम श्रुतज्ञान का भेद, सो  
सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्त संबंधी सर्व ते जघन्य श्रुतज्ञान जानना । बहुरि पर्याय  
श्रुतज्ञान का आवरण, सो पर्याय श्रुतज्ञान को नाही आवरै है । वाके अनतरि  
जो पर्याय ज्ञान ते अनंत भाग वृद्धि लीएं पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद, तीहि विषै  
पर्याय ज्ञान का आवरण है; जातै उदय आया जो पर्याय ज्ञान, आवरणके समय  
प्रबद्ध का उदयरूप निषेक, ताकै सर्वघाती स्पर्धकनि का उदय नाही, सो धय है.  
अर तेई सर्वघाती स्पर्धक, जे अगिले निषेक सबधी सत्ता मे तिष्ठै है, तिनिका उपजम  
है । अर देशघाती स्पर्धकनि का उदय है; सो अैसा पर्याय ज्ञानावरण का क्षयोपजम  
सदा पाइए तातै; पर्याय ज्ञान का आवरण करि पर्याय ज्ञान आवरै नाही । पर्याय-  
समासज्ञान का प्रथमभेद ही आवरै है । जो पर्याय ज्ञान भी आवरै तौ ज्ञान का  
अभाव होइ, ज्ञान गुणका अभाव भए, गुणी (अैसैं) जीव द्रव्य का भी अभाव होइ,  
सो अैसैं होइ नाही; तातै पर्यायज्ञान निरावरण ही है ।

अनुभाग रचना विषे भी स्थापित कीया जो सिद्धराणि का अनन्तवा भाग-  
मात्र श्रुतज्ञानावरण का द्रव्य, जो परमाणूनि का समूह, सो द्रव्य के अनुभाग की क्रम  
तै हानि-वृद्धि करि संयुक्त है । बहुरि नानागुणहानि स्पर्धक वर्गणारूप भेद लीएं है,  
तिस द्रव्य विषे सर्व तै थोरा उदयरूप अनुभाग जाका क्षीण भया, अँसा जो सर्वघाती  
स्पर्धक, तिसही कौ पर्याय ज्ञान का आवरण कह्या है; तितने आवरण का सदा काल  
उदय न होइ, तातै भी पर्याय ज्ञान निरावरण ही है ।

**सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि ।  
हवदि हु सव्वजहण्णं, णिच्चुग्घाडं णिरावरणं ॥३२०॥<sup>१</sup>**

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य जातस्य प्रथमसमये ।  
भवति हि सर्वजघन्यं, नित्योद्धाटं निरावरणम् ॥३२०॥

टीका — सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव का जन्म होतै पहिला समय  
विषे सर्व तै जघन्य शक्ति कौ लीएं पर्याय नामा श्रुतज्ञान हो है, सो निरावरण है ।  
इतने ज्ञान का कबहू आच्छादन न होइ । याहीतै नित्योद्धाटं कहिए सदाकाल  
प्रकट प्रकाशमान है । सो यहु गाथा पूर्वाचार्यनि करि प्रसिद्ध है । इहा अपना कह्या  
व्याख्यान की दृढता के निमित्त उदाहरणरूप लिखी है ।

**सुहमणिगोदअपज्जत्तगेसु सगसंभवेसु भमिऊण ।  
चरिमापुण्णतिवक्काणादिमवक्कट्ठियेव हवे ॥३२१॥**

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकेषु स्वकसंभवेषु भ्रमित्वा ।  
चरमापूर्णत्रिवक्काणां आदिमवक्कस्थिते एव भवेत् ॥३२१॥

टीका — सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव, सो अपने विषे सभवते जे छह  
हजार बारह बार क्षुद्रभव, तिनि विषे भ्रमण करि अत का लब्धि अपर्याप्तकरूप क्षुद्र-  
भव विषे तीन वक्रता लीए, जो विग्रह गति, ताकरि जन्म धर्या होइ, ताके विग्रह  
गति में पहिली वक्रता सबधी समय विषे तिष्ठता जीव ही के सर्व तै जघन्य पर्याय  
नामा श्रुतज्ञान हो है । बहुरि तिसही के स्पर्शन इन्द्रिय सबधी जघन्य मतिज्ञान हो है ।

बहुरि तिसही के अचक्षुदर्शनावरण के क्षयोपशम तै उपज्या जघन्य अचक्षुदर्शन भी हो है । सो इहां बहुत क्षुद्रभवरूप पर्याय के धरने तै उत्पन्न भया बहुत सकलेश, ताके बधने करि आवरण का अति तीव्र अनुभाग का उदय हो है । तातै क्षुद्रभवनि का अंत क्षुद्रभवनि विषै पर्यायज्ञान कह्या है । बहुरि द्वितीयादि समयनि विषै ज्ञान बधता संभवै है; तातै तीनि वक्र विषै प्रथम वक्र का समय ही विषै पर्यायज्ञान कह्या है ।

**सुहमणिगोदअपज्जत्तयस्स जादस्स पढमसमयम्हि ।**

**फासिंदियगदिपुव्वं, सुदणाणं लब्धिअक्खरयं ॥३२२॥<sup>१</sup>**

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तिकस्य जातस्य प्रथमसमये ।

स्पर्शनैन्द्रियमतिपूर्वं श्रुतज्ञानं लब्ध्यक्षरकं ॥३२२॥

टीका — सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तिक जीव के उपजने का पहिला समय विषै सर्व ते जघन्य स्पर्शन इन्द्रिय संबधी मतिज्ञानपूर्वक लब्धि अक्षर है, दूसरा नाम जाका, असा पर्याय ज्ञान हो है । लब्धि कहिए श्रुतज्ञानावरण का क्षयोपशम, वा जानन शक्ति, ताकरि अक्षरं कहिए अविनाशी, सो असा पर्यायज्ञान ही है, जातै इतना क्षयोपशम सदाकाल विद्यमान रहै है ।

आगे दश गाथानि करि पर्यायसमास ज्ञान कौ प्ररूपै है ।

**अवरुवरिम्मि अणंतमसंखं संखं च भागवड्ढीए ।**

**संखमसंखमणंतं, गुणवड्ढी होंति हु कमेण ॥३२३॥<sup>२</sup>**

अवरोपरि अनंतमसंख्यं संख्यं च भागवृद्धयः ।

संख्यमसंख्यमनंतं, गुणवृद्धयो भवन्ति हि क्रमेण ॥३२३॥

टीका — सर्व ते जघन्य पर्याय नामा ज्ञान, ताके ऊपरि आगे अनुक्रम तै आगे कहिए है । तिस परिपाटी करि १. अनंत भागवृद्धि, २. असख्यात भागवृद्धि, ३. संख्यात भागवृद्धि, ४ संख्यात गुणवृद्धि, ५ असख्यात गुणवृद्धि, ६ अनतगुण वृद्धि, ७. ए षट्स्थान पतित वृद्धि हो है ।

१ षट्खडागम — धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका ।

२ षट्खडागम — धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २२ की टीका ।

इहां कोऊ कहै कि सर्व जघन्य ज्ञान कौ अनंत का भाग कैसे संभवै ?

ताका समाधान—जो द्विरूपवर्गधारा विषे अनंतानंत वर्गस्थान भए पीछे, कम तै जीवराशि, पुद्गल राशि, काल समयराशि, श्रेणी आकाशराशि हो है । तिनिके ऊपरि अनंतानंत वर्गस्थान भए सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक सबधी जघन्य ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है । जाका भाग न होइ अैसे ज्ञान शक्ति के अश, तिनिका अैसा परिमाण है । तातै तिनिकी अपेक्षा अनंत का भागहार संभवै है ।

**जीवाणं च य रासी, असंखलोगा वरं खु संखेज्जं ।**

**भागगुणम्हि य कमसो, अवट्ठिदा होति छट्ठाणे ॥३२४॥**

जीवानां च च राशिः असंख्यलोका वरं खलु संख्यातम् ।

भागगुणयोश्च क्रमशः अवस्थिता भवन्ति षट्स्थाने ॥३२४॥

टीका — इहां अनंतभाग आदिक छह स्थानकनि विषे ए छह संदृष्टि अवस्थित कहिए, नियमरूप जाननी । अनंत विषे तौ जीवराशि के सर्व जीवनि का परिमाण सो जानना । असख्यात विषे असंख्यात लोक जो असंख्यात गुणा लोकाकाश के प्रदेश-नि का परिणाम सो जानना । सख्यात विषे उत्कृष्ट संख्यात जो उत्कृष्ट सख्यात का परिणाम सो जानना । सोई तीनो प्रमाण भाग वृद्धि विषे जानना । ये ही गुण-वृद्धि विषे जानना । भागवृद्धि विषे इनि प्रमाणनि का भाग पूर्वस्थान कौ दीएं, जो परिणाम आवै, तितने पूर्वस्थान विषे मिलाए, उत्तरस्थान होइ । गुणवृद्धि विषे इनि प्रमाणनि करि पूर्वस्थान कौ गुण, उत्तरस्थान हो है ।

**उर्वकं च उरकं, पणछस्सत्तंक अट्ठअंकं च ।**

**छव्वड्ढीणं सण्णा, कमसो संदिट्ठकरणट्ठं ॥३२५॥**

उर्वकश्चतुरकः पंचषट्सप्तांकः अष्टांकश्च ।

षड्वृद्धीनां संज्ञा, क्रमशः संदृष्टिकरणार्थम् ॥३२५॥

टीका — बहुरि लघुसदृष्टि करने के निमित्त अनंत भाग वृद्धि आदि छह वृद्धिनि की अन्यसज्ञा सदृष्टि सो कहै है — तहा अनंत भागवृद्धि की उर्वक कहिए उकार उ, असख्यात भागवृद्धि की च्यारि का अक (४), सख्यात भागवृद्धि की पाचका अक (५), सख्यात गुणवृद्धि की छह का अक (६), असंख्यात गुणवृद्धि की

सात का अक (७), अनत गुणवृद्धि की आठ का अक (८), ऐसे ए सहनानी जाननी ।

**अंगुलअसंखभागे, पुण्वगवड्ढीगदे दु परवड्ढी ।**

**एकं वारं होदि हु, पुणो पुणो चरिम उड्ढि ती ॥३२६॥**

**अंगुलासख्यातभागे, पूर्वगवृद्धिगतेतु परवृद्धिः ।**

**एकं वारं भवति हि, पुनः पुनः चरमवृद्धिरिति ॥३२६॥**

टीका — पूर्ववृद्धि जो पहिली पहिली वृद्धि, सो सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण होइ; तब एक एक बार परवृद्धि कहिए पिछली पिछली वृद्धि होइ, ऐसे बार बार अंत की वृद्धि, जो अनतगुण वृद्धि तीहि पर्यंत हो है; ऐसा जानना ।

अब याका अर्थ यत्र द्वार करि दिखाइए है । तहां यत्र विषे अनतभागादिक की उकार आदि सदृष्टि कही थी, सो लिखिए है ।

**पर्याय समास ज्ञान विषे वृद्धि का यंत्र**

उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ७
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ६
उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ५	उ उ ४	उ उ ४	उ उ ८

बहुरि सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण बार की जायगा दोय बार लिखिए है । सो इहा पर्याय नाम श्रुतज्ञान का भेद, ताते अनत भाग वृद्धि लिए पर्याय समास नामा श्रुतज्ञान का प्रथम भेद हो है । बहुरि इस प्रथम भेद तै अनत भागवृद्धि लोए पर्याय समास का दूसरा भेद हो है । ऐसे सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनंत भागवृद्धि होइ, तब एक बार असख्यात भागवृद्धि होइ । इहा अनत भाग-वृद्धि पहिलै कही थी, ताते पूर्व कहिए । अर असख्यात भागवृद्धि वाके पीछे कही थी, ताते याकौ पर कहिए । सो इहा यत्र विषे प्रथम पक्ति का प्रथम कोष्ठ विषे दोय बार उकार लिखा, सो तो सूच्यंगुल का असख्यातवा भाग प्रमाण अनत भाग-

वृद्धि की सहनानी जाननी । अर ताके आगे च्यारि का अक लिख्या, सो एक बार असंख्यात भागवृद्धि की सहनानी जाननी । बहुरि इहा तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि भए पीछे दूसरा एक बार असंख्यात भागवृद्धि होइ । अैसे ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण असंख्यात भागवृद्धि हो है । ताते यत्र विषे प्रथम पक्ति का दूसरा कोठा विषे प्रथम कोठावत् दोय उकार, एक च्यारि का अक लिख्या । दूसरी बार लिखने तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग बार जानि लेना ।

बहुरि इहा तै आगे सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, तब एक बार संख्यात भागवृद्धि होइ । याते प्रथम पंक्ति का तीसरा कोठा विषे दोय उकार अर एक पाच का अक लिख्या । अब इहा तै जैसे पूर्वे अनत भागवृद्धि लीए, सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण असंख्यात भागवृद्धि होइ; पीछे सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, तब एक बार संख्यात भागवृद्धि भई, तैसे ही याही अनुक्रम तै दूसरा संख्यात भागवृद्धि भई । बहुरि याही अनुक्रम तै तीसरा भई, अैसे संख्यात भागवृद्धि भी सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण बार हो है । ताते इहां यत्र विषे प्रथम पक्ति विषे जैसे तीन कोठे किये थे, तैसे अगुल का असंख्यातवा भाग की सहनानी के अर्थि दूसरा तीन कोठे उस ही पंक्ति विषे कीए । इहा असंख्यात भागवृद्धि कौ पूर्व कहिए, संख्यात भागवृद्धि कौ पर कहिए । बहुरि इहा तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि होइ, एक बार असंख्यात भागवृद्धि होइ' अैसे सूच्यगुल का असंख्यातवा भागप्रमाण असंख्यात भागवृद्धि होइ, सो याकी सहनानी के अर्थि यत्र विषे दोय उकार अर च्यारि का अक करि सयुक्त दोय कोठे कीए । बहुरि याते आगे सूच्यगुल का असंख्यातवा भागप्रमाण अनत भागवृद्धि होइ करि एक बार संख्यात गुणवृद्धि होइ; सो याकी सहनानी के अर्थि प्रथम पक्ति का नवमा कोठा विषे दोय उकार अर छह का अक लिख्या । बहुरि जैसे प्रथम पक्ति विषे अनुक्रम कह्या, तैसे ही आदि तै लेकरि सर्व अनुक्रम दूसरा भया । तब एक बार दूसरा संख्यात गुणवृद्धि भई । अैसे ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण संख्यात गुणवृद्धि हो है; सो सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण तैसे होने की सहनानी के अर्थि यत्र विषे जैसी प्रथम पक्ति थो, तैसे ही वाके नीचे दूसरी पक्ति लिखी । बहुरि इहां तै जैसे प्रथम पक्ति विषे अनुक्रम कह्या था, तैसे अनुक्रम तै बहुरि वृद्धि भई । विशेष इतना जो उहा पीछे ही पीछे एक बार संख्यात



गुणवृद्धि भई थी, इहा पीछै ही पीछै एक बार असख्यात गुणवृद्धि भई । याही तै यत्र विषै तीसरी पंक्ति प्रथम पंक्ति सारिखी लिखी । नवमा कोठा मै उहा तौ दोय उकार अर छह का अंक लिख्या था, इहा तीसरी पक्ति विषै नवमा कोठा विषै दोय उकार अर सप्त का अंक लिख्या । इहा और सर्व कहिए अर असंख्यात गुणवृद्धि पर कहिए । बहुरि इहातै जैसे तीनो ही पक्ति विषै आदि तै लेकर अनुक्रम तै वृद्धि भई, तैसे ही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण होइ । तब असख्यात गुणवृद्धि भी सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण होइ निवरै, सो इहां यंत्र विषै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण तैसे ही होने की सहनानी के अर्थि जैसे तीन पक्ति करी थी, तैसे ही दूसरी पक्ति लिखी, अैसे छह पक्ति भई ।

अब इहां तै आगे जैसे आदि तै लेकर अनुक्रम तै तीनों पक्ति विषै वृद्धि कही थी, तैसे ही तैसे अनुक्रम तै फेरि सर्ववृद्धि भई । विशेष इतना जो तीसरी पंक्ति का अत विषै जहा असख्यात गुणवृद्धि कही थी, सो इहा तीसरी पंक्ति का अत विषै एक बार अनत गुणवृद्धि हो है । याही तै यत्र विषै भी पहिली, दूसरी, तीसरी सारिखी तीन पक्ति और लिखी । उहा तीसरी पंक्ति का नवमा कोठा विषै दोय उकार सप्त का अंक लिख्या था । इहा तीसरी पक्ति का नवमा कोठा विषै दोय उकार अर आठ का अंक लिख्या, सो इहा अनत गुणवृद्धि कौ पर कहिए; अन्य सर्व पूर्व कहिए । याके आगे कोई वृद्धि रही नाही, ताते याकौ पूर्व सज्ञा न होइ, याही तै यहु अनत गुणवृद्धि एक बार ही हो है । सो इस अनत गुणवृद्धि कौ होत सतै जो प्रमाण भया, सोई नवीन षट्स्थानपतित वृद्धि का पहिला स्थानक जानना । अैसे पर्यायसमास ज्ञान विषै असख्यात लोक मात्र बार षट्स्थानपतित वृद्धि हो है ।

अब याका कथन प्रकट कर दिखाइए है—द्विरूप वर्गधारा विषै जीवराशि तै अनतानत गुणां जघन्य पर्याय नामा ज्ञान की अपेक्षा अपने विषय कौ प्रकाशनेरूप शक्ति के अविभाग प्रतिच्छेद कहे है, सो इस प्रमाण कौ जीवराशि प्रमाण अनत का भाग दीए जो परिमाण आवै, ताकौ उस जघन्य ज्ञान विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद हो है । इहा एक बार अनत भागवृद्धि भई । बहुरि इस पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद कौ जीवराशि प्रमाण अनत का भाग दिए, जो परिमाण आवै, तितना उस पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का दूसरा भेद हो है । इहा दूसरा अनत भागवृद्धि भई । बहुरि उस दूसरे भेद कौ

अनत का भाग दीए, जो परिमाण आवै, तितना उस दूसरा भेद विषै मिलाएं, पर्यायसमास ज्ञान का तीसरा भेद हो है । इहा तीसरा अनंत भागवृद्धि भई । बहुरि उस तीसरे भेद को अनत का भाग दीए जो परिमाण आया, तितना उस तीसरा भेद विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का चौथा भेद हो है । इहा चौथा अनंत भागवृद्धि भई । इसही अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि हुवा थका पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ एक बार असंख्यात लोक प्रमाण जो असंख्यात, ताका भाग दिएं जो परिमाण आवै, तितना उस ही भेद विषै मिलाएं, एक बार असंख्यात भागवृद्धि लीए पर्यायसमास ज्ञान का भेद हो है । बहुरि याकौ अनंत का भाग दीएं, जो परिमाण आवै, तितना इस ही विषै मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया । इहा तै बहुरि अनत भागवृद्धि का प्रारम्भ हुवा, सो अैसे ही सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि भए जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ फेरि असंख्यात का भाग दीए जो परिमाण आया, ताकौ उस ही भेद विषै मिलाएं, दूसरा असंख्यात भागवृद्धि लीए पर्यायसमास ज्ञान का भेद हो है ।

अैसे अनुक्रम तै सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण असंख्यात भागवृद्धि भी पूर्ण होइ । तहा जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया । ताकौ बहुरि अनत का भाग दीए, जो परिमाण भया, ताकौ तिस ही मे मिलाए, पर्यायसमास ज्ञान का भेद होइ । तब इहा अनत भागवृद्धि का प्रारम्भ हुवा, सो सूच्यगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनत भागवृद्धि पूर्ण होइ, तब जो पर्यायसमास ज्ञान का भेद भया, ताकौ उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीए, जो परिमाण होइ, ताकौ उस ही विषै मिलाएं, पहिले संख्यात भागवृद्धि लीए, पर्यायसमास का भेद हो है । यातै आगे फेरि अनत भागवृद्धि का प्रारम्भ हुवा सो अैसे ही पूर्वे यत्रद्वार करि जो अनुक्रम कह्या है, तिस अनुक्रम के अनुसारि वृद्धि जानि लेनी । इतना जानि लेना; जिस भेद तै आगे अनत भागवृद्धि होइ, तहां तिस ही भेद कौ जीवराशि प्रमाण अनत का भाग दीए, जो परिणाम आवै तितना तिस ही भेद विषै मिलाएं उस तै अनंतरवर्ती भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे असंख्यात भागवृद्धि होइ, तहां तिस ही भेद कौ असंख्यात लोक प्रमाण असंख्यात का भाग दीए, जो परिमाण आवै, ताकौ तिस ही भेद विषै मिलाए, उस भेद तै अनंतरवर्ती भेद हो है । बहुरि जिस भेद तै आगे असंख्यात भागवृद्धि होइ, तहा तिस ही भेद कौ उत्कृष्ट संख्यात प्रमाण संख्यात का भाग दीएं जो परिमाण आवै, तितना तिस ही भेद विषै मिलाएं, उस भेद तै आगिला भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे

संख्यात गुणवृद्धि होइ, तहां तिस भेद कौ उत्कृष्ट संख्यात करि गुणिए, तब उस भेद तै अनंतरवर्ती भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे असंख्यात गुणवृद्धि होइ, तहां तिस ही भेद को असंख्यातलोक करि गुणिए, तब उस भेद तै आगिला भेद होइ । बहुरि जिस भेद तै आगे अनंत गुणवृद्धि होइ, तहां तिस ही भेद कौ जीवराशि का प्रमाण अनंत करि गुणिए, तब तिस भेद तै आगिला भेद होइ । अैसे षट्स्थानपतित वृद्धि का अनुक्रम जानना ।

इहा जो संख्या कही है, सो सर्व संख्या ज्ञान का अविभाग प्रतिच्छेदनि की जाननी । अरु जो इहां भेद कहे है, तिनका भावार्थ यहु है — जो जीव कैं कैं तौ पर्याय ज्ञान ही होइ और उसतै बधती ज्ञान होइ तौ पर्यायसमास का प्रथम भेद ही होय; अैसा नाही कि पर्यायज्ञान तै एक, दोय आदि अविभाग प्रतिच्छेद बधता भी किसी जीव के ज्ञान होइ अरु उस पर्यायसमास के प्रथम भेद तै बधता ज्ञान होइ तौ पर्यायसमास ज्ञान का दूसरा भेद ही होइ । अैसे अन्यत्र भी जानना ।

अब इहां अनंत भागवृद्धिरूप सूच्यंगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण स्थान कहे, तिनिका जघन्य स्थान तै लगाइ, उत्कृष्ट स्थान पर्यंत स्थापन का विधान कहिए है ।

तहा प्रथम सज्ञा कहिए है — विवक्षित मूलस्थान कौ विवक्षित भागहार का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, ताकौ प्रक्षेपक कहिए । तिस प्रमाण कौ तिस ही भागहार का भाग दीए जो प्रमाण आवै, ताकौ प्रक्षेपकप्रक्षेपक कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ पिशुलि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै ताकौ पिशुलिपिशुलि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दिये, जो प्रमाण आवै, ताकौ चूर्णि कहिए । ताकौ भी विवक्षित भागहार का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, ताकौ चूर्णिचूर्णि कहिए । अैसे ही पूर्व प्रमाण कौ विवक्षित भागहार का भाग दीएं द्वितीयादि चूर्णिचूर्णि कहिए ।

अब इहां दृष्टांतरूप अंक संदृष्टि करि प्रथम कथन दिखाइए है — विवक्षित जघन्य पर्यायज्ञान का प्रमाण, पैसठि हजार पांच सै छत्तीस (६५५३६) । विवक्षित भागहार अनंत का प्रमाण च्यारि (४), तहा पूर्वोक्त क्रम तै भागहार का भाग दीए, प्रक्षेपक का प्रमाण सोलह हजार तीन सौ चौरासी (१६३८४) । प्रक्षेपकप्रक्षेपक का प्रमाण च्यारि हजार छिनवै (४०६६) । पिशुलिका प्रमाण एक हजार चौईस

(१०२४) । पिशुलिपिशुलि का प्रमाण दोय सै छप्पन (२५६) । चूर्णि का प्रमाण चौसठि (६४) । चूर्णिचूर्णि का प्रमाण सोलह (१६) अैसे द्वितीयादि चूर्णि-चूर्णि का प्रमाण च्यारि आदि जानने ।

अब इहा ऊपरि जघन्य ६५५३६ स्थापि, नीचै एक बार प्रक्षेपक १६३८४ स्थापि, जोडै, पर्यायसमास के प्रथम भेद का इक्यासी हजार नवसै बीस (८१६२०) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य (६५५३६) स्थापि, नीचै दोय प्रक्षेपक (१६३८४। १६३८४) एक प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापि, जोडै पर्यायसमास के द्वितीय भेद का एक लाख दोय हजार च्यारि सै (१०२४००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य ६५५३६ स्थापि, नीचै तीन प्रक्षेपक (१६३८४। १६३८४। १६३८४) तीन प्रक्षेपकप्रक्षेपक एक पिशुलि स्थापि, जोडै, तीसरे भेद का एक लाख अठार्हस हजार (१२८०००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै च्यारि प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपकप्रक्षेपक, च्यारि पिशुलि, एक पिशुलिपिशुलि स्थापि, जोडै, चौथे भेद का एक लाख साठि हजार (१६००००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै पाच प्रक्षेपक दश प्रक्षेपकप्रक्षेपक, दश पिशुलि पाच पिशुलिपिशुलि, एक चूर्णि स्थापि, जोडै, पाचवे भेद का दोय लाख (२,०००००) प्रमाण हो है ।

बहुरि ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचै नीचै छह प्रक्षेपक, पंचदश प्रक्षेपक प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पद्रह पिशुलिपिशुलि, छह चूर्णि, एक चूर्णिचूर्णि स्थापि, जोडै, छठे स्थान का दोय लाख पचास हजार (२५००००) प्रमाण हो है । अैसे ही क्रम तै सर्व स्थाननि विषे ऊपरि तौ जघन्य स्थापन करना । ताके नीचै नीचै जितना गच्छ का प्रमाण तितने प्रक्षेपक स्थापन करने । इहां जेथवा स्थान होइ, तिस स्थान विषे तितना गच्छ जानना । जैसे छठा स्थान विषे गच्छ का प्रमाण छह होइ । बहुरि तिनके नीचे एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । बहुरि तिनके नीचे दोय घाटि गच्छ का दोय बार संकलन धन का जेता प्रमाण, तितने पिशुलि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचे तीन घाटि

गच्छ का तीन बार संकलन धन का जेता प्रमाण, तितने पिशुलिपिशुलि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचें च्यारि घाटि गच्छ का च्यारि बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने चूर्णि स्थापन करने । बहुरि तिनके नीचें पाच घाटि गच्छ का पांच बार सकलन धन का जेता प्रमाण, तितने चूर्णिचूर्णि स्थापन करने । अैसे ही नीचें नीचें छह आदि घाटि गच्छ का छह आदि बार संकलन धन का जेता जेता प्रमाण, तितने तितने द्वितीयादि चूर्णिचूर्णि स्थापन करने । अैसे स्थापन करि, जोड़ें, पर्याय-समास ज्ञान के भेद विषे प्रमाण आवै है ।

अब इहां एक बार दोय बार आदि संकलन धन कहे, तिनिका स्वरूप इहां ही आगे वर्णन करैगे । अैसे अकसदृष्टि करि वर्णन कीया । अब यथार्थ वर्णन करिए है—

पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषे पर्यायज्ञान तें जितने बधे तितने जुदे कीएं, पर्यायज्ञान के जेते अविभाग प्रतिच्छेद है, तीहि प्रमाण मूल विवक्षित जानना । यहु जघन्य ज्ञान है । तातें इस प्रमाण का नाम जघन्य स्थाप्या । बहुरि इस जघन्य कौ जीवराशि मात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताका नाम प्रक्षेपक जानना । इस प्रक्षेपक कौ जीवराशि मात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, सो प्रक्षेपकप्रक्षेपक जानना । अैसे ही क्रम तें जीवराशि मात्र अनंत का भाग दीएं, जो जो प्रमाण आवै, सो सो क्रम तें पिशुलि अर पिशुलिपिशुलि अर चूर्णि अर चूर्णिचूर्णि अर द्वितीय चूर्णिचूर्णि आदि जानने । सो पर्यायसमास ज्ञान का प्रथम भेद विषे ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचें ताकी वृद्धि का एक प्रक्षेपक स्थापना । बहुरि दूसरा भेद विषे ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचें नीचें ताकी वृद्धि के दोय प्रक्षेपक, एक प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । बहुरि तीसरा भेद विषे ऊपरि जघन्य स्थापि, नीचें नीचें ताकी वृद्धि के तीन प्रक्षेपक, तीन प्रक्षेपकप्रक्षेपक, एक पिशुलि स्थापने । बहुरि चौथा भेद विषे जघन्य ऊपरि स्थापि, ताके नीचें नीचें ताके वृद्धि के च्यारि प्रक्षेपक, छह प्रक्षेपकप्रक्षेपक, च्यारि पिशुलि, एक पिशुलिपिशुलि स्थापने । बहुरि पाचवा भेद विषे जघन्य ऊपरि स्थापि, ताके नीचें नीचें पाच प्रक्षेपक, दश प्रक्षेपक-प्रक्षेपक, दश पिशुलि, पांच पिशुलिपिशुलि, एक चूर्णि स्थापने । बहुरि छठा भेद विषे ऊपरि जघन्य स्थापि, ताके नीचें नीचें ताकी वृद्धि के छह प्रक्षेपक, पद्रह प्रक्षेपक प्रक्षेपक, बीस पिशुलि, पद्रह पिशुलिपिशुलि, छह चूर्णि, एक चूर्णिचूर्णि स्थापने । अैसे ही सूच्यंगुल का असख्यातवां भागमात्र जे अनंत भागवृद्धि सयुक्त पर्यायसमास ज्ञान के स्थान, तिनि विषे अपने - अपने जघन्य के नीचें नीचें प्रक्षेपक गच्छमात्र

स्थापने । प्रक्षेपकप्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक बार संकलन धनमात्र स्थापने । पिशुलि नोय घाटि गच्छ का, दोय बार सकलन धनमात्र स्थापने । पिशुलिपिशुलि तीन घाटि गच्छ का, तीन बार सकलन धनमात्र स्थापने । चूर्णि च्यारि घाटि गच्छ का च्यारि बार सकलन धनमात्र स्थापने । चूर्णिचूर्णि पांच घाटि गच्छ का, पांच बार संकलन धनमात्र स्थापने । अैसे ही क्रम तै एक एक घाटि गच्छ का एक एक अधिक बार सकलन मात्र चूर्णिचूर्णि ही अंत पर्यंत जानने । तहां अनंत भागवृद्धि युक्त स्थाननि विषे अंत का जो स्थान, तीहि विषे जघन्य तौ ऊपरि स्थापना । ताके नीचै नीचै सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण प्रक्षेपक स्थापने । एक घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का एक बार सकलन धनमात्र प्रक्षेपकप्रक्षेपक स्थापने । दोय घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का दोय बार सकलन धनमात्र पिशुलि स्थापने । तीन घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का तीन बार संकलन धनमात्र पिशुलिपिशुलि स्थापने । च्यारि घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का, च्यारि बार सकलन धनमात्र चूर्णि स्थापने । पांच घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का पांच बार संकलन धनमात्र चूर्णिचूर्णि स्थापने । याही प्रकार नीचै नीचै चूर्णिचूर्णि छह आदि घाटि, सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का छह आदि बार सकलन धनमात्र स्थापने । तहां द्विचरम चूर्णिचूर्णि दोय का दोय घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग बार सकलन धनमात्र स्थापन करने । बहुरि अत का चूर्णिचूर्णि एक का एक घाटि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग बार संकलन धनमात्र स्थापन करना । परमार्थ तै, अत चूर्णिचूर्णि का सकलन धन नाही है; जातै द्वितीयादि स्थान का अभाव है । याही जायगा (एक ही जायगा) अत चूर्णिचूर्णि का स्थापन करना । अैसे वृद्धि का अनुक्रम जानना । बहुरि इहा षट्स्थान प्रकरण विषे अनंत भागवृद्धि युक्त स्थाननि के कहे जे भेद, तिनि विषे सर्वत्र प्रक्षेपक तो गच्छमात्र है, जेथवा भेद होइ तितने तहा प्रक्षेपक स्थापने; तातै सुगम है ।

बहुरि प्रक्षेपकप्रक्षेपक आदिकनि का प्रमाण एक बार, दोय बार आदि संकलन धन का विधान जाने बिना जान्या न जाय, तातै सो सकलन धन का विधान कहिए है —

जितने का सकलन धन कह्या होय, तितनी जायगा अैसे अक स्थापि, जोडने । जैसे छठा स्थान विषे दोय घाटि गच्छ का संकलन धन कह्या, तहां च्यारि जायगा या प्रकार अक स्थापि, जोडने । कैसे अक स्थापि जोडिये ? सो कहिये है — जितने का

करना होय, तितनी जायगा एक आदि एक एक बधता अंक माडि, जोडै, एक बार संकलन धन हो है । बहुरि एक बार संकलन धन विधान विषै जो पहिलै अंक लिख्या था, सोई इहां दोय बार संकलन विषै पहिलै लिखिए । अर उहा एक बार सकलन का दूसरा स्थान विषै जो अक था, ताकौ याका पहिला स्थान विषै जोडै, जो प्रमाण होइ, सो दूसरा स्थान विषै लिखिये । अर उहां तीसरा स्थान विषै जो अंक था, ताकौ याका दूसरा स्थान विषै जोडै; जो होइ, सो तीसरा स्थान विषै लिखिये । अैसे क्रमतै लिखि, जोडै, दोय बार सकलन धन हो है । बहुरि इस दोय बार सकलन धन विषै जो पहिले अंक लिख्या, सोई इहां लिखिये । अर इस प्रथम स्थान में दोय बार सकलन का दूसरा स्थान का अक जोडै, दूसरा स्थान होइ । यामै वाका तीसरे स्थान का अक जोडै, याका तीसरा स्थान होइ । अैसे क्रम तै जितने का करना होइ, तितना जायगा लिखि जोडै । तीन बार सकलन धन होइ । याही प्रकार च्यारि बार आदि संकलन धनका विधान जानना ।

इहां उदाहरण कहिये है । जैसे पर्यायसमास का छठा भेद विषै पांच का एक बार संकलन (धन) करना । तहा पाच जायगा क्रम तै एक, दोय, तीन, च्यारि, पांच का अक माडि, जोडै, पंद्रह होइ । सो इतने प्रक्षेपकप्रक्षेपक जानना । बहुरि च्यारि का दोय बार सकलन (धन) करना । तहां च्यारि जायगा क्रम तै एक, तीन, छह, दश माडि जो वीस होइ, सो इतने इतने पिशुलि जानने । बहुरि तीन का तीन बार संकलन (धन) करना तहां तीन जायगा क्रम तै एक, च्यारि, दश माडि जोडै, पंद्रह होइ; सो इतने पिशुलिपिशुलि जानने । बहुरि दोय का च्यारि बार सकलन करना । तहां दोय जायगा एक, पांच, माडि जोडै, छह होइ । सो इतने चूर्णि जानने । बहुरि एक का पाच जायगा सकलन (धन) करना तहा एक जायगा एक ही है, तातै ये चूर्णिचूर्णि एक ही जानना । अैसे ही अन्यत्र भी जानना । अब अैसे ये अंक माडि जोडै, एक बार सकलनादि विषै जो प्रमाण होइ, ताके ल्यावने कौ करणसूत्र कहिये है ।

व्येकपदोत्तरघातः सरूपवारोद्धृतो मुखेन युतः ।

रूपाधिकवारांताप्तपदाद्यंकैर्हतो वित्तं ॥१॥

जितने का संकलन धन करना होइ, तिस प्रमाण इहा गच्छ जानना । तामै एक घटाइ, अवशेष कौ उत्तर जो क्रम तै जितनी जितनी बार बधता संकलन कह्या

होइ, ताकरि गुणिए, जो प्रमाण होइ, ताकौ जितनी बार संकलन कह्या, तामे एक जोडि, जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीजिए, जो लब्ध होइ, तामे मुख जो पहिला स्थान का प्रमाण सो जोड़िए; जो प्रमाण होइ, ताकौ जितनी बार सकलन कह्या होइ, तितनी जायगा गच्छ तै लगाइ, एक एक बधता अक मांडि, परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, सो तौ भाज्य । अर एक तै लगाइ एक एक बधता अंक मांडि, परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, सो भागहार । तहां भाज्य कौ भागहार का भाग दीएं, जो लब्धराशि होइ, ताकरि गुणिए, अैसे करतै समस्त विवक्षित बार सकलन धन आवै है ।

इहां उदाहरण कहिए है — जैसे छठा पर्यायसमास का भेद विषै च्यारि घाटि गच्छ का जो दोय, ताका च्यारि बार सकलन धनमात्र चूर्ण कहिए । सो इहां गच्छ दोय, तामे एक घटाएं, एक याकौ एक बारादि सकलन धन रचना अपेक्षा दोय वार आदि संकलन की रचना उपजै है । सो एक एक बार बधता संकलन भया, तातै उत्तर का प्रमाण एक, ताकरि गुणै भी एक ही भया । याकौ इहां च्यारि बार संकलन कह्या, सो च्यारि में एक मिलाए, पाच भया, तिनिका भाग दीए एक का पांचवां भाग भया । यामे मुख जो आदिका प्रमाण एक सो समच्छेद करि मिलाएं, छह का पांचवां भाग भया । बहुरि इहां च्यारि बार कह्या है । सो तामे एक आदि एक एक बधता, च्यारि पर्यंत अंक मांडि (१।२।३।४) परस्पर गुणै, चौबीस (२४) भये; सो भागहार, अर गच्छ दोय का प्रमाण तै लगाइ एक एक बधता अक मांडि, (२।३।४।५) परस्पर गुणै एक सौ बीस (१२०) भाज्य, सो भाज्य कौ भागहार का भाग दीये, लब्धराशि पांच, ताकरि पूर्वोक्त छह का पांचवां भाग कौ गुणै छह भये । सोई दोय का च्यारि बार सकलन धन जानना । अैसे ही तीन का तीन बार संकलन धन पीछै गच्छ तीन, एक घटाये दोय उत्तर, एक करि गुणै भी दोय, इहा तीन वार सकलन है । तातै एक अधिक बार प्रमाण च्यारि, ताका भाग दीये आधा, यामे मुख एक जोडै ड्योढ भया । बहुरि एक आदि बार प्रमाण पर्यंत एक एक अधिक अक (१।२।३) परस्पर गुणै, भागहार छह अर गच्छ आदि एक एक अधिक अक (३।४।५) परस्पर गुणै, भाज्य साठि भाज्य कौ भागहार का भाग दीए, पाये दश, इनिकरि पूर्वोक्त ड्योढ कौ गुणै, छठा भेद विषै तीन घाटि गच्छ का तीन बार संकलन धनमात्र पिशुलिपिशुलि पद्वह हो है । अैसे सर्वत्र विवक्षित सकलन धन ल्यावने ।

बहुरि संस्कृत टीकाकार केशववर्णी अपने अभिप्राय करि तिनि प्रक्षेपक प्रक्षेपकादिक का प्रमाण ल्यावने निमित्त दोय गाथारूप करण सूत्र कहै है —



तिरियपदे रूऊणे, तदिदृठहेट्टिलसंकलगवारा ।

कोट्टुधणस्साणयणे, पभवं इदं ठूणउड्डपदसंखा ॥१॥

अनंत भागवृद्धि युक्त स्थाननि विषे जेथवां स्थान विवक्षित होइ, तीहि प्रमाण तिर्यग् गच्छ कहिये । तामै एक घटाए, ताके नीचै सकलन बार का प्रमाण हो है ।

इहां उदाहरण — जैसे छठा स्थान विषे गच्छ का प्रमाण छह में एक घटाएं, ताके नीचै पांच संकलन बार हो है । प्रक्षेपक सम्बन्धी कोठा के नीचै एक बार, दोय बार, तीन, च्यारि बार, पांच बार, संकलन, प्रक्षेपकप्रक्षेपक आदि के एक एक कोठानि विषे संभवै है; जैसे ही अन्यत्र जानना । बहुरि विवक्षित कोठानि का सकलन घन ल्यावने के अर्थि जेथवां भेद होइ, तीहि प्रमाण जो ऊर्ध्व गच्छ, तीहि विषे जेती बार विवक्षित संकलन होइ, तितना घटायें, अवशेष मात्र प्रभव कहिये आदि जानना ।

तत्तोरुवहियकमे, गुणगारा होंति उड्डगच्छो त्ति ।

इगिरुवमादिरुवोत्तरहारा होंति पभवो त्ति ॥२॥

अर्थ — तिस आदि तै लगाइ, एक-एक बधता ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण पर्यंत, अनुक्रम करि विवक्षित के गुणकार होंहि । बहुरि तिनिके नीचै एक तै लगाइ, एक एक बधता, उलटा क्रम करि प्रभव जो आदि, ताका भी नीचा पर्यंत तिनिके भागहार होंहि । गुणकारनि कौ परस्पर गुणों, जो प्रमाण होइ, ताका भागहारनि कौ परस्पर गुणों, जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीए, जेता प्रमाण आवै, तितने तहा प्रक्षेपक—प्रक्षेपक आदि संबंधी कोठा विषे वृद्धि का प्रमाण आवै है ।

इहां उदाहरण कहिए है — अनंत भागवृद्धि युक्त स्थान विषे विवक्षित छठा स्थान विषे एक घाटि तिर्यग्गच्छ प्रमाण एक बार आदि पांच संकलन स्थान है । तिति विषे च्यारि बार संकलन? संबंधी कोठानि विषे प्रमाण ल्याइए है । विवक्षित संकलन बार च्यारि, तिनिका इहां छठा भेद विवक्षित है । तातै ऊर्ध्वगच्छ छह, तामै घटाएं, अवशेष दोय रहे; सो आदि जानना । इस आदि दोय तै लगाइ, एक एक अधिक ऊर्ध्वगच्छ छह पर्यंत तौ क्रम करि गुणकार होइ । अर तिनके नीचै उलटे क्रम करि आदि पर्यंत एक आदि एक एक अधिक भागहार होइ; सो इहा च्यारि बार

सकलन का कोठा विषै चूर्णि है । चूर्णि का प्रमाण जघन्य का पांच बार अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो तितना है । तिस प्रमाण के दोय, तीन, च्यारि, पांच, छह तौ क्रम तै गुणकार होइ; अर पांच, च्यारि, तीन, दोय, एक भागहार होइ । तहा गुणकारनि करि चूर्णि कौ गुणै भागहारनि का भाग दीए, यथायोग्य अपवर्तन कीए, छह गुणां, चूर्णिमात्र तिस कोठा विषै प्रमाण आवै है ।

**भावार्थ —** असा जो दोय, तीन, च्यारि, पांच का गुणकार अर भागहार का तौ अपवर्तन भया । छह कौ एक का भागहार रह्या, तातै छह गुणां चूर्णिमात्र तहा प्रमाण है । बहुरि असे ही अनंत भागवृद्धि युक्त अत भेद विषै यहु स्थान सूच्यगुल का असख्यातवां भाग का जो प्रमाण तेथवां है । तातै तिर्यगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र है । तामे एक घटाए, अवशेष एक बार आदि संकलन के बार है । तिनिविषै विवक्षित च्यारि बार सकलन का कोठा विषै प्रमाण ल्याइए है । विवक्षित संकलन बार च्यारि, ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवां भाग मात्र मै स्यो घटाए, अवशेष मात्र आदि है । यातै एक एक बधता क्रम करि ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग पर्यंत तौ गुणकार होइ । अर उलटे क्रम करि एक आदि एक एक बधता पांच पर्यंत भागहार होइ, सो च्यारि बार संकलन का कोठा विषै चूर्णि है । तातै चूर्णि कौ तिनि गुणकारनि करि गुणै भागहारनि का भाग दीए, लब्धमात्र तिस कोठा विषै वृद्धि का प्रमाण है । इहां गुणकार भागहार समान नाही; तातै अपवर्तन होइ सकता नाही । इहा लब्धराशि का प्रमाण अवधिज्ञान गोचर जानना । बहुरि तिसही अनंत भागवृद्धि युक्त अंत का भेद विषै विवक्षित द्विचरम चूर्णिचूर्णि का दोय घाटि, सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र बार सकलन घन का प्रमाण ल्याइए है । इहा भी तिर्यगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भाग मात्र है । तामे एक घटाएं, एक बार आदि सकलन के बार हो है । तहां विवक्षित सकलन बार दोय घाटि, सूच्यगुल का असख्यातवां भागमात्र, सो ऊर्ध्वगच्छ सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र मै घटाए, अवशेष दोय रहे, सो आदि जानना । इसतै लगाइ एक एक बधता ऊर्ध्वगच्छ पर्यंत गुणकार अनुक्रम करि हो है । अर एक आदि एक एक बधता अपने इष्ट बार का प्रमाण तै एक अधिक पर्यंत उलटे क्रम करि भागहार हो है । इहां दोय आदि एक घाटि सूच्यगुल का असख्यातवा भाग पर्यंत अक गुणकार वा भागहार विषै समान है । तातै तिनि का अपवर्तन कीया । अवशेष सूच्यगुल का असख्यातवां भाग का गुणकार रह्या । एक का भागहार रह्या । इहां इस कोठा

विषै द्विचरम चूर्णिचूर्णि है; ताका प्रमाण जघन्य कौ सूच्यगुल का असंख्यातवा भागमात्र बार भाग दीएं; जो प्रमाण आवै, तितना जानना । याकौ पूर्वोक्त गुण-कार करि गुणै एक का भाग दीएं, तिस कोठा संबधी प्रमाण आवै है । बहुरि अैसे ही अंत का चूर्णिचूर्णि विषै सकलन है ही नाही; जातै अंत का चूर्णिचूर्णि एक ही है । सो जघन्य कौ सूच्यगुल का असंख्यातवां भागमात्र बार अनंत का भाग दीएं अंत चूर्णिचूर्णि का प्रमाण हो है । ताकौ एक करि गुणै भी तितना ही तिस कोठा विषै वृद्धि का प्रमाण जानना । अैसे सूच्यगुल का असंख्यातवां भागमात्र अनंतभाग वृद्धि युक्त स्थान होइ; तब एक असंख्यात भागवृद्धि युक्त स्थान हो है । इहां ऊर्वक जो अनंत भागवृद्धि युक्त अत स्थान, ताकौ चतुरंक जो असंख्यात का भाग दीये, जो एक भाग का प्रमाण आवै, तितना तिस ही पूर्वस्थान विषै जोड़्या, सो इहा जघन्य ज्ञान साधिक कहिये; किछू अधिक भया । अकसंदृष्टि का दृष्टात विषै स्तोक प्रमाण है । तातें जघन्य तौ गुणकार भया । यथार्थ विषै महत् प्रमाण है, तातै अैसे वृद्धि होतै भी साधिकपना ही भया है । अब जैसे जघन्य ज्ञान कौ मूल स्थापि, जैसे अनंत-भागवृद्धिस्थान प्रक्षेपकादि विशेष लीये कहे थे; तैसें इहातै आगे इस साधिक जघन्य कौ मूल स्थापि, अनंत भाग वृद्धि युक्त स्थान सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग मात्र जानने । अैसे ही पूर्वोक्त यन्त्र द्वार करि जैसे अनुक्रम दिखाया, तैसें अनंत गुणवृद्धि पर्यंत क्रम जानना । तहां भाग वृद्धि विषै प्रक्षेपकादिक वृद्धि का विशेष जानना; सो जिस स्थान तै आगे भागवृद्धि होइ; ताकौ मूल स्थापन करना । ताकौ एक बार जिस प्रमाण की भागवृद्धि होइ, ताका एक बार भाग दीए, प्रक्षेपक हो है । दोय बार भाग दिये प्रक्षेपकप्रक्षेपक हो है । तीन बार आदि भाग दीये, पिशुलि आदिक हो है, अैसा विधान जानना । अैसे सर्वत्र षट्स्थान पतित वृद्धि का अनुक्रम जानना ।

**आदिमछट्ठाणह्यि य, पंच य बड्ढी हवन्ति सेसेसु ।**

**छव्वड्ढीओ होंति हु, सरिसा सव्वत्थ पदसंखा ॥३२७॥**

आदिमषट्स्थाने च, पंच च वृद्धयो भवन्ति शेषेषु ।

षड्वृद्धयो भवन्ति हि, सदृशा सर्वत्र पदसंख्या ॥३२७॥

टीका - इस पर्यायसमास ज्ञान विषै असंख्यात लोक मात्र बार पट्स्थान संभवै है । तिनिविषै पहिली बार तो पांच स्थान पतितवृद्धि हो है । जातै जो पीछे हो पीछे अनंतगुण वृद्धिरूप भेद भया, ताकौ दूसरी बार पट्स्थानपतित वृद्धि का

आदि स्थान कहा है । बहुरि जैसे पहिले षट्स्थानपतित वृद्धि का क्रम कहा, ताको पूर्ण करि दूसरा तैसे ही फेरि षट्स्थानपतित वृद्धि होइ अैसे ही तीसरा होइ । इत्यादि असंख्यात लोक वार षट्स्थान हो है । तिनिविषै छहौ वृद्धि पाइये है । अनंत गुण-वृद्धि रूप तौ पहिला ही स्थान होइ । पीछे क्रमतै पाच वृद्धि, अंत की अनंत भाग-वृद्धि पर्यंत होइ । बहुरि जो अनंत भागादिक सर्व वृद्धि कही, तिन सवनि का स्थान प्रमाण सदृश सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग मात्र जानना । तातें जो वृद्धि हो है; सो अंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण वार हो है ।

**छट्ठाणाणं आदी, अट्ठकं होदि चरिसमुव्वकं ।**

**जम्हा जहणणाणं, अट्ठकं होदि जिणदिट्ठं ॥३२८॥**

षट्स्थानानामादिरष्टांकं भवति चरममुर्वकम् ।

यस्माज्जघन्यज्ञानमष्टांकं भवति जिनह(दि)ष्टं ॥३२८॥

टीका — षट्स्थानपतित वृद्धिरूप स्थाननि विषै अष्टांकं कहिये; अनंतगुण-वृद्धि सो आदि है । बहुरि उर्वकं कहिये अनंत भागवृद्धि; सो अतस्थान है ।

भावार्थ — पूर्वे जो यंत्रद्वार करि वृद्धि का विधान कहा, सो सर्व विधान होइ निवरै, तब एक बार षट्स्थानपतित वृद्धि भई कहिए । विशेष इतना जो नवमी पकतिका का नवमा कोठा विषै दोय उकार अर एक आठ का अंक लिख्या है; सो ताका अर्थ यह जो सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण अनंत भाग वृद्धि होइ करि एक बार अनंतगुण वृद्धि हो है । सो यह अनंतगुण वृद्धि रूप जो भेद सो नवीन षट्स्थानपतित वृद्धि का आरम्भ कीया । ताका आदि का स्थान जानना । इसतै लगाइ प्रथम कोठादिक सबधी जो रचना कही थी, तीहि अनुक्रमतै षट्स्थान-पतित वृद्धि हो है । तहाँ उस ही नवमी पकति का नवमां कोठा विषै आठ का अंक के पहिली जो उकार लिखा था, ताका अर्थ यह जो सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र वार अनंत भागवृद्धि भई, तिनिविषै अंत की अनंत भागवृद्धि लीए, जो स्थान सोई, इस षट्स्थानपतित वृद्धि का अंत स्थान जानना । याहीतै षट्स्थान पतित वृद्धि का आदि स्थान अष्टांक कहा अर अतस्थानक उर्वक कहा है । बहुरि पहिली वार अनंतगुण वृद्धि बिना पच वृद्धि कही, अर पीछे छहौ वृद्धि कही है ।

यहां प्रश्न — जो पहिली वार आदि स्थान जघन्य ज्ञान है । ताको अष्टांक रूप अनंत गुणवृद्धि संभवै भी है कि नाही ?

अर भागहार का अपवर्तन कीया । गुणकार तीन तीन परस्पर गुणै, नव का गुणकार भया । च्यारि, दोय, च्यारि, एक भागहारनि कौ परस्पर गुणै, बत्तीस का भागहार भया । जातै दोय, तीन, आदि राशि गुणकार भागहार विषै होय । तहा परस्पर गुणै, जेता प्रमाण होइ, तितना गुणकार वा भागहार तहा जानना । अैसे ही अन्यत्र भी समझना । बहुरि यामै एक गुणकार साधिक जघन्य का बत्तीसवा भागमात्र है । ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष साधिक जघन्य कौ आठ का गुणकार, बत्तीस का भागहार रह्या, ताका अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य का चौथा भाग भया । बहुरि प्रक्षेपक गच्छ प्रमाण है; सो साधिक जघन्य कौ एक बार उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीएं प्रक्षेपक होइ । ताकौ उत्कृष्ट संख्यात का तीन चौथा भाग करि गुणना, तहा उत्कृष्ट संख्यात गुणकार भागहार का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य का तीन चौथा भागमात्र प्रमाण भया । यामै पूर्वोक्त एक चौथा भाग जोडै, साधिक जघन्य मात्र वृद्धि का प्रमाण भया । यामै मूल साधिक जघन्य जोडै, लब्ध्यक्षर दूणा हो है । इहा प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबंधी ऋणराशि घनराशि तै संख्यात गुणा घाटि है । तातै साधिक जघन्य का बत्तीसवा भागमात्र घनराशिविषै ऋणराशि घटावने कौ किंचित् ऊन करि अवशेष पूर्वोक्त विषै जोडै, साधिक दूणा हो है । बहुरि 'एकदालछप्पण' कहिये, पूर्वोक्त संख्यात भागवृद्धि सयुक्त उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थाननि कौ छप्पन का भाग देइ, तिनि विषै इकतालीस भागमात्र स्थान भये । तहां प्रक्षेपक अर प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबंधी वृद्धि जोडै, लब्ध्यक्षर दूणा हो है । कैसे ?

सो कहिये है - साधिक जघन्य कौ उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीएं, प्रक्षेपक होइ, सो प्रक्षेपक गच्छमात्र है । तातै याकौ उत्कृष्ट संख्यात इकतालीस छप्पनवां भाग करि गुणै, उत्कृष्ट संख्यात का अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य कौ इकतालीस का गुणकार छप्पन भागहार हो है । बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन घनमात्र है । सो पूर्वोक्त सूत्र के अनुसारि साधिक जघन्य कौ दोय बार उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीएं प्रक्षेपक प्रक्षेपक होइ । ताकौ एक घाटि इकतालीस गुणा उत्कृष्ट संख्यात अर इकतालीस गुणा उत्कृष्ट संख्यात का गुणकार अर छप्पन, दोय छप्पन, एक का भागहार भया । इहां एक घाटि संबंधी ऋण साधिक जघन्य कौ इकतालीस का गुणकार अर उत्कृष्ट संख्यात एक मां वारा छप्पन का भागहार मात्र जुदा स्थापि, अवशेष विषै दोय बार उत्कृष्ट संख्यात का अपवर्तन कीएं, साधिक जघन्य कौ सोला सै इकतालीस का गुणकार अर

एक सौ बारा गुणा छप्पन का भागहार हो है । इहां गुणकार विषै इकतालीस इकतालीस परस्पर गुणै, सोलह सै इक्यासी भये है । बहुरि भागहार विषै छप्पन कौ दोय करि गुणै, एक सौ बारह भये । अगले छप्पन कौ एक करि गुणै, छप्पन भये जानने । बहुरि इहां गुणाकार मे एक जुदा स्थापिये, ताका साधिक जघन्य कौ एक सौ बारह गुणा छप्पन का भागहार मात्र घन जानना । अवशेष साधिक जघन्य कौ सोलह सै अस्सी का गुणकार एक सौ बारा गुणा छप्पन का भागहार रह्या । तहां एक सौ बारह करि अपवर्तन कीये साधिक जघन्य कौ पंद्रह का गुणकार छप्पन का भागहार भया । यामे प्रक्षेपक संबंधी प्रमाण जघन्य कौ इकतालीस का गुणकार अर छप्पन का भागहार मात्र मिलाएं अपवर्तन कीए, साधिक जघन्य मात्र वृद्धि का प्रमाण भया । यामे मूल साधिक जघन्य जोडै, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है । इहां प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबंधी पूर्वोक्त घन तै ऋण संख्यात गुणा घाटि है । तातै किंचित् ऊन कीया, जो घन राशि, ताकौ अधिक कीए साधिक दूणा हो है । बहुरि 'सत्त दशमं च भाग' वा कहिए अथवा सख्यात (भाग) वृद्धि संयुक्त उत्कृष्ट सख्यात मात्र स्थानकनि कौ दश का भाग दीजिये । तहां सात भाग मात्र स्थान भए । तहां प्रक्षेपक अर प्रक्षेपक - प्रक्षेपक अर पिशुलि नामा तीन वृद्धि जोडै, साधिक जघन्य ज्ञान दूणा हो है । कैसे ?

सो कहिए है - साधिक जघन्य कौ एक बार उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीये प्रक्षेपक हो है । सो गच्छ मात्र है । तातै याकौ उत्कृष्ट संख्यात का सात दशवां भाग करि गुणै, उत्कृष्ट सख्यात का भाग दीएं, साधिक जघन्य कौ सात का गुणकार अर दश का भागहार हो है । बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक एक घाटि गच्छ का एक बार सकलन घनमात्र हो है । सो साधिक जघन्य कौ दोय बार उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीएं, प्रक्षेपक - प्रक्षेपक होइ, ताकौ पूर्व सूत्र के अनुसारि एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर सात गुणा उत्कृष्ट संख्यात का तौ गुणकार अर दश दोय अर दश एक का भागहार भया । बहुरि पिशुलि दोय घाटि गच्छ का अर दोय बार संकलन घनमात्र हो है । सो साधिक जघन्य कौ तीन बार उत्कृष्ट संख्यात का भाग दीए पिशुलि हो है । ताकौ पूर्व सूत्र के अनुसारि दोय घाटि सात गुणा उत्कृष्ट संख्यात अर एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट संख्यात सातगुणा उत्कृष्ट सख्यात का तौ गुणकार अर दश तीन, दश दोय, दश एक का भागहार भया । इनि विषै पिशुलि का गुणकार विषै दोय घटाया था, तीहि सबधी प्रथम ऋण का प्रमाण साधिक

जघन्य कौ दोय का अर एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का गुणकार बहुरि दोय बार<sup>१</sup> उत्कृष्ट सख्यात का अर छह का अर तीन बार दश का भागहार कीएं हो है । ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष का अपवर्तन कीएं, साधिक जघन्य कौ एक घाटि सात गुणा उत्कृष्ट सख्यात का अर गुणचास का तौ गुणकार भया । बहुरि उत्कृष्ट संख्यात छह हजार का भागहार हो है । इहां गुणकार विषे एक घाटि है; तीहि संबधी द्वितीय ऋण का प्रमाण साधिक जघन्य कौ गुणचास का गुणकार बहुरि उत्कृष्ट सख्यात अर छह हजार का भागहार कीएं हो है । ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष का अपवर्तन कीएं, साधिक जघन्य कौ तीन सैं तियालीस का गुणकार अर छह हजार का भागहार हो है । इहा गुणकार मैं तेरह घटाइ, जुदा स्थापिए । तहां साधिक जघन्य कौ तेरह का गुणकार अर छह हजार का भागहार जानना । अवशेष साधिक जघन्य कौ तीन सैं तीस का गुणकार अर छह हजार का भागहार रह्या । तहां तीस करि अपवर्तन कीएं साधिक जघन्य कौ ग्यारह का गुणकार, दश गुणा बीस का भागहार भया; सो एक जायगा स्थापिए । बहुरि इहां तेरह गुणकार मैं स्यो काढि जुदे स्थापि थे, तीहि संबधी प्रमाण तैं प्रथम, द्वितीय ऋण संबधी प्रमाण संख्यातगुणा घाटि है । तातैं किंचित् ऊन करि साधिक जघन्य किंचिदून तेरह गुणा कौ छह हजार का भाग दीएं, इतना धन अवशेष रह्या, सो जुदा स्थापिए । बहुरि प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबधी गुणकार विषे एक घटाया था, तिहि सबधी ऋण का प्रमाण साधिक जघन्य कौ सात का गुणकार, बहुरि उत्कृष्ट सख्यात अर दोय सैं का भागहार कीएं हो है । ताकौ जुदा स्थापि, अवशेष पूर्वोक्त प्रमाण साधिक जघन्य कौ उत्कृष्ट संख्यात का गुणकार अर दोय बार सात का गुणकार, अर उत्कृष्ट सख्यात दश दोय दश एक का भागहार, ताका अपवर्तन वा परस्पर गुणन कीएं, साधिक जघन्य कौ गुणचास का गुणकार दोय सैं का भागहार भया । यामैं पूर्वोक्त पिशुलि संबधी ग्यारह गुणकार मिलाएं, साधिक जघन्य कौ साठि का गुणकार दोय सैं का भागहार भया । इहां बीस करि अपवर्तन कीएं, साधिक जघन्य कौ तीन का गुणकार, दश का भागहार भया । यामैं प्रक्षेपक संबधी प्रमाण साधिक जघन्य कौ सात का गुणकार, दश का भागहार जोडैं, दश करि अपवर्तन कीएं, वृद्धि का प्रमाण साधिक जघन्य हो है । यामैं मूल साधिक जघन्य जोडैं, लब्ध्यक्षर दूणा हो है । बहुरि पूर्वे पिशुलि संबधी ऋण रहित धन विषे किंचिदून तेरह

१. ब, ग प्रति मे 'तीनवार' मिलता है ।

का गुणकार था, तिस विषै प्रक्षेपक - प्रक्षेपक संबंधी ऋण संख्यात गुणा घाटि है । ताकौ घटावने के अर्थि बहुरि किचित् ऊन कीएं, जो साधिक जघन्य कौं दोय बार किचिदून तेरह का गुणकार अर छह हजार का भागहार भया । सो इतना प्रमाण पूर्वोक्त दूणां लब्ध्यक्षर विषै जोड़ै, साधिक दूणा हो है । अैसे प्रथम तौ संख्यात भागवृद्धि युक्त जे स्थान, तिनि विषै उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थाननि का सात दशवां भाग प्रमाण स्थान पिशुलि वृद्धि पर्यंत भए लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है । बहुरि तिसही का इकतालीस छप्पनवां भाग प्रमाण स्थान प्रक्षेपक-प्रक्षेपक वृद्धि पर्यंत भएं, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है । बहुरि आगै भी संख्यात (भाग) वृद्धि का पहिला स्थान तैं लगाइ उत्कृष्ट संख्यात मात्र स्थाननि का तीन चौथा भाग मात्र स्थान प्रक्षेपक - प्रक्षेपक वृद्धि पर्यंत भएं, लब्ध्याक्षर ज्ञान दूणां हो है । बहुरि तैसें ही संख्यात वृद्धि का पहिला स्थान तैं लगाइ, उत्कृष्ट संख्यातमात्र स्थान प्रक्षेपक वृद्धिपर्यंत भएं, लब्ध्यक्षरज्ञान दूणा हो है ।

इहां प्रश्न - जो साधिक जघन्य ज्ञान दूणा भया सो साधिक जघन्य ज्ञान तौ पर्यायसमास ज्ञान का मध्य भेद है, इहां लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा कैसे कहा है ?

ताकां समाधान - जो उपचार करि पर्यायसमास ज्ञान के भेद कों भी लब्ध्यक्षर कहिए । जातै मुख्यपनै लब्ध्यक्षर है नाम जाका, अैसा जो पर्याय ज्ञान, ताका समीपवर्ती है ।

भावार्थ - इहां अैसा जो लब्ध्यक्षर नाम तै इहां पर्यायसमास का यथासभव मध्यभेद का ग्रहण करना । बहुनि चकार करि गत्वा कहिए अैसे स्थान प्रति प्राप्त होइ, लब्ध्यक्षर ज्ञान दूणा हो है, अैसा अर्थ जानना ।

एवं असंखलोगा, अणक्खरण्णे हवंति छट्ठाणा ।

ते पज्जायसमासा, अक्खरगं उवरि बोच्छामि ॥३३२॥<sup>१</sup>

एवमसंख्यलोकाः, अनक्षरात्मके भवंति षट्स्थानानि ।

ते पर्यायसमासा अक्षरगमुपरि वक्ष्यामि ॥३३२॥



टीका - याप्रकार अनक्षरात्मक जो पर्यायसमास ज्ञान के भेद, तिनि विषै षट्स्थान(पतित)वृद्धि असंख्यातलोकमात्र बिरियां हो है । सो ही कहिए है - जो एक अधिक सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का वर्ग करि तिस ही के घन कौ गुणों, जो प्रमाण होइ, तितने भेदनि विषै एक बार षट्स्थान होइ, तौ असंख्यात लोक प्रमाण पर्यायसमास ज्ञान के भेदनि विषै केती बार षट्स्थान होइ; जैसे त्रैराशिक करना । तहां प्रमाणराशि एक अधिक सूच्यंगुल के असंख्यातवां भाग का वर्ग करि गुणित, ताहीका घनप्रमाण अर फलराशि एक, इच्छाराशि असंख्यात लोक पर्यायसमास के स्थानमात्र, तहां फल करि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीएं, जेता लब्धराशि का प्रमाण आवै, तितनी बार सर्व भेदनि विषै षट्स्थान पतित वृद्धि हो है । सो भी असंख्यात लोक मात्र हो है । जातै असंख्यात के भेद घने है । तातै हीनाधिक होतै भी असंख्यात लोक ही कहिए । याप्रकार असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान वृद्धि करि वर्धमान जघन्य ज्ञान तै अनंत भागवृद्धि लीएं प्रथम स्थान तै लगाइ, अंत का षट्स्थान विषै अंत का अनंत भागवृद्धि लीएं, स्थान पर्यंत जेते ज्ञान के भेद, ते ते सर्व पर्यायसमास ज्ञान के भेद जानने ।

अब इहांतै आगे अक्षरात्मक श्रुतज्ञान को कहै है -

चरिमुव्वंकेणवहिदअत्थक्खरगुणिदचरिमुव्वंकं ।

अत्थक्खरं तु णाणं, होदि त्ति जिणेहि णिदिट्ठं ॥३३३॥<sup>१</sup>

चरमोर्वकेणावहितार्थाक्षरगुणितचरमोर्वकम् ।

अर्थाक्षरं तु ज्ञानं भवतीति जिनैर्निदिष्टम् ॥३३३॥

टीका - पर्याय समास ज्ञान विषै असंख्यात लोक मात्र षट्स्थान कहे । तिनि विषै वृद्धि कौ कारण सख्यात, असख्यात, अनंत ते अवस्थित है, नियमरूप प्रमाण धरै है । संख्यात का प्रमाण उत्कृष्ट सख्यात मात्र, असंख्यात का असंख्यात लोक मात्र, अनंत का प्रमाण जीवराशि मात्र जानना । बहुरि अंत का षट्स्थान विषै अंत का उर्वक जो अनंतभागवृद्धि, ताकौ लीएं पर्याय समास ज्ञान का सर्वोत्कृष्ट भेद, तातै आगे अष्टांक कहिए, अनंत गुणवृद्धि संयुक्त जो ज्ञान का स्थान, सो अर्थाक्षर श्रुतज्ञान है । पूर्वे अष्टांक का प्रमाण नियमरूप जीवराशि मात्र गुणा था, इहां अष्टांक का

प्रमाण, सो न जानना, अन्य जानना । सोई कहिए है - असख्यात लोक मात्र षट्स्थान नि विषै जो अंत का षट्स्थान, ताका अंत का ऊर्वक वृद्धि लीएं जो सर्वोत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञान ताकौ एक बार अष्टांक करि गुणै, अर्थाक्षर ज्ञान हो है । तातै याकौ अष्टांक वृद्धि युक्त स्थान कहिए ।

सो अष्टांक कितने प्रमाण लीएं हो है; सो कहिए है - श्रुत केवलज्ञान एक घाटि, एकट्ठी प्रमाण अपुनरुक्त अक्षरनि का समूह रूप है । ताकौ एक घाटि, एकट्ठी का भाग दीएं, एक अक्षर का प्रमाण आवै है । तहां जेता ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण है, ताकौ सर्वोत्कृष्ट पर्याय समास ज्ञान का भेदरूप ऊर्वक के अविभाग प्रतिच्छेदनि के प्रमाण का भाग दीएं जेता प्रमाण आवै, सोई इहां अष्टांक का प्रमाण जानना । तातै अब तिस अर्थाक्षर ज्ञान की उत्पत्ति कौ कारण, जो अंत का ऊर्वक, ताकरि भाजित जो अर्थाक्षर, तीहि प्रमाण अष्टांक करि गुण्य, जो अंत का ऊर्वक, ताकौ गुणै; अर्थाक्षर ज्ञान हो है । यह कथन युक्त है । असा जिनदेव कह्या है । बहुरि यह कथन अंत विषै धर्या हूवा दीपक समान जानना । तातै असे ही पूर्वे भी चतुरंक आदि अष्टांक पर्यंत षट् स्थाननि के भागवृद्धि युक्त वा गुणवृद्धि युक्त जे स्थान है, ते सर्व अपना अपना पूर्व ऊर्वक युक्त स्थान का भाग दीएं, जेता प्रमाण आवै, तितने प्रमाण करि तिस पूर्वस्थान तै गुणित जानने । असे श्रुत केवलज्ञान का सख्यातवां भाग मात्र अर्थाक्षर श्रुतज्ञान जानना । अर्थ का ग्राहक अक्षर तै उत्पन्न भया जो ज्ञान, सो अर्थाक्षर ज्ञान कहिए । अथवा अर्थते कहिए जानिए, सो अर्थ, अर द्रव्य करि न विनशै सो अक्षर । जो अर्थ सोई अक्षर, ताका जो ज्ञान, सो अर्थाक्षरज्ञान कहिये । अथवा अर्थते कहिये श्रुतकेवलज्ञान का सख्यातवा भाग करि जाका निश्चय कीजिये; असा एक अक्षर, ताका ज्ञान, सो अर्थाक्षरज्ञान कहिये ।

अथवा अक्षर तीन प्रकार है — लब्धि अक्षर, निर्वृत्ति अक्षर, स्थापना अक्षर । तहा पर्यायज्ञानावरण आदि श्रुतकेवलज्ञानावरण पर्यंत के क्षयोपशम तै उत्पन्न भई जो पदार्थ जानने की शक्ति, सो लब्धिरूप भाव इन्द्रिय, तीहि स्वरूप जो अक्षर कहिये अविनाश, सो लब्धि - अक्षर कहिये । जातै अक्षर ज्ञान उपजने कौ कारण है । बहुरि कंठ, होठ, तालवा आदि अक्षर बुलावने के स्थान अर होठनि का परस्पर मिलना, सो स्पृष्टता ताकौ आदि देकरि प्रयत्न, तीहि करि उत्पन्न भया शब्द-

रूप अकारादि स्वर अर ककारादिक व्यंजन अर संयोगी अक्षर, सो निर्वृत्ति अक्षर कहिये । बहुरि पुस्तकादि विषे निज देश की प्रवृत्ति के अनुसारि अकारादिकनि का आकार करि लिखिए सो स्थापना अक्षर कहिये । इस प्रकार जो एक अक्षर, ताकें सुनने तें भया जो अर्थ का ज्ञान, हो अक्षर श्रुतज्ञान है; असा जिनदेवने कहा है । उन ही के अनुसारि मैं भी कुछ कहा है ।

आगे श्री माधवचंद्र त्रैविद्यदेव शास्त्र के विषय का प्रमाण कहैं हैं —

**पणवणिज्जा भावा, अणंतभागो दु अणभिलप्पाणं ।**

**पणवणिज्जाणं पुण, अणंतभागो सुदण्णबद्धो ॥३३४॥**

प्रज्ञापनीया भावा, अनंतभागस्तु अनभिलाप्यानाम् ।

प्रज्ञापनीयानां पुनः, अनंतभागः श्रुतनिबद्धः ॥३३४॥

टीका — अनभिलाप्यानां कहिए वचन गोचर नाही, केवलज्ञान ही के गोचर जे भाव कहिए जीवादिक पदार्थ, तिनके अनंतवें भागमात्र जीवादिक अर्थ, ते प्रज्ञापनीयाः कहिए तीर्थकर की सातिशय दिव्यध्वनि करि कहने में आवैं अैसे है । बहुरि तीर्थकर की दिव्यध्वनि करि पदार्थ कहने में आवैं है तिनके अनंतवे भागमात्र द्वादशांग श्रुतविषे व्याख्यान कीजिए है । जो श्रुतकेवली की भी गोचर नाही; असा पदार्थ कहने की शक्ति दिव्यध्वनि विषे पाइए है । बहुरि जो दिव्यध्वनि करि न कहा जाय, तिस अर्थ को जानने की शक्ति केवलज्ञान विषे पाइए है । असा जानना ।

आगे दोय गाथानि करि अक्षर समास की प्ररूप है —

**एयद्वखरादु उवरिं, एगेणेणक्खरेण वड्ढंतो ।**

**संखेज्जे खलु उड्ढे, पदणामं होदि सुदण्णं ॥३३५॥ १**

एकाक्षरात्तुपरि, एकैकेनाक्षरेण वर्धमानाः ।

संख्येये खलु वृद्धे, पदनाम भवति श्रुतज्ञानम् ॥३३५॥

टीका — एक अक्षर तै उपज्या जो ज्ञान, ताके ऊपरि पूर्वोक्त षट्स्थानपतित वृद्धि का अनुक्रम विना एक एक अक्षर बधता सो दोय अक्षर, तीन अक्षर, च्यारि अक्षर इत्यादिक एक घाटि पद का अक्षर पर्यंत अक्षर समुदाय का सुनने करि उपजैं अैसें अक्षर समास के भेद संख्यात जानने । ते दोय घाटि पद के अक्षर जेते होंइ

तितने है । बहुरि इसके अनंतरि उत्कृष्ट अक्षर समास के विषे एक अक्षर बधतै पद-  
नामा श्रुतज्ञान हो है ।

**सोलस-सय-चउतीसा, कोडी तियसीदिलखयं चैव ।**

**सत्तसहस्साट्ठसया, अट्ठासीदी य पदवण्णा ॥३३६॥<sup>१</sup>**

**षोडशशतचतुस्त्रिंशत्कोट्यः त्र्यशीतिलक्षकं चैव ।**

**सप्तसहस्राण्यष्टशतानि अष्टाशीतिश्च पदवर्णाः ॥३३६॥**

**टीका — पद तीन प्रकार है — अर्थपद, प्रमाणपद, मध्यमपद ।**

तहां जिहिं अक्षर समूह करि विवक्षित अर्थ जानिये, सो तौ अर्थपद कहिये ।  
जैसे कह्या कि 'गामभ्याज शुक्लां दंडेन' इहां इस शब्द के च्यारि पद हैं — १. गां,  
२. अभ्याज, ३. शुक्लां, ४. दंडेन । ये च्यारि पद भए । अर्थ याका यहु - जो गाय  
कौ घेरि, सुफेद कौ दंड करि । जैसे कह्या कि 'अग्निमानय' इहां दोय पद भए ।  
अग्निं, आनय । अर्थ यहु जो — अग्नि को ल्याव । जैसे विवक्षित अर्थ के अर्थी एक,  
दोय आदि अक्षरनि का समूह, ताकौ अर्थपद कहिये ।

बहुरि प्रमाण जो संख्या, तिहिनें लीएं, जो पद कहिये अक्षर समूह, ताकौ  
प्रमाण पद कहिये । जैसे अनुष्टुप छंद के च्यारि पद, तहां एक पद के आठ अक्षर  
होइ । 'नमः श्रीवर्द्धमानाय' यहु एक पद भया । याका अर्थ यहु जो श्रीवर्द्धमान स्वामी  
के अर्थि नमस्कार होहु; जैसे प्रमाणपद जानना ।

बहुरि सोलास चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठसै अठ्यासी  
(१६३४८३०७८८८) गाथा विषे कहे अपुनरुक्त अक्षर, तिनिका समूह सो मध्यमपद  
कहिये । इनिविषे अर्थ पद अर प्रमाण पद तौ हीन - अधिक अक्षरनि का प्रमाण कौ  
लीएं, लोकव्यवहार करि ग्रहण कीएं है । तातै लोकोत्तर परमागम विषे गाथा विषे  
कही जो संख्या, तीहिं विषे वर्तमान जो मध्यमपद, ताहीका ग्रहण जानना ।

**आगे सघात नामा श्रुतज्ञान कौ प्ररूपे है —**

१. पदवर्णागम — धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २३ की टीका ।

एयपदादो उवरिं, एगेगेणक्खरेण वड्ढंतो ।  
संखेज्जसहस्सपदे, उड्ढे संघादणाम सुदं ॥३३७॥<sup>१</sup>

एकपदादुपरि, एकैकेनाक्षरेण वर्धमानाः ।  
संख्यातसहस्रपदे, वृद्धे सघातनाम श्रुतम् ॥३३७॥

टीका — एक पद के ऊपरि एक एक अक्षर बधतै - बधतै एक पद का अक्षर प्रमाण पदसमास के भेद भएँ, पदज्ञान दूणा भया । बहुरि इसतै एक- एक अक्षर बधतै बधतै पदका अक्षर प्रमाण पदसमास के भेद भएँ, पदज्ञान तिगुणा भया । जैसे ही एक एक अक्षर की बधवारी लीएँ पद का अक्षर प्रमाण पदसमास ज्ञान के भेद होत सतै चौगुणा पंचगुणा आदि संख्यात हजार करि गुण्या हूवा पद का प्रमाण में एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत पदसमास के भेद जानने । पदसमास ज्ञान का उत्कृष्ट भेद विषै सोई एक अक्षर मिलाये, सघात नामा श्रुतज्ञान हो है । सो च्यारि गति विषै एक गति के स्वरूप का निरूपणहारे जो मध्यमपद, तिनिका समूहरूप सघात नामा श्रुतज्ञान के सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकीं सघात श्रुतज्ञान कहिये ।

आगैं प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान के स्वरूप कौ कहै है -

एक्कदर-गदि-णिरूवय-संघादसुदादु उवरि पुव्वं वा ।  
वण्णे संखेज्जे, संघादे उड्ढिम्मि पडिवत्ती ॥३३८॥

एकतरगतिनिरूपकसंघातश्रुतादुपरि पूर्व वा ।  
वर्णे संख्येये, सघाते वृद्धे प्रतिपत्तिः ॥३३८॥

टीका — एक गति का निरूपण करणहारा जो सघात नामा श्रुतज्ञान, ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार करि एक एक अक्षर की बधवारी लीये, एक एक पद की वृद्धि करि संख्यात हजार पद का समूहरूप सघात श्रुत होइ । बहुरि इस ही अनुक्रम तै संख्यात हजार सघात श्रुत होइ । तिहि मै स्यो एक अक्षर घटाइये तहा पर्यंत सघात समास के भेद जानना । बहुरि अत का सघात समास श्रुतज्ञान का उत्कृष्ट भेद विषै वह<sup>२</sup> अक्षर मिलाइये, तब प्रतिपत्तिक नामा श्रुतज्ञान हो है । सो नरकादि च्यारि गति

१ षट्खडागम-धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २३ की टीका ।

२ ब, घ, प्रति मे 'छह' शब्द मिलता है ।

का स्वरूप विस्तार पनै निरूपण करनहारा जो प्रतिपत्तिपक ग्रंथ, ताके सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकौ प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान कहिए ।

आगे अनुयोग श्रुतज्ञान कौ प्ररूपै हैं -

**चउगइ-सरूपवरूप-पडिवत्तीदो दु उवरि पुव्वं वा ।  
वण्णे संखेज्जे, पडिवत्तीउड्ढम्हि अणियोगं ॥३३६॥<sup>१</sup>**

चतुर्गतिस्वरूपप्ररूपकप्रतिपत्तितस्तु उपरि पूर्व वा ।  
वर्णे संख्याते, प्रतिपत्तिवृद्धे अनुयोगं ॥३३९॥

टीका - च्यारि गति के स्वरूप का निरूपण करणहारा प्रतिपत्तिक श्रुतज्ञान के ऊपरि प्रत्येक एक एक अक्षर की वृद्धि लीये संख्यात हजार पदनि का समुदायरूप संख्यात हजार संघात अर संख्यात हजार संघातनि का समूह प्रतिपत्तिक, सो अैसे प्रतिपत्तिक संख्यात हजार होइ; तिनिविषै एक अक्षर घटाइये तहां पर्यंत प्रतिपत्तिक समास श्रुतज्ञान के भेद भए । बहुरि तिसका अंत भेद विषै वह एक अक्षर मिलाये, अनुयोग नामा श्रुतज्ञान भया, सो चौदै मार्गणा के स्वरूप का प्रतिपादक अनुयोग नामा श्रुत, ताके सुनने तै जो अर्थज्ञान भया, ताकौ अनुयोग नामा श्रुतज्ञान कहिए ।

आगे प्राभूतप्राभूतक श्रुतज्ञान कौ दोय गाथानि करि कहै है -

**चोइस-मग्गण-संजुद-अणियोगादुवरि वड्ढिदे वण्णे ।  
चउरादी-अणियोगे दुगवारं पाहुडं होदि ॥३४०॥<sup>२</sup>**

चतुर्दशमार्गणासंयुतानुयोगादुपरि वर्धिते वर्णै ।  
चतुराद्यनुयोगे द्विकवारं प्राभूतं भवति ॥३४०॥

टीका - चौदह मार्गणा करि संयुक्त जो अनुयोग, ताके ऊपरि प्रत्येक एक एक अक्षर की वृद्धि करि संयुक्त पद-संघात प्रतिपत्तिक, इनिकौ पूर्वोक्त अनुक्रम तै वृद्धि होतै च्यारि आदि अनुयोगनि की वृद्धि विषै एक अक्षर घटाइये । तहा पर्यंत अनुयोग समास के भेद भए । बहुरि तिसका अंत भेद विषै वह एक अक्षर मिलाये, प्राभूत प्राभूतक नामा श्रुतज्ञान हो है ।

<sup>१</sup> पट्ठपदागम - धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।

<sup>२</sup> पट्ठपदागम - धवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।

अहियारो पाहुडयं, एयट्ठो पाहुडस्स अहियारो ।  
पाहुडपाहुडणामं, होदि त्ति जिणोहिं णिदिट्ठं ॥३४१॥

अधिकारः प्राभृतमेकार्थः प्राभृतस्याधिकारः ।  
प्राभृतप्राभृतनामा, भवति इति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥३४१॥

टीका — आगे कहियेगा, जो वस्तु नामा श्रुतज्ञान, ताका जो एक अधिकार, ताहीका नाम प्राभृत कहिये । बहुरि जो उस प्राभृतक का एक अधिकार, ताका नाम प्राभृतक प्राभृतक कहिये; असै जिनदेवने कहा है ।

आगे प्राभृतक का स्वरूप कहै है —

दुगवारपाहुडादो, उवरिं वण्णो कमेण चउवीसे ।  
दुगवारपाहुडे संउड्ढे खलु होदि पाहुडयं ॥३४२॥<sup>१</sup>

द्विकवारप्राभृतादुपरि वर्णं क्रमेण चतुर्विंशतौ ।  
द्विकवारप्राभृते सवृद्धे खलु भवति प्राभृतकम् ॥३४२॥

टीका — द्विकवार प्राभृतक जो प्राभृतक - प्राभृतक, ताके ऊपरि पूर्वोक्त अनुक्रम तै एक एक अक्षर की वृद्धि लीयें चौबीस प्राभृतक - प्राभृतकनि की वृद्धि विषै एक अक्षर घटाइये, तहां पर्यंत प्राभृतक - प्राभृतक समास के भेद जानने । बहुरि ताका अंत भेद विषै एक अक्षर मिलाये; प्राभृतक नामा श्रुतज्ञान हो है ।

भावार्थ — एक एक प्राभृतक नामा अधिकार विषै चौबीस-चौबीस प्राभृतक-प्राभृतक नामा अधिकार हो है ।

आगे वस्तु नामा श्रुतज्ञान कौ प्ररूपै है —

वीसं वीसं पाहुड-अहियारे एक्कवत्थुअहियारो ।  
एक्केक्कवण्णउड्ढी, कमेण सव्वत्थं जायव्वा ॥३४३॥<sup>२</sup>

विंशतौ विंशतौ प्राभृताधिकारे एको वस्त्वधिकारः ।  
एकैकवर्णवृद्धिः, क्रमेण सर्वत्र ज्ञातव्या ३४३॥

१. षट्सङ्गागम — घवला पुस्तक ६, पृष्ठ २४ की टीका ।

२. षट्सङ्गागम — घवला पुस्तक ६, पृष्ठ २५ की टीका ।

टीका - तिहि प्राभूतक के ऊपर पूर्वोक्त अनुक्रम तै एक एक अक्षर की वृद्धि नै लीए, पदादिक की वृद्धि करि संयुक्त बीस प्राभूतक की वृद्धि होतै सतै, वामे एक अक्षर घटाइये, तहा पर्यंत प्राभूतक समास के भेद जानने । बहुरि ताका अंत भेद विषे वह एक अक्षर मिलायें, वस्तु नामा अधिकार हो है ।

भावार्थ - पूर्व संबंधी एक एक वस्तु नामा अधिकार विषे बीस बीस प्राभूतक पाइये है । बहुरि सर्वत्र अक्षर समास का प्रथम भेद तै लगाइ पूर्वसमास का उत्कृष्ट भेद पर्यंत अनुक्रम तै एक एक अक्षर बढावना । बहुरि पद का बढावना, बहुरि समास का बढावना इत्यादिक परिपाटी करि यथासभव वृद्धि सबनि विषे जानना, सो सूत्र के अनुसारि व्याख्यान टीका विषे करते ही आये है ।

आगे तीन गाथानि करि पूर्व नामा श्रुतज्ञान कौ कहै है -

**दसचोदसट्ठ अट्ठारसयं बारं च बार सोलं च ।**

**वीसं तीसं पण्णारसं च, दस चट्ठसु वत्थूणं ॥३४४॥**

दश चतुर्दशाष्ट अष्टादशकं द्वादश च द्वादश षोडश च ।

विंशतिः त्रिंशत् पंचदश च, दश चतुर्षु वस्तूनाम् ॥३४४॥

टीका - तिहि वस्तु श्रुत के ऊपरि एक एक अक्षर की वृद्धि लीए, अनुक्रम तै पदादिक की वृद्धि करि संयुक्त क्रम तै दश आदि वस्तुनि की वृद्धि होत सतै, उनमें सौ एक एक अक्षर घटावनै पर्यंत वस्तु समास के भेद जानने । बहुरि तिनके अंत भेदनि विषे अनुक्रम तै एक एक अक्षर मिलाएं, चौदह पूर्व नामा श्रुतज्ञान होइ । तहा आगे कहिए है ।

उत्पाद नामा पूर्व आदि चौदह पूर्व, तिनिविषे अनुक्रम तै दश (१०), चौदह (१४), आठ (८), अठारह (१८), बारह (१२), बारह (१२), सोलह (१६), बीस (२०), तीस (३०), पद्दह (१५), दश (१०), दश (१०), दश (१०), दश (१०) वस्तु नामा अधिकार पाइए है ।

१ - पट्टवडागम-ध्वला पुस्तक ६, पृष्ठ २५ की टीका ।



उत्पाय-पुव्वगाणिय-विरियपवादत्थिणत्थियपवादे ।

णाणासच्चपवादे, आदाकम्मप्पवादे य ॥३४५॥

पच्चाक्खाणे विज्जाणुवादकल्लाणपाणवादे य ।

किरियाविसालपुव्वे, कमसोथ तिलोयबिंदुसारे य ॥३४६॥

उत्पादपूर्वाग्रायणीयवीर्यप्रवादास्तिनास्तिकप्रवादानि ।

ज्ञानसत्यप्रवादे, आत्मकर्मप्रवादे च ॥३४५॥

प्रत्याख्यानं वीर्यानुवादकल्याणप्राणवादानि च ।

क्रियाविशालपूर्व, क्रमशः अथ त्रिलोकबिंदुसारं च ॥३४६॥

टीका — चौदह पूर्वनि के नाम अनुक्रम तै अैसे जानने । १. उत्पाद, २. आग्रा-  
यणीय, ३. वीर्यप्रवाद, ४. अस्ति नास्ति प्रवाद, ५. ज्ञानप्रवाद, ६. सत्यप्रवाद,  
७. आत्मप्रवाद, ८. कर्मप्रवाद, ९. प्रत्याख्यानप्रवाद, १०. विद्यानुवाद, ११. कल्याण-  
वाद, १२. प्राणवाद, १३. क्रियाविशाल, १४. त्रिलोकबिंदुसार ये चौदह पूर्वनि के  
नाम जानने ।

इनिकै लक्षण आगे कहेगे — इहां अैसे जानना पूर्वोक्त वस्तुश्रुतज्ञान के ऊपरि  
क्रम तै एक एक अक्षर की वृद्धि लीएं, पदादिक की वृद्धि होतै, दश वस्तु प्रमाण मे  
स्यों एक अक्षर घटाइए, तहा पर्यंत वस्तु समास ज्ञान के भेद है । ताके अंत भेद विषे  
वह एक अक्षर मिलाएं, उत्पाद पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है ।

बहुरि उत्पाद पूर्व श्रुतज्ञान के ऊपरि एक-एक अक्षर-अक्षर की वृद्धि लीयें,  
पदादि की वृद्धि संयुक्त चौदह वस्तु होहि ।

तामैं एक अक्षर घटाइये, तहां पर्यंत उत्पादपूर्व समास के भेद जानने । ताके  
अंत भेद विषे वह एक अक्षर बधै, अग्रायणीय पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है । अैसे ही क्रम  
तै आगे आगे आठ आदि वस्तु की वृद्धि होतै, तहा एक अक्षर घटावने पर्यंत तिस  
तिस पूर्व समास के भेद जानने । तिस तिस का अंत भेद विषे सो सो एक अक्षर  
मिलाएं, वीर्य प्रवाद आदि पूर्व नामा श्रुतज्ञान हो है । अंत का त्रिलोकबिंदुसार नामा  
पूर्व आगे ताका समास के भेद नाही है । जातै याके आगे श्रुतज्ञान के भेद का  
अभाव है ।

आगे चौदह पूर्वनि विषे वस्तुनामा अधिकारनि की वा प्राभृतनामा अधिकारनि की संख्या कहै है —

पणणउदिसया वत्थू, पाहुड्या तियसहस्सणवयसया ।  
एदेसु चोदसेसु वि, पुव्वेसु हवन्ति मिलिदाणि ॥३४७॥

पंचनवतिशतानि वस्तूनि, प्राभृतकानि त्रिसहस्रनवशतानि ।  
एतेषु चतुर्दशस्वपि, पूर्वेषु भवन्ति मिलितानि ॥३४७॥

टीका — जो उत्पाद आदि त्रिलोकबिदुसार पर्यंत चौदह पूर्व, तिनिविषे मिलाए हुवे, दश आदि वस्तु नामा अधिकार सर्व एक सौ पिच्याणवै (१६५) हो है । बहुरि एक एक वस्तु विषे बीस बीस प्राभृतक कहे, ते सर्व प्राभृतक नामा अधिकार तीन हजार नव सै (३६००) जानने ।

आगे पूर्व कहे जे श्रुतज्ञान के बीस भेद, तिनिका उपसंहार दोय गाथानि करि कहै है —

अथक्खरं च पदसंघातं, पडिवत्तियाणिजोगं च ।  
दुगवारपाहुडं च य, पाहुड्यं वत्थु पुव्वं च ॥३४८॥  
कमवण्णुत्तरवड्ढिय, ताण समासा य अक्खरगदाणि ।  
णाणवियप्पे वीसं, ग्रंथे बारस य चोदसयं ॥३४९॥

अर्थाक्षरं च पदसंघातं, प्रतिपत्तिकानुयोगं च ।  
द्विकवारप्राभृतं च च, प्राभृतकं वस्तु पूर्व च ॥३४८॥  
क्रमवर्णोत्तरवर्धिते, तेषां समासाश्च अक्षरगताः ।  
ज्ञानविकल्पे विशतिः, ग्रंथे द्वादश च चतुर्दशकम् ॥३४९॥

टीका — अर्थाक्षर, पद, संघात, प्रतिपत्तिक, अनुयोग, प्राभृतकप्राभृतक, प्राभृतक, वस्तु, पूर्व ए नव भेद बहुरि एक एक अक्षर की वृद्धि आदि यथा सभव वृद्धि लीए इन ही अक्षरादिकनि के समास तिनि करि नव भेद, अैसे सर्व मिलि करि अठारह भेद, अक्षरात्मक द्रव्यश्रुत के है । अर ज्ञान की अपेक्षा इन ही द्रव्यश्रुतनि के सुनने तै जो ज्ञान भया, सो उस ज्ञान के भी अठारह भेद

टीका — एक घाटि एकट्टी प्रमाण समस्त श्रुत के अक्षर कहे तिनिकौ परमागम विषै प्रसिद्ध जो मध्यम पद, ताके अक्षरनि का प्रमाण सोला सै चौतीस कोडि तियासी लाख सात हजार आठ सै अठ्यासी, ताका भाग दीए, जो पदनि का प्रमाण आवै तितने तौ अंगपूर्व संबंधी मध्यम पद जानने । बहुरि अवशेष जे अक्षर रहे, ते प्रकीर्णकौ के जानने । सो एक सौ बारह कोडि तियासी लाख अठावन हजार पाच इतने तौ अंग प्रविष्ट श्रुत का पदनि का प्रमाण आया । अवशेष आठ कोडि एक लाख आठ हजार एक सै पिचहत्तरि अक्षर रहे, ते अंगबाह्य प्रकीर्णक के जानने । अैसें अंगप्रविष्ट, अंगबाह्य दोय प्रकार श्रुत के पदनि का वा अक्षरनि का प्रमाण हे भव्य ! तू जानि ।

आगे श्री माधवचन्द्र त्रैविद्यदेव तेरह गाथानि करि अंगपूर्वनि के पदनि की संख्या प्ररूपै हैं —

**आयारे सुद्वयडे, ठाणे समवायणानगे अंगे ।**

**तत्तो विक्खापण्णत्तीए णाहस्स धम्मकहा ॥३५६॥**

**आचारे सूत्रकृते, स्थाने समवायनामके अंगे ।**

**तत्तो व्याख्याप्रज्ञप्तौ नाथस्य धर्मकथायाम् ॥३५६॥**

टीका — द्रव्य श्रुत की अपेक्षा सार्थक निरुक्ति लीएं, अंगपूर्व के पदनि की संख्या कहिए है । जातै भावश्रुत विषै निरुक्त्यादिक संभवै नाही । तहां द्वादश अगनि विषै प्रथम ही आचारांग है । जातै परमागम जो है, सो मोक्ष के निमित्त है । याही तें मोक्षाभिलाषी याकौ आदरे है । तहा मोक्ष का कारण संवर, निर्जरा, तिनिका कारण पंचाचारादि सकल चारित्र है । तातै तिस चारित्र का प्रतिपादक शास्त्र पहिले कहना सिद्ध भया । तीहि कारण तै च्यारि ज्ञान सप्त ऋद्धि के धारक गणधर देवनि करि तीर्थकर के मुखकमल तै उत्पन्न जो सर्व भाषामय दिव्यध्वनि, ताके मुनने नै जो अर्थ अवधारण किया, तिनिकरि शिष्य प्रति शिष्यनि के अनुग्रह निमित्त द्वादशांगरूप श्रुत रचना करी ।

तीहि विषै पहिले आचारांग कहा । सो आचरन्ति कहिए समस्तपने मोक्ष मार्ग कौ आराधै हैं, याकरि सो आचार, तिहि आचारांग विषे अंसा कथन है — जो कैसे चलिए ? कैसे खडे रहिये ? कैसे बैठिये ? कैसे सोइए ? कैसे बोनिग ? तैने

खाइए ? कैसे पाप कर्म न बंधें ? इत्यादि गणधर प्रश्न के अनुसार यतन तै चलिए, यतन तै खड़े रहिये, यतन तै बैठिए, यतन तै सोइए, यतन तै बोलिए, यतन तै खाइये, जैसे पापकर्म न बंधें. इत्यादि उत्तर वचन लीये मुनीश्वरनि का समस्त आचरण इस आचारांग विषे वर्णन कीजिये है ।

बहुरि सूत्रयति कहिए संक्षेप तै अर्थ कौ सूचै, कहै, असा जो परमागम, सो सूत्र ताके अर्थकृत, कहिये कारणभूत ज्ञान का विनय आदि निर्विघ्न अध्ययन आदि क्रिया विशेष, सो जिसविषे वर्णन कीजिए है । अथवा सूत्र करि कीया धर्मक्रियारूप वा स्वमत - परमत का स्वरूप क्रिया रूप विशेष, सो जिस विषे वर्णन कीजिये, सो सूत्रकृत नामा दूसरा अंग है ।

बहुरि तिष्ठन्ति कहिए एक आदि एक एक बधता स्थान जिस विषे पाइये, सो स्थान नामा तीसरा अंग है । तहां असा वर्णन है । संग्रह नय करि आत्मा एक है; व्यवहार नय करि संसारी अर मुक्त दोय भेद संयुक्त है । बहुरि उत्पाद, च्यय, ध्रौव्य इनि तीन लक्षणनि करि संयुक्त है । बहुरि कर्म के वश तै च्यारि गति विषे भ्रमै है । तातैं चतु संक्रमण युक्त है । बहुरि औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, औदयिक, पारिणामिक भेद करि पंचस्वभाव करि प्रधान है । बहुरि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर, ऊर्ध्व, अधः भेद करि छह गमन करि संयुक्त है । संसारी जीव विग्रह गति विषे विदिशा में गमन न करै, श्रेणीबद्ध छहौ दिशा विषे गमन करै है । बहुरि स्यादस्ति, स्यान्नास्ति, स्यादस्ति - नास्ति, स्यादवक्तव्य, स्यादस्ति अवक्तव्य, स्यान्नास्ति अवक्तव्य, स्यादस्तिनास्तिअवक्तव्य इत्यादि सप्त भगी विषे उपयुक्त है । बहुरि आठ प्रकार कर्म का आश्रय करि संयुक्त है । बहुरि जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा, मोक्ष, पुण्य, पाप ये नव पदार्थ है विषय जाके ऐसा नवार्थ है । बहुरि पृथ्वी, अप, तेज, वायु, प्रत्येक वनस्पति, साधारण वनस्पति, द्वीद्रिय, त्रीद्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय भेद तै दश स्थान है । इत्यादि जीव कौ प्ररूपै है । बहुरि पुद्गल सामान्य अपेक्षा एक है; विशेष करि अणु स्कन्ध के भेद तै दोय प्रकार है, इत्यादि पुद्गल कौ प्ररूपै है । जैसे एकने आदि देकरि एक एक बधता स्थान इस अंग विषे वर्णिये है ।

बहुरि 'सं' कहिए समानता करि अवेयंते कहिये जीवादि पदार्थ जिसविषे जानिये, सो समवायांग चौथा जानना । इस विषे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा समानता प्ररूपै है ।

तहां द्रव्य करि धर्मास्तिकाय अर अधर्मास्तिकाय समान है । संसारी जीवनि करि संसारी जीव समान है । मुक्त जीव करि मुक्त जीव समान है ; इत्यादिक द्रव्य समवाय है ।

बहुरि क्षेत्र करि प्रथम नरक का प्रथम पाथडें का सीमंत नामा इंद्रकविला अर अढाई द्वीपरूप मनुष्यक्षेत्र, प्रथम स्वर्ग का प्रथम पटल का ऋजु नामा इंद्रक विमान अर सिद्धशिला, सिद्धक्षेत्र ये समान हैं । बहुरि सातवां नरक का अवधि स्थान नामा इंद्रक विला अर जंबूद्वीप अर सर्वार्थसिद्धि विमान ये समान है इत्यादि क्षेत्र समवाय है ।

बहुरि काल करि एक समय, एक समय समान है । आवली आवली समान है । प्रथम पृथ्वी के नारकी, भवनवासी, व्यंतर इनिकी जघन्य आयु समान है । बहुरि सातवी पृथ्वी के नारकी, सर्वार्थसिद्धि के देव इनिकी उत्कृष्ट आयु समान है, इत्यादिक कालसमवाय है ।

बहुरि भाव करि केवलज्ञान, केवलदर्शन समान है । इत्यादि भावसमवाय है अैसें इत्यादि समानता इस अंग विषे वर्णिये है ।

बहुरि 'वि' कहिये विशेष करि बहुत प्रकार, आख्या कहिये गणधर के कीये प्रश्न, प्रज्ञाप्यंते कहिये जानिये, जिसविषे अैसा व्याख्याप्रज्ञप्ति नामा पाचवा अंग जानना । इस विषे अैसा कथन है कि — जीव अस्ति है कि जीव नास्ति है, कि जीव एक है कि जीव अनेक है; कि जीव नित्य है कि जीव अनित्य है; कि जीव वक्तव्य है कि अवक्तव्य है इत्यादि साठि हजार प्रश्न गणधर देव तीर्थकर के निकट कीये । ताका वर्णन इस- अंगविषे है ।

बहुरि नाथ कहिये तीन लोक का स्वामी, तीर्थकर, परम भट्टारक, तिनके धर्म की कथा जिस विषे होइ अैसा नाथधर्मकथा नाम छठा अंग है । इसविषे जीवादि पदार्थनि का स्वभाव वर्णन करिए है । बहुरि घातियाकर्म के नाश तें उत्पन्न भया केवलज्ञान, उस ही के साथि तीर्थकर नामा पुण्य प्रकृति के उदय तें जाकें महिमा प्रगट भयी, अैसा तीर्थकर कै पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न, अर्धरात्रि इन च्यारि कालनि भिगें छह छह घडी पर्यन्त बारह सभा के मध्य सहज ही दिव्यध्वनि होय है । बहुरि गणधर, इंद्र, चक्रवर्ति इनके प्रश्न करने तें और काल विषे भी दिव्यध्वनि हो है । अेना दिव्यध्वनि निकटवर्ती श्रोतृजननि का उत्तम क्षमा आदि दश प्रकार वा रत्नत्रय स्वरूप

धर्म कहै है । इत्यादि इस अंग विषै कथन है । अथवा इस ही छठा अंग का दूसरा नाम ज्ञातृधर्मकथा है । सो याका अर्थ यहु है - ज्ञाता जो गणधर देव, जानने की है इच्छा जाकै, ताका प्रश्न के अनुसारि उत्तर रूप जो धर्मकथा, ताकाँ ज्ञातृधर्मकथा कहिए । जे अस्ति, नास्ति इत्यादिकरूप प्रश्न गणधरदेव कीये, तिनिका उत्तर इस अंग विषै वर्णन करिये है । अथवा ज्ञाता जे तीर्थंकर, गणधर, इंद्र, चक्रवर्त्यादिक, तिनिकी धर्म संबंधी कथा इसविषै पाइये है । तातैं भी ज्ञातृधर्मकथा अँसा नाम का धारी छठा अंग जानना ।

**तो वासयअज्भयणे, अंतयडे एतुत्तरोववाददसे ।**

**पण्हाणं वायरणे, विवायसुत्ते य पदसंखा ॥३५७॥**

तत उपासकाध्ययने, अंतकृते अनुत्तरौपपाददशे ।

प्रश्नानां व्याकरणे, विपाकसूत्रे च पदसंख्या ॥३५७॥

टीका - बहुरि तहां पीछें उपासंते कहिये आहारादि दान करि वा पूजनादि करि संघ कौं सेवै; अँसे जे श्रावक, तिनिकौं उपासक कहिये । ते 'अधीयंते' कहिये पढै, सो उपासकाध्ययन नामा सातवां अंग है । इस विषै दर्शनिक, व्रतिक, सामायिक, प्रोषधोपवास, सच्चित्तविरति, रात्रिभक्तविरति, ब्रह्मचर्य, आरंभनिवृत्त, परिग्रहनिवृत्त, अनुमतिविरत, उद्दिष्टविरत ये गृहस्थ की ग्यारह प्रतिमा वा व्रत, शील, आचार क्रिया, मंत्रादिक इनिका विस्तार करि प्ररूपण है ।

बहुरि एक एक तीर्थंकर का तीर्थकाल विषै दश दश मुनीश्वर तीव्र चारि प्रकार का उपसर्ग सहि, इंद्रादिक करी करिहुई पूजा आदि प्रातिहार्यरूप प्रभावना पाइ, पापकर्म का नाश करि संसार का जो अंत, ताहि करते भये, तिनिकौ अंतकृत् कहिये तिनिका कथन जिस अंग में होइ ताकौ अंतकृद्दशांग आठवां अंग कहिये । तहां श्री वर्धमान स्वामी के बारैं नमि, मतंग, सोमिल, रामपुत्र, सुदर्शन, यमलीक, वलिक, विकृवल, किष्कंवल, पालंवष्ट, पुत्र ये दश भये । अँसै ही वृषभादिक एक एक तीर्थंकर के बारैं दश दश अंतकृत् केवली हौं हैं । तिनिका कथन इस अंग विषै है ।

बहुरि उपपाद है प्रयोजन जिनिका अँसै औपपादिक कहिये ।

बहुरि अनुत्तर कहिये विजय, वैजयंत, जयत, अपराजित, सर्वार्थ सिद्धि इनि विमाननि विषै जे औपपादिक होंहि उपजैं, तिनिकौं अनुत्तरौपपादिक कहिये । सो

एक एक तीर्थकर के बारै दश दश महामुनि दारुण उपसर्ग सहि करि, बड़ी पूजा पाइ, समाधि करि प्राण छोडि, विजयादिक अनुत्तर विमाननि विषै उपजै । तिनिकी कथा जिस अंग विषै होइ, सो अनुत्तरौपपादिक दशांग नामा नवमा अंग जानना । तहा श्रीवर्धमान स्वामी के बारै — ऋजुदास, धन्य, सुनक्षत्र, कार्तिकेय, नंद, नंदन, सालिभद्र, अभय, वारिषेण, चिलातीपुत्र ये दश भये । अैसें ही दश दश अन्य तीर्थकर के समय भी भये है । तनि सबनि का कथन इस अंग विषै है ।

बहुरि प्रश्न कहिये ब्रूभनहारा पुरुष, जो ब्रूभै सो व्याक्रियंते कहिये, जिस-विषै वर्णन करिये, सो प्रश्न व्याकरण नामा दशवां अंग जानना । इसविषै जो कोई ब्रूभनेवाला गई वस्तु कौ, वा मूठी की वस्तु कौं, वा चिता वा धनधान्य लाभ, अलाभ सुख, दुःख, जीवना, मरणा, जीति, हारि इत्यादिक प्रश्न ब्रूभै; अतीत, अनागत, वर्तमानकाल संबंधी, ताकौ यथार्थ कहने का उपायरूप व्याख्यान इस अंग विषै है । अथवा शिष्य कौ प्रश्न के अनुसार आक्षेपिणी, विक्षेपिणी, संवेजिनी, निर्वेजिनी ये च्यारि कथा भी प्रश्नव्याकरण अंग विषै प्रकट कीजिये है ।

तहां तीर्थकरादिक का चरित्ररूप प्रथमानुयोग, लोक का वर्णन रूप करणानुयोग, श्रावक मुनिधर्म का कथनरूप चरणानुयोग, पंचास्तिकायादिक का कथनरूप द्रव्यानुयोग, इनिका कथन अर परमत की शंका दूरि करिए, सो आक्षेपिणी कथा ।

बहुरि प्रमाण - नय रूप युक्ति, तीहिं करि न्याय के बल तै सर्वथा एकांतवादी आदि परमतनि करि कह्या अर्थ, ताका खडन करना, सो विक्षेपिणी कथा ।

बहुरि रत्नत्रयरूपधर्म अर तीर्थकरादि पद की ईश्वरता वा ज्ञान, सुख, वीर्यादिकरूप धर्म का फल, ताके अनुराग कौ कारण सो संवेजिनी कथा ।

बहुरि संसार, देह, भोग के राग तै जीव नारकादि विषै दरिद्र, अपमान, पीडा, दुःख भोगवै है । इत्यादिक विराग होने कौ कारणरूप जो कथा, सो निर्वेजिनी कथा कहिये । सो अैसी भी कथा प्रश्नव्याकरण अंग विषै पाइए है ।

बहुरि विपाक जो कर्म का उदय, ताकौ सूत्रयति कहिये कहै, सो विपाक सूत्रनामा ग्यारमां अंग जानना । इसविषै कर्मनि का फल देने रूप जो परिणमन, सोई उदय कहिये । ताका तीव्र, मंद, मध्यम, अनुभाग करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा वर्णन पाइए है ।

अैसे आचार नै आदि देकरि विपाक सूत्र पर्यंत ग्यारह अंग, तिनिके पदनि की संख्या कहिए है ।

अठ्ठारस छत्तीसं, बादालं अडकडी अड बि छप्पणं ।

सत्तरि अठ्ठावीसं, चोद्दालं सोलससहस्सा ॥३५८॥

इगि-दुग-पंचेयारं, तिवीसदुतिणउदिलख तुरियादी ।

चुलसीदिणखमेया, कोडी य विवागसूत्तम्हि ॥३५९॥

अष्टादश षट्त्रिंशत्, द्वाचत्वारिंशत् अष्टकृतिः अष्टद्विषट्पंचाशत् ।

सप्ततिः अष्टाविंशतिः, चतुश्चत्वारिंशत् षोडश सहस्राणि ॥३५८॥

एकद्विपंचैकादशत्रयोविंशतिद्वित्रिनवतिलक्षं चतुर्थादिषु ।

चतुरशीतिलक्षमेका, कोटिश्च विपाकसूत्रे ॥३५९॥

टीका - प्रथम गाथा विषै अठारह आदि हजार कहे । बहुरि दूसरी गाथा विषै चौथा अंग आदि अंगनिविषै एकादिक लाख सहित हजार कहे । अर विपाकसूत्र का जुदा वर्णन कीया । अब इनि गाथानि के अनुसारि एकादश अंगनि की पदनि की संख्या कहिये है । आचाराग विषै पद अठारह हजार (१८०००), सूत्रकृताग विषै पद छत्तीस हजार (३६०००), स्थानाग विषै बियालीस, हजार (४२०००), समवायांग विषै एक लाख अर आठ की कृति चौसठि हजार (१६४०००), व्याख्याप्रज्ञप्ति विषै दोय लाख अठ्ठाईस हजार (२२८०००), ज्ञातृकथा अंग विषै पांच लाख छप्पन हजार, (५५६०००), उपासकाध्ययन अंग विषै ग्यारह लाख सत्तरि हजार (११७००००), अतकृतदशांग विषै तेईस लाख अठ्ठाईस हजार (२३२८०००), अनुत्तरौपपादक दशांग विषै बाणवै लाख चवालीस हजार (६२४४०००), प्रश्न व्याकरण अंग विषै तिराणवै लाख सोलह हजार (६३१६०००), विपाकसूत्र अंग विषै एक कोडि चौरासी लाख (१८४४००००) अैसे एकादश अंगनि विषै पदनि की संख्या जाननी ।

वापणनरनोनानं, एयारंजुगे दी हु वादम्हि ।

कनजतजमताननमं, जनकनजयसीम बाहिरे वण्णा ॥३६०॥

वापणनरनोनानं, एकदशांगे युतिहि वादे ।

कनजतजमताननमं जनकनजयसीम बाह्ये वर्णाः ॥३६०॥



टीका — इहां वा आगे अक्षर संज्ञा करि अंकनि कौ कहै है । सो याका सूत्र पूर्वे गतिमार्गणा का वर्णन विषे पर्याप्त मनुष्यनि की संख्या कही है । तहा कह्या है 'कटपयपुरस्थवर्ण' इत्यादि सूत्र कह्या है । तिस ही तै अक्षर संज्ञा करि अंक जानना । क कारादिक नव अक्षरनि करि एक, दोय आदि क्रम तै नव अंक जानने । ट कारादि नव अक्षरनि करि नव अंक जानने । प कारादि पंच अक्षरनि करि पंच अंक जानने । य कारादि आठ अक्षरनि करि आठ अंक जानने । ज कार ङ् कार न कार इनिकरि बिंदी जानिये, असा कहि आए है । सो इहां वापणनरनोनानं इनि अक्षरनि करि चारि, एक, पाच, बिंदी, दोय, बिंदी, बिंदी, बिंदी ए अंक जानना । ताके चारि कोडि पद्रह लाख दोय हजार (४१५०२०००) पद सर्व एकादश अंगनि का जोड दीयें भये ।

बहुरि दृष्टिवाद नाम बारहवां अंग, ता विषे 'कनजतजमताननमं' कहिये एक, बिंदी, आठ, छह, आठ, पाच, छह, बिंदी, बिंदी, पाच इनि अंकनि करि एक सै आठ कोडि अडसठि लाख छप्पन हजार पाच (१०८६८५६००५) पद है सो कहिये । मिथ्यादर्शन, तिनि का है अनुवाद कहिये निराकरण जिस विषे असा दृष्टिवाद नामा अंग बारहवां जानना ।

तहा मिथ्यादर्शन सबधी कुवादी तीन सै तरेसठि है । तिनि विषे कौत्कल, कांठेबिद्धि, कौशिक हरि, श्मश्रु माधपिक रोमश, हारीत, मुड़, आश्वलायन इत्यादि क्रियावादी है, सो इनिके एकसौ अस्सी (१८०) कुवाद है ।

बहुरि मारीचि, कपिल, उलूक, गार्ग्य, व्याघ्रभूति, वाङ्मलि, माठर, मौद्गलायन इत्यादि अक्रियावादी है, तिनि के चौरासी (८४) कुवाद है ।

बहुरि साकल्य, वाल्कलि, कुसुत्ति, सात्यमुग्रीनारायण, कठ, माध्यदिन, मौद, पैप्पलाद, वादरायण, स्विष्ठिक्य, दैत्यकायन, वसु, जैमिन्य, इत्यादि ए अज्ञानवादी है । इनिके सडसठि (६७) कुवाद है ।

बहुरि वशिष्ठ, पाराशर, जतुकर्ण, वाल्मिकि, रोमहर्षिणि, सत्यदत्त, व्यास, एलापुत्र, उपमन्यु, ऐंद्रदत्त, अगस्ति इत्यादिक ए विनयवादी है । इनिके कुवाद बत्तीस (३२) है ।

सब मिलाए तीन सै तरेसठि कुवाद भये, इनिका वर्णन भावाधिकार विषे कह्ये । इहा प्रवृत्ति विषे इनि कुवादनि के जे जे अधिकारी, तिनि के नाम कहे ह ।

बहुरि अंग बाह्य जो सामायिकादिक, तिनि विषे 'जनकनजयसीम' कहिए  
आठ, बिदी, एक, बिदी, आठ, एक, सात, पाच अक तिनिके आठ कोडि एक लाख  
आठ हजार एक से पिचत्तरि (८०१०८१७५) अक्षर जानने ।

**चंद-रवि-जंबूदीवय-दीवसमुद्दय-वियाहपण्णत्ती ।**

**परियम्मं पंचविहं, सुत्तं पढमाणि जोगमदो ॥३६१॥**

**पुव्वं जल-थल-माया-आगासय-रूवगयमिमा पंच ।**

**भेदा हु चूलियाए, तेसु पमाणं इणं कमसो ॥३६२॥**

**चंद्ररविजंबूद्वीपकद्वीपसमुद्रकव्याख्याप्रज्ञप्तयः ।**

**परिकर्मं पंचविधं, सूत्रं प्रथमानुयोगमतः ॥३६१॥**

**पूर्वं जलस्थलमायाकाशकरूपगता इमे पंच ।**

**भेदा हि चूलिकायाः, तेषु प्रमाणमिदं क्रमशः ॥३६२॥**

**टीका —** दृष्टिवाद नामा बारह्वां अंग के पंच अधिकार है — परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्वगत, चूलिका ए पंच अधिकार है, तिनि विषे परितः कहिए मर्वांग ते कर्माणि कहिये जिन ते गुणकार भागहारादि रूप गणित होइ, अैसे करणसूत्र, वे जिस विषे पाइए, सो परिकर्म कहिये, सो परिकर्म पाच प्रकार है — चंद्रप्रज्ञप्ति, सूर्यप्रज्ञप्ति, जंबूद्वीपप्रज्ञप्ति, द्वीपसागरप्रज्ञप्ति, व्याख्याप्रज्ञप्ति ।

तहा चंद्रप्रज्ञप्ति — चंद्रमा का विमान, आयु, परिवार, ऋद्धि, गमनविशेष, वृद्धि, हानि, सारा, आधा, चौथाई ग्रहण इत्यादि प्ररूपे है । बहुरि सूर्यप्रज्ञप्ति — सूर्य का आयु मंडल, परिवार, ऋद्धि, गमन का प्रमाण ग्रहण इत्यादि प्ररूपे है । बहुरि जंबूद्वीप-प्रज्ञप्ति — जंबूद्वीपसंबंधी मेरुगिरि, कुलाचल, द्रह, क्षेत्र, वेदी, वनखंड, व्यंतरनि के मंदिर, नदी इत्यादि प्ररूपे है । बहुरि द्वीपसागरप्रज्ञप्ति — असंख्यात द्वीप समुद्र संबंधी स्वरूप वा तहां तिष्ठते ज्योतिषी, व्यतर, भवनवासीनि के आवास तहा अकृत्रिम जिन मंदिर, तिनको प्ररूपे है । बहुरि व्याख्याप्रज्ञप्ति — रूपी, अरूपी, जीव, अजीव आदि पदार्थनि का वा भव्य अभव्य आदि प्रमाण करि निरूपण करै है । अैसे परिकर्म के पंच भेद है ।

बहुरि सूत्रयति कहिये मिथ्यादर्शन के भेदनि कौ सूचै, बतावै, ताकौ सूत्र कहिये । तिस विषे जीव अबंधक ही है; अकर्ता है, निर्गुण है, अभोक्ता है; स्व-प्रकाशक ही है, परप्रकाशक ही है; अस्तिरूप ही है; नास्तिरूप ही है इत्यादि क्रियावाद, अक्रियावाद, अज्ञानवाद, विनयवाद, तिनके तीन सै तरेसठि भेद, तिनिका पूर्व पक्षपने करि वर्णन करिये है ।

बहुरि प्रथम कहिए मिथ्यादृष्टी अव्रती, विशेष ज्ञानरहित, ताकौ उपदेश देने निमित्त जो प्रवृत्त भया अधिकार - अनुयोग; कहिए सो प्रथमानुयोग कहिए । तिहि विषे चौबीस तीर्थकर, बारह चक्रवर्ति, नव बलभद्र, नव नारायण, नव प्रति-नारायण इनि तरेसठि शलाका पुरुषनि का पुराण वर्णन कीया है ।

बहुरि पूर्वगत चौदह प्रकार, सो आगे विस्तार नै लीएं कहैगे ।

बहुरि चूलिका के पंच भेद जलगता, स्थलगता, मायागता, रूपगता, आकाश-गता ए पंच भेद है ।

तिनि विषे जलगता चूलिका तौ जल का स्तंभन करना, जल विषे गमन करना, अग्नि का स्तंभन करना, अग्नि का भक्षण करना, अग्नि विषे प्रवेश करना इत्यादि क्रिया के कारण भूत मत्र, तत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है । बहुरि स्थल-गता चूलिका मेरुपर्वत, भूमि इत्यादि विषे प्रवेश करना शीघ्र गमन करना इत्यादिक क्रिया के कारणभूत मत्र तत्र तपश्चरणादिक प्ररूपै है । बहुरि मायागता चूलिका मायामई इन्द्रजाल विक्रिया के कारण भूत मत्र, तंत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है । बहुरि रूपगता चूलिका सिंह, हाथी, घोड़ा, वृषभ, हरिण इत्यादि नाना प्रकार रूप पलटि करि धरना; ताके कारण मत्र, तत्र, तपश्चरणादि प्ररूपै है । वा चित्राम, काठ, लेपादिक का लक्षण प्ररूपै है । वा धातु रसायन कौ प्ररूपै है । बहुरि आकाशगता चूलिका - आकाश विषे गमन आदि कौ कारण भूत मत्र, तंत्रादि प्ररूपै है । अंस चूलिका के पाच भेद जानने ।

ए चंद्रप्रज्ञप्ति आदि देकर भेद कहे । तिनिके पदनि का प्रमाण आगे कहिए है, सो हे भव्य तू जानि ।

गतनम मनगं गोरम, मरगत जवगात नोननं जजलवखा ।

मननन धममननोनननामं रनधजधरानन जलादी ॥३६३॥

याजकनामेनाननमेदाणि पदाणि ह्येति परिकम्मे ।  
कानवधिवाचनाननमेसो पुण चूलियाजोगो ॥३६४॥

गतनम मनगं गोरम, मरगत जवगातनोननं जजलक्षाणि ।  
मननन धममननोनननामं रनधजधरानन जलादिषु ॥३६३॥

याजकनामेनाननमेतानि पदानि भवन्ति परिकर्मणि ।  
कानवधिवाचनाननमेषः पुनः चूलिकायोगः ॥३६४॥

टीका — इहां 'कटपयपुरस्थवर्णैः' इत्यादि सूत्रोक्त विधान तै अक्षर संज्ञा करि अंक कहैं है; सो अंकनि करि जो प्रमाण भया, सोई इहां कहिए हैं । एक एक अक्षर तै एक एक अक जानि लेना; सो 'गतनमनोननं' कहिये छत्तीस लाख पांच हजार (३६०५०००) पद चंद्रप्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुनि 'मनगनोननं' कहिए पांच लाख तीन हजार (५०३०००) पद सूर्य-प्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुनि 'गोरमनोननं' कहिये तीन लाख पचीस हजार (३२५०००) पद जंबू-द्वीप प्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुनि 'मरगतनोननं' कहिये बावन लाख छत्तीस हजार (५२३६०००) पद द्वीपसागर प्रज्ञप्ति विषै है ।

बहुनि 'जवगातनोननं' कहिये चौरासी लाख छत्तीस हजार (८४३६०००) पद व्याख्याप्रज्ञप्ति अंग के है ।

बहुनि 'जजलरका' कहिए अठ्यासी लाख (८८०००००) पद सूत्र नामा भेद विषै है ।

बहुनि मननन कहिए पांच हजार (५०००) पद प्रथमानुयोग विषै है ।

बहुनि धममननोनननामं कहिए पिच्चारणवै कोडि पचास लाख पांच (६५५०००००५) पद पूर्वगत विषै है । चौदह पूर्वनि के इतने पद है ।

बहुनि रनधजधरानन कहिए दोय कोडि नव लाख निवासी हजार दोय सै (२०६८२००) पद जलगता आदि चूलिका तिन विषै एक एक के इतने इतने पद

जानने । जलगता पद (२०६८६२००), स्थलगता २०६८६२००, मायागता २०६८६२००, आकाशगता २०६८६२००, रूपगता २०६८६२०० असे पद जानने ।

बहुरि 'याजकनामेनाननं' कहिए एक कोडि इक्यासी लाख पाच हजार (१८१०५०००) पद चद्रप्रज्ञप्ति आदि पांच प्रकार परिकर्म का जोड़ दीये हो ह ।

बहुरि 'कानवधिवाचनाननं' कहिए दश कोडि गुणचास लाख छियालीस हजार (१०४६४६०००) पद पांच प्रकार चूलिका का जोड़ दीये हो ह ।

इहां ग कार तै तीन का अंक, त कार तै छह का अंक, म कार तै पाच का अंक, र कार तै दोय का अंक, न कार तै बिंदी, इत्यादि अक्षर संज्ञा करि अक संज्ञा कहे है । क कार तै लेय ग कार तीसरा अक्षर है; तातैं तीन का अंक कह्या । बहुरि ट कार तै त कार छठा अक्षर है; तातैं छह का अंक कह्या । प कार तै म कार पांचवां अक्षर है; तातैं पांच का अंक कह्या । य कार तै र कार दूसरा अक्षर है; तातैं दोय का अंक कह्या है । न कार तै विंदी कही है । इत्यादि यहा अक्षर संज्ञा तै अंक जानने ।

पण्णट्ठदाल पण्णतीस, तीस पण्णसास पण्ण तेरसदं ।

णउदी दुदाल पुव्वे, पणवण्णा तेरससयाइं ॥३६५॥

छस्सय पण्णासाइं, चउसयपण्णास छसयपण्णुवीसा ।

बिहि लक्खेहि दु गुणिया, पंचम रुऊण छज्जुदा छट्ठे ॥३६६॥

पंचाशदष्टचत्वारिंशत् पंचत्रिंशत् त्रिंशत् पंचाशत् पंचाशत्त्रयोदशशतं ।

नवतिः द्वाचत्वारिंशत् पूर्वं पंचपंचाशत् त्रयोदशशतानि ॥३६५॥

षट्छतपंचाशानि, चतुः शतपंचाशत् षट्छतपंचविंशतिः ।

द्वाभ्यां लक्षाभ्यां तु गुणितानि पंचमं रूपोनं षट्युतानि षट्ठे ॥३६६॥

टीका — उत्पाद आदि चौदह पूर्वनि विषे पदनि ती नव्या त्रिंशत् । जीव वस्तु का उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, आदि अनेक धर्म, नितरा प्रकृत, नो उत्पत्त्याना प्रथम पूर्व है । इस विषे जीवादि वस्तुनि ता नाना प्रकार नव विंशति विंशति युगपत् अनेक धर्म करि भये, जे उत्पाद, व्यय, ध्रौव्य, ते चौदह पद ।

धर्म भये । सो उन धर्मरूप परिणया वस्तु, सो भी नव प्रकार हो है । उपज्या, उपजै है, उपजैगा । नष्ट भया, नष्ट हो है, नष्ट होयगा । स्थिर भया, स्थिर है, स्थिर होगया । अैसे नव प्रकार द्रव्य भया । इन एक एक का नव नव उत्पन्नपना आदि धर्म जानने । अैसे इक्यासी भेद लीये द्रव्य का वर्णन है । याके दोय लाख तें पचासकौ गुणिये, अैसा एक कोडि (१०००००००) पद जानने ।

बहुरि अग्र कहिये, द्वादशांग विषै प्रधानभूत जो वस्तु, ताका अयन कहिये ज्ञान, सो ही है प्रयोजन जाका, अैसा अग्रायणीय नामा दूसरा पूर्व है । इस विषै सात सै सुनय अर दुर्नय, तिनिका अर सप्त तत्त्व, नव पदार्थ, षट्द्रव्य इत्यादि का वर्णन है । याके दोय लाख तें अड़तालीस कौ गुणिये, अैसैं छिनवै लाख (९६०००००) पद है ।

बहुरि वीर्य कहिये जीवादिक वस्तु की शक्ति — समर्थता, ताका है अनुप्रवाद कहिये वर्णन, जिस विषै अैसा वीर्यानुवाद नामा तीसरा पूर्व है । इस विषै आत्मा का वीर्य, पर का वीर्य, दोऊ का वीर्य, क्षेत्रवीर्य, कालवीर्य, भाववीर्य, तपोवीर्य इत्यादिक द्रव्य गुण पर्यायनि का शक्तिरूप वीर्य तिसका व्याख्यान है । याकौ दोय लाख तें पैतीस कौ गुणिये अैसैं सत्तरि लाख (७००००००) पद है ।

बहुरि अस्ति, नास्ति आदि जे धर्म तिनिका है प्रवाद कहिये प्ररूपण इस विषै अैसा अस्ति नास्ति प्रवाद नामा चौथा पूर्व है । इस विषै जीवादि वस्तु अपने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि सयुक्त हैं । तातें स्यात् अस्ति है । बहुरि पर के द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव विषै यह नाही है; तातें स्यान्नास्ति है । बहुरि अनुक्रम तें स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा स्यात् अस्ति - नास्ति है । बहुरि युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा द्रव्य कहने में न आवे, तातें स्यात् अवक्तव्य है । बहुरि स्व द्रव्य, क्षेत्र काल भाव करि द्रव्य अस्ति रूप है । बहुरि युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि कहने में आवै; तातें स्यात् अस्ति अवक्तव्य है । बहुरि पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि द्रव्य नास्तिरूप है । बहुरि युगपत् स्व - पर द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव करि द्रव्य कहने में न आवै; तातें स्यात्नास्तिअवक्तव्य है । बहुरि अनुक्रम तें स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा द्रव्य अस्ति नास्ति रूप है । अर युगपत् स्व पर द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव की अपेक्षा अवक्तव्य है; तातें स्यात् अस्ति - नास्ति अवक्तव्य है । अैसैं जिस प्रकार अस्ति नास्ति अपेक्षा सप्त भेद कहे है । तैसैं एक-अनेक

धर्म अपेक्षा सप्त भग हो है । अभेद अपेक्षा स्यात् एक है । भेद अपेक्षा स्यात् अनेक है । क्रम तै अभेद भेद अपेक्षा स्यात् एक - अनेक है । युगपत् अभेद भेद अपेक्षा स्यात् अवक्तव्य है । अभेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद-भेद अपेक्षा स्यात् एक अवक्तव्य है । भेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद भेद अपेक्षा स्यात् अनेक अवक्तव्य है । क्रम तै अभेद - भेद अपेक्षा वा युगपत् अभेद - भेद अपेक्षा स्यात् एक - अनेक अवक्तव्य है । अैसे ही नित्य अनित्य नै आदि दे अनंत धर्मनि के सप्त भंग है । तहा प्रत्येक भंग तीन अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य, अर द्विसंयोगी भंग तीन अस्ति नास्ति, अस्ति अवक्तव्य, नास्ति अवक्तव्य, अर त्रिसंयोगी एक अस्ति - नास्ति - अवक्तव्य । इनि सप्त भंगनि का समुदाय सो सप्तभंगी सो प्रश्न के वश तै एक ही वस्तु विषे अविरोधपनै सभवती नाना प्रकार नयनि की मुख्यता, गौणता करि प्ररूपण कीजिए है । इहां सर्वथा नियमरूप एकांत का अभाव लीए कथंचित् अैसा है अर्थ जाका सो स्यात् शब्द जानना । इस अंग के दोय लाख तै तीस कौ गुणिए सो साठि लाख (६००००००) पद हैं ।

बहुरि ज्ञाननि का है प्रवाद कहिए प्ररूपण, जिस विषे अैसा ज्ञानप्रवाद नामा पांचमां पूर्व है । इस विषे मति, श्रुति, अवधि, मनः पर्यय, केवल ए पांच सम्यग्ज्ञान अर कुमति, कुश्रुति, विभंग ए तीन कुज्ञान इनिका स्वरूप, संख्या वा विषय वा फल इत्यादि अपेक्षा प्रमाण अप्रमाणता रूप भेद वर्णन कीजिए है । याके दोय लाख तै पचास कौ गुणै, एक कोटि होइ तिन में स्यों एक घटाइए अैसे एक घाटि कोडि (१९९९९९९) पद है । गाथा विषे पंचम रूऊण अैसा कहा है । तातै पाचमां अंग में एक घटाया अन्य संख्या गाथा अनुसारि कहिए ही है ।

बहुरि सत्य का है प्रवाद कहिए प्ररूपण इस विषे अैसा सत्यप्रवाद नामा छठा पूर्व है । इस विषे वचन गुप्ति - बहुरि वचन संस्कार के कारण, बहुरि वचन के प्रयोग, बहुरि बारह प्रकार भाषा, बहुरि बोलनेवाले जीवो के भेद, बहुरि बहुत प्रकार मृषा वचन, बहुरि दशप्रकर सत्य वचन इत्यादि वर्णन है । तहा असत्य न बोलना वा मौन धरना सो सत्य वचन गुप्ति कहिए ।

बहुरि वचन संस्कार के कारण दोय एक तौ स्थान, एक प्रयत्न । तहां जिनि स्थानकनि तै अक्षर बोलै, जांहि ते स्थान आठ है - हृदय, कंठ, मस्तक, जिह्वा का मूल, दंत, नासिका, होठ, तालवा । जैसे अ कार, क वर्ग, ह कार, विसर्ग इनिका कठ स्थान है अैसे अक्षरनि के स्थान जानने ।

बहुरि जिस प्रकार अक्षर कहे जांहि, ते प्रयत्न पाच है - स्पृष्टता, ईपत् स्पृष्टता, विवृतता, ईषद्विवृतता, संवृतता । तहा अंग का अंग तै स्पर्श भए, अक्षर बोलिए सो स्पृष्टता । किछू थोरा स्पर्श भए बोलिए, सो ईपत्स्पृष्टता अंग कौ उघाडि बोलिए, सो विवृतता किछू थोरा उघाडि बोलिए, सो ईषद्विवृतता अंग तै अंग कौ ढांकि बोलिए; सो संवृतता । जैसै प कारादिक होठ से होठ का स्पर्श भए ही उच्चारण होइ; अैसे प्रयत्न जानने ।

बहुरि वचन प्रयोग दोय प्रकार शिष्टरूप भला वचन, दुष्टरूप बुरा वचन ।

बहुरि भाषा बारह प्रकार, तहां इसने अैसा कीया है; ग्रैसा अनिष्ट वचन कहना; सो अभ्याख्यान कहिए । बहुरि जातै परस्पर विरोध होइ; सो कलह वचन । बहुरि पर का दोष प्रकट करना; सो पैशून्य वचन । बहुरि धर्म अर्थ काम मोक्ष का संबंध रहित वचन, सो असंबद्ध प्रलाप वचन । बहुरि इन्द्रिय विषयनि विषै रति का उपजावन हारा वचन; सो रति वचन । बहुरि विषयनि विषै अरति का उपजावन हारा वचन, सो अरति वचन । बहुरि परिग्रह का उपजावने, राखने की आसक्तता का कारण वचन; सो उपधि वचन । बहुरि व्यवहार विषै ठिगनेरूप वचन, सो निकृति वचन । बहुरि तप ज्ञानादिक विषै अविनय का कारण वचन; सो अप्रणति वचन । बहुरि चोरी का कारणरूप वचन, सो मोष वचन । बहुरि भले मार्ग का उपदेशरूप वचन, सो सम्यग्दर्शन वचन । बहुरि मिथ्या मार्ग का उपदेशरूप वचन, सो मिथ्यादर्शन वचन । अैसे बारह भाषा है ।

बहुरि बेइन्द्रिय आदि सैनी पंचेन्द्रिय पर्यंत वचन बोलने वाले वक्तानि के भेद है । बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावादिक करि मृषा जो असत्य वचन, सो बहुत प्रकार है । बहुरि जनपदादि दश प्रकार सत्य वचन पूर्वे योग मार्गणा विषै कहि आए है; अैसा अैसा कथन इस पूर्व विषै है । याके दोय लाख तै पचास कौ गुणिए अर छज्जुदा छट्टे इस वचन करि छह मिलाइए अैसे एक कोटि छह (१००००००६) पद है ।

बहुरि आत्मा का प्रवाद कहिए प्ररूपण है, इस विषै अैसा आत्मप्रवाद नामा सातमां पूर्व है । इस विषै गाथा -

जीवो कत्ता य वेत्ता य पाणी भोत्ता य पुगलो ।  
वेदी विण्णू सयंभू य सरीरी तह माणवो ॥



सत्ता जंतू य माणी य मायी जोगी य संकुडो ।

असंकुडो य खेत्तण्ह, अंतरप्पा तहेव य ॥

इत्यादि आत्मस्वरूप का कथन है; इनका अर्थ लिखिए है ।

जीवति कहिये जीवै है, व्यवहार करि दश प्राणनि कौ, निश्चय करि ज्ञान दर्शन सम्यक्स्वरूप चैतन्य प्राणनि कौ धारै है । अर पूर्वे जीया, आगे जीवेगा; ताते आत्मा को जीव कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि शुभाशुभ कर्म कौ अर निश्चय करि चैतन्य प्राणनि कौ करै है, ताते कर्ता कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि सत्य असत्य वचन बोलै है; ताते वक्ता है । निश्चय करि वक्ता नाही है ।

बहुरि दोऊ नयनि करि जे प्राण कहे, ते याकै पाइए है । ताते प्राणी कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि शुभ अशुभ कर्म के फल कौ अर निश्चय करि निज स्वरूप कौ भोगवै है; ताते भोक्ता कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि कर्म-नोकर्मरूप पुद्गलनि कौ पूरै है अर गालै है; ताते पुद्गल कहिए । निश्चय करि आत्मा पुद्गल है नाही ।

बहुरि दोऊ नयनि करि लोकालोक संबंधी त्रिकालवर्ती सर्व ज्ञेयनि कौ 'वेत्ति' कहिए जानै है, ताते वेदक कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि अपने देह कौ वा केवल समुद्धात करि सर्व लोक कौ अर निश्चय करि ज्ञान तै सर्व लोकालोक कौ वेवेष्टि कहिए व्यापै है, ताते विष्णु कहिए ।

बहुरि यद्यपि व्यवहार करि कर्म के वशतै ससार विषे परिणवै है; तथापि निश्चय करि स्वयं आप ही आप विषे ज्ञान - दर्शन स्वरूप ही करि भवति कहिए परिणवै है, ताते स्वयंभू कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि औदारिक आदिक शरीर, याकै है; ताते शरीरी कहिये, निश्चय करि शरीरी नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि मनुष्यादि पर्यायरूप परिणवै है, तातै मानव कहिए । उपलक्षण तै नारकी वा तिर्यच वा देव कहिए । निश्चय करि मनु कहिए ज्ञान, तीहि विषै भवः कहिए सत्तारूप है; तातै मानव कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि कुटुंब, मित्रादि परिग्रह विषै सजति कहिये आसक्त होइ प्रवर्तै है; तातै सक्ता कहिए । निश्चयकरि सक्ता नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि संसार विषै नाना योनि विषै जायते कहिए उपजै है, जातै जंतु कहिये । निश्चय करि जंतु नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि मान कहिए अहंकार, सो याकै है; तातै मानी कहिए । निश्चयकरि मानी नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि माया जो कपटाई; सो याकै है; तातै मायावी कहिए । निश्चय करि मायावी नाही है ।

बहुरि व्यवहारकरि मन, वचन, काय क्रियारूप योग याकै है; तातै योगी कहिए । निश्चय करि योगी नाही है ।

बहुरि व्यवहार करि सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना करि प्रदेशनि को संकोचै है; तातै संकुट है । बहुरि केवलिसमुद्धात करि सर्व लोक विषै व्यापै है, तातै असंकुट है । निश्चय करि प्रदेशनि का संकोच विस्तार रहित किंचित् ऊन चरम शरीर प्रमाण है, तातै संकुट, असंकुट नाही है ।

बहुरि दोऊ नय करि क्षेत्र, जो लोकालोक, ताहि जानाति (ज्ञ) कहिए जानै है; तातै क्षेत्रज्ञ कहिए ।

बहुरि व्यवहार करि अष्ट कर्मनि के अभ्यंतर प्रवर्तै है । अर निश्चय करि चैतन्य स्वभाव के अभ्यंतर प्रवर्तै है; तातै अंतरात्मा कहिए ।

चकार तै व्यवहार करि कर्म - नोकर्म रूप मूर्तीक द्रव्य के सबध तै मूर्तीक है; निश्चय करि अमूर्तीक है । इत्यादिक आत्मा के स्वभाव जानने । इनिका व्याख्यान इस पूर्व विषै है । याके दोय लाख तै तेरह सै कौ गुणिए औसे छब्बीस कोडि (२६०००००००) पद है ।

बहुरि कर्म का है प्रवाद कहिए प्ररूपण, इसविषे ऐसा कर्मप्रवाद नामा आठमां पूर्व है । इसविषे मूल प्रकृति, उत्तर प्रकृति, उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप भेद लीए बध, उदय, उदीरणा, सत्ता रूप अवस्था कौ धरै ज्ञानावरणादिक कर्म, तिनिके स्वरूप कौ वा समवधान, ईर्यापथ, तपस्या, अद्यःकर्म इत्यादिक क्रियारूप कर्मनि कौ प्ररूपिए है । याके दोय लाख तै निवै कौ गुणिए, अैसे एक कोडि अस्सी लाख (१८००००००) पद हैं ।

बहुरि प्रत्याख्यायते कहिए निषेधिए है पाप जाकरि, ऐसा प्रत्याख्यान नामा नवमां पूर्व है । इसविषे नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जीवनि का संहनन वा बल इत्यादिक के अनुसार करि काल मर्यादा लीए वा यावज्जीव प्रत्याख्यान कहिए सकल पाप सहित वस्तु का त्याग; उपवास की विधि, ताकी भावना, पाच समिति, तीन गुप्ति इत्यादि वर्णन कीजिए है । याके दोय लाख तै बियालीस कौ गुणिए, अैसे चौरासी लाख (८४००००००) पद है ।

बहुरि विद्यानि का है अनुवाद कहिए अनुक्रमतै वर्णन इस विषे ऐसा विद्यानुवाद नामा दशमां पूर्व है । इसविषे सात सै अगुष्ठ, प्रेससेन आदि अल्पविद्या अर पाच सै रोहिणी आदि महाविद्या, तिनका स्वरूप, समर्थता, साधनभूत मन्त्र, यन्त्र, पूजा, विधान, सिद्ध भये पीछे उन विद्यानि का फल बहुरि अतरिक्ष, भौम, अंग, स्वर, स्वप्न, लक्षणा, व्यजन, छिन्न ए आठ महानिमित्त इत्यादि प्ररूपिए । सो याके दोय लाख तै पचावन कौ गुणिए अैसे एक कोडि दश लाख (११०००००००) पद है ।

बहुरि कल्याणनि का है वाद कहिए प्ररूपण जाविषे असा कल्याणवाद नामा ग्यारह्वां पूर्व है । इस विषे तीर्थकर, चक्रवर्ति, बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण इनके गर्भ आदिक कल्याण कहिए महा उच्छ्रव बहुरि तिनके कारणभूत षोडश भावना, तपश्चरण आदिक क्रिया । बहुरि चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र इनिका गगनविशेष, ग्रहण, शकुन, फल इत्यादि विशेष वर्णन कीजिए है । याके दोय लाख तै नेरह सै कौ गुणिए अैसे छब्बीस कोडि (२६००००००००) पद है ।

बहुरि प्राणनि का है आवाद कहिए प्ररूपण इसविषे असा प्राणावाद नामा बारह्वां पूर्व है । इसविषे चिकित्सा आदि आठ प्रकार वैद्यक, अर भूतादि व्याधि दूर करने कौ कारण मन्त्रादिक वा विष दूरि करणहारा जो जागुलिक, नाका कर्म वा

इला, पिंगला, सुष्मणा, इत्यादि स्वरोदय रूप बहुत प्रकार कारणरूप सासो-स्वास का भेद; बहुरि दश प्राणनि कौं उपकारी वा अनुपकारी वस्तु गत्यादिक के अनुसारि वर्णन कीजिए है; सो जाके दोय लाख तैं छह सैं पचास कौं गुणिए, ऐसे तेरह कोडि (१३०००००००) पद हैं ।

बहुरि क्रिया करि विशाल कहिए विस्तीर्ण, शोभायमान अँसा क्रियाविशाल नामा तेरह्वां पूर्व है । इसविषे संगीत, शास्त्र, छंद, अलंकारादि शास्त्र, बहत्तरि कला, चौसठि स्त्री का गुण शिल्प आदि चातुर्यता, गर्भाधान आदि चौरासी क्रिया, सम्यग्दर्शनादि एक सैं आठ क्रिया, देववंदना आदि पचीस क्रिया और नित्य नैमित्तिक क्रिया इत्यादिक प्ररूपिए है । याके दोय लाख तैं च्यारि सैं पचास कौं गुणिए अँसे नव कोडि (९०००००००) पद है ।

बहुरि त्रिलोकनि का बिंदु कहिए अवयव अर सार सो प्ररूपिए है, याविषे अँसा त्रिलोकबिंदुसार नामा चौदह्वां पूर्व है । इसविषे तीन लोक का स्वरूप अर छब्बीस परिकर्म, आठ व्यवहार, च्यारि बीज इत्यादि गणित अर मोक्ष का स्वरूप, मोक्ष का कारणभूत क्रिया, मोक्ष का सुख इत्यादि वर्णन कीजिए है । याके दोय लाख तैं छह सैं पचीस कौं गुणिए, अँसे बारह कोडि पचास लाख (१२५०००००००) पद हैं ।

अँसे चौदह पूर्वनि के पदनि की संख्या हो है । इहां दोय लाख का गुणकार का विधान करि गाथा विषे संख्या कही थी; ताते टीका विषे भी तँसै ही कही है ।

**सामादय चउवीसत्थयं, तदो वंदणा पडिक्कमणं ।**

**वेणइयं किदियम्मं, दसवेयालं च उत्तरज्झयणं ॥३६७॥**

**कप्पववहार-कप्पाकप्पिय-महकप्पियं च पुंडरियं ।**

**महपुंडरीयणिसिहियमिदि चोद्दसमंगबाहिरयं ॥३६८॥**

सामायिकं चतुर्विंशस्तवं, ततो वंदना प्रतिक्रमणं ।

वेनयिकं कृतिकर्म, दशवैकालिकं च उत्तराध्ययनं ॥३६७॥

कल्पव्यवहार — कल्पाकल्प — महाकल्पं च पुंडरीकं ।

महापुंडरीकं निषिद्धिका इति चतुर्दशांगबाह्य ॥३६८॥

टीका - बहुरि प्रकीर्णक नामा अंगबाह्य द्रव्यश्रुत, सो चोदह प्रकार है । सामायिक, चतुर्विंशतिस्तव, वदना, प्रतिक्रमण, वैतयिक, कृतिकर्म, दशवैकालिक, उत्तराध्ययन, कल्प्यव्यवहार, कल्प्याकल्प्य, महाकल्प्य, पुडरीक, महापुडरीक, निषिद्धिका ।

तहां सं कहिए एकत्वपनै करि आयः कहिए आगमन पर द्रव्यनि तें निवृत्ति होइ, उपयोग की आत्मा विषै प्रवृत्ति 'यहु मै ज्ञाता द्रष्टा हौ' असै आत्मा विषै उपयोग सो सामायिक कहिए । जातै एक ही आत्मा सो जानने योग्य है; तातै ज्ञेय है । अर जानने हारा है, तातै ज्ञायक है । तातै आप कौ ज्ञाता द्रष्टा अनुभवै है ।

अथवा सम कहिए राग-द्वेष रहित मध्यस्थ आत्मा, तिस विषै आयः कहिए उपयोग की प्रवृत्ति; सो सामायिक कहिए, समाय है प्रयोजन जाका सो सामायिक कहिए । नित्य नैमित्तिक रूप क्रिया विशेष, तिस सामायिक का प्रतिपादक शास्त्र सो भी सामायिक कहिए ।

सो नाम, स्थापना, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव भेद करि सामायिक छह प्रकार है ।

तहां इष्ट - अनिष्ट नाम विषै राग द्वेष न करना । अथवा किसी वस्तु का सामायिक ऐसा नाम धरना, सो नाम सामायिक है ।

बहुरि मनोहर वा अमनोहर जो स्त्री - पुरुषादिक का आकार लीए काठ, लेप, चित्रामादि रूप स्थापना तिन विषै राग - द्वेष न करना । अथवा किसी वस्तु विषै यहु सामायिक है, ऐसा स्थापना करि स्थाप्यो हूवा वस्तु, सो स्थापनासामायिक है । बहुरि इष्ट - अनिष्ट, चेतन - अचेतन द्रव्य विषै राग - द्वेष न करना । अथवा जो सामायिक शास्त्र कौ जानै है अर वाका उपयोग सामायिक विषै नाही है, सो जीव वा उस सामायिक शास्त्र के जाननेवाले का शरीरादिक, सो द्रव्य सामायिक है ।

बहुरि ग्राम, नगर, वनादिक इष्ट अनिष्ट क्षेत्र, तिन विषै राग द्वेष न करना, सो क्षेत्र सामायिक है ।

बहुरि वसंत आदि ऋतु अर शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, दिन, वार, नक्षत्र इत्यादि इष्ट - अनिष्ट काल के विशेष, तिनविषै राग - द्वेष न करना, सो काल सामायिक है ।

बहुरि भाव, जो जीवादिक तत्त्व विषे उपयोगरूप पर्याय, ताके मिथ्यात्वक-षायरूप संक्लेशपना की निवृत्ति अथवा सामायिक शास्त्र कौ जानै है अरु उस ही विषे उपयोग जाका है, सो जीव अथवा सामायिक पर्यायरूप परिणामन, सो भाव-सामायिक है ।

असै सामायिक नामा प्रकीर्णक कह्या है ।

बहुरि जिस काल विषे जिनका प्रवर्तन होइ, तिस काल विषे तिन ही चौबीस तीर्थकरनि का नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव का आश्रय करि पंच कल्याणक, चौतीस अतिशय, आठ प्रातिहार्य, परम औदारिक दिव्य शरीर, समवसरणसभा, धर्मोपदेश देना इत्यादि तीर्थकरपने की महिमा का स्तवन, सो चतुर्विंशतिस्तव कहिए । ताका प्रतिपादक शास्त्र, सो चतुर्विंशतिस्तव नामा प्रकीर्णक है ।

बहुरि एक तीर्थकर का अवलंबन करि प्रतिमा, चैत्यालय इत्यादिक की स्तुति, सो वंदना कहिए । याका प्रतिपादक शास्त्र, सो वंदना प्रकीर्णक कहिए ।

बहुरि प्रतिक्रम्यते कहिए प्रमाद करि कीया है दैवसिक आदि दोष, तिनिका निराकरण जाकरि कीजिए, सो प्रतिक्रमण प्रकीर्णक कहिए । सो प्रतिक्रमण प्रकीर्णक सात प्रकार है - दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्यापथिक उत्तमार्थ ।

तहां संध्यासमय दिन विषे कीया दोष, जाकरि निवारिए, सो दैवसिक है । बहुरि प्रभातसमय रात्रि विषे कीया दोष जाकरि निवारिए, सो रात्रिक है । बहुरि पंद्रह्वे दिन, पक्ष विषे कीया दोष जाकरि निवारिए, सो पाक्षिक कहिए । बहुरि चौथे महीने च्यारिमास विषे कीए दोष जाकरि निवारिए, सो चातुर्मासिक कहिए । बहुरि वर्षवै दिन एकवर्ष विषे कीए दोष जाकरि निवारिए, सो सांवत्सरिक कहिए । बहुरि गमन कर तै निपज्या दोष जाकरि निवारिए; सो ऐर्यापथिक कहिए । बहुरि सर्व पर्याय संबंधी दोष जाकरि निवारिए; सो उत्तमार्थ है । असै सात प्रकार प्रतिक्रमण जानना ।

सो भरतादि क्षेत्र अरु दुःषमादिकाल, छह संहनन करि संयुक्त स्थिर वा अस्थिर पुरुषनि के भेद, तिनकी अपेक्षा प्रतिक्रमण का प्रतिपादक शास्त्र, सो प्रति-क्रमण नामा प्रकीर्णक कहिए ।

अवधीयत इत्यवधिः सीमाज्ञानमिति वर्णितं समये ।

भवगुणप्रत्ययविधिकं, यदवधिज्ञानमिति ब्रुवन्ति ॥३७०॥

टीका — अवधीयते कहिए द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि परिमाण जाका कीजिए, सो अवधिज्ञान जानना । जैसे मति, श्रुत, केवलज्ञान का विषय द्रव्य, क्षेत्रादि करि अपरिमित है; तैसे अवधिज्ञान का विषय अपरिमित नाही । श्रुतज्ञान करि भी शास्त्र के बल तै अलोक वा अनन्तकाल आदि जानै । अवधिज्ञान करि जेता द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव प्रमाण आगै कहैगे; तितना ही प्रत्यक्ष जानै । तातै सीमा जो द्रव्य क्षेत्रादि की मर्यादा, ताकौ लीए है विषय जाका, असा जो ज्ञान, सो अवधिज्ञान है; असै सर्वज्ञदेव सिद्धांत विषै कहे है ।

सो अवधिज्ञान दोय प्रकार कह्या है । एक भवप्रत्यय, एक गुणप्रत्यय । तहा भव जो नारकादिक पर्याय, ताके निमित्त तै होइ; सो भवप्रत्यय कहिए, जो नारकादि पर्याय धारै ताके अवधिज्ञान होइ ही होइ, तातै इस अवधिज्ञान कौ भवप्रत्यय कहिए । बहुरि गुणप्रत्यय कहिए सम्यग्दर्शनादि रूप, सो है निमित्त जाका; सो गुणप्रत्यय कहिए । मनुष्य, तिर्यच सर्व ही कै अवधिज्ञान नाही; जाकै सम्यग्दर्शनादिक की विशुद्धता होइ, ताकै अवधिज्ञान होइ, तातै इस अवधिज्ञान कौ गुणप्रत्यय कहिए ।

भवपञ्चङ्गो सुरणिरयाणं तित्थे वि सव्वअंगुत्थो ।

गुणपञ्चङ्गो णरतिरियाणं संखादिचिह्णभवो ॥३७१॥

भवप्रत्ययकं सुरनारकाणां तीर्थेऽपि सर्वांगोत्थम् ।

गुणप्रत्ययकं नरतिरश्चां संखादिचिह्नं भवम् ॥३७१॥

टीका — तहा भवप्रत्यय अवधिज्ञान देवनि कै, नारकीनि कै अर चरम शरीरी तीर्थकर देवनि कै पाइए है । सो यहु भवप्रत्यय अवधिज्ञान 'सर्वांगोत्थ' कहिए सर्व आत्मा के प्रदेशनि विषै तिष्ठता अवधिज्ञानावरण अर वीर्यातिराय कर्म, ताके क्षयोपशम तै उत्पन्न हो है ।

बहुरि गुणप्रत्यय अवधिज्ञान है, सो पर्याप्त मनुष्य अर सैनी पंचेद्री पर्याप्त तिर्यच, इनिके सभवै है । सो यहु गुणप्रत्यय अवधिज्ञान 'संखादिचिह्नभवम्' कहिए

नाभि के ऊपरि शंख, कमल, वज्र, साथिया, माछला, कलस इत्यादिक का आकार रूप जहा शरीर विषै भले लक्षण होंइ, तहां संबंधी जे आत्मा के प्रदेश, तिनि विषै तिष्ठता जो अवधिज्ञानावरण कर्म अर वीर्यांतराय कर्म, तिनिके क्षयोपशम तै उत्पन्न हो है ।

भवप्रत्यय अवधिज्ञान विषै भी सम्यग्दर्शनादि गुण का सद्भाव है, तथापि उन गुणों की अपेक्षा नाही करने तै भवप्रत्यय कह्या अर गुणप्रत्यय विषै मनुष्य तिर्यं भव का सद्भाव है; तथापि उन पर्यायिनि की अपेक्षा नाही करने तै गुणप्रत्यय कह्या है ।

**गुणपच्चङ्गो छद्वा, अनुगावट्ठदपवड्ढमाणिदरा ।  
देसोही परमोही, सव्वोहि त्ति य तिधा ओही ॥३७२॥**

गुणप्रत्ययकः षोढा, अनुगावस्थितप्रवर्धमानेतरे ।

देशावधिः परमावधिः, सर्वावधिरिति च त्रिधा अवधिः ॥३७२॥

टीका — जो गुणप्रत्यय अवधिज्ञान है, सो छह प्रकार है — अनुगामी, अवस्थित, वर्धमान, अर इतर कहिए अननुगामी, अनवस्थित, हीयमान अैसे छह प्रकार है।

तहां जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीव के साथि ही गमन करै, ताका अनुगामी कहिए । ताके तीन भेद — क्षेत्रानुगामी, भवानुगामी, उभयानुगामी । तहा जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र विषै उपज्या था, तिस क्षेत्र कौ छोड़ि, जीव और क्षेत्र विषै बिहार कीया, तहा भी वह अवधिज्ञान साथि ही रह्या, विनष्ट न हुवा और पर्याय धरि विनष्ट होइ, सो क्षेत्रानुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस पर्याय विषै उपज्या था, तिस पर्याय कौ छोड़ि, जीव और पर्याय कौ धर्या तहा भी वह अवधिज्ञान साथि ही रह्या, सो भवानुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र वा पर्याय विषै उपज्या था, तातै जीव अन्य भरतादि क्षेत्र विषै गमन कीया वा अन्य देवादि पर्याय धर्या, तहा साथि ही रहै, सो उभयानुगामी कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान अपने स्वामी जीव की साथि गमन न करै, सो अननुगामी कहिए । याके तीन भेद क्षेत्राननुगामी, भवाननुगामी, उभयाननुगामी । तहा जो अवधिज्ञान जिस क्षेत्र विषै उपज्या होइ, तिस क्षेत्र विषै तां जीव गार पर्याय धरों वा



मति धरौ वह अवधिज्ञान साथि ही रहै है । अर उस क्षेत्र तैं जीव और कोई भरत, ऐरावत, विदेहादि क्षेत्रनि विषै गमन करै, तो वह ज्ञान अपने उपजने का क्षेत्र ही विषै विनष्ट होइ, सो क्षेत्राननुगामी कहिए । बहुरि जो अवधिज्ञान जिस पर्याय विषै उपज्या होइ, तिस पर्याय विषै तौ जीव और क्षेत्र विषै तौ गमन करौ वा मति करौ वह अवधिज्ञान साथि रहे अर उस पर्याय तैं अन्य कोई देव मनुष्य आदि पर्याय धरै तौ अपने उपजने का पर्याय विषै विनष्ट होइ, सो भवाननुगामी कहिये । बहुरि जो अवधिज्ञान और क्षेत्र विषै वा और पर्याय विषै जीव कौ प्राप्त होते साथि न रहै; अपने उपजने का क्षेत्र वा पर्याय विषै ही विनष्ट होइ; सो उभयाननुगामी कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान सूर्यमंडल की ज्यों घटै बधै नाही, एक प्रकार ही रहे; सो अवस्थित कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान कदाचित् बधै, कदाचित् घटै, कदाचित् अवस्थित रहै; सो अनवस्थित कहिये ।

बहुरि जो अवधिज्ञान शुक्ल पक्ष के चंद्रमंडल की ज्यों बधता बधता अपने उत्कृष्ट पर्यंत बधै; सो वर्धमान कहिए ।

बहुरि जो अवधिज्ञान कृष्ण पक्ष के चंद्रमंडल की ज्यों घटता घटता अपने नाश पर्यंत घटै; सो हीयमान कहिए । अैसे गुणप्रत्यय अवधिज्ञान के छह भेद कहे ।

बहुरि तैसे ही सामान्यपने अवधिज्ञान तीन प्रकार है — देशावधि, परमावधि, सर्वावधि ए तीन भेद है । तहां गुणप्रत्यय देशावधि ही छह प्रकार जानना ।

**भवपच्चङ्गो ओही, देसोही होदि परमसव्वोही ।**

**गुणपच्चङ्गो णियमा, देसोही वि य गुणे होदि ॥३७३॥**

भवप्रत्ययकोवधिः, देशावधिः भवति परमसर्वावधिः ।

गुणप्रत्ययको नियमात्, देशावधिरपि च गुणे भवति ॥३७३॥

टीका — भवप्रत्यय अवधि तौ देशावधि ही है, जातै देव, नारकी, गृहस्थ, तीर्थंकर इनके परमावधि सर्वावधि होइ नाही ।

बहुरि परमावधि अर सर्वावधि निश्चय सौं गुणप्रत्यय ही है; जातै संयमरूप विशेष गुण विना न होइ ।

बहुरि देशावधि भी सम्यग्दर्शनादि गुण होत सतै हो है, तातै गुणप्रत्यय अवधि तौ तीन प्रकार ही है । अर भवप्रत्यय अवधि एक देशावधि ही है ।

देसावहिस्स य अवरं, शरतिरिये होदि संजदहि वरं ।  
परमोही सव्वोही, चरमशरीरस्स विरदस्स ॥३७४॥

देशावधेश्च अवरं, नरतिरिश्चोः भवति संयते वरम् ।  
परमावधिः सर्वावधिः, चरमशरीरस्य विरतस्य ॥३७४॥

टीका — देशावधि का जघन्य भेद सयमी वा असयमी मनुष्य, तिर्यंच विषे ही हो है; देव, नारकी विषे न हो है । बहुरि देशावधि का उत्कृष्ट भेद सयमी, महाव्रती, मनुष्य विषे ही हो है; जातै और तीन गति विषे महाव्रत संभवै नाहीं ।

बहुरि परमावधि अर सर्वावधि जघन्य वा उत्कृष्ट (वा) चरम शरीरी महाव्रतो मनुष्य विषे संभवै है ।

चरम कहिए संसार का अंत विषे भया, तिस ही भवतै मोक्ष होने का कारण, असा वज्रवृषभनाराच शरीर जिसका होइ, सो चरमशरीरी कहिए ।

पडिवादी देसोही, अप्पडिवादी हवंति सेसा ओ ।  
मिच्छन्तं अविरमणं, ण य पडिवज्जन्ति चरिमदुगे ॥३७५॥

प्रतिपाती देशावधिः, अप्रतिपातिनौ भवतः शेषौ अहो ।  
मिथ्यात्वमविरमण, न च प्रतिपद्यन्ते चरमद्विके ॥३७५॥

टीका — देशावधि ही प्रतिपाती है; शेष परमावधि, सर्वावधि प्रतिपाती नाहीं ।

प्रतिपात कहिए सम्यक् चारित्र सौ भ्रष्ट होइ, मिथ्यात्व असयम को प्राप्त होना, तीहि सयुक्त जो होइ; सो प्रतिपाती कहिए ।

जो प्रतिपाती न होइ, सो अप्रतिपाती कहिए । देशावधिवाला तौ कदाचित् सम्यक्त्व चारित्र सौ भ्रष्ट होइ, मिथ्यात्व असयम को प्राप्त हो है । अर चरमद्विक कहिए अंत का परमावधि — सर्वावधि दोय ज्ञान विषे वर्तमान जीव, सो निग्नय सौ

मिथ्यात्व अर अविरोध कौ प्राप्त न हो है । जातै देशावधि तौ प्रतिपाती भी है; अप्रतिपाती भी है । परमावधि, सर्वावधि अप्रतिपाती ही हैं ।

**द्रव्यं क्षेत्रं कालं, भावं पण्डि रूपि जाणदे ओही ।**

**अवरादुक्कस्सो त्ति य, वियप्परहिदो दु सव्वोही ॥३७६॥**

द्रव्यं क्षेत्रं कालं, भावं प्रति रूपि जानीते अवधिः ।

अवरादुत्कृष्ट इति च, विकल्परहितस्तु सर्वावधिः ॥३७६॥

टीका — अवधिज्ञान जघन्य भेद तै लगाइ उत्कृष्ट भेद पर्यंत असंख्यात लोक प्रमाण भेद धरै है; सो सर्व द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव प्रति मर्यादा लीए रूपी जो पुद्गल अर पुद्गल संबंध कौ धरै संसारी जीव, तिनिकौ प्रत्यक्ष जानै है । बहुरि सर्वावधिज्ञान है, सो जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद रहित, हानि — वृद्धि रहित, अवस्थित सर्वोत्कृष्टता कौ प्राप्त है, जातै अवधिज्ञानावरण का उत्कृष्ट क्षयोपशम तहां ही संभवै है । तातै देशावधि, परमावधि के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद संभवै हैं ।

**लोकस्मुरालसंचं, अजिहमजोगोज्जियं सविस्सचयं ।**

**लोयविभक्तं जाणदि, अवरोही दव्वदो गियमा ॥३७७॥**

लोकमौदारिकसंचयं, मध्यमयोगाजितं सविस्सोपचयम् ।

लोकविभक्तं जानाति, अवरोही द्रव्यतो नियमात् ॥३७७॥

टीका — मध्यम योग का परिणामन तै निपज्या असा नोकरूप औदारिक शरीर का संचय कहिए द्वयर्ध गुणहानि करि औदारिक का समयप्रबद्ध कौ गुणिए, तिहि प्रमाण औदारिक का सत्तारूप द्रव्य, बहुरि सो अपने योग्य विस्सोपचय के परमाणूनि करि सयुक्त, ताकौ लोकप्रमाण असंख्यात का भाग दीएं, जो एक भाग मात्र द्रव्य होइ, तावन्मात्र ही द्रव्य कौ जघन्य अवधिज्ञान जानै है । यातै अल्प स्कंध कौ न जानै है; जघन्य योगनि तै जो निपजै है संचय, सो यातै सूक्ष्म हो है; तातै तिस कौ जानने की शक्ति नाही । बहुरि उत्कृष्ट योगनि तै जो चिपजै है संचय, सो यातै स्थूल है, ताकौ जानै ही है जातै जो सूक्ष्म कौ जानै, ताकै उसतै स्थूल कौ जानने में किछू विरुद्ध (विरोध) नाही । तातै यहां मध्यम योगनि करि निपज्या असा औदारिक शरीर का संचय कह्या । बहुरि विस्सोपचय रहित सूक्ष्म हो है, तातै वाकै जानने की शक्ति

नाही; तातें विस्रसोपचय सहित कहा । असै स्कंध कौ लोक के जितने प्रदेश है, उतने खंड करिये । तहां एक खंड प्रमाण पुद्गल परमाणूनि का स्कंध नेत्रादिक इन्द्रियनि के गोचर नाहीं । ताकौं जघन्य देशावधिज्ञान प्रत्यक्ष जाने है । असा जघन्य देशावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य का नियम कहा ।

**सुहुमणिगोदग्रपज्जत्तयस्स, जादस्स तदियसमयम्हि ।  
अवरोगाहणमाणं, जहण्णयं ओहिखेत्तं तु ॥३७८॥**

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य, जातस्य तृतीयसमये ।  
अवरावगाहनमानं, जघन्यकमवधिक्षेत्रं तु ॥३७८॥

टीका — बहुरि सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक के जन्म तैं तीसरा समय के विषैं जघन्य अवगाहना का प्रमाण पूर्वे जीव समासाधिकार विषै कहा था, तीहिं प्रमाण जघन्य अवगाहना का क्षेत्र जानना । इतने क्षेत्र विषै पूर्वोक्त प्रमाण लीए वा तिसतैं स्थूल जेते पुद्गल स्कंध होइ, तिनिकौ जघन्य देशावधिज्ञान जानै है । इस क्षेत्र के बारै तिष्ठते जे होइ, तिनिकौ न जानै है, असै क्षेत्र की मर्यादा कही ।

**अवरोहिखेत्तदीहं, वित्थारुस्सेहयं ण जाणामो ।  
अण्णं पुण समकरणे, अवरोगाहणपमाणं तु ॥३७९॥**

अवरावधिक्षेत्रदीर्घं, विस्तारोत्सेधकं न जानीमः ।  
अन्यत् पुनः समीकरणे, अवरावगाहनप्रमाणं तु ॥३७९॥

टीका — बहुरि जघन्य देशावधिज्ञान का विषय भूत क्षेत्र की लवाई, चौडाई, ऊंचाई का प्रमाण हम न जानै है कितना कितना है, जातै इहा असा उपदेश नाहीं, परंतु परम गुरुनि का उपदेश की परम्परा तैं इतना जाने है, जो भुज, कोटि, वेधनि का समीकरण तैं जो क्षेत्रफल होइ, सो जघन्य अवगाहना के समान घनांगुल के असंख्यातवे भागमात्र हो है ।

आम्ही साम्ही दोय दिसानि विषै जो कोई एक दिशा संवंधी प्रमाण, सो भुज कहिये ।

अवशेष\_दोय दिसानि विषैं कोई एक दिशा संवंधी प्रमाण, सो कोटि कहिए ।

ऊंचाई का प्रमाण कौं, वेध कहिए ।

प्रवृत्ति विषै लंबाई, ऊंचाई, चौड़ाई तीन नाम है । सो इनिका क्षेत्र, खंड विधान तैं समान प्रमाण करि क्षेत्रफल कीए, जो प्रमाण आवै, तितना क्षेत्रफल जानना । जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का अर जघन्य अवगाहना रूप क्षेत्र का क्षेत्रफल समान है, इतना तो हम जानै है । अर भुज, कोटि, वेध का प्रमाण कैसै है ? सो हम जानते नाही, अधिक ज्ञानी जानै ही हैं ।

**अवरोगाहणमाणां, उत्सेहंगुलअसंखभागस्स ।**

**सूइस्स य घणपदरं, होबि हु तक्खेत्तसमकरणे ॥३८०॥**

**अवरावगाहनमानमुत्सेधांगुलासंख्यभागस्य ।**

**सूचेच्च घनप्रतरं, भवति हि तत्क्षेत्रसमीकरणे ॥३८०॥**

टीका — इहां कोऊ प्रश्न करै कि जघन्य अवगाहनारूप क्षेत्र का प्रमाण कहा, सो कैसाक है ?

ताका समाधान — जघन्य अवगाहना रूप क्षेत्र का आकार कोऊ एक नियम रूप नाही तथापि क्षेत्र, खंड विधान करि सदृश कीजिए, तब भुज का वा कोटि का वा वेध का प्रमाण उत्सेधांगुल कौ योग्य असंख्यात का भाग दीएं, जो एक भाग का प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि भुज कौ वा कोटि कौ वा वेध कौ परस्पर गुणौ, घनागुल के असंख्यातवे भागमात्र प्रकट क्षेत्रफल भया, सो जघन्य अवगाहना का प्रमाण है । याही के समान जघन्य अवधिज्ञान का क्षेत्र है । इहा क्षेत्र, खंड विधान करि समीकरण का उदाहरण और भी दिखाइए है ।

जैसे लोकाकाश ऊंचाई, चौड़ाई, लंबाई विषै हीनाधिक प्रमाण लीए है । ताका क्षेत्रफल फैलाइए, तब तीन सैं तेतालीस राजू प्रमाण घनफल होइ, अर जो हीनाधिक कौ बधाइ, घटाइ, समान प्रमाण करि सात — सात राजू की ऊंचाई, लंबाई, चौड़ाई कल्पि परस्पर गुणन करि क्षेत्रफल कीजिए । तब भी तीन सैं तेतालीस ही राजू होइ । अैसे ही इहा जघन्य क्षेत्र की लंबाई, चौड़ाई, ऊंचाई हीनाधिक प्रमाण लीएं है । परि क्षेत्र खंड विधान करि समीकरण कीजिए, तब ऊंचाई का वा चौड़ाई का वा लंबाई का प्रमाण उत्सेधांगुल के असंख्यातवे भागमात्र होइ ।

इनिकी परस्पर गुणन कीए, घनांगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाणघन क्षेत्रफल हो है, सो इतना ही प्रमाण जघन्य अवगाहना का है । अर इतना ही प्रमाण जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का है, तातै समान कहै है ।

**अवरं तु ओहिखेत्तं, उत्सेहं अंगुलं हवे जम्हा ।**

**सुहुमोगाहणमाणं, उवरि पमाणं तु अंगुलयं ॥३८१॥**

अवरं तु अवधिक्षेत्रं, उत्सेधमंगुलं भवेद्यस्मात् ।

सूक्ष्मावगाहनमानमुपरि प्रमाणं तु अंगुलकम् ॥३८१॥

टीका — बहुरि जो यह जघन्य अवगाहना समान जघन्य देशावधि का क्षेत्र, घनांगुल के असंख्यातवे भाग मात्र कह्या, सो उत्सेधांगुल का घन प्रमाण जो घनांगुल, ताके असंख्यातवें भागमात्र जानना । जातै इहां सूक्ष्म निगोद, लब्धि अपार्याप्तिक की जघन्य अवगाहना के समान जघन्य देशावधि का क्षेत्र कह्या, सो शरीरनि का प्रमाण है, सो उत्सेधांगुल ही तै है, जातै परमागम विषै अैसा कह्या है कि देह, गेह, ग्राम, नगर इत्यादिक का प्रमाण उत्सेधांगुल तैं है । तातै इहां जघन्य अवधिज्ञान के क्षेत्र का प्रमाण भी उत्सेधांगुल की ही अपेक्षा जानना । इस उत्सेधांगुल का ही नाम व्यवहारांगुल है ।

बहुरि आगै जो 'अंगुलमावलियाए भागमसंखेज्ज' इत्यादि सूत्र उक्त काडकनि विषैं अंगुल कह्या है । सो वह अंगुल प्रमाणांगुल जानना । जातै वाके आगै हस्त, क्रोश, योजन, भरत, क्षेत्रादि उत्तरोत्तर कहैं हैं । बहुरि आगम विषै द्वीप, क्षेत्रादि का प्रमाण प्रमाणांगुल तै कह्या है । तातै तहा प्रमाणांगुल ही का ग्रहण करना ।

**अवरोहिखेत्तमज्भे, अवरोही अवरद्वयमवगमदि ।**

**तद्द्वयस्सवगाहो, उत्सेहासंखघणपदरो ॥३८२॥**

अवरावधिक्षेत्रमध्ये अवरावधिः अवरद्वयमवगच्छति ।

तद्द्वयस्यावगाहः उत्सेधासंख्यघनप्रतरः ॥३८२॥

टीका — तीहिं जघन्य अवधिज्ञान सबधी क्षेत्र विषै जे पूर्वोक्त जघन्य अवधि ज्ञान के विषय भूत द्रव्य तिष्ठै हैं; तिनकौ जघन्य देशावधिज्ञानी जीव जाने है । तीहिं क्षेत्र विषै तैसै औदारिक शरीर के संचय कौ लोक का भाग दीए एक भाग मात्र खंड

असंख्यात पाइए है; तिनि सबनि कौं जानै है । बहुरि इस प्रमाण तै एक, दोय आदि जिस स्कंधनि के बधते प्रदेश होंहि तिनिकौ तो जाने ही जानै, जातै मृदम कौ जाने स्थूल का जानना सुगम है । बहुरि जो पूर्वे जघन्य अवधिज्ञान संवधी द्रव्य कह्या था, तिसकी अवगाहना का प्रमाण, तिस जघन्य अवधि का क्षेत्र का प्रमाण के असंख्यातवे भागमात्र है, तथापि घनांगुल के असंख्यातवे भागमात्र ही है । अर वाकै भुज, कोटि, वेध का भी प्रमाण सूच्यंगुल के असंख्यातवे भागमात्र है । असंख्यात के भेद घने हैं, तातै यथासभव जानि लेना ।

**आवलिअसंखभागं, तीदभविस्सं च कालदो अवरं ।**

**ओही जाणदि भावे, कालअसंखेज्जभागं तु ॥३८३॥**

आवत्यसंख्यभागमतीतभविष्यच्च कालतः अवरम् ।

अवधिः जानाति भावे, कालसंख्यातभागं तु ॥३८३॥

टीका — जघन्य अवधिज्ञान है, सो काल तै आवली के असंख्यातवे भागमात्र अतीत, अनागत काल कौ जानै है । बहुरि भाव तै आवली का असंख्यातवां भागमात्र काल प्रमाण का असंख्यातवां भाग प्रमाण भाव, तिनिकौ जाने है ।

भावार्थ — जघन्य अवधिज्ञान पूर्वोक्त क्षेत्र विषै, पूर्वोक्त एक द्रव्य के आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण अतीत काल विषै वा तितना ही अनागत काल विषै जे आकाररूप व्यजन पर्याय भए, अर होहिगे तिनिकौ जानै है, जातै व्यवहार काल कै अर द्रव्य कै पर्याय ही की पलटन हो है । बहुरि पूर्वोक्त क्षेत्र विषै पूर्वोक्त द्रव्य के वर्तमान परिणामन रूप अर्थ पर्याय है । तिनि विषै आवली का असंख्यातवा भाग का असंख्यातवा भाग प्रमाण, जे पर्याय, तिनि कौ जानै है । अंसै जघन्य देशावधि ज्ञान के विषय भूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि की सीमा — मर्यादा का भेद कहि ।

आगे तिस अवधिज्ञान के जे द्वितीयादि भेद, तिनिकौ च्यारि प्रकार विषय भेद कहै है —

**अवरद्ववादुपरिमदव्ववियप्पाय होदि धुवहारो ।**

**सिद्धाणंतिमभागो, अभव्वसिद्धादणंतगुणो ॥३८४॥**

अवरद्रव्यादुपरिमद्रव्यविकल्पाय भवति ध्रुवहारः ।

सिद्धान्तमभागः, अभव्यसिद्धादनंतगुणः ॥३८४॥

टीका — जघन्य देशावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य तै ऊपरि द्वितीयादि अवधि ज्ञान के भेद का विषयभूत द्रव्य का प्रमाण ल्यावने के अर्थ ध्रुवहार जानना । सर्व भेदनि विषे जिस भागहार का भाग दीएं प्रमाण आवै, सो ध्रुव भागहार कहिए । जैसे इस जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य कौ ध्रुवभागहार के प्रमाण का भाग दीएं, जो एक भाग का प्रमाण आवै, सो देशावधि का द्रव्य सबधी दूसरा भेद का विषयभूत द्रव्य का प्रमाण जानना । याकौ ध्रुवहार का भाग दीएं, जो एक भाग का प्रमाण आवै; सो देशावधि के तीसरे भेद का विषयभूत द्रव्य जानना । अैसे सर्वाविधि पर्यंत जानना । पहले पहले घने परमाणूनि का स्कंधरूप द्रव्य कौ ध्रुवभागहार का भाग दीएं, पीछे पीछे एक भागमात्र थोरे परमाणूनि का स्कंध आवै, सो पूर्वस्कंध तै सूक्ष्म स्कंध होइ, सो ज्यों ज्यों सूक्ष्म कौ जाने, त्यौ त्यौ ज्ञान की अधिकता कहिए है; जातै सूक्ष्म कौ जानै स्थूल का तो जानना सहज ही हो है । बहुरि जो वह ध्रुवभागहार कह्या था, ताका प्रमाण सिद्धराशि कौ अनंत का भाग दीजिए, ताके एक भाग प्रमाण है । अथवा अभव्य सिद्धराशि कौ अनंत तै गुणिए, तीहि प्रमाण है ।

ध्रुवहारकम्मवर्गणगुणकारं कम्मवर्गणं गुणिदे ।

समयप्रबद्धप्रमाणं, जाणिज्जो ओहिविसयहि ॥३८५॥

ध्रुवहारकर्मणवर्गणागुणकारं कर्मणवर्गणां गुणिते ।

समयप्रबद्धप्रमाणं, ज्ञातव्यमवधिविषये ॥३८५॥

टीका — देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद होइ, तितने में सौ घटाइए, जो प्रमाण होइ, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणि, जो प्रमाण होइ, सो कर्मण वर्गणा का गुणकार जानना । तीहि कर्मण वर्गणा का गुणकार करि कर्मण वर्गणा कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, सो अवधिज्ञान का विषय विषे समयप्रबद्ध का प्रमाण जानना । जो जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य कह्या था, तिसहीका नाम इहा समयप्रबद्ध जानना । इसका विशेष आगे कहैगे ।

ध्रुवहार का प्रमाण सामान्यपनै सिद्धराशि के अनंतवे भागमात्र कह्या, अव विशेषपनै ध्रुवहार का प्रमाण कहै है —



मणद्ववर्गणाण, वियप्पाणंतिमसमं खु ध्रुवहारो ।  
अवरुक्कस्सविसेसा, रूवहिया तव्वियप्पा हु ॥३८६॥

मनोद्ववर्गणानां, विकल्पानंतिमसमं खलु ध्रुवहारः ।  
अवरोत्कृष्टविशेषाः, रूपाधिकास्तद्विकल्पा हि ॥३८६॥

टीका - मनोवर्गणा के जितने भेद हैं, तिनिकौ अनंत का भाग दीजिए, एक भाग का जितना प्रमाण होइ, सो ध्रुवहार का प्रमाण जानना । ते मनोवर्गणा के भेद केते हैं, सो कहिए है - मनोवर्गणा का जघन्य प्रमाण कौ मनोवर्गणा का उत्कृष्ट प्रमाण में सौ घटाएं, जो प्रमाण अवशेष रहै, तीहिविषै एक अधिक कीएं, मनोवर्गणा के भेदनि का प्रमाण हो है । आगे सम्यक्त्व मार्गणा का कथन विषै तेईस जाति की पुद्गल वर्गणा कहैगे । तहां तैजसवर्गणा, भाषावर्गणा, मनोवर्गणा, कार्माणवर्गणा इत्यादिक का वर्णन करैगे; सो जानना ।

इस मनोवर्गणा का जघन्य भेद अर उत्कृष्ट भेद का प्रमाण दिखाइए है -

अवरं होदि अणंतं, अणंतभागेण अहियमुक्कस्सं ।  
इदि मणभेदाणंतिमभागो दव्वम्मि ध्रुवहारो ॥३८७॥

अवरं भवति अनंतमनंतभागेनाधिकमुत्कृष्टं ।  
इति मनोभेदानंतिमभागो द्रव्ये ध्रुवहारः ॥३८७॥

टीका - मनोवर्गणा का जघन्य भेद अनंत प्रमाण है । अनंत परमाणूनि का स्वरूप जघन्य मनोवर्गणा है । इस प्रमाण कौ अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना उस जघन्य भेद का प्रमाण विषै जोडै, जो प्रमाण होइ, सोई मनोवर्गणा का उत्कृष्ट भेद का प्रमाण जानना । इतने परमाणूनि का स्वरूप उत्कृष्ट मनोवर्गणा हो है; सो जघन्य तै लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत पूर्वोक्त प्रकार जेते मनोवर्गणा के भेद भए, तिनके अनंतवे भागमात्र इहां ध्रुवहार का प्रमाण है ।

अथवा अन्यप्रकार कहै है —

ध्रुवहारस्स पमाणं, सिद्धाणंतिमपमाणमेत्तं पि ।  
समयपबद्धणिमित्तं, कम्मणवग्गाणगुणा दो दु ॥३८८॥

होदि अणंतिमभागो, तग्गुणगारो वि देसओहिस्स ।  
दोऊणा दव्वभेदप्रमाणध्रुवहारसंवग्गो ॥३८६॥

ध्रुवहारस्य प्रमाणं, सिद्धान्तमप्रमाणमात्रमपि ।  
समयप्रबद्धनिमित्तं, कार्मणवर्गणागुणतस्तु ॥३८८॥

भवत्यनन्तिमभागस्तद्गुणकारोऽपि देशावधेः ।  
द्वयनूतद्रव्यभेदप्रमाणध्रुवहारसंवर्गः ॥३८९॥

टीका — ध्रुवहार का प्रमाण सिद्धराशि के अनन्तवे भागमात्र है । तथापि अवधि का विषयभूत समयप्रबद्ध का प्रमाण ल्यावने के निमित्त जो कार्मण वर्गणा का गुणकार कह्या, ताके अनन्तवे भागमात्र जानना ।

सो तिस कार्मण वर्गणा के गुणकार का प्रमाण कितना है ?

सो कहिए है — देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद है, तिनमें दोय घटाएँ, जो प्रमाण रहै, तितना ध्रुवहार मांडि, परस्पर गुणन कीएँ, जो प्रमाण आवै, तितना कार्मण वर्गणा का गुणकार जानना । अँसा प्रमाण कैसे कह्या? सो कहिए है — देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की रचना विषे उत्कृष्ट अंत का जो भेद, ताका विषय कार्मण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ताके नीचें द्विचरम भेद, ताका विषय, कार्मण वर्गणा प्रमाण जानना । बहुरि ताके नीचें त्रिचरम भेद, ताका विषय कार्मण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवभागहार तै गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि ताके नीचें दोय बार ध्रुवभागहार करि कार्मण वर्गणा कौ गुणिए, तब चतुर्थ चरम भेद होइ । अँसै ही एक एक बार अधिक ध्रुवहार करि कार्मण वर्गणा कौ गुण तै, दोय घाटि देशावधि के द्रव्यभेद प्रमाण ध्रुवहारनि के परस्पर गुणन तै जो गुणकार का प्रमाण भया, ताकरि कार्मणवर्गणा कौ गुणै, जो प्रमाण भया, सोई जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत लोक करि भाजित नोकर्म औदारिक का सचयमात्र द्रव्य का परिमाण जानना । इहा उत्कृष्ट भेद तै लगाइ जघन्य भेद पर्यंत रचना कह्यो, तातँ अँसै गुणकार का प्रमाण कह्या है । बहुरि जो जघन्य तै लगाइ, उत्कृष्ट पर्यंत रचना कीजिए, तो क्रम तै ध्रुवहार के भाग देते जाइए, अंत का भेद विषे कार्मण वर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना द्रव्य प्रमाण होइ इस

कथन उस कथन विषे कुछ अन्यथापना नाही है । ऊपर ते कथन कीया तब ध्रुवहार का गुणकार कहते आए, नीचे ते कथन कीया तब ध्रुवहार का भागहार कहते आए, प्रमाण दोऊ कथन विषे एकसा है ।

देशावधि के द्रव्य की अपेक्षा केते भेद हैं ? ते कहिए है —

**अंगुलअसंखगुणिदा, खेत्तावियप्पा य दव्वभेदा हु ।**

**खेत्तावियप्पा अवरुक्कस्सविसेसं हवे एत्थ ॥३६०॥**

अंगुलासंख्यगुणिताः, क्षेत्रविकल्पाश्च द्रव्यभेदा हि ।

क्षेत्रविकल्पा अवरोत्कृष्टविशेषो भवेदत्र ॥३९०॥

टीका — देशावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र की अपेक्षा जितने भेद हैं, तिनको अंगुल का असंख्यातवा भाग करि गुणों, जो प्रमाण होइ, तितना देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा भेद हो है ।

ते क्षेत्र की अपेक्षा केते भेद हैं ?

ते कहिए है — देशावधिज्ञान का जघन्य क्षेत्र का जो प्रदेशनि का प्रमाण है, तितना भेद देशावधि का उत्कृष्ट क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण विषे घटाए, जो अवशेष प्रमाण रहै, तितना भेद देशावधि की क्षेत्र की अपेक्षा है । इनिकौ सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणिए, तामें एक मिलाएं, जो प्रमाण होइ, तितना देशावधि का द्रव्य की अपेक्षा भेद है । काहेतै ? सो कहिए है — देशावधि का जघन्य भेद विषे पूर्वे जो द्रव्य का परिमाण कहा था, ताकौ ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ सो देशावधिका द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद है । बहुरि इस दूसरा भेद विषे क्षेत्र का परिमाण तितना ही है ।

भावार्थ — देशावधि का जघन्य तै बधता देशावधिज्ञान होइ, तौ देशावधि का दूसरा भेद होइ; सो जघन्य करि जो द्रव्य जानिए था, ताकौ ध्रुव भागहार का भाग दीएं, जो सूक्ष्म स्कंधरूप द्रव्य होइ, ताकौ जानै अर क्षेत्र की अपेक्षा जितना क्षेत्र कौ जघन्यवाला जाने था, तितना ही क्षेत्र कौ दूसरा भेदवाला जानै है । तातै द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद भया । क्षेत्र की अपेक्षा प्रथम भेद ही है । बहुरि जो द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेदवाला जानै था, ताकौ ध्रुवहार का भाग दीए, जो सूक्ष्म-

स्कंध भया, ताकौ द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेदवाला जानै । अर यह क्षेत्र की अपेक्षा तितना ही क्षेत्र कौ जानै; तातै द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेद भया । क्षेत्र की अपेक्षा प्रथम भेद ही है । असै द्रव्य की अपेक्षा सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण भेद होइ, तहां पर्यंत जघन्य क्षेत्र मात्र क्षेत्र कौ जानै । तातै द्रव्य की अपेक्षा तौ सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण भेद भए, अर क्षेत्र की अपेक्षा एक ही भेद भया । बहुरि इहांसे आगै असै ही ध्रुवहार का भाग देतै देतै सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होइ, तहां पर्यंत जघन्य क्षेत्र तै एक प्रदेश बधता क्षेत्र कौ जानै, तहां क्षेत्र की अपेक्षा दूसरा ही भेद रहै ।

बहुरि तहा पीछै सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग मात्र, द्रव्य अपेक्षा भेदनि विषे एक प्रदेश और बधता क्षेत्र कौ जानै; तहां क्षेत्र की अपेक्षा तीसरा भेद होइ । असै ही सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग प्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होतै होतै क्षेत्र की अपेक्षा एक एक बधता भेद होइ, सो असै लोकप्रमाण उत्कृष्ट देशावधि का क्षेत्र पर्यंत जानना । तातै क्षेत्र की अपेक्षा भेदनि तै द्रव्य की अपेक्षा भेद सूच्यंगुल का असंख्यातवां भागप्रमाण गुण कह्या । बहुरि अवशेष पहला द्रव्य का भेद था; सो पीछै मिलाया, तातै एक का मिलावना कह्या है ।

तिन देशावधि के जघन्य क्षेत्र अर उत्कृष्ट क्षेत्रनि का प्रमाण कहै है —

**अंगुलअसंखभागं, अवरं उक्कस्सयं हवे लोगो ।**

**इदि वर्गणागुणगारो, असंखध्रुवहारसंवग्गो ॥३६१॥**

**अंगुलासंख्यभागमवरमुत्कृष्टक भवेल्लोकः ।**

**इति वर्गणागुणकारोऽ, संख्यध्रुवहारसंवर्गः ॥३९१॥**

टीका — जघन्य देशावधि का विषयभूत क्षेत्र सूक्ष्मनिगोद लब्धि अपर्याप्तिक की जघन्य अवगाहना के समान घनांगुल के असंख्यातवे भागमात्र जानना । बहुरि देशावधि का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र लोकप्रमाण जानना । उत्कृष्ट देशावधिवाला सर्वलोक विषे तिष्ठता अपना विषय कौ जानै, असै दोय घाटि, देशावधि का द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद होइ, तितना ध्रुवहार मांडि, परस्पर गुणन करना, सोई सवर्ग भया । यों करतै जो प्रमाण भया होइ, सोई कार्माण वर्गणा का गुणकार जानना । सो कह्या ही था ।

आगे वर्गणा का परिमाण कहै है —

वर्गणरासिप्रमाणं, सिद्धाणंतिमप्रमाणमेतत् पि ।

दुगसह्यपरमभेदप्रमाणवहाराण संवग्गो ॥३६२॥

वर्गणाराशिप्रमाणं, सिद्धानंतिमप्रमाणमात्रमपि ।

द्विकसहितपरमभेदप्रमाणावहाराणां संवर्गः ॥३६२॥

टीका — कार्माणावर्गणा राशि का प्रमाण सिद्धराशि के अनन्तवे भागमात्र है । तथापि परमावधिज्ञान के जेते भेद है, तिनमे दोय मिलाए, जो प्रमाण होइ, तितना ध्रुवहार माडि, परस्पर गुणन कीयें, जो प्रमाण होइ, तितना परमाणूनि का स्वरूप कार्माणावर्गणा जाननी । जातें कार्माणावर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीएं, उत्कृष्ट देशावधि का विषय भूत द्रव्य होइ, पीछे परमावधि के जितने भेद है, तेती बार क्रम तै ध्रुवहार का भाग दीएं, उत्कृष्ट परमावधि का विषयभूत द्रव्य होइ, ताकौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीए, एक परमाणू मात्र सर्वावधि का विषय हो है ।

ते परमावधि के भेद कितने है ? सो कहिए है —

परमावहिस्स भेदा, सग-ओगाहण-वियप्प-हद-तेऊ ।

इदि ध्रुवहारं वर्गणगुणगारं वर्गणं जाणे ॥३६३॥

परमावधेभेदाः, स्वकावगाहनविकल्पहततेजसः ।

इति ध्रुवहारं वर्गणागुणकार वर्गणां जानीहि ॥३६३॥

टीका — अग्निकाय के अवगाहना के जेते भेद है; तिन करि अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुण, जो परिमाण होइ, तितना परमावधिज्ञान का विषय-भूत द्रव्य की अपेक्षा भेद है । सो अग्निकाय की जघन्य अवगाहना का प्रदेशनि का परिमाण कौ अग्निकाय की उत्कृष्ट अवगाहना का परिमाण विषे घटाए, जो प्रमाण होइ, तिनमे एक मिलाए, अग्निकाय की अवगाहना के भेदनि का प्रमाण हो है । सो जीवसमास का अधिकार विषे मत्स्यरचना करी है, तहा कहै ही है । बहुरि अग्नि-काय का जीवनि का परिमाण कायमार्गणा का अधिकार विषे कह्या है; सो जानना । इनि दोऊनि को परस्पर गुण, जो प्रमाण होइ, तितना परमावधिज्ञान का विषयभूत

द्रव्य की अपेक्षा भेद है । अैसे ध्रुवहार का प्रमाण, वर्गणा गुणकार का प्रमाण, वर्गणा का प्रमाण हे शिष्य । तू जानि ।

देसोहिअवरदब्बं, ध्रुवहारेणवहिदे हवे बिदियं ।  
तदियादिवियप्पेसु वि, असंखवारो त्ति एस कमो ॥३६४॥

देशावध्यवरद्रव्यं, ध्रुवहारेणावहिते भवेद्वितीयं ।  
तृतीयादिविकल्पेष्वापि, असंख्यवार इत्येष क्रमः ॥३९४॥

टीका — देशावधिज्ञान का विषयभूत जघन्य द्रव्य पूर्वे कहा था, ताको ध्रुवहार का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, सो दूसरा देशावधि के भेद का विषयभूत द्रव्य होइ । अैसे ही ध्रुवहार का भाग देतै देतै तीसरा, चौथा इत्यादि भेदनि का विषयभूत द्रव्य होहि । अैसे असंख्यात बार अनुक्रम करना ।

अैसे अनुक्रम होतै कहा होइ ? सो कहिए है —

देसोहिमज्झभेदे, सविस्ससोपचयतेजकम्मंगं ।  
तेजोभासमणाणं, वग्गणयं केवलं जत्थ ॥३६५॥

पस्सदि ओही तत्थ, असंखेज्जाओ हवंति दीउवही ।  
वासाणि असंखेज्जा, होंति असंखेज्जगुणिदकमा ॥३६६॥जुम्मं॥

देशावधिमध्यभेदे, सविस्ससोपचयतेजः कर्मागम् ।  
तेजोभाषामनसां, वर्गणां केवलां यत्र ॥३९५॥

पश्यत्यवधिस्तत्र, असंख्येया भवंति द्वीपोदधयः ।  
वर्षाणि असंख्यातानि भवंति असंख्यातगुणितक्रमाणि ॥३९६॥

टीका — देशावधि के मध्य भेदनि विषे देशावधिज्ञान जिस भेद विषे विस्ससोपचय सहित तैजस शरीररूप स्कंध को जानै है । बहुरि तिस ही क्रम ते जिस भेद विषे विस्ससोपचय सहित कार्माण शरीर स्कंध को जानै है । बहुरि इहा ते आगं जिस भेद विषे विस्ससोपचय रहित केवल तैजस वर्गणा को जानै ह । बहुरि इहा ते आगं जिस भेद विषे विस्ससोपचय रहित केवल भाषावर्गणा को जानै ह । उहा ते

आगे जिस भेद विषे विस्त्रसोपचय रहित केवल मनोवर्गणा को जानै है । तहां इनि पाच स्थानानि विषे क्षेत्र का प्रमाण असंख्यात द्वीप - समुद्र जानना । अर काल असंख्यात वर्षमात्र जानना । पूर्वोक्त पंच भेद लीएं अवधिज्ञान असंख्यात द्वीप-समुद्र विषे पूर्वोक्त स्कध असंख्यात वर्ष पर्यंत अतीत, अनागत, यथायोग्य पर्याय के धारी, तिनिकौ जानै है । परि इतना विशेष है - जो इनि पंच भेदनि विषे पहिला भेद संबंधी क्षेत्रकाल का परिमाण है । तातै दूसरा भेद संबंधी क्षेत्रकाल का परिणाम असंख्यातगुणा है । दूसरे तै तीसरे का असंख्यात गुणा है । अैसे ही पांचवां भेद पर्यंत जानना । सामान्यपनै सब का क्षेत्र असंख्यात द्वीप - समुद्र अर काल असंख्यात वर्ष कहे हैं, जातें असंख्यात के भेद घने है ।

**ततो कम्मइयस्सिगिसमयप्रबद्धं विविस्ससोवचयं ।**

**ध्रुवहारस्स विभज्जं, सव्वोही जाव ताव हवे ॥३६७॥**

ततः कर्मणस्य, एकसमयप्रबद्धं विविस्त्रसोपचयम् ।

ध्रुवहारस्य विभाज्यं, सर्वावधिः यावत्तावद्भवेत् ॥३६७॥

टीका — तहा पीछै तिस मनोवर्गणा कौ ध्रुवाहार का भाग दीजिए, अैसे ही भाग देतें देतें विस्त्रसोपचय रहित कर्मण का समय प्रबद्धरूप द्रव्य होइ । याकौ भी ध्रुवहार का भाग दीजिए । अैसे ही ध्रुवहार का भाग यावत् सर्वावधिज्ञान होइ, तहा पर्यंत जानना । विस्त्रसोपचय का स्वरूप योगमार्गणा विषे कह्या है, सो जानना ।

**एदस्मिं विभज्जंते, दुचरिमदेशावहिस्मि वगगणयं ।**

**चरिमे कम्मइयस्सिगिवगणमिगिवारभज्जिदं तु ॥३६८॥**

एतस्मिन् विभज्यमाने, द्विचरमदेशावधौ वर्गणा ।

चरमे कर्मणस्यैकवर्गणा एकवारभक्ता तु ॥३६८॥

टीका — इस कर्मण समय प्रबद्ध कौ ध्रुवहार का भाग दीएं सतै देशावधि का द्वि चरम भेद विषे कर्मणवर्गणा रूप विषयभूत द्रव्य हो है; जातै ध्रुवहार मात्र वर्गणानि का समूह रूप समयप्रबद्ध है । व्हुरि याकौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीएं, चरम जो देशावधि का अत का भेद, तिस विषे विषयभूत द्रव्य हो है ।

**अंगुलअसंखभागे, दव्ववियप्पे गदे दु खेत्तमिह ।**

**एगागासपदेसो, वड्ढदि संपुण्णलोगो त्ति ॥३६९॥**

अंगुलासंख्यभागे, द्रव्यविकल्पे गते तु क्षेत्रे ।

एकाकाशप्रदेशो, वर्धते संपूर्णलोक इति ॥३९९॥

टीका —सूच्यंगुल का असंख्यातवां भागप्रमाण द्रव्य की अपेक्षा भेद होतै सतै, क्षेत्र विषै एक आकाश का प्रदेश बधै असा अनुक्रम जघन्य देशावधि के क्षेत्र तै, उत्कृष्ट देशावधिज्ञान का विषयभूत सर्व सपूर्ण लोक, तीहि पर्यंत जानना । सो यहु कथन टीका विषै पूर्वे विशदरूप कह्या ही था ।

आवलिअसंखभागे, जहण्णकालो कमेण समयेण ।

वड्ढदि देसोहिवरं, पल्लं समऊणयं जाव ॥४००॥

आवलयसंख्यभागे, जघन्यकालः क्रमेण समयेन ।

वर्धते देशावधिवरं, पल्यं समयोनकं यावत् ॥४००॥

टीका — देशावधि का विषयभूत जघन्य काल आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण है । सो यहु अनुक्रम तै ध्रुववृद्धि करि अथवा अध्रुववृद्धि करि एक एक करि समय करि तहां पर्यंत बधै, जहा एक समय घाटि पल्य प्रमाण उत्कृष्ट देशावधि का विषयभूत काल होइ, उत्कृष्ट देशावधिज्ञान एक समय घाटि पल्पप्रमाण अतीत, अनागत काल विषै भए वा होहिगे जे स्वयोग्य विषय तिनै जानै है ।

आगै क्षेत्र काल का परिमाण उगणीस कांडकनि विषै कह्या चाहै है । कांडक नाम पर्व का है । जैसै साठे की पैली हो है, सो गाठि तै अगिली गाठि पर्यंत जो होइ, ताकौ एक पर्व कहिए । तैसै किसी विवक्षित भेद तै लगाइ, किसी विवक्षित भेद पर्यंत जेते भेद होहि, तिनिका समूह, सो एक कांडक कहिए । अंसै देशावधिज्ञान विषै उगणीस कांडक है ।

तहां प्रथम कांडक विषै क्षेत्र काल का परिणाम अढाई गायानि करि कहै है —

अंगुलअसंखभागं, ध्रुवरूपेण य असंखवारं तु ।

असंखसंखं भागं, असंखवारं तु अध्रुवगे ॥४०१॥

अंगुलासंख्यवारं, ध्रुवरूपेण च असंख्यवारं तु ।

असंख्यसंख्यं भागं, असंख्यवारं तु अध्रुवगे ॥४०१॥



टीका — घनांगुल कौं आवली का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, असा अंगुल का असंख्यातवां भागमात्र ध्रुवरूप करि वृद्धि का प्रमाण हो है । सो ध्रुववृद्धि प्रथम कांडक विषे अत का भेद पर्यंत असंख्यात बार हो है । बहुरि तिस ही प्रथम कांडक विषे अंत का भेद पर्यंत अध्रुववृद्धि भी असंख्यात बार हो है । सो अध्रुववृद्धि का परिमाण घनांगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण वा घनांगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण है ।

ध्रुवअध्रुवरूपेण य, अवरे खेत्तम्मि वड्ढिदे खेत्ते ।  
अवरे कालम्हि पुणो, एक्केक्कं वड्ढिदे समयं ॥४०२॥

ध्रुवाध्रुवरूपेण च, अवरे क्षेत्रे वर्द्धिते क्षेत्रे ।  
अवरे काले पुनः, एकैको वर्द्धते समयः ॥४०२॥

टीका — तीहि पूर्वोक्त ध्रुववृद्धि प्रमाण करि वा अध्रुववृद्धि प्रमाण करि जघन्य देशावधि का विषयभूत क्षेत्र कौ बधतै संतै जघन्य काल के ऊपरि एक एक समय बधै है ।

भावार्थ — पूर्वे यहु क्रम कह्या था, जो द्रव्य की अपेक्षा सूच्यंगुल का असंख्यातवा भागप्रमाण भेद व्यतीत होइ, तब क्षेत्र विषे एक प्रदेश बधै । अब इहा कहिए है—जघन्य ज्ञान का विषयभूत जेता क्षेत्र प्रमाण कह्या, ताके ऊपरि पूर्वोक्त प्रकार करि एक एक प्रदेश बधतै बधतै आवली का भाग घनांगुल कौ दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना प्रदेश बधै, तब जघन्य देशावधि का विषयभूत काल का प्रमाण कह्या था, तातै एक समय और बधता, काल का प्रमाण होइ । बहुरि तितना ही प्रदेश क्षेत्र विषे पूर्वोक्त प्रकार करि बधै तब तिस काल तै एक समय और बधता काल का प्रमाण होइ । अैसे तितने तितने प्रदेश बधै, जो काल प्रमाण विषे एक एक समय बधै, सो तौ ध्रुववृद्धि कहिये । बहुरि पूर्वोक्त प्रकार करि ही विवक्षित क्षेत्र तै कहीं घनांगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण प्रदेशनि की वृद्धि भए पूर्व काल तै एक समय बधता काल होइ, कही घनांगुल का असंख्यातवा (संख्यातवां) १ भाग प्रमाण प्रदेशनि की वृद्धि भएं, पहले काल तै एक समय बधता काल होइ, तहां अध्रुववृद्धि कहिये । अैसें प्रथम कांडक विषे अत भेद पर्यंत ध्रुववृद्धि होइ, तौ असंख्यात बार हो है । बहुरि अध्रुववृद्धि होइ तौ असंख्यात बार हो है ।

संख्यातीदा समया, पढये पव्वम्मि उभयदो वड्ढी ।  
खेत्तं कालं अस्सिय, पढमादी कंडये वोच्चं ॥४०३॥

संख्यातीताः समयाः, प्रथमे पर्वे उभयतो वृद्धिः ।  
क्षेत्रं कालमाश्रित्य, प्रथमादीनि कांडकानि वक्ष्ये ॥४०३॥

टीका — जैसे होते प्रथम पूर्व कहिए पहला कांडक, तीहि विषे उभयतः कहिये ध्रुवरूप — अध्रुवरूप दोऊ वृद्धि कौ लीएं असंख्याते समय हो है ।

भावार्थ — प्रथम कांडक विषे जघन्य काल का परिमाण तै पूर्वोक्त प्रकार ध्रुववृद्धि करि वा अध्रुववृद्धि करि एक एक समयप्रबद्ध तै असंख्यात समय बधैं हैं । ते कितने है ? प्रथम कांडक का उत्कृष्ट काल के समयनि का प्रमाण मे स्यों जघन्य काल के समयनि का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण अवशेष रहै, तितने असंख्याते समय प्रथम कांडक विषे बधैं है । जैसे ही प्रथम कांडक का उत्कृष्ट क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण मे स्यो जघन्य क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण घटाएं, जो प्रमाण अवशेष रहै, तितने प्रदेश प्रथम कांडकनि विषे पूर्वोक्त प्रकार करि बधैं है । अब जो वृद्धिरूप समयनि का प्रमाण कह्या, सो जघन्य काल आवली का असंख्यातवा भागमात्र तीहि विषे जोडिए, तब प्रथम कांडक का अत भेद विषे आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण काल हो है । बहुरि वृद्धिरूप प्रदेशनि का परिमाण कौ जघन्य क्षेत्र घनागुल का असंख्यातवां भागमात्र तीहि विषे मिलाएं, प्रथम कांडक का अत भेद विषे घनागुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण क्षेत्र हो है ।

इहा तै आगे विषयभूत क्षेत्र — काल अपेक्षा देशावधि के उगणीस कांडक कहूंगा, ऐसा आचार्य प्रतिज्ञा करी है—

अंगुलमावलियाए, भागमसंखेज्जदो वि संखेज्जो ।  
अंगुलमावलियंतो, आवलियं चांगुलपुधत्तं ॥४०४॥

अंगुलावत्योः, भागोऽसंख्येयोऽपि संख्येयः ।  
अंगुलनावत्यंत, आवलिकाश्चांगुलपृथक्त्वम् ॥४०४॥

वृद्धि कैसे संभवै ? बहुरि अत के कांडक विषै घनांगुल का संख्यातवां१ भाग आदि संख्यात प्रतर पर्यंत सर्व प्रकार करि अध्रुववृद्धि संभवै है । अैसे ही अन्य कांडकनि विषै यथासंभव करि अध्रुववृद्धि जाननी ।

**कम्मद्वयवर्गणां ध्रुवहारेणिवारभाजिते द्रव्यं ।  
उक्कस्सं खेत्तं पुण, लोगो संपुण्णओ होदि ॥४१०॥**

काम्मद्वयवर्गणां ध्रुवहारेणैक वार भाजिते द्रव्यं ।  
उत्कृष्टं क्षेत्रम् पुनः, लोकः संपूर्णो भवति ॥४१०॥

टीका — काम्मद्वयवर्गणा कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ, तितने परमाणूनि का स्कंध कौ उत्कृष्ट देशावधि जानै है । बहुरि क्षेत्र करि संपूर्ण लोकाकाश को जानै है । लोकाकाश विषै जितने पूर्वोक्त स्कंध होइ, वा तिनतें स्थूल होइ, तिन सबनि कौ जानै है ।

**पल्ल समऊण काले, भावेण असंखलोगमेत्ता हु ।  
द्वस य पज्जाया, वरदेसोहिस्स विसया हु ॥४११॥**

पल्लं समयोनं काले, भावेन असंख्यलोकमात्रा हि ।  
द्रव्यस्य च पर्याया, वरदेशावधेर्विषया हि ॥४११॥

टीका — देशावधि का विषय भूत उत्कृष्ट काल एक समय घाटि एक पल्ल प्रमाण है । बहुरि भाव असंख्यात लोक प्रमाण है । सो इहां काल अर भाव शब्द करि द्रव्य के पर्याय उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान का विषयभूत जानना ।

भावार्थ — एक समय घाटि एक पल्ल प्रमाण अतीत काल विषै जे अपने जानने योग्य द्रव्य के पर्याय भए, अर तितने ही प्रमाण अनागत काल विषै अपने जानने योग्य द्रव्य के पर्याय होहिगे, तिनकौ उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान जानै । बहुरि भाव करि तिनि पर्यायनि विषै असंख्यात लोक प्रमाण जे पर्याय, तिनका जानै । अैसे काल अर भाव शब्द करि द्रव्य के पर्याय ग्रहे । अैसे ही अन्य भेदनि विषै भी

जहा काल का वा भाग का परिमाण कहा है, तहां द्रव्य के पर्यायिनि का ग्रहण करना ।

बहुरि इहां देशावधि का मध्य भेदनि विषै भाव का प्रमाण आगें सूत्र कहेंगें, तिस अनुक्रम तै जानना ।

**काले चउण्ह उड्ढी, कालो भजिदव्व खेत्तउड्ढी य ।**

**उड्ढीए दव्वपज्जय, भजिदव्वा खेत्त-काला हु ॥४१२॥**

काले चतुर्णा वृद्धिः, कालो भजितव्यः क्षेत्रवृद्धिश्च ।

वृद्ध्या द्रव्यपर्याययोः, भजितव्यौ क्षेत्रकालौ हि ॥४१२॥

टीका — इस अवधिज्ञान का विशेष विषै जब काल की वृद्धि होइ तब तो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव च्यार्यो ही की वृद्धि होइ । बहुरि जब क्षेत्र की वृद्धि होइ तब काल का वृद्धि भजनीय है, होइ भी अर नहिं भी होइ । बहुरि जब द्रव्य की अर भाव की वृद्धि होइ तब क्षेत्र की अर काल की वृद्धि भजनीय है, होइ भी अर न भी होइ । बहुरि द्रव्य की अर भाव की वृद्धि युगपत् हो है । यह सर्व कथन विचार तै युक्त ही है । या प्रकार देशावधि ज्ञान का विषय भूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का प्रमाण कहा ।

आगें परमावधि ज्ञान की प्ररूपणा कहै हैं —

**देसावहिवरदव्वं, ध्रुवहारेणवहिदे हवै णियमा ।**

**परमावहिस्स अवरं, दव्वपमाणं तु जिणदिट्ठं ॥४१३॥**

देशावधिवरद्रव्यं, ध्रुवहारेणावहिते भवेन्नियमात् ।

परमावधेरवरं, द्रव्य प्रमाणं तु जिनदिष्टं ॥४१३॥

टीका — उत्कृष्ट देशावधि ज्ञान का विषयभूत जो द्रव्य कहा, ताकौ एक वार ध्रुवहार का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ तितना परमाणूनि का स्कध रूप जघन्य परमावधि ज्ञान का विषयभूत द्रव्य नियम करि जिनदेवने कहा है ।

अव परमावधि का उत्कृष्ट द्रव्य प्रमाण कहै है—

**परमावहिस्स भेदा, सग-उग्गाहरणवियप्प-हद-तेऊ ।**

**चरिमे हारपमाणं, जेट्ठस्स य होदि दव्वं तु ॥४१४॥**

परमावधेर्भेदाः, स्वकावगाहनविकल्पाहततेजसः ।

चरमे हारप्रमाण, ज्येष्ठस्य च भवति द्रव्यं तु ॥४१४॥

टीका — अग्निकाय की अवगाहना का जघन्य तें उत्कृष्ट पर्यंत जो भेदनि का प्रमाण, ताकरि अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने परमावधि ज्ञान के भेद है । तहां प्रथम भेद के द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग दीए, दूसरा भेद का द्रव्य होइ । दूसरा भेद का द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग दीए, तीसरा भेद का द्रव्य होइ । औसै अंत का भेद पर्यंत जानने । अंत भेद विषै ध्रुवहार प्रमाण द्रव्य है । ध्रुवहार का जो परिमाण तितने परमाणूनि का सूक्ष्म स्कन्ध कौ उत्कृष्ट परमावधिज्ञान जानै है ।

सव्वावहिस्स एवको, परमाणू होदि णिव्वियप्पो सो ।

गंगामहाणइस्स, प्रवाहोव्व ध्रुवो हवे हारो ॥४१५॥

सर्वाविधेरैकः, परमाणुर्भवति निर्विकल्पः सः ।

गंगामहानद्याः, प्रवाह इव ध्रुवो भवेत् हारः ॥४१५॥

टीका — उत्कृष्ट परमावधि ज्ञान का विषय ध्रुवहार प्रमाण ताकौ ध्रुवहार ही का भाग दीजिए, तब एक परमाणू मात्र सर्वाविधि ज्ञान का विषय है । सर्वाविधि ज्ञान पुद्गल परमाणू कौ जानै हैं । सो यह ज्ञान निर्विकल्प है । यामे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद नाही । बहुरि जो वह ध्रुवहार कह्या था, सो गंगा महानदी का प्रवाह समान ही है । जैसै गंगा नदी का प्रवाह हिमाचल स्यों निकसि विच्छेद रहित वहि-करि पूर्व समुद्र कौ प्राप्त होइ तिष्ठया, तैसै ध्रुवहार जघन्य देशावधि का विषयभूत द्रव्य तै परमावधि का उत्कृष्ट भेद पर्यंत अवधिज्ञान के सर्व भेदनि विषै प्राप्त होइ सर्वाविधि का विषयभूत परमाणू तहा तिष्ठया, जातें सर्वाविधि ज्ञान भी निर्विकल्प है अर याका विषय परमाणू है, सो भी निर्विकल्प है ।

परमोहिदव्वभेदा, जेत्तियमेत्ता हु तेत्तिया होंति ।

तस्सेव खेत्त-काल, वियप्पा विसया असंखगुणिदकमा ॥४१६॥

परमावधिद्रव्यभेदा, यावन्मात्रा हि तावन्मात्रा भवंति ।

तस्यैव क्षेत्र काल, विकल्पा विषया असंख्यगुणितक्रमा. ॥४१६॥

टीका - परमावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जितने भेद कहे, अग्निकाय की अवगाहना के भेदनि का प्रमाण तै अग्निकाय के जीवनि का परिमाण कौ गुणिए, तावन्मात्र द्रव्य की अपेक्षा भेद कहे, सो एतावन्मात्र ही परमावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र की अपेक्षा वा काल की अपेक्षा भेद है । जहां द्रव्य की अपेक्षा प्रथम भेद है, तहां ही क्षेत्र - काल की अपेक्षा भी प्रथम भेद है । जहां दूसरा भेद द्रव्य की अपेक्षा है, तहां क्षेत्र - काल अपेक्षा भी दूसरा ही भेद है । अैसे अंत का भेद पर्यंत जानना । बहुरि जघन्य तै लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत एक एक भेद विषे असंख्यात गुणा असंख्यात गुणा क्षेत्र व काल जानना ।

कैसा असंख्यात गुणा जानना ? सो कहैं हैं-

आवलिअसंखभागा, इच्छिदगच्छदच्छधनमाणमेत्ताओ ।  
देशावहिस्स खेत्ते, काले वि य होंति संवग्गे ॥४१७॥

आवल्यसंख्यभागा, इच्छितगच्छधनमानमात्राः ।

देशावधेः क्षेत्रे, कालेऽपि च भवंति संवर्गे ॥४१७॥

टीका - परमावधिज्ञान का विवक्षित क्षेत्र का भेद विषै वा विवक्षित काल का भेद विषै जो तिस भेद का संकलित धन होइ, तितना आवली का असंख्यातवां भाग मांडि, परस्पर गुणन कीया, जो प्रमाण होइ, सो विवक्षित भेद विषै गुणकार जानना । इस गुणकार करि देशावधि ज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र कौ गुणौ, परमावधि विषै विवक्षित भेद विषै क्षेत्र का परिमाण होइ, अर देशावधिज्ञान का उत्कृष्ट काल कौ गुणौ, विवक्षित भेद विषै काल का परिमाण होइ ।

संकलित धन कहा कहिए -

जेथवां भेद विवक्षित होइ, तहां पर्यंत एक तै लगाइ एक एक अधिक अंक मांडि, तिन सब अंकनि कौं जोडैं, जो प्रमाण होइ, सो संकलित धन जानना । जैसे प्रथम भेद विषै एक ही अंक है । याके पहिले कोई अंक नाही । तातै प्रथम भेद विषै संकलित धन एक जानना । बहुरि दूसरा भेद विषै एक अर दूवा जोडिए, तब संकलित धन तीन भया । बहुरि तीसरा भेद विषै एक, दोय, तीन अंक जोडैं, संकलित धन छह भया । बहुरि चौथा भेद विषै च्यारि और जोडैं, संकलित धन दश भया ।

बहुरि पाचवा भेद विषै पाच को अंरु और जोड़ै, सकलित धन पंद्रह होइ । अैसे सब भेदनि विषै संकलित धन जानना । सो इस एक बार सकलित धन ल्यावने कौ करण सूत्र पर्याय समास श्रुतज्ञान का कथन करते कह्या है; तिसरै सकलित धन प्रमाण ल्यावना । इस संकलित धन का नाम गच्छ, धन वा पद — धन भी कहिए । अब विवक्षित परमावधिज्ञान का पांचवां भेद ताका सकलित धन पद्रह, सो पद्रह जायगा आवली का असख्यातवां भाग मांडि, परस्पर गुणन कीए, जो परिमाण होइ, सोई पांचवां भेद विषै गुणकार जानना । इस गुणकार करि उत्कृष्ट देशावधि का क्षेत्र, लोकाकाश प्रमाण, ताकौ गुणिए, जो प्रमाण होइ, तितना परमावधि का पाचवा भेद का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण जानना । अर इस ही गुणकार करि देशावधि का विषयभूत उत्कृष्ट काल, एक समय घाटि, एक पल्य प्रमाण, ताकौ गुणै, इस पांचवां भेद विषै काल का परिमाण होइ । अैसे सब भेदनि विषै क्षेत्र का वा काल का परिमाण जानना ।

आगे संकलित धन का जो प्रमाण कह्या था, ताकौ और प्रकार करि कहै है—

**गच्छसमा तत्कालियतीदे रूऊणगच्छधणमेत्ता ।**

**उभये वि य गच्छस्स य, धणमेत्ता होंति गुणगारा ॥४१८॥**

**गच्छसमाः तात्कालिकातीते रूपोनगच्छधनमात्राः ।**

**उभयेऽपि च गच्छस्य च, धनमात्रा भवंति गुणकाराः ॥४१८॥**

टीका — जेथवां भेद विवक्षित होइ, तीहि प्रमाण कौ गच्छ कहिए । जैसे चौथा भेद विवक्षित होइ, तौ गच्छ का प्रमाण च्यारि कहिए । सो गच्छ के समान धन अर गच्छ तै तत्काल अतीत भया, अैसा विवक्षित भेद तै पहिला भेद, तहा विवक्षित गच्छ तै एक घाटि का गच्छ धन जो सकलित धन, इनि दोऊनि कौ मिलाइए, तब गच्छ का संकलित धन प्रमाण गुणकार होइ ।

इहा उदाहरण कहिए - जैसे विवक्षित भेद चौथा, सो गच्छ का प्रमाण भी च्यारि, सो च्यारि तौ ए अर तत्काल अतीत भया तीसरा भेद, ताका गच्छ धन छह, इनि दोऊनि कौ मिलाए, दश हूवा । सोई दश विवक्षित गच्छ च्यारि, ताका सकलित धन हो है । सोई चौथा भेद विषै गुणकार पूर्वोक्त प्रकार जानना, अैसे ही सर्व भेदनि विषै जानना —

परमावहि-वरखेत्तेणवहिद-उक्कस्स-ओहिखेत्तं तु ।  
सव्वावहि-गुणगारो, काले वि असंखलोगो दु ॥४१६॥

परमावधिवरक्षेत्रेणावहितोत्कृष्टावधिक्षेत्रं तु ।  
सर्वावधिगुणकारः, कालेऽपि असंख्यलोकस्तु ॥४१९॥

टीका - उत्कृष्ट अवधिज्ञान के क्षेत्र का परिमाण कहिए । द्विरूप घनाघन-धारा विषै लोक अर गुणकार शलाका अर वर्गशलाका अर अर्धच्छेद शलाका अर अग्निकाय की स्थिति का परिमाण अर अवधिज्ञान का उत्कृष्ट क्षेत्र का परिमाण ए स्थानक क्रम तै असंख्यात असंख्यात वर्गस्थान गएं उपजै है । ताते पांच वार असंख्यात लोक प्रमाण परिमाण करि लोक कौ गुणै, जो प्रमाण होई, तितना सर्वावधिज्ञान का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र का परिमाण है । याकौ उत्कृष्ट परमावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का भाग दीएं, जो परिमाण होइ, सोई सर्वावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण ल्यावने के निमित्त गुणकार हो है । इस गुणकार करि परमावधि का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र कौ गुणिए, तब सर्वावधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण हो है । बहुरि काल परिमाण ल्यावने के निमित्त असंख्यात लोक प्रमाण गुणकार है । इस असंख्यात लोक प्रमाण गुणकार करि उत्कृष्ट परमावधिज्ञान का विषयभूत काल कौ गुणिये, तब सर्वावधि ज्ञान का विषयभूत काल का परिमाण हो है ।

इहां कोऊ कहै कि रूपी पदार्थ तौ लोकाकाश विषै ही पाइए है । इहां परमावधि-सर्वावधि विषै क्षेत्र का परिमाण लोक तै असंख्यातगुणा कैसे कहिए है ?

सो इसका समाधान आगै द्विरूप घनाघनधारा का कथन विषै करि आए है; सो जानना । शक्ति अपेक्षा कथन जानना ।

अब परमावधि ज्ञान का विषयभूत उत्कृष्ट क्षेत्र का वा उत्कृष्ट काल का परिमाण ल्यावने के निमित्त करणसूत्र दोय कहिए है —

इच्छिदरासिच्छेदं, दिण्णच्छेदेहिं भाजिदे तत्थ ।  
लद्धमिददिण्णरासीणवभासे इच्छिदो रासी ॥४२०॥



इच्छितराशिच्छेदं, देयच्छेदैर्भाजिते तत्र ।

लब्धमितदेयराशीनामभ्यासे इच्छितो राशिः ॥४२०॥

टीका — यह करणसूत्र है, सो सर्वत्र संभव है । याका अर्थ दिखाइए है — इच्छित राशि कहिए विवक्षित राशि का प्रमाण, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ देयराशि के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिका भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तिसका विरलन कीजिए, एक एक जुद जुदा स्थापिए । बहुरि तिस एक एक के स्थान के जिस देय राशि के अर्धच्छेदनि का भाग दीया था, तिसही देयराशि कौ माड़ि, परस्पर गुणन कीजिए, तो विवक्षित राशि का प्रमाण होइ ।

सो प्रथम याका उदाहरण लौकिक गणित करि दिखाइए है - इच्छित राशि दोय सै छप्पन (२५६), याके अर्धच्छेद आठ, बहुरि देयराशि चौसठि (६४) का चौथा भाग सोलह, याके अर्धच्छेद च्यारि, कैसे ? भाज्यराशि चौसठि, ताके अर्धच्छेद छह, तिनिमे स्यो भागहार च्यारि, ताके अर्धच्छेद दोय घटाइए; तब अवशेष च्यारि अर्धच्छेद रहे । अब इनि च्यारि अर्धच्छेदनि का भाग उन आठ अर्धच्छेदनि कौ दीजिए; तब दोय पाया (२), सो दोय का विरलन करि (१,१), एक एक के स्थान की एक चौसठि का चौथा भाग, सोला सोला दीया, याहीतै याकौ देय राशि कहिए, सो इनिका परस्पर गुणन कीया, तब विवक्षित राशि का परिमाण दोय सै छप्पन हुवा ।

अैसे ही अलौकिक गणित विषै विवक्षित राशि पल्य प्रमाण अथवा सूच्यंगुल प्रमाण वा जगच्छ्रेणी प्रमाण वा लोक प्रमाण जो होइ, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ देयराशि जो आवली का असंख्यातवां भाग, ताके जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिका भाग दीए, जो प्रमाण आवै तिनिका विरलन करि — एक एक करि बखेरि, बहुरि एक एक के स्थान की एक एक आवली का असंख्यातवा भाग मांडि, परस्पर गुणन कीजिए, तो विवक्षित राशि पल्य वा सूच्यंगुल वा जगच्छ्रेणी वा लोकप्रमाण हो है ।

दिण्णच्छेदेणवहिद-लोगच्छेदेण पदधणे भजिदे ।

लब्धमिदलोगगुणरां, परमावहि-चरिम-गुणगारो ॥४२१॥

देयच्छेदेनावहितलोकच्छेदेन पदधने भजिते ।

लब्धमितलोकगुणनं, परमावधिचरमगुणकारः ॥४२१॥

टीका — देयराशि के अर्धच्छेदनि का भाग लोक के अर्धच्छेदनि कौ दीए, जो प्रमाण होइ, ताका विवक्षित पद का संकलित धन कौ भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना लोकमात्र परिमाण मांडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण आवै, सो विवक्षित पद विषे क्षेत्र वा काल का गुणकार जानना । औसै ही परमावधि का अंत भेद विषे गुणकार जानना । सो यहु कथन प्रथम अंकसंदृष्टि करि दिखाइए है । देयराशि चौसठि का चौथा भाग, ताके अर्धच्छेद च्यारि, तिनका भाग दोय सै छप्पन का अर्धच्छेद आठ, तिनिकौ दीजिए; तब दोय पाया । तिनिका भाग विवक्षित स्थान तीसरा ताका पूर्वोक्त संकलित धन ल्यावने का सूत्र करि तीन, च्यारि कौ दोय, एक का भाग दीए, संकलित धन छह तिनिकौ दीजिए, तब तीन पाया; सो तीन जायगा दोय सै छप्पन मांडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण होइ, सोई तीसरा स्थान विषे गुणकार जानना । अब इहां कथन है सो कहिए है —

देयराशि आवली का असंख्यातवां भाग, ताके अर्धच्छेद राशि, जो आवली के अर्धच्छेदनि में स्यौ भागहारभूत असंख्यात के अर्धच्छेद घटाएं, जो प्रमाण रहै, तितना जानना । सो औसै इस देयराशि के अर्धच्छेद संख्यात घाटि परीतासंख्यात का मध्य भेद प्रमाण हो है । तिनिका भाग लोकप्रमाण के जेते अर्धच्छेद होइ, तिनिकौ दीजिए, जो प्रमाण आवै, ताका भाग विवक्षित जो कोई परमावधि ज्ञान का भेद, ताका जो संकलित धन होइ, ताकौ दीजिए, जो प्रमाण आवै, तितना लोक मांडि, परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण आवै, सो तिस भेद विषे गुणकार जानना । इस गुणकार करि देशावधि का उत्कृष्ट लोकप्रमाण क्षेत्र कौ गुणौ, जो प्रमाण होइ, सो तिस भेद विषे क्षेत्र का परिमाण जानना ।

बहुरि इस गुणकार करि देशावधि का उत्कृष्ट एक समय घाटि पत्य प्रमाण काल कौ गुणौ, जो प्रमाण होइ, सो तिस भेद विषे काल का परिमाण जानना । औसै ही परमावधि का अंत का भेद विषे आवली का असंख्यातवां भाग का अर्धच्छेदनि का भाग लोक का अर्धच्छेद कौ दीए, जो प्रमाण होइ, ताकौ अंत का भेद विषे जो संकलित धन होइ, ताकौ भाग दीए जो प्रमाण आवै, तितना लोक मांडि परस्पर गुणन कीए जो प्रमाण होइ, सोई अंत का भेद विषे गुणकार जानना । इहां अंत का भेद विषे पूर्वोक्त संकलित धन ल्यावने कौ करणसूत्र के अनुसारि संकलित धन ल्याइए, तब अग्निकायिक के अवगाह भेदनि करि गुणित अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण मात्र गच्छ, सो एक अधिक गच्छ अर संपूर्ण गच्छ कौ दोय एक का भाग दीए, जो प्रमाण

होइ, तितना परमावधि का अन्त भेद विषे संकलन धनं जानैना । बहुरि जैसे दोय जायगा सोलह सोलह माडि, परस्पर गुणन कीए, दोय सै छप्पन होइ, तौ छह जायगा सोलह सोलह मांडि, परस्पर गुणन कीए, केते दोय सै छप्पन होइ ? असै त्रैराशिक कीए, पैराठि हजार पाच से छत्तीस प्रमाण दोय सै छप्पन होइ । असै ही 'इच्छिदरा-सिच्छेदं' इत्यादि करणसूत्र के अनुसारि आवली का असंख्यातवा भाग का अर्ध-च्छेदनि का लोक के अर्धच्छेदनि कौ भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितने आवली का असंख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीए, एक लोक होइ तौ इहा अत भेद विषे संकलित धन प्रमाण आवली का असंख्यातवा भाग माडि, परस्पर गुणन कीजिए, तौ कितने लोक होइ, असै त्रैराशिक करना । तहां प्रमाण राशि विषे देय राशि आवली का असंख्यातवा भाग, विरलन राशि आवली का असंख्यातवा भाग का अर्ध-च्छेदनि करि भाजित लोक का अर्धच्छेदमात्र, बहुरि फलराशि लोक, बहुरि इच्छा-राशि विषे देयराशि आवली का असंख्यातवा भाग, विरलन राशि अन्तभेद का संकलन धनमात्र, इहां लब्ध राशि का जेता प्रमाण आवै, तितना लोकप्रमाण प्रमाण होइ; सोई अन्त भेद विषे गुणकार जानना । इसकरि लोक कौ वा एक समय घाटि पत्य को गुणिए, तब परमावधि का सर्वोत्कृष्ट क्षेत्र का वा काल का परिमाण हो है ।

पूर्वे 'आवलि असंखभागा' इत्यादि सूत्रकरि गुणकार का विधान कहा । बहुरि इस सूत्र विषे गुणकार का विधान कहा, सो इनि दोऊनि का अभिप्राय एक ही है । जैसे अक सदृष्टि करि पूर्व गाथानि के अनुसारि तीसरा भेद विषे संकलित धन प्रमाण छह जायगा सोला सोला माडि परस्पर गुणन करिए, तौ भी वो ही प्रमाण होइ । अर इस गाथा के अनुसारि तीन जायगा दोय सै छप्पन, दोय सै छप्पन माडि, परस्पर गुणन कीजिए, तौ भी सोई प्रमाण होइ, असै सर्वत्र जानना ।

**आवलिअसंखभागा, जहण्णदव्वस्स होंति पज्जाया ।**

**कालस्स जहण्णादो, असंखगुणहीणमेत्ता हु ॥४२२॥**

आवत्यसंख्यभागा, जघन्यद्रव्यस्य भवन्ति पर्यायाः ।

कालस्य जघन्यतः, असंख्यगुणहीनमात्रा हि ॥४२२॥

टीका — जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य का पर्याय, ते आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण है । परन्तु जो जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत काल

का प्रमाण कह्या है, तातै जघन्य देशावधिज्ञान का विषयभूत भाव का प्रमाण असंख्यात गुणा घाटि जानना ।

**सव्वोहि त्ति य कमसो, आवलिअसंखभागगुणिदकमा ।  
दव्वाणं भावाणं, पदसंखा सरिसगा होंति ॥४२३॥**

**सर्वावधिरिति च क्रमशः, आवल्यसंख्यभागगुणितक्रमाः ।  
द्रव्यानां भावानां, पदसंख्याः सदृशका भवन्ति ॥४२३॥**

टीका — देशावधि का विषयभूत द्रव्य की अपेक्षा जहा जघन्य भेद है, तहां ही द्रव्य का पर्याय रूप भाव की अपेक्षा आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण भाव का जानने रूप जघन्य भेद हो है । बहुरि तहां द्रव्य की अपेक्षा दूसरा भेद हो है । तहा ही भाव की अपेक्षा तिस प्रथम भेद का आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तीहि प्रमाण भाव कौ जानने रूप दूसरा भेद हो है । बहुरि जहा द्रव्य की अपेक्षा तीसरा भेद हो है; तहा ही भाव की अपेक्षा तिस दूसरा भेद तै आवली का असंख्यातवा भाग गुणा तीसरा भेद हो है । अैसे ही क्रम ते सर्वावधि पर्यंत जानना । अवधिज्ञान के जेते भेद द्रव्य की अपेक्षा है, तेते ही भेद भाव की अपेक्षा है । जैसे द्रव्य की अपेक्षा पूर्व भेद संबंधी द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग दीए, उत्तर भेद सबधी द्रव्य भया, तैसे भाव की अपेक्षा पूर्व भेद सबधी भाव कौ आवली का असंख्यातवा भाग करि गुणै, उत्तर भेद सबधी भाव भया । तातै द्रव्य की अपेक्षा अर भाव की अपेक्षा स्थानकनि की सख्या समान है ।

आगे नारक गति विषै अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र का परिमाण कहै है —

**सत्तमखिदिम्मि कोसं, कोसस्सद्धं पवड्ढदे ताव ।  
जाव य पढमे णिरये, जोयणमेक्कं हवे पुण्णं ॥४२४॥**

**सप्तमक्षितौ क्रोशं, क्रोशस्यार्धार्धं प्रवर्धते तावत् ।  
यावच्च प्रथमे निरये, योजनमेकं भवेत् पूर्णम् ॥४२४॥**

टीका — सातवी नरक पृथ्वी विषै अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र एक कोश है । बहुरि आधा आधा कोश तहां ताई बधै, जहां पहले नरक संपूर्ण एक योजन

होइ । अंसैं सातवें नरक अवधि क्षेत्र एक कोश, छठे ड्याढ़ कोश, पांचवे दोय कोश, चौथे अढ़ाई कोश, तीसरे तीन कोश, दूसरे साढे तीन कोश, पहले च्यारि कोश प्रमाण एक योजना जानना ।

आगें तिर्यचगति मनुष्यगति विषे कहै हैं —

तिरिये अवरं ओघो, तेजोयंते य होदि उक्कस्सं ।

मणुए ओघं देवे, जहाकमं सुणह वोच्छामि ॥४२५॥

तिरश्चि अवरमोघः, तेजोऽस्ते च भवति उत्कृष्टं ।

मनुजे ओघं-देवे, यथाक्रमं शृणुत वक्ष्यामि ॥४२५॥

टीका — तिर्यच जीव विषे जघन्य देशावधिज्ञान हो है । बहुरि यातें लगाइ उत्कृष्टपनैं तैजसशरीर जिस देशावधि के भेद का विषय है, तिस भेद पर्यंत सर्व सामान्य अवधिज्ञान के वर्णन विषे जे भेद कहे, ते सर्व हो है । बहुरि मनुष्य गति विषे जघन्य देशावधि तै सर्वावधि पर्यंत सामान्य अवधिज्ञान विषे जेते भेद कहे,तिनि सर्व भेदनि कौ लीए, अवधिज्ञान हो है ।

बहुरि देवगति विषे जैसा अनुक्रम है, सो मैं कहो हो, तुम सुनहु —

पणुवीसजोयणाइं, दिवसंतं च य कुमारभोम्माणं ।

संखेज्जगुणं खेत्तं, बहुगं कालं तु जोइसिगे ॥४२६॥

पंचविंशतियोजनानि, दिवसांतं च य कुमारभौमयो ।

संख्यातगुण क्षेत्रं, बहुकः कालस्तु ज्योतिष्के ॥४२६॥

टीका — भवनवासी अर व्यन्तर, इनिकें अवधिज्ञान का विषयभूत जघन्यपनै क्षेत्र तौ पचीस योजन है । अर काल किछू एक घाटि एक दिन प्रमाण है । बहुरि ज्योतिषी देवनि कें क्षेत्र तौ इस क्षेत्र तै असंख्यात गुणा है, अर काल इस काल तै बहुत है ।

असुराणमसंखेज्जा, कोडीओ सेसजोइसंताणं ।

संखातीदसहस्सा, उक्कस्सोहीण विसओ दु ॥४२७॥

असुराणामसंख्येयाः, कोट्यः शेषज्योतिष्कांतानाम् ।  
संख्यातीतसहस्रा, उत्कृष्टावधीनां विषयस्तु ॥४२७॥

टोका - असुरकुमार जाति के भवनवासी देवनि के उत्कृष्ट अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र असंख्यात कोडि योजन प्रमाण है । बहुरि अवशेष रहे नव प्रकार भवनवासी अर व्यतर देव अर ज्योतिषी देव, तिनके उत्कृष्ट विषय क्षेत्र असंख्यात सहस्र योजन प्रमाण है ।

असुराणमसंखेज्जा, वस्सा पुण सेसजोइसंताणं ।  
तस्संखेज्जदिभागं, कालेण य होदि णियमेण ॥४२८॥

असुराणामसंख्येयानि, वर्षाणि पुनः शेषज्योतिष्कांतानाम् ।  
तत्संख्यातभागं, कालेन च भवति नियमेन ॥४२८॥

टोका - असुरकुमार जाति के भवनवासीनि के अवधि का उत्कृष्ट विषय काल की अपेक्षा असंख्यात वर्ष प्रमाण है । बहुरि इस काल के संख्यातवें भागमात्र अवशेष नव प्रकार भवनवासी वा व्यतर ज्योतिषी, तिनके अवधि का विषयभूत काल का उत्कृष्ट प्रमाण नियमकरि है ।

भवणतियाणमधोधो, थोवं तिरियेण होदि बहुगं तु ।  
उड्ढेण भवणवासी, सुरगिरिसिहरो त्ति पस्संति ॥४२९॥

भवनत्रिकाणामधोऽधः, स्तोकं तिरश्चां भवति बहुकं तु ।  
ऊर्ध्वेन भवनवासिनः, सुरगिरिशिखरांतं पश्यन्ति ॥४२९॥

टोका - भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी ए जो भवनत्रिक देव, तिनके अधोऽधो कहिए नीचली दिशा प्रति अवधि का विषयभूत क्षेत्र स्तोक है । बहुरि तिर्यंच कहिए आपका स्थान की बरोबर दिशानि प्रति क्षेत्र बहुत है । बहुरि भवनवासी अपने स्थानक तें ऊपरि मेरुगिरि का शिखरि पर्यंत अवधिदर्शन करि देखें है ।

सक्कीसाणा पढमं, बिदियं तु सणक्कुमार-माहिंदा ।  
तदियं तु बम्ह-लांतव, सुक्क-सहस्सारया तुरियं ॥४३०॥

शक्रैशानाः प्रथमं, द्वितीयं तु सनत्कुमार-माहेंद्राः ।

तृतीयं तु ब्रह्म-लांतवाः शुक्र-सहस्रारकाः तुरियम् ॥४३०॥

टीका — सौधर्म - ईशानवाले देव अवधि करि प्रथम नरक पृथ्वी पर्यंत देखें हैं । बहुरि सनत्कुमार माहेद्रवाले देव दूसरी पृथ्वी पर्यंत देखें है । बहुरि ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर लातव कापिष्ठवाले देव तीसरी पृथ्वी पर्यंत देखें है । बहुरि शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रारवाले देव चौथी पृथ्वी पर्यंत देखें है —

आणद-पाणदवासी, आरण तह अच्युदा य पस्संति ।

पंचमखिदिपेरंतं, छट्ठिंठ गेवेज्जगा देवा ॥४३१॥

आनतप्राणतवासिनः, आरणास्तथा अच्युताश्च पश्यन्ति ।

पंचमक्षितिपर्यंतं, षष्ठीं ग्रैवेयका देवाः ॥४३१॥

टीका — आनत प्राणत के वासी तथा आरण अच्युत के वासी देव पांचवी पर्यंत देखें है । बहुरि नवग्रैवेयकवाले देव छठी पृथ्वी पर्यंत देखें है ।

सर्वं च लोयणालिं, पस्संति अणुत्तरेसु जे देवा ।

सक्खेत्ते य सक्ख्मे, रूपगदमणंतभागं च ॥४३२॥

सर्वा च लोकनालीं, पश्यन्ति अनुत्तरेषु ये देवाः ।

स्वक्षेत्रे च स्वकर्मणि, रूपगतमनंतभागं च ॥४३२॥

टीका — नव अनुदिश विमान अर पाच अनुत्तर विमान के वासी सर्व लोक-नाली, जो त्रसनाली ताकौ देखें है ।

यह भावार्थ जानना—सौधर्मादिवासी देव ऊपरि अपने २ स्वर्ग का विमान का ध्वजादड का शिखर पर्यंत देखें है । बहुरि नव अनुदिश, पच अनुत्तर विमान के वासी देव ऊपरि अपने विमान का शिखर पर्यंत अर नीचें कौ बाह्य तनुवात पर्यंत सर्व त्रस-नाली कौ देखें है; सो अनुदिश विमानवाले तौ किछू एक अधिक तेरह राजू प्रमाण लंबा अर अनुत्तर विमानवाले के च्यारि सै पचीस धनुष घाटि, इकवीस योजन करि हीन, चौदह राजू प्रमाण लंबा अर एक राजू चौडा अवधि का विषयभूत क्षेत्र कौ देखें है । असा इहां क्षेत्र का परिमाण कीया है, सो स्थानक का नियमरूप जानना । क्षेत्र का परिमाण लीए, नियमरूप न जानना । जात अच्युत स्वर्ग पर्यंत के वासी विहार करि

अन्य क्षेत्र कौ जाइ, अर तहां अवधि होइ तौ पूर्वोक्त स्थानक पर्यंत ही होइ, असा नाही, जो प्रथम स्वर्गवाला पहिले नरक जाइ, अर तहां सेती डेढ राजू नीचै और जानै । सौधर्मद्विक के प्रथम नरक पर्यंत अवधि क्षेत्र है; सो तहां भी तिष्ठता तहां पर्यंत क्षेत्र ही कौ जानै; अैसे सर्वत्र जानना । बहुरि अपना क्षेत्र विषे एक प्रदेश घटावना, अर अपने अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ एक बार ध्रुवहार का भाग देना, जहां सर्व प्रदेश पूर्ण होइ, सो तिस अवधि का विषयभूत द्रव्य जानना ।

इस ही अर्थ कौ नीचै दिखाइए है —

कल्पसुराणां सग-सग-ओहीखेत्तं विविस्ससोवचयं ।

ओहीदव्वपमाणं, संठाविय ध्रुवहरेण हरे ॥४३३॥

सग-सग-खेत्तपदेस-सलाय-पमाणं समप्पदे जाव ।

तत्थतणचरिमखंडं, तत्थतणोहिस्स दव्वं तु ॥४३४॥

कल्पसुराणां स्वकस्वकावधिकेत्रं विविस्ससोपचयम् ।

अवधिद्रव्यप्रमाणं, संस्थाप्य ध्रुवहरेण हरेत् ॥४३३॥

स्वकस्वकक्षेत्रप्रदेशशलाकाप्रमाणं समाप्यते यावत् ।

तत्रतनचरमखंडं, तत्रतनावधेर्द्रव्यं तु ॥४३४॥

टीका — कल्पवासी देवनि कै अपना अपना अवधि क्षेत्र अर विस्ससोपचय रहित अवधिज्ञानावरण का द्रव्य स्थापि करि अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ एक बार ध्रुवहारका भाग देइ, क्षेत्र विषे एक प्रदेश घटावना, अैसे सर्व क्षेत्र के प्रदेश पूर्ण होइ, तहां जो अत विषे सूक्ष्म पुद्गलस्कधरूप खड होइ, सोई तिस अवधिज्ञान का विषय-भूत द्रव्य जानना ।

इहा उदाहरण कहिए है—सौधर्म ऐशानवालों का क्षेत्र प्रथम नरक पर्यंत कहा है; सो प्रथम नरक तै पहला दूसरा स्वर्ग का उपरिम स्थान ड्योढ राजू ऊंचा है । तातै अवधि का क्षेत्र एक राजू लंबा - चौड़ा, ड्योढ राजू ऊंचा भया । सो इस घन रूप ड्योढ राजू क्षेत्र के जितने प्रदेश होइ, ते एकत्र स्थापने । बहुरि किंचिदून द्वय-धर्गुणहानि करि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण सत्वरूप सर्व कर्मनि की परमाणूनि का परिमाण है । तिस विषे अवधिज्ञानावरण नामा कर्म के जेते परमाणू होई, तिन विषे



विस्रसोपचय के परमाणू न मिले, ऐसे ते अवधिज्ञानावरण के परमाणू एकत्र स्थापने । बहुरि इस अवधिज्ञानावरण के परमाणूनि का प्रमाण कौ एक बार ध्रुवहार का भाग दीजिये; तब उस क्षेत्र के प्रदेशनि का परिमाण मे स्यो एक घटाइए, बहुरि एक बार ध्रुवहार का भाग देतै, एक भाग विषै जो प्रमाण आया, ताकौ दूसरा ध्रुवहार का भाग दीजिए; तब तिस प्रदेशनि का परिमाण में स्यों एक और घटाइए । बहुरि दूसरा ध्रुवहार का भाग देते एक भाग विषै जो प्रमाण रह्यो ताकौ तीसरा ध्रुवहार का भाग दीजिए, तब तिस प्रदेशनि का परिमाण में स्यों एक और घटाइए । ऐसैं जहां ताई सर्व क्षेत्र के प्रदेश पूर्ण होइ; तहां ताई ध्रुवहार का भाग देते जाईये देतै-देतै अंत के विषै जो परिमाण रहै, तितने परमाणू का सूक्ष्म पुद्गल स्कंध जो होइ, ताकौ सौधर्म - ऐशान स्वर्गवाले देव अवधिज्ञान करि जानै है । इसतै स्थूल स्कंध को तो जानै ही जानै । जैसे ही सानत्कुमार - माहेंद्रवालों के धनरूप चारि राजू प्रमाण क्षेत्र के प्रदेशनि का जो प्रमाण तितनी बार अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ ध्रुवहार का भाग देतै देतै जो प्रमाण रहै, तितने परमाणूनि का स्कंध कौ अवधिज्ञान करि जानै है । जैसे सबनि के अवधि का विषयभूत क्षेत्र के प्रदेशनि का जो प्रमाण होइ, तितनी बार अवधिज्ञानावरण द्रव्य कौ ध्रुवहार का देतै देतै जो प्रमाण रहै, तितने परमाणूनि का स्कंध कौ ते देव अवधिज्ञान करि जानै है । तहां ब्रह्म - ब्रह्मोत्तरवालो के साढा पांच राजू, लांतव - कापिष्ठवालो के छह राजू, शुक्र - महाशुक्रवालो के साढा सात राजू, शतार - सहस्रारवालो के आठ राजू, आनत - प्राणतवालों के साढा नव राजू, आरण - अच्युतवालों के दश राजू, ग्रैवेयकवालों के ग्यारह राजू, अनुदिश विमानवालो के किछू अधिक तेरह राजू, अनुत्तर विमानवालो के किछू घाटि चौदह राजू क्षेत्र का परिमाण जानि, पूर्वोक्त विधान कीएं, तिनि देवनि के अवधिज्ञान का विषयभूत द्रव्य का परिमाण आवै है ।

सोहम्मीसाणाणमसंखेज्जाओ हु वस्सकोडीओ ।

उवरिमकप्पचउक्के, पल्लासंखेज्जभागो दु ॥४३५॥

तत्तो लांतवकप्पप्पहुदी सव्वत्थसिद्धिपेरंतं ।

किंचूणपल्लमेत्तं, कालपमाणं जहाजोगं ॥४३६॥ जुम्मं ।

सौधर्मेशानानामसंख्येया हि वर्षकोट्यः ।

उपरिमकल्पचतुष्के, पल्यासंख्यातभागस्तु ॥४३५॥

ततो लांतवकल्पप्रभृतिसर्वार्थसिद्धिपर्यंतम् ।

किंचिदूनपत्यमात्रं, कालप्रमाणं यथायोग्यम् ॥४३६॥

टीका — सौधर्म ईशानवालों के अवधि का विषयभूत काल असंख्यात कोडि वर्ष प्रमाण है । बहुरि तातै ऊपरि सनत्कुमारादि चारि स्वर्गवालो के यथायोग्य पत्य का असंख्यातवां भाग प्रमाण है । बहुरि तातै ऊपरि लांतव आदि सर्वार्थसिद्धि पर्यंत-वालों के यथायोग्य किछू घाटि पत्य प्रमाण है ।

जोइसियंताणोहीखेत्ता उत्ता ण होंति घणपवरा ।

कल्पसुराणां च पुणो, विसरित्थं आयदं होदि ॥४३७॥

ज्योतिष्कांतानामवधिक्षेत्राणि उक्तानि न भवंति घनप्रतराणि ।

कल्पसुराणां च पुनः, विसदृशमायतं भवति ॥४३७॥

टीका — ज्योतिषी पर्यंत जे भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी अैसे तीन प्रकार देव, तिनकें जो अवधि का विषयभूत क्षेत्र कहा है; सो समचतुरस्र कहिए बरोबरि चौकोर घनरूप नाही है । जातै सूत्र विषै लंबाई, चौड़ाई, उंचाई समान नाही कही है, याही तैं अवशेष रहे मनुष्य, नारकी, तिर्यच तिनि कै जो अवधि का विषयभूत क्षेत्र है; सो बरोबरि चौकोर घनरूप है । अवधिज्ञानी मनुष्यादिक जहां तिष्ठता होइ, तहांतै अपने विषयभूत क्षेत्र का प्रमाणपर्यंत चौकोररूप घन क्षेत्र कौ जानें है । बहुरि कल्पवासी देवनि कै जो अवधिज्ञान का विषयभूत क्षेत्र है, सो विसदृश आयत कहिए लंबा बहुत, चौडा थोडा अैसा आयतचतुरस्र जानना ।

चित्तियमंचितियं वा, अद्धं चित्तियमणेयभेयगयं ।

मणपज्जवं ति उच्चइ, जं जाणइ तं खु एरलोए ॥४३८॥

चित्तितमंचितितं वा, अर्थं चित्तितमनेकभेदगतम् ।

मनः पर्यय इत्युच्यते, यज्जानाति तत्खलु नरलोके ॥४३८॥

टीका — चित्तितं कहिए अतीत काल मे जिसका चितवन कीया अर अंचितितं कहिए जाकौ अनागत काल विषै चितवेगा अर अर्थंचितितं कहिए जो सम्पूर्ण चितया नाही । अैसा जो अनेक भेद लीए, अन्य जीव का मन विषै प्राप्त हुवा अर्थ ताकौं जो जानें, सो मनः पर्यय कहिए । मनः कहिए अन्य जीव का मन विषै चितवनरूप

प्राप्त भया अर्थ, ताकौ पर्येति कहिए जानै, सो मनःपर्यय है, असा कहिए है । सो इस ज्ञान की उत्पत्ति मनुष्य क्षेत्र ही विषै है, बाह्य नाही है ।

पराया मन विषै तिष्ठता जो अर्थ, सो मन कहिए । ताकौ पर्येति, कहिए जानै, सो मनःपर्यय जानना ।

**मणपज्जवं च दुविहं, उजुविउलमदि त्ति उजुमदी तिविहा ।  
उजुमणवयणे काए, गदत्थविसया त्ति णियमेण ॥४३६॥**

मनःपर्ययश्च द्विविधः, ऋजुविपुलमतीति ऋजुमतिस्त्रिविधा ।  
ऋजुमनोवचने काये, गतार्थविषया इति नियमेन ॥४३९॥

टीका — सो यहु मनःपर्यय — ज्ञान सामान्यपनै एक प्रकार है, तथापि भेद तै दोय प्रकार है—ऋजुमति मनःपर्यय, विपुलमति मनःपर्यय ।

तहां सरलपनै मन, वचन, काय करि कीया जो अर्थ अन्य जीव का मन विषै चितवनरूप प्राप्त भया ताके जानने तैं निष्पन्न भई, असी ऋजुवी कहिए सरल है मति जाकी, सो ऋजुमति कहिए ।

बहुरि सरल वा वक्र मन, वचन, काय करि कीया जो अर्थ अन्य जीव का मन विषै चितवनरूप प्राप्त भया, ताके जानने तैं निष्पन्न भई वा नाही नाई निष्पन्न भई असी विपुला कहिए कुटिल है मति जाकी, सो विपुलमति कहिए । असे ऋजुमति अर विपुलमति के भेद तैं मनःपर्ययज्ञान दोय प्रकार है ।

तहां ऋजुमति मनःपर्यय ज्ञान नियम करि तीन प्रकार है । ऋजु मन विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा बहुरि ऋजु वचन विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, बहुरि ऋजुकाय विषै प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा असे ए तीन भेद है ।

**विउलमदी वि य छद्धा, उजुगाणुजुवयणकायचित्तगयं ।  
अत्थं जाणदि जम्हा, सदत्थगया हु ताणत्था ॥४४०॥**

विपुलमतिरपि च षोढा, ऋजुगानृजुवचनकायचित्तगतम् ।  
अर्थं जानाति यस्मात्, शब्दार्थगता हि तेषामर्थाः ॥४४०॥

टीका— विपुलमति ज्ञान भी छह प्रकार है—१. ऋजुमन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, २ ऋजु वचन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ३. ऋजु काय कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ४. बहुरि वक्र मन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ५. बहुरि वक्र वचन कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा, ६. बहुरि वक्र काय कौ प्राप्त भया अर्थ का जानन हारा । ए छह भेद है, जातै सरल वा वक्र मन, वचन, काय कौ प्राप्त भया पदार्थ कौ जानै है ।

बहुरि तिन ऋजुमति विपुलमति ज्ञान के अर्थाः कहिए विषय ते शब्द कौ वा अर्थ कौ प्राप्त भए प्रगट हो हैं । कैसे ? सो कहिए है — कोई भी सरल मन करि निष्पन्न होत संता त्रिकाल संबंधी पदार्थनि कौ चितवन भया, वा सरल वचन करि निष्पन्न होत संता, तिनकौ कहत भया वा सरल काय करि निष्पन्न होत संता तिनकौ करत भया, पीछे भूलि करि कालांतर विषे यादि करने कौ समर्थ न हूवा अर आय करि ऋजुमति मन.पर्यय ज्ञानी कौ पूछत भया वा यादि करने का अभिप्राय कौ धारि मौन ही तै खडा रह्या, तौ तहां ऋजुमति मन.पर्ययज्ञान स्वयमेव सर्व कौ जानै है ।

तैसे ही सरल वा वक्र मन, वचन, काय करि निष्पन्न होत संता त्रिकाल संबंधी पदार्थनि कौ चितवन भया वा कहत भया वा करत भया । बहुरि भूलि करि केतेक काल पीछे यादि करने कौ समर्थ न हूवा, आय करि विपुलमति मनःपर्ययज्ञानी के निकटि पूछत भया वा मौन तै खडा रह्या, तहा विपुलमति मनःपर्ययज्ञान सर्व कौ जानै, अैसे इनिका स्वरूप जानना ।

**तियकालविसयरूपि, चितितं बहुमाणजीवेण ।**

**उजुमदिणाणं जाणदि, भूदभविस्सं च विउलमदी ॥४४१॥**

त्रिकालविषयरूपि, चितितं वर्तमानजीवेन ।

ऋजुमतिज्ञानं जानाति, भूतभविष्यच्च विपुलमतिः ॥४४१॥

टीका — त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य कौ वर्तमान काल विषे कोई जीव चितवन करै है, तिस पुद्गल द्रव्य कौ ऋजुमति मन पर्ययज्ञान जानै है । बहुरि त्रिकाल संबंधी पुद्गल द्रव्य कौ कोई जीव अतीत काल विषे चितया था वा वर्तमान काल विषे चितवै है वा अनागत काल विषे चितवेगा, अैसे पुद्गल द्रव्य कौ विपुलमति मन.पर्ययज्ञान जानै है ।

सर्व्वंग-अंग-संभव-चिह्नादुपपज्जदे जहा ओही ।

मणपज्जवं च दव्वमणादो उपपज्जदे णियमा ॥४४२॥

सर्वांगांगसंभवचिह्नादुत्पद्यते यथावधिः ।

मनःपर्ययं च द्रव्यमनस्त उत्पद्यते नियमात् ॥४४२॥

टीका — जैसे पूर्वे कहा था, भवप्रत्यय अवधिज्ञान सर्व अंग तै उपजै है । अर गुणप्रत्यय शंखादिक चिह्ननि तै उपजै है । तैसें मनःपर्ययज्ञान द्रव्य मन तै उपजै है । नियम तै और अगनि के प्रदेशनि विषे नाही उपजै है ।

हिदि होदि हु दव्वमणं, वियसियअट्ठच्छदारविंदं वा ।

अंगोवंगुदयादो, मणवगणखंधदो णियमा ॥४४३॥

तदि भवति हि द्रव्यमनः, विकसिताष्टच्छदारविंदवत् ।

अंगोपांगोदयात्, मनोवर्गणास्कंधतो नियमात् ॥४४३॥

टीका — सो द्रव्य मन हृदय स्थान विषे प्रफुल्लित आठ पांखुडी का कमल के आकार अंगोपांग नाम कर्म के उदय तै तेईस जाति की पुद्गल वर्गणानि विषे मनोवर्गणा है । तिनि स्कंधनि करि निपजै है, अैसा नियम है ।

णोइंदिय त्ति सण्णा, तस्स हवे सेसइंदियाणं वा ।

वत्तत्ताभावादो, मण मणपज्जं च तत्थ हवे ॥४४४॥

नोइंद्रियमिति संज्ञा, तस्य भवेत् शेषेन्द्रियाणां वा ।

व्यक्तत्वाभावात्, मनो मनःपर्ययश्च तत्र भवेत् ॥४४४॥

टीका — तिस मन का नोइंद्रिय अैसा नाम है । नो कहिए ईपत्, किंचिन्मात्र इंद्रिय है । जैसे स्पर्शनादिक इंद्रिय प्रकट है, तैसें मन के प्रकटपना नाही । तातें मन का नोइंद्रिय अैसा नाम है, सो तिस द्रव्य मन विषे मतिज्ञानरूप भाव मन भी उपजै है, अर मन पर्ययज्ञान भी उपजै है ।

मणपज्जवं च णाणं, सत्तसु विरदेसु सत्तइड्ढीणं ।

एगादिजुदेसु हवे, वड्ढंतविसिट्ठचरणेसु ॥४४५॥

मनःपर्ययश्च ज्ञानं, सप्तसु विरतेषु सप्तधीनाम् ।  
एकादियुतेषु भवेद्वर्धमानविशिष्टाचरणेषु ॥४४५॥

टीका — प्रमत्त आदि सात गुणस्थान विषे १. बुद्धि, २. तप, ३. वैक्रियिक, ४. औषध, ५. रस, ६. बल, ७. अक्षीण इनि सात रिद्धिनि विषे एक, दोय आदि रिद्धिनि करि संयुक्त, बहुरि वर्धमान विशेष रूप चारित्र के धारी जे महामुनि, तिनिके मनःपर्यय ज्ञान हो है; अन्यत्र नाही ।

इंद्रियणोइंद्रियजोगादिं, पेक्खित्तु उज्जुमदी होदि ।  
णिरवेक्खिय विउलमदी, ओहिं वा होदि णियमेण ॥४४६॥

इंद्रियनोइंद्रिययोगादिमपेक्ष्य ऋजुमतिर्भवति ।  
निरपेक्ष्य विपुलमतिः, अवधिर्वा भवति नियमेन ॥४४६॥

टीका — ऋजुमति मन पर्ययज्ञान है; सो अपने वा अन्य जीव के स्पर्शनादिक इंद्रि अर नोइंद्रिय मन अर मन, वचन, काय योग तिनिकी सापेक्ष तें उपजै है । बहुरि विपुलमति मन पर्यय है; सो अवधिज्ञान की सी नाई, तिनकी अपेक्षा बिना ही नियम करि उपजै है ।

पडिवादी पुण पढमा, अप्पडिवादी हु होदि बिदिया हू ।  
सुद्धो पढमो बोहो, सुद्धतरो विदियबोहो हु ॥४४७॥

प्रतिपाती पुनः प्रथमः, अप्रतिपाती हि भवति द्वितीयो हि ।  
शुद्धः प्रथमो बोधः, शुद्धतरो द्वितीयबोधस्तु ॥४४७॥

टीका — पहिला ऋजुमति मनःपर्यय है, सो प्रतिपाती है । बहुरि दूसरा विपुलमति मन पर्यय है, सो अप्रतिपाती है । जाके विशुद्ध परिणामनि की घटवारी होइ, सो प्रतिपाती कहिये । जाके विशुद्ध परिणामनि की घटवारी न होइ, सो अप्रतिपाती कहिये । बहुरि ऋजुमति मन पर्यय तौ विशुद्ध है; जातै प्रतिपक्षी कर्म के क्षयोपशम तें निर्मल भया है । बहुरि विपुलमति मन पर्यय विशुद्धतर है, जातै अतिशय करि निर्मल भया है ।

परमणसि टिठ्यमट्ठं, ईहामदिणा उज्जुट्ठयं लहिय ।  
पच्छा पच्चक्खेण य, उज्जुमदिणा जाणद्वे णियमा ॥४४८॥

परमनसि स्थितमर्थमीहामत्या ऋजुस्थितं लब्ध्वा ।

पश्चात् प्रत्यक्षेण च, ऋजुमतिना जानीते नियमात् ॥४४८॥

टीका — पर जीव के मन विषै सरलपनै चितवन रूप तिष्ठता जो पदार्थ, ताकौ पहलै तौ ईहा नामा मतिज्ञान करि प्राप्त होइ, असा विचारै कि याका मन विषै कह्या है । पीछै ऋजुमति मन.पर्यय ज्ञान करि तिस अर्थ कौ प्रत्यक्षपने करि ऋजुमति मनःपर्ययज्ञानी जानै है, यह नियम है ।

चितियमचितियं वा, अद्धं चितियमणेयभेयगयं ।

ओहिं वा विउलमदी, लहिऊण विजाणए पच्छा ॥४४९॥

चितितमचितितं वा, अर्धं चितितमनेकभेदगतम् ।

अवधिर्वा विपुलमतिः, लब्ध्वा विजानाति पश्चात् ॥४४९॥

टीका — अतीत काल विषै चितया वा अनागत काल विषै जाका चितवन होगा, असा बिना चितया वा वर्तमान काल विषै किछू एक आधासा चितया असा अन्य जीव का मन विषै तिष्ठता अनेक भेद लीए अर्थ, वाकौ पहिलै प्राप्त होइ; वाका मन विषै यहु है, असा जानि । पीछै अवधिज्ञान की नाई विपुलमति मन पर्यय-ज्ञान तिस अर्थ कौ प्रत्यक्ष जानै है ।

द्रव्यं खेत्तं कालं, भावं पडि जीवलक्खियं रूपि ।

उजविउलमदी जाणदि, अवरवरं मज्झिमं च तथा ॥४५०॥

द्रव्यं क्षेत्रं कालं, भावं प्रति जीवलक्षितं रूपि ।

ऋजुविपुलमती जानीतः अवरवरं मध्यमं च तथा ॥४५०॥

टीका — द्रव्य प्रति वा क्षेत्र प्रति वा काल प्रति वा भाव प्रति जीव करि लक्षित कहिये चितवन कीया हूवा जो रूपी पुद्गल द्रव्य वा पुद्गल के सवध कौ धरै ससारी जीव द्रव्य, ताकौ जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि ऋजुमति वा विपुल-मति मन.पर्यय ज्ञान जानै है ।

अवरं द्रव्यमुरालियसरीरणिज्जिण्णसमयबद्धं तु ।

चक्खिदियणिज्जरणं, उक्कस्सं उजुमदिस्स हवे ॥४५१॥

टीका — नरलोक यहा ऐसा वचन कह्या है, सो यहां मनुष्य लोक का विष्कंभ का जेता परिमाण है, सो लेना । अर मनुष्य लोक तौ गोल है । अर यहु विपुलमति का विषयभूत क्षेत्र समचतुरस्र घन प्रतर कहिए, समान चौकोर घन रूप प्रतर क्षेत्र कह्या है; सो पेंतालीस लाख योजन लंबा, तितना ही चौड़ा ऐसा परिमाण जानना । इहा ऊचाई थोडी है, तातें घन प्रतर कह्या है । जातें मानुपोत्तर पर्वत के बाह्य च्यारों कोणानि विषे तिष्ठते देव, तिर्यच चितए हूवे तिनिकौ भी उत्कृष्ट विपुलमति मनःपर्ययज्ञान जानै है, असै क्षेत्र प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे ।

दुग्-तिग्-भवा ह्यं अवरं, सत्तट्ठभवा हवन्ति उक्कस्सं ।  
अड-णवभवा ह्यं अवरमसंखेज्जं विउलउक्कस्सं ॥४५७॥

द्विक-त्रिक-भवा हि अवरं, सप्ताष्टभवा भवन्ति उत्कृष्टम् ।  
अष्ट-नव-भवा हि अवरमसंख्येयं विपुलोत्कृष्टम् ॥४५७॥

टीका — काल करि ऋजुमति का विषय, जघन्यपनै अतीति - अनागत रूप दोय, तीन भव है; उत्कृष्टतै सात, आठ भव है । बहुरि विपुलमति का विषय जघन्य आठ नव भव है; उत्कृष्ट पत्य का असंख्यातवां भाग मात्र है । असै अतीत, अनागत अपेक्षा काल प्रति जघन्य उत्कृष्ट भेद कहे ।

आवलिअसंखभागं, अवरं च वरं च वरमसंखगुणं ।  
तत्तो असंखगुणिदं, असंखलोगं तु विउलमदी ॥४५८॥

आवत्यसंख्यभागमवरं च वरं च वरमसंख्यगुणम् ।  
ततोऽसंख्यातगुणितमसंख्यलोकं च विपुलमतिः ॥४५८॥

टीका — ऋजुमति का विषयभूत भाव जघन्यपनै आवली के असंख्यातवे भाग प्रमाण है । उत्कृष्टपनै भी आवली के असंख्यातवां भाग प्रमाण ही कहिए; तथापि जघन्य तै असंख्यात गुणा है । बहुरि विपुलमति का विषयभूत भाव जघन्य पनै ऋजुमति का उत्कृष्ट तै असंख्यात गुणा है । बहुरि उत्कृष्ट पनै असंख्यात लोक प्रमाण है । असै भाव प्रति जघन्य - उत्कृष्ट भेद कहे ।

मज्झिम दच्चं खेत्तं, कालं भावं च मज्झिमं णाणं ।  
जाणदि इदि अणपज्जवणाणं कहिदं समासेण ॥४५९॥



मध्यमद्रव्य क्षेत्रं, कालं भावं च मध्यमं ज्ञानम् ।

जानातीति मनःपर्ययज्ञानं कथितं समासेन ॥४५९॥

टीका — ऋजुमति अर विपुलमति का जघन्य भेद अर उत्कृष्ट भेद तो जघन्य वा उत्कृष्ट द्रव्य के क्षेत्र, काल, भावनि कौ जानै है । अर जे जघन्य अर उत्कृष्ट के मध्यवर्ती जे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, तिनकौ ऋजुमति अर विपुलमति के जे मध्य भेद है, तै जानै है । अैसे मनःपर्ययज्ञान संक्षेप करि कह्या है ।

संपुर्णं तु समग्रं, केवलमसवत्तसव्वभावगयं ।

लोयालोयवितिमिरं, केवलणाणं मुणेदव्वं ॥४६०॥

संपूर्ण तु समग्रं, केवलमसंपन्नं सर्वभावगतम् ।

लोकालोकवितिमिरं, केवलज्ञानं मंतव्यम् ॥४६०॥

टीका — जीव द्रव्य के शक्तिरूप जे सर्व ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेद थे, ते सर्व व्यक्त रूप भए, तातै संपूर्ण है । बहुरि ज्ञानावरणीय अर वीर्यातिराय नामा कर्म के सर्वथा नाशतै जिसकी शक्ति रुकै नाही है वा निश्चल है, तातै समग्र है । बहुरि इन्द्रियनि का सहाय करि रहित है, तातै केवल है । बहुरि प्रतिपक्षी च्यारि घाति कर्म के नाश तै अनुक्रम रहित सकलं पदार्थनि विषै प्राप्त भया है, तातै असपन्न है । बहुरि लोका-लोक विषै अज्ञान अधिकार रहित प्रकाशमान है । अैसा अभेदरूप केवलज्ञान जानना ।

आगै ज्ञानमार्गणा विषै जीवनि की संख्या कहै है—

चदुगदिमंसुदबोहा, पल्लासंखोज्जया हु मणपज्जा ।

संखोज्जा केवलिनो, सिद्धादो होंति अदिरित्ता ॥४६१॥

चतुर्गतिमतिश्रुतबोधाः, पल्यासंख्येया हि मनः पर्यायाः ।

संख्येयाः केवलिनः, सिद्धात् भवन्ति अतिरित्ताः ॥४६१॥

टीका — च्यार्चो गति विषै मतिज्ञानी पत्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि श्रुतज्ञानी भी पत्य के असख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि मनः पर्यय ज्ञानी मनुष्य संख्याते है । बहुरि केवल ज्ञानी सिद्धराशि विषै तेरह्वां चौदह्वा गुणस्थानवर्ती जीवनिका का परिमाण मिलाएं, जो होइ तीहिं प्रमाण है ।

ओहिरहिदा तिरिक्खा, मदिणाणिअसंखभागगा मणुगा ।

संखेज्जा हु तदूणा, मदिणाणी ओहिपरिमाणं ॥४६२॥

अवधिरहिताः तिर्यचः, मतिज्ञान्यसंख्यभागका मनुजाः ।

संख्येया हि तदूनाः, मतिज्ञानिनः अवधिपरमाणम् ॥४६२॥

टीका — अवधिज्ञान रहित तिर्यच, मतिज्ञानी जीवनि की संख्या कही । तीहि के असंख्यातवे भाग प्रमाण है । बहुरि अवधिज्ञान रहित मनुष्य संख्यात है, ए दोऊ राशि मतिज्ञानी जीवनि की जो संख्या कही थी; तिसमें स्यों घटाइ दीएं जो अवशेष प्रमाण रहै, तितने च्यार्चो गति संबंधी अवधिज्ञानी जीव जानने ।

पल्लासंखघणंगुल-हृद-सेढि-तिरिक्ख-गदि-विभंगजुदा ।

णर-सहिदा किंचूणा, चदुगदि-वेभंगपरिमाणं ॥४६३॥

पल्यासंख्यघनांगुलहतश्रेणितिर्यग्गतिविभंगयुताः ।

नरसहिताः किंचिदूनाः, चतुर्गतिवैभंगपरिमाणम् ॥४६३॥

टीका — पल्य का असंख्यातवा भाग गुणित घनांगुल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणिए, जो प्रमाण होइ, तितने तौ तिर्यच । बहुरि संख्याते मनुष्य । बहुरि घनांगुल का द्वितीय मूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणिए, तितना नारकीनि का प्रमाण है । तामें सम्यग्दृष्टी नारकी जीवनि का परिमाण घटाए, जो अवशेष रहै, तितना नारकी । बहुरि ज्योतिषी देवनि का परिमाण विषै भवनवासी, व्यंतर, वैमानिक देवनि का परिमाण मिलाए, सामान्य देवराशि होइ । तामें सम्यग्दृष्टी देवनि का परिमाण घटाएं, जो अवशेष रहै, तितने देव, इनि सबनि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ, तितने च्यार्चो गति सबधी विभगज्ञानी जानने ।

सण्णाण-रासि-पंचय-परिहीणो सव्वजीवरासी हु ।

मदिसुद-अण्णाणीणं, पत्तेयं होदि परिमाणं ॥४६४॥

सज्ज्ञानराशिपंचकपरिहीनः सर्वजीवराशिर्हि ।

मतिश्रुताज्ञानिनां, प्रत्येकं भवति परिमाणम् ॥४६४॥

टीका — सम्यग्ज्ञान पांच, तिनिकरि संयुक्त जीवनि का परिमाण किछ अधिक केवलज्ञानी जीवनि का परिमाण मात्र, सो सर्व जीवराशि का परिमाण विषै घटाएं, जो अवशेष परिमाण रहै, तितने कुमतिज्ञानी जीव जानने । बहुरि तितने ही कुश्रुत-ज्ञानी जीव जानने ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम सस्कृतटीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा इस भाषा टीका विषै जीवकाड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषै ज्ञानमार्गणा प्ररूपणा नामा वारह्वा अधिकार संपूर्ण भया ॥१२॥

## तेरहवां अधिकार : संयममार्गणा

विमल करत निज गुणनि तै, सब कौं विमल जिनेश ।  
विमल हौन कौ मै नमौ, अतिशय जुत तीर्थेश ॥

अथ ज्ञानमार्गणा का प्ररूपण करि, अब संयममार्गणा कहै है —

वद-समिदि-कसायाणं, दंडाणं तर्हिन्द्रियाण पंचण्हं ।

धारण-पालण- रिग्गह-चाग-जओ संजमो भणियो ॥४६५॥<sup>१</sup>

व्रतसमितिकषायाणां, दंडानां तर्हेन्द्रियाणां पंचानाम् ।  
धारणपालननिग्रहत्यागजयः संयमो भणितः ॥४६५॥

टीका — अहिंसा आदि व्रतनि का धारणा, ईर्ष्या आदि समितिनि का पालना, क्रोध आदि कषायनि का निग्रह करना, मन, वचन, कायरूप दंड का त्याग करना, स्पर्शन आदि पांच इंद्रियनि का जीतना अैसे व्रतादिक पंचनि का जो धारणादिक, सोई पंच प्रकार संयम जाना । सं — कहिए सम्यक् प्रकार, जो यम कहिए नियम, सो संयम है ।

बादरसंजलणुदये, सुहुमुदये समखये य मोहस्स ।  
संजमभावो नियमा, होदि त्ति जिणेहिं णिदिट्ठं ॥४६६॥

बादरसंज्वलनोदये, सूक्ष्मोदये शमक्षययोश्च मोहस्य ।  
संयमभावो नियमात् भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥४६६॥

टीका — बादर संज्वलन का उदय होत सतै, बहुरि सूक्ष्म लोभ का उदय होत सतै, बहुरि मोहनीय का उपशम होत सतै वा मोहनीय का क्षय होत सतै निश्चय करि संयम भाव हो है । अैसे जिनदेवने कहा है ।

तहां प्रमत्त - अप्रमत्त गुणस्थाननि विषे संज्वलन कषायनि के जे सर्वघाती स्पर्धक है; तिनिका उदय नाही; सो तो क्षय है । बहुरि उदय निषेकनि तै ऊपरवर्ती

१. पद्मसागर - धवला पुस्तक १, पृष्ठ १४६, गाथा सं. १२ ।

जे निषेक, तिनिका उदय नाही, सोई उपशम । बहुरिं बादर संज्वलन के जे देश घातिया स्पर्धक संयम के अविरोधी तिनिका उदय, अैसे क्षयोपशम होतें सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि ए तीन सयम हो है ।

बहुरि सूक्ष्मकृष्टि करनेरूपं जो अनिवृत्तिकरण, तीहि पर्यंत बादर संज्वलन के उदय करि अपूर्वकरण अर अनिवृत्तिकरण गुणस्थाननि विषे सामायिक अर छेदोपस्थापना दोय ही संयम हो है । बहुरि सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त हूवा, अैसा जो संज्वलन लोभ, ताके उदय करि दशवे गुणस्थान सूक्ष्मसापराय सयम हो है ।

बहुरि सर्व चारित्र मोहनीय कर्म के उपशमतै वा क्षय तै यथाख्यात संयम हो है । तहा ग्यारहवे गुणस्थान उपशम यथाख्यात हो है । बारहवे, तेरहवै, चौदहवै क्षायिक यथाख्यात हो है ।

इस ही अर्थ कौं दोय गाथानि करि कहैं है —

बादरसंजलणुदये, बादरसंजभतियं खु परिहारो ।

पमदिदरे सुहुमुदये, सुहुमो संजमगुणो होदि ॥४६७॥

बादरसंज्वलनोदये, बादरसयमत्रिकं खलु परिहारैः ।

प्रमत्तेतरस्मिन् सूक्ष्मोदये सूक्ष्मः संयमगुणो भवति ॥४६७॥

टीका — बादर संज्वलन का देशघाती स्पर्धक ते संयम के विरोधी नाही, तिनके उदय करि सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि ए तीन सयम हो है । तहा परिहारविशुद्धि तौ प्रमत्त - अप्रमत्त दोय गुणस्थाननि विषे ही हो है । अर सामायिक छेदोपस्थापना प्रमत्तादि अनिवृत्तिकरण पर्यंत चारि गुणस्थाननि विषे हो है । बहुरि सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त हूवा संज्वलन लोभ, ताके उदय करि सूक्ष्मसापराय नामा सयम गुण हो है ।

जहखादसंजमो पुण, उवसमदो होदि मोहणीयस्स ।

खयदो वि य सो गियमा, होदि ति जिणेहिं णिदिट्ठं ॥४६८॥

यथाख्यातसंयमः पुनः, उपशमतो भवति मोहनीयस्य ।

क्षयतोऽपि च स नियमात्, भवतीति जिनैर्निदिष्टम् ॥४६८॥

टीका - बहुरि यथाख्यात संयम है; सो निश्चय करि मोहनीयकर्म के सर्वथा उपशम तैं वा क्षय तैं हो है; अैसे जिनदेवनि करि कह्या है ।

तदियकसायुदयेण य विरदाविरदो गुणो हवे जुगवं ।  
बिदियकसायुदयेण य, असंजमो होदि णियमेण ॥४६६॥

तृतीयकषायोदयेन च, विरताविरतो गुणो भवेद्युगपत् ।  
द्वितीयकषायोदयेन च, असंयमो भवति नियमेन ॥४६९॥

टीका - तीसरा प्रत्याख्यान कषाय का उदय करि युगपत् विरत - अविर-  
तरूप संयमासंयम हो है । जैसे तीसरे गुणस्थान<sup>१</sup> सम्यक्त्व - मिथ्यात्व मिलै ही हो है ।  
तैसे पंचमगुणस्थान विषै संयम - असंयम दोऊ मिश्ररूप हो हैं । तातैं यहु मिश्र संयमी  
है । बहुरि दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय के उदय करि असंयम हो है । अैसे संयम  
मार्गणा के सात भेद कहे ।

संगहिय सयलसंजममेयजममणुत्तरं दुरवगम्भं ।  
जीवो समुव्वहंतो, सामाइयसंजमो होदि ॥४७०॥<sup>२</sup>

संगृह्य सकलसंयममेकयममनुत्तरं दुरवगम्यम् ।  
जीवः समुव्वहन्, सामायिकसंयमो भवति ॥४७०॥

टीका - समस्त ही व्रतधारणादिक पंच प्रकार संयम कौं संग्रह करि एकयमं  
कहिए मे सर्व सावद्य का त्यागी हौ; अैसा एकयमं कहिए सकल सावद्य का त्यागरूप  
अभेद संयम; सोई सामायिक जानना ।

कैसा है सामायिक ? अनुत्तरं कहिए जाके समान और नाहीं, संपूर्ण है । बहुरि  
दुरवगम्यं कहिए दुर्लभपने पाइए है, सो अैसे सामायिक कौ पालता जीव सामयिक  
संयमी हो है ।

छेत्तूण य परियायं, पोरारणं जो ठवेइ अप्पाणं ।  
पंचजमे धम्मे सो, छेदोवट्ठावगो जीवो ॥४७१॥<sup>२</sup>

१ पट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स. १८७ ।

२. पट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स. १८८ ।

छित्त्वा च पर्यायं, पुराणं यः स्थापयति आत्मानम् ।

पंचयमे धर्मे स, छेदोपस्थापको जीवः ॥४७१॥

टीका — सामायिक चारित्र कौ धारि, बहुरि प्रमाद तै स्वलित होइ, सावद्य क्रिया कौ प्राप्त हूवा असा जो जीव, पहिले भया जो सावद्यरूप पर्याय ताका प्रायश्चित्त विधि तै छेदन करि अपने आत्मा कौ व्रतधारणादि पंच प्रकार संयमरूप धर्म विषै स्थापन करै; सोई छेदोपस्थापन संयमी जानना ।

छेद कहिए प्रायश्चित्त तीहिकरि उपस्थापन कहिए धर्म विषै आत्मा कौ स्थापना; सो जाकै होइ, अथवा छेद कहिए अपने दोष दूर करने के निमित्त पूर्वे कीया था तप, तिसका उस दोष के अनुसारि विच्छेद करना, तिसकरि उपस्थापन कहिए निर्दोष संयम विषै आत्मा कौ स्थापना; सो जाकै होइ, सो छेदोपस्थापन संयमी है ।

अपना तप का छेद हो है, उपस्थापन जाकै, सो छेदोपस्थापन है, असी निरुक्ति जानना ।

पंच-समिदो ति-गुप्तो परिहरइ सदा वि जो हु सावज्जं ।

पंचैकजमो पुरिसो, परिहारयसंजदो सो हु<sup>१</sup> ॥४७२॥

पंचसमितः त्रिगुप्तः, परिहरति सदापि यो हि सावद्यम् ।

पंचैकयमः पुरुषः, परिहारकसंयतः स हि ॥४७२॥

टीका — पंच समिति, तीन गुप्ति करि संयुक्त जो जीव, सदा काल हिसारूप सावद्य का परिहार करै, सो पुरुष सामायिकादि पंच संयमनि विषै परिहारविशुद्धि नामा संयम का धारी प्रकट जानना ।

तीसं वासो जम्मे, वासपुधत्तं खु तित्थयरमूले ।

पंचक्खाणं पढिदो, संभूणदुगाउयविहारो ॥४७३॥

त्रिंशद्द्वार्षो जन्मनि, वर्षपृथक्त्वं खलु तीर्थकरमूले ।

प्रत्याख्यानं पठितः, संध्योनद्विगव्यूतिविहारः ॥४७३॥

१. षट्सङ्खडागम — घवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७४, गाथा स. १८६

२ पाठभेद — पच—जमेय—जमो वा ।

टीका - जो जन्म तै तीस वर्ष का भया होइ । बहुरि सर्वदा खानपानादि से सुखी होइ; असा पुरुष दीक्षा कौं अंगीकार करि पृथक्त्व वर्ग पर्यंत तीर्थकर के पाद मूल प्रत्याख्यान नामा नवमा पूर्व का पाठी होइ, सो परिहारविशुद्धि समय कौ अंगीकार करि, तीनों सध्या काल विना सर्व काल विषै दोय कोस विहार करै । अर रात्रि विषै विहार न करै । वर्षा काल विषै किछू नियम नाही, गमन करै वा न करै; असा परिहारविशुद्धि संयमी हो है ।

परिहार कहिए प्राणीनि की हिसा का त्याग, ताकरि विशेषरूप जो शुद्धिः कहिए शुद्धता, जाविषै होइ, सो परिहारविशुद्धि समय जानना ।

इस संयम का जघन्य काल तौ अंतर्मुहूर्त है, जातै कोई जीव अंतर्मुहूर्तमात्र तिस संयम कौ धारि, अन्य गुणस्थान को प्राप्त होइ, तहां सो संयम रहै नाही; तातै जघन्य काल अंतर्मुहूर्त कह्या ।

बहुरि उत्कृष्ट काल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व है । जातै कोई जीव कोडि पूर्व का धारी तीस वर्ष का दीक्षा ग्रहि, आठ वर्ष पर्यंत तीर्थकर के निकटि पडै, तहां पीछै परिहारविशुद्धि संयम कौ अंगीकार करै; तातै उत्कृष्टकाल अडतीस वर्ष घाटि कोडि पूर्व कह्या ।

उक्तं च—

परिहारधिसमेतो जीवः षट्कायसंकुले विहरन् ।

षयसेव पद्मपत्रं, न लिप्यते पापनिबहेन ॥

याका अर्थ - परिहार विशुद्धि ऋद्धि करि सयुक्त जीव, छह कायरूप जीवनि का समूह विषै विहार करता जल करि कमल पत्र की नाई पाप करि लिप्त न होइ ।

अणुलोहं वेदंतो, जीवो उवसामगो व खवगो वा ।

सो सुहुमसंपराओ, जइखादेणूणओ किंचि? ॥४७४॥

अणुलोभं विदन् जीवः उपशामको वा क्षपको वा ।

स सूक्ष्मसांपरायः यथाख्यातेनोनः किंचित् ॥४७४॥



टीका — सूक्ष्मकृष्टि कौ प्राप्त भया लोभ कषाय का अनुभाग, ताके उदय कौ भोगवता उपशमी वा क्षायिकी जीव, सो सूक्ष्म है सापराय कहिए कषाय जाके, असा सूक्ष्मसांपराय सयमी जानना । सो यहु यथाख्यात संयमी जे महामुनि, तिनितै किछू एक घाटि जानना, स्तोकसा ही अंतर है ।

**उवसंते क्षीणे वा, अशुहे कम्मम्मि मोहणीयम्मि ।**

**छदुमट्ठो वा जिणो वा, जहखादो संजदो सो दु<sup>१</sup> ॥४७५॥**

उपशांते क्षीणे वा अशुभे कर्मणि मोहनीये ।

छन्नस्थो वा जितो वा, यथाख्यातः संयतः स तु ॥४७५॥

टीका — अशुभरूप मोहनीय नामा कर्म, सो उपशम होतै वा क्षयरूप होतै उपशांत कषाय गुणस्थानवर्ती वा क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती छन्नस्थ होइ अथवा सयोगी अयोगी जिन होइ; सोई यथाख्यात संयमी जानना । मोहनीय कर्म के सर्वथा उपशम तै वा नाशतै जो यथावस्थित आत्मस्वभाव की अवस्था; सोई है लक्षण जाका, असा यथाख्यात चारित्र कहिए है ।

**पंच-तिहिं-चउ-विहेहिं य, अणु-गुण-सिक्खा-वएहिं संजुत्ता ।**

**उच्चंति देस-विरया सम्माइट्ठी भलिय-कम्मा<sup>२</sup> ॥४७६॥**

पंचत्रिचतुर्विधैश्च, अणुगुणशिक्षाव्रतैः संयुक्ताः ।

उच्यंते देशविरताः सम्यग्दृष्टयः भरितकर्माणिः ॥४७६॥

टीका — पांच अणुव्रत, तीन गुणव्रत, च्यारि शिक्षाव्रत अैसे बारह व्रतनि करि संयुक्त जे सम्यग्दृष्टी, कर्म निर्जरा के धारक, ते देशविरती सयमासयम के धारक परमागम विषै कहिए है ।

**दंसण-वय-सामाइय, पोसह-सच्चित्त-रायभत्ते य ।**

**बह्मारंभ-परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठ-देसविरदेदे<sup>३</sup> ॥४७७॥**

दर्शनव्रतसामायिकाः प्रोषधसच्चित्तरात्रिभक्ताश्च ।

बह्मारंभपरिग्रहानुमतोद्दिष्टदेशविरता एते ॥४७७॥

१. षट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स. १६१ ।

२. षट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स. १६२ ।

३. षट्खंडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स. १६३ ।

टीका - नाम के एक देश तै सर्व नाम का ग्रहण करना, इस न्याय करि इस गाथा का अर्थ कीजिए है । १ दर्शनिक, २ व्रतिक, ३ सामायिक, ४ प्रोषधोपवास, ५ सचित्तविरत, ६ रात्रिभोजनविरत, ७ ब्रह्मचारी, ८ आरंभविरत, ९ परिग्रह विरत, १० अनुमति विरत, ११ उद्दिष्ट विरत असै ग्यारह प्रतिमा की अपेक्षा देशविरत के ग्यारह भेद जानने । तहां पांच उदुबरादिक अर सप्त व्यसननि कौ त्यागै अर शुद्ध सम्यक्त्वी होइ; सो दर्शनिक कहिए । पंच अणुव्रतादिक कौ धारै, सो व्रतिक कहिए । नित्य सामायिक क्रिया जाकै होइ; सो सामायिक कहिए । अवश्य पर्वनि विषे उपवास जाकै होइ; सो प्रोषधोपवास कहिए । जीव सहित वस्तु सेवन का त्यागी होइ; सो सचित्त विरत कहिए । रात्रि विषे भोजन न करै सो रात्रिभक्त विरत कहिए । सदा काल शील पालै; सो ब्रह्मचारी कहिए । पाप आरंभ कौ त्यागै; सो आरंभ विरत कहिए । परिग्रह के कार्य को त्यागै; सो परिग्रह विरत कहिए । पाप की अनुमोदना कौ त्यागै; सो अनुमति विरत कहिए । अपने निमित्त भया आहारादिक कौ त्यागै; सो उद्दिष्ट विरत कहिए । इनिका विशेष वर्णन ग्रंथांतर से जानना ।

**जीवा चोद्दस-भेया, इंदिय-विसया तहट्ठवीसं तु ।**

**जे तेसु एव विरया, असंजदा ते मुणेदव्वा<sup>१</sup> ॥४७८॥**

जीवाश्चतुर्दशभेदा, इन्द्रियविषयास्तथाष्टविंशतिस्तु ।

ये तेषु नैव विरता, असंयताः ते मन्तव्याः ॥४७८॥

टीका - चौदह जीवसमास रूप भेद, बहुरि तैसै ही अट्ठाईस इन्द्रियनि के विषय, तिनिविषे जे विरत न होई, जीवनि की दया न करै, विषयनि विषे रागी होई, ते असंयमी जानने ।

**पंच-रस-पंच-वण्णा, दो गंधा अट्ठ-फास-सत्त-सरा ।**

**मणसहिदट्ठावीसा, इंदीयविसया मुणेदव्वा ॥४७९॥**

पंचरसपंचवर्णाः, द्वौ गंधौ अष्टस्पर्शसप्तस्वराः ।

मनःसहिताः अष्टविंशतिः इन्द्रियविषयाः मन्तव्याः ॥४७९॥

<sup>१</sup> पट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३७५, गाथा स. १६४ ।

टीका - तीखा, कडवा, कसायला, खाटा, मीठा ए पांच रस । बहुरि सुफेद, पीला, हरचा, लाल, काला ए पांच वर्ण । बहुरि सुगंध, दुर्गंध, ए दोय गव । बहुरि कोमल, कठोर, भारचा, हलका, सीला (ठंडा), ताता, रूखा, चिकना ए आठ स्पर्श । बहुरि षडज, ऋषभ, गांधार, मध्यम, पंचम, धैवत, निषाद ए सात स्वर असै इंद्रियनि के सत्ताईस विषय अर अनेक विकल्परूप एक मन का विषय, असै विषय के भेद अट्ठाईस जानने ।

आगै संयम मार्गणा विषै जीवनि की संख्या कहै है-

पमदादि-चउण्हं जुदी, सामयिय-दुगं कमेण सेस-तियं ।

सत्त-सहस्सा णव-सय, णव-लक्खा तीहिं परिहीणा ॥४८०॥

प्रमत्तादिचतुर्णां युतिः, सामायिकद्विकं क्रमेण शेषत्रिकम् ।

सप्तसहस्राणि नवशतानि, नवलक्षाणि त्रिभिः परिहीनानि ॥४८०॥

टीका - प्रमत्तादि च्यारि गुणस्थानवर्ती जीवनि का जोड दीए, जो प्रमाण होइ; तितना जीव सामायिक अर छेदोपस्थापना संयम के धारक जानने । तहां प्रमत्तवाले पांच कोडि, तिराणवै लाख अठ्याणवै हजार दोय सै छह (५६३६८२०६), अप्रमत्तवाले दोय कोडि छिनवै लाख निन्याणवै हजार एक सै तीन (२६६६६१०३) अपूर्व करण वाले उपशमी दोय सै निन्याणवै (२६६), पांच सौ अठ्याणवै क्षायिकी, अनिवृत्ति करणवाले उपशमी २६६, क्षायिकी पांच सौ अठ्याणवै (५६८) इनि सबनिका जोड दीएं, आठ कोडि निव्वे लाख निन्याणवै हजार एक सै तीन भया (८६०६६१०३) सो इतने जीव सामायिक सयमी जानने । अर इतने ही जीव छेदोपस्थापना सयमी जानने । बहुरि अवशेष तीन सयमी रहे, तहा परिहारविगुद्धि सयमी तीन घाटि सात हजार (६६६७) जानने । सूक्ष्म सापराय सयमी तीन घाटि नवने (८६७) जानने । यथाख्यात सयमी तीन घाटि नव लाख (८६६६६७) जानने ।

पल्लासंखेज्जदिमं, विरदाविरदाण दव्वपरिमाणं ।

पुव्वुत्तरासिहीणा, संसारो अविरदाण पमा ॥४८१॥

पल्यासंख्येयं, विरताविरतानां द्रव्यपरिमाणम् ।

पूर्वोक्तराशिहीनाः, संसारिणः अविरतानां प्रमा ॥४८१॥

टीका -- पल्य के असंख्यात भाग करिए, तामै एक भाग प्रमाण संयमासंयम का धारक जीव द्रव्यनि का प्रमाण है । बहुरि ए कहे जे छहौ संयम के धारक जीव, तिनका संसारी जीवनि का प्रमाण में स्यो घटाए, जो अवशेष प्रमाण रहै; सोई असंयमी जीवनि का प्रमाण जानना ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रह ग्रंथ की जीवतत्वप्रदी-  
पिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चद्रिका नामा भाषाटीका विषै जीवकाण्ड  
विषै प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषै सयममार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका असा  
तेरह्वां अधिकार सपूर्ण भया ॥१३॥

## चौदहवां अधिकार : दर्शनमार्गणा

इस अनन्त भव उदधितै, पार करनकौ सेतु ।

श्री अनंत जिनपति नमों, सुख अनन्त के हेतु ॥

आगे दर्शनमार्गणा को कहै हैं-

जं सामण्णं गहणं, भावाणं णेव कट्टुमायारं ।

अविसेसिद्वरण अट्ठे, दंसणमिदि भण्णदे समये ॥४८२॥<sup>१</sup>

यत्सामान्यं ग्रहणं, भावानां नैव कृत्वाकारम् ।

अविशेष्यार्थान्, दर्शनमिति भण्यते समये ॥४८२॥

टीका — भाव जे सामान्य विशेषात्मक पदार्थ, तिनिका आधार कहिए भेद ग्रहण, ताहि नैव कृत्वा कहिए न करिकै यत् सामान्य ग्रहण कहिए जो सत्तामात्र स्वरूप का प्रतिभासना तत् दर्शन कहिए सोई दर्शन? परमागम विषे कहा ह । कैमे ग्रहण करै है ? अर्थान् अविशेष्य अर्थ जे बाह्य पदार्थ, तिनिकौ अविशेष्य कहिए जाति, क्रिया, गुण, प्रकार इत्यादि विशेष न करिकै अपना वा अन्य का केवल सामान्य रूप सत्तामात्र ग्रहण करै है ।

इस ही अर्थ को स्पष्ट करे है—

भावाणं सामण्विसेसयाणं सरूवमेत्तं जं ।

वर्णगर्हणगर्हणं, जीवेण य दंसणं होदि ॥४८३॥

भावानां सामान्यविशेषकानां स्वरूपमात्रं यत् ।

वर्णनहीनगृहणं, जीवेन च दर्शनं भवति ॥४८३॥

टीका - सामान्य विशेषात्मक जे पदार्थ, तिनिका स्वभाव मा । जेद २५ ।  
जैसे है तैसे जीव करि सहित स्वपर सत्ता का प्रकाशना, सो दर्शन । २५ । जी देवे न  
जा करि देखिए वा देखने मात्र, सो दर्शन जानना ।

१. पट्टसाजगम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ १५०, गाथा नं. २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२, ४३, ४४, ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४, ५५, ५६, ५७, ५८, ५९, ६०, ६१, ६२, ६३, ६४, ६५, ६६, ६७, ६८, ६९, ७०, ७१, ७२, ७३, ७४, ७५, ७६, ७७, ७८, ७९, ८०, ८१, ८२, ८३, ८४, ८५, ८६, ८७, ८८, ८९, ९०, ९१, ९२, ९३, ९४, ९५, ९६, ९७, ९८, ९९, १००.

१. पट्टसागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ १५०, नीचा नं. ६२, २ वीं श्रृंखला में  
२. दांत गजघी विशेष स्पष्टीकरण के लिए ३-या भाग पृ. १५३, १५४, १५५

आगे चक्षु - अचक्षु दर्शन के लक्षण कहै है—

चक्खूण जं पयासइ, दिस्सइ तं चक्खु-दंसणं बेति ।

सेसिंदिय-प्पयासो, णायव्वो सो अचक्खू त्ति<sup>१</sup> ॥४८४॥

चक्षुषोः यत्प्रकाशते, पश्यति तत् चक्षुर्दर्शनं ब्रुवन्ति ।

शेषेन्द्रियप्रकाशो, ज्ञातव्यः स अचक्षुरिति ॥४८४॥

टीका - नेत्रनि का संबंधी जो सामान्य ग्रहण, सो जो प्रकाशिए, देखिए या-  
करि वा तिस नेत्र के विषय का प्रकाशन, सो चक्षुदर्शन गणधरादिक कहै हैं । बहुरि  
नेत्र विना च्यारि इन्द्रिय अर मन का जो विषय का प्रकाशन, सो अचक्षुदर्शन है, असा  
जानना ।

परमाणु-आदियाइं, अंतिम-खंधं त्ति मुत्ति-दव्वाइं ।

तं ओहि-दंसणं पुण, जं पस्सइ ताइ पच्चक्खं<sup>२</sup> ॥४८५॥

परमाण्वादीनि, अंतिमस्कंधमिति मूर्तद्रव्याणि ।

तदवधिदर्शनं पुनः, यत् पश्यति तानि प्रत्यक्षम् ॥४८५॥

टीका - परमाणु आदि महास्कंध पर्यंत जे मूर्तीक द्रव्य, तिनिकी जो प्रत्यक्ष  
देखै, सो अवधिदर्शन है ।

बहुविह बहुप्पयारा, उज्जोवा परिमियम्मि खेत्तम्मि ।

लोगालोग वित्तिमिरो, जो केवलदंसणुज्जोओ<sup>३</sup> ॥४८६॥

बहुविधबहुप्रकारो, उद्योताः परिमिते क्षेत्रे ।

लोकालोकवित्तिमिरो, यः केवलदर्शनोद्योतः ॥४८६॥

टीका - बहुत भेद कौं लीए बहुत प्रकार के चंद्रमा, सूर्य, रत्नादिक संबंधी  
उद्योत जगत विषे हैं । ते परिमित जो मर्यादा लीए क्षेत्र, तिस विषे ही अपने प्रकाश

१. ५८४ अंगम-पञ्चा पुस्तक १, पृ. ३८४, गा. स. १६५, १६६ तथा देखो पृ. ३०० से ३८२ तक ।

२. ५८५ अंगम-पञ्चा पुस्तक १, गाथा स. १६६, पृष्ठ ३८४ ।

३. ५८६ अंगम-पञ्चा पुस्तक १, गा. न. १६७, पृ. ३८४ ।

करने कौं समर्थ है । ताते तिन प्रकाशनि की उपमा देने योग्य नाही, असा समर लोक अर अलोक विषे अधकार रहित केवल प्रकाशरूप केवलदर्शन नामा उद्यो जानना ।

आगे दर्शनमार्गणा विषे जीवनि की संख्या दोय गाथानि करि कहैं है—

**योगे चतुरक्खाणं, पंचक्खाणं च खीणचरिमाणं ।**

**चक्खूणमोहिकेवलपरिमाणं ताण णाणं च ॥४८७॥**

**योगे चतुरक्षाणां, पंचाक्षाणां च क्षीणचरमाणाम् ।**

**चक्षुषामवधिकेवलपरिमाणं तेषां ज्ञानं च ॥४८७॥**

टीका — मिथ्यादृष्टि आदि क्षीणकषाय गुणस्थान पर्यंत चक्षुदर्शन ही है तिनके दोय भेद है—एक शक्तिरूप चक्षुदर्शनी, एक व्यक्तिरूप चक्षुदर्शनी । तहा लब्धि अपर्याप्तक चौइंद्री अर पंचेद्री तौ, शक्तिरूप चक्षुदर्शनी है, जातै नेत्र इन्द्रिय पर्याप्ति की पूर्णता अपर्याप्त अवस्था विषे नाही है । तातैं तहां प्रगटरूप चक्षुदर्शन न प्रवर्तै है बहुरि पर्याप्तक चौइंद्री अर पंचेद्री व्यक्तरूप चक्षुदर्शनी है; जातै तहा प्रगटरूप चक्षु दर्शन है । तहा बेद्री, तेद्री, चौइंद्री, पंचेद्री आवली का असख्यातवा भाग प्रतरागुल कौ दीएं, जो प्रमाण आवै, ताका भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने है, तो चौइंद्री, पंचेद्री कितने है ? अैसे प्रमाण राशि च्यारि, फलराशि त्रसनि का प्रमाण, इच्छाराशि दोय, तहा इच्छा कौ फलराशि करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना चौइंद्री, पंचेद्री राशि है । तहां बेद्री आदि क्रम तै घटते है । ताते किंचिदून करि बहुरि तिस विषे पर्याप्त जीवनि का प्रमाण घटावना । तातै तिस प्रमाण में स्यों भी किछू घटायें जो प्रमाण होइ, तितना शक्तिगत चक्षुदर्शनी जानने । बहुरि अैसे ही त्रस पर्याप्त जीवनि का प्रमाण कौ च्यारि का भाग देइ, दो गुणा करि, तामै किंचिदून कीए जो प्रमाण होइ, तितना व्यक्तिरूप चक्षुदर्शनी है । इन्द्रियमार्गणा विषे जो चौइंद्री, पंचेन्द्रिय जीवनि का प्रमाण कह्वा है, तिनकौ मिलाए चक्षुदर्शनी जीवनि का प्रमाण हो है ।

बहुरि अवधिदर्शनी जीवनि का प्रमाण अवधिज्ञानी जीवनि का परिमाण के समान जानना ।

वहुरि केवलदर्शनी जीवनि का परिमाण केवलज्ञानी जीवनि का परिमाण के समान जानना । सो इनिका प्रमाण ज्ञानमार्गणा विषे कह्या है ।

**एइंद्रियपहुदीणं, क्षीणकसायंतणंतरासीणं ।**

**जोगो अचक्षुदंसणजीवाणं होदि परिमाणं ॥४८८॥**

**एकेद्रियप्रभृतीनां, क्षीणकषायांतानंतराशीनाम् ।**

**योगः अचक्षुर्दर्शनजीवानां भवति परिमाणम् ॥४८८॥**

टीका — एकेद्रिय आदि क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती पर्यंत अनंत जीवनि का जोड़ दीए, जो परिमाण होइ तितना चक्षुदर्शनी जीवनि का प्रमाण जानना ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचद्रिका नामा भाषाटीका विषे जीवकाण्ड विषे प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनि विषे दर्शनमार्गणा प्ररूपणा है नाम जाका असा

**चौदहवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१४॥**



## पंद्रहवां अधिकार : लेश्या – मार्गणा

सुधाधार सम धर्म तै, पोषे भव्य सुधोन्य ।

प्राप्त कीए निज इष्ट कौं, भजौ धर्म धन मान्य ॥

आगे लेश्या मार्गणा कहा चाहै है । तहां प्रथम ही निरुक्ति लीए लेश्या का लक्षण कहै है—

लिपइ अप्पीकीरइ, एदीए णियअपुण्णपुण्णं<sup>१</sup> च ।

जीवो त्ति होदि लेस्सा, लेस्सागुणजाणयक्खादा<sup>२</sup> ॥४८६॥

लिपत्यात्मीकरोति, एतया निजापुण्यपुण्यं च ।

जीव इति भवति लेदया, लेश्यागुणज्ञार्यकाख्याता ॥४८९॥

टीका — लेश्या दोय प्रकार — एक द्रव्य लेश्या, एक भाव लेश्या । तहां इस सूत्र विषे भाव लेश्या का लक्षण कहा है । लिपति एतया इति लेश्या, पाप अर पुण्य कौ जीव नामा पदार्थ, इस करि लिप्त करै है, 'अपने करै है, निज संबंधी करै है; सो लेश्या, लेश्या लक्षण के जाननहारे गणधरादिकनि करि कहा है । इस करि आत्मा कर्म करि आत्मा कौ लिप्त करै है, सो लेश्या अथवा कषायनि का उदय करि अनुरंजित जो योगनि की प्रवृत्ति, सो लेश्या कहिए ।

इस ही अर्थ कौ स्पष्ट करै है—

जोगपउत्ती लेस्सां, कसायउदयाणुरंजिया होई ।

तत्तो दोण्णं कज्जं, बंधचउक्कं समुद्दिट्ठं ॥४८७॥

योगप्रवृत्तिलेश्या कषायोदयानुरंजिता भवति ।

ततो द्वयोः कार्यं, बंधचतुष्कं समुद्दिष्टम् ॥४९०॥

टीका — मन, वचन, कायरूप योगनि की प्रवृत्ति सो लेश्या है । सो योगनि की प्रवृत्ति कषायनि का उदय करि अनुरंजित हो है । तिसतें योग अर कषाय इनि

१ षट्खडागम—धर्मेला पुस्तक १, पृष्ठ १६१, गांथा सं. ६४ ।

२ पाठभेद 'णियय पुण्णव च' ।

दोऊनि का कार्य च्यारि प्रकार बन्ध कह्या है । योगनि ते प्रकृति बन्ध अर प्रदेश बन्ध कह्या है । कषायनि ते स्थिति बन्ध अर अनुभाग बंध कह्या है । तिसही कारण कषायनि का उदय करि अनुरंजित योगनि की प्रवृत्ति, सोई है लक्षण जाका असैं लेश्या करि च्यारि प्रकार बंध युक्त ही है ।

आगै दोय गाथानि करि लेश्या का प्ररूपण विषैं सोलह अधिकार कहै है-

णिद्देसवण्णपरिणामसंकमो कम्मलक्खणगदी य ।

सामी साहणसंखा, खेत्तं फासं तदो कालो ॥४६१॥

अंतरभावप्पबहु, अहियारा सोलसा हवंति त्ति ।

लेस्साण साहणट्ठं, जहाकमं तेहिं वोच्छामि ॥४६२॥ जुम्मम् ।

निर्देशवर्णपरिणामसंक्रमाः कर्मलक्षणगतयश्च ।

स्वामी साधनसंख्ये, क्षेत्रं स्पर्शस्ततः कालः ॥४६१॥

अंतरभावाल्पबहुत्वमधिकाराः षोडश भवंतीति ।

लेश्यानां साधनार्थं, यथाक्रमं तैर्वक्ष्यामि ॥४६२॥ जुम्मम् ॥

टीका - १ निर्देश, २ वर्ण, ३ परिणाम, ४ संक्रम, ५ कर्म, ६ लक्षण, ७ गति, ८ स्वामी, ९ साधन, १० संख्या, ११ क्षेत्र, १२ स्पर्शन, १३ काल, १४ अंतर, १५ भाव, १६ अल्प बहुत्व ए सोलह अधिकार लेश्या के भेदसाधन के निमित्त है । तिन करि अनुक्रम तै लेश्यामार्गणा कौ कहै है ।

किण्हा णीला काऊ, तेऊ पम्मा य सुक्कलेस्सा य ।

लेस्साणं णिद्देसा छच्चेव हवंति नियमेण ॥४६३॥

कृष्णा नीला कापोता तेजः पद्मा च शुक्ललेश्या च ।

लेश्यानां निर्देशाः, षट् चैव भवंति नियमेन ॥४६३॥

टीका - नाम मात्र कथन का नाम निर्देश है । सो लेश्या के ए छह नाम है - कृष्ण, नील, कपोत, पीत, पद्म शुक्ल असैं छह ही है । इहां एव शब्द करि तो नियम आया ही, वहुनि नियमेन असा कह्या, सो नैगमनय करि छह प्रकार लेश्या है । पर्यायार्थिक नय करि असंख्यात लोकमात्र भेद है, असा अभिप्राय नियम शब्द करि जानना । इति निर्देशाधिकारः ।

वर्णोदयेण जणिदो, सरीरवर्णो दु दव्वदो लेस्सा ।  
सा सोढा किण्हादी, अणेयभेया सभेयेण ॥४६४॥

वर्णोदयेन जनितः, शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या ।

सा षोढा कृष्णादिः, अनेकभेदा स्वभेदेन ॥४६४॥

टीका — बहुरि वर्ण नामा नामकर्म के उदय ते भया जो शरीर का वर्ण, सो द्रव्य लेश्या कहिए । सो कृष्णादिक छह प्रकार है । तहा एक-एक भेद अपने-अपने भेदनि करि अनेकरूप जानने ।

सोई कहिए है—

छप्पय-णील-कवोद-सुहेमंबुज-संखसण्णिहा वर्णे ।  
संखेज्जासंखेज्जाणंतवियप्पा य पत्तेयं ॥४६५॥

षट्पदनीलकपोतसुहेमाम्बुजशखसन्निभा वर्णे ।

संख्येयासंख्येयानन्तविकल्पाश्च प्रत्येकम् ॥४६५॥

टीका — कृष्ण लेश्या षट्पद जो भ्रमर, ताके समान है । जिसके शरीर का भ्रमर समान काला वर्ण होइ, ताके द्रव्य लेश्या कृष्ण जानना । जैसे ही नील लेश्या, नीलमणि समान है । कपोत लेश्या, कपोत समान है । तेजो लेश्या, सुवर्ण समान है । पद्म लेश्या, कमल समान है । शुक्ल लेश्या शख समान है । बहुरि इन ही एक-एक लेश्यानि के नेत्र इन्द्रिय के गोचर अपेक्षा सख्याते भेद है । जैसे कृष्णवर्ण हीन - अधिक रूप संख्याते भेद कौ लीए नेत्र इन्द्रिय करि देखिये है । बहुरि स्कंध भेद करि एक-एक के असंख्यात असख्याते भेद है । जैसे द्रव्य कृष्ण लेश्यावाले शरीर सबधी स्कंध असख्याते है । बहुरि परमाणू भेद करि एक-एक के अनन्त भेद है । जैसे द्रव्य कृष्ण लेश्यावाले शरीर सम्बन्धी स्कंधनि विषे अनन्ते परमाणू पाईए है । जैसे सर्व लेश्यानि के भेद जानना ।

णिरया किण्हा कप्पा, भावाणुगया हू ति-सुर-णर-तिरिये ।  
उत्तरदेहे छक्कं, भोगे रवि-चंद-हरिदंगा ॥४६६॥

निरयाः कृष्णा कल्पा, भावानुगता हि त्रिसुरनरतिरश्चि ।

उत्तरदेहे षट्कं, भोगे रविचन्द्रहरितांगाः ॥४६६॥

टीका — नारकी सर्व कृष्ण वर्ण ही है । बहुरि कल्पवासी देव जैसी उनके भावलेण्या है, तैसा ही वर्ण के धारक है । बहुरि भवनवासी, व्यतर, ज्योतिपी देव अर मनुष्य अर तिर्यंच अर देवनि का विक्रिया तै भया शरीर, ते छहौ वर्ण के धारक है । बहुरि उत्तम, मध्यम, जघन्य भोगभूमि सबंधी मनुष्य, तिर्यंच, अनुक्रम तै सूर्य सारिखे अर चद्रमा सारिखे अर हरित वर्ण के धारक है ।

**बादरआऊतेऊ, सुक्का-तेऊ य वाऊकायाणं ।**

**गोमुत्तमुग्गवण्णा, कमसो अव्वत्तवण्णो य ॥४६७॥**

बादराप्तैजसौ, शुक्लतेजसौ च वायुकायानाम् ।

गोमूत्रमुद्गवर्णाः क्रमशः अव्यक्तवर्णाश्च ॥४६७॥

टीका — बादर अप्कायिक शुक्ल वर्ण है । बादर तेज कायिक पीतवर्ण है । बादर वात कायिकनि विषै घनोदधि वात तो गऊ का मूत्र के समान वर्ण को धरै है । घनवात मूंगा सारिखा वर्ण धरै है । तनुवात का वर्ण प्रकट नाही, अव्यक्त वर्ण है ।

**सर्वेसिं सुहुमाणं, कावोदा सव्व विग्गहे सुक्का ।**

**सव्वो मिस्सो देहो, कवोदवण्णो हवे णियमा ॥४६८॥**

सर्वेषां सूक्ष्मानां, कापोताः सर्वे विग्रहे शुक्लाः ।

सर्वो मिश्रो देहः, कपोतवर्णो भवेन्नियमात् ॥४६८॥

टीका — सर्व ही सूक्ष्म जीवनि का शरीर कपोत वर्ण है । बहुरि सर्व जीव विग्रहगति विषै शुक्ल वर्ण ही है । बहुरि सर्व जीव अपने पर्याप्ति के प्रारम्भ का प्रथम समय तै लगाय शरीर पर्याप्ति की पूर्णता पर्यंत जो अपर्याप्ति अवस्था है, तहां कपोत वर्ण ही है, अैसा नियम है । अैसे शरीरनि का वर्ण कह्या, सो जिसका जो शरीर का वर्ण होइ, तिसके सोई द्रव्य लेण्या जाननी । इति वर्णाधिकार : ।

आगै परिणामाधिकार पंच गाथानि करि कहै है—

**लोणाणमसंखेज्जा, ऊदयट्ठाणा कसायगा होंति ।**

**तत्थ किलिद्धा असुहा, सुहाविसुद्धा तदालावा ॥४६९॥**

लोकानामसंख्येयान्युदयस्थानानि कषायगोणि भवन्ति ।

तत्र विलब्धानि अशुभानि, शुभानि विशुद्धानि तदालापात् ॥४६६॥

टीका — कषाय संबंधी अनुभागरूप उदयस्थान असख्यात लोक प्रमाण है । तिनिकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीजिए । तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र तौ सकलेश स्थान है । ते परिण असख्यात लोक प्रमाण है । बहुरि एक भाग मात्र विशुद्धि स्थान है । ते परिण असख्यात लोक प्रमाण है, जाते असख्यात के भेद बहुत है । तहां संक्लेश स्थान तौ अशुभलेश्या संबंधी जानने, अर विशुद्धिस्थान शुभलेश्या संबंधी जानने ।

तिव्वतमा तिव्वतरा, तिब्वा असुहा सुहा तदा मंदा ।

मंदतरा मंदतमा, छट्ठाणगया हु पत्तेयं ॥५००॥

तीव्रतमास्तीव्रतरास्तीव्रा अशुभाः शुभास्तथा मंदाः ।

मंदतरा मंदतमाः, षट्स्थानगता हि प्रत्येकम् ॥५००॥

टीका — पूर्वे जे असंख्यात लोक के बहुभागमात्र अशुभ लेश्या सबधी संक्लेश स्थान कहे, ते कृष्ण, नील, कपोत भेद करि तीन प्रकार है । तहा पूर्वे सकलेशस्थाननि का जो प्रमाण कह्या, ताकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीए, तहा एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र कृष्णलेश्या सबधी तीव्रतम कषायरूप सकलेशस्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र नील लेश्या सबधी तीव्रतर कषायरूप सत्केश स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग मात्र कपोत लेश्या सबधी तीव्र कषायरूप सकलेशस्थान जानने । बहुरि असंख्यात लोक का एक भाग मात्र शुभ लेश्या सबधी विशुद्धि स्थान कहे; ते तेज, पद्म, शुक्ल भेद करि तीन प्रकार है । तहां पूर्वे जो विशुद्धिस्थाननि का प्रमाण कह्या, ताकौ यथायोग्य असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र तेजो लेश्या सम्बन्धी मदकषाय रूप विशुद्धि स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग कौ असख्यात लोक का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना अवशेष भाग मात्र पद्मलेश्या सबधी मदतर कषायरूप विशुद्धि-स्थान जानने । बहुरि तिस अवशेष एक भाग मात्र शुक्ललेश्या सबधी मंदतम कषाय-रूप विशुद्धि स्थान जानने । तहा इनि कृष्णलेश्या आदि छह स्थाननि विषे एक —

एक में अनन्तभागादिक षट्स्थान संभवै हैं । तहां अशुभ रूप तीन भेदनि विपै ती उत्कृष्ट तै लगाइ जघन्य पर्यंत असंख्यात लोक मात्र बार पट् स्थानपतित संक्लेश हानि संभवै है । बहुरि शुभरूप तीन भेदनि विपै जघन्य तै लगाइ, उत्कृष्ट पर्यंत असंख्यात लोकमात्र बार षट्स्थान पतित विशुद्ध परिणामनि की वृद्धि संभवै है । परिणामनि की अपेक्षा संक्लेश विशुद्धि के अनंतानन्त अविभाग प्रतिच्छेद हैं; तिनकी अपेक्षा षट्स्थानपतित वृद्धि - हानि जानना ।

**असुहाणं वर-मज्झिम-अवरंसे किण्ह-णील-काउतिए ।  
परिणमदि कमेणप्पा, परिहाणीदो किलेसस्स ॥५०१॥**

अशुभानां वरमध्यमावरांशे कृष्णनीलकापोतत्रिकानाम् ।  
परिणमति क्रमेणात्मा परिहानितः क्लेशस्य ॥५०१॥

टीका — जो संक्लेश परिणामनि की हानिरूप परिणमै, तौ अनुक्रम तें कृष्ण के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अंश; नील के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अंश; कपोत के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अंश रूप परिणवै है ।

**काऊ णीलं किण्हं, परिणमदि किलेसवड्ढिदो अप्पा ।  
एवं किलेसहाणी-वड्ढीदो होदि असुहत्तियं ॥५०२॥**

कापोतं नीलं कृष्णं, परिणमति क्लेशवृद्धित आत्मा ।  
एव क्लेशहानि-वृद्धितो भवति अशुभत्रिकम् ॥५०२॥

टीका — बहुरि जो संक्लेश परिणामनि की वृद्धिरूप परिणमै तौ अनुक्रम तें कपोतरूप, नीलरूप, कृष्णरूप परिणवै है । अैसे संक्लेश की हानि - वृद्धि करि तीन अशुभ स्थान हो है ।

**तेऊ पडमे सुक्के, सुहाणमवरादिअंसगे अप्पा ।  
सुद्धिस्स य वड्ढीदो, हाणीदो अण्णहा होदि ॥५०३॥**

तेजसि पद्मे शुक्ले, शुभानामवराद्यंशगे आत्मा ।  
शुद्धेश्च वृद्धितो, हानितः अन्यथा भवति ॥५०३॥

टीका - बहुरि जो विशुद्धपरिणामनि की वृद्धि होइ, तौ अनुक्रम तै पीत, पद्म, शुल्क के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट अंशरूप परिणवै है । बहुरि जो विशुद्ध परिणामनि की हानि होइ, तो अन्यथा कहिए शुक्ल, पद्म, पीत के उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य अंश रूप अनुक्रम तै परिणवै है । इति परिणामाधिकारः ।

आगे संक्रमणाधिकार तीन गाथानि करि कहै है —

**संक्रमणं सट्ठाण-परट्ठाणं होदि किण्ह-सुक्काणं ।**

**वड्डीसु हि सट्ठाणं, उभयं हाणिम्मि सेसउभये वि ॥५०४॥**

संक्रमणं स्वस्थान-परस्थानं भवतीति कृष्णशुक्लयोः ।

वृद्धिषु हि स्वस्थानमुभयं हानौ शेषस्योभयेऽपि ॥५०४॥

टीका - संक्रमण नाम परिणामनि की पलटनि का है; सो संक्रमण दोय प्रकार है - स्वस्थानसंक्रमण, परस्थानसंक्रमण ।

तहां जो परिणाम जिस लेश्यारूप था, सो परिणाम पलटि करि तिसही लेश्यारूप रहै, सो तो स्वस्थान संक्रमण है ।

बहुरि जो परिणाम पलटि करि अन्य लेश्या कौ प्राप्त होइ, सो परस्थान संक्रमण है ।

तहां कृष्ण लेश्या अर शुक्ललेश्या की वृद्धि विषै तौ स्वस्थानसंक्रमण ही है; जातै सकलेश की वृद्धि कृष्णलेश्या के उत्कृष्ट अंश पर्यंत ही है । अर विशुद्धता की वृद्धि शुक्ल लेश्या के उत्कृष्ट अंश पर्यंत ही है । बहुरि कृष्णलेश्या अर शुक्ल लेश्या के हानि विषै स्वस्थानसंक्रमण परस्थानसंक्रमण दोऊ पाइए है । जो उत्कृष्ट कृष्ण-लेश्या तै सकलेश की हानि होइ, तौ कृष्ण लेश्या के मध्यम, जघन्य अंशरूप प्रवर्तै, तहा स्वस्थान संक्रमण भया, अर जो नीलादिक अन्य लेश्यारूप प्रवर्तै, तहा परस्थान संक्रमण भया । अैसे कृष्ण लेश्या के हानि विषै दोऊ संक्रमण है । बहुरि उत्कृष्ट शुक्ल लेश्या तै जो विशुद्धता की हानि होइ, तौ शुक्ल लेश्या के मध्यम, जघन्य अंशरूप प्रवर्तै । तहा स्वस्थान संक्रमण भया । बहुरि पद्मादिक अन्य लेश्यारूप प्रवर्तै, तहां परस्थान संक्रमण भया । अैसें शुल्क लेश्या के हानि विषै दोऊ संक्रमण है ।

बहुरि अवशेष नील, कपोत, तेज, पद्म, लेश्यानि विषे दोऊ जाति के सक्रमण हानि विषे भी अर वृद्धि विषे भी पाइए । वृद्धि - हानि होतें जो जिस लेश्यारूप था, उस ही लेश्यारूप रहै, तहा स्वस्थान सक्रमण होइ । बहुरि वृद्धि - हानि होतें, जिस लेश्यारूप था, तिसतै अन्य लेश्यारूप प्रवर्त, तहां परस्थान संक्रमण होइ । अैसे च्या-रथौ लेश्यानि के हानि विषे वा वृद्धि विषे उभय सक्रमण है ।

**लेस्साणुक्कस्सादोवरहाणी अवरगादवरड्ढी ।**

**सट्ठाणे अवररादो, हाणी णियआ परट्ठाणे ॥५०५॥**

**लेश्यानामुत्कृष्टादवरहानिः अवरकादवरवृद्धिः ।**

**स्वस्थाने अवरात्; हानिर्नियमात् परस्थाने ॥५०५॥**

टीका — कृष्णादि सर्व लेश्यानि का उत्कृष्ट स्थान विषे जेते परिणाम हैं, तिनतै उत्कृष्ट स्थानक का समीपवर्ती जो तिस ही लेश्या का स्थान, तिस विषे अवर हानि कहिए उत्कृष्ट स्थान तै अनंतभाग हानि लीएं परिणाम हैं । जातें उत्कृष्ट के अनंतर जो परिणाम, ताकौं ऊर्वक कह्या है, सो अनंतभाग की सदृष्टि ऊर्वक है । बहुरि स्वस्थान विषे कृष्णादि सर्व लेश्यानि का जघन्य स्थान के समीपवर्ती जो स्थान है, तिस विषे जघन्य स्थान के परिणामनि तै अवर वृद्धि कहिए । अनंतभागवृद्धि लीएं परिणाम पाइए है; जातें जो जघन्यभाव अष्टांकरूप कह्या है; सो अनंतगुण वृद्धि की सहनानी आठ का अंक है; ताके अनन्तर ऊर्वक ही है । बहुरि सर्व लेश्यानि के जघन्यस्थान तै जो परस्थान संक्रमण होइ तौ उस जघन्य स्थानक के परिणामनि तै अनन्त गुणहानि कौ लीए, अनन्तर स्थान विषे परिणाम हो है, सो शुक्ल लेश्या का जघन्य स्थानक के अनन्तर तौ पद्म लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है । अर कृष्ण लेश्या के जघन्य स्थान के अनन्तर नील लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है । तहां अनन्त गुणहानि पाइए है । अैसे ही सर्व लेश्यानि-विषे जानना । कृष्ण, नील, कपोत विषे तौ हानि - वृद्धि संक्लेश परिणामनि की जाननी । पीत, पद्म, शुक्ल विषे हानि वृद्धि विशुद्ध परिणामनि की जाननी ।

इस गाथा विषे कह्या अर्थ का कारण आगे प्रकट करि कहिए है—

**संक्रमणे छट्ठाणा, हाणिसु-वड्ढीसु होति-तण्णामा ।**

**परिमाणं च यः पुंस्त्वं, उत्तकमं होदि सुदणारो ॥५०६॥**



संक्रमणे षट्स्थानानि, हानिषु वृद्धिषु भवन्ति तन्नामानि ।

परिमाणं च च पूर्वमुक्तक्रमं भवति श्रुतज्ञाने ॥५०६॥

टीका — इस संक्रमण विषै हानि विषै अनन्त भागादिक छह स्थान है । बहुरि वृद्धि विषै अनन्त गुणादिक भागादिक छह स्थान है । तिनके नाम वा प्रमाण जो पूर्वे श्रुतज्ञान मार्गणा विषै पर्याय समास श्रुतज्ञान का वर्णन करते अनुक्रम कह्या है; सोई इहां जानना । सो अनन्त भाग, असंख्यात भाग, सख्यात भाग, सख्यात गुणा, असंख्यात गुणा, अनन्त गुणा ए तौ षट् स्थाननि के नाम है । इनि अनन्त भागादिक की सहनानी क्रम तै ऊर्वक च्यारि, पाच, छह, सात, आठ का अंक है । बहुरि अनन्त का प्रमाण जीवाराशि मात्र, असंख्यात का प्रमाण असख्यात लोक मात्र, संख्यात का प्रमाण उत्कृष्ट संख्यात मात्र असा प्रमाण गुणकार वा भागहार विषै जानना । बहुरि यंत्र द्वार करि जो तहां अनुक्रम कह्या है, सोई यहां अनुक्रम जानना । वृद्धि विषै तौ तहां कह्या है, सोई अनुक्रम जानना ।

बहुरि हानि विषै उलटा अनुक्रम जानना । कैसे ? सो कहिये है — कपोत लेश्या का जघन्य तै लगाइ, कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट पर्यंत विवक्षा होइ, तौ क्रम तै संक्लेश की वृद्धि संभवै है । बहुरि कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट तै लगाइ, कपोत लेश्या का जघन्य पर्यंत विवक्षा होइ, तौ क्रम तै संक्लेश की हानि संभवै है । बहुरि पीत का जघन्य तै लगाइ शुक्ल का उत्कृष्टपर्यंत विवक्षा होइ तौ क्रम तै विशुद्धि की वृद्धि संभवै है । बहुरि शुक्ल का उत्कृष्ट तै लगाइ पीत का जघन्यपर्यंत विवक्षा होइ तौ क्रम तै विशुद्धि की हानि संभवै है । तहा वृद्धि विषै यथासभव षट्स्थानपतित वृद्धि जाननी हानि विषै हानि जाननी । तहा पूर्वे कह्या जो वृद्धि विषै अनुक्रम, तहा पीछे ही पीछे सूच्यगुल का असख्यातवां भाग मात्र बार अनन्त भाग वृद्धि होइ, एक बार अनन्त गुणवृद्धि हो है । तहा अनन्त गुण वृद्धिरूप जो स्थान, सो नवीन षट्स्थान पतितवृद्धि का प्रारंभ रूप प्रथम स्थान है । अर याके पहिले जो अनन्त भागवृद्धिरूप स्थान भया सो विवक्षित षट्स्थान पतित वृद्धि का अंत स्थान है । बहुरि नवीन षट्स्थान पतितवृद्धि का अनन्त गुणवृद्धिरूप प्रथम स्थान के आगे सूच्यगुल का असख्यातवा भागमात्र अनन्तभाग वृद्धिरूपस्थान हो है । आगे पूर्वोक्त अनुक्रम जानना । अर उहा कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट स्थान है; सो षट्स्थान पतित का अन्तस्थानरूप है, ताते पूर्वस्थान तै अनन्तभाग वृद्धिरूप है । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य स्थान है, सो षट्स्थानपतित का प्रारंभरूप प्रथम स्थान है । ताते याके पूर्वे नीललेश्या का उत्कृष्ट

टीका — निद्रा जाके बहुत होइ, और को ठिगना जाके बहुत होइ, धन-धान्या-  
दिक विषे तीव्र वांछा जाके होइ, असा संक्षेप ते नील लेश्यावाले का लक्षण है ।

रूसदि रिणददि अण्णे, दूसदि बहुसो य सोय-भय-बहुलो ।  
असुयदि परिभवदि परं, पसंसदि य अप्पयं बहुलो ॥५१२॥<sup>१</sup>

रुष्यति निन्दति अन्यं, दुष्यति बहुशश्च शोकभयबहुलः ।  
असूयति परिभवति परं, प्रशंसति आत्मानं बहुशः ॥५१२॥

टीका — पर के ऊपरि क्रोध करै, बहुत प्रकार और कौ निंदै, बहुत प्रकार  
और कौ दुखावै, शोक जाके बहुत होइ, भय जाके बहुत होइ, और कौ नीक देखि  
सकै नाही; और का अपमान करै, आपकी बहुत प्रकार बढ़ाई करै ।

ण य पत्तियदि परं, सो अप्पाणं यिव परं पि मण्णंतो ।  
तुसदि अभित्थुवंतो, ण य जाणदि हाणिवड्ढिं वा ॥५१३॥<sup>२</sup>

न च प्रत्येति परं, स आत्मानमिव परमपि मन्यमानः ।  
तुष्यति अभिष्टुवतो, न च जानाति हानिवृद्धी वा ॥५१३॥

टीका — आप सारिखा पापी - कपटी और कौ मानता संता और का  
विश्वास न करै, जो आपकी स्तुति करै, ताके ऊपरि बहुत संतुष्ट होइ, अपनी,  
अर पर की हानि वृद्धि कौ न जाने ।

मरणं पत्थेदि रणे, देहि सुबहुगं हि थुव्वमाणो दु ।  
ण गणइ कज्जाकज्जे लक्खणमेयं तु काउस्स ॥५१४॥<sup>३</sup>

मरणं प्रार्थयते रणे, ददाति सुबहुकमपि स्तूयमानस्तु ।  
न गणयति कायाकार्यं, लक्षणमेतत्तु कपोतस्य ॥५१४॥

टीका — युद्ध विषे मरण कौ चाहै, जो आपकी बढ़ाई करै, ताकौ बहुत धन  
देइ, कार्य-अकार्य कौ गिणै नाही, असै लक्षण कपोत लेश्यावाले के हैं ।

१. पट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६१, गाथा स. २०३ ।

२. पट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६१, गाथा स. २०४ ।

३. पट्खडागम-धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६१, गाथा स. २०५ ।

जाणदि कज्जाकज्जं, सेयमसेयं च सव्व-सम-पासी ।  
दय-दाण-रदो य मिदू, लक्खणमेयं तु तेउस्स ॥५१५॥<sup>१</sup>

जानाति कार्याकार्यं, सेव्यमसेव्यं च सर्वसमदर्शी ।  
दयादानरतश्च मृदुः, लक्षणमेतत्तु तेजसः ॥५१५॥

टीका — कार्य - अकार्य कौ जानै, सेवनेयोग्य न सेवनेयोग्य कौ जानै, सर्व विषे समदर्शी होइ, दया - दान विषे प्रीतिवन्त होइ; मन, वचन, काय विषे कोमल होइ, अैसे लक्षण पीतलेश्यावाले के है ।

चागी भद्दो चोक्खो, उज्जव-कम्मो य खमदि बहुगं पि ।  
साहु-गुरु-पूजण-रदो, लक्खणमेयं तु पम्मस्स ॥५१६॥<sup>२</sup>

त्यागी भद्रः सुकरः, उद्युक्तकर्मा च क्षमते बहुकमपि ।  
साधुगुरूपूजनरतो, लक्षणमेतत्तु पद्मस्य ॥५१६॥

टीका — त्यागी होइ, भद्र परिणामी होइ, सुकार्यरूप जाका स्वभाव होइ, शुभभाव विषे उद्यमी रूप जाके कर्म होइ, कष्ट वा अनिष्ट उपद्रव तिनकी सहै, मुनि जन अर गुरुजन तिनकी पूजा विषे प्रीतिवन्त होइ, अैसे लक्षण पद्मलेश्यावाले के है ।

ण य कुणदि पक्खवायं, ण वि य णिदाणं समो य सव्वेसिं ।  
णत्थि य राय-द्दोसा एोहो वि य सुक्क-लेस्सस्स ॥५१७॥<sup>३</sup>

न च करोति पक्षपातं, नापि च निदानं समश्च सर्वेषाम् ।  
नास्ति च रागद्वेषः स्नेहोऽपि च शुक्ललेश्यस्य ॥५१७॥

टीका — पक्षपात न करै, निदा न करै, सर्व जीवनि विषे समान होइ, उट्ट अनिष्ट विषे राग - द्वेष रहित होइ, पुत्र कलत्रादिक विषे स्नेह रहित होइ; जेमे लक्षण शुक्ल लेश्यावाले के है । इति लक्षणाधिकार ।

१. षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६१, गाथा सं. २०६ ।  
२. षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६२, गाथा सं. २०७ ।  
३. षट्खडागम - धवला पुस्तक १, पृष्ठ ३६२, गाथा सं. २०८ ।

आगे गति अधिकार ग्यारह सूत्रनि करि कहै है -

लेस्साणं खलु अंसा, छब्बीसा होंति तत्थ मज्झिमया ।  
आउगबंधणजोगा, अट्ठट्ठवगरिसकालभवा ॥५१८॥<sup>१</sup>

लेश्यानां खलु अंशाः, षड्विंशतिः भवन्ति तत्र मध्यमकाः ।

आयुष्कबन्धनयोग्या, अष्ट अष्टापकर्षकालभवाः ॥५१८॥

टीका - लेश्यानि के छब्बीस अंश हैं । तहां छहौं लेश्यानि के जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट भेद करि अठारह अंश हैं । बहुरि कपोतलेश्या के उत्कृष्ट अंश तैं आगे अर तेजो लेश्या के उत्कृष्ट अंश तैं पहिलें कषायनि का उदय स्थानकनि विषे आठ मध्यम अंश है, अैसे छब्बीस अंश भए । तहां आयुर्कर्म के बध कौ योग्य आठ मध्यम अंश जानने । तिनिका स्वरूप आगे स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार विषे भी कहेंगे । ते आठ मध्यम अंश, अपकर्ष काल आठ, तिनि विषे संभवै है । वर्तमान जो भुज्यमान आयु, ताकौ अपकर्ष, अपकर्ष कहिए । घटाइ घटाइ आगामी पर भव की आयु कौ बांधै; सो अपकर्ष कहिए ।

अपकर्षनि का स्वरूप दिखाइए है - तहां उदाहरण कहिए है - किसी कर्म भूमिया मनुष्य वा तिर्यंच की भुज्यमान आयु पैसठि सैं इकसठि (६५६१) वर्ष की है । तहां तिस आयु का दोय भाग गए, इकईस सैं सित्तासी वर्ष रहै । तहां तीसरा भाग कौ लागते ही प्रथम समय स्यों लगाइ अंतर्मुहूर्त पर्यंत कालमात्र प्रथम अपकर्ष है । तहा परभव सबधी आयु का बंध होइ । बहुरि जो तहा न बंधै तौ, तिस तीसरा भाग का दोय भाग गए, सात सैं गुणतीस वर्ष आयु के अवशेष रहै, तहा अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत दूसरा अपकर्ष, तहां परभव की आयु बांधै । बहुरि तहा भी न बंधै तौ तिसका भी दोय भाग गए दोय सैं तियालीस वर्ष आयु के अवशेष रहै, अंतर्मुहूर्त काल मात्र तीसरा अपकर्ष विषे परभव का आयु बांधै । बहुरि तहां भी न बंधै तौ, तिसका भी दोय भाग गए इक्कासी वर्ष रहै, अंतर्मुहूर्त पर्यंत चौथा अपकर्ष विषे पर भव का आयु बांधै । अैसे ही दोय दोय भाग गए, सत्ताईस वर्ष रहै वा नव वर्ष रहै वा तीन वर्ष रहै वा एक वर्ष रहै अंतर्मुहूर्तमात्र काल पर्यंत पांचवां वा छठा वा सातवां वा

आठवा अपकर्ष विषे पर भव की आयु कौ बधने कौ योग्यपना जानना । अैसे ही जो भुज्यमान आयु का प्रमाण होय, ताके त्रिभाग त्रिभाग विषे आठ अपकर्ष जानने ।

वहुरि जो आठौ अपकर्षनि विषे आयु न बंधे अर नवमा आदि अपकर्ष है नाही, तौ आयु का बंध कैसे होइ ?

सो कहै है — असंक्षेपाद्वा जो आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण काल भुज्यमान आयु का अवशेष रहै ताके पहिले अतर्मुहूर्त काल मात्र समय प्रबद्धनि करि परभव की आयु कौ बाधि पूर्ण करै है, अैसा नियम है । इहा विशेष निर्णय कीजिए है — विपादिक का निमित्तरूप कदलीघात करि जिनका मरण होइ, ते सोपक्रमायुष्क कहिए । तातै देव, नारकी, भोगभूमिया अनुपक्रमायुष्क है । सो सोपक्रमायुष्क है, ते पूर्वोक्त रीति करि पर भव का आयु कौ बाधै है । तहां पूर्वोक्त आठ अपकर्षनि विषे आयु के बंध होने कौ योग्य जो परिणाम तिनकरि केई जीव आठ वार, केई जीव सात वार, केई छह वार, केई पाच वार, केई च्यारि वार, केई तीन वार, केई दो वार, केई एक वार परिणामै है ।

आयु के बध योग्य परिणाम अपकर्षणनि विषे ही होइ, सो अैसा कोई स्वभाव सहज ही है । अन्य कोई कारण नाही ।

तहां तीसरा भाग का प्रथम समय विषे जिन जीवनि करि परभव के आयु का बंध प्रारंभ किया, ते अतर्मुहूर्त ही विषे निष्ठापन करे । अथवा दूसरी बार आयु का नवमां भाग अवशेष रहै, तहा तिस बध होने कौ योग्य होइ । अथवा तीसरी बार आयु का सत्ताईसवां भाग अवशेष रहै, तहां तिस बध होने कौ योग्य होइ, अैसे आठवा अपकर्ष पर्यंत जानना । अैसा किछू नियम है नाही — जो इनि अपकर्षनि विषे आयु का बंध होइ ही होइ । इनि विषे आयु के बंध होने कौ योग्य होइ । जो बध होइ तौ होइ न होइ तौ न होइ । अैसे आयु के बंध का विधान कहा ।

जैसे अन्यकाल विषे समय समय प्रति समयप्रबद्ध बधै है, सो आयुकर्म विना सात कर्मरूप होइ परिणामै है । तैसे आयुकर्म का बंध जेता काल मे होइ, तितने काल विषे जे समय समय प्रति समयप्रबद्ध बधै ते आठो ही कर्मरूप होइ परिणामै है अैसे जानना ।

बहुरि जिस समय विषै, पहिले ही, जिसका बंध होइ, तहा तिसका प्रारभ कहिए । बहुरि समय समय प्रति तिस प्रकृति का बंध हूवा करै, तहां बंध होइ निवरै, तहां निष्ठापक कहिए ।

बहुरि देव नारकीनि के छह महीना आयु का अवशेष रहै, तव आयु के बंध करने कौ योग्य होइ, पहिले न होइ । तहा छह महीना ही विषै त्रिभाग त्रिभाग करि आठ अपकर्ष हो है, तिन विषै आयु के बंध करने योग्य हो है ।

बहुरि एक समय अधिक कोटि पूर्व वर्ष तै लगाइ तीन पत्य पर्यंत असख्यात वर्षमात्र आयु के धारी भोगभूमियां तिर्यच वा मनुष्य, ते भी निरुपक्रमायुक्क है । इन कें आयु का नव मास अवशेष रहै आठ अपकर्षनि करि पर भव के आयु का बंध होने का योग्यपना हो है । बहुरि इतना जानना — जिस गति संबधी आयु का बंध प्रथम अपकर्ष विषै होइ पीछे जो दुतियादि अपकर्षनि विषै आयु का बंध होइ, तौ तिस ही गति संबधी आयु का बंध होइ । बहुरि जो प्रथम अपकर्ष विषै आयु का बंध न होइ, तौ अर दूसरे अपकर्ष विषै जिस किसी आयु का बंध होइ तौ तृतीयादि अपकर्षनि विषै आयु का जो बंध होइ, तौ तिस ही गति सम्बन्धी आयु का बन्ध होइ, अैसे ही आगें जानना । अैसे कई एक जीवनि के तौ आयु का बंध एक अपकर्ष ही विषै होइ, केई जीवनि के दोय अपकर्षनि करि होइ, केई जीवनि के तीन वा च्यारि वा पांच वा छह वा सात वा आठ अपकर्षनि करि हो है ।

तहां आठ अपकर्षनि करि परभव की आयु के बन्ध करनहारे जीव स्तोक है । तिनतै सख्यात गुणे सात अपकर्षनि करि बन्ध करने वाले है । तिनतै संख्यात गुणे छह अपकर्षनि करि बन्ध करने वाले है । अैसे सख्यात गुणे संख्यात गुणे पांच, च्यारि, तीन, दोय, एक अपकर्षनि करि बंध करने वाले जीव जानने ।

बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव, तिसकै आठवां अपकर्ष विषै आयु बधने का जघन्य काल स्तोक है । तिसतै विशेष अधिक ताका उत्कृष्ट काल है । बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव के सातवां अपकर्ष विषै जघन्य काल तिसतै संख्यात गुणा है, उत्कृष्ट तिसतै विशेष अधिक है । बहुरि सात अपकर्षनि करि आयु कौ बाधता जीव के सातवां अपकर्ष विषै आयु बंधने का जघन्य काल तिसतै सख्यात गुणा है, उत्कृष्ट तिसतै विशेष अधिक है । बहुरि आठ अपकर्षनि करि आयु बाधता जीव के छठा अपकर्ष विषै आयु बंधने का जघन्य काल तिसतै

31725

[illegible]

संख्यात गुणा है, उत्कृष्ट विशेष अधिक है । बहुरि सात अपकर्षनि करि आयु कौ बांधता जीव के छठा अपकर्ष विषे आयु का बंधने का जघन्य काल तिसते संख्यातगुणा है, उत्कृष्ट विशेष अधिक है । बहुरि छह अपकर्षनि करि आयु कौ बांधता जीव के छठा अपकर्ष विषे आयु बंधने का जघन्य काल तिसते संख्यातगुणा है; उत्कृष्ट किछू अधिक है । अैसे एक अपकर्ष करि आयु कौ बांधता जीव के तीहि अपकर्ष के उत्कृष्ट काल पर्यंत बह-  
त्तरि (७२) भेद हो हैं । तहां जघन्य तै उत्कृष्ट तो अधिक जानना । सो तिस विव-  
क्षित जघन्य कौ संख्यात का भाग दीएं, जो पावै, सो विशेष का प्रमाण जानना ।  
ताकौ जघन्य में जोडै उत्कृष्ट का प्रमाण हो है । बहुरि उत्कृष्ट तै आगला जघन्य,  
संख्यात गुणां जानना । अैसे यद्यपि सामान्यपने सबनि विषे काल अंतर्मुहूर्त मात्र है ।  
तथापि हीनाधिकपना जानने कौ अनुक्रम कहा है, जो अपकर्षनि विषे आयु का बंध  
होइ, तौ इतने इतने काल मात्र समयप्रबद्धनि करि बंध हो है ।

यह बहत्तरी भेदनि की रचना है । तहां आठ अपकर्षनि करि आयु बंधने की  
रचना विषे पहिली पंक्ति के कोठानि विषे जो आठ - आठ का अंक है, ताका तौ यह  
अर्थ जानना - जो आठ अपकर्षनि करि आयु बांधने वाले का इहां ग्रहण है । बहुरि  
दूसरी, तीसरी पंक्तिनि विषे आठ, सात आदि अंक है, तिनिका यह अर्थ - जो तिन  
आठ अपकर्षनि करि बंध करने वाले जीव के आठवा, सातवां आदि अपकर्षनि का  
ग्रहण है । तहा दूसरी पंक्ति विषे जघन्य काल अपेक्षा ग्रहण जानना । तीसरी पंक्ति  
विषे उत्कृष्ट काल अपेक्षा ग्रहण जानना । अैसे ही सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय,  
एक अपकर्षनि करि आयु बंधने की रचना विषे अर्थ जानना । आठौ रचनानि की  
दूसरी, तीसरी पंक्तिनि के सर्व कोठे बहत्तरि हो है । इनि बहत्तरि स्थाननि विषे आयु  
बंधने के काल का अल्प - बहुत्व जानना । मध्य भेदनि के ग्रहण निमित्त जघन्य  
उत्कृष्ट के बीच बिंदी की सहनानी जाननी ।

अैसे आयु कौ बंधने के योग्य, लेश्यानि का मध्यम आठ अश, तिनकी आठ  
अपकर्षनि करि उत्पत्ति का अनुक्रम कहा ।

सेसट्ठारसअंसा, चउगइ-गमणस्स कारणा होति ।

सुक्कुक्कस्संसमुदा, सव्वट्ठं जांति खलु जीवा ॥५१६॥

शेषाष्टादशांशाश्चतुर्गतिगमनस्य कारणानि भवन्ति ।

शुक्लोत्कृष्टांशमृताः, सर्वार्थं यान्ति खलु जीवाः ॥५१६॥



टीका - तिन मध्यम अंशनि ते अवशेष रहै, जे लेश्यानि के अठारह अंश, ते च्यारि गति विषै गमन कौ कारण है । मरण इनि अठारह अंशनि करि सहित होइ, सो मरण करि यथायोग्य गति कौ जीव प्राप्त हो है । तहां शुक्ल लेश्या का उत्कृष्ट अंश करि सहित मरै, ते जीव सर्वार्थसिद्धि नामा इंद्र के विमान कौ प्राप्त हो है ।

**अवरंसमुदा होंति, सदारदुगे मज्झिमंसगेण मुदा ।  
आणदकप्पादुवरिं, सब्बट्ठाइल्लगे होंति ॥५२०॥**

अवरांशमृता भवन्ति, शतारद्विके मध्यमांशकेन मृताः ।  
आनतकल्पादुपरि, सर्वार्थादिमे भवन्ति ॥५२०॥

टीका- शुक्ल लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव शतार -सहस्रार स्वर्ग विषै उपजै है । बहुरि शुक्ल लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव आनत स्वर्ग के ऊपरि सर्वार्थसिद्धि इंद्रक का विजयादिक विमान पर्यंत यथासंभव उपजै है ।

**पद्ममुक्कस्संसमुदा, जीवा उवजांति खलु सहस्सारं ।  
अवरंसमुदा जीवा, सणक्कुमारं च माहिंदं ॥५२१॥**

पद्मोत्कृष्टांशमृता, जीवा उपयान्ति खलु सहस्रारम् ।  
अवरांशमृता जीवाः, सनत्कुमारं च माहेन्द्रम् ॥५२१॥

टीका - पद्म लेश्या का उत्कृष्ट अंश करि मरै, जे जीव सहस्रार स्वर्ग कौ प्राप्त हो हैं । बहुरि पद्म लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव सनत्कुमार - माहेन्द्र स्वर्ग कौ प्राप्त हो है ।

**मज्झिमअसेण मुदा, तम्मज्झं जांति तेउजेठमुदा ।  
साणक्कुमारमाहिंदंतिमचक्किदसेढिमि ॥५२२॥**

मध्यमांशेन मृताः, तन्मध्यं यांति तेजोज्येष्ठमृताः ।  
सानत्कुमारमाहेन्द्रान्तिमचक्रेन्द्रश्रेण्याम् ॥५२२॥

टीका — पद्म लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव सहस्रार स्वर्ग के नीचै अर सनत्कुमार - माहेन्द्र के ऊपरि यथासंभव उपजै है । बहुरि तेजो लेश्या का

उत्कृष्ट अंश करि मरै, ते सनत्कुमार — माहेन्द्र स्वर्ग का अंत का पटल विषै चक्र नामा इंद्रक संबंधी श्रेणीबद्ध विमान, तिनि विषै उपजै हैं ।

**अवरंसमुदा सोहस्मीसाणादिमउडम्मि सेठिम्मि ।  
मज्झिमअंसेण मुदा, विमलविमाणादिबलभद्दे ॥५२३॥**

अवरांशमृताः सौधर्मेशानादिमतौ श्रेण्याम् ।  
मध्यमांशेन मृता, विमलविमानादिबलभद्रे ॥५२३॥

टीका — तेजो लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव सौधर्म ईशान का पहिला रितु (जु) नामा इंद्रक वा श्रेणीबद्ध विमान, तिनि विषै उपजै है । बहुरि तेजो लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव सौधर्म — ईशान का दूसरा पटल का विमल नामा इंद्रक तै लगाइ सनत्कुमार — माहेन्द्र का द्विचरम पटल का बलभद्र नामा इंद्रक पर्यंत विमान विषै उपजै हैं ।

**किण्हवरंसेण मुदा, अवधिट्ठाणम्मि अवरअंसमुदा ।  
पंचमचरिमतिमिस्से, मज्झे मज्झेण जायन्ते ॥५२४॥**

कृष्णवरांशेन मृता, अवधिस्थाने अवरांशमृताः ।  
पञ्चमचरमतिमिस्से, मध्ये मध्येन जायन्ते ॥५२४॥

टीका — कृष्ण लेश्या का उत्कृष्ट अंश करि मरै, ते जीव सातवी नरक पृथ्वी का एक ही पटल है, ताका अवधि स्थानक नामा इंद्रक बिल विषै उपजै है । बहुरि कृष्ण लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव पंचम पृथ्वी का अत पटल का तिमिस्स नामा इंद्रक विषै उपजै है । बहुरि कृष्ण लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव अवधिस्थान इंद्रक का च्यारि श्रेणीबद्ध बिल तिनि विषै वा छठा पृथ्वी का तीनी पटलनि विषै वा पांचवी पृथ्वी का चरम पटल विषै यथायोग्य उपजै है ।

**नीलुककस्संसमुदा, पंचमअंधिदयम्मि अवरमुदा ।  
वालुकसंपज्जलिदे, मज्झे मज्झेण जायन्ते ॥५२५॥**

नीलोकृष्ठांशमृताः, पञ्चमांधेन्द्रके अवरमृताः ।  
वालुकासंप्रज्वलिते, मध्ये मध्येन जायन्ते ॥५२५॥

टीका — नील लेश्या का उत्कृष्ट अंश करि मरै, ते जीव पंचम पृथ्वी का द्विचरम पटल का अंध्र नामा इंद्रक विषै उपजै है । केई पाचवा पटल विषै भी उपजै है । अरिष्ट पृथ्वी का अंत का पटल विषै कृष्ण लेश्या का जघन्य अंश करि मरे हुए भी केई जीव उपजै है; इतना विशेष जानना । बहुरि नील लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव बालुका पृथ्वी का अंत का पटल विषै सप्रज्वलित नामा इंद्रक विषै उपजै है । बहुरि नील लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव बालुका प्रभा पृथ्वी के संप्रज्वलित इंद्रक ते नीचे अर चौथी पृथ्वी का सातौ पटल अर पचमी पृथ्वी का अंध्र इंद्रक के ऊपरि यथायोग्य उपजै है ।

**वर-कापोदंसमुदा, संजलिदं जांति तदिय-गिरयस्स ।**

**सीमंतं अवरमुदा, मज्झे मज्झेण जायंते ॥५२६॥**

वरकापोतांशमृताः, संज्वलितं यान्ति तृतीयनिरयस्य ।

सीमन्तमवरमृता, मध्ये मध्येन जायन्ते ॥५२६॥

टीका — कापोत लेश्या का उत्कृष्ट अंश करि मरै, ते जीव तीसरी पृथ्वी का आठवां द्विचरम पटल ताके सज्वलित नामा इंद्रक विषै उपजै है । केई अंत का पटल सबधी सप्रज्वलित नामा इंद्रक विषै भी उपजै है । इतना विशेष जानना । बहुरि कापोत लेश्या का जघन्य अंश करि मरै, ते जीव पहिली धर्मा पृथ्वी का पहिला सीमतक नामा इंद्रक, तिस विषै उपजै है । बहुरि कापोत लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, ते जीव पहिला पृथ्वी का सीमत इंद्रक ते नीचे बारह पटलनि विषै, बहुरि मेघा तीसरी पृथ्वी का द्विचरम सज्वलित इंद्रक ते ऊपरि सात पटलनि विषै, बहुरि दूसरी पृथ्वी का ग्यारह पटल, तिन विषै यथायोग्य उपजै है ।

**किण्ह-चउक्काणं पुण, मज्झंस-मुदा हु भवणगादि-तिये ।**

**पुढवी-आउ-वणप्फदि-जीवेसु हवंति खलु जीवा ॥५२७॥**

कृष्णचतुष्काणां पुनः, मध्यांशमृता हि भवनकादित्रये ।

पृथिव्यव्वनस्पतिजीवेषु भवन्ति खलु जीवाः ॥५२७॥

टीका — पुनः कहिये यहु विशेष है — कृष्ण - नील - कपोत नील लेश्या, तिनके मध्यम अंश करि मरै असै कर्म भूमिया मिथ्यादृष्टी तिर्यच ता मनुष्य अर

तेजो लेश्या का मध्यम अंश करि मरै, अैसे भोगभूमिया मिथ्यादृष्टी तिर्यंच वा मनुष्य ते भवनवासी, व्यतर, ज्योतिषी देवनि विषै उपजै हैं । बहुरि कृष्ण - नील - कपोत - पीत इन च्यारि लेश्यानि के मध्यम अंशनि करि मरै, अैसे तिर्यंच वा मनुष्य भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी वा सौधर्म - ईशान स्वर्ग के वासी देव, मिथ्यादृष्टी, ते वादर पर्याप्तक पृथ्वीकायिक, अप्कायिक वनस्पती कायिक विषै उपजै है । भवनत्रयादिक की अपेक्षा इहां पीत लेश्या जाननी । तिर्यंच मनुष्य अपेक्षा कृष्णादि तीन लेश्या जाननी ।

**किण्ह-तियाणं मज्झिम-अंस-मुदा तेउ-वाउ-वियलेसु ।**

**सुर-णिरया सग-लेस्सहिं, णर-तिरियं जांति सग-जोगं ॥५२८॥**

कृष्णत्रयाणां मध्यमांशमृताः तेजोवायुविकलेषु ।

सुरनिरयाः स्वकलेश्याभिः नरतिर्यञ्चं यान्ति स्वकयोग्यम् ॥५२८॥

टीका - कृष्ण, नील, कपोत के मध्यम अंश करि मरै, अैसे तिर्यंच वा मनुष्य ते तेजःकायिक वा वातकायिक विकलत्रय असैनी पंचेद्री साधारण वनस्पती, इनिविषै उपजै है । बहुरि भवनत्रय आदि सर्वार्थसिद्धि पर्यंत देव अर धम्मादि सात पृथ्वी संबंधी नारकी ते अपनी-अपनी लेश्या के अनुसारि यथायोग्य मनुष्यगति वा तिर्यंच-गति कौ प्राप्त हो है । इहां इतना जानना - जिस गति संबंधी पूर्वे आयु बंध्या होइ, तिस ही गति विषै जो मरण होतै जो लेश्या होइ, ताके अनुसारि उपजै है । जैसे मनुष्य के पूर्वे देवायु का बध भया, बहुरि मरण होतै कृष्णादि अशुभ लेश्या होइ तौ भवनत्रिक विषै ही उपजै है, अैसे ही अन्यत्र जानना । इति गत्यधिकार ।

आगे स्वामी अधिकार सात गाथानि करि कहै है-

**काऊ काऊ काऊ, णीला नीला य नील-किण्हा य ।**

**किण्हा य परमकिण्हा, लेस्सा षडमादि पुढवीणं ॥५२९॥**

कपोता कपोता कपोता, नीला नीला च नीलकृष्णे च ।

कृष्णा च परमकृष्णा, लेश्या प्रथमादिपृथिवीनाम् ॥५२९॥

टीका — इहां भावलेश्या की अपेक्षा कथन है । तहां नारकी जीवनि के कहिए है - तहां धम्मा नामा पहिली पृथ्वी विषै कपोत लेश्या का जघन्य अंश है । वंशा दूसरी पृथ्वी विषै कपोत का मध्यम अंश है । मेघा तीसरी पृथ्वी विषै कपोत

का-उत्कृष्ट अंश अर नील का जघन्य अंश है । अंजना चौथी पृथ्वी विषे नील का मध्यम अंश है । अरिष्टा पांचवी पृथ्वी विषे नील का उत्कृष्ट अंश है, अर कृष्ण का जघन्य अंश है । मघवी पृथ्वी विषे कृष्ण का मध्यम अंश है । माघवी सातवी पृथ्वी विषे कृष्ण का उत्कृष्ट अंश है ।

**णर-तिरियाणं ओघो, इगि-विगले तिण्णि चउ असण्णिस्स ।**

**सण्णि-अपुण्णग-मिच्छे, सासणसम्मि वि असुह-तियं ॥५३०॥**

नरतिरश्चामोघः एकविकले तिस्रः चतस्र असंज्ञितः ।

संज्ञ्यपूर्णकमिथ्यात्वे सासादनसम्यक्त्वेऽपि अशुभत्रिकम् ॥५३०॥

टीका — मनुष्य अर तिर्यचनि के 'ओघ' कहिए सामान्यपनै कही ते सर्व छहौ लेश्या पाइए है । तहां एकेंद्री अर विकलत्रय इनके कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या हि पाइए है । बहुरि असैनी पचेद्री पर्याप्तक के कृष्णादि च्यारि लेश्या पाइए हैं, जातें असैनी पचेद्री कपोत लेश्या सहित मरै, तौ पहिले नरक उपजै । तेजो लेश्या सहित मरै, तौ भवनवासी अर व्यतर देवनि विषे उपजै । कृष्णादि तीन अशुभ लेश्या सहित मरै, तौ यथायोग्य मनुष्य तिर्यच विषे उपजै, तातैं ताके च्यारि लेश्या ह । बहुरि सैनी लब्धि अपर्याप्तक तिर्यच वा मनुष्य मिथ्यादृष्टी बहुरि अपि शब्द तें असैनी लब्धि पर्याप्तक तिर्यच — मनुष्य मिथ्यादृष्टी, बहुरि सासादन गुणस्थानवर्तो निर्वृति अपर्याप्तक तिर्यच वा मनुष्य वा भवनत्रिक देव इनिविषे कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या ही है । तिर्यच अर मनुष्य जो उपशम सम्यग्दृष्टी होइ, ताके अनि सकलेश परिणाम होइ, तौ भी देशसयमीवत् कृष्णादिक तीन लेश्या न होइ । तथापि जो उपशम सम्यक्त्व की विराधना करि सासादन होइ, ताके अपर्याप्त अवस्था विषे तीन अशुभ लेश्या ही पाइए है ।

**भोगापुण्णगसम्मि, काउस्स जहण्णि यं हवे णियमा ।**

**सम्मि वा मिच्छे वा, पज्जत्ते तिण्णि सुहलेस्सा ॥५३१॥**

भोगाऽपूर्णकसम्यक्त्वे, कापोतस्य जघन्यकं भवेन्नियमात् ।

सम्यक्त्वे मिथ्यात्वे वा, पर्याप्ते तिस्रः शुभलेश्याः ॥५३१॥

टीका — भोग भूमि विषे निर्वृति अपर्याप्तक सम्यग्दृष्टी जातें तिर्यच त्रयो लेश्या का जघन्य अंश पाइए है । जातें कर्मभूमिया मनुष्य वा तिर्यच पर्याप्तक मनुष्य ।

वा तिर्यंच आयु का बंध किया, पीछे क्षायिक वा वेदक सम्यक्त्व कौ अंगीकार करि मरें, तिस सहित ही तहां भोगभूमि विषे उपजै । तहां तिस योग्य संक्लेश परिणाम कपोत का जघन्य अंश, तिसरूप परिणामे है । बहुरि भोगभूमि विषे पर्याप्त अवस्था विषे सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टी जीव के पीतादिक तीन शुभलेश्या ही पाइए है ।

**अयदो त्ति छ लेस्साओ, सुह-तिय-लेस्सा हु देसविरद-तिये ।**

**तत्तो सुक्का लेस्सा, अजोगिठाणं अलेस्सं तु ॥५३२॥**

असंयत इति षड् लेश्याः, शुभत्रयलेश्या हि देशविरतत्रये ।

ततः शुक्ला लेश्या, अयोगिस्थानमलेश्यं तु ॥५३२॥

टीका - असंयत पर्यंत चारि गुणस्थाननि विषे छहौ लेश्या है । देशविरत आदि तीन गुणस्थाननि विषे पीतादिक तीन शुभलेश्या ही हैं । तातें ऊपरि अपूर्वकरण तें लगाइ सयोगी पर्यंत छह गुणस्थाननि विषे एक शुक्ल लेश्या ही है । अयोगी गुणस्थान लेश्या रहित है जातें, तहा योग कषाय का अभाव है ।

**णट्ठ-कसाये लेस्सा, उच्चदि सा भूद-पुव्व-गदि-णाया ।**

**अहवा जोग-पउत्ती, मुखो त्ति तहिं हवे लेस्सा ॥५३३॥**

नष्टकषाये लेश्या, उच्यते सा भूतपूर्वगतिन्यायात् ।

अथवा योगप्रवृत्तिः, मुख्येति तत्र भवेल्लेश्या ॥५३३॥

टीका - उपशात कषायादिक जहां कषाय नष्ट होइ गए, जैसे तीन गुणस्थाननि विषे कषाय का अभाव होतें भी लेश्या कहिए है, सो भूतपूर्वगति न्याय तें कहिए है । पूर्वे योगनि की प्रवृत्ति कषाय सहित होती थी, तहा लेश्या का सद्भाव था, इहा योग पाइए है; तातें उपचार करि इहां भी लेश्या का सद्भाव कह्या । अथवा योगनि की प्रवृत्ति, सोई लेश्या, ऐसा भी कथन है, सो योग इहा है ही, ताकी प्रधानता करि तहां लेश्या है ।

**तिण्हं दोण्हं दोण्हं, छण्हं दोण्हं च तेरसण्हं च ।**

**एत्तो य चोद्दसण्हं, लेस्सा भवणादि-देवाणं ॥५३४॥**

**तेऊ तेऊ तेऊ, पम्मा पम्मा य पम्म-सुक्का य ।**

**सुक्का य परमसुक्का, भवणतिया पुण्णगे असुहा ॥५३५॥**

त्रयाणां द्वयोर्द्वयो , षण्णां द्वयोश्च त्रयोदशानां च ।

एतस्माच्च चतुर्दशानां, लेश्या भवनादिदेवानाम् ॥५३४॥

तेजस्तेजस्तेजः पद्मा पद्मा 'च पद्मशुक्ले च ।

शुक्ला च परमशुक्ला, भवनत्रिकाः अपूर्णके अशुभाः ॥५३५॥

टीका — देवनि के लेश्या कहिए हैं — तहां पर्याप्त भवनवासी, व्यंतर, ज्यो-  
तिषी इनि भवनत्रिक के तेजो लेश्या का जघन्य अंश है । सौधर्म — ईशान, दोय  
स्वर्गवालों के तेजो लेश्या का मध्यम अंश है । सनत्कुमार - माहेद्र स्वर्गवालों के तेजो  
लेश्या का उत्कृष्ट अंश अर पद्म लेश्या का जघन्य अंश है । ब्रह्म आदि छह स्वर्ग-  
वालों के पद्म लेश्या का मध्यम अंश है । शतार - सहस्रार दोय स्वर्गवालों के पद्म  
लेश्या का उत्कृष्ट अंश अर शुक्ल लेश्या का जघन्य अंश है । आनत आदि च्यारि  
स्वर्ग अर नव ग्रैवेयक इनि तेरह वालों के शुक्ल लेश्या का मध्यम अंश है । ताके  
ऊपरि नव अनुदिश अर पंच अनुत्तर इनि चौदह विमान वालों के शुक्ल लेश्या का  
उत्कृष्ट अंश है । बहुरि भवनत्रिक देवनि के अपर्याप्त अवस्था विषै कृष्णादि तीन  
अशुभ लेश्या ही पाइए है । याही तै यहु जानिए है, जो वैमानिक देवनि के पर्याप्त वा  
अपर्याप्त अवस्था विषै लेश्या समान ही है । अैसे जिस जीव के जो लेश्या पाइए, सो  
जीव तिस लेश्या का स्वामी जानना । इति स्वाम्यधिकार. ।

आगे साधन अधिकार कहै है—

वर्णोदय-संपादिद-शरीरवर्णो दु द्रव्यदो लेस्सा ।

मोहोदय-खओवसमोवसम खयज-जीवफंदणं भावो ॥५३६॥

वर्णोदयसंपादित-शरीरवर्णस्तु द्रव्यतो लेश्या ।

मोहोदयक्षयोपशमोपशमक्षयजजीवस्पन्दो भावः ॥५३६॥

टीका — वर्ण नामा नामकर्म के उदय तै उत्पन्न भया जो शरीर का वर्ण, सो  
द्रव्य लेश्या है । तातै द्रव्य लेश्या का साधन नामा नामकर्म का उदय है । बहुरि  
असयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषै मोहनीय कर्म का उदय तै, देश विरतादिक  
तीन गुणस्थाननि विषै मोहनीय कर्म का क्षयोपशम तै उपशम श्रेणी विषै मोहनीय  
कर्म का उपशम तै क्षपक श्रेणी विषै मोहनीय कर्म का क्षय तै उत्पन्न भया जो जीव  
का स्पंद, सो भाव लेश्या है । स्पंद कहिए जीव के परिणामनि का चंचल होना वा

जीव के प्रदेशनि का चंचल होना, सो भाव लेश्या है । तहा परिणाम का चंचल होना कषाय है । प्रदेशनि का चंचल होना योग है । तीहि कारण करि योग कषायनि करि भाव लेश्या कहिए है । तातें भाव लेश्या का साधन मोहनीय कर्म का उदय वा क्षयोपशम वा उपशम वा क्षय जानना । इति साधनाधिकारः ।

आगे संख्याधिकार छह गाथानि करि कहै हैं—

**किण्हादि-रासिमावलि-असंखभागेण भजिय पविभत्ते ।**

**हीणकमा कालं वा, अस्सिय दब्बा दु भजिदब्बा ॥५३७॥**

कृष्णादिराशिमावत्यसंखभागेन भक्त्वा प्रविभत्ते ।

हीनक्रमाः कालं वा, आश्रित्य द्रव्याणि तु भक्तव्यानि ॥५३७॥

टीका — कृष्णादिक अशुभ तीन लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण है, सो तीन शुभ लेश्यावालों का प्रमाण कौं संसारी जीवनि का प्रमाण में स्यों घटाए, जितना रहे तितना जानना; सो किचिदून संसारी राशिमात्र भया । ताकौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग रहे, तिनके तीन भाग करिए, सो एक-एक भाग एक-एक लेश्यावालों का समान रूप जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग देइ, तहां एक भाग जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहै, सो पूर्वे समान भागनि विषे जो कृष्ण लेश्यावालों का वट (हिस्सा) था, तिसविषे जोडि दीए, जो प्रमाण होइ, तितने कृष्ण लेश्यावाले जीव जानने । बहुरि जो वह एक भाग रह्या था, ताकौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग देइ, तहां एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग रहै, ते पूर्वे समान भाग विषे नील लेश्यावालो का वट था, तिसविषे जोडि दीए, जो प्रमाण होइ, तितने नील लेश्यावाले जीव जानने । बहुरि जो वह एक भाग रह्या था, सो पूर्वे समान भाग विषे कपोत लेश्यावालो का वट था, तिसविषे जोडे, जो प्रमाण होइ, तितने कपोत लेश्यावाले जीव जानने । अैसे कृष्णलेश्यादिक तीन लेश्यावालों का द्रव्य करि प्रमाण कह्या, सो क्रमतै किछू किछू घटता जानना ।

अथवा काल अपेक्षा द्रव्य करि परिमाण कीजिए है । कृष्ण, नील, कपोत तीनों लेश्यानि का काल मिलाए, जो कोई अंतर्मुहूर्त मात्र होइ, ताकौ आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग



रहै, तिनिका तीन भाग कीजिए, तहा एक एक समान भाग एक एक लेश्या की दीजिए । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिये, तहा एक भाग कौ जुदा राखि अवशेष बहुभाग रहे, सो पूर्वोक्त कृष्ण लेश्या का समान भाग विषै मिलाइए, बहुरि अवशेष जो एक भाग रह्या, ताकौ आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौ जुदा राखि, अवशेष बहुभाग पूर्वोक्त नीललेश्या का समान भाग विषै मिलाइए । बहुरि जो एक भाग रह्या, सो पूर्वोक्त कपोत लेश्या का समान भाग विषै मिलाइए, अंसै मिलाए, जो जो प्रमाण भया, सो सो कृष्णादि लेश्यानि का काल जानना ।

अब इहां त्रैराशिक करना । तहां तीनू लेश्यानि का काल जोडै, जो प्रमाण भया, सो तौ प्रमाणराशि, बहुरि अशुभ लेश्यावाले जीवनि का जो किचित् ऊन संसारी जीव मात्र प्रमाण सो फलराशि । बहुरि कृष्णलेश्या का काल का जो प्रमाण सोई इच्छाराशि, तहां फल करि इच्छा कौ गुणै, प्रमाण का भाग दीए, लब्धराशि किचित् ऊन तीन का भाग अशुभ लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कौ दीए, जो प्रमाण भया, तितने कृष्णलेश्यावाले जीव जानने । अंसै ही प्रमाणराशि, फलराशि, पूर्वोक्त इच्छाराशि अपना - अपना काल करि नील वा कपोत लेश्या विषै भी जीवनि का प्रमाण जानना । अंसै काल अपेक्षा द्रव्य करि अशुभलेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कहा है ।

**खेतादो असुहतिया, अणंतलोका कमेण परिहीणा ।**

**कालादोतीदादो, अणंतगुणिदा कमा हीणा ॥५३८॥**

**क्षेत्रतः अशुभत्रिका, अनंतलोकाः क्रमेण परिहीनाः ।**

**कालादतीतादनंतगुणिताः क्रमाद्धीनाः ॥५३८॥**

टीका — क्षेत्र प्रमाण करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव अनंत लोक मात्र जानने । लोकाकाश के प्रदेशनि तैं अनंत गुणै है, तहा क्रमतें हीनक्रम जानने । कृष्णलेश्यावालों तैं किछू घाटि नील लेश्यावालो का प्रमाण है । नील लेश्यावालों तैं किछू घाटि कपोत लेश्यावालो का प्रमाण है । बहुरि इहा प्रमाणराशि लोक, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि अपने - अपने जीवनि का प्रमाण कीए, लब्धराशिमात्र अनंत शलाका भई । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल एक लोक, इच्छाराशिमात्र अनंत शलाका कीए, लब्धराशि अनंत लोक मात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का

प्रमाण हो है । बहुरि काल प्रमाण करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव, अतीत काल के समयनिका प्रमाण तैं अनंत गुणे है । इहां भी पूर्वोक्त हीन क्रम जानना । बहुरि इहां प्रमाणराशि अतीत काल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि अपने - अपने जीवनि का प्रमाण कीए, लब्धराशिमात्र अनंत शलाका भई । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल एक अतीत काल, इच्छा अनंत शलाका करि, लब्ध राशि अनंत अतीत कालमात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण हो है ।

**केवलणाणाणंतिमभागा भावादु किण्ह-तिय-जीवा ।  
तेउतिया-संखेज्जा, संखासंखेज्जभागकमा ॥५३६॥**

केवलज्ञानानंतिमभागो भावात्तु कृष्णत्रिकजीवाः ।  
तेजस्त्रिका असंख्येयाः संख्यासंख्येयभागक्रमाः ॥५३९॥

टीका — बहुरि भाव मान करि अशुभ तीन लेश्यावाले जीव, केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण के अनंतवें भाग प्रमाण है । इहां भी पूर्ववत् हीन क्रम जानना । बहुरि इहां प्रमाण राशि अपने - अपने लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण, फल एक शलाका, इच्छा केवलज्ञान कीए, लब्ध राशिमात्र अनन्त प्रमाण भया, इसको प्रमाणराशि करि फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि केवलज्ञान कीए केवलज्ञान के अनन्तवे भाग मात्र कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि तेजोलेश्या आदि तीन शुभलेश्यावालों का प्रमाण असंख्यात है, तथापि तेजोलेश्यावालों के संख्यातवे भाग पद्मलेश्या वाले है, पद्मलेश्या वालों के असंख्यातवें भाग शुक्ल लेश्यावाले है । अैसें द्रव्य करि शुक्ललेश्यावालों का प्रमाण कह्या ।

**जोइसियादो अहिया, तिरक्खसण्णिस्स संखभागोदु ।  
सूइस्स अंगुलस्स य, असंखभागं तु तेउतियं ॥५४०॥**

ज्योतिष्कतोऽधिका, तिर्यक्संज्ञिनः संख्यभागस्तु ।  
सूचेरंगुलस्य च, असंख्यभागं तु तेजस्त्रिकम् ॥५४०॥

टीका — तेजो लेश्यावाले जीव ज्योतिष्क राशि तैं किछू अधिक है । कैसे ? तो कहिए है — पैसठि हजार पांचसैं छत्तीस प्रतरांगुल कों भाग, जगत्प्रंतर कों दीए, जो प्रमाण होइ, तितने तौ ज्योतिषी देव । बहुरि घनांगुल का प्रथम वर्गमूल करि

जगच्छ्रेणी कौं गुणों, जो प्रमाण होइ, तितने भवनवासो । बहुरि तीन सै योजन के वर्ग का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने व्यतर । बहुरि घनागुल का तृतीय वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणों, जो प्रमाण होइ, तितने सौधर्म - ईशान स्वर्ग के वासी देव । बहुरि पांच बार संख्यात करि गुणित पण्ढी प्रमाण प्रतरागुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने तेजो लेश्यावाले तिर्यंच । बहुरि संख्यात तेजोलेश्यावाले मनुष्य, इनि सबनि का जोड़ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने जीव तेजोलेश्यावाले जानने । बहुरि पद्मलेश्यावाले जीव, तेजोलेश्यावाले जीवनि तै संख्यात गुणें घाटि हैं । तथापि तेजोलेश्यावाले संज्ञी, तिर्यंचनि तै भी संख्यात गुणें घाटि हैं; जातें पद्मलेश्यावाले पंचेंद्री सैनी तिर्यंचनि का प्रमाण विषे पद्मलेश्यावाले कल्पवासी देव अर मनुष्य, तिनिका प्रमाण मिलाए, जो जगत्प्रतर का असंख्यातवे भागमात्र प्रमाण भया तितने पद्मलेश्यावाले जीव है । बहुरि शुक्ललेश्यावाले जीव सूच्यंगुल के असंख्यातवे भाग प्रमाण है । अैसे क्षेत्र प्रमाण करि तीन शुभ लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण कह्या ।

**बेसदछप्पणंगुल-कवि-हिद-पदरं तु जोइसियमाणं ।**

**तस्स य संखेज्जदिमं तिरिक्खसणीण परिमाणं ॥५४१॥**

द्विशतषट्पंचाशदंगुलकृतिहितप्रतरं तु ज्योतिष्कमानम् ।

तस्य च संख्येयतमं तिर्यक्संज्ञिनां परिमाणं ॥५४१॥

टीका — पूर्वे जो तेजोलेश्यावालों का प्रमाण ज्योतिषी देवराशि तै साधिक कह्या, अर पद्मलेश्या का प्रमाण संज्ञी तिर्यंचनि के संख्यातवे भागमात्र कह्या, सो दोय से छप्पन का वर्ग पण्ढी, तीहि प्रमाण प्रतरागुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितने ज्योतिषी जानने । बहुरि इनिके संख्यातवे भाग प्रमाण सैनी तिर्यंचनि का प्रमाण जानना ।

**तेउदु असंखकप्पा, पल्लासंखेज्जभागया सुक्का ।**

**ओहि असंखेज्जदिमा, तेउतिया भावदो होंति ॥५४२॥**

तेजोद्वया असंख्यकल्पाः पल्यासंख्येयभागकाः शुक्लाः ।

अवध्यसंख्येयाः तेजस्त्रिका भावतो भवन्ति ॥५४२॥

कृष्ण लेश्यावाले पर्याप्त त्रस जीवनि का जो प्रमाण, पर्याप्त त्रस राशि के किञ्चिद्गुण त्रिभाग मात्र है । ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषे है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थान विषे जीव जातने । अवशेष एक भाग रह्या, सो अवशेष यथायोग्य स्थान विषे जानना । अब इहा त्रस पर्याप्त जीवनि की जघन्य, मध्यम अवगाहना अनेक प्रकार है; सो हीनाधिक बरोबर करि संख्यात घनांगुल प्रमाण मध्यम अवगाहना मात्र एक जीव की अवगाहना का ग्रहण कीया, सो इस अवगाहना का प्रमाण कौ फलराशि करिए, पूर्वे जो विहारवत्स्वस्थान जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ इच्छाराशि करिए, एक जीव कौ प्रमाणराशि करिए । तहां फलकरि इच्छा कौ गुणि, प्रमाण का भाग दीए, जो संख्यात सूच्यंगुलकरि गुण्या हूवा, जगत्प्रतर प्रमाण भया, सो विहारवत् स्वस्थान विषे क्षेत्र जानना । बहुरि वैक्रियिक समुद्धात विषे क्षेत्र घनांगुल का वर्ग करि असंख्यात जगच्छ्रेणी कौ गुणे, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । कैसे ? सो कहिए है -

कृष्ण लेश्यावाले वैक्रियिक शक्ति करि युक्त जीवनि का जो प्रमाण वैक्रियिक योगी जीवनि का किञ्चिद्गुण त्रिभाग मात्र है । ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण स्वस्थानस्वस्थान विषे जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिये, तहां बहुभाग प्रमाण विहारवत् स्वस्थान विषे जीव हैं । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण वेदना समुद्धात विषे जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण कृषाय समुद्धात विषे जीव है । अवशेष एक भाग प्रमाण वैक्रियिक समुद्धात विषे जीव प्रवर्तै है । जैसे जो वैक्रियिक समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ हीनाधिक बरोबर करि एक जीव संबंधी वैक्रियिक समुद्धात का क्षेत्र संख्यात घनांगुल प्रमाण है; तिसकरि गुणे, जो घनांगुल का वर्ग करि गुण्या हूवा असंख्यात श्रेणीमात्र प्रमाण भया, सो वैक्रियिक समुद्धात का क्षेत्र जानना । बहुरि इन ही का सामान्यलोक, अधोलोक, ऊर्ध्वलोक, तिर्यक्लोक, मनुष्यलोक इनि पंच लोकनि की अपेक्षा व्याख्यान कीजिए है -

समस्त जो लोक, सो सामान्यलोक है । मध्यलोक तै नीचै, सो अधोलोक है । मध्यलोक के ऊपरि ऊर्ध्वलोक है । मध्यलोक विषे एक राजू चौड़ा, लाख योजन ऊंचा तिर्यक्लोक है । पैतालीस लाख योजन चौड़ा, लाख योजन ऊंचा मनुष्यलोक है ।

प्रश्न-तहां कृष्ण लेश्यावाले स्वस्थानस्त्रस्थान, वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, मारणांतिकसमुद्घात, उपपाद इनि विषे प्रवर्तते जीव कितने क्षेत्रविषे तिष्ठै है ?

तहां उत्तर - जो सामान्यादिक पांच प्रकार सर्वलोक विषे तिष्ठै है । बहुरि विहारवत् स्वस्थान विषे प्रवर्तते जीव, सामान्यलोक - अधोलोक - ऊर्ध्वलोक का तौ असंख्यातवां भाग प्रमाण क्षेत्र विषे तिष्ठै हैं । अर तिर्यक्लोक ऊंचा लाख योजन प्रमाण है । अर एक जीव की उंचाई, वाके संख्यातवे भाग प्रमाण है । तातें तिर्यक् लोक के संख्यातवें भाग प्रमाण क्षेत्र विषे तिष्ठै हैं । अर मानुषोत्तर पर्वत के मध्यवर्ती जो मनुष्य लोक तातें असंख्यात गुणा क्षेत्र विषे तिष्ठै हैं । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषे प्रवर्तते जीव, सामान्यादिक च्यारि लोक, तिनके असंख्यातवां भाग प्रमाण क्षेत्र विषे तिष्ठै है । अर मनुष्य लोक तें असंख्यात गुणा क्षेत्र विषे तिष्ठै है; जातें वैक्रियिक समुद्घातवालों का क्षेत्र असंख्यात गुणा घनांगुल का वर्ग करि गुणित जगच्छे-णीमात्र हैं । अैसे सात स्थाननि विषे व्याख्यान कीया ।

बहुरि तैजस समुद्घात, आहारक समुद्घात, क्लेवली समुद्घात इन लेश्यावाल जीवनि कें होता नाहीं, तातें, इनिका कथन न कीया ।

इसप्रकार जैसे कृष्णलेश्या का व्याख्यान कीया; तैसे ही नीललेश्या, कपोतलेश्या का व्याख्यान जानना । विशेष इतनां जहां कृष्णलेश्या का नाम कह्या है; तहां नीललेश्या वा कपोतलेश्या का नाम लेना । अब तेजो लेश्या का क्षेत्र कहिए है-

तहां प्रथम ही जीवनि का प्रमाण कहिए है - तेजोलेश्यावाले जीवनि का संख्या अधिकार विषे जो प्रमाण कह्या, ताको संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग स्वस्थानस्वस्थान विषे जानना । एक भाग रह्या, ताको संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग विहारवत् स्वस्थान विषे जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताको संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग वेदना समुद्घात विषे जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताको संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग वेदना समुद्घात विषे जानना । बहुरि जो एक भाग रह्या, ताको संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग कषाय समुद्घात विषे जानना । बहुरि एक भाग वैक्रियिक समुद्घात विषे जानना । अैसे जीवनि का परिमाण कह्या । अब तेजो लेश्या मुख्यपनें भवनत्रिक आदि देवनि कें पाइए है; तिनविषे एक देव का शरीर का अवगाहना का प्रमाण मुख्यता

करि सात धनुष ऊचा अर सात धनुष के दशवे भाग मुख की चौड़ाई है, प्रमाण जाका असा है, सो याका क्षेत्रफल कीजिए है ।

वासोत्ति गुणो परिही, वास चउत्थाहदो दु खेत्तफलं ।

खेत्तफलं वेहिगुणं, खादफलं होदि सव्वत्थ ॥

इस करणसूत्र करि क्षेत्रफल करना । गोल क्षेत्र विषे चौड़ाई के प्रमाण तै तिगुणा तौ परिधि होइ । इस परिधि कौ चौड़ाई का चौथा भाग तै गुणै, क्षेत्रफल होइ । इस क्षेत्रफल कौ ऊँचाई रूप जो वेध, ताके प्रमाण करि गुणै, घनरूप क्षेत्रफल हो है । सो इहा सात धनुष का दशवा भागमात्र चौड़ाई, ताकौ तिगुणी कीए, परिधि होइ । याकौ चौड़ाई का चौथा भाग करि गुणै, क्षेत्रफल हो है । याकौ वेध सात धनुष करि गुणै, घनरूप क्षेत्रफल हो है । बहुरि जो घनराशि होइ, ताके गुणकार भागहार घनरूप ही होइ । तातै इहा अंगुल करने के निमित्त एक धनुष का छिनवै अगुल होइ, सो जो धनुषरूप क्षेत्रफल भया, ताकौ छिनवे का घन करि गुणिए । बहुरि इहां तो कथन प्रमाणांगुल तै है । अर देवनि के शरीर का प्रमाण उत्सेधागुल तै है । तातै पाच सै का घन का भाग दीजिए, असै करते प्रमाणरूप घनागुल के संख्यातवे भाग प्रमाण एक देव का शरीर की अवगाहना भई । इसकरि पूर्वे जो स्वस्थानस्वस्थान विषे जीवनि का प्रमाण कह्या था, ताकौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना क्षेत्र स्वस्थानस्वस्थान विषे जानना ।

बहुरि वेदनासमुद्घात विषे वा कषायसमुद्घात विषे प्रदेश मूल शरीर तै बाह्य निकसै, सो एक प्रदेश क्षेत्रकौ रोकै वा दोय प्रदेश मात्र क्षेत्र कौ रोकै, असै एक-एक प्रदेश बधता जो उत्कृष्ट क्षेत्र रोकै, तो मूल शरीर तै चौड़ाई विषे तिगुणा क्षेत्र रोकै अर उचाई मूल शरीर प्रमाण ही है । सो याका घनरूप क्षेत्रफल कीएं, मूल शरीर के क्षेत्रफल तै नव गुणा क्षेत्र भया, सो जघन्य एक प्रदेश अर उत्कृष्ट मूल शरीर तै नव गुणा क्षेत्र भया; सो हीनाधिक कौ बरोबरि कीए एक जीव के मूल शरीर तै साढा चारि गुणा क्षेत्र भया; सो शरीर का प्रमाण पूर्वे घनागुल के संख्यातवे भाग प्रमाण कह्या था, ताकौ साढा चारि गुणा कीजिए, तब एक जीव संबंधी क्षेत्र भया । इसकरि वेदना समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणिए, तब वेदना समुद्घात विषे क्षेत्र होइ । बहुरि कषायसमुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणिए तब कषाय समुद्घात विषे क्षेत्र होइ । बहुरि विहार करते देवनि के मूल शरीर तै

बाह्य आत्मा के प्रदेश फैलें, ते प्रदेश एक जीव की अपेक्षा संख्यात योजन प्रमाण तौ लंबा, अर सूर्यगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण चौड़ा वा ऊंचा क्षेत्र कौ रोकें, सो इसका क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि जो पूर्वे विहारवत्स्वस्थान विषे जीवनि का प्रमाण कह्या था, ताकों गुणिए, तब सर्व जीव संबंधी विहारवत् स्वस्थान विषे क्षेत्र का परिमाण होइ । इहां अइसा अर्थ जानना-जो देवनि के मूल शरीर तौ अन्य क्षेत्र विषे तिष्ठै है अर विहार करि विक्रियारूप शरीर अन्य क्षेत्र विषे तिष्ठै है । तहा दोऊनिके बीच आत्मा के प्रदेश सूर्यगुल का संख्यातवां भाग मात्र प्रदेश ऊंचे, चौड़े, फैलै है । अर इहां मुख्यता की अपेक्षा संख्यात योजन लंबे कहे है । बहुरि देव अपनी - अपनी इच्छा तै हस्ती, घोटक इत्यादिक रूप विक्रिया करे, ताकी अवगाहना एक जीव की अपेक्षा संख्यात घनांगुल प्रमाण है । इसकरि पूर्वे जो वैक्रियिक समुद्घात विषे जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकों गुणिए, तब सर्व जीव संबंधी वैक्रियिक समुद्घात विषे क्षेत्र का परिमाण होइ ।

बहुरि पीतलेश्यावालेनि विषे व्यंतरदेव घने मरै है, तातै इहा व्यतरनि की मुख्यता करि मारणातिक समुद्घात कहिए है । जितना व्यंतर देवनि का प्रमाण है, ताकौ व्यतरनि की मुख्यपने दश हजार वर्ष आदि संख्यात वर्ष प्रमाण स्थिति के जेते समय होइ, तिनिका भाग दीएं, जेता प्रमाण आवै, तितना जीव एक समय विषे मरण कौ प्राप्त हो है । बहुरि इनि मरनेवाले जीवनि के पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिये, तहा एक भाग प्रमाण जीवनि के ऋजु गति कहिये, समरूप सूधी गति हो है । बहुरि बहुभाग प्रमाण जीवनि के विग्रह गति कहिये, वक्रता लीए परलोक कौ गति हो है । बहुरि विग्रहगति जीवनि के प्रमाण कौ पल्य के असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण जीवनि के मारणातिक समुद्घात न हो है ।

बहुरि बहुभाग प्रमाण जीवनि के मारणातिक समुद्घात हो है । बहुरि इस मारणातिक समुद्घातवाले जीवनि के प्रमाण कौ पल्य का असंख्यातवा भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण समीप थोरेसे क्षेत्रवर्ती मारणातिक समुद्घातवाले जीव ह । एक भाग प्रमाण दूर बहुत क्षेत्रवर्ती मारणातिक समुद्घातवाले जीव ह । सो एक समय विषे दूर मारणातिक समुद्घात करनेवाले जीवनि का यह प्रमाण कह्या, अर मारणातिक समुद्घात का काल अंतर्मुहूर्तमात्र है । तातै अंतर्मुहूर्त के जेते समय होहि, तिनकरि तिस प्रमाण कौ गुणे, जो प्रमाण होइ, तितने एकठे भए, दूर मारणातिक समुद्घातवाले जीव जानने । तहां एक जीव के दूर मारणातिक समुद्घात विषे

शरीर तैं बाह्य प्रदेश फैलै ते मुख्यपनैं एक राजू के संख्यातवे भाग प्रमाण लंबे अर सूच्यंगुल के संख्यातवे भाग प्रमाण चौड़े वा ऊंचे क्षेत्र कौ रोकै । याका घनरूप क्षेत्र-फल कीजिए, तब प्रतरांगुल का संख्यातवां भाग करि जगच्छ्रेणी का संख्यातवा भाग कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना क्षेत्र भया । इसकरि दूरि मारणांतिक जीवनि का प्रमाण कौ गुणिये, तब सर्व जीव संबंधी दूर मारणांतिक समुद्घात का क्षेत्र हो है । अन्य मारणांतिक समुद्घात का क्षेत्र स्तोक है, तातैं मुख्य ग्रहण तिस ही का कीया । बहुरि तैजस समुद्घात विषै शरीर तैं बाह्यप्रदेश निकसै, ते बारा योजन लंबा, नव योजन चौड़ा, सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण ऊंचा क्षेत्र कौ रोकै, सो याका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि तैजस समुद्घात करनेवालों का प्रमाण संख्यात है । तिसकौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना तैजस समुद्घात विषै क्षेत्र जानना । बहुरि आहारक समुद्घात विषै एक जाव के शरीर तैं बाह्य निकसे प्रदेश, ते संख्यात योजन प्रमाण लंबा, अर सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण चौड़ा ऊंचा क्षेत्र कौ रोकै, याका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनांगुल प्रमाण भया । इसकरि आहारक समुद्घातवाले जीवनि का संख्यात प्रमाण है; ताकौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना आहारक समुद्घात विषै क्षेत्र जानना । मूल शरीर तैं निकसि आहारक शरीर जहां जाइ, तहा पर्यंत लंबी आत्मा के प्रदेशनि की श्रेणी सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण चौड़ी अर ऊंची आकाश विषै हो है; अैसा भावार्थ जानना । अैसे ही मारणांतिक समुद्घातादिक विषै भी भावार्थ जानि लेना ।

**मरदि असंखेज्जविमं, तस्सासंखा य विग्गहे होति ।**

**तस्सासंखं दूरे, उववादे तस्स खु असंखं ॥५४४॥**

**म्रियते असंख्येयं, तस्यासंख्याश्च विग्रहे भवन्ति ।**

**तस्यासंख्यं दूरे, उपपादे तस्य खलु असंख्यम् ॥५४४॥**

टीका - इस सूत्र का अभिप्राय उपपाद क्षेत्र ल्यावने का है, सो पीत लेश्या-वाले सौधर्म - ईशानवर्ती जीव मध्यलोक तैं दूर क्षेत्रवर्ती है; सो तिनके कथन में क्षेत्र का परिमाण बहुत आवै । बहुत प्रमाण में स्तोक प्रमाण गर्भित करिए है । तातैं तिनकी मुख्यता करि उपपाद क्षेत्र का कथन कीजिए है ।

सौधर्म - ईशान स्वर्ग के वासी देव घनांगुल का तृतीय वर्गमूल करि जग-च्छ्रेणी कौ गुणिए, तितने प्रमाण है । इस प्रमाण कौ पल्य का असंख्यातवा भाग



का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण एक एक समय विषे मरणेवाले जीवनि का प्रमाण हो है । इस प्रमाण कौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण विग्रहगति करनेवालों का प्रमाण हो है । याकौ पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण मारणांतिक समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण हो है । याकौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण दूर मारणांतिक समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण हो है । याकौ द्वितीय दीर्घ दंड विषे स्थित मारणांतिक समुद्धात, ताके पूर्वे भया असा उपपादता करि युक्त जीवनि के प्रमाण ल्यावने कौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण उपपाद जीवनि का प्रमाण है । तहां तिर्यंच उपजने की मुख्यता करि एक जीव संबंधी प्रदेश फैलने की अपेक्षा डेढ राजू लंबा, संख्यात सूच्यंगुल प्रमाण चौड़ा वा ऊंचा क्षेत्र है । याका घन क्षेत्रफल संख्यात प्रतरांगुल करि डेढ राजू कौ गुणै, जो प्रमाण भया, तितना जानना । इसकरि उपपाद जीवनि के प्रमाण कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना उपपाद विषे क्षेत्र जानना । बहुरि केवल समुद्धात इस लेश्या विषे है नाहीं; तातै कथन न कीया । अैसे पीत लेश्या विषे क्षेत्र है । आगे पद्मलेश्या विषे क्षेत्र कहिए है -

संख्याधिकार विषे पद्मलेश्या वाले जीवनि का जो प्रमाण कह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिये, तहां बहुभाग स्वस्थान स्वस्थान विषे जानना । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग विहारवत् स्वस्थान विषे जानना । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग वेदना समुद्धात विषे जानना । अवशेष एक भाग रह्या, सो कषाय समुद्धात विषे जानना । अैसे जीवनि का प्रमाण कह्या । अब यहां पद्मलेश्यावाले तिर्यंच जीवनि का अवगाहना प्रमाण बहुत है; तातै तिनकी मुख्यता करि कथन कीजिए है ।

तहां स्वस्थानस्वस्थान विषे अर विहारवत्स्वस्थान विषे एक तिर्यंच जीव की अवगाहना मुख्यपने कोस लंबी अर ताके नव से भाग मुख का विस्तार, सो याका क्षेत्रफल वासो त्ति गुणो परिही' इत्यादि सूत्र करि करिए, तब संख्यात घनांगुल प्रमाण होइ । इसकरि स्वस्थान स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणै, स्वस्थान स्वस्थान विषे क्षेत्र होइ । अर विहारवत्स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणै, विहारवत्स्वस्थान विषे क्षेत्र हो है । बहुरि पूर्वोक्त तिर्यंच शरीर की अवगाहना तै पूर्वोक्त प्रकार साढा च्यास्ति गुणा वेदना अर कषाय समुद्धात विषे एक जीव की अपेक्षा क्षेत्र है । इसकरि

पूर्वोक्त वेदना समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणिए, तब वेदना समुद्घात विषे क्षेत्र होइ, कषाय समुद्घातवाले जीवनि के प्रमाण कौ गुणै, कषाय समुद्घात विषे क्षेत्र का परिमाण होइ । बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषे पद्मलेश्यावाले जीव सनत्कुमार - माहेन्द्र विषे बहुत हैं । तातै तिनकी अपेक्षा कथन करै है -

सनत्कुमार - माहेन्द्रविषे देव जगच्छ्रेणी का ग्यारहवां वर्गमूल भाग जगच्छ्रेणी कौ दीएं, जो प्रमाण होइ, तितने हैं । इस राशि कौ संख्यात का भाग दीजिए, तब बहुभाग स्वस्थानस्वस्थान विषे जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विहारवत् स्वस्थान विषे जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण वेदना समुद्घात विषे जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्घात विषे जीव जानने । अवशेष एक भाग रह्या, तीहि प्रमाण वैक्रियिक समुद्घात विषे जीव जानने । इस वैक्रियिक समुद्घातवाले जीवनि का प्रमाण कौ एक जीव संबंधी विक्रियारूप हस्तिघोटकादिकनि की संख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहना, तिसकरि गुणै, जो प्रमाण होइ, सोई वैक्रियिक समुद्घात विषे क्षेत्र जानना । बहुरि मारणांतिक समुद्घात वा उपपाद विषे भी क्षेत्र सनत्कुमार - माहेन्द्र अपेक्षा बहुत है । तातै सनत्कुमार-माहेन्द्र की अपेक्षा कथन कीजिए है —

मरदि असंखेज्जदिमं, तस्सासंखा य विग्गहे होति ।

तस्सासंखं दूरे, उववादे तस्स खु असंखं ॥

जो सनत्कुमार माहेन्द्रवासी जीवनि का प्रमाण कह्या, ताकौ असंख्य कहिए पल्य का असंख्यातवां भाग, ताका भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण समय समय जीव मरण कौ प्राप्त हो है । बहुरि इस राशि कौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहा बहुभाग प्रमाण विग्रह गतिवालो का प्रमाण है । बहुरि इस राशि कौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण मारणांतिक समुद्घातवाले जीव है । बहुरि इसकौ पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहा एक भाग प्रमाण दूर मारणांतिक समुद्घात वाले जीव है । बहुरि इसकौ पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण उपपाद का दंड विषे स्थित जीव हैं । तहां एक जीव अपेक्षा मारणांतिक समुद्घात विषे क्षेत्र तीन राजू लंबा सूच्यंगुल का संख्यातवां भागमात्र चौडा वा ऊंचा क्षेत्र है । इन सनत्कुमार माहे

द्रवासी देवनि करि कीया मारणांतिक दंड का घनरूप क्षेत्रफल प्रतरांगुल का सख्या-  
तवां भाग करि तीन राजू कौ गुणै जो प्रमाण होइ, तितना है । इसकरि दूर मार-  
णांतिक समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण कह्या था, ताकौ गुणिए, तब मारणांतिक  
समुद्धात विषै क्षेत्र का प्रमाण होइ, बहुरि उपपाद विषै तिर्यंच जीवनि करि कीया  
सनत्कुमार माहेंद्र प्रति उपपाद रूप दंड, सो तीन राजू लंबा, संख्यात सूच्यगुल प्रमाण  
चौडा वा ऊंचा है । ताका क्षेत्र फल संख्यात प्रतरांगुल करि गुण्या हूवा तीन राजू  
प्रमाण एक जीव अपेक्षा क्षेत्र हो है । इसकरि उपपाद वालो के प्रमाण कौ गुणै,  
उपपाद विषै क्षेत्र का प्रमाण हो है । बहुरि तैजस अरु आहारक समुद्धात विषै क्षेत्र  
जैसे तेजोलेश्या के कथन विषै कह्या है, तैसे इहां भी सख्यात घनागुल करि संख्यात  
जीवनि कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । बहुरि केवल समुद्धात इस  
लेश्या विषै होता ही नाहीं; जैसे पद्मलेश्या का क्षेत्र कह्या । आगे शुक्ललेश्या विषै  
क्षेत्र कहिए है ।

संख्या अधिकार विषै जो शुक्ललेश्यावालों का प्रमाण कह्या, ताकौ पल्य का  
असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण स्वस्थान स्वस्थान विषै  
जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए  
तहां बहुभाग प्रमाण विहारवत्स्वस्थान विषै जीव हैं । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ  
पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण वेदनासमुद्धात  
विषै जीव है । अवशेष एक भाग रह्या, ताकौ पल्य का असंख्यातवा भाग का भाग  
दीजिए, तहां बहुभाग प्रमाण कषाय समुद्धात विषै जीव है । अवशेष एक भाग  
रह्या, तिस प्रमाण वैक्रियिक समुद्धात विषै जीव है । तहां शुक्ललेश्यावाले देवनि की  
मुख्यता करि एक जीव का शरीर की अवगाहना तीन हाथ ऊंची इसके दशवे भाग  
मुख की चौडाई याका वासो त्ति गुणो परिही इत्यादि सूत्र करि क्षेत्रफल कीजिए,  
तब संख्यात घनागुल प्रमाण होइ, इसकरि स्वस्थान स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण  
कौ गुणिए, तब स्वस्थान स्वस्थान विषै क्षेत्र का परिमाण होइ । बहुरि मूल शरीर की  
अवगाहना तै साढा च्यारि गुणा एक जीव के वेदना अरु कषाय समुद्धात विषै क्षेत्र  
है । इस साढा च्यारि गुणा घनागुल का संख्यातवा भाग करि वेदना समुद्धातवाले  
जीवनि का प्रमाण कौ गुणिये, तब वेदना समुद्धात विषै क्षेत्र हो है । अरु कषाय  
समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणै कषायसमुद्धात विषै क्षेत्र हो है । बहुरि  
एक देव के विहार करतै अपने मूल शरीर तै बाह्य निकसि उत्तर विक्रिया करि

निपजाया शरीर पर्यंत आत्मा के प्रदेश संख्यात योजन लंबा अर सूच्यगुल के संख्यातवे भाग चौड़ा वा ऊंचा क्षेत्र कौ रोकें, याका घनरूप क्षेत्रफल संख्यात घनागुल प्रमाण भया । इसकरि पूर्वोक्त विहारवत्स्वस्थानवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणें, विहार-वत्स्वस्थान विषे क्षेत्र हो है । बहुरि अपने अपने योग्य विक्रियारूप बनाया गजादिक शरीरनि की अवगाहना संख्या घनांगुल प्रमाण, तिसकरि वैक्रियिक समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण कौ गुणों, वैक्रियिक समुद्धात विषे क्षेत्र हो है । बहुरि शुक्ललेश्या आनतादिक देवलोकनि विषे पाइए, सो तहां तें मुख्यपने आरण - अच्युत अपेक्षा मध्यलोक छह राजू है । तातें मारणांतिक समुद्धात विषे एक जीव के प्रदेश छह राजू लंबे अर सूच्यगुल के संख्यातवे भाग चौड़े, ऊंचे होइ, सो याका जो क्षेत्रफल एक जीव संबंधी भया, ताकौ संख्यात करि गुणिए, जातें आनतादिक तें मरि करि मनुष्य ही होइ । तातें मारणांतिक समुद्धातवाले संख्यातवें ही जीव हैं, तातें संख्यात करि गुणिए, असै गुणों, जो होइ, सो मारणांतिक समुद्धात विषे क्षेत्र जानना ।

बहुरि तैजस आहारक समुद्धात विषे जैसे पद्मलेश्या विषे क्षेत्र कहा था, तैसे इहां भी जानना । अब केवलसमुद्धात विषे क्षेत्र कहिए है ।

केवल समुद्धात च्यारि प्रकार दंड, कपाट, प्रतर, लोक पूरण । तहां दंड दोय प्रकार - एक स्थिति दंड, एक उपविष्ट दंड । बहुरि कपाट च्यारि प्रकार पूर्वाभिमुख स्थित कपाट, उत्तराभिमुखस्थित कपाट, पूर्वाभिमुख उपविष्ट कपाट, उत्तराभिमुख उपविष्ट कपाट । बहुरि प्रतर अर लोक पूरण एक एक ही प्रकार है । तहां स्थिति - दंड समुद्धात विषे एक जीव के प्रदेश वातवलय बिना लोक की ऊंचाई, किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण है । सो इस प्रमाण तें लंबे, बहुरि बारह अंगुल प्रमाण चौड़े, गोल आकार प्रदेश हो है । सो - 'वासो त्ति गुणो परिही' इत्यादि सूत्र करि याका क्षेत्रफल दोय सै सोला प्रतरांगुलनि करि जगच्छ्रेणी कौ गुणें, जो प्रमाण होइ, तितना हो है; जातें बारह अंगुल गोल क्षेत्र का क्षेत्रफल एक सौ आठ प्रतरांगुल होइ, ताकौ ऊंचाई दोय श्रेणी करि गुणन करे इतना ही हो है । बहुरि एक समय विषे इस समुद्धातवाले जीव चालीस होइ, तातें तिसकौ चालीस करि गुणिए, तब आठ हजार छ सै चालीस प्रतरांगुलनि करि जगच्छ्रेणी कौ गुणें, जो प्रमाण होइ, तितना स्थिति दंड विषे क्षेत्र हो है । बहुरि इस स्थिति दंड के क्षेत्र कौ नव गुणा कीजिए, तब उपविष्ट दंड विषे क्षेत्र हो है, जातें स्थितिदंड विषे बारह अंगुल प्रमाण चौड़ाई कही, इहां तिसतें ति गुणी छत्तीस अंगुल चौड़ाई है; सो क्षेत्रफल विषे नव

गुणा क्षेत्र भया, ताते नव गुणा कीया । असै करतै सतहत्तर हजार सात सै साठि प्रतरागुलनि करि जगच्छ्रेणी कौ गुणै, जो प्रमाण भया, तितना उपविष्ट दड विषै क्षेत्र जानना ।

बहुरि पूर्वाभिमुख स्थित कपाट समुद्धात विषै एक जीव के प्रदेश वातवलय विना लोक प्रमाण तो लंबे हो है; सो किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण तो लंबे हो है बहुरि उत्तर दक्षिण दिशा विषै लोक की चौडाई प्रमाण चौडे हो है । सो उत्तर-दक्षिण दिशा विषै लोक सर्वत्र सात राजू चौडा है । ताते सात राजू प्रमाण चौडे हो हैं । बहुरि बारह अंगुल प्रमाण पूर्व पश्चिम विषै ऊंचे हो है; सो याका क्षेत्रफल भुज कोटि वेध का परस्पर गुणन करि चौईस अंगुल गुणा जगत्प्रतर प्रमाण भया; ताकौ एक समय विषै इस समुद्धातवाले जीवनि का प्रमाण चालीस है । ताते चालीस करि गुणिए, तब नव सै साठि सूच्यंगुलनि करि जगत्प्रतर कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वाभिमुख स्थित कपाट विषै क्षेत्र हो है । बहुरि स्थित कपाट विषै बारह अंगुल की ऊंचाई कही, उपविष्ट कपाट विषै ति गुणा छत्तीस अंगुल की ऊंचाई हो है । ताते पूर्वाभिमुख स्थित कपाट के क्षेत्र तै ति गुणा अठाइस सै असी सूच्यगुलनि करि जगत्प्रतर कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितना पूर्वाभिमुख उपविष्ट कपाट विषै क्षेत्र जानना ।

बहुरि उत्तराभिमुख स्थित कपाट विषै एक जीव के प्रदेश वातवलय विना लोक प्रमाण लंबे हो हैं; सो किंचित् ऊन चौदह राजू प्रमाण तो लंबे हो है । बहुरि पूर्व पश्चिम दिशा विषै लोक की चौडाई के प्रमाण चौडे हो है । सो लोक अधोलोक के तो नीचे सात राजू चौडा है । अर अनुक्रम तै घटता घटता मध्य लोक विषै एक राजू चौडा है । याका क्षेत्रफल निमित्त सूत्र कहिए है — मुहभूमी जोग दले पद गुणिदे पदधनं होदि । मुख कहिए अत, अर भूमि कहिए आदि, इनिका जोग कहिए जोड, तिसका दल कहिये आधा, तिसका पद कहिए गच्छ का प्रमाण तिसकौ गुणै पदधन कहिये, सर्व गच्छ का जोड्या हूआ प्रमाण; सो हो है । सो इहा मुख तो एक राजू अर भूमि सात राजू जोडिए, तब आठ भये, इनिका आधा च्यारि भया, इसका अधो लोक की ऊंचाई सात राजू, सो गच्छ का प्रमाण सात राजूनि करि गुणै, जो अठाईस राजू प्रमाण भया, तितना अधो लोक संबधी प्रतररूप क्षेत्रफल जानना ।

बहुरि मध्य विषै लोक एक राजू चौडा, सो बधता बधता ब्रह्मस्वर्ग के निकट पाच राजू भया । सो इहां मुख एक राजू, भूमि पांच राजू मिलाए छह हूवा, ताका आधा तीन, बहुरि ब्रह्मस्वर्ग साढा तीन राजू ऊंचा, सो गच्छ का प्रमाण साढा तीन करि गुणिये, तब आधा ऊर्ध्व लोक का क्षेत्रफल साढा दश राजू हुआ । बहुरि ब्रह्मस्वर्ग के निकट पांच राजू सो घटता घटता ऊपरि एक राजू का रह्या, सो इहां भी मुख एक राजू, भूमि पाच राजू, मिलाए छह हुआ, आधा तीन, सो ब्रह्मस्वर्ग के ऊपरि लोक साढा तीन राजू है, सो गच्छ भया, ताकरि गुणै, आधा उर्ध्व लोक का क्षेत्रफल साढा दश राजू हो है । अैसे उर्ध्वलोक अर अधोलोक का सर्व क्षेत्रफल जोडै, जगत्प्रतर भया, सो अैसे लंबाई चौडाई करि तो जगत्प्रतर प्रमाण प्रदेश हो है । बहुरि बारह अंगुल प्रमाण उत्तर - दक्षिण दिशा विषै ऊंचे हो है, सो जगत्प्रतर कौ बारह सूच्यंगुलनि करि गुणै, एक जीव संबंधी क्षेत्र बारह अंगुल गुणा जगत्प्रतर प्रमाण हो हैं । बहुरि इस समुद्धातवाले जीव चालीस हो है । तातै चालीस करि तिस क्षेत्र कौ गुणै, च्यारि सै अस्सी सूच्यंगुलनि करि गुण्या हुआ जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख स्थित कपाट विषै क्षेत्र हो है । बहुरि स्थिति विषै बारह अंगुल की ऊंचाई कही । उपविष्ट विषै तातैं तिगुणी छत्तीस अंगुल की ऊंचाई है । तातैं पूर्वोक्त प्रमाण तै तिगुणा चौदा सै चालीस सूच्यंगुलनि करि गुण्या हुआ जगत्प्रतर प्रमाण उत्तराभिमुख उपविष्ट कपाट विषै क्षेत्र जानना । बहुरि प्रतर समुद्धातविषै तीन वातवलय बिना सर्व लोक विषै प्रदेश व्याप्त हो है । तातैं तीन वातवलय का क्षेत्रफल लोक के असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सो यह प्रमाण लोक का प्रमाण विषै घटाए, अवशेष रहे, तितना एक जीव संबंधी प्रतर समुद्धात विषै क्षेत्र जानना ।

बहुरि लोक पूरण विषै सर्व लोकाकाश विषै प्रदेश व्याप्त हो है । तातैं लोक प्रमाण एक जीव संबंधी लोक पूरण विषै क्षेत्र जानना । सो प्रतर अर लोक पूरण के बीस जीव तौ करनेवाले अर बीस जीव समेटनेवाले अैसे एक समय विषै चालीस पाइए । परन्तु पूर्वोक्त क्षेत्र ही विषै एक क्षेत्रावगाहरूप सर्व पाइए; तातैं क्षेत्र तितना ही जानना । बहुरि दंड अर कपाट विषै भी बीस जीव करनेवाले बीस समेटनेवालेनि की अपेक्षा चालीस जीव है; सो ए जीव जुदे जुदे क्षेत्र कौ भी रोकै; तातैं दण्ड अर कपाट विषै चालीस का गुणकार कह्या । यह जीवनि का प्रमाण उत्कृष्टता की अपेक्षा है ।

शुक्लस्य समुद्घाते, असंख्यभागा य सर्वलोगो य ।

शुक्लायाः समुद्घाते, असंख्यभागाश्च सर्वलोकश्च ।

टीका — इस आधा सूत्र करि शुक्ल लेश्या का क्षेत्र लोक के असंख्यात भागनि विषे एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाण वा सर्वलोक प्रमाण कहा है, सो केवल समुद्घात अपेक्षा जानना । बहुरि उपपाद विषे मुख्यपने अच्युत स्वर्ग अपेक्षा एक जीव के प्रदेश छह राजू लबे अर संख्यात सूच्यगुल प्रमाण चौडे वा ऊंचे प्रदेश हो हैं । सो इस क्षेत्रफल कौ अच्युत स्वर्ग विषे एक समय विषे संख्यात ही मरे, ताते तहां संख्यात ही उपजे, ताते संख्यात करि गुणै, जो प्रमाण भया, तितना उपपाद विषे क्षेत्र जानना । इहां भी पूर्वोक्त प्रकार पांच प्रकार लोक की अपेक्षा जैसा भाग-हार गुणकार सभवै तैसे जानि लेना; अैसे शुक्ललेश्या विषे क्षेत्र कहा । इहा छह लेश्यानि का क्षेत्र का वर्णन दश स्थान विषे कीया; तहा अैसा जानना । जो जिस अपेक्षा क्षेत्र का प्रमाण बहुत आवै, तिस अपेक्षा मुख्यपने क्षेत्र वर्णन कीया है । तहा संभवता अन्य स्तोक क्षेत्र अधिक जानि लेना, अैसे ही आगे स्पर्शन विषे भी अर्थ सम-झना । इति क्षेत्राधिकार ।

आगे स्पर्शनाधिकार साढा छह गाथानि करि कहै हैं—

फासं सव्वं लोयं, तिट्ठारणे असुहलेस्साणं ॥५४५॥

स्पर्शः सर्वो लोकस्त्रिस्थाने अशुभलेश्यानाम् ॥५४५॥

टीका — क्षेत्र विषे तौ वर्तमानकाल विषे जेता क्षेत्र रोकै, तिस ही का ग्रहण कीया । बहुरि इहा वर्तमान काल विषे जेता क्षेत्र रोकै, तीहि सहित जो अतीत काल विषे स्वस्थानादिक विशेषण कौ धरे जीव जेता क्षेत्र रोकि आया होइ, तिन नेत्र ही का नाम स्पर्श जानना । सो कृष्णादिक तीन अशुभ लेश्या का स्पर्श स्वस्थान विषे वा समुद्घात विषे वा उपपाद विषे सामान्यपने सर्व लोक जानना । विशेष तनि दश स्थानकनि विषे कहिए हैं । तहा कृष्णलेश्या वाले जीवनि के स्वस्थान स्वस्थान विषे वा वेदना अर कषाय अर मरणातिक समुद्घात विषे वा उपपाद विषे नव नोद प्रमाण स्पर्श जानना । बहुरि विहारवत्स्वस्थान विषे एक राजू लवा वा चौंटा अर मन्थान सूच्यगुल प्रमाण ऊंचा तिर्यग् लोक क्षेत्र हे । याका क्षेत्रफल सत्तात सूच्यगुलनि करि

गुण्या हुवा जगत्प्रतर प्रमाण भया, सोई विहारवत्स्वस्थान विषे स्पर्श जानना । जातें कृष्णलेश्यावाले गमन क्रिया युक्त त्रस जीव तिर्यग् लोक ही विषे पाइए है ।

बहुरि वैक्रियिक समुद्घात विषे मेरुगिरि के मूल तें लगाइ, सहस्रार नामा स्वर्ग पर्यंत ऊंचा त्रसनाली प्रमाण लंबा, चौडा क्षेत्र विषे पवन कायरूप पुद्गल सर्वत्र आच्छादित रूप भरि रहे हैं । बहुरि पवन कायिक जीवकि के विक्रिया पाइए है, सो अतीत काल अपेक्षा तहां सर्वत्र विक्रिया का सद्भाव है । असा कोऊ क्षेत्र तिस विषे रह्या नाहीं, जहां विक्रिया रूप न प्रवर्तै; तातें एक राजू लंबा वा चौडा अर पाच राजू ऊंचा क्षेत्र भया ताका क्षेत्रफल लोक के संख्यातवे भाग प्रमाण भया, सोई वैक्रियक समुद्घात विषे स्पर्श जानना ।

बहुरि तैजस अर आहारक अर केवल समुद्घात इस लेश्या विषे होता ही नाही । इहां भी पच प्रकार लोक का स्थापन करि, यथासंभव गुणकार भागहार जानना । बहुरि जैसे कृष्णलेश्यानि विषे कथन कीया, तैसे ही नीललेश्या कपोतलेश्या विषे भी कथन जानना ।

आगें तेजोलेश्या विषे कहै हैं—

तेजस्स य सदृष्टाणे, लोगस्स असंखभागमेत्तं तु ।  
अडचोद्दसभागा वा, देसूणा होंति णियमेण ॥५४६॥

तेजसश्च स्वस्थाने, लोकस्य असंख्यभागमात्रं तु ।  
अष्ट चतुर्दशभागा वा, देशोना भवन्ति नियमेन ॥५४६॥

टीका — तेजोलेश्या का स्वस्थान विषे स्पर्श स्वस्थान स्वस्थान अपेक्षा तौ लोक का असंख्यातवां भागमात्र जानना । बहुरि विहारवत्स्वस्थान अपेक्षा त्रसनाली के चौदह भागनि विषे आठ भाग किछू घाटि प्रमाण स्पर्श जानना ।

एवं तु समुद्घादे, एव चोद्दसभागयं च किंचूण ।  
उववादे पढमपदं, दिवड्ढचोद्दस य किंचूणं ॥५४७॥

एवं तु समुद्घाते, नवचतुर्दशभागश्च किंचिदूनः ।  
उपपादे प्रथमपदं, व्द्यर्धचतुर्दश च किंचिदूनम् ॥५४७॥



टीका — बहुरि समुद्घात विषे अैसे स्वस्थानवत् किछू घाटि त्रसनाली के चौदह भागनि विषे आठ भाग प्रमाण स्पर्श जानना वा मारणांतिक समुद्घात अपेक्षा किछू घाटि त्रसनाली के चौदह भागनि विषे नव भाग प्रमाण स्पर्श जानना । बहुरि उपपाद विषे त्रसनाली के चौदह भागनि विषे किछू घाटि डचोढ भाग प्रमाण स्पर्श जानना । अैसे सामान्यपनै तेजोलेश्या का तीनों स्थानकनि विषे स्पर्श कह्या ।

बहुरि विशेष करि दश स्थानकनि विषे स्पर्श कहिए है । तिर्यग्लोक एक राजू का लम्बा, चौडा है; तिसविषे लवणोद, कालोदक, स्वयंभूरमण इनि तीनि समुद्रनि विषे जलचर जीव पाइए है । अन्य समुद्रनि विषे जलचर जीव नाही, सो जिनि विषे जलचर जीव नाही, तिनि सर्व समुद्रनि का जेता क्षेत्रफल होइ, सो तिस तिर्यग्लोक-रूप क्षेत्र विषे घटाए, अवशेष जेता क्षेत्र रहे, तितना पीत, पद्म, शुक्ललेश्यानि का स्वस्थान स्वस्थान विषे स्पर्श जानना । जातै एकेंद्रियादिक कै शुभलेश्यानि का अभाव है । सो कहिए हैं—

जंबूद्वीप तै लगाइ स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत सर्व द्वीप - समुद्र दूणा दूणा विस्तार कौ धरै है । तहां जंबूद्वीप लाख योजन विस्तार कौ धरै है; याका सूक्ष्म तारतम्य रूप क्षेत्रफल कहिए है—

सत्त एव सुण्ण पंच य, छण्णव चउरेक पंच सुण्णं च ।

याका अर्थ — सात, नव, बिदी, पंच, छह, नव, च्यारि, एक, पाच, विदी इतने अकनि करि जो प्रमाण भया, तितना जंबूद्वीप का सूक्ष्म क्षेत्रफल है (७६०५६६४१५०) सो एतावन्मात्र एक खण्ड कल्पना कीया । बहुरि अैसे अैसे लवण समुद्र विषे खण्ड कल्पिए, तब चौईस (२४) होइ । धातकीखड विषे एक सो चवालीस (१४४) होइ । कालोद समुद्र विषे छ सै बहत्तरि (६७२) होइ । पुष्कर द्वीप विषे अठाइस सै असी (२८८०) होइ । पुष्कर समुद्र विषे ग्यारह हजार नव सै च्यारि (११६०४) होइ । वारुणी द्वीप विषे अड़तालीस हजार तीन सै चौरासी (४८३८४) होइ । वारुणी समुद्र विषे एक लाख पिचाणवे हजार बहत्तरि (१६५०७२) होइ । क्षीरवर द्वीप विषे सात लाख तियासी हजार तीन सै साठि (७८३३६०) होइ । क्षीरवर समुद्र विषे इकतीस लाख गुणतालीस हजार पाच सै चउरासी (३१३६५८४) होइ । अैसे स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत विषे सत्त नाथन करना इनि खंडनि के प्रमाण का ज्ञान होने के निमित्त सूत्र कहिए हैं—

बाहिर सूईवर्ग, अर्धभंतर सूईवर्ग परिहीण ।  
जंबूबासविहत्ते, तेत्तियमेत्ताणि खंडाणि ॥

बाह्य सूची का वर्ग विषे अर्धभंतर सूची का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण रहै, ताकौ जंबूद्वीप का व्यास के वर्ग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जंबूद्वीप समान खंड जानने । अंत तें लगाइ, वाके सन्मुख अंत पर्यंत जेता सूचा क्षेत्र होइ, ताकौ बाह्य सूची कहिए । बहुरि आदि तें लगाइ, वाके सन्मुख आदि पर्यंत जेता सूचा क्षेत्र होइ, ताकौ अर्धभंतर सूची कहिये । सो यहां लवण समुद्र विषे उदाहरण करि कहिये है—

लवण समुद्र की बाह्य सूची पांच लाख योजन, ताका वर्ग कीजिये तब लाख गुणा पचीस लाख भया । बहुरि तिस ही की अर्धभंतर सूची एक लाख योजन, ताका वर्ग लाख गुणा लाख योजन, सो घटाये अवशेष लाख गुणा चौईस लाख, ताका जंबूद्वीप का व्यास लाख योजन, ताका वर्ग लाख गुणा लाख योजन, ताका भाग दीजिए तब चौईस रहे, सो जंबूद्वीप समान चौबीस खंड लवण समुद्र विषे जानने । अैसे ही सर्व द्वीप समुद्रनि विषे साधने । इस साधन के अर्थ और भी प्रकार कहै है—

रुऊण सला बारस, सलागगुणिदे दु वलयखंडाणि ।  
बाहिरसूई सलागा, कदी तदंताखिला खंडा ॥

इहां व्यास विषे जितना लाख कहा होइ, तितने प्रमाण शलाका जानना । सो एक घाटि शलाका कौ बारह शलाका करि गुणै, जंबूद्वीप प्रमाण वलयखंड हो हैं । जैसे लवण समुद्रनि विषे व्यास दोय लाख योजन है, तातें शलाका का प्रमाण दोय, तामें एक घटाए एक, ताका बारह शलाका का प्रमाण चौईस करि गुणै, चौईस खंड हो है । बहुरि बाह्य सूची संबंधी शलाका का वर्ग प्रमाण तीहि पर्यंत खंड हो है । जैसे लवण समुद्र विषे बाह्य सूची पांच लाख योजन है । तातें शलाका का प्रमाण पांच ताका वर्ग पचीस, सोई लवण समुद्र पर्यंत सर्व खंडनि का प्रमाण हो है । जंबूद्वीप विषे एक खंड अर लवण समुद्र विषे चौबीस खंड, मिलि करि पचीस खंड हो है । बहुरि और भी विधान कहै है—

बाहिरसूईवलयच्चासूणा चउगुणिट्ठावासहदा ।  
इकलवलयवगभजिदा, जंबूसमवलयखंडाणि ॥१॥

बाह्य सूची विषे वलय का व्यास घटाएं, जो रहै, ताका चौगुणा व्यास तै गुणिये, एक लाख के वर्ग का भाग दीजिए, तब जंबूद्वीप के समान गोलाकार खडनि का प्रमाण हो है ।

उदाहरण - जैसे लवणसमुद्र की बाह्य सूची पांच लाख योजन, तिसमे व्यास दोय लाख योजन घटाइए, तब तीन लाख योजन भये, याकों चौगुणा व्यास आठ लाख योजन करि गुणिये, तब लाख गुणा चौईस लाख भये । याको एक लाख का वर्गका भाग दीजिए, तब चौईस पाये, तितने ही जंबूद्वीप समान लवण समुद्र विषे खड है, अैसे सूत्रनि तै साधन करि खंड ज्ञान करना । बहुरि इहा द्वीप सबधी खंडनि कौ छोडि, सर्व समुद्र संबंधी खडनि का ही ग्रहण कीजिये, तब जंबूद्वीप समान चौईस खंडनि का भाग समुद्रखंडनि कौ दीए, जो प्रमाण आवै; तितना सर्व समुद्रनि विषे लवण समुद्र समान खड जानने । सो लवण समुद्र के खडनि कौ चौईस भाग दीए, एक पाया, सो लवण समुद्र समान एक खड भया । कालोद समुद्र के छ सै वहत्तरि खडनि कौ चौबीस का भाग दीये, अट्ठाईस पाये, सो कालोद समुद्र विषे लवणसमुद्र समान अठाईस खड हो है । अैसे ही पुष्कर समुद्र के खडनि कौ भाग दीये च्यारि सै छिनवै खड हो है । वारुणी समुद्र के खडनि कौ भाग दीये, आठ हजार एक सै अठा-इस खड हो है । क्षीरसमुद्र के खडनि कौ भाग दीये, एक लाख तीस हजार आठ सै सोलह खड हो है । अैसे ही स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत जानना । सो जानने का उपाय कहै है-

यहु लवणसमुद्रसमान खडनि का प्रमाण ल्यावने की रचना है ।

घनराशि					ऋणराशि				समुद्र
२	१६	१६	१६	१६	१	४	४	४	क्षीरवर
२	१६	१६	१६		१	४	४	४	वारुणीवर
२	१६	१६			१	४	४		पुष्कर
२	१६				१	४			कालोद
२					१				लवणोद

दोय आदि सोलह सोलह गुणा तो धन जानना । अर एक आदि चौगुणा चौगुणा ऋण जानना । सो धन विषे ऋण घटाएं, जो प्रमाण रहे, तितने लवणसमुद्र समान खंड जानने ।

उदाहरण कहिये है - प्रथमस्थान विषे धन दोय, अर ऋण एक, सो दोय में एक घटाए एक रह्या, सो लवण समुद्र विषे एक खंड भया । बहुरि दूसरे स्थान के दोय कौ सोलह गुणा कीजिए, तब बत्तीस तो धन होइ, अर एक कौ च्यारि गुणा कीजिए, तब च्यारि ऋण भया, सो बत्तीस में च्यारि घटाएं, अठाईस रह्या, सो दूसरा कालोदक समुद्र विषे लवण समुद्र समान अठाईस खंड है । बहुरि तीसरे स्थानक बत्तीस कौ सोला गुणा कीएं, पाच सै बारा तो धन होइ, अर च्यारि कौ चौगुणा कीएं सोला ऋण होइ, सो पाच सै बारा मै स्यों सोला घटाए, च्यारि सै छिनवै रह्या; सो इतना ही तीसरा पुष्कर समुद्र विषे लवण समुद्र समान खंड जानने । अंसै स्वयंभूरमण समुद्र पर्यंत जानना । सो अब इहां जलचर रहित समुद्रनि का क्षेत्रफल कहिए है-

तहा जो द्वीप समुद्रनि का प्रमाण है, ताकौ इहा समुद्रनि ही का ग्रहण है, तातें आधा कीजिये, तामै जलचर सहित तीन समुद्र घटाए, जलचर रहित समुद्रनि का प्रमाण हो है, सो इहां गच्छ जानना । सो दोय आदि सोला - सोला गुणा धन कह्या था, सो धन का जलचर रहित समुद्रनि का धन विषे कितना क्षेत्रफल भया ? सो कहिये है -

पदमेत्ते गुणयारे, अण्णोणं गुणियरूपपरिहीणे ।

रूअणगुणेणहिये, सुहेणगुणियम्मि गुणगणिय ॥

इस सूत्र करि गुणकार रूपराशि का जोड हो है । याका अर्थ - गच्छप्रमाण जो गुणकार, ताकौ परस्पर गुणि करि एक घटाइये, बहुरि एक घाटि गुणकार के प्रमाण का भाग दीजिए, बहुरि मुख जो आदिस्थान, ताकरि गुणिये, तब गुणकाररूप राशि विषे सर्व जोड होइ ।

सो प्रथम अन्य उदाहरण दिखाइए है - जैसे आदिस्थान विषे दश अर पीछें चौगुणा - चौगुणा बधता अंसै पंच स्थानकनि विषे जो जो प्रमाण भया, तिस सर्व का जोड दीए कितना भया ?

सो कहिये है - इहा गच्छ का प्रमाण पांच, अर गुणकार का प्रमाण च्यारि सो पांच जायगा च्यारि च्यारि मांडि, परस्पर गुणिए, तब एक हजार चौईस हूवा, यामै एक घटाए, एक हजार तेईस हूवा । बहुरि याकौ एक घाटि गुणकार का प्रमाण तीन का भाग दीजिये, तब तीन सै इकतालीस हूवा । बहुरि आदिस्थान का प्रमाण दश, तिसकरि याकौ गुणै, चौतीस सै दश (३४१०) भया, सोई सर्व का जोड जानना कैसै ? पंचस्थानकनि विषै असा प्रमाण है-१०।४०।१६०।६४०।२५६० । सो इनिका जोड चौतीस सै दश ही हो है । असै अन्यत्र भी जानना । सो इस ही सूत्र करि इहा गच्छ का प्रमाण तीन घाटि द्वीपसागर के प्रमाण तै आधा प्रमाण लीये हैं । सो सर्व द्वीप - समुद्रनि का प्रमाण कितना है ? सो कहिए है - एक राजू के जेते अर्धच्छेद है, तिन में लाख योजन के अर्धच्छेद अर एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अगुल तिनिके अर्धच्छेद अर सूच्यंगुल के अर्धच्छेद अर मेरु के मस्तक प्राप्त भया एक अर्ध-च्छेद, इतने अर्धच्छेद घटाएं, जेता अवशेष प्रमाण रह्या, तितने सर्व द्वीप - समुद्र है । अब इहां गुणोत्तर का प्रमाण सोलह सो गच्छप्रमाण गुणोत्तरनि कौ परस्पर गुणना । तहां प्रथम एक राजू का अर्धच्छेद राशि तै आधा प्रमाण मात्र जायगा सोलह -सोलह मांडि, परस्पर गुणन कीए, राजू का वर्ग हो है । सो कैसै ? सो कहिये है-

विवक्षित गच्छ का आधा प्रमाण मात्र विवक्षित गुणकार (का वर्गमूल) १ मांडि परस्पर गुणन कीए, जो प्रमाण होइ, सोई सपूर्ण विवक्षित गच्छ प्रमाण मात्र विवक्षित गुणकार का वर्गमूल मांडि, परस्पर गुणन कीए, प्रमाण हो है । जैसे विवक्षित गच्छ आठ, ताका आधा प्रमाण च्यारि, सो च्यारि जायगा विवक्षित गुणकार नव, नव मांडि परस्पर गुणै, पैसठि सै इकसठि होइ, सोई विवक्षित गच्छ मात्र आठ जायगा विवक्षित गुणकार नव का वर्गमूल तीन - तीन मांडि परस्पर गुणन कीएं, पैसठि सै इकसठि हो है । असै ही इहा विवक्षित गच्छ एक राजू के अर्धच्छेद, ताका अर्धच्छेद प्रमाण मात्र जायगा सोलह - सोलह मांडि परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, सोई राजू के अर्धच्छेद मात्र सोलह का वर्गमूल च्यारि च्यारि मांडि परस्पर गुणै, प्रमाण होइ, सो राजू के अर्धच्छेद मात्र जायगा दूवा मांडि, गुणै, तौ राजू होइ । अर तितनी ही जायगा दोय - दोय वार दूवा मांडि, परस्पर गुणै, राजू का वर्ग हो है । सो जगत्प्रतर कौ दोय वार सात का भाग दीजिए इतना हो है । बहुरि यामै एक

१. 'का वर्गमूल' यह छपी प्रति में मिलता है । छहो हस्तलिखित प्रतियों में नहीं मिलता ।

घटाइये, जो प्रमाण होइ, ताकौ एक घाटि गुणकार कौ प्रमाण पंद्रह, ताका भाग दीजिए । बहुरि इहां आदि विषै पुष्कर समुद्र है । तिस विषै लवण समुद्र समान खंडनि का प्रमाण दोय कौ दोय बार सोलह करि गुणिए, इतना प्रमाण है, सोई मुख भया, ताकरि गुणिए, अैसे करतैं एक घाटि जगत्प्रतर कौ दोय सोलह सोलह का गुणकार अर सात - सात पंद्रह का भागहार भया । बहुरि इस राशि का एक लवण समुद्र विषै जंबूद्वीप समान चौईस खंड हो है । तातै चौईसका गुणकार करना । बहुरि जम्बूद्वीप विषै सूक्ष्म क्षेत्रफल सात नव आदि अंकमात्र है । तातै ताका गुणकार करना बहुरि एक योजन के सात लाख अडसठि हजार अंगुल हो है । सो इहां वर्गराशि का ग्रहण है, अर वर्गराशि का गुणकार भागहार वर्गरूप ही हो है । तातै दोय बार सात लाख अडसठि हजार का गुणकार जानना । बहुरि एक सूच्यंगुल का वर्ग प्रतरागुल हो है । तातै इतने प्रतरांगुलनि का गुणकार जानना । बहुरि—

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि ।

तेसि अण्णोण्हदी, हारो उप्पण्णरासिस्स ॥

इस करणसूत्र के अभिप्राय करि द्वीप समुद्रनि के प्रमाण विषै राजू के अर्धच्छेदनि तैं जेते अर्धच्छेद घटाए है, तिनिका आधा प्रमाण मात्र गुणकार सोलह कौ परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने का पूर्वोक्त राशि विषै भागहार जानना । सो इहा जाका आधा ग्रहण कीया, तिस सपूर्ण राशि मात्र सोलह का वर्गमूल च्यारि, तिनिकौ परस्पर गुणै, सोई राशि हो है । सो अपने अर्धच्छेद मात्र द्वुवानि कौ परस्पर गुणै तौ विवक्षित राशि होइ, अर इहा च्यारि कहै है, तातै तितने ही मात्र दोय बार, द्वुवानि कौ परस्पर गुणै, विवक्षित राशि का वर्ग हो है । तातै इहा लाख योजन का अर्धच्छेद प्रमाण दोय द्वुवानि का परस्पर गुणै, तौ लाख का वर्ग भया । एक योजन का अगुलनि के प्रमाण का अर्धच्छेदमात्र दोय द्वुवानि कौ परस्पर गुणै, एक योजन के अगुल सात लाख अडसठि हजार (तीन का) वर्ग भया । बहुरि मेरुमध्य संबंधी एक अर्धच्छेदमात्र दोय द्वुवानि कौ परस्पर गुणै, च्यारि भया, बहुरि सूच्यंगुल का अर्धच्छेदमात्र दोय द्वुवानि कौ परस्पर गुणै, च्यारि भया । बहुरि सूच्यंगुल का अर्धच्छेद मात्र दोय द्वुवानि कौ परस्पर गुणै प्रतरागुल भया । अैसे ए भागहार जानने । बहुरि जलचर सहित तीन समुद्र गच्छ विषै घटाए है । तातै तीन बार गुणोत्तर जो सोलह, ताका भी भागहार जानना । अैसे जगत्प्रतर कौ प्रतरागुल अर दोय अर सोलह अर सोलह अर चौवीस अर सात सैं निवे कोडि छप्पन लाख चौराणवै हजार

एक सौ पचास अर सात लाख अडसठि हजार, अर सात लाख अडसठि हजार का ती गुणकार भया । बहुरि प्रतरागुल अर सात अर सात अर पद्रह अर एक लाख अर एक लाख अर सात लाख अडसठि हजार अर सात लाख अडसठि हजार अर च्यारि अर सोलह अर सोलह अर सोलह का भागहार भया । इहा प्रतरागुल अर दोय वार सोलह अर दोय वार सात लाख अडसठि हजार गुणकार भागहार विषे समान देखि अपवर्तन कीएं अर गुणकार विषे दोय चौईस कौ परस्पर गुणै, अडतालीस अर भागहार विषे पंद्रह सोलह, इनिकौं परस्पर गुणै, दोय सै चालीस, तहा अडतालीस करि अपवर्तन कीएं, भागहार विषे पाच रहे, असैं अपवर्तन कीएं, जो अवशेष प्रमाण रह्या ७६०५६६४१५० तहा सर्व भागहारनि कौ परस्पर गुणि, ताको गुणकारनि के ७ । ७ । १ ल । १ ल । ४ । ५ ।

अंकनि का भाग दीएं किछू अधिक बारह सै गुणतालीस भए । असैं धनराशि विषे सर्व क्षेत्रफल साधिक 'धगरय' जो बारह सै गुणतालीस, ताकरि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण क्षेत्रफल भया । इहां कटपयपुरस्थवर्णैः इत्यादि सूत्र के अनुसारि अक्षर तज्ञा करि धगरय शब्द तै नव तीन, दोय, एक जनित प्रमाण ग्रहण करना । अब इहा एक आदि चौगुणा - चौगुणा ऋण कह्या था, सो जलचर रहित समुद्रनि विषे ऋणरूप क्षेत्रफल ल्याइए है । 'पद्मेत्ते गुणयारे' इत्यादि करणसूत्र करि प्रथम गच्छमात्र गुणकार च्यारि का परस्पर गुणन करना । तहा राजू के अर्धच्छेद प्रमाण का अर्धप्रमाण मात्र च्यारि कौ परस्पर गुणै, एक राजू हो है । कैसे ? सो कहिये है—

सर्व द्वीप समुद्र का प्रमाण मात्र गच्छ कल्पे, इहा आधा प्रमाण है, ताते गुणकार च्यारि का वर्गमूल दोय ग्रहण करना । सो संपूर्ण गच्छ विषे एक राजू के अर्धच्छेद कहै है, ताते एक राजू के अर्धच्छेद प्रमाणद्वानि कौ परस्पर गुणै, एक राजू प्रमाण भया, सो जगच्छ्रेणी का सातवां भाग प्रमाण है । यामे एक घटाइए, जो प्रमाण होइ, ताको एक घाटि गुणकार तीन का भाग दीजिए । बहुरि पुनरुक्त समुद्र आदि स्थान विषे प्रमाण सोलह, ताकरि गुणिये, असैं एक घाटि अर्धप्रमाण सोलह का गुणकार बहुरि सात अर तीन का भागहार भया । ताते प्रमाण प्रतरा चौवीस खंड अर जम्बूद्वीप का क्षेत्रफल रूप योजननि का प्रमाण प्रतरा चौवीस अंगुलनि का वर्गमात्र बहुरि सूच्यंगुल का इहां वर्ग है; ताते अतरो प्रमाण प्रतरा गुणन करना । बहुरि—

विरलिदरासीदो पुण, जेत्तियनेत्ताणि हीणरुपानि ।

तेति प्रणोणहदी, हारो उप्पणरानिदन ॥१॥

इस सूत्र अनुसारि जितने गच्छ विषै राजू का अर्धच्छेद प्रमाण घटाइए है, ताका जो आधा प्रमाण है, तितने च्यारि के अकनि कौ परस्पर गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने का भागहार जानना । सो जिस राशि का आधा प्रमाण लिया, तिस राशि-मात्र च्यारि का वर्गमूल दोय कौ परस्पर गुणिये, तहा लक्ष योजन के अर्धच्छेद प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणै, एक लाख भए । एक योजन के अंगुलनि का अर्धच्छेद प्रमाण दूवानि कौ परस्पर गुणै, सात लाख अडसठि हजार अंगुल भये । बहुरि मेरुमध्य के अर्धच्छेद मात्र दूवा का दोय भए । बहुरि सूच्यंगुल का अर्धच्छेदमात्र दूवानि कौ पर-स्पर गुणै, सूच्यंगुल भया, अैसे भागहार भए । बहुरि तीन समुद्र घटाएं, तातें तीन वार गुणोत्तर जो च्यारि, ताका भी भागहार जानना । अैसे एक घाटि जगच्छेणी कौ सोलह अर च्यारि अर चौईस अर सात सै निवै कोडि छप्पन लाख चौराणवै हजार एक सै पचास अर सात लाख अडसठि हजार अर सात लाख अडसठि हजार का तौ गुणकार भया । बहुरि सात अर तीन अर सूच्यंगुल अर एक लाख अर सात लाख अडसठि हजार अर दोय अर च्यारि अर च्यारि अर च्यारि का भागहार भया । तहां यथायोग्य अपवर्तन कीएं, सख्यात सूच्यंगुल करि गुण्या हूवा जगच्छेणी मात्र क्षेत्रफल भया । सो इतने पूर्वोक्त धन राशिरूप क्षेत्रफल विषै घटावना, सो तिस महत् राशि-विषै किंचित् मात्र घट्या सो घटाएं, किंचित् ऊन साधिक बारह सै गुणतालीस करि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण सर्व जलचर रहित समुद्रनि का क्षेत्रफल ऋणरूप सिद्ध भया । याकौ एक राजू लंबा, चौडा अैसा जो जगत्प्रतर का गुणचासवां भाग मात्र रज्जू प्रतर क्षेत्र, तामे समच्छेद करि घटाइए, तब जगत्प्रतर कौ ग्यारह सै निवै का गुणकार अर गुणचास गुणा बारह सै गुणतालीस का भागहार भया । तहा अपवर्तन करने के अर्थि भाज्य के गुणकार का भागहार कौ भाग दीए किछू अधिक इक्यावन पाए । अैसे साधिक काम जो अक्षर सज्ञा करि इक्यावन, ताकरि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण विवक्षित क्षेत्र का प्रतररूप तन का स्पर्श भया । याकौ ऊचाई का स्पर्श ग्रहण के अर्थि जीवनि की ऊचाई का प्रमाण संख्यात सूच्यंगुल, तिन करि गुणै, साधिक इक्यावन करि भाजित सख्यात सूच्यंगुल गुणा जगत्प्रतर मात्र शुभलेश्यानि का स्व-स्थान स्वस्थान विषै स्पर्श हो हैं । याकौ देखि तेजो लेश्या का स्वस्थान स्वस्थान की अपेक्षा स्पर्श लोक का असख्यातवा भाग मात्र कह्या, जातै यहु क्षेत्र लोक के असं-ख्यातवे भाग मात्र है । बहुरि तेजोलेश्या का विहारवत्स्वस्थान अर वेदना समुद्घात अर कपाय समुद्घात अर वैक्रियिक समुद्घात विषै स्पर्श किछू घाटि चौदह भाग में आठ भाग प्रमाण है । काहे तै ? सो कहिये है-



लोक चौदह राजू ऊँचा है । त्रसनाली अपेक्षा एक राजू लवा - चौड़ा है । सो तहा चौदह राजू विषे सनत्कुमार-माहेद्र के वासी उत्कृष्ट तेजोलेश्यावाले देव, ऊपरि अच्युत सोलहवा स्वर्ग पर्यंत गमन करै है । अर नीचै तीसरी नरक पृथ्वी पर्यंत गमन करै है । सो अच्युत स्वर्ग तै तीसरा नरक आठ राजू है । तातै चौदह भाग मे आठ भाग कहे अर तिसमें तिस तीसरा नरक की पृथ्वी की मोटाई विषे जहा पटल न पाइए अँसा हजार योजन घटावने, तातै किंचित् ऊन कहे है । इहा जो चौदह घन-रूप राजूनि की एक शलाका होइ, तौ आठ घनरूप राजूनि की केती शलाका होइ ? अँसै त्रैराशिक कीएं आठ चौदहवा भाग आवै है । अथवा भवनत्रिक देव ऊपरि वा नीचै स्वयमेव तौ सौधर्म - ईशान स्वर्ग पर्यंत वा तीसरा नरक पर्यंत गमन करै है । अर अन्य देव के ले गये सोलहवा स्वर्ग पर्यंत विहार करै है । तातै भी पूर्वोक्त प्रमाण स्पर्श सभवै है । बहुरि तेजोलेश्या का मारणातिक समुद्घात विषे स्पर्श चौदह भाग मे नव भाग किछू घाटि सभवै है । काहे तैं ? भवनत्रिक देव वा सौधर्मादिक च्यारि स्वर्गनि के वासी देव तीसरे नरक गएं, अर तहां ही मरण समुद्घात कीया, बहुरि ते जीव आठवी मुक्ति पृथ्वी विषे बादर पृथ्वी काय के जीव उपजते है । तातै तहां पर्यंत मरण समुद्घातरूप प्रदेशनि का विस्तार करि दंड कीया । तिन आठवी पृथ्वी तै तीसरा नरक नव राजू है । अर तहां पटल रहित पृथ्वी की मोटाई घटावनी, तातै किंचित् ऊन नव चौदहवा भाग सभवै है ।

बहुरि तैजस समुद्घात अर आहारक समुद्घात विषे सख्यात घनागुल प्रमाण स्पर्श जानना, जातै ए मनुष्य लोक विषे ही हो है । बहुरि केवल समुद्घात इस लेश्या वालो के होता ही नाही । बहुरि उपपाद विषे स्पर्श चौदह भागनि विषे किछू घाटि डेढ राजू भाग मात्र जानना । सो मध्यलोक तै तेजोलेश्या तै मरि करि सौधर्म ईशान का अत पटल विषे उपजै, तीहि अपेक्षा संभवै है ।

इहां कोऊ कहै कि तेजोलेश्या के उपपाद विषे सनत्कुमार माहेद्र पर्यंत क्षेत्र देव का स्पर्श पाइए है, सो तीन राजू ऊँचा है, तातै चौदह भागनि विषे किंचित् ऊन तीन भाग क्यो न कहिये ?

ताका समाधान — सौधर्म - ईशान तै ऊपरि सख्यात योजन जाड, सनत्कुमार माहेद्र का प्रारंभ हो है । तहां प्रथम पटल है, अर डेढ राजू जाइ; अंतिम पटल है, सो अंत पटल विषे तेजोलेश्या नाही है, अँसा केई आचार्यनि का उपदेश ह । नाते यथवा

चित्रा भूमि विषे तिष्ठता तिर्यच मनुष्यनि का उपपाद ईशान पर्यंत ही सभवै है, तातें किंचित् ऊन डेढ भागमात्र ही स्पर्श कह्या है । बहुरि गाथा विषे चकार कह्या है, तातें तेजोलेश्या का उत्कृष्ट अश करि मरै, तिनकें सनत्कुमार - माहेद्र स्वर्ग का अंत का चक्र नामा इंद्रक संबंधी श्रेणीबद्ध विमाननि विषे उत्पत्ति केई आचार्य कहै है । तिनि का अभिप्राय करि यथा संभवै तीन भागमात्र भी स्पर्श सभवै है । किछू नियम नाही । इस ही वास्ते सूत्र विषे चकार कह्या । असै पीतलेश्या विषे स्पर्श कह्या ।

**पद्मस्सय सट्ठाणसमुद्घाददुगेसु होदि पढमपदं ।**

**अडचोद्दसभागा वा, देसूणा होंति णियमेण ॥५४८॥**

पद्मायाश्च स्वस्थानसमुद्घातद्विकयोर्भवति प्रथमपदम् ।

अष्ट चतुर्दशभागा वा, देशोना भवन्ति नियमेन ॥५४८॥

टीका — पद्मलेश्या के स्वस्थान स्वस्थान विषे पूर्वोक्तप्रकार लोक के असंख्यातवे भाग मात्र स्पर्श जानना । बहुरि विहारवत्स्वस्थान अर वेदना - कषाय - वैक्रियिकसमुद्घात इनिविषे किंचित् ऊन चौदह भाग विषे आठमात्र स्पर्श जानना । बहुरि मारणांतिक समुद्घात विषे भी तैसे ही किंचित् ऊन आठ चौदहवां भागमात्र स्पर्श जानना, जातें पद्म लेश्यावाले भी देव पृथ्वी, अप्, वनस्पति विषे उपजै है । बहुरि तैजस आहारक समुद्घात विषे संख्यात घनागुल प्रमाणस्पर्श जानना । बहुरि केवल समुद्घात इस लेश्या विषे है नाही ।

**उववादे पढमपदं, पणचोद्दसभागयं च देसूणं ।**

उपपादे प्रथमपदं, पंचचतुर्दशभागकश्च देशोनः ।

टीका — यहु आधा सूत्र है । उपपाद विषे स्पर्श चौदह भाग विषे पंच भाग किछू घाटि जानना, जातें पद्मलेश्या शतार - सहस्रार पर्यंत संभवै है । सो शतार-सहस्रार मध्यलोक तें पांच राजू उंचा है । असैं पद्मलेश्या विषे स्पर्श कह्या ।

**शुक्कस्स य तिट्ठाणे, पढसो छचोदसा हीणा ॥५४९॥**

शुक्लायाश्च त्रिस्थाने, प्रथमः षट्चतुर्दशहीनाः ॥५४९॥

टीका — शुक्ललेश्यावाले जीवनि के स्वस्थानस्वस्थान विषे तेजोलेश्यावत् लोक का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्श है । बहुरि विहारवत्स्वस्थान विषे अर वेदना,

कषाय, वैक्रियिक, मरणातिक समुद्धातनि विषे स्पर्श चौदह भागनि विषे छह भाग किछू एक घाटि स्पर्श जानना । जातें अच्युतस्वर्ग के ऊपरि देवनि के स्वस्थान छोडि अन्यत्र गमन नाही है । तातें अच्युत पर्यंत ही ग्रहण कीया । बहुरि तैजस, आहारक समुद्धात विषे संख्यात घनांगुल प्रमाण स्पर्श जानना ।

**णवरि समुद्धादस्मि य, संखातीदा हवंति भागा वा ।**

**सव्वो वा खलु लोगो, फासो होदि त्ति णिद्दिट्ठो ॥५५०॥**

नवरि समुद्धाते च, संख्यातीता भवंति भागा वा ।

सर्वो वा खलु लोकः, स्पर्शो भवतीति निर्दिष्टः ॥५५०॥

टीका — केवल समुद्धात विषे विशेष है, सो कहा ?

दण्ड विषे तौ स्पर्श क्षेत्र की नाई संख्यात प्रतरांगुलनि करि गुण्या हूवा जग-च्छेणी प्रमाण, सो करणे अर समेटने की अपेक्षा दूणा जानना । बहुरि पूर्वाभिमुख स्थित वा उपविष्ट कपाट विषे संख्यात सूच्यंगुलमात्र जगत्प्रतर प्रमाण है, सो करणे, समेटने की अपेक्षा दूणा स्पर्श जानना । बहुरि तैसे ही उत्तराभिमुख स्थित वा उप-विष्ट कपाट विषे स्पर्श जानना । बहुरि प्रतर समुद्धात विषे लोक कौ असंख्यात का भाग दीजिए, तामै एक भाग विना अवशेष बहुभाग मात्र स्पर्श है । जातें वात वलय का क्षेत्र लोक के असंख्यातवे भाग प्रमाण है, तहां व्याप्त न हो है । बहुरि लोक-पूरण विषे स्पर्श सर्व लोक जानना, अैसा नियम है ।

बहुरि उपपाद विषे चौदह भाग विषे छह भाग किंचित् ऊन स्पर्श जानना । जातें इहा आरण - अच्युत पर्यंत ही की विवक्षा है । इति स्पर्शाधिकार ।

आगें काल अधिकार दोय गाथानि करि कहै हैं—

**कालो छल्लेस्साणं, णाणाजीवं पडुच्च सव्वद्धा ।**

**अंतोसुहुत्तमवरं, एगं जीवं पडुच्च हवे ॥५५१॥**

कालः षड्लेश्यानां, नानाजीवं प्रतीत्य सर्वाद्धा ।

अंतर्मुहूर्तोऽवरं एकं, जीवं प्रतीत्य भवेत् ॥५५१॥

टीका — कृष्ण आदि छहौं लेश्यानि का काल नाना जीवनि की अपेक्षा सर्वान्द्रा कहिये सर्व काल है । बहुरि एक जीव अपेक्षा छहौं लेश्यानि का जघन्यकाल तौ अत-  
र्मुहूर्त प्रमाण जानना ।

उवहीणं तेत्तीसं, सत्तरसत्तेव होंति दो चेव ।  
अट्ठारस तेत्तीसा, उक्कस्सा होंति अदिरेया ५५२॥

उदधीनां त्रयस्त्रिंशत्, सप्तदश सप्तैव भवन्ति द्वौ चैव ।  
अष्टादश त्रयस्त्रिंशत्, उत्कृष्टा भवन्ति अतिरेकाः ॥५५२॥

टीका — बहुरि उत्कृष्ट काल कृष्णलेश्या का तेत्तीस सागर, नीललेश्या का सत्तरह सागर, कपोतलेश्या का सात सागर, तेजोलेश्या का दोय सागर, पद्मलेश्या का अठारह सागर, शुक्ललेश्या का तेत्तीस सागर किछू किछू अधिक जानना । सो अधिक का प्रमाण कितना ? सो कहैं है — यहु उत्कृष्ट काल नारक वा देवनि की अपेक्षा कह्या है । सो नारकी अर देव जिस पर्याय तै आनि उपजै, तिस पर्याय का अंत का अंतर्मुहूर्त काल बहुरि देव नारक पर्याय छोडि जहां उपजै, तहां आदि विषै अंतर्मुहूर्त काल मात्र सोई लेश्या हो है । तातै पूर्वोक्त काल तैं छहौं लेश्यानि का काल विषै दोय दोय अंतर्मुहूर्त अधिक जानना । बहुरि तेजोलेश्या अर पद्मलेश्या का काल विषै किंचित् ऊन आधा सागर भी अधिक जानना, जातै जाकै आयु का अपवर्तन घात भया अैसा जो घातायुष्क सम्यग्दृष्टी, ताकै अंतर्मुहूर्त घाटि आधा सागर आयु बधता हो है जैसै सौधर्म-ईशान विषै दोय सागर का आयु कह्या है; ताहां घातायुष्क सम्यग्दृष्टी के अंतर्मुहूर्त घाटि अढाई सागर भी आयु हो है; अैसै ऊपर भी जानना । बहुरि अैसै ही मिथ्यादृष्टि घातायुष्क कै पत्य का असंख्यातवां भाग प्रमाण आयु बधता हो है; सो यहु अधिकपना सौधर्म तै लगाइ सहस्रार स्वर्ग पर्यंत जानना । ऊपर घातायुष्क का उपजना नाही, तातै तहा जो आयु का प्रमाण कह्या है, तितना ही हो है; अैसै अधिक काल का प्रमाण जानना । इति कालाधिकार. ।

आगे अंतर अधिकार दोय गाथानि करि कहै है—

अंतरमवरुक्कस्सं, किण्हतियाणं मुहुत्तअंतं तु ।  
उवहीणं तेत्तीसं, अहियं होदि त्ति णिदिदट्ठं ॥५५३॥

तेजतियाणं एवं, णवरि य उक्कस्स विरहकालो दु ।  
पोगलपरिवट्ठा हु, असंखेज्जा होति णियमेण ॥५५४॥

अंतरमवरोत्कृष्टं, कृष्णत्रयाणां मुहूर्ततस्तु ।  
उदधीनां त्रयस्त्रिंशदधिकं भवतीति निर्दिष्टम् ॥५५३॥

तेजस्त्रयाणामेवं, नवरि च उत्कृष्टविरहकालस्तु ।  
पुद्गलपरिवर्ता हि, असंख्येया भवन्ति नियमेन ॥५५४॥

टीका — अंतर नाम विरह काल का है । जैसे कोई जीव कृष्णलेश्या विषे प्रवर्तें था, पीछें कृष्ण कौं छोडि अन्य लेश्यानि कौ प्राप्त भया । सो जितने काल पर्यंत फिर तिस कृष्णलेश्या कौ प्राप्त न होइ, तीहि काल का नाम कृष्णलेश्या का अंतर कहिये । असे ही सर्वत्र जानना । सो कृष्णादिक तीन लेश्यानि विषे जघन्य अंतर अतर्मुहूर्त प्रमाण है । बहुरि उत्कृष्ट किछू अधिक तेतीस सागर प्रमाण है ।

तहां कृष्णलेश्या विषे अंतर कहै है—

कोई जीव कोडि पूर्व वर्षमात्र आयु का धारी मनुष्य गर्भ तें लगाय आठ वर्ष होने विषे छह अंतर्मुहूर्त अवशेष रहैं, तहा कृष्णलेश्या कौ प्राप्त भया, तहा अतर्मुहूर्त तिष्ठि करि नील लेश्या कौ प्राप्त भया । तब कृष्णलेश्या के अंतर का प्रारंभ कीया । तहां एक-एक अंतर्मुहूर्त मात्र अनुक्रम तें नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ललेश्या कौ प्राप्न होइ, आठ वर्ष का अत के समय दीक्षा धरी, तहा शुक्ललेश्या सहित किछू घाटि मोटि पूर्व पर्यंत संयम कौं पालि, सर्वार्थसिद्धि कौ प्राप्त भया । तहां तेतीस सागर पूर्ण करि मनुष्य होइ, अंतर्मुहूर्त पर्यंत शुक्ललेश्या रूप रह्या । पीछें अनुक्रम तें एक-एक अंतर्मुहूर्त मात्र पद्म, पीत, कपोत, नील लेश्या कौ प्राप्न होइ, कृष्ण लेश्या तें प्राप्त भया, असे जीव के कृष्ण लेश्या का दश अंतर्मुहूर्त अर आठ वर्ष घाटि मोटि पूर्ण होइ, तहां अधिक तेतीस सागर प्रमाण उत्कृष्ट अंतर जानना । असे ही नील लेश्या पर त्रयो लेश्या विषे उत्कृष्ट अंतर जानना । विशेष इतना जो तहा दश अंतर्मुहूर्त तें नील विषे आठ कपोत विषे छह अतर्मुहूर्त ही अधिक जानने ।

अब तेजो लेश्या का उत्कृष्ट अंतर कहै है—

कोई जीव मनुष्य वा तिर्यच तेजोलेश्या विषे तिष्ठे त, तहां आठ वर्ष का अंतर्मुहूर्त होइ, तहां कृष्णलेश्या कौ प्राप्त भया, तब तेजोलेश्या के अंतर का प्रारंभ कीया । तहां एक-एक अंतर्मुहूर्त मात्र अनुक्रम तें नील, कपोत, पीत, पद्म, शुक्ललेश्या कौ प्राप्न होइ, आठ वर्ष का अत के समय दीक्षा धरी, तहा शुक्ललेश्या सहित किछू घाटि मोटि पूर्व पर्यंत संयम कौं पालि, सर्वार्थसिद्धि कौ प्राप्त भया । तहां तेतीस सागर पूर्ण करि मनुष्य होइ, अंतर्मुहूर्त पर्यंत शुक्ललेश्या रूप रह्या । पीछें अनुक्रम तें एक-एक अंतर्मुहूर्त मात्र पद्म, पीत, कपोत, नील लेश्या कौ प्राप्न होइ, कृष्ण लेश्या तें प्राप्त भया, असे जीव के कृष्ण लेश्या का दश अंतर्मुहूर्त अर आठ वर्ष घाटि मोटि पूर्ण होइ, तहां अधिक तेतीस सागर प्रमाण उत्कृष्ट अंतर जानना । असे ही नील लेश्या पर त्रयो लेश्या विषे उत्कृष्ट अंतर जानना । विशेष इतना जो तहा दश अंतर्मुहूर्त तें नील विषे आठ कपोत विषे छह अतर्मुहूर्त ही अधिक जानने ।

पर्यंत कपोत, नील, कृष्ण लेश्या कौ प्राप्त होइ, एकेंद्री भया । तहा उत्कृष्टपनै आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण जे पुद्गल द्रव्य परिवर्तन, तिनि का जितना काल होइ, तितने काल भ्रमण कीया; पीछे विकलेंद्री भया । तहां उत्कृष्टपनै संख्यात हजार वर्ष प्रमाण काल भ्रमण कीया; पीछे पंचेंद्री भया । तहां प्रथम समय तै लगाइ एक - एक अंतर्मुहूर्त काल विषै अनुक्रम तें कृष्ण, नील, कपोत कौ प्राप्त होइ, तेजो लेश्या कौ प्राप्त भया । अैसे जीव कें तेजोलेश्या का छह अंतर्मुहूर्त सहित अर संख्यात सहस्र वर्ष करि अधिक आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन मात्र उत्कृष्ट अंतर जानना ।

अब पद्म लेश्या का अंतर कहै हैं—

कोई जीव पद्मलेश्या विषै तिष्ठता था, ताकौ छोड़ि तेजोलेश्या कौ प्राप्त भया, तब पद्म के अंतर का प्रारंभ कीया । तहां तेजोलेश्या विषै अंतर्मुहूर्त तिष्ठि करि सौधर्म - ईशान विषै उपज्या, तहां पत्य का असंख्यातवां भाग करि अधिक द्यो सागर पर्यंत रह्या । तहा स्यों चय करि एकेंद्री भया । तहां आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन काल मात्र भ्रमण करि पीछे विकलेंद्री भया । तहां संख्यात सहस्र वर्ष कालमात्र भ्रमण करि पंचेंद्री भया । तहां प्रथमसमय तै लगाइ, एक - एक अंतर्मुहूर्त कृष्ण, नील, कपोत, तेजोलेश्या कौ प्राप्त होइ, पद्मलेश्या कौ प्राप्त भया । अैसे जीव कें पद्मलेश्या का पंच अंतर्मुहूर्त अर पत्य का असंख्यातवां भाग करि अधिक द्यो सागर अर संख्यात हजार वर्षनि करि अधिक आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तन मात्र उत्कृष्ट अंतर जानना ।

आगे शुक्ल लेश्या का अंतर कहै है—

कोई जीव शुक्ललेश्या विषै तिष्ठे था, तहांस्यों पद्मलेश्या कौ प्राप्त भया । तब शुक्ललेश्या का अंतर का प्रारंभ भया । तहां क्रम तै एक-एक अंतर्मुहूर्त काल मात्र पद्म - तेजोलेश्या कौ प्राप्त होइ सौधर्म - ईशान विषै उपजि, तहा पूर्वोक्त प्रमाण काल रहि, तहां पीछे एकेंद्री होइ, तहा भी पूर्वोक्त प्रमाण काल मात्र भ्रमण करि, पीछे विकलेंद्री होइ, तहा भी पूर्वोक्त प्रमाण कालमात्र भ्रमण करि, पंचेंद्री होइ, प्रथम समय तै एक-एक अंतर्मुहूर्त काल मात्र क्रम तै कृष्ण, नील, कपोत, तेज, पद्मलेश्या कौ प्राप्त होइ, शुक्ललेश्या कौ प्राप्त भया । अैसे जीव के सात अंतर्मुहूर्त अर संख्यात सहस्र वर्ष अर पत्य का असंख्यातवां भाग करि अधिक द्यो सागर करि अधिक

आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण पुद्गल परावर्तत मात्र शुक्ललेश्या का उत्कृष्ट अंतर जानना । इति अंतराधिकारः ।

आगें भाव अर अल्पबहुत्व अधिकारनि कौ कहैं हैं—

भावादो छल्लेस्सा, औदयिया होति अप्पबहुगं तु ।  
दव्वपमाणे सिद्धं, इदि लेस्सा वण्णिदा होति ॥५५५॥

भावतः षड् लेश्या, औदयिका भवन्ति अल्पबहुकं तु ।  
द्रव्यप्रमाणे सिद्धमिति, लेश्या वर्णिता भवन्ति ॥५५५॥

टीका — भाव करि छहौ लेश्या औदयिक भावरूप जाननी; जातै कषाय संयुक्त योगनि की प्रवृत्ति का नाम लेश्या है । सो ते दोऊ कर्मनि के उदय ते हो है । इति भावाधिकारः ।

बहुति तिनि लेश्यानि का अल्प बहुत्व पूर्वे संख्या अधिकार विषे द्रव्य प्रमाण करि ही सिद्ध है । जिनका प्रमाण थोडा सो अल्प, जिनका प्रमाण घणा सो बहुत । तहां सबतैं थोरे शुक्लेश्यावाले जीव है; ते पणि असंख्यात है । तिनि तैं असंख्यातगुणे पद्मलेश्यावाले जीव है । तिनि तैं संख्यातगुणे तेजोलेश्यावाले जीव है । तिनि तैं अनंतानंत गुणे कपोतलेश्यावाले जीव है । तिनि तैं किछू अधिक नीललेश्यावाले जीव है । तिनि तैं किछू कृष्णलेश्यावाले जीव है । इति अल्पबहुत्वाधिकारः ।

अैसे छहौ लेश्या सोलह अधिकारनि करि वर्णन करी हुई जाननी ।

आगें लेश्या रहित जीवनि कौ कहैं हैं—

किण्हादिलेस्सरहिया, संसारविणग्गया अणंतसुहा ।  
सिद्धिपुरं संपत्ता, अलेस्सिया ते मुणेयव्वा ॥५५६॥

कृष्णादिलेश्यारहिताः, संसारविनिर्गता अनन्तसुखाः ।  
सिद्धिपुरं संप्राप्ता, अलेश्यास्ते जातव्याः ॥५५६॥

टीका — जे जीव कषायनि के उदय स्थान लिए योगनि की प्रवृत्ति के अभाव ते कृष्णादि लेश्यानि करि रहित है, तिस ही ते पंच प्रकार संसार समुद्र तें निकसि

पार भए हैं । बहुरि अतीन्द्रिय - अनंत सुख करि तृप्त हैं । बहुरि आत्मा की उप-  
लब्धि है लक्षण जाका, असी सिद्धिपुरी कौं सम्यक् पनै प्राप्त भए है, ते अयोगकेवली  
वा सिद्ध भगवान लेश्या रहित अलेश्य जानने ।

इति श्री आचार्य नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती विरचित गोष्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रह ग्रंथ की  
जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चद्रिका नामा भापाटीका  
विषे जीवकाण्ड विषे प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषे लेश्यामार्गणा प्ररूपणा है नाम  
जाका असा पदद्वां अधिकार सपूर्ण भया ॥१५॥

जो जीव तत्त्वज्ञानी होकर इस करणानुयोग का अभ्यास करते हैं,  
उन्हे यह उसके विशेषणरूप भासित होता है । जो जीवादिक तत्त्वों को आप  
जानता है, उन्ही के विशेष करणानुयोग में किये हैं, वहाँ कितने ही विशेषण  
तो यथावत निश्चयरूप हैं, कितने ही उपचार सहित व्यवहाररूप है, कितने  
ही द्रव्य-क्षेत्र-काल भावादिक के स्वरूप प्रमाणादिरूप हैं, कितने ही निमित्त  
आश्रयादि अपेक्षा सहित है, -इत्यादि अनेक प्रकार के विशेषण निरूपित  
किये हैं, उन्हे त्यों का त्यों मानता हुआ उस करणानुयोग का अभ्यास करता  
है ।

इस अभ्यास से तत्त्वज्ञान निर्मल होता है । जैसे-कोई यह तो जानता  
था कि यह रत्न है, परन्तु उस रत्न के बहुत से विशेषण जानने पर निर्मल  
रत्न का पारखी होता है, उसी प्रकार तत्त्वों को जानता था कि यह जीवा-  
दिक है, परन्तु उन तत्त्वों के बहुत विशेष जाने तो निर्मल तत्त्वज्ञान होता  
है । तत्त्वज्ञान निर्मल होने पर आप ही विशेष धर्मात्मा होता है ।

पण्डित टोडरमलः मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृ०-२७०



## सोलहवां अधिकार : भव्य-मार्गणा

इष्ट फलत सब होत फुनि, नष्ट अनिष्ट समाज ।

जास नामतें सो भजौ, शांति नाथ जिनराज ॥

आगें भव्य मार्गणा का अधिकार च्यारि गाथानि करि कहै है—

भविया सिद्धी जेसि, जीवाणं ते हवन्ति भवसिद्धा ।

तद्विवरीयाऽभव्या, संसारादो ण सिज्झन्ति ॥५५७॥

भव्या सिद्धिर्येषां, जीवानां ते भवन्ति भवसिद्धाः ।

तद्विपरीता अभव्याः, संसारान्न सिद्धयन्ति ॥५५७॥

टीका — भव्याः कहिए होनेयोग्य वा होनहार है सिद्धि कहिये अनंत चतुष्टय रूप स्वरूप की प्राप्ति जिनके, ते भव्य सिद्ध जानने । याकरि सिद्धि की प्राप्ति अर योग्यता करि भव्यनि के द्विविधपना कहा है । .

भावार्थ — भव्य दोय प्रकार हैं । केई तो भव्य ऐसे है जे मुक्ति होने को केवल योग्य ही हैं; परि कबहुं सामग्री कौ पाइ मुक्त न होइ । बहुरि केई भव्य ऐसे हैं, जे काल पाइ मुक्त होहिगे । बहुरि तद्विपरीताः कहिए पूर्वोक्त दोऊ लक्षण रहित जे जीव मुक्त होने योग्य भी नहीं अर मुक्त भी होते नाहीं, ते अभव्य जानने । ताते ते वे अभव्य जीव संसार तें निकसि कदाचित् मुक्ति को प्राप्त न हो हैं; ऐसा ही केई द्रव्यत्व भाव है ।

इहा कोऊ भ्रम करैगा जो अभव्य मुक्त न होइ तौ दोऊ प्रकार के भव्यनि के तौ मुक्त होनाठहर्या तौ जे मुक्त होने को योग्य कहे थे, तिन भव्यनि के भी कय ॥ १० मुक्ति प्राप्ति होसी सो ऐसे भ्रम को दूर करे हैं—

भवत्तणस्स जोग्गा, जे जीवा ते हवन्ति भवसिद्धा ।

ण हु मलविगमे नियमा, ताणं कणओवलाणमिव ॥५५८॥

भव्यत्वस्य योग्या, ये जीवास्ते भवन्ति भवसिद्धाः ।

न हि मलविगमे नियमात्, तेषां कनकोपलानामिव ॥५५८॥

टीका — जे भव्य जीव भव्यत्व जो सम्यग्दर्शनादि सामग्री कौ पाइ, अनंत चतुष्टय रूप होना, ताकौ केवल योग्य ही है, तद्रूप होने के नाही, ते भव्य सिद्ध है । सदा काल संसार कौ प्राप्त रहैं है । काहे तैं ? सो कहिये हैं — जैसे केई सुवर्ण सहित पाषाण अैसे है, तिनके कदाचित् मेल के नाश करने की सामग्री न मिलै, तैसें केई भव्य अैसे है जिनके कर्म मेल नाश करने की कदाचित् सामग्री नियम करि न संभवै है ।

भावार्थ — जैसे अर्हमिंद्र देवनि कैं नरकादि विषैं गमन करने की शक्ति है, परंतु कदाचित् गमन न करे, तैसें केई भव्य अैसे है, जे मुक्त होने कौ योग्य है, परन्तु कदाचित् मुक्त न होइ ।

ण य जे भव्वाभव्वा, मुक्तिसुहातीदणंतसंसारा ।  
ते जीवा णायव्वा, एव य भव्वा अभव्वा य ॥५५६॥

न च ये भव्या अभव्या, मुक्तिसुखा अतीतानंतसंसाराः ।  
ते जीवा ज्ञातव्या, नैव च भव्या अभव्याश्च ॥५५९॥

टीका — जे जीव केई नवीन ज्ञानादिक अवस्था कौ प्राप्त होने के नाहीं; तातैं भव्य भी नाही । अर अनंत चतुष्टयरूप भए, तातैं अभव्य भी नाहीं, अैसे मुक्ति सुख के भोक्ता अनंत संसार रहित भए, ते जीव भव्य भी नाही अर अभव्य भी नाहीं; जीवत्व पारिणामिक कौ धरै हैं; अैसे जानने ।

इहां जीवनि की संख्या कहै हैं—

अवरो जुत्ताणंतो, अभव्वरासिस्स होदि परिमाणं ।  
तेण विहीणो सब्बो, संसारी भव्वरासिस्स ॥५६०॥

अवरो युक्तानन्तः, अभव्यराशे भवति परिमाणम् ।  
तेन विहीनः सर्वः, संसारी भव्यराशेः ॥५६०॥

टीका — जघन्य युक्तानंत प्रमाण अभव्य राशि का प्रमाण है । बहुरि संसारी जीवनि के परिमाण में अभव्य राशि का परिमाण घटाएं, अवशेष रहे, तितना भव्य राशि का प्रमाण है । इहां संसारी जीवनि के परिवर्तन कहिए है — परिवर्तन अर परिभ्रमण, संसार ए एकार्य हैं । सो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव, भेद तैं परिवर्तन

पंच प्रकार है । तहां द्रव्य परिवर्तन दोय प्रकार है — एक कर्म द्रव्य परिवर्तन, एक नोकर्म द्रव्य परिवर्तन ।

तहां नोकर्म द्रव्य परिवर्तन कहिए है —

किसी जीव ने औदारिकादिक तीन शरीरनि विषे किसी ही शरीर सबधी छह पर्याप्ति रूप परिणामने कौ योग्य पुद्गल किसी एक समय में ग्रहे, ते स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण, गंधादिक करि तीव्र, मद, मध्य भाव लीए, यथा संभव ग्रहे, बहुरि ते द्वितीयादि समयनि विषे निर्जरा रूप कीए । बहुरि अनंत बार अगृहीतनि कौ ग्रहि करि छोड़े, अनंत बार मिश्रनि कौ ग्रहि करि छोड़े, बीचि ग्रहीतानि कौ अनंत बार ग्रहि करि छोड़े, अैसे भए पीछे जे पहिले समय पुद्गल ग्रहे, तेई पुद्गल तैसे ही स्निग्ध, रूक्ष, वर्ण गंधादिक करि तिस ही जीव के नोकर्म भाव कौ प्राप्त होइ, तितना समुदायरूप काल मात्र नोकर्म द्रव्य परिवर्तन है । जीव करि पूर्वे ग्रहे अैसे परमाणू जिन समयप्रवद्ध रूप स्कंधनि विषे होइ, ते गृहीत कहिए । बहुरि जीव करि पूर्वे न ग्रहे अैसे परमाणू जिनिविषे होइ, ते अगृहीत कहिये । गृहीत अर अगृहीत दोऊ जाति के परमाणू जिनि विषे होइ, ते मिश्र कहिए ।

इहां कोऊ कहै अगृहीत परमाणू कैसे है ?

ताकां सामाधान — सर्व जीवराशि के प्रमाण कौ समय प्रवद्ध के परमाणूनि का परिमाण करि गुणिए । बहुरि जो प्रमाण आवै, ताकाँ अतीत काल के समयनि का परिमाण करि गुणिए, जो प्रमाण होइ, तिसतें भी पुद्गल द्रव्य का प्रमाण अनंत गुणा है, जातें जीव राशि तें अनंत वर्गस्थान गए पुद्गलराशि हो है । तातें अनादिकाल नाना जीवनि की अपेक्षा भी अगृहीत परमाणू लोक विषे बहुत पाइए हैं । बहुरि एक जीव का परिवर्तन काल की अपेक्षा नवीन परिवर्तन प्रारंभ भया, तब सर्व ही अगृहीत भए । पीछे ग्रहे तेई ग्रहीत हो है । सो इहा जिस अपेक्षा गृहीत, अगृहीत, मिश्र कहे हैं; सो यथासंभव जानना । अब विशेष दिखाइए है —

पुद्गल परिवर्तन का काल तीन प्रकार है । तहा अगृहीत के ग्रहण का काल, सो अगृहीत ग्रहण काल है । गृहीत के ग्रहण का काल, सो गृहीत ग्रहण काल है । मिश्र के ग्रहण का काल, सो मिश्र ग्रहण काल है । सो इनिका परिवर्तन जो पलटना सो कैसे हो है ? सो अनुक्रम यत्र करि दिखाइए है—

यंत्र विषे अगृहीत की सहनानी तो विदी ॥०॥ जाननी अरु मिश्र की सहनानी हंसपद ॥+॥ जाननी । अरु गृहीत की सहनानी एक का अंक ॥१॥ जाननी । अरु दोय बार लिखने तै अनंत बार जानि लेना ।

### द्रव्य परिवर्तन का यंत्र-

० ० +	० ० +	० ० १	० ० +	० ० +	० ० १
+ + ०	+ + ०	+ + १	+ + ०	+ + ०	+ + १
+ + १	+ + १	+ + ०	+ + १	+ + १	+ + ०
१ १ +	१ १ +	१ १ ०	१ १ +	१ १ +	१ १ ०

तहां विवक्षित नोकर्म पुद्गल परिवर्तन का पहिले समय तै लगाइ, प्रथम बार समयप्रबद्ध विषे अगृहीत का ग्रहण करै, दूसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करै, तीसरी बार अगृहीत ही का ग्रहण करै अैसे निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण होइ निवरै तब एक बार मिश्र का ग्रहण करै । याहीतैं यंत्र विषे पहिले कोठा विषे दोय बार बिदी एक बार हंसपद लिख्या ।

बहुरि तहां पीछे तैसे ही निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करि एक बार मिश्र का ग्रहण करै, अैसे ही अनुक्रमतैं अनंत अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करि एक - एक बार मिश्र का ग्रहण करै; अैसे ही मिश्र का भी ग्रहण अनंत बार हो है । याहीतैं अनंत बार की सहनानी के निमित्त यंत्र विषे जैसा पहिला कोठा था, तैसाही दूसरा कोठा लिख्या ।

बहुरि तहां पीछे तैसे ही निरंतर अनंत बार अगृहीत का ग्रहण करि एक बार गृहीत का ग्रहण करै, याहीतैं तीसरा कोठा विषे दोय बिदी अरु एक का अंक लिख्या । बहुरि अगृहीत ग्रहण आदि अनुक्रम तै जसैं यहु एक बार गृहीत ग्रहण भया, तैसे ही अनुक्रम तै एक - एक बार गृहीत ग्रहण करि अनंत बार गृहीत ग्रहण हो है । याहीतैं जसैं तीन कोठे पहिले लिखे थे, तैसे ही अनंत की सहनानी के निमित्त दूसरा तीन कोठे लिखे, सो अैसे होतैं प्रथम परिवर्तन भया । तातैं इतना प्रथमपंक्ति विषे लिखा ।

अब दूसरी पंक्ति का अर्थ दिखाइए है - पूर्वोक्त अनुक्रम भए पीछे निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करै, तब एक बार अगृहीत ग्रहण करै । यातैं प्रथम कोठा विषे

दोय हंसपद अर एक बिंदी लिखी । बहुरि निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करि, एक बार अगृहीत ग्रहण करै, सो इस ही क्रम तैं अनंत बार अगृहीत ग्रहण करै; यातै पहला कोठा सारिखा दूसरा कोठा लिख्या ।

बहुरि तहां पीछें निरंतर अनंत बार मिश्र ग्रहण करि एक बार गृहीत ग्रहण करै । यातैं तीसरा कोठा विषैं दोय हंसपद अर एक एक का अंक लिख्या । सो मिश्र ग्रहण आदि पूर्वोक्त सर्व अनुक्रम लीए, एक - एक बार गृहीत ग्रहण होइ, सो अंसैं गृहीत ग्रहण भी अनंत बार हो है । यातैं जैसैं पहिले तीन कोठे लिखे थे, तैसे ही दूसरा तीन कोठे लिखे; अंसैं होत संतैं दूसरा परिवर्तन भया ।

अब तीसरी पंक्ति का अर्थ दिखाइए है - पूर्वोक्त क्रम भए पीछें निरंतर अनंत बार मिश्र का ग्रहण करि एक बार गृहीत का ग्रहण करै; यातैं प्रथम कोठा विषैं दोय हंसपद अर एक-एक का अंक लिख्या, सो अनंत अनंत बार मिश्र ग्रहण करि-करि एक एक बार गृहीत ग्रहण करि अनंत बार गृहीत ग्रहण हो है । यातैं पहिला कोठा सारिखा दूसरा कोठा लिख्या । बहुरि अनंत बार मिश्रका ग्रहण करि एक बार अगृहीत का ग्रहण करै । यातैं तीसरा कोठा विषैं दोय हंसपद अर एक बिंदी लिखी; सो जैसैं मिश्र ग्रहणादि अनुक्रम तैं एक बार अगृहीत का ग्रहण भया, तैसे ही एक एक बार करि अनंत बार अगृहीत का ग्रहण हो है । तातैं पहिले तीन कोठे थे, तैसे ही दूसरा तीन कोठे लिखे; अैसे होत सतैं तीसरा परिवर्तन भया ।

आगै चौथी पंक्ति का अर्थ दिखाइए है - पूर्वोक्त क्रम भए पीछें निरंतर अनंत बार गृहीत का ग्रहण करि एक बार मिश्र का ग्रहण करै, यातैं प्रथम कोठा विषैं दोय एका अर एक हंसपद लिख्या है । सो अनंत अनंत बार गृहीत का ग्रहण करि-करि एक एक बार मिश्र ग्रहण करि अनंत बार मिश्र का ग्रहण हो है । यातैं प्रथम कोठा सारिखा दूसरा कोठा कीया । बहुरि तहां पीछें अनंत बार गृहीत का ग्रहण करि एक बार अगृहीत का ग्रहण करै; यातैं तीसरा कोठा विषैं दोय एका अर एक बिंदी लिखी । बहुरि चतुर्थ परिवर्तन की आदि तैं जैसा अनुक्रम करि यहु एक बार अगृहीत ग्रहण भया । तैसे ही अनुक्रम तैं अनंत बार अगृहीत ग्रहण होइ, यातैं पहिले तीन कोठे कीए थे, तैसे ही आगै अनंत बार की सहनानी के अधि दूसरा तीन कोठे कीए । अैसे होत संतैं चतुर्थ परिवर्तन भया । बहुरि तीहि चतुर्थ परिवर्तन का अनंतर समय विषैं विवक्षित नोकर्म द्रव्य परिवर्तन के पहिले समय विषैं जे पुद्गल जिन

स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण, गन्धादि भाव कौ लीए ग्रहण कीए थे; तेई पुद्गल तिस ही स्निग्ध, रुक्ष, वर्ण गन्धादि भाव कौ लीए शुद्ध गृहीतरूप ग्रहण कीजिए है; सो यह सब मिल्या हुवा संपूर्ण नोकर्म द्रव्य परिवर्तन जानना ।

आगे कर्म पुद्गल परिवर्तन कहिए है—किसी जीवने एक समय विषे आठ प्रकार कर्मरूप जे पुद्गल ग्रहे, ते एक समय अधिक आवली प्रमाण आबाधा काल कौ गए पीछे द्वितीयादि समयनि विषे निर्जरारूप कीए, पीछे जैसा अनुक्रम आदि तै लगाइ, अंत पर्यंत नोकर्म द्रव्य परिवर्तन विषे कह्या, तैसा ही अनुक्रम सर्व चारचो परिवर्तन संबंधी इस कर्म द्रव्य परिवर्तन विषे जानना ।

विशेष इतना—तहां नोकर्म संबंधी पुद्गल थे, इहां कर्म संबंधी पुद्गल जानने । अनुक्रम विषे किछू विशेष नाही । पीछे पहिले समय जैसे पुद्गल ग्रहे थे, तेई पुद्गल तिस ही भाव कौ लीए, चतुर्थ परिवर्तन के अनंतर समय विषे ग्रहण होइ; सो यह सब मिल्या हुवा संपूर्ण कर्म परिवर्तन जानना । इस द्रव्य परिवर्तन कौ पुद्गल परिवर्तन भी कहिए है । सो नोकर्म पुद्गल परिवर्तन का अर कर्मपुद्गल परिवर्तन का काल समान है । बहुरि इहां इतना जानना — पूर्वे जो क्रम कह्या, तहा जैसे पहिले अनंत बार अगृहीत का ग्रहण कह्या, तहा बीच बीच में गृहीत ग्रहण वा मिश्र ग्रहण भी होइ, सो अनुक्रम विषे तो पहिली बार अर दूसरी बार आदि जो अगृहीत ग्रहण होइ, सोई गिणने में आवै है । अर काल परिमाण विषे गृहीत, मिश्र ग्रहण का समय सहित सर्व काल गिणने में आवै है । जिनि समयनि विषे गृहीत का ग्रहण है, ते समय गृहीत ग्रहण के काल विषे गिणने में आवै है । जिनि समयनि विषे मिश्र का ग्रहण हो है, ते समय मिश्र ग्रहण के काल विषे गिणने में आवै है । जिन समयनि विषे अगृहीत ग्रहण हो है, ते समय अगृहीत ग्रहण काल विषे गिणने में आवै है; सो यह उदाहरण कह्या है; अैसे ही सर्वत्र जानना । क्रम विषे तौ जैसा अनुक्रम कह्या होइ, तैसे होइ, तव ही गिणने में आवै । अर तिस अनुक्रम के बीच कोई अन्यरूप प्रवर्तै, सो अनुक्रम विषे गिणने में नाही । अर जिनि समयनि विषे अन्यरूप भी प्रवर्तै है, तिनि समयनिरूप जो काल, सो परिवर्तन का काल विषे गिणने में आवै ही है । अैसे ही क्षेत्रादि परिवर्तन विषे भी जानना ।

जैसे क्षेत्र परिवर्तन विषे किसी जीवने जघन्य अवगाहना पाई, परिवर्तन प्रारंभ कीया, पीछे केते एक काल अनुक्रम रहित अवगाहना पाई, पीछे अनुक्रमरूप अवगा-

हना कौं प्राप्त भया, तहां क्षेत्र परिवर्तन का अनुक्रम विषे तौ पहिले जघन्य अवगाहना पाई थी, अर पीछे दूसरी बार अनुक्रमरूप अवगाहना पाई, सो गिणने मे आवै है । अर क्षेत्र परिवर्तन का काल विषे बीच में अनुक्रम रहित अवगाहना पावने का काल सहित सर्व काल गिणने में आवै है । असै ही सर्व विषे जानि लेना ।

अब इहा द्रव्य परिवर्तन विषे काल का परिमाण कहै है । तहा अगृहीत ग्रहण का काल अनंत है; तथापि यहु सर्व तै स्तोक है । जातै जिनि पुद्गलनि स्यो द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावनि का संस्कार नष्ट है, ते पुद्गल बहुत बार ग्रहण में आवते नाही, याही तै विवक्षित पुद्गल परिवर्तन के मध्य गृहीत पुद्गलनि का ही बहुत बार ग्रहण संभवै है । सोई कह्या है —

सुहुमद्विदिसंजुत्तं, आसण्णं कम्मणिज्जरामुक्कं ।

पाएण एदि गहणं, दव्वमणिद्धिसंठाणं ॥

जे पुद्गल कर्मरूप परिणए थे, अर जिनकी स्थिति थोरी थी, अर निर्जरा होते कर्म अवस्था करि रहित भए है अर जीव के प्रेदशनि स्यो एक क्षेत्रावगाही तिष्ठै है, अर संस्थान आकार जिनिका कह्या न जाय अर विवक्षित पुद्गल परिवर्तन का पहिला समय विषे जिस स्वरूप ग्रहण में आए, तिसकरि रहित होइ, असै पुद्गल, जीव करि बाहुल्य पनै समयप्रबद्धनि विषे ग्रहण कीजिए है । असै नियम नाही, जो असै ही पुद्गलनि का ग्रहण करे, परंतु बहुत बार असै ही पुद्गलनि का ग्रहण हो है, जातें ए पुद्गल द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का संस्कार करि संयुक्त है ।

बहुरि अगृहीत ग्रहण के काल तै मिश्र ग्रहण का काल अनंत गुणा है । बहुरि तिस मिश्र ग्रहण के काल तै गृहीत ग्रहण का जघन्यकाल अनंत गुणा है । बहुरि तिस तै सर्व पुद्गल परिवर्तन का जघन्य काल किछू अधिक है । जघन्य गृहीत ग्रहण काल कौ अनंत का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना जघन्य गृहीत ग्रहण काल विषे मिलाइए, तब जघन्य पुद्गल परिवर्तन का काल हो है । बहुरि तिसतै गृहीत ग्रहण का उत्कृष्ट काल अनंत गुणा है, बहुरि तातै संपूर्ण पुद्गल परिवर्तन का उत्कृष्ट काल किछू अधिक है । उत्कृष्ट गृहीत ग्रहण काल कौ अनंत का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना उत्कृष्ट गृहीत ग्रहण काल विषे मिलाइए, तब उत्कृष्ट पुद्गल परिवर्तन का काल हो है । इहां अगृहीत ग्रहण काल अर मिश्र ग्रहण काल विषे जघन्य अ-

ष्टपना नाही है । जातै परंपरा सिद्धांत विषै तिनके जघन्य उत्कृष्टपने का उपदेश का अभाव है ।

इहां प्रासंगिक (उक्तं च) गाथा कहैं हैं—

अगहिदमिस्सं गहिदं, मिस्समगहिदं तहेव गहिदं च ।

मिस्सं गहिदमगहिदं, गहिदं मिस्सं अगहिदं च ॥

पहिला - अगृहीत, मिश्र, गृहीतरूप; दूसरा - मिश्र, अगृहीत, गृहीतरूप; तीसरा - मिश्र, गृहीत, अगृहीतरूप; चौथा - गृहीत, मिश्र, अगृहीतरूप परिवर्तन भए द्रव्य परिवर्तन हो है । सो विशदरूप पूर्वं कह्या ही है ।

उक्तं च (आर्या छंद) —

सर्वेऽपि पुद्गलाः, खल्वेकेनात्तोज्झिताश्च जीवेन ।

ह्यसकृत्त्वनंतकृत्वः, पुद्गलपरिवर्तनसंसारे ॥

एकै जीव पुद्गल परिवर्तनरूप संसार विषै यथा योग्य सर्व पुद्गल वारंवार अनंत वार ग्रहि छांडै है ।

आगे क्षेत्र परिवर्तन कहिए हैं - सो क्षेत्रपरिवर्तन दोय प्रकार - एक स्वक्षेत्र परिवर्तन, एक परक्षेत्र परिवर्तन ।

तहां स्वक्षेत्र परिवर्तन कहिए हैं - कोई जीव सूक्ष्म निगोदिया की जघन्य अवगाहना कौ धारि उपज्या, अपना सांस का अठारहवां भाग प्रमाण आयु कौं भोगि मूवा, बहुरि तिस तै एक प्रदेश बधती अवगाहना कौं धरै, पीछे दोय प्रदेश बधती अवगाहना कौं धरै, अैसें एक - एक प्रदेश अनुक्रम तै बधती - बधती महामत्स्य की उत्कृष्ट अवगाहना पर्यंत सख्यात घनांगुल प्रमाण अवगाहना के भेदनि कौं सोई जीव प्राप्त होइ । जे अवगाहना के भेद है, ते सर्व एक जीव अनुक्रम तै यावत्काल विषै धारे, सो यहु सर्व समुदायरूप स्वक्षेत्र परिवर्तन जानना ।

अब परक्षेत्र परिवर्तन कहिये हैं—

सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जघन्य अवगाहनारूप शरीर का धारक सो लोकाकाश के मध्य जे आठ आकाश के प्रदेश है, तिनकौ अपने शरीर की अवगाहना के मध्यवर्ती आठ प्रदेश करि अवशेष, उचके निकटवर्ती अन्य प्रदेश, तिनकौं रोक करि उपज्या, सांस का अठारहवां भाग मात्र क्षुद्र भव काल जीय करि मूवा । बहुरि सोई जीव तैसें ही अवगाहना कौ धारि, तिस ही क्षेत्र विषै दूसरा उपज्या, सो अैसें



परमाणू गोल कह्या है; सो यहु षट्कोण को लीए आकार गोल क्षेत्र ही का भेद है, तातें गोल कह्या है । जैसे अणू वा स्कंधरूप पुद्गल द्रव्य तो रूपी अजीव द्रव्य जानना । बहुरि धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य, काल द्रव्य ए चार्यो अरूपी अजीव द्रव्य जानने इति । नामाधिकार ।

**उवजोगो वर्णचक्र, लक्षणमिह जीवपुग्गलाणां तु ।**

**गदिठाणोग्गहवत्तणकिरियुवयारो दु धम्मचक्र ॥५६५॥**

उपयोगो वर्णचतुष्कं, लक्षणमिह जीवपुद्गलानां तु ।

गतिस्थानावगाहवर्तनक्रियोपकारस्तु धर्मचतुर्णाम् ॥५६५॥

टीका — द्रव्यनि के लक्षण कहै है । तहां जीव अर पुद्गलनि के लक्षण (क्रमशः) उपयोग अर वर्ण चतुष्क जानना । तहां दर्शन-ज्ञान उपयोग जीवनि का लक्षण है । वर्ण, गंध, रस, स्पर्श पुद्गलनि का लक्षण है । बहुरि गति, स्थान, अवगाह, वर्तनारूप क्रिया का उपकार ते धर्मादिक च्यारि द्रव्यनि के लक्षण हैं । तहां गतिहेतुत्व धर्म द्रव्य का लक्षण है । स्थितिहेतुत्व अधर्म द्रव्य का लक्षण है । अवगाहहेतुत्व आकाश द्रव्य का लक्षण है । वर्तनाहेतुत्व काल द्रव्य का लक्षण है ।

**गदिठाणोग्गहकिरिया, जीवाणं पुग्गलाणमेव हवे ।**

**धम्मतिये ण हि किरिया, मुख्खा पुण साधगा होंति ॥५६६॥**

गतिस्थानावगाहक्रिया, जीवानां पुद्गलानामेव भवेत् ।

धर्मत्रिके न हि क्रिया, मुख्याः पुनः साधका भवन्ति ॥५६६॥

टीका — गति, स्थिति, अवगाह ए तीन क्रिया जीव अर पुद्गल ही के पाइए है । तहाँ प्रदेश ते प्रदेशांतर विषे प्राप्त होना, सो गति क्रिया है । गमन करि कही तिष्ठना, सो स्थिति क्रिया है । गति-स्थिति लीए वास करना, सो अवगाह क्रिया जानना । बहुरि धर्म, अधर्म, आकाश विषे ए क्रिया नाही है; जातें इनके स्थानचलन प्रदेशचलन का अभाव है । तहां अपने स्थान कौ छोडि अन्य स्थान होना, सो स्थान-चलन कहिए । प्रदेशनि का चंचलरूप होना सो प्रदेशचलन कहिए । बहुरि धर्मादिक द्रव्य गति, स्थिति, अवगाह क्रिया के मुख्य साधक हैं ।

जीव पुद्गलनि कं जो गति, स्थिति, अवगाह क्रिया हो है; ताकौ निमित्त मात्र ही है, सो कहिए है —

जत्तस्स प्हं ठत्तस्स, आसणं णिवसगस्सं वसदी वा ।  
गदिठाणोग्गहकरणे, धम्मतिथं साधगं होदि ॥५६७॥

यातस्य पंथाः तिष्ठतः, आसनं निवसकस्य वसतिर्वा ।

गतिस्थानावगाहकरणे, धर्मत्रयं साधकं भवति ॥५६७॥

टीक — जैसे गमन करनेवालों कौ पंथा जो मार्ग, सो कारण है । तिष्ठनेवाली कौ आसन जो स्थान, सो कारण है । निवास करनेवालों कौ वसतिका जो वसने का क्षेत्र, सो कारण है । तैसे गति, स्थिति, अवगाह के कारण धर्मादिक द्रव्य है । जैसे ते पंथादिक आप गमनादि नाही करै है; जीवनि कौ प्रेरक होइ गमनादि नाई करावै है । स्वयमेव जे गमनादि करै, तिनको कारणभूत हो है । सो कारण इतना ही, जो जहां पंथादिक होइ, तहां ही वे गमनादिरूप प्रवर्तै । तैसे धर्मादिक द्रव्य आप गमनादि नाही करै है; पुद्गलनि कौ प्रेरक होइ गमनादिक क्रिया नाही करावै हैं; स्वयमेव ही गमनादिक क्रियारूप प्रवर्तते जे जीव पुद्गल, तिनकौ सहकारी कारण हो है । सो कारण इतना ही जो धर्मादिक द्रव्य जहां होइ, तहां ही गमनादि क्रियारूप जीव पुद्गल प्रवर्तै है ।

वत्तणहेदू कालो, वत्तणगुणमविय दव्वणिचयेसु ।

कालाधारेणैव य, वट्ठंति हु सव्वदव्वाणि ॥५६८॥

वर्तनाहेतु. कालः, वर्तनागुणमवेहि द्रव्यनिचयेषु ।

कालाधारेणैव च, वर्तते हि सर्वद्रव्याणि ॥५६८॥

टीका — णिच् प्रत्यय सयुक्त जो वृत्तञ् धातु, ताका कर्म विपं वा भाव विपे वर्तना शब्द निपजै है, सो याका अर्थ यहु जो वर्तै वा वर्तन मात्र होइ, ताकी वर्तना कहिए । सो धर्मादिक द्रव्य अपने अपने पर्यायिनि की निष्पत्ति विपे स्वयमेव वर्तमान है । तिनकै बाह्य कोई कारणभूत उपकार बिना सो प्रवृत्ति संभवे नाही, तातें तिनकै, तिस प्रवृत्ति करावने कौ कारण काल द्रव्य है; जैसे वर्तना काल का उपकार जानना । इहा णिच् प्रत्यय का अर्थ यहु - जो द्रव्यनि का पर्याय वर्तै है, ताका वर्तानेवाला काल है ।

तहां प्रश्न — जो जैसै शिष्य पढै है; अर उपाध्याय पढावै है । तहां दोऊनिकै पठनक्रिया देखिए है । तैसै धर्मादिक द्रव्य प्रवर्तै है अर काल प्रवर्तावै है; तौ धर्मादिक द्रव्य की ज्यौ काल कैं भी तिनि पर्यायनि का प्रवर्तनरूप क्रिया का सद्भाव आया ।

तहां उत्तर — जो असैं नाही है । इहां निमित्तमात्र वस्तु की हेतु का कर्ता कहिए है । जैसै शीतकाल विषै शीत करि शिष्य पढने कौ समर्थ न भए; तहां कारीषा के अग्नि का निमित्त भया । तब वे पढने लग गए । तहा निमित्त मात्र देखि ऐसा कहिए जो कारीषा की अग्नि शिष्यनि कौ पढावै है; सो कारीषा की अग्नि आप पढनेरूप क्रियावान न हो है । तिनिके पढने कौ निमित्तमात्र है । तैसै काल आप क्रियावान न हो है । काल के निमित्त तै वे स्वयमेव परिणवै हैं । तातें ऐसा कहिए है । जो तिनिकौ काल प्रवर्तावै है ।

बहुरि तिस काल का निश्चय कैसे होइ ?

सो कहिए है - समय, घडी इत्यादिक क्रियाविशेष, तिनिकौ लोक विषै समयादिक कहिए है । बहुरि समय, घडी इत्यादि करि जे पचनादि क्रिया होइ, तिनिकौ लोक विषै पाकादिक कहिए है । तहा तिनि विषै काल ऐसा जो शब्द आरोपण कीजिए है । समय काल, घडी काल, पाक काल इत्यादि कहिए है, सो यहु व्यवहार काल मुख्य काल का अस्तित्व कौ कहै है । जातै गौण है, सो मुख्य की सापेक्षा कौ धरै है । जैसै किसी पुरुष कौ सिंह कह्या, तौ तहां जानिए है, जो कोई सिंह नामा पदार्थ जगत विषै पाइए है । असैं काल का निश्चय कीजिए है । प्रत्यक्ष केवली जानै है ।

बहुरि षट् द्रव्य की वर्तना कौ कारण मुख्य काल है । वर्तना गुण द्रव्यसमूह विषै ही पाइए है; असैं होतै काल का आधार करि सर्व द्रव्य प्रवर्तै है । अपने अपने पर्यायरूप परिणमै है; यातै परिणामनरूप जो क्रिया, ताकों परत्व<sup>१</sup> अर अपरत्व जो आगें पीछैपना, सो काल का उपकार है ।

इहां प्रश्न जो क्रिया का परत्व - अपरत्व तौ जीव पुद्गल विषै है, धर्मादिक अमूर्तीक द्रव्यनि विषै कैसे संभवै ? सो कहै हैं ।

१. तत्त्वार्थसूत्र मे—'वर्तनापरिणाम क्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य' अ. ५ सूत्र २२, ।

धम्माधम्मादीणं, अगुरुगलहुगं तु छिंहं वि वड्ढोहिं ।  
हाणीहिं वि वड्ढंतो, हायंतो वट्टदे जम्हा ॥५६६॥

धम्मं धम्मादीनामगुरुकलघुकं तु षड्भिरपि वृद्धिभिः ।  
हानिभिरपि वर्धमानं हीयमानं वर्तते यस्मात् ॥५६९॥

टीका—जातै धर्म अधर्मादिक द्रव्यनि कै अपने द्रव्यत्व कौ कारणभूत शक्ति के विशेष रूप जे अगुरुलघु नामा गुण के अविभाग प्रतिच्छेद, ते अनंत भागवृद्धि आदि पदस्थान पतित वृद्धि करि तौ बधै है । अर अनंतभागहानि आदि पदस्थान पतित हानि करि घटै है, तातै तहा अैसे परिणामन विषे भी मुख्य काल ही कौ कारण जानना ।

ण य परिणमदि सयं सो, ण य परिणामेइ अणमणोहिं ।  
विविहपरिणामियाणं, हवदि हु कालो सयं हेदू ॥५७०॥

न च परिणमति स्वयं स, न च परिणमयति अन्यदन्यः ।  
विविधपरिणामिकानां, भवति हि कालः स्वयं हेतुः ॥५७०॥

टीका — सो कालसंक्रम जो पलटना, ताका विधान करि अपने गुणनि करि परद्रव्यरूप होइ नाही परिणवै है । बहुरि परद्रव्य के गुणनि कौ अपने विषे नाही परिणमावै है । बहुरि हेतुकर्ता प्रेरक होइकरि भी अन्य द्रव्य कौ अन्य गुणनि करि सहित नाही परिणमावै है । तो नानाप्रकार परिणमनि कौ धरै जे द्रव्य स्वयमेव परिणमे है, तिनकौ उदासीन सहज निमित्त मात्र हो है । जैसे मनुष्य के प्रभात मगंधी क्रिया कौ प्रभातकाल कारण है । क्रियारूप तौ स्वमेव मनुष्य ही प्रवर्तै है, परन्तु तिनिकौ निमित्त मात्र प्रभात का काल हो है, तैसे जानना ।

कालं अस्सिय दव्वं, सगसगपज्जायपरिणदं होदि ।  
पज्जायावट्ठाणं, सुद्धणये होदि खणमेत्तं ॥५७१॥

कालमाश्रित्य द्रव्यं, स्वकस्वकपर्यायपरिणत भवति ।  
पर्यायावस्थानं, शुद्धनयेन भवति क्षणमात्रम् ॥५७१॥

टीका — काल का निमित्तरूप आश्रय पाठ, जीवादिक ... कीय पर्यायरूप परिणत है । तिस पर्याय का जो अवस्थान, ... ऋजुसूत्रनय करि अर्थ पर्याय अपेक्षा एक समय मात्र जानना ।

व्यवहारो य वियप्पो, भेदो तह पज्जओ त्ति एयट्ठो ।  
व्यवहार-अवट्ठाण-दिठ्ठी हु व्यवहारकालो दु ॥५७२॥

व्यवहारश्च विकल्पो, भेदस्तथा पर्याय इत्येकार्थः ।  
व्यवहारावस्थानस्थितिर्हि व्यवहारकालस्तु ॥५७२॥

टीका — व्यवहार अर विकल्प अर भेद अर पर्याय ए सर्व एकार्थ है । इनि शब्दनि का एक अर्थ है । तहा व्यजन पर्याय का अवस्थान जो वर्तमानपना, ताकरि स्थिति जो काल का परिमाण, सोई व्यवहार काल है ।

अवरा पज्जायठिदी, खणमेत्तं होदि तं च समओ त्ति ।  
दोण्हमणूणमद्विकमकालप्रमाणं हवे सो दु ॥५७३॥

अवरा पर्यायस्थितिः, क्षणमात्रं भवति सा च समय इति ।  
द्व्योरेण्वोरतिक्रमकालप्रमाणं भवेत् स तु ॥५७३॥

टीका — द्रव्यनि कै जघन्य पर्याय की स्थिति क्षण मात्र है । सो क्षण नाम समय का है । समीप तिष्ठती दोय परमाणू मद गमनरूप परिणई, जेता काल विषे परस्पर उल्लघन करै, तिस काल प्रमाण का नाम समय है ।

इहा प्रसग पाइ दोय गाथा कहै है—

राभ एय पयेसत्थो, परमाणू मंदगइपवट्ठंतो ।  
वीयमणंतरखेत्तं, जावदियं जाति तं समयकालो ॥१॥

आकाश का एक प्रदेश विषे तिष्ठता परमाणू मंदगतिरूप परिणई, सो तिस प्रदेश के अनतरि दूसरा प्रदेश, ताकौ जेता काल करि प्राप्त होइ, सो समय नामा काल है ।

सो प्रदेश कितना है ? सो कहै है—

जेत्ती वि खेतमेत्तं, अणुणा रुद्धं खु गयणादब्बं च ।  
तं च पदेसं भणियं, अवरावरकारणं जस्स ॥२॥

जिस परमाणू के आगे पीछे कौ कारण ऐसा आकाश द्रव्य आकाश विषै ऐसा कहिए है, जो यह आकाश इस परमाणू के आगे है, यह पीछे है, सो आकाश द्रव्य, तिस परमाणू करि जितना रुकै, व्याप्त होइ, तिस क्षेत्र का नाम प्रदेश कह्या है ।

आगे व्यवहार काल कौ कहै है—

आवलिअसंखसमया, संखेज्जावलिसमूहमुस्सासो ।  
सत्तुस्सासा थोवो, सत्तत्थोवा लवो भणियो ॥५७४॥

आवलिरसंख्यसमया, संख्येयावलिसमूह उच्छ्वासः ।  
सत्तोच्छ्वासाः स्तोकाः, सप्तस्तोका लवो भणितः ॥५७४॥

टीका — जघन्ययुक्तासंख्यात प्रमाण समय, तिनिका समूह, सो आवली है ।  
बहुरि सख्यात आवली का समूह सो उश्वास है । सो उश्वास कैसा है ?

उक्तं च—

अड्ढस्स अणलसस्स य गिरुवहदस्स य हवेज्ज जीवस्स ।  
उस्सासाणिस्सासो, एगो पाणो त्ति आहीदो ॥१॥

जो कोई मनुष्य आढ्य-सुखी होइ, आलस्य रोगादि करि रहित होइ, स्वा-  
धीन होइ, ताका सासोस्वास नामा एक प्राण कह्या है, ताका काल जानना ।  
बहुरि सात उस्वास का समूह, सो स्तोक नामा काल है । बहुरि सात स्तोक का  
का समूह, सो लव नामा काल है ।

अट्ठत्तीसद्धलवा, नाली बेनालियो मुहुत्तं तु ।  
एगसमयेण हीणं, भिण्णमुहुत्तं तदो सेसं ॥५७५॥

अष्टत्रिंशदर्धलवा, नाली द्विनालिको मुहूर्तस्तु ।  
एकसमयेन हीनो, भिन्नमुहूर्तस्ततः शेषः ॥५७५॥

टीका — साढा अडतीस लवनि का समूह, सो नाली है । नाली नाम घटिका  
का है । बहुरि दोय घटिका समूह, सो मुहूर्त है । इस मुहूर्त में एक समय घटाइये तब

भिन्न मुहूर्त हो है वा याकौ उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त कहिए । यातें आगै दोय समय घाटि मुहूर्त आदि अंतर्मुहूर्त के विशेष जानने । इहां प्रासांगिक गाथा कहै है—

ससमयमावलिअवरं, समऊणमुहुत्तयं तु उक्कस्सं ।  
मज्झासंखवियप्पं, वियाण अंतोमुहुत्तमिणं ॥

एक समय अधिक आवली मात्र जघन्य अंतर्मुहूर्त है । वहरि एक समय घाटि मुहूर्त मात्र उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त है । मध्य समय विषे दोय समय सहित आवली तै लगाइ, दोय समय घाटि मुहूर्त पर्यंत असंख्यात भेद लीए, मध्य अंतर्मुहूर्त है । असै जानहु ।

दिवसो पक्खो मासो, उडु अयणं वस्समेवमादी हु ।  
संखेज्जासंखेज्जाणंताओ होदि ववहारो ॥५७६॥

दिवसः पक्षो मासः, ऋतुरयनं वर्षमेवमार्दिह ।  
संख्येयासंख्येयानंता भवंति व्यवहाराः ॥५७६॥

टीका — तीस मुहूर्त मात्र अहोरात्र है । मुख्यपनै पंचदश अहोरात्र मात्र पक्ष है । दोय पक्ष मात्र एक मास है । दोय मास मात्र एक ऋतु हो है । तीन ऋतु मात्र एक अयन हो है । दोय अयन मात्र एक वर्ष हो है । इत्यादि आवली तै लगाइ संख्यात, असंख्यात, अनंत पर्यंत अनुक्रम तैं श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, केवलज्ञान का विषय भूत व्यवहार काल जानना ।

ववहारो पुण कालो, माणुसखेत्तमिह जाणिदव्वो दु ।  
जोइसियाणं चारे, ववहारो खलु ससाणो त्ति ॥५७७॥

व्यवहारः पुनः कालः, मानुषक्षेत्रे ज्ञातव्यस्तु ।  
ज्योतिष्काणां चारे, व्यवहारः खलु समान इति ॥५७७॥

टीका — वहरि व्यवहार काल मनुष्य क्षेत्र विषे प्रगटरूप जानने योग्य हैं; जातें मनुष्यक्षेत्र विषे ज्योतिषी देवनि का चलने का काल अर व्यवहार काल समान है ।

व्यवहारो पुण तिविहो, तीदो वट्ठंतगो भविस्सो दु ।  
तीदो संखेज्जावलिहदसिद्धाणं प्रमाणो दु ॥५७८॥

व्यवहारः पुनस्त्रिविधोऽतीतो वर्तमानो भविष्यंस्तु ।

अतीतः संख्येयावलिहृतसिद्धानां प्रमाणं तु ॥५७८॥

टीका — बहुरि व्यवहार काल तीन प्रकार है अतीत, अनागत, वर्तमान । तहां अतीत काल सिद्ध राशि कौ संख्यात आवली करि गुणें, जो प्रमाण होइ, तितना जानना । कैसे ? सो कहिए है — छह महीना अर आठ समय माही छ सैं आठ जीव सिद्ध हो है; तो जीव राशि के अनंतवे भाग प्रमाण सर्व सिद्ध केते काल में भये ? जैसे त्रैराशिक करना । तहां प्रमाण राशि छ सैं आठ, फलराशि छह महीना आठ समय, इच्छा राशि सिद्धनि का प्रमाण, सो फल राशि कौ इच्छाराशि करि गुणें, प्रमाणाशिश का भाग दीए, लब्धराशि संख्यात आवली करि सिद्धनि कौ गुणें जो प्रमाण होइ, तितना आया । सोई अनादि तें लगाइ अतीत काल का परिमाण जानना ।

समयो हु वट्ठमाणो, जीवादो सब्बपुग्गलादो वि ।  
भावी अणंतगुणिदो, इदि व्यवहारो हवे कालो ॥५७९॥

समयो हि वर्तमानो, जीवात् सर्वपुद्गलादपि ।

भावी अनन्तगुणित, इति व्यवहारो भवेत्कालः ॥५७९॥

टीका — वर्तमान काल एक समय मात्र जानना । बहुरि भावी जो अनागत काल, सो सर्व जीवराशि तैं वा सर्व पुद्गलराशि तैं भी अनंतगुणा जानना । जैसे व्यवहार काल तीन प्रकार कह्या ।

कालो वि य ववएसो, सब्बारूवओ हवदि णिच्चो ।  
उत्पण्णप्पद्धंसी, अवरो दीहंतरट्ठाई ॥५८०॥

काल इति च व्यपदेशः, सद्भावप्ररूपको भवति नित्यः ।

उत्पन्नप्रध्वंसी अपरो दीर्घान्तरस्थायी ॥५८०॥

टीका — काल ऐसा जो लोक विषे कहना है, सो मुख्य काल का अस्तित्व का कहनहारा है । मुख्य बिना गौण भी न होइ । जो सिंह पदार्थ ही न होइ तो यह पुरुष सिंह ऐसा कैसे कहने में आवैं सो मुख्य काल द्रव्य करि नित्य है, तथापि पर्याय



करि उत्पाद व्यय कौ धरै है । तातै उत्पन्न-प्रध्वंसी कहिए है । बहुरि व्यवहार काल है, सो वर्तमान काल अपेक्षा उत्पाद - व्यय रूप है । तातै उत्पन्न-प्रध्वंसी है । बहुरि अतीत, अनागत, अपेक्षा बहुत काल स्थिति कौ धरै है । तातै दीर्घातिर स्थायी है । इहां प्रासांगिक श्लोक कहिये है—

निमित्तमांतरं तत्र, योग्यता वस्तुनि स्थिता ।  
बहिर्निश्चयकालस्तु, निश्चितं तत्त्वदर्शभिः ॥

तीहिं वस्तु विषे तिष्ठती परिणमनरूप जो योग्यता, सो अंतरंग निमित्त है । बहुरि तिस परिणमन का निश्चय काल बाह्य निमित्त है । अैसे तत्त्वदर्शीनि करि निश्चय कीया है । इत्युपलक्षणानुवादाधिकारः ।

छद्मवावट्ठाणं, सरिसं त्रिकालअत्थपज्जाये ।  
व्यंजनपज्जाये वा, मिलिदे ताणं ठिदित्तादो ॥५८१॥

षट्द्रव्यावस्थानं, सदृशं त्रिकालार्थपर्याये ।  
व्यंजनपर्याये वा, मिलिते तेषां स्थितित्वात् ॥५८१॥

टीका - अवस्थान नाम स्थिति का है; सो षट् द्रव्यनि का अवस्थान समान है । काहे तै ? सो कहिए है - सूक्ष्म वचन अगोचर क्षणस्थायी अैसे तौ अर्थपर्याय अर स्थूल, वचन गोचर चिरस्थायी अैसे व्यंजनपर्याय, सो त्रिकाल संबंधी अर्थ पर्याय वा व्यंजन पर्याय मिलै, तिनि सर्व ही द्रव्यनि की स्थिति हो है । तातै सर्व द्रव्यनि का अवस्थान समान कह्या । सर्व द्रव्य अनादिनिधन है ।

आगे इस ही अर्थ कौ दृढ करै है—

एय-द्वियम्मि जे, अत्थ-पज्जया वियण-पज्जया चा वि ।  
तीदाणागद-भूदा, तावदियं तं हवदि दव्वं<sup>१</sup> ॥५८२॥

एकद्रव्ये ये, अर्थपर्याया व्यंजनपर्यायाश्चापि ।  
अतीतानागतभूताः तावत्तद् भवति द्रव्यम् ॥५८२॥

टीका — एक द्रव्य विषै जे गुणनि के परिणमनरूप पटस्थानपतित वृद्धि-हानि लीए अर्थ पर्यायि, बहुरि द्रव्य के आकारादि परिणमनरूप व्यंजन पर्यायि, ते अतीत-अनागत अपि शब्द तै वर्तमान संबधी यावन्मात्र है; तावन्मात्र द्रव्य जानना । जातैं द्रव्य तिनतै जुदा है नाही, सर्व पर्यायिनि का समूह सोई द्रव्य है । इति स्थित्य-धिकारः ।

आगासं वज्जित्ता, सबवे लोगस्मि चेव णत्थि बहिं ।  
वावी धम्माधम्मा, णवट्ठिदा अचलिदा णिच्चा ॥५८३॥

आकाशं वर्जयित्वा, सर्वाणि लोके चैव न संति बहिः ।  
व्यापिनौ धर्माधर्मौ, अवस्थितावचलितौ नित्यौ ॥५८३॥

टीका — अब क्षेत्र कहै है; सो आकाश बिना अवशेष सर्वद्रव्य लोक विपै ही हैं, बाह्य अलोक विषै नाही है । तिन विषै धर्म द्रव्य, अधर्मद्रव्य तिल विपै तेल की ज्यों सर्व लोक विषै व्याप्त है; तातै व्यापी कहिए । बहुरि निजस्थान तै स्थानांतर विषै चले नाही है; तातैं अवस्थित है । बहुरि एक स्थान विपै भी प्रदेशनि का चंचलपना, तिनके नाही है; तातै अचलित है । बहुरि त्रिकाल विषै विनाश नाही है; तातै नित्य है । अैसें धर्म, अधर्म द्रव्य जानने । इहां प्रासंगिक श्लोक—

औपश्लेषिकवैषयिकावभिव्यापक इत्यपि ।  
आधारस्त्रिविधः प्रोक्तः, कटाकाशतिलेषु च ॥

आधार तीन प्रकार है — औपश्लेषिक, वैषयिक, अभिव्यापक । तहां चटाई विषै कुमार सोवै है, अैसा कहिए, तहा औपश्लेषिक आधार जानना । बहुरि आकाश विषै घटादिक द्रव्य तिष्ठैं हैं, अैसा कहिए, तहां वैषयिक आधार जानना । बहुरि तिल विषै तेल है, अैसा कहिए; तहां अभिव्यापक आधार जानना । सो इहा तिलनि विषै तेल की ज्यों लोकाकाश के सर्व प्रदेशनि विपै धर्म, अधर्म द्रव्य अपने प्रदेशनि करि व्याप्त है । तातै इहां अभिव्यापक आधार है । याही तै आचार्यने धर्म अधर्म द्रव्य कौ व्यापी कहा है ।

लोगस्स असंखेज्जदिभागप्पहुदिं तु सव्वलोगो त्ति ।  
अप्पपदेसविप्पणसंहारे वावडो जीवो ॥५८४॥

लोकस्यासंख्येयभागप्रभृतिस्तु सर्वलोक इति ।

आत्मप्रदेशविसर्पणसंहारे व्यापृतो जीवः ॥५८४॥

टीका — जीव का क्षेत्र कहै हैं, सो शरीरमात्र अपेक्षा तो सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की जघन्य अवगाहना तै लगाइ, एक एक प्रदेश बधता उत्कृष्ट महामत्स्य की अवगाहना पर्यंत क्षेत्र जानना । बहुरि ताके ऊपरि समुद्धात अपेक्षा वेदना समुद्धातवाले का एक एक प्रदेश क्षेत्र विषै बधता बधता महामत्स्य की अवगाहना तै तिगुणा लंबा, चौड़ा क्षेत्र पर्यंत क्षेत्र जानना । बहुरि ताके ऊपर एक एक प्रदेश बधता बधता मारणांतिक समुद्धातवाले का स्वयंभू रमण समुद्र का बाह्य स्थंडिल क्षेत्र विषै तिष्ठता जो महामत्स्य, सो सप्तमनरक विषै महारौरव नामा श्रेणीबद्ध विला प्रति कीया जो मारणांतिक समुद्धात तीहि विषै पाच सै योजन चौड़ा, अढाई सै योजन ऊंचा, प्रथम वक्रगति विषै एक राजू, द्वितीय वक्र विषै आधा राजू, तृतीय वक्र विषै छह राजू, लंबाई लीएं जो उत्कृष्ट क्षेत्र हो है; तहां पर्यंत क्षेत्र जानना । बहुरि ताके ऊपरि केवलिसमुद्धात विषै लोकपूरण पर्यंत क्षेत्र जानना । सो अंसै सर्व भेदरूप क्षेत्र विषै अपने प्रदेशनि का विस्तार - संकोच होतैं जीवद्रव्य व्यापृतं कहिए व्यापक हो है । संकोच होतैं स्तोक क्षेत्र विषै आत्मा के प्रदेश अवगाहरूप तिष्ठै है । विस्तार होतैं ते फैलिकरि घने क्षेत्र विषै तिष्ठै है । जातैं जीव के अवगाहना का भेद वा उपपाद वा समुद्धात भेद सर्व ही संभवै है । तातैं पूर्वोक्त जीव का क्षेत्र जानना ।

पुद्गलद्रव्याणां पुन, एयपदेशादि होंति भजणिज्जा ।

एकैकको दु पदेशो, कालाणूणं ध्रुवो होदि ॥५८५॥

पुद्गलद्रव्याणां पुनरेकप्रदेशादयो भवन्ति भजनीयाः ।

एकैकस्तु प्रदेशः, कालाणूनां ध्रुवो भवति ॥५८५॥

टीका — पुद्गलद्रव्यनि का एक प्रदेशादिक यथासंभव भजनीय कहिए भेद करने योग्य क्षेत्र जानना, सो कहिए है — दोय अणू का स्कंध एक प्रदेश विषै तिष्ठै वा दोय प्रदेशनि विषै तिष्ठै, बहुरि तीन परमाणूनि का स्कंध एक प्रदेश वा दोय प्रदेश वा तीन प्रदेश विषै तिष्ठै, अंसै जानना । बहुरि कालाणू एक एक लोकाकाश का प्रदेश विषै एक एक पाइए है, सो ध्रुवरूप है, भिन्न भिन्न सत्त्व धरै है; तातैं तिनि का क्षेत्र एक एक प्रदेशी है—

संखेज्जासंखेज्जाणंता वा होंति पोग्गलपदेसा ।

लोगागासेव ठिदी, एगपदेसो अणुस्स हवे ॥५८६॥

संखेयासंखेयानंता वा भवंति पुद्गलप्रदेशाः ।

लोकाकाशे एव, स्थितिरेकप्रदेशोऽणोर्भवेत् ॥५८६॥

टीका - दोय अणू का स्कंध तै लगाइ, पुद्गल स्कंध संख्यात, असख्यात, अनंत परमाणूरूप है । तथापि ते वे सर्व लोकाकाश ही विषै तिष्ठै हैं । जैसै संपूर्ण जल करि भर्या हूवा पात्र विषै क्रम तै गेरे हुवे लवण, भस्मी, सूई आदि एक क्षेत्रावगाहरूप तिष्ठै हैं; तैसैं जानना । बहुरि अविभागी परमाणू का क्षेत्र एक ही प्रदेशमात्र हो है-

लोगागासपदेसा, छद्द्वेहिं फुडा सदा होंति ।

सव्वसलोगागासं, अण्णेहिं विवज्जियं होदि ॥५८७॥

लोकाकाशप्रदेशाः, षट्द्रव्यैः स्फुटाः सदा भवंति ।

सर्वमलोकाकाशमन्यैर्विवर्जितं भवति ॥५८७॥

टीका - लोकाकाश के प्रदेश सर्व ही षट्द्रव्यनि करि सदाकाल प्रगट व्याप्त हैं । बहुरि अलोकाकाश सर्व ही अन्य द्रव्यनि करि रहित है । इति क्षेत्राधिकारः ।

जीवा अणंतसंखाणंतगुणा पुग्गला हु तत्तो दु ।

धम्मतिथं एक्केक्कं, लोगपदेसप्पमा कालो ॥५८८॥

जीवा अनंतसंख्या, अनंतगुणाः पुद्गला हि ततस्तु ।

धर्मत्रिकमेकैकं, लोकप्रदेशप्रमः कालः ॥५८८॥

टीका - संख्या कहैं हैं - तहां द्रव्य परिमाण करि जीव द्रव्य अनंत है । बहुरि तिनि तै अनंत गुणो पुद्गल के परमाणू हैं । बहुरि धर्म द्रव्य, अधर्म द्रव्य, आकाश द्रव्य एक-एक ही है, जातै ए तीनौ अखंड द्रव्य है । बहुरि जेते लोकाकाश के प्रदेश है, तितने कालाणू है—

लोगागासपदेसे, एक्केक्के जे ट्ठिया हु एक्केक्का ।

रयणाणं रासी इव, ते कालाणू मुरोयव्वा<sup>१</sup> ॥५८९॥

लोकाकाशप्रदेशे, एकैके ये स्थिता हि एकैकाः ।

रत्नानां राशिरिव, ते कालाणवो मंतव्याः ॥५८९॥

टीका — लोकाकाश का एक-एक प्रदेश विषे जे एक-एक तिष्ठै है । जैसे रत्ननि की राशि भिन्न-भिन्न तिष्ठै, तैसे जे भिन्न-भिन्न तिष्ठै है, ते कालाणू जानने ।

व्यवहारो पुण कालो, पुद्गलद्रव्यादनंतगुणमेतो ।

ततो अणंतगुणिदा, आगासपदेसपरिसंखा ॥५९०॥

व्यवहारः पुनः कालः, पुद्गलद्रव्यादनंतगुणमात्रः ।

तत अनंतगुणिता, आकाशप्रदेशपरिसंख्या ॥५९०॥

टीका — बहुरि व्यवहार काल पुद्गल द्रव्य तै अनंत गुणा समयरूप जानना । बहुरि तिनि तैं अनंतगुणी सर्व आकाश के प्रदेशनि की संख्या जाननी ।

लोकागासपदेसा, धर्माधर्मैकजीवगपदेसा ।

सरिसा हु पदेसो पुण, परमाणु-अवट्ठदं खेत्तं ॥५९१॥

लोकाकाशप्रदेशा, धर्माधर्मैकजीवगप्रदेशाः ।

सदृशा हि प्रदेशः, पुनः परमाण्ववस्थितं क्षेत्रम् ॥५९१॥

टीका — लोकाकाश के प्रदेश अर धर्मद्रव्य के प्रदेश अर अधर्मद्रव्य के प्रदेश अर एक जीवद्रव्य के प्रदेश सर्व संख्याकरि समान है, जातै ए सर्व जगच्छ्रेणी का घनप्रमाण है । बहुरि पुद्गल परमाणू जेता क्षेत्र कौ रोकै, सो प्रदेश का प्रमाण है; तातै जघन्य क्षेत्र अर जघन्य द्रव्य अविभागी है ।

आगै क्षेत्र प्रमाण करि छह द्रव्यनि का प्रमाण कीजिए है । तहां जीव द्रव्य अनंतलोक प्रमाण है । लोकाकाश के प्रदेशनि तैं अनंत गुणा हैं । कैसे ? सो त्रैराशिक करि कहिए है—प्रमाण राशि लोक, अर फलराशि एक शलाका, अर इच्छाराशि जीवद्रव्य का प्रमाण । सो फल करि इच्छा कौ गुणौ, प्रमाण का भाग दीए, लब्ध-राशि जीवराशि कौ लोक का भाग दीजिए, इतना आया, सो यह शलाका का परिमाण भया । बहुरि प्रमाण राशि एक शलाका, फलराशि लोक, अर इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका का प्रमाण, सो पूर्वोक्त शलाका का प्रमाण जीवराशि कौ लोक का भाग दीए, अनंत पाए, सो जानना । इस अनंत कौ फलराशि लोक करि गुणिए

अरु प्रमाण राशि एक का भाग दीजिए, तब लब्धराशि अनंतलोक प्रमाण भया; तातें जीव द्रव्य अनंतलोक प्रमाण कहे । असै ही अन्यत्र काल प्रमाणादिक विषे त्रैराशिक करि साधन करि लेना । बहुरि जीवनि तै पुद्गल अनंत गुणे है । बहुरि धर्म, अधर्म, लोकाकाश अरु काल द्रव्य ए लोकमात्र प्रदेशनि कौ धरै है । बहुरि व्यवहार काल पुद्गल द्रव्य तै अनंत गुणा है । बहुरि अलोकाकाश का प्रदेश काल तै अनंत गुणा है ।

बहुरि काल प्रमाण करि जीवद्रव्य का प्रमाण कहिए है - प्रमाणाश्रय अतीतकाल, फलराशि एक शलाका, इच्छाराशि जीवनि का परिमाण, इहां लब्धराशिप्रमाण शलाका अनंत भई । बहुरि प्रमाणाश्रय एक शलाका, फलराशि अतीतकाल, इच्छाराशि पूर्वोक्त शलाका प्रमाण, सो पूर्वोक्त प्रकार फल करि इच्छा कौ गुणै, प्रमाण का भाग दीएं, लब्धराशि प्रमाण अतीत काल तै अनंत गुणा जीवनि का प्रमाण जानना । इनि तै पुद्गल द्रव्य अरु व्यवहार काल के समय अरु अलोकाकाश के प्रदेश अनंत गुणे अनंत गुणे क्रम तै अनंत अतीत काल मात्र जानने ।

बहुरि धर्मादिक का प्रमाण कहिए है - प्रमाण कल्पकाल, फल एक शलाका, इच्छा लोक प्रमाण, तहां लब्धप्रमाण शलाका असंख्यात भई । बहुरि प्रमाण एक शलाका, फल कल्पकाल, इच्छा पूर्वोक्त शलाका प्रमाण, सो यथोक्त करता लब्धराशि असंख्यात कल्पप्रमाण, धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल ए चार्यौ जानने । बीस कोडाकोडी सागर के संख्याते पत्य भए, तीहि प्रमाण कल्पकाल है । इसतै असंख्यात गुणे धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल के प्रदेश हैं ।

बहुरि भाव प्रमाण करि जीवद्रव्य का प्रमाण विषे प्रमाणाश्रय जीवद्रव्य का प्रमाण, फल एक शलाका, इच्छा केवलज्ञान लब्धप्रमाण शलाका अनंत, बहुरि प्रमाण राशि शलाका का प्रमाण फलराशि केवलज्ञान, इच्छाराशि एक शलाका, सो यथोक्त करता लब्धराशि प्रमाण केवलज्ञान के अनंतवे भागमात्र जीवद्रव्य जानने । ते पुद्गल, काल, अलोकाकाश की अपेक्षा चारि बार अनंत का भाग केवलज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कौ दीएं, जो प्रमाण आवै, तितने जीवद्रव्य है । तिति तै अनंत गुणे पुद्गल है । तिति तै अनंत गुणे काल के समय है । तिति तै अनंत गुणे अलोकाकाश के प्रदेश है । तेऊ केवलज्ञान के अनंतवें भाग ही है । बहुरि धर्मादिक का प्रमाण विषे प्रमाण लोक, फल एक शलाका, इच्छा अवधिज्ञान के भेद,

लब्धप्रमाण शलाका असंख्यात भई । बहुरि प्रमाणराशि शलाका का प्रमाण, फल राशि अवधिज्ञान के भेद, इच्छाराशि एक शलाका, सो यथोक्त करना अवधिज्ञान के जेते भेद हैं, तिनि के असंख्यातवें भाग प्रमाण धर्म, अधर्म, लोकाकाश, काल उनि च्यार्यों के एक-एक प्रदेशनि का प्रमाण भया । इति संख्याधिकारः ।

**सर्वमरुवी द्रव्यं, अवट्ठदं अचलिआ पदेसा वि ।**

**रुवी जीवा चलिया, ति-वियप्पा होति हु पदेसा ॥५६२॥**

सर्वमरूपि द्रव्यमवस्थितमचलिताः प्रदेशा अपि ।

रूपिणो जीवाश्चलितास्त्रिविकल्पा भवन्ति हि प्रदेशाः ॥५६२॥

टीका - सर्व अरूपी द्रव्य जो मुक्त जीव अर धर्म अर अधर्म अर आकाश अर काल सो अवस्थित है, अपने स्थान तें चलते नाही । बहुरि उनिके प्रदेश भी अचलित ही है; एक स्थान विषे भी चलित नाही हैं । बहुरि रूपी जीव, जे संसारी जीव ते चलित है; स्थान तें स्थानांतर विषे गमनादि करे हैं । बहुरि संसारी जीवनि के प्रदेश तीन प्रकार है । विग्रह गति विषे सो सर्व चलित ही है । बहुरि अयोग-केवली गुणस्थान विषे अचलित ही है । बहुरि अविशेष जीव रहे, तिनि के आठ प्रदेश तौ अचलित है । अरशेष प्रदेश चलित हैं । (योगरूप परिणमन तें) ? इस आत्मा के अन्य प्रदेश तौ चलित हो है अर आठ प्रदेश अकंप ही रहें है ।

**पोग्गल-द्रव्वम्हि अणू, संखेज्जादी हवन्ति चलिदा हु ।**

**चरिम-महवक्खंधम्मि य, चलाचला होति पदेसा ॥५६३॥**

पुद्गलद्रव्ये अणवः, संख्यातादयो भवन्ति चलिता हि ।

चरममहास्कन्धे च, चलाचला भवन्ति हि प्रदेशाः ॥५६३॥

टीका - पुद्गल द्रव्य विषे परमाणू अर द्व्यणुक आदि संख्यात, असंख्यात, अनंत परमाणू के स्कन्ध, ते चलित है । बहुरि अंत का महास्कन्ध विषे केई परमाणू अचलित है, अपने स्थान तें त्रिकाल विषे स्थानांतर कौ प्राप्त न होई । बहुरि केई परमाणू चलित है; ते यथायोग्य चंचल हो है ।

१. व, घ प्रति मे 'योगरूप परिणमन तें' इतना ज्यादा है ।

अणुसंख्यासंखेज्जाणंता य अणेज्जगेहि अंतरिया ।  
आहार-तेज-भासा-मण-कम्मइया ध्रुवखंधा ॥५६४॥

सांतरणिरंतरेण य, सुण्णा पत्तेयदेहध्रुवसुण्णा ।  
बादरणिगोदसुण्णा, सुहुमणिगोदा णभो महक्खंधा ॥५६५॥ जुम्मं ।

अणुसंख्यातासंख्यातानन्ताश्च अग्राह्यकाभिरन्तरिताः ।  
आहारतेजोभाषामनःकार्माण ध्रुवस्कन्धाः ॥५६४॥

सान्तरनिरन्तरया च, शून्या प्रत्येकदेह-ध्रुवशून्याः ।  
बादरनिगोदशून्याः, सूक्ष्मनिगोदा नभो महास्कन्धाः ॥५६५॥ युग्मम्

टीका — पुद्गल द्रव्य के भेदरूप जे वर्गणा, ते तेईस भेद लीएं है — १ अणु-  
वर्गणा, २ संख्याताणुवर्गणा, ३ असंख्याताणुवर्गणा, ४ अनन्ताणुवर्गणा, ५ आहारव-  
र्गणा, ६ अग्राह्यवर्गणा, ७ तेजस शरीरवर्गणा, ८ अग्राह्यवर्गणा, ९ भाषावर्गणा, १०  
अग्राह्य वर्गणा, ११ मनोवर्गणा, १२ अग्राह्य वर्गणा, १३ कार्माण वर्गणा, १४ ध्रुव  
वर्गणा, १५ सांतरनिरन्तर वर्गणा, १६ शून्य वर्गणा, १७ प्रत्येक शरीरवर्गणा, १८  
ध्रुवशून्य वर्गणा, १९ बादरनिगोद वर्गणा, २० शून्यवर्गणा, २१ सूक्ष्मनिगोद वर्गणा,  
२२ नभो वर्गणा, २३ महास्कंधवर्गणा ए तेईस भेद जानने ।

इहां प्रासंगिक श्लोक कहिये हैं—

मूर्तिमत्सु पदार्थेषु, संसारिण्यपि पुद्गलः ।  
अकर्मकर्मनोकर्मजातिभेदेषु वर्गणा ॥१॥

मूर्तीक पदार्थनि विषे अर संसारी जीव विषे पुद्गल शब्द प्रवर्तै है । वहरि  
अकर्म जाति के कर्मजाति के नोकर्म जाति के जे पुद्गल, तिनि विषे वर्गणा शब्द प्रवर्तै  
है । सो अब इहां तेईस जाति की वर्गणानि विषे केते केते परमाणू पाइये ? सो  
प्रमाण कहिये है—

तहां अणुवर्गणा तौ एक एक परमाणू रूप है । इस विषे जघन्य, उत्कृष्ट,  
मध्य भेद भी नाही है ।



बहुरि अन्य बाईस वर्गणानि विषै भेद है । तहां जघन्य अर उत्कृष्ट भेद, सो कहिये है - जघन्य के ऊपरि एक एक परमाणू उत्कृष्ट का नीचा पर्यंत वधावने तें जेते भेद होहिं, तितने मध्य के भेद जानने ।

बहुरि संख्याताणुवर्गणा विषै जघन्य दोय अणूनि का स्कंध है । अर उत्कृष्ट उत्कृष्ट संख्यातें अणूनि का स्कंध है ।

बहुरि असंख्याताणुवर्गणा विषै जघन्य परीतासंख्यात परमाणूनि का स्कंध है, उत्कृष्ट उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात परमाणूनि का स्कंध है । इहां विवक्षित वर्गणा ल्यावने के निमित्त गुणकार का ज्ञान करना होइ तौ विवक्षित वर्गणा कौ ताके नीचे की वर्गणा का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, सोई गुणकार का प्रमाण जानना । तिस गुणकार करि नीचे की वर्गणा कौ गुणै, विवक्षित वर्गणा हो है । जैसे विवक्षित तीन अणू का स्कंध अर नीचे दोय परमाणू का स्कंध, तहां तीन कौ दोय का भाग दीए ड्योढ पाया; सोई गुणकार है । दोय कौ ड्योढ करि गुणिए, तब तीन होइ; अैसे सर्वत्र जानना । बहुरि इहां संख्याताणु, असंख्याताणु वर्गणा विषै जघन्य का भाग उत्कृष्ट कौ दीएं, जो प्रमाण आवै, सोई जघन्य का गुणकार जानना । इस गुणकार करि जघन्य कौ गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अनंताणुवर्गणा विषै उत्कृष्ट असंख्याताणु वर्गणा तें एक परमाणू अधिक भये जघन्य भेद हो है । अर जघन्य कौ सिद्ध राशि का अनंतवां भाग मात्र जो अनंत, ताकरि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि आहार वर्गणा विषै उत्कृष्ट अनंताणुवर्गणा तें एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । बहुरि इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवां भाग मात्र जो अनंत, ताका भाग दीये, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तें अधिक भये उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्यवर्गणा है । तीहिं विषै उत्कृष्ट आहारवर्गणा तें एक परमाणू अधिक भए, जघन्य भेद हो है । बहुरि जघन्य भेद कौ सिद्धराशि का अनंतवां भागमात्र जो अनंत करि गुणै उत्कृष्ट भेद हो है ।

१ घ प्रति मे यहा 'जघन्य' शब्द अधिक मिलता है ।

बहुरि ताके ऊपरि तैजसशरीरवर्गणा है । तीहि विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए, जघन्य भेद हो है । इस जघन्य भेद कौ सिद्धराशि का अनंतवां भाग मात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है; तीहि विषै उत्कृष्ट तैजस वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवा भागमात्र अनंत करि गुणौ उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि भाषा वर्गणा है; तीहि विषै उत्कृष्ट अग्राह्यवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवा भागमात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है । तीहि विषै उत्कृष्ट भाषावर्गणा तै एक परमाणू अधिक भये जघन्यभेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवा भागमात्र अनंत करि गुणौ उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि मनोवर्गणा है, तीहि विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवा भागमात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि अग्राह्य वर्गणा है । तीहि विषै उत्कृष्ट मनोवर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवा भाग प्रमाण अनंत करि गुणौ, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि कार्माणवर्गणा है; तीहि विषै उत्कृष्ट अग्राह्य वर्गणा तै एक परमाणु अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सिद्धराशि का अनंतवां भागमात्र अनंत का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य तै अधिक भए उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि ध्रुववर्गणा है, तहां उत्कृष्ट कार्माण वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ अनंतगुणा जीव राशिमात्र अनंत करि गुणौ, उत्कृष्ट भेद हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि सांतर निरन्तर वर्गणा है; तहां उत्कृष्ट ध्रुववर्गणा ते एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ अनन्तगुणा जीवराशि का प्रमाण करि गुणौ, उत्कृष्ट भेद हो है ।

अैसे जो ए अणुवर्गणा ते लगाइ पंद्रह वर्गणा कही, ते सदृश परिमाण कौ लीएं, एक एक वर्गणा लोक विषैं अनन्त पुद्गल राशि का वर्गमूल प्रमाण पाइए है । परि किछू घाटि घाटि क्रम तें पाइए है । तहां प्रतिभागहार सिद्ध अनन्तवां भागमात्र है । सो इस कथन कौ विशेष करि आगे कहिएगा ।

बहुरि ताके ऊपरि शून्यवर्गणा है, तहां उत्कृष्ट सांतर निरन्तर वर्गणा ते एक एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ अनन्तगुणा जीवराशि का प्रमाण करि गुणौ, उत्कृष्ट भेद हो है । अैसें सोलह वर्गणा सिद्ध भई ।

बहुरि ताके ऊपरि प्रत्येक शरीर वर्गणा है; सो एक शरीर एक जीव का होइ, ताकौ प्रत्येक शरीर कहिए । तहां जो विस्रसोपचय सहित कर्म वा नोकर्म, तिनिका एक स्कंध ताकौ प्रत्येक शरीर वर्गणा कहिये । तहां शून्यवर्गणा का उत्कृष्ट ते एक परमाणू करि अधिक जघन्य भेद हो है; सो यह जघन्य भेद कहां पाइये है ? सो कहिए है—

जाका कर्म के अश क्षयरूप भए है, अैसा कोई क्षपितकर्माश जीव, सो कोटि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी मनुष्य होइ, अतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष के ऊपरि सम्यक्त्व अर सयम दोऊ एक काल अंगीकार करि सयोग केवली भया, सो किछू घाटि कोटि पूर्व पर्यंत औदारिक शरीर अर तैजस शरीर की तो जो प्रकार कह्या है, तैसे निर्जरा करत सता अर कार्माण शरीर की गुण श्रेणी निर्जरा करत संता, अयोगकेवली का अत समय कौ प्राप्त भया, ताकै आयु कर्म, औदारिक, तैजस शरीर अधिक नाम, गोत्र, वेदनीय कर्म के परिमाणूनि का समूह रूप जो औदारिक, तैजस, कार्माण, इनि तीन शरीरनि का स्कंध, सो जघन्य प्रत्येक शरीर वर्गणा है । बहुरि इस जघन्य कौ पत्य का असख्यातवां भागकरि गुणौ, उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा हो है । सो कहां पाइए ? सो कहिए है—

नदीश्वर नामा द्वीप विषैं अकृत्रिम चैत्यालय है । तहां धूप के घड़े हैं । तिनि विषैं वा स्वयभूरमण द्वीप विषैं उपजे दावानल, तिनि विषैं जे बादर पर्याप्त अग्नि-

काय के जीव है, तहा असंख्यात आवली का वर्ग प्रमाण जीवनि के शरीरनि का एक स्कंध है । तहा गुणितकर्मांश कहिए, जिनके कर्म का संचय बहुत है, अैसे जीव बहुत भी होंइ तौ आवली का असंख्यातवां भागमात्र होंइ, तिनिका विस्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण इनि तीनि शरीरनि का जो एक स्कंध, सो उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा है । बहुरि ताके ऊपरि ध्रुव शून्य वर्गणा है । तहां उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा तें एक परमाणू अधिक भएं जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सब मिथ्यादृष्टी जीवनि का जो प्रमाण, ताकौ असंख्यात लोक का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तीहि करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है । बहुरि ताके ऊपरि बादर निगोद वर्गणा है, सो बादर निगोदिया जीवनि का विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म परिमाणूनि का जो एक स्कंध, ताकौ बादर निगोद वर्गणा कहिए है । सो ध्रुवशून्य वर्गणा तौ एक परमाणू अधिक जघन्य बादरनिगोदवर्गणा है । सो कहां पाइए है ? सो कहै है—

क्षय कीएं हैं कर्म अंश जानै, अैसा कोई क्षपितकर्मांश जीव, सो कोडि पूर्व वर्ष प्रमाण आयु का धारी मनुष्य होइ, गर्भ तै अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष के ऊपरि सम्यक्त्व अर संयम कौ गुणपत अंगीकार करि, किछू घाटि कोडि पूर्ववर्ष पर्यंत कर्मनि की गुणश्रेणी निर्जराकौ करत संता जब अंतर्मुहूर्त सिद्धपद पावने का रह्या, तब क्षपक श्रेणी चढि उत्कृष्ट कर्मनिर्जरा कौ करत संता क्षीणकषाय गुणस्थानवर्ती भया, तिसके शरीर विषै जघन्य वा उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुलवी एक बंधनरूप बधे पाइए है, जातै सर्व स्कंधनि विषै पुलवी असंख्यात लोक प्रमाण कहे है । बहुरि एक एक पुलवी विषै असंख्यात लोक प्रमाण शरीर पाइए है । बहुरि एक एक शरीर विषै सिद्धनि तै अनंतगुणै ससारी राशि के असंख्यातवे भागमात्र जीव पाइए है । सो आवली का असंख्यातवां भाग कौ असंख्यात लोक करि गुणै, तहा शरीरनि का प्रमाण भया । ताकौ एक शरीर विषै निगोद जीवनि का जो प्रमाण, ताकरि गुणै, जो प्रमाण भया, तितना तहा एक स्कंध विषै बादर निगोद जीवनि का प्रमाण जानना । तिति जीवनि कै क्षीणकषाय गुणस्थान का पहिला समय विषै अनन्त जीव स्वयमेव अपना आयु का नाश तै मरै है । बहुरि दूसरे समय जेतै पहिले समय मरे, तिनिकौ आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितने पहिले समय मरे जीवनि तै अधिक मरै है । इस ही अनुक्रम तै क्षीणकषाय का प्रथम समय तै लगाइ, पृथक्त्व आवली का प्रमाण काल पर्यंत मरै है । पीछै पूर्व पूर्व समय संवधी मरे जीवनि के प्रमाण कौ आवली का संख्यातवां भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ

तितने तितने पहिले पहिले समय तै अधिक समय समय तै मरै है । सो क्षीणकपाय गुणस्थान का काल आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण अवशेष रहे तहा ताई इस ही अनुक्रम तै मरै है । ताके अनन्तर समय विषे पल्य का असंख्यातवां भाग करि पहिले पहिले समय संबंधी जीवनि कौ गुणों, जितने होंहि तितने तितने मरै हैं । तहा पीछें संख्यात पल्य करि पूर्व पूर्व समय सम्बन्धी मरे जीवनि कौ गुणों, जो जो प्रमाण होइ, तितने तितने मरै है । सो अैसे क्षीणकपाय गुणस्थान का अत समय पर्यंत जानना । तहा अंत के समय विषे जे जुदे जुदे असंख्यात लोक प्रमाण शरीरनि करि संयुक्त अैसे आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुलवी, तिनिविषे जे गुणितकर्मांश जीव मरे, तिनकरि हीन अवशेष जे अनंतानन्त जीव गुणित कर्मांश रहे । तिनिका विस्रसोपचय-सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का जो एक स्कंध, सोई जघन्य बादर निगोद वर्गणा है । बहुरि इस जघन्य कौ जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग करि गुणों, उत्कृष्ट बादर निगोद वर्गणा हो है । सो कैसे पाइए ? सो कहिए हैं—

स्वयभूरमण नामा द्वीप विषे जे मूलाने आदि देकरि सप्रतिष्ठित प्रत्येक वन-स्पती है, तिनके शरीरनि विषे एक बंधन विषे बधे जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग-मात्र पुलवी है । तिनि विषे तिष्ठते जे गुणितकर्मांश जीव अनंतानन्त पाइये हैं । तिनिका विस्रसोपचयसहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का एक स्कंध, सोई उत्कृष्ट बादर निगोद वर्गणा है । बहुरि ताके ऊपरि तृतीय शून्य-वर्गणा है । तहा उत्कृष्ट बादरनिगोदवर्गणा तै एक प्रदेश अधिक भए, जघन्य भेद हो है । इस जघन्य कौ सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणों, उत्कृष्ट भेद हो है । बहुरि ताके ऊपरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा है, सो सूक्ष्मनिगोदिया जीवनि का विस्रसोपचय सहित कर्म नोकर्म परमाणूनि का एक स्वरूप जानना । तहां उत्कृष्ट शून्यवर्गणातै एक परमाणू अधिक भए जघन्य भेद हो है । सो जघन्य भेद कैसे पाइए है ? सो कहिए है —

जल विषे वा स्थल विषे वा आकाश विषे जहा तहा एक बंधन विषे बधे, अैसे जे आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुलवी, तिनिविषे क्षपितकर्मांश अनंतानन्त सूक्ष्म निगोदिया जीव है । तिनिका विस्रसोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि का परमाणूनि का जो एक स्कंध, सोई जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा है ।

इहां प्रश्न — जो बादरनिगोद उत्कृष्ट वर्गणा विषे पुलवी श्रेणी के असंख्या-तवे भाग प्रमाण कहे अर जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा विषे पुलवी आवली का असं-

ख्यातवां भाग प्रमाण कहे, तातै बादरनिगोद वर्गणा के पहिलै याकौ कहना युक्त था । जातै पुलवीनि का बहुत प्रमाण तै परमाणूनि का भी बहुत प्रमाण संभवै है ?

ताकां समाधान — जो यद्यपि पुलवी इहां घाटि कहे है; तथापि बादरनिगोद वर्गणा सम्बन्धी निगोद शरीरनि तै सूक्ष्मनिगोद वर्गणा संबन्धी शरीरनि का प्रमाण सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग गुणा है । तातै तहां जीव भी बहुत है । तिनि जीवनि कै तीन शरीर संबधी परमाणू भी बहुत है । तातै बादरनिगोद वर्गणा के पीछे सूक्ष्म निगोद वर्गणा कही है । बहुरि जघन्य सूक्ष्मनिगोद वर्गणा कौ पत्य का असंख्यातवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोद वर्गणा हो है, सो कैसे पाइये है ? सो कहिए है-

यहां महामत्स्य का शरीर विषै एक स्कधरूप आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पुलवी पाइये है । तहां गुणितकर्मश अनंतानंत जीवनि का विससोपचय सहित औदारिक, तैजस, कार्माण तीन शरीरनि के परमाणूनि का एक स्कंध, सोई उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोद वर्गणा हो है ।

बहुरि ताके ऊपरि नभोवर्गणा है । तहां उत्कृष्ट सूक्ष्मनिगोदवर्गणा तै एक अधिक भए जघन्य भेद हो है । इस जघन्य भेद कौ जगत्प्रतर का असंख्यातवा भाग करि गुणै, उत्कृष्ट भेद हो है । बहुरि ताके ऊपरि महास्कध है । तहां उत्कृष्ट नभो-वर्गणा तै एक परमाणू अधिक भए, जघन्यभेद हो है । बहुरि इस जघन्य कौ पत्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, ताकौ जघन्य विषै मिलाये, उत्कृष्ट महास्कंध के परमाणूनि का प्रमाण हो है । अैसे एक पक्ति करि तेईस वर्गणा कही ।

आगै जो अर्थ कह्या, तिस ही कौ सकोचन करि तिन वर्गणानि ही का उत्कृष्ट, जघन्य, मध्य भेदनि कौ वा अल्प-बहुत्व कौ छह गाथानि करि कहै है—

**परमाणुवर्गणम्मि ण, अवरोक्कस्सं च सेसगे अत्थि ।**

**गेज्झमहक्खंधाणां, वरमहियं सेसगं गुणियं ॥५६६॥**

परमाणुवर्गणायां न, अवरोत्कृष्टं च शेषके अस्ति ।

ग्राह्यमहास्कंधानां, वरमधिकं शेषकं गुणितम् ॥५६६॥

टीका — परमाणु वर्गणा विषै जघन्य उत्कृष्ट भेद नाही है; जातै अणू अभेद है । बहुरि अवशेष बाईस वर्गणानि विषै जघन्य उत्कृष्ट भेद पाइए हें । तहा ग्राह्य

जीवादोणंतगुणो, ध्रुवादितिहं असंखभागो दु ।  
पल्लस्स तदो तत्तो, असंखलोगवहिदो मिच्छो ॥५६६॥

जीवादनंतगुणो, ध्रुवादितिसृणामसंख्यभागस्तु ।  
पल्यस्य ततस्ततः, असंख्यलोकावहिता मिथ्या ॥५९९॥

टीका - बहुरि ध्रुवादिक तीन वर्गणानि विषे जीवराशि ते अनंतगुणा गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणो, उत्कृष्ट हो है । बहुरि प्रत्येक शरीर वर्गणा विषे पल्य का असंख्यातवा भागमात्र गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणो, उत्कृष्ट हो है । काहे तै ? सो कहिए है । प्रत्येक शरीर वर्गणा विषे जो कार्माण शरीर है । तातै समयप्रबद्ध गुणितकर्माणि जीव संबंधी है । तातै जघन्य समय प्रबद्ध के परमाणू का प्रमाण तै याका प्रमाण पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग गुणा है । ताकी सहनानी बत्तीस का अक है । तातै इहां पल्य का असंख्यातवां भाग का गुणकार कह्या है । बहुरि ध्रुव, शून्य वर्गणा विषे असंख्यात लोक का भाग मिथ्यादृष्टी जीवनि कौ दीए, जो प्रमाण होइ, तितना गुणकार है । याकरि जघन्य कौ गुणो उत्कृष्ट हो है ।

सेढी-सूई-पल्ला-जगपदरासंखभागगुणगारा ।  
अप्पप्पणअवरादो, उक्कस्से होति नियमेण ॥६००॥

श्रेणी-सूची-पल्य, जगत्प्रतरासंख्यभागगुणकाराः ।  
आत्मात्मनोवरादुत्कृष्टे भवंति नियमेन ॥६००॥

टीका - जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग, बहुरि सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग, बहुरि पल्य का असंख्यातवा भाग, बहुरि जगत्प्रतर का असंख्यातवा भाग ए अनुक्रम तै बादरनिगोदवर्गणा अर शून्यवर्गणा अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा अर नभोवर्गणा इति विषे गुणकार है । इनिकरि अपने-अपने जघन्य कौ गुणो, उत्कृष्ट भेद हो है । इहां शून्यवर्गणा विषे सूच्यगुल का असंख्यातवां भाग गुणकार कह्या है, सो सूक्ष्मनिगोद वर्गणा का जघन्य एक घाटि भये उत्कृष्ट शून्यवर्गणा हो है; तातै कह्या है । बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा विषे पल्य का असंख्यातवा भाग गुणकार कह्या है; सो ताके उत्कृष्ट का कार्माण संबंधी समयप्रबद्ध गुणितकर्माणि जीव संबंधी है । तातै कह्या है । अंसै ए तेईस वर्गणा एक पंक्ति अपेक्षा कही । अब नानापक्ति अपेक्षा कहिए

है । नाना पंक्ति कहा ? जो ए वर्गणा कही, ते वर्गणा लोक विषै वर्तमान कोई एक काल में केती-केती पाइए है ? ऐसी अपेक्षा करि कहै हैं —

परमाणु वर्गणा तै लगाइ, सांतरनिरंतरवर्गणा पर्यंत पन्द्रह वर्गणा समान परमाणुनि का स्कंधरूप लोक विषै पुद्गलद्रव्य का जो प्रमाण, ताका जो वर्गमूल, ताका अनंत गुणा कीए, जो प्रमाण होइ, तितनी-तितनी पाइए है । तहां इतना विशेष है जो ऊपरि किछू घाटि-घाटि पाइए है । तहां प्रतिभागहार सिद्धराशि का अनंतवां भाग (मात्र) है । सो कहिए है —

अणुवर्गणा लोक विषै जेती पाइए है, तिस प्रमाण कौ सिद्धराशि का अनंतवां भाग का भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितना अणुवर्गणा का परिमाण में घटाए, जो प्रमाण रहै, तितनी दोय परमाणू का स्कंधरूप संख्याताणुवर्गणा जगत विषै पाइए है । इसकौ सिद्धराशि का अनंतवां भाग का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना तिस ही में घटाइए, जो प्रमाण रहै, तितनी तीन परमाणू का स्कंध रूप संख्याताणु वर्गणा लोक विषै पाइए है । इस ही अनुक्रम तै एक-एक अधिक परमाणू का स्कंध का प्रमाण करते जहां उत्कृष्ट संख्याताणुवर्गणा भई, तहां जो प्रमाण भया, ताकौं सिद्ध राशि का अनंतवा भाग का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तितना तिस ही में घटाए, जो अवशेष रहै, तितना जघन्य असंख्याताणु वर्गणा लोक विषै पाइए है । याकौ तैसै ही भाग देइ घटाए, जो प्रमाण रहै, तितनी मध्य असंख्याताणु वर्गणा का प्रथम भेद रूप वर्गणा लोक विषै पाइए है । सो तैसै ही एक-एक अधिक परमाणूनि का स्कंध का प्रमाण अनुक्रम तै सातरनिरंतर वर्गणा का उत्कृष्ट पर्यंत जानना । सामान्यपनै सर्व जुदी-जुदी वर्गणानि का प्रमाण अनंत पुद्गल राशि का वर्गमूल मात्र जानना । बहुरि प्रत्येक शरीर वर्गणा का जघन्य तौ पूर्वोक्त अयोग केवली का अन्त समय विषै पाइए; सो उत्कृष्ट पनै च्यारि पाइए है । बहुरि उत्कृष्ट प्रत्येक शरीर वर्गणा स्वयंभूरमण द्वीप का दावानलादिक विषै पाइए; सो उत्कृष्ट पनै आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पाइए है । बहुरि बादर निगोद वर्गणा का जघन्य तौ पूर्वोक्त क्षीण कपाय गुणस्थान का अंत समय विषै पाइए; सो उत्कृष्ट पनै च्यारि पाइए है । अर बादर निगोद वर्गणा का उत्कृष्ट महामत्स्यादिक विषै पाइए; सो उत्कृष्ट पनै आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण पाइए है । बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा जघन्य तौ वर्तमान काल विषै जल में वा स्थल में वा आकाश में आवली का अनन्यातवा भाग प्रमाण पाइए है, अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा उत्कृष्ट भी आवली का



असंख्यातवां भाग प्रमाण पाइए है । इहां प्रत्येक शरीर, बादरनिगोद, सूक्ष्मनिगोद, इनि तीन सचित्तवर्गणानि का मध्य भेद वर्तमान काल विषै असंख्यात लोक प्रमाण पाइए है । बहुरि महास्कध वर्गणा वर्तमान काल में जगत विषै एक ही है । सो भवनवासीनि के भवन देवनि के विमान, आठ पृथ्वी, मेरु गिरि, कुलाचल इत्यादिकनि का एक स्कध रूप है ।

इहां प्रश्न — जो जिनि कै असंख्यात, असंख्यात योजननि का, अन्तर पाइए, तिनिका एक स्कध कैसे संभवै है ?

ताकां उत्तर — जो मध्य विषै सूक्ष्म परमाणू हैं, सो वे विमानादिक अर सूक्ष्म परमाणू, तिनि सबनि का एक बंधान है । तातै अंतर नाही, एक स्कध है । सो ऐसा जो एक स्कध है, ताही का नाम महास्कध है ।

**हेट्ठिमउक्कस्सं पुण, रूवहियं उवरिमं जहण्णं खु ।**

**इदि तेवीसवियप्पा, पुग्गलदब्बा हु जिणदिट्ठा ॥६०१॥**

अधस्तनोत्कृष्टं पुनः, रूपाधिकमुपरिमं जघन्यं खलु ।

इति त्रयोविंशतिविकल्पानि, पुद्गलद्रव्याणि हि जिनदिष्टानि ॥६०१॥

टीका — तेईस वर्गणानि विषै अणुवर्गणा बिना अवशेष वर्गणानि कै जो नोचे का उत्कृष्ट भेद होइ, तामें एक अधिक भए, ताके ऊपरि जो वर्गणा, ताका जघन्य भेद हो है । अैसे तेईस वर्गणा भेद को लीए पुद्गल द्रव्य, जिनदेवने कहे है । इनि विषै प्रत्येक वर्गणा अर बादरनिगोद वर्गणा अर सूक्ष्मनिगोद वर्गणा ए तीन सचित्त है; जीव सहित है, सो इनिका विशेष कहिए है —

अयोग केवली का अंतसमय विषै पाइये ऐसी जघन्य प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ भी वा न भी होइ, जो होइ तौ एक ही होइ वा दोय होइ वा तीन होइ उत्कृष्ट होइ तौ च्यारि होइ । बहुरि जघन्य तै एक परमाणू अधिक ऐसी मध्य प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा उत्कृष्ट पनै च्यारि होइ, अैसे ही एक एक परमाणू का वधाव तै इस ही अनुक्रम तै जव अनत वर्गणा होंइ, तब ताके अनंतर जो एक परमाणू अधिक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा च्यारि वा उत्कृष्टपनै पाच होइ । अैसे एक एक परमाणू बधतै अनतवर्गणा पर्यंत पंच ही उत्कृष्ट है । ताके अनन्तरि जो

वर्गणा सो होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन वा उत्कृष्ट छह होइ । अंसै अनंतवर्गणा पर्यंत उत्कृष्ट छह ही होंइ । बहुरि इस ही अनुक्रम तें अनंत अनंत वर्गणा पर्यंत उत्कृष्ट सात, आठ, सात, छह, पाच, च्यारि, तीन, दोय वर्गणा जगत विषै समान परमाणूनि का प्रमाण लीएं हो है । यहु यवमध्य प्ररूपणा है, जैसे यव नामा अन्न का मध्य मोटा हो है, तंसै इहां मध्य विषै वर्गणा आठ कहीं । पहिले वा पीछे थोड़ी थोड़ी कही । तातें याकौं यवमध्य प्ररूपणा कहिए है । सो यहु प्ररूपणा मुक्तिगामी भव्य जीवनि की अपेक्षा है । अंसै प्रत्येक वर्गणा समान संसारी जीवनि कै न पाइए है ।

इहां तें आगैं संसारी जीवनि कै पाइए अंसी प्रत्येक वर्गणा कहिये है—

सो पूर्वे कथन कीया, ताके अनंतरि पूर्वे प्रत्येक वर्गणा तें एक परमाणू अधिकता लीएं, जो प्रत्येक वर्गणा सो जगत विषै होइ, वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन इत्यादि उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण होइ । अंसै ही अनन्तवर्गणा भए, अनंतरि जो प्रत्येक वर्गणा, सो लोक विषै होइ वा न होई, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण पूर्व प्रमाण तें एक अधिक होइ । अंसै अनंत अनंत वर्गणा भए, एक एक अधिक प्रमाण उत्कृष्ट विषै होता जाय, जहां यवमध्य होइ, तहां ताई अंसै जानना । यवमध्य विषै जेता परमाणू का स्कंधरूप प्रत्येक वर्गणा भई, तितने तितने परमाणूनि का स्कंधरूप प्रत्येक वर्गणा जगत विषै होइ वा न होइ, जो होइ, तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण होइ । यहु प्रमाण इस तें जो पूर्वप्रमाण तातें एक अधिक जानना । अंसै अनंत वर्गणा भए, अनंतरि जो वर्गणा भई, सो जगत विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भागप्रमाण होइ । सो यहु प्रमाण यवमध्य संबंधी पूर्वप्रमाण तें एक घाटि जानना । अंसै एक एक परमाणू के बंधने तें एक एक वर्गणा होइ । सो अनंत अनंत वर्गणा भए उत्कृष्ट विषै एक एक घटाइये जहां ताई उत्कृष्ट प्रत्येक वर्गणा होइ, तहां ताई अंसै करना । उत्कृष्ट प्रत्येक वर्गणा लोक विषै होइ वा न होइ, जो होइ तौ एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण होइ । अंसै प्रत्येक वर्गणा भव्य सिद्ध, अभव्य सिद्धनि की अपेक्षा कही । बहुरि बादरनिगोद वर्गणा का भी कथन प्रत्येक वर्गणावत जानना, किछु विशेष नाही । जैसे प्रत्येक वर्गणा विषै अयोगी का अतसमय विषै सभवती जघन्य वर्गणा, ताकौं आदि देकरि भव्य सिद्ध अपेक्षा कथन कीया है । तैसे इहां क्षीणकषायी का अंत समय विषै संभवती तिसका शरीर के आश्रित जघन्य बादरनिगोदवर्गणा ताकौं

आदि देकरि भव्य सिद्ध अपेक्षा कथन जानना । बहुरि सामान्य ससारी अपेक्षा दोऊ जायगे समानता संभव है । बहुरि सूक्ष्मनिगोद वर्गणा का कथन कहिए है—

सो इहां भव्य सिद्ध अपेक्षा तो कथन है नाही । तातें जघन्य सूक्ष्मनिगोदवर्गणा लोक विषैं होइ वा न होइ, जो होइ तो एक वा दोय वा तीन उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण होइ । आगे जैसे संसारीनि की अपेक्षा प्रत्येक वर्गणा का कथन कीया, तैसे ही यवमध्य ताई अनतानन्त वर्गणा भए, उत्कृष्ट विषैं एक एक बधावना । पीछे उत्कृष्ट सूक्ष्मवर्गणा पर्यंत एक एक घटावना । सामान्यपनै सर्वत्र उत्कृष्ट का प्रमाण आवली का असंख्यातवां भाग कहिये । इहां सर्वत्र संसारी सिद्ध कौं योग्य असी जो प्रत्येक बादर निगोद, सूक्ष्मनिगोद वर्गणा तिनिका यव आकार प्ररूपणा विषैं गुणहानि का गच्छ जीवराशि तैं अनन्त गुणा जानना । नाना गुण हानिशलाका का प्रमाण यवमध्य तैं ऊपरि वा नीचे आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण जानना ।

**भावार्थ —** संसारी अपेक्षा प्रत्येकवर्गणा, बादरनिगोदवर्गणा, सूक्ष्मनिगोदवर्गणा विषैं जो यवमध्य प्ररूपणा कही, तहां लोक विषैं पावने की अपेक्षा जेते एक एक परमाणू बधने रूप जे वर्गणा भेद तनि भेदनि का जो प्रमाण सो तो द्रव्य है । अर जिनि वर्गणानि विषैं उत्कृष्ट पावने की अपेक्षा समानता पाइये, तिनिका समूह सो निषेक, तिनिका जो प्रमाण, सो स्थिति है । बहुरि एक गुणहानि विषैं निषेकनि का जो प्रमाण सो गुणहानि का गच्छ है । ताका प्रमाण जीवराशि तैं अनन्त गुणा है । बहुरि यवमध्य के ऊपरि वा नीचै गुणहानि का प्रमाण, सो नानागुणहानि है । सो प्रत्येक आवली का असंख्यातवां भागमात्र है । अैसे द्रव्यादिक का प्रमाण जानि, जैसे निषेकनि विषैं द्रव्य प्रमाण ल्यावने का विधान है । तैसे उत्कृष्ट पावने की अपेक्षा समान रूप जे वर्गणा, तिनिका प्रमाण यवमध्य तैं ऊपरि वा नीचै चय घटता क्रम लीए जानना ।

इहां प्रश्न — जो इहां तो प्रत्येकादिक तीन सचित्त वर्गणानि के अनते भेद कहे, एक एक भेदरूप वर्गणा लोक विषैं आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण सामान्य पनैं कही । बहुरि पूर्वे मध्यभेदरूप सचित्तवर्गणा सर्व असंख्यात लोक प्रमाण ही कही सो उत्कृष्ट जघन्य बिना सर्व भेद मध्यभेद विषैं आय गए, तहा अैसा प्रमाण कैसे संभवै ?

ताकां समाधान - इहां सर्वभेदनि विपे असा कह्या है, जो होइ भी न भी होइ, होइ तौ एक वा दोय इत्यादि उत्कृष्ट आवली का असंख्यातवा भाग प्रमाण होइ । सो नानाकाल अपेक्षा यहु कथन है । बहुरि तहा एक कोई विवक्षित वर्तमान काल अपेक्षा वर्तमान काल विषे सर्व मध्यभेदरूप प्रत्येकादि वर्गणा असंख्यात लोक प्रमाण ही पाइये है । अधिक न पाइए है । तिनि विषे किसी भेदरूप वर्गणानि की नास्ति ही है । किसी भेदरूप वर्गणा एक आदि प्रमाण लीएं पाइए हैं । किसी भेदरूप वर्गणा उत्कृष्टपने प्रमाण लीएं पाइये है । असा समझना । इस प्रकार तेईस वर्गणा का वर्णन कीया ।

पृथ्वी जलं च छाया, चर्त्तरिन्द्रियविसय-कम्म-परमाणू ।

छ-विवह-भेयं भणियं, पुद्गलद्रव्यं जिणवरेहिं ॥६०२॥

पृथ्वी जलं च छाया, चर्त्तरिन्द्रियविषयकर्मपरमाणवः ।

षड्विधभेदं भणितं, पुद्गलद्रव्यं जिनवरैः ॥६०२॥

टीका - पृथ्वी अर जल अर छाया अर नेत्र बिना च्यारि इन्द्रियनि का विषय अर कार्माण स्कंध अर परमाणू असें पुद्गल द्रव्य छह प्रकार जिनेश्वर देवनि करि कहा है ।

बादरबादर बादर, बादरसुहुमं च सुहुमस्थूलं च ।

सुहुमं च सुहुमसुहुमं, धरादियं होदि छभेयं ॥६०३॥

बादरबादरं बादरं, बादरसूक्ष्मं च सूक्ष्मस्थूलं च ।

सूक्ष्म च सूक्ष्मसूक्ष्मं, धरादिकं, भवति षड्भेदम् ॥६०३॥

टीका - पृथ्वीरूप पुद्गल द्रव्य बादरबादर है । जो पुद्गल स्कंध छेदने कौ भेदने कौ और जायगे ले जाने कौ समर्थ हूजै, तिस स्कंध कौ बादरबादर कहिए । बहुरि जल है, सो बादर है, जो छेदने कौ भेदने कौ समर्थ न हूजै अर और जायगे ले जाने कौ समर्थ हूजै, सो स्कंध, बादर जानने । बहुरि छाया बादर सूक्ष्म है, जे छेदने-भेदने और जायगे ले जाने कौ समर्थ न हूजै, सो बादरसूक्ष्म है । बहुरि नेत्र बिना च्यारि इन्द्रियनि का विषय सूक्ष्म स्थूल है । बहुरि कार्माण के स्कंध, सूक्ष्म है । जो द्रव्य देशावधि परमावधि के गोचर होइ, सो सूक्ष्म है । बहुरि परमाणू सूक्ष्मसूक्ष्म है । जो सर्वावधि के गोचर होइ, सो सूक्ष्म सूक्ष्म है ।

इहा एक एक वस्तु का उदाहरण कहा है । सो पृथ्वी, काष्ठ, पाषाण इत्यादि बादरवादर है । जल, तैल, दुग्ध इत्यादि बादर है । छाया, आतप, चादनी इत्यादि बादरसूक्ष्म है । शब्द गन्धादिक सूक्ष्मवादर है । इन्द्रियगम्य नाही; देशावधि परमावधिगम्य होंहि ते स्कंध सूक्ष्म हैं । परमाणू सूक्ष्मसूक्ष्म है, असै जानने ।

खंधं सयलसमत्थं, तस्स य अद्धं भणंति देसो त्ति ।

अद्धद्धं च पदेसो, अविभागी चेव परमाणू ॥६०४॥

स्कंधं सकलसमर्थं, तस्य चार्धं भणंति देशमिति ।

अर्द्धार्द्धं च प्रदेशमविभागिनं चैव परमाणुम् ॥६०४॥

टीका — जो सर्व अंश करि संपूर्ण होइ, ताकौ स्कंध कहिए । ताका आधा कौ देश कहिये । तिस आधा के आधा कौ प्रदेश कहिए । जाका भाग न होइ, ताकौ परमाणू कहिये ।

भावार्थ — विवक्षित स्कंध विषे संपूर्ण तै एक परमाणू अधिक अर्ध पर्यंत तौ स्कंध संज्ञा है । अर्ध तै लगाय एक परमाणू अधिक चौथाई पर्यंत देश संज्ञा है । चौथाई ते लगाय दोय परमाणू का स्कंध पर्यंत प्रदेश संज्ञा है । अविभागी कौ परमाणू संज्ञा है । इति स्थानस्वरूपाधिकार ।

गदिठाणोग्गहकिरियासाधणभूदं खु होदि धम्म-तियं ।

वत्तणकिरिया-साहणभूदो णियमेण कालो दु ॥६०५॥

गतिस्थानावगाहक्रियासाधनभूतं खलु भवति धर्मत्रयम् ।

वर्तनाक्रियासाधनभूतो नियमेन कालस्तु ॥६०५॥

टीका — क्षेत्र तै क्षेत्रातर प्राप्त होने कौ कारण, सो गति कहिये । गति का अभाव रूप स्थान कहिये । अवकाश विषे रहने कौ अवगाह कहिए । तहां तैसे मत्स्यनि के गमन करने का साधनभूत जल द्रव्य है । तैसे गति क्रियावान जे जीव पुद्गल, तिनके गतिक्रिया का साधनभूत सो धर्मद्रव्य है । बहुरि जैसे पथी जननि के स्थान करने का साधन भूत छाया है । तैसे स्थान - क्रियावान जे जीव पुद्गल, तिनके स्थान क्रिया का साधन भूत अधर्म द्रव्य है । बहुरि जैसे बास करनेवालों के साधनभूत

बसंतिका है । तैसैं अवगाह क्रियावान जे जीव - पुद्गलादिक द्रव्य तिनिकैं अवगाह क्रिया का साधनभूत आकाश द्रव्य है ।

इहां प्रश्न - जो अवगाह क्रियावान तौ जीव - पुद्गल है । तिनिकौ अवकाश देना युक्त कहा है । बहुरि धर्मादिक द्रव्य तौ निष्क्रिय है, नित्य सम्बन्ध कौ धरें हैं, नवीन नाहीं आए, जिनिकौ अवकाश देना संभवै अैसें इहां कैसे कहिये ? सो कही-

ताकां समाधान - जो उपचार करि कहिए है; जैसै गमन का अभाव होते संतै भी सर्वत्र सद्भाव की अपेक्षा आकाश कौ सर्वगत कहिए हैं । तैसै धर्मादिक द्रव्यनि कैं अवगाह क्रिया का अभाव होते संतै भी लोक विषे सर्वत्र सद्भाव की अपेक्षा अवगाह का उपचार कीजिए है ।

इहां प्रश्न - जो अवकाश देना आकाश का स्वभाव है, तौ वज्रादिक करि पाषाणादिक का अर भीति इत्यादिक करि गऊ इत्यादिकनि का रोकना कैसे हो है । सो रोकना तौ देखि रहे है । तातै आकाश तौ तहा भी था, पाषाणादिक कौ अवकाश न दीया, तब आकाश का अवगाह देना स्वभाव न रह्या ?

तहां उत्तर - जो आकाश तौ अवगाह देइ, परन्तु पूर्वे तहां अवगाह करि तिष्ठै है, वज्रादिक स्थूल हैं, तातै परस्पर रोकै है । यामै आकाश का अवगाह देने का स्वभाव गया नाही; जातै तहां ही अनंत सूक्ष्म पुद्गल है, ते परस्पर अवगाह देवें हैं ।

बहुरि प्रश्न - जो अैसे हैं तो सूक्ष्म पुद्गलादिकनि कैं भी अवगाहहेतुत्व स्वभाव आया । आकाश ही का असाधारण लक्षण कैसे कहिए है ?

तहां उत्तर - जो सर्व पदार्थनि कौ साधारण अवगाहहेतुत्व इस आकाश ही का असाधारण लक्षण है । और द्रव्य सर्व द्रव्यनि कौ अवगाह देने कौ समर्थ नाहीं ।

इहां प्रश्न - जो अलोकाकाश तौ सर्व द्रव्यनि कौ अवगाह देता नाहीं, तहां अैसा लक्षण कैसे संभवै ?

ताकां समाधान - जो स्वभाव का परित्याग होइ नाही । तहां कोई द्रव्य होता तौ अवगाह देता, कोई द्रव्य तहां गमनादि न करै, तौ अवगाह कौन कौ देवें तिसका तौ अवगाह देने का स्वभाव पाइए है । बहुरि सर्व द्रव्यनि कौ वर्तना क्रिया का साधन भूत नियम करि काल द्रव्य हैं ।

अण्णोण्णुवयारेण य, जीवा वट्ठन्ति पुग्गलाणि पुणो ।

देहादी-णिव्वत्तण-कारणभूदा हु णियमेण ॥६०६॥

अन्योन्योपकारेण च, जीवा वर्तन्ते पुद्गलाः पुनः ।

देहादिनिर्वर्तनकारणभूता हि नियमेन ॥६०६॥

टीका — बहुरि जीव द्रव्य है, ते परस्पर उपकार करि प्रवर्तै है । जैसे स्वामी तो चाकर कौ धनादिक देवै है, अर चाकर स्वामी का जैसे हित होइ अर अहित का निषेध होइ तैसे करै है; सो अैसे परस्पर उपकार है । बहुरि आचार्य तो शिष्य कौ इहलोक परलोक विषे फल को देनेहारा उपदेश, क्रिया का आचरण करावना अैसे उपकार करै है । शिष्य उन आचार्यनि की अनुकूलवृत्ति करि सेवा करै है । अैसे परस्पर उपकार है; अैसे ही अन्यत्र भी जानना । बहुरि चकार तै जीव परस्पर अनुपकार, जो बुरा करना, तिसरूप भी प्रवर्तै है वा उपकार — अनुपकार दोऊ रूप नाही प्रवर्तै है । बहुरि पुद्गल है, सो देहादिक जे कर्म, नोकर्म, वचन, मन, स्वासोस्वास इनिके निपजावने का नियम करि कारणभूत है । सो ए पुद्गल के उपकार हैं ।

इहां प्रश्न — जो जिनिका आकार देखिये अैसे औदारिकादि शरीर, तिनिकौ पुद्गल कहौ, कर्म तो निराकार है, पुद्गलीक नाही ।

तहां उत्तर — जैसे गोधूमादिक, अन्न - जलादिक मूर्तीक द्रव्य के संबंध तै पचै है, ते गोधूमादिक पुद्गलीक है । तैसे कर्म भी लगुड़, कटकादिक मूर्तीक द्रव्य के संबंध तै उदय अवस्थारूप होइ पचै है, तातै पुद्गलीक ही है ।

वचन दोय प्रकार है — एक द्रव्यवचन १, एक भाववचन २ । तहा भाववचन तो वीर्यातिराय, मति, श्रुत आवरण का क्षयोपशम अर अंगोपाग नामा नामकर्म का उदय के निमित्त तैं हो है । तातै पुद्गलीक है । पुद्गल के निमित्त बिना भाववचन होता नाही । बहुरि भाववचन की सामर्थ्य कौ धरै, अैसा क्रियावान जो आत्मा, ताकरि प्रेरित हुवा पुद्गल बचनरूप परिणवै है, सो द्रव्यवचन कहिए है । सो भी पुद्गलीक ही है, जातै सो द्रव्यवचन कर्ण इन्द्रिय का विषय है, जो इन्द्रियनि का विषय है, सो पुद्गल ही है ।

इहां प्रश्न — जो कर्ण विना अन्य इन्द्रियनि का विषय क्यों न होइ ?

तहां उत्तर — जो जैसे गंध नासिका ही का विषय है, सो रसनादिक करि ग्रंथा न जाय । तैसे शब्द कर्ण ही का विषय हैं, अन्य इन्द्रियनि करि योग्य नाहीं ।

इहां तर्क - जो वचन अमूर्तीक है, तहां कहिए है, ऐसा कहना भी अयुक्त है, जातै वचन मूर्तीक करि ग्रह्या जाय है । वा मूर्तीक द्रव्य करि रुकै है वा नष्ट हो है; तातै मूर्तीक ही है । बहुरि द्रव्य भाव के भेद तै मन भी दोय प्रकार है । तहा भाव-मन तौ लब्धि उपयोग रूप है, सो क्षयोपशमादिक पुद्गलीक निमित्त तै हो है । तातै पुद्गलीक ही है । बहुरि ज्ञानावरण, वीर्यातिराय का क्षयोपशम अर अंगोपाग नामा नामकर्म का उदय, इनिके निमित्त तै गुण - दोष का विचार, स्मरण, इत्यादिकरूप सन्मुख भया, जो आत्मा, ताकौ उपकारी जे पुद्गल, सो मनरूप होइ परिणवै हैं । तातै द्रव्यमन भी पुद्गलीक है ।

इहां कोऊ कहै कि मन तौ एक जुदा ही द्रव्य है, रूपादिकरूप न परिणवै हैं । अणूमात्र है । तहा आचार्य कहै है - तीहि मन स्यों आत्मा का संबंध है कि नाही है? जो संबंध नाही है तौ आत्मा कौ उपकारी न होइ, इन्द्रियनि विषै प्रचानता कौ न धरै और जो संबंध है तो, वह तौ अणूमात्र है, सो एकदेश विषै उपकार करेगा अन्य प्रदेशनि विषै कैसे उपकार करै है ?

तहां तार्किक कहै है - अमूर्तीक, निष्क्रिय आत्मा का एक अदृष्टनामा गुण है । सो अदृष्ट जो कर्म ताका वश करि तिस मन का कुँभार का चक्रवत् परि-भ्रमण करै है, सो ऐसा कहना भी अयुक्त है । अणूमात्र जो होइ ताकै भ्रमण को समर्थता नाही । बहुरि अमूर्तीक निष्क्रिय का अदृष्ट गुण कहा, सो औरनि कै क्रिया का आरंभ करावने कौ समर्थ न होइ । जैसे पवन आप क्रियावान है, सो स्पर्श करि वनस्पती कौ चंचल करै है, सो यह तौ अणूमात्र निष्क्रिय का गुण सो आप क्रियावान नाही, अन्य कौ कैसे क्रियावान प्रवर्तवै है ? तातै मन पुद्गलीक ही है ।

बहुरि वीर्यातिराय अर ज्ञानावरण का क्षयोपशम अर अंगोपांगनामा नामकर्म के उदय, तीहि करि संयुक्त जो आत्मा, ताके निकसतौ जो कंठ सबधी उस्वासरूप पवन, सो प्राण कहिए । बहुरि तीहि पवन करि बाह्य पवन कौ अभ्यंतर करता निस्वासरूप पवन, सो अपान कहिए । ते प्राण-अपान जीवितव्य कौ कारण है । तातै उपकारी है, सो मन अर प्राणापान ए मूर्तीक है । जातै भय के कारण बज्रपातादिक मूर्तीक, तिनितै मन का रुकना देखिए है । बहुरि भय के कारण दुर्गंधादिक, तीहि करि वा हस्तादिक तै मुख के आच्छादन करि वा श्लेष्मादिक करि प्राण-अपान का रुकना देखिये है, तातै दोऊ मूर्तीक ही है । अमूर्तीक होइ तौ मूर्तीक करि रुकना न



संभव है । बहुरि ताही तै आत्मा का अस्तित्व की सिद्धि हो है । जैसे कोई काष्ठादिक करि निपज्या प्रतिबिम्ब, सो चेष्टा करै तौ तहां जानिए यामैं तौ स्वयं शक्ति नाही, चेष्टा करानेवाला कोई पुरुष है । तैसे अचेतन जड शरीर विषै जो प्राणापानादिक चेष्टा हो है, तिस चेष्टा का प्रेरक कोई आत्मद्रव्य अवश्य हैं । अैसे आत्मा का अस्तित्व की सिद्धि हो है । बहुरि सुख, दुःख, जीवित, मरण ए भी पुद्गल द्रव्य ही के उपकार हैं । तहां साता - असाता वेदनीय का उदय तो अंतरंग कारण अर बाह्य इष्ट अनिष्ट वस्तु का संयोग इनिके निमित्त, तैं जो प्रीतिरूप वा आतापरूप होना, सो सुख दुःख है । बहुरि आयुर्कर्म के उदय तै पर्याय की स्थिति कौ धारता जीव के प्राणापान क्रिया विशेष का नाश न होना, सो जीवित कहिए । प्राणापान क्रियाविशेष का उच्छेद होना, सो मरण कहिए । सो ए सुख, दुःख, जीवित, मरण मूर्तीक द्रव्य का निमित्त निकट होत सतैं ही हो है; तातैं पुद्गलीक ही है । बहुरि पुद्गल है, सो केवल जीव ही कौ उपकारी नाहीं, पुद्गल कौ भी पुद्गल उपकारी है । जैसे कासी इत्यादिक कौ भस्मी इत्यादिक अर जलादि कौ कतक फलादिक अर लोहादिक कौ जलादिक उपकारी देखिए हैं । अैसे और भी जानिए हैं । बहुरि औदारिक, वैक्रियिक, आहारक नामा नामकर्म के उदय तै तैजस आहार वर्गणा करि निपजे तीन शरीर है, अर सासोस्वास है । बहुरि तैजस नामा नामकर्म के उदय तै तैजस वर्गणा तै निपज्या तैजस शरीर है । बहुरि कार्माण नामा नामकर्म के उदय तै कार्माण वर्गणा करि निपज्या कार्माण शरीर है । बहुरि स्वर नामा नामकर्म के उदय तै भाषावर्गणा तै निपज्या वचन है । बहुरि नोद्रियावरण का क्षयोपशम करि सयुक्त सैनी जीव के अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तैं मन वर्गणा तै निपज्या द्रव्य मन है, अैसे ए पुद्गल के उपकार है ।

इस ही अर्थ कौ दोय सूत्रनि करि कहै है —

**आहारवर्गणादो, तिण्णि सरीराणि होंति उस्सासो ।**

**णिस्सासो वि य तेजोवर्गणखंधादु तेजंगं ॥६०७॥**

आहारवर्गणात् त्रीणि शरीराणि भवन्ति उच्छ्वासः ।

निश्वासोऽपि च तेजोवर्गणास्कन्धात्तु तेजोऽङ्गम् ॥६०७॥

टीका — तेईस जाति की वर्गणानि विषै आहारक वर्गणा तै औदारिक, वैक्रियिक, आहारक तीन शरीर हो है । अर उस्वास निश्वास हो है । बहुरि तैजस वर्गणा का स्कन्धनि करि तैजस शरीर हो है ।

भास-मण-वर्गणादो, कमेण भाषा मणं च कम्मादो ।  
अट्ठ-विह-कम्मदब्बं, होदि त्ति जिणेहिं णिद्विट्ठं ॥६०८॥

भाषामनोवर्गणातः क्रमेण भाषा सन्तश्च कार्मणतः ।  
अष्टविधद्रव्यं भवतीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६०८॥

टीका — भाषावर्गणा का स्कंधनि करि च्यारि प्रकार भाषा हो है । सतो-  
वर्गणा का स्कंधनि करि द्रव्यमन हो है । कार्माणा वर्गणा का स्कंधनि करि आठ  
प्रकार कर्म हो है, अैसे जिनदेवने कहा है ।

णिद्धतं लुक्खत्तं, बन्धस्स य कारणं तु एयादी ।  
संखेज्जासंखेज्जाणंतविहा णिद्धलुक्खगुणा<sup>१</sup> ॥६०९॥

स्निग्धत्वं रूक्षत्वं, बन्धस्य च कारणं तु एकादयः ।  
संख्येयासंख्येयानन्तविधाः स्निग्धरूक्षगुणाः ॥६०९॥

टीका — बाह्य अभ्यंतर कारण के वश तै जो स्निग्ध पर्याय का प्रगटपना  
करि चिकणास्वरूप होइ, सो स्निग्ध है । ताका भाव, सो स्निग्धत्व कहिये । बहुरि  
रूखारूप होई, सो रूक्ष है ; ताका भाव, सो रूक्षत्व कहिए । सो जल वा, छेली का दूध वा  
गाय का दूध वा भैंसि का दूध वा ऊटणी का दूध वा घृत इनि विषैं स्निग्धगुण की  
अधिकता वा हीनता देखिए है । अर धूलि, वालू, रेत वा तुच्छ पाषाणादिक इनिविषैं  
रूक्षगुण की अधिकता वा हीनता देखिए है । तैसे ही परमाणू विषैं भी स्निग्ध रूक्षगुण  
की अधिकता हीनता पाइए है । ते स्निग्ध - रूक्षगुण द्व्यणुकादि स्कंधपर्याय का परि  
णमन का कारण हो है । बहुरि चकार तै स्कंध तै बिछुरने के भी कारण हो है ।  
स्निग्धरूप दोय परिमाणूनि का वा रूक्षरूप दोय परमाणू का एक रूक्ष वा एक स्निग्ध  
परमाणू का परस्पर जुडनेरूप बंध होतै द्व्यणुक स्कंध हो है । अैसे सख्यात, असख्यात,  
अनते परिमाणूनि का स्कंध भी जानना । तहां स्निग्ध गुण वा रूक्षगुण अंशनि की  
अपेक्षा सख्यात, असख्यात, अनत भेद कौ लीए है ।

एयगुणं तु जहण्णं, णिद्धत्तं विगुण-तिगुण-संखेज्जाऽ- ।  
संखेज्जाणंतगुणं, होदि तहा रुक्खभावं च ॥६१०॥

१. 'स्निग्धरूक्षत्वादयः' तत्त्वार्थसूत्र . अव्याय-४, सूत्र-३३ ।

एकगुणं तु जघन्यं, स्निग्धत्वं द्विगुणत्रिगुणसंख्येयाऽ-  
संख्येयानन्तगुणं, भवति तथा रूक्षभावं च ॥६१०॥

टीका — स्निग्ध गुण जो एक गुण है; सो जघन्य है, जाके एक अंश होइ, ताको एक गुण कहिए । ताको आदि देकरि द्विगुण, त्रिगुण, संख्यातगुण, असंख्यातगुण अनंतगुणरूप स्निग्ध गुण जानना । तैसे ही रूक्षगुण भी जानना । केवलज्ञानगम्य सब तै थोरा जो स्निग्धत्व रूक्षत्व, ताको एक अंश कल्पि, तिस अपेक्षा स्निग्ध-रूक्ष गुण के अंशनि का इहां प्रमाण जानना ।

एवं गुणसंयुक्ता, परमाणू आदिवर्गणम्मि ठिया ।

जोगदुगारां बंधे, दोण्हं बंधो हवे नियमा ॥६११॥

एवं गुणसंयुक्ताः, परमाणव आदिवर्गणायां स्थिताः ।

योग्यद्विकयोः बन्धे, द्वयोर्बन्धो भवेन्नियमात् ॥६११॥

टीका — जैसे स्निग्ध - रूक्ष गुण करि संयुक्त परमाणू, ते प्रथम अणु वर्गणा विषे तिष्ठे है । सो यथायोग्य दोय का बंध स्थान विषे, तिनही दोय परमाणूनि का बंध हो है ।

नियमकरि स्निग्ध-रूक्ष गुण के निमित्त तै सर्वत्र बंध हो है । किछू विशेष नाही । जैसे कोऊ जानैगा, तातै जहां बंध होने योग्य नाही ऐसा निषेध पूर्वक जहां बंध होने योग्य है, तिस विधि कौ कहै है—

णिद्धणिद्धा ण बज्झंति, रुक्खरुक्खा य पोग्गला ।

णिद्धलुक्खा य बज्झंति रुवारूवी य पोग्गला ॥६१२॥

स्निग्धस्निग्धा न बध्यन्ते, रूक्षरूक्षाश्च पुद्गलाः ।

स्निग्धरूक्षाश्च बध्यन्ते, रूप्यरूपिणश्च पुद्गलाः ॥६१२॥

टीका — स्निग्ध गुण युक्त पुद्गलनि करि स्निग्ध गुण युक्त पुद्गल बंध नाही । बहुरि रूक्षगुणयुक्त पुद्गलनि करि रूक्ष गुण युक्त पुद्गल बंध नाही, सो यह कथन सामान्य है । बंध भो हो है । सो विशेष आगे कहैगे । बहुरि स्निग्ध गुण युक्त

पुद्गलनि करि रूक्ष गुण युक्त पुद्गल बंधै है । बहुरि तिनि पुद्गलनि की दोय संज्ञा है - एक रूपी, एक अरूपी ।

तिनि संज्ञानि कौ कहै है-

शिद्धिदरोलीमज्भे, विसरिसजादिस्स समगुणं एकं<sup>१</sup> ।

रूवि त्ति होदि सण्णा, सेसाणं ता अरूवि त्ति ॥६१३॥

स्निग्धेतरावलीमध्ये, विसदृशजातेः समगुण एकः ।

रूपीति भवति संज्ञा, शेषाणां ते अरूपिण इति ॥६१३॥

टीका - स्निग्ध-रूक्ष गुणानि की पंक्ति, तिनके विषे विसदृश जाति कहिए । स्निग्ध के अर रूक्ष के परस्पर विसदृश जाति है, ताके जो कोई एक समान गुण होइ ताको रूपी औसी संज्ञा करि कहिए है । अर समान गुण बिना अवशेष रहे, तिनिकों अरूपी औसी संज्ञा करि कहिए है ।

ताही कौ उदाहरण करि कहैं है-

दोगुणणिद्धाणुस्स य, दोगुणलुक्खाणुगं हवे रूवी ।

इगि-तिगुणादि अरूवी, रुक्खस्स वि तं व इदि जाणे ॥६१४॥

द्विगुणस्निग्धाणोश्च द्विगुणरूक्षाणुको भवेत् रूपी ।

एकत्रिगुणादि. अरूपी, रूक्षस्यापि तद् व इति जानीहि ॥६१४॥

टीका - दूसरा है गुण जाके वा दोय है गुण जाके औसा जो द्विगुण स्निग्ध परमाणू, ताके द्वि गुण रूक्ष परमाणू रूपी कहिए, अवशेष एक, तीन, च्यारि इत्यादि गुण धारक परमाणू अरूपी कहिए । औसै ही द्वि गुण रूक्षाणु के द्वि गुण स्निग्धाणू रूपी कहिए; अवशेष एक, तीन इत्यादिक गुणधारक परमाणू अरूपी कहिए ।

णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिण, लुक्खस्स लुक्खेण दुराहिण<sup>२</sup> ।

णिद्धस्स लुक्खेण हवेज्ज बंधो, जहण्णवज्जे विसमे समे वा ॥६१५॥

१ 'गुणसाम्ये सदृशाणाम्' तत्त्वार्थसूत्र : अध्याय-४, सूत्र-३५ ।

२ 'द्वयधिकादिगुणानातु' तत्त्वार्थसूत्र : अध्याय-४, सूत्र-३६ २ न जघन्यगुणानाम् ॥३४॥

होति खवा इगिसमये, बोहियबुद्धा य पुरिसवेदा य ।

उक्कस्सेणट्ठुत्तरसयप्पमा सगगदो य चुदा ॥६३०॥

पत्तेयबुद्ध-तित्थयर-त्थि-णउंसय-मणोहिणाणजुदा ।

दस-छक्क-वीस-दस-वीसट्ठावीसं जहाकमसो ॥६३१॥<sup>१</sup>

जेट्ठावरबहुमज्झिम-ओगाहणगा दु चारि अट्ठेव ।

जुगवं हवंति खवगा, उवसमंगा अद्धमेदेसिं ॥६३२॥ विसेसयं ।

भवन्ति क्षपका एकसमये, बोधितबुद्धाश्च पुरुषवेदाश्च ।

उत्कृष्टेनाष्टोत्तरशतप्रमाः, स्वर्गतश्च च्युताः ॥६३०॥

प्रत्येकबुद्धतीर्थंकरस्त्रीपुंनपुंसकमनोऽवधिज्ञानयुताः ।

दशषट्कर्त्तिदशविंशत्यष्टाविंशो यथाक्रमशः ॥६३१॥

ज्येष्ठावरबहुमध्यामावगाहा द्वौ चत्वारः अष्टेव ।

युगपद् भवन्ति क्षपका, उपशमका अर्द्धमेतेषाम् ॥६३२॥ विशेषकम् ।

टीका - युगपत् एक समय विषे क्षपक श्रेणीवाले जीव जैसे उत्कृष्टता करि पाइये हैं । बोधित-बुद्ध तौ एक सौ आठ, पुरुषवेदी एक सौ आठ, स्वर्ग तै चय करि मनुष्य होइ क्षपक भए जैसे एक सौ आठ, प्रत्येक बुद्धि ऋद्धि के धारक दश, तीर्थकर छह, स्त्री वेदी बीस, नपुंसक वेदी दश, मनःपर्ययज्ञानी बीस, अवधिज्ञानी अठाईस मुक्त होने योग्य शरीर की उत्कृष्ट अवगाहना के धारक दोय, जघन्य अवगाहना के धारक चारि, सर्व अवगाहना के मध्यवर्ती अैसी अवगाहना के धारक आठ जैसे ए सर्व मिले हुवे चारि सै वत्तीस भए । बहुरि उपशमक इनि तै आधे सर्व पाइए । ताते सर्व मिले हुवे दोय सै सोलह भए पूर्वे गुणस्थाननि विषे एकठे भए जीवनि की सख्या कही थी, इहा अैसा कहा है - जो श्रेणी विषे युगपत् उत्कृष्ट होइ तौ पूर्वोक्त जीव पूर्वोक्त प्रमाण होइ, अधिक न होइ ।

१ गाथा सं. ६३०, ६३१ के लिए पट्खण्डागम - धवला पुस्तक ५ के पृष्ठ क्रम से ३०४, ३११, ३२१ और ३०७, ३२०, २३ देखें ।

आगै सर्वसयमी जीवनि की संख्या कहै हैं—

**सत्तादी अट्ठंता छण्णवमज्झा य संजदा सव्वे ।**

**अंजलि-मौलिय-हत्थो तियरणसुद्धे णमंसासि<sup>१</sup> ॥६३३॥**

सत्तादयः अष्टान्ताः षण्णवमध्यांश्च संयताः सर्वे ।

अंजलिमौलिकहस्तस्त्रिकरणशुद्ध्या नमस्यामि ॥६३३॥

टीका — सात का अंक आदि अर आठ का अंक अंत अर मध्य विषे छह नव के अंक ८६६६६६६७ अैसे लिखै भई तीन घाटि नव कोडि संख्या तीहि प्रमाण जे संयमी छठे गुणस्थान तै लगाइ चौदहवां गुणस्थान पर्यंत है । तिनिकौ अजुली करि मस्तक हस्त लगावतौ संतौ मन, वचन, कायरूप त्रिकरण शुद्धता करि नमस्कार मैं करौ हौ । तहा प्रमत्तवाले ५६३६८२०६, अप्रमत्तवाले २६६६६१०३, चार्यो गुणस्थानवर्ती उपशम श्रेणीवाले ११६६, चार्यों गुणस्थानवर्ती क्षपक श्रेणीवाले २३६२, सयोगी जिन ८६८५०२, मिले हूवे जे (८६६६६३६६) भए ते नव कोडि तीन घाटि विषे घटाए अवशेष पाच सै अठ्याणवै रहे, ते अयोगी जिन जानने ।

आगै च्यारि गतिनि का मिथ्यादृष्टी, सासादन, मिश्र, अविरत गुणस्थानवर्ती तिनकी संख्या का साधक पल्य के भागहार का विशेष कहै हैं — जाका भाग दीजिए ताकौ भागहार कहिए सो आगै जो जो भागहार का प्रमाण कहै है; तिस तिसका पल्य कौ भाग दीजिए, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तहां जीवनि का प्रमाण जानना । जहा भागहार का प्रमाण थोरा होइ, तहां जीवनि का प्रमाण बहुत जानना । जहा भागहार का प्रमाण बहुत होइ, तहां जीवनि का प्रमाण थोरा जानना । अैसे एक हजार कौ पांच का भाग दीए दोय सै पावै, दोय सै का भाग दीए पाच ही पावै अैसे जानना ।

सो अब भागहार कहैं हैं—

**ओघा-संजद-मिस्सय-सासण-सम्माण भागहारा जे ।**

**रूऊणावलियासंखेज्जेणिह भजिय तत्थ णिक्खित्ते<sup>२</sup> ॥६३४॥**

१ पटखण्डागम — धवला पुस्तक ३, पृष्ठ ६८, निर्जर्भाजदा समगुणिदापमत्तरासी प्रमता ।

२. पटखण्डागम — धवला पुस्तक ३, पृष्ठ १६०-१८४ ।

देवाणं अवहारा, होंति असंख्येण ताणि अवहरिय ।

तत्थेव य पक्खित्ते, सोहम्मीसाणावहारा<sup>१</sup> ॥६३५॥ जुम्मं ।

ओघा असंयतमिश्रकसासनसमीचां भागहारा ये ।

रूपोनावलिकासंख्यातेनेह भवत्वा तत्र निक्षिप्ते ॥६३४॥

देवानामवहारा, भवंति असंख्येन तानवहृत्य ।

तत्रैव च प्रक्षिप्ते, सौधर्मेशानावहाराः ॥६३५॥

टीका — गुणस्थान संख्या विषे पूर्वे जो असंयत, मिश्र, सासादन की संख्या विषे जो पल्य कौ भागहार कहा है, तिनकौ एक घाटि आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, तितना तितना तिन भागहारनि में मिलाए देवगति विषे भागहार हो है । तहां पूर्वे असंयत गुणस्थान विषे भागहार का प्रमाण एक बार असंख्यात कहा था, ताकौ एक घाटि आवली का असंख्यातवा भाग का भाग दीजिये, जो प्रमाण आवै, तितने तिस भागहार में मिलाइए, जो प्रमाण होइ, तितना देवगति सम्बन्धी असंयत गुणस्थान विषे भागहार जानना । इस भागहार का भाग पल्य कौ दीएं, जो प्रमाण होइ, तितने देवगति विषे असंयत गुणस्थानवर्ती जीव है । अैसे ही आगे भी पल्य के भागहार जानने । बहुरि मिश्र विषे दोय बार असंख्यात रूप अर सासादन विषे दोय बार असंख्यात अर एक बार संख्यात रूप पूर्वे जो भागहार का प्रमाण कहा था, तिसका एक घाटि आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तहां मिलाए, देवगति संबंधी मिश्र विषे वा सासादन विषे भागहार का प्रमाण हो है । बहुरि देवगति संबंधी असंयत वा मिश्र वा सासादन विषे जो जो भागहार का प्रमाण कहा, तिस तिसकौ एक घाटि आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो जो प्रमाण आवै, तितना तितना तिस तिस भागहार में मिलाये, जो जो प्रमाण होइ, सो सो सौधर्म-ईशान संबंधी अविरत वा मिश्र वा सासादन विषे भागहार जानना । जो देवगति संबंधी अविरत विषे भागहार कहा था, ताकौ एक घाटि आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीएं, जो प्रमाण होइ, तितना तिस भागहार विषे मिलाए, सौधर्म — ईशान स्वर्ग संबंधी असंयत विषे भागहार हो है । इस ही प्रकार मिश्र विषे वा सासादन विषे भागहार जानना ।

सोहम्मेसाणहारमसंखेण य संखरूपसंगुणिदे ।

उवरि असंजद-मिस्सय-सासणसम्माण अवहारा<sup>१</sup> ॥६३६॥

सौधर्मेशानहारमसंख्येन च संख्यरूपसंगुणिते ।

उपरि असंयतमिश्रकसासनसमीचामवहाराः ॥६३६॥

टीका — बहुरि ताके ऊपरि सनत्कुमार - माहेन्द्र स्वर्ग है । तहां असंयत विषे सौधर्म - ईशान संबंधी सासादन का भागहार तै असंख्यात गुणा भागहार जानना । इस असंयत का भागहार तै चकार करि असंख्यात गुणा मिश्र विषे भागहार जानना । यातै संख्यात गुणा सासादन विषे भागहार जानना ।

आगे इस गुणाने का अनुक्रम की व्याप्ति दिखावै है—

सोहम्मादासारं, जोइसि-वण-भवन-तिरिय-पुढवीसु ।

अविरद-मिस्सेऽसंखं, संखासंखगुण सासणे देसे<sup>२</sup> ॥६३७॥

सौधर्मादासहस्रारं, ज्योतिषिवनभवनतिर्यक्पृथ्वीषु ।

अविरतमिश्रेऽसंख्यं संख्यासंख्यगुणं सासने देशे ॥६३७॥

टीका — सौधर्म - ईशान के ऊपरि सानत्कुमार - माहेन्द्र तै लगाइ शतार-सहस्रार पर्यंत पच युगल अर ज्योतिषो अर व्यंतर अर भवनवासी अर तिर्यच अर सात नरक की पृथ्वी इनि सोलह स्थान संबंधी अविरत विषे अर मिश्र विषे असंख्यात गुणा अनुक्रम जानना । अर सासादन विषे संख्यात गुणा अनुक्रम जानना । अर तिर्यच सबधी देशसंयत विषे असंख्यात गुणा अनुक्रम जानना, सो इस कथन का दिखाइए है—

सानत्कुमार - माहेन्द्र विषे जो सासादन का भागहार कहा, तीर्हस्थो ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर विषे असंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । संख्यात की सहनानी च्यारि ।४। का अक है । बहुरि यातै लांतव कापिष्ठ विषे असंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भाग-

१ पट्खण्डागम — धवला पुस्तक ३, पृष्ठ सत्या २८२ से २८५ तक ।

२. पट्खण्डागम — धवला पुस्तक ३, पृष्ठ सत्या २८२ से २८५ तक ।



बहुरि यातै तिर्यंचनि विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । यातै तिर्यंच विषे ही देशसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । सो जो देशसंयत विषे जो भागहार का प्रमाण है, सोई प्रथम नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । बहुरि यातै दूसरी नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । बहुरि यातै तीसरी नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । यातै चौथी नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । बहुरि यातै पंचम नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । बहुरि यातै षष्ठम पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है । बहुरि यातै सप्तम नरक पृथ्वी विषे अंसंयत का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै मिश्र का भागहार असंख्यात गुणा है । यातै सासादन का भागहार संख्यात गुणा है ।

आगै आनतादि विषै तीनि गाथानि करि कहै है—

**चरम-धरासण-हारा आणदसम्माण आरणप्पहुंदि ।  
अंतिम-गैवेज्जंतं, सम्माणमसंखसंखगुणहारा ॥६३८॥**

चरमधरासनहारादानतसमीचामारणप्रभृति ।  
अंतिमगैवेयकांतं, समीचामसंख्यसंख्यगुणहाराः ॥६३८॥

टीका — तीहि सप्तम पृथ्वी संबंधी सासादन के भागहार तै आनत-प्राणत संबंधी अविरत का भागहार असख्यात गुणा है । बहुरि यातै आरण-अच्युत तै लगाइ नवमां गैवेयक पर्यंत दश स्थानकनि विषै असंयत का भागहार अनुक्रम तै सख्यात गुणा संख्यात गुणा जानना । इहा सख्यात की सहनानी पाच का अंक है ।

**तत्तो ताणुत्ताणं, वामाणमणुद्दिसाण विजयादी ।  
सम्माणं संखगुणो, आणदसिस्से असंखगुणो<sup>१</sup> ॥६३९॥**

ततस्तेषामुक्तानां, वासानामनुदिशानां विजयादि ।  
समीचां संख्यगुण, आनतमिश्रे असंख्यगुणः ॥६३९॥

टीका — तीहि अतिम गैवेयक संबंधी असंयत का भागहार तै आनत-प्राणत युगल तै लगाइ, नवमा गैवेयक पर्यंत ग्यारह स्थानकनि विषै वामे जे मिथ्यादृष्टी जीव, तिनिका सख्यात गुणा, सख्यात गुणा भागहार अनुक्रम तै जानना । इहा सख्यात की सहनानी छह का अंक है । बहुरि तीहि अंतिम गैवेयक सम्बन्धी मिथ्यादृष्टी का भागहार तै नवानुदिश विमान वा विजयादिक च्यारि विमान, इनि दोऊ स्थानकनि विषै असंयत का भागहार संख्यात गुणा, संख्यात गुणा क्रमतै जानना । इहा सख्यात की सहनानी सात का अंक है । बहुरि विजयादिक सम्बन्धी असंयत का भागहार तै आनतप्राणत सम्बन्धी मिश्र का भागहार असख्यात गुणा है ।

**तत्तो संखेज्जगुणो, सासाणसम्माण होदि संखगुणो ।  
उत्ताट्ठाणे कमसो, पणछस्सत्तट्ठचदुरसंदिट्ठी<sup>२</sup> ॥६४०॥**

१. षट्खण्डागम धवला पुस्तक—३, पृष्ठ स. २८५ ।

२. षट्खण्डागम धवला : पुस्तक—३, पृष्ठ स. २८५ ।

ततः संख्येयगुणः, सासनसमीचां भवति संख्यगुणः ।  
उक्तस्थाने क्रमशः पंचषट्सप्ताष्टचतुःसंष्टिः ॥६४०॥

टीका — तीहिं आनत-प्राणत सम्बन्धी मिश्र का भागहार तें आरण-अच्युत तें लगाइ नवमा ग्रैवेयक पर्यंत दश स्थानकनि विषै मिश्र गुणस्थान संबधी भागहार अनुक्रम तें संख्यात गुणा, संख्यात गुणा जानना । इहां संख्यात की सहनानी आठ का अंक है । बहुरि अंतिम ग्रैवेयक के मिश्र का भागहार तें आनत - प्राणत तें लगाइ नवमां ग्रैवेयक पर्यंत ग्यारह स्थानकनि विषे सासादन का भागहार अनुक्रम तें संख्यात गुणा संख्यात गुणा जानना । इहां संख्यात को सहनानी च्यारि १४। का अंक है । ए कहे पंच स्थानक, तिनिविषे संख्यात की सहनानी क्रमतै पांच, छह, सात, आठ, च्यारि का अंक जानना ; सो कहते ही आए है ।

सग-सग-अवहारेहिं, पल्ले भजिदे हवति सगरासी ।

सग-सग-गुणपडिवण्णे सग-सग-रासीसु अवणिदे वामा ॥६४१॥

स्वकस्वकावहारैः, पल्ये भक्ते भवति स्वकर्कशयः ।

स्वकस्वकगुणप्रतिपन्नेषु, स्वकस्वकराशिषु अपनीतेषु वामाः ॥६४१॥

टीका — पूर्वे कह्या जो अपना-अपना भागहार, तिनि का भाग पल्य कौ दोए, जो जो प्रमाण आवै, तितने-तितने जीव तहां जानने । बहुरि अपना-अपना सासादन, मिश्र, असयत अर देशसंयत गुणस्थाननि विषै जो-जो प्रमाण भया, तिनि का जोड दीए, जो-जो प्रमाण होइ, तितना-तितना प्रमाण अपना-अपना राशि का प्रमाण मे घटाए, जो-जो अवशेष प्रमाण रहै, तितने-तितने जीव, तहां मिथ्यादृष्टी जानने । तहा सामान्यपनै मिथ्यादृष्टी किंचित् ऊन ससारी-राशि प्रमाण है । सामान्यपनै देवगति विषै ऊन किंचित् देवराशि प्रमाण मिथ्यादृष्टी जानने । सौधर्मादिक विषै जो-जो जीवनि का प्रमाण कह्या है, तहां द्वितीयादि गुणस्थान सबधी प्रमाण घटावने के निमित्त किंचित् ऊनता कीएं, जो-जो प्रमाण रहै, तितने-तितने मिथ्यादृष्टी है । सो सौधर्मादिक विषै जीवनि का प्रमाण कितना-कितना है ? सो गति मार्गणा विषै कह्या ही है । इहां भी किछू कहिए है—

सौधर्म - ईशानवाले घनांगुल का तृतीय वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने है । सनत्कुमार युगल आदिक पंच युगलनि विषै क्रम तें जग-

च्छ्रेणी का ग्यारह्वां, नवमां, सातवा, पांचवां, चौथा वर्गमूल का भाग जगच्छ्रेणी कौ दीएं, जो-जो प्रमाण आवै, तितने-तितने है । ज्योतिषी पण्णट्ठ प्रमाण प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितने है । व्यंतर संख्यात प्रतरांगुल का भाग जगत्प्रतर कौ दीए, जो प्रमाण आवै, तितने है । भवनवासी घनांगुल के प्रथम वर्गमूल करि जगच्छ्रेणी कौ गुणै, जो प्रमाण आवै, तितने है । तिर्यंच किंचित् ऊन संसारीराशि प्रमाण है । प्रथम पृथ्वी विषे नारकी घनांगुल का द्वितीय वर्गमूल करि साधिक बारह्वां भाग करि हीन जो जगच्छ्रेणी, ताकौ गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने है । द्वितीयादिक पृथ्वी विषे क्रमतै जगच्छ्रेणी का बारह्वा, दशवा, आठवां, छठा, तीसरा, दूसरा वर्गमूल का भाग जगच्छ्रेणी कौ दीए, जो जो प्रमाण होइ, तितने-तितने जानने । इनि सबनि विषे अन्य गुणस्थानवालो का प्रमाण घटावने के अर्थी किंचित् ऊन कीएं, मिथ्यादृष्टी जीवनि का प्रमाण हो है । बहुरि आनतादिक विषे मिथ्यादृष्टी जीवनि का प्रमाण इहां ही पूर्वे कहा है । बहुरि सर्वार्थसिद्धि विषे अहमिद्र सर्व असयत ही है । ते द्रव्य स्त्री मनुष्यणी तिनितै तिगुणे वा कोई आचार्य के मत करि सात गुणे कहे है ।

आगै मनुष्य गति विषे सख्या कहे है—

**तेरसकोडी देसे, बावण्णं सासणे मुणेदव्वा ।**

**मिस्सा वि य तद्दुगुणा, असंजदा सत्त-कोडि-सयं ॥६४२॥**

त्रयोदशकोट्यो देशे, द्वापंचाशत् सासने संतव्याः ।

मिश्रा अपि च तद्विगुणा असंयताः सप्तकोटिशतम् ॥६४२॥

टीका — मनुष्य जीव देशसयत विषे तेरह कोडि है । बावन कोडि सासादन विषे जानने । मिश्र विषे तिनितै दुगुणे एक सौ च्यारि कोडि जानने । असयत विषे सातसै कोडि जानने और प्रमत्तादिक की सख्या पूर्वे कही है; सोई जाननी । अैसे गुणस्थाननि विषे जीवनि का प्रमाण कहा है ।

**जीविदरे कम्मचये, पुण्णं पावो त्ति होदि पुण्णं तु ।**

**सुहपयडीणं दव्वं, पावं असुहाण दव्वं तु ॥६४३॥**

जीवेतरस्मिन् कर्मचये, पुण्यं पापमिति भवंति पुण्यं तु ।  
शुभप्रकृतीनां द्रव्यं, पापं अशुभप्रकृतीनां द्रव्यं तु ॥६४३॥

टीका — जीव पदार्थ संबंधी प्रतिपादन विषे सामान्यपनै गुणस्थाननि विषे मिथ्यादृष्टी अर सासादन ए तौ पापजीव हैं । बहुरि मिश्र है ते पुण्य-पापरूप मिश्र जीव है; जातें युगपत् सम्यक्त्व अर मिथ्यात्वरूप परिणए है । बहुरि असंयत तौ सम्यक्त्व करि संयुक्त है । अर देशसंयत सम्यक्त्व अर देशव्रत करि संयुक्त हैं । अर प्रमत्तादिक सम्यक्त्व अर सकलव्रत करि संयुक्त है । तातें ए पुण्यजीव है । ग्रैसै कहि, याके अनंतरि अजीव पदार्थ संबंधी प्ररूपणा करै हैं ।

तहां कर्मचय कहिए कार्माणस्कंध, तिसविषैं पुण्यपापरूप दोय भेद है । तातें अजीव दोय प्रकार है । तहां साता वेदनी नरक बिना तीन आयु, शुभ नाम, उच्च-गोत्र ए शुभ प्रकृति है । तिनिकौ द्रव्यपुण्य कहिए । बहुरि घातिया कर्मनि की सर्व प्रकृति, असाता वेदनी, नरक आयु, अशुभ नाम, नीच गोत्र ए अशुभ प्रकृति हैं । तिनिकौ द्रव्यपाप कहिए ।

आसव-संवरद्रव्यं, समयप्रबद्धं तु निज्जराद्रव्यं ।  
ततो असंख्यगुणितं, उक्कस्सं होदि नियमेण ॥६४४॥

आस्रवसवरद्रव्यम्, समयप्रबद्धं तु निर्जराद्रव्यम् ।  
ततोऽसंख्यगुणितमुत्कृष्टं भवति नियमेन ॥६४४॥

टीका — बहुरि आस्रव द्रव्य अर सवर द्रव्य समयप्रबद्ध प्रमाण है; जातें एक समय विषे आस्रव समयप्रबद्ध प्रमाण पुद्गल परमाणूनि ही का हो है । बहुरि सवर होइ तौ तितने ही कर्मनि का आस्रव न होइ, तातें द्रव्य संवर भी तितना ही कह्या । बहुरि उत्कृष्ट निर्जरा द्रव्य समयप्रबद्ध तें असंख्यात गुणा नियम करि जानना; जातें गुणश्रेणी निर्जरा विषे उत्कृष्टपनै एक समय विषे असंख्यात समय-प्रबद्धनि की निर्जरा करै है ।

बंधो समयप्रबद्धो, किंचूणदिवड्ढमेत्तगुणहाणी ।  
मोक्खो य होदि एवं, सद्दहिदव्वा दु तच्चट्ठा ॥६४५॥

बंधः समयप्रबद्धः, किंचिदूनद्वयधर्मात्रगुणहानिः ।  
मोक्षश्च भवत्येवं, श्रद्धातव्यास्तु तत्त्वार्थाः ॥६४५॥

टीका — बहुरिबंध द्रव्य भी समयप्रबद्ध प्रमाण है; जाते एक समय विषे समयप्रबद्ध प्रमाण कर्म परमाणूनि ही का बंध हो है । बहुरि मोक्ष द्रव्य किचिदून द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण है; जाते अयोगी कै चरम समय विषे द्वयर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्ता पाइए । तिस ही का मोक्ष हो है; इस प्रकार तत्त्वार्थ है, ते श्रद्धान करणे, इस तत्त्वार्थ श्रद्धान ही का नाम सम्यक्त्व है ।

आगे सम्यक्त्व के भेद कहै है—

खीणे दंसणमोहे, जं सद्वहणं सुणिम्मलं होई<sup>१</sup> ।  
तं खाइय-सम्मत्तं, णिच्चं कम्म-वखवण-हेदू ॥६४६॥

क्षीणे दर्शनमोहे, यच्छ्रद्धानं सुनिर्मलं भवति ।  
तत्क्षायिकसम्यक्त्वं नित्यं कर्मक्षयणहेतुः ॥६४६॥

टीक — मिथ्यात्व मोहनी, सम्यग्मिथ्यात्व मोहनी, सम्यक् मोहनी अर अनंता-  
नुबधी की चौकड़ी इनि सात प्रकृतिति का करणलब्धिरूप परिणामनि का बल तै नाश  
होत संतै जो अति निर्मल श्रद्धान होइ, सो क्षायिक सम्यक्त्व है । सो प्रतिपक्षी कर्म  
का नाश करि आत्मा का गुण प्रगट भया है; ताते नित्य है । बहुरि समय समय प्रति  
गुणश्रेणी निर्जरा कौ कारण है; ताते कर्मक्षय का हेतु है ।

उक्तं च—

दंसणमोहे खविदे, सिज्झदि एक्केव तदियतुरियभवे ।  
णादिवक्कदि तुरियभवं ए विणस्सदि सेस सम्मं च ॥

दर्शन मोह का क्षय होतै, तीहिं भव विषे वा देवायु का बध भए तीसरा भव  
विषे वा पहिलै मिथ्यात्वदशा विषे मनुष्य, तिर्यच आयु का बध भया होइ तौ चौथा  
भव विषे सिद्ध पद कौ प्राप्त होइ, चौथा भव कौ उलंघै नाही । बहुरि अन्य  
सम्यक्त्ववत् यह क्षायिक सम्यक्त्व विनशौ भी नाही, तीहिस्यों नित्य कह्या है ।  
सादि अक्षयान्त है । आदि सहित अविनाशी अंत रहित है; यह अर्थ जानना ।

इस ही अर्थ को कहै हैं—

वयणोहिं वि हेदूहिं वि, इन्द्रियभयआणएहिं रूवोहिं ।  
बीभच्छजुगंछाहिं य, तेलोक्केण वि ए चालेज्जो<sup>१</sup> ॥६४७॥

वचनैरपि हेतुभिरपि इन्द्रियभयानीतैः रूपैः ।

बीभत्स्यजुगुप्साभिश्च त्रैलोक्येनापि न चाल्यः ॥६४७॥

टीका — श्रद्धान नष्ट होने का कारण अैसे कुत्सित वचननि करि वा कुत्सित हेतु दृष्टान्ति करि वा इन्द्रियनि को भयकारी अैसे विकाररूप अनेक भेष आकारनि करि वा ग्लानि का कारण अैसी वस्तु तै निपज्या जुगुप्सा, तिन करि क्षायिक सम्यक्त्व चलै नाही । बहुत कहा कहिए तीन लोक मिलि करि क्षायिक सम्यक्त्व काँ चलाया चाहै तौ क्षायिक सम्यक्त्व चलावने को समर्थ न होइ।

सो क्षायिक सम्यक्त्व कौन काँ हो है ? सो कहै है—

दंसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजादो हु ।  
मणुसो केवलिसूले, णिट्ठवगो होदि सब्बत्थ ॥६४८॥

दर्शनमोहक्षपणाप्रस्थापकः कर्मभूमिजातो हि ।

मनुष्यः केवलिसूले, निष्ठापको भवति सर्वत्र ॥६४८॥

टीका — दर्शन मोह की क्षपणा का प्रारंभ तौ कर्मभूमि का उपज्या मनुष्य ही का केवली के पाद्मूल विषे ही हो है । अर निष्ठापक सर्वत्र च्यार्यों गति विषे हो है ।

भावार्थ — जो दर्शन मोह का क्षय होने का विधान है, तिसका प्रारंभ तौ केवली वा श्रुतकेवली के निकट कर्मभूमिया मनुष्य ही करै है । बहुरि सो विधान होतै मरण हो जाय तौ जहां संपूर्ण दर्शन मोह के नाश का कार्य होइ निवरै, तहां ताकाँ निष्ठापक कहिए, सो च्यार्यों गति विषे हो है ।

आगै वेदक सम्यक्त्व का स्वरूप कहै हैं—

दंसणमोहुदयादो, उप्पज्जई जं पयत्थसद्दहणं ।  
चलमलिणमगाढं तं, वेदयसम्मत्तमिदि जाणे<sup>२</sup> ॥६४९॥

१. पट्खण्डागम धवला पुस्तक—१ पृष्ठ ३९७, गाथा स. २१४ ।

२. पट्खण्डागम धवला पुस्तक—१ पृष्ठ ३९८, गाथा स. २१५ ।

दर्शनमोहोदयादुत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानम् ।

चलमलिनमगाढं तद् वेदकसम्यक्त्वमिति जानीहि ॥६४९॥

टीका — दर्शनमोह का भेद सम्यक्त्वमोहनी, ताका उदय करि जो तत्त्वार्थ श्रद्धान चल वा मल वा अगाढ होइ, सो वेदक सम्यक्त्व है; असा तू जानि । चल, मलिन, अगाढ का लक्षण पूर्वे गुणस्थानप्ररूपणा विषे कह्या है ।

आगे उपशम सम्यक्त्व का स्वरूप अर तिस ही की सामग्री का विशेष तीन गाथानि करि कहै हैं—

दंसणमोहुवसमदो, उप्पज्जइ जं पयत्थसद्दहणं ।

उवसमसम्मत्तमिणं, पसणमलपंकतोयसमं ॥६५०॥

दर्शनमोहोपशमादुत्पद्यते यत्पदार्थश्रद्धानम् ।

उपशमसम्यक्त्वमिदं प्रसन्नमलपंकतोयसमम् ॥६५०॥

टीका — अनंतानुबंधो की चौकड़ी अर दर्शनमोह का त्रिक, इनि सात प्रकृतिनि के उदय का अभाव है लक्षण जाका असा प्रशस्त उपशम होवेतै जैसै कतक फलादिक तै मल कर्दम के नीचे बैठने करि जल प्रसन्न हो है; तैसे जो तत्त्वार्थ श्रद्धान उपजै, सो यहु उपशम नामा सम्यक्त्व है ।

खयउवसमिय-विसोही, देसण-पाउग्ग-करणलब्धीय ।

चत्तारि वि सामण्णा, करणं पुण होदि सम्मत्ते ॥६५१॥

क्षायोपशमिकविशुद्धी, देशना प्रायोग्यकरणलब्धी च ।

चतस्रोऽपि सामान्याः करणं पुनर्भवति सम्यक्त्वे ॥६५१॥

टीका — सम्यक्त्व के पूर्वे जैसा कर्म का क्षयोपशम चाहिए तैसा होना, सो क्षयोपशमिकलब्धि । बहुरि जैसी विशुद्धता चाहिए तैसी होनी, सो विशुद्धिलब्धि । बहुरि जैसा उपदेश चाहिए तैसा पावना, सो देशनालब्धि । बहुरि पंचेन्द्रियादिक रूप योग्यता जैसी चाहिए तैसी होनी, सो प्रायोग्यलब्धि । बहुरि अध, अपूर्व, अनिवृत्ति-करणरूप परिणामनि का होना, सो करणलब्धि जाननी ।

तहां च्यारि लब्धि तौ सामान्य है; भव्य-अभव्य सर्व के हो हैं । बहुरि करण-लब्धि है, सो भव्य के ही हो हैं । सो भी सम्यक्त्व अर चारित्र का ग्रहण विषे ही हो है ।



भावार्थ — च्यारि लब्धि तौ संसार विषे अनेक बार हो है । बहुरि करण-लब्धि की प्राप्ति भएँ सम्यक्त्व वा चारित्र्य अवश्य हो है ।

आगेँ उपशमसम्यक्त्व के ग्रहणे को योग्य जो जीव ताका स्वरूप कहै हैं—

चतुर्गतिभव्यो सण्णी, पज्जत्तो सुज्झगो य सागारो ।

जागारो सल्लेस्सो सलद्धिगो सम्ममुवगमई ॥६५२॥

चतुर्गतिभव्यः संज्ञी, पर्याप्तश्च शुद्धकश्च साकारः ।

जागरूकः सल्लेश्यः, सलब्धिकः सम्यक्त्वमुपगच्छति ॥६५२॥

टीका — जो जीव च्यारि गति में कोई एक गति विषे प्राप्त ऐसा भव्य होइ, सैनी होइ, पर्याप्त होइ, मदकषायरूप परिणामता विशुद्ध होइ, स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन निद्रा तै रहित होने तै जागता होइ, भावित शुभ तीन लेश्यानि विषे कोई एक लेश्या का धारक होइ, करणलब्धिरूप परिणया होइ; ऐसा जीव यथासंभव सम्यक्त्व कौ प्राप्त हो है ।

चत्तारि वि खेत्ताइं, आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।

अणुवदमहव्वदाइं, ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥६५३॥

चत्वार्यपि क्षेत्राणि, आयुष्कबंधेन भवति सम्यक्त्वम् ।

अणुव्रतमहाव्रतानि, न लभते देवायुष्कं मुक्त्वा ॥६५३॥

टीका — च्यारि आयु विषे किसी ही परभव का आयु बंध कीया होइ, तिस वद्धायु जीव कै सम्यक्त्व उपजै, इहां किछू दोष नाही । बहुरि अणुव्रत अर महाव्रत जिसके देवायु का बंध भया होइ, तिसहीकै होइ । जो पहिलै नारक, तिर्यंच, मनुष्यायु का बंध मिथ्यात्व में भया होइ, तौ पीछे अणुव्रत, महाव्रत होइ नाही । यह नियम है ।

ए य मिच्छत्तं पत्तो, सम्मत्तादो य जो य परिवडिदो ।

सो सासणो त्ति एयो, पंचमभावेण संजुत्तो ॥६५४॥

न च मिथ्यात्वं प्राप्तः सम्यक्त्वतश्च यश्च परिपतितः ।

स सासन इति ज्ञेयः, पंचमभावेन संयुक्तः ॥६५४॥

टीका — जो जीव सम्यक्त्व तै पड्या अर मिथ्यात्व कौ यावत् प्राप्त न भया, तावत् काल सासादन है; असा जानना । सो दर्शन मोह ही की अपेक्षा पांचवां पारणामिक भाव करि संयुक्त है, जातै चारित्र मोह की अपेक्षा अनतानुबंधी के उदय तैं सासादन हो है, तातै इहां औदयिक भाव है । यहु सासादन जुदी ही जाति का श्रद्धान रूप सम्यक्त्व मार्गणा का भेद जानना ।

सद्दहणासद्दहणं, जस्स य जीवस्स होइ तच्चेसु ।  
विरयाविरयेण समो, सम्माभिच्छो त्ति णायव्वो ॥६५५॥

श्रद्धानाश्रद्धानं, यस्य च जीवस्य भवति तत्त्वेषु ।  
विरताविरतेन समः, सम्यग्मिथ्या इति ज्ञातव्यः ॥६५५॥

टीका — जिस जीव कैं जीवादि पदार्थनि विषै श्रद्धान वा अश्रद्धान एक काल विषै होइ, जैसै देशसंयत कैं संयम वा असंयम एकै काल हो है; तैसै होइ, सो जीव सम्यग्मिथ्यादृष्टी है, असा जानना । यहु सम्यक्त्व मार्गणा का मिश्र नामा भेद कह्या है ।

मिच्छाइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि ।  
सद्दहदि असब्भावं, उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं ॥६५६॥

मिथ्यादृष्टिर्जीवः उपदिष्टं प्रवचनं न श्रद्धाति ।  
श्रद्धाति असद्भावं, उपदिष्टं वा अनुपदिष्टम् ॥६५६॥

टीका — मिथ्यादृष्टी जीव जिन करि उपदेशित अैसे आप्त, आगम, पदार्थ, तिनिका श्रद्धान करै नाहीं । बहुरि कुदेवादिक करि उपदेश्या वा अनुपदेश्या भूठा आप्त, आगम, पदार्थ, तिनिका श्रद्धान करै है । यहु सम्यक्त्व मार्गणा का मिथ्यात्व नामा भेद कह्या । अैसे सम्यक्त्व मार्गणा के छह भेद कहे । उपशम, क्षायिक, सम्यक्त्व का विशेष विधान लब्धिसार नामा ग्रंथ विषै कह्या है । ताके अनुसारि इहा भाषा टीका विषै आगे किछू लिखेगे, तहां जानना ।

आगे सम्यक्त्व मार्गणा विषै जीवनि की संख्या तीन गाथानि करि कहै हैं—

वासपुधत्ते खइया, संखेज्जा जइ हवंति सोहम्मै ।  
तो संखपल्लठिदिये, केवडिया एवमणुपादे ॥६५७॥

वर्षपृथक्त्वे क्षायिकाः, संख्येया यदि भवंति सौधर्म ।  
तर्हि संख्यपल्यस्थितिके, कति एवमनुपाते ॥६५७॥

टीका — क्षायिक सम्यक्त्वी बहुत कल्पवासी देव हो है । बहुरि कल्पवासी देव बहुत सौधर्म — ईशान विषे है, तातै कहैं । जो पृथक्त्व वर्ष विषे क्षायिक सम्यक्त्वी सौधर्म - ईशान विषे संख्यात प्रमाण उपजै तौ संख्यात पल्य की स्थिति विषे कितने उपजै ? बैसा त्रैराशिक करना । इहां प्रमाण राशि पृथक्त्व वर्ष प्रमाण काल, फलराशि संख्यात जीव, इच्छा राशि संख्या पल्य प्रमाण, कालसो फलतै इच्छा कौं गुरौं, प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धि राशि भया, सो कहैं हैं—

संखावलिहिदपल्ला, खइया तत्तो य वेदमुवसमया ।  
आवलिअसंखगुणिदा, असंखगुणहीणया कमसो ॥६५८॥

संख्यावलिहितपल्याः, क्षायिकास्ततश्च वेदमुपशमकाः ।  
आवत्यसंख्यगुणिता, असंख्यगुणहीनकाः क्रमशः ॥६५८॥

टीका — सो लब्ध राशि का प्रमाण संख्यात आवली का भाग पल्य कौं दीएं, जो प्रमाण होइ, तितना आया, सो तितने ही क्षायिक सम्यग्दृष्टी जानने । बहुरि इनिकौ आवली का असंख्यातवां भाग करि गुणै, जो प्रमाण होइ, तितने वेदक सम्यग्दृष्टी जानने । बहुरि क्षायिक जीवा का परिमाण ही तै असंख्यात गुणा घाटि उपशम सम्यग्दृष्टी जीव जानने ।

पल्लासंखेज्जदिमा, सासाणमिच्छा य संखगुणिदा हु ।  
मिस्सा तेहिं विहीणो, संसारी वामपरिमाणं ॥६५९॥

पल्यासंख्याताः, सासनमिथ्याश्च संख्यगुणिता हि ।  
मिथ्यास्तैर्विहीनः, संसारी वामपरिमाणम् ॥६५९॥

टीका — पल्य के असंख्यातवे भाग प्रमाण सासादन, तेई मिथ्याती सामान्य है, तिनिका परिमाण है, तिनतै संख्यात गुणे सम्यग्मिथ्यादृष्टी जीव है । बहुरि इन पंच सम्यक्त्व संयुक्त जीवनि का मिलाया हूवा परिमाण कौ संसारी राशि में घटाएं, जो प्रमाण अवशेष रहे, तितने वाम कहिए मिथ्यादृष्टी, तिनिका परिमाण है ।

अब इहां नव पदार्थनि का परिमाण कहिए है—

जीव द्रव्य तौ द्विरूपवर्गधारा विषेँ कहे अपने प्रमाण लोए है । बहुरि अजीवविषेँ पुद्गल द्रव्य जीवराशि तें अनंत गुणे है । धर्मद्रव्य एक है । अधर्मद्रव्य एक है । आकाश द्रव्य एक है । कालद्रव्य जगच्छ्रेणी का घन, जो लोक, तीहि प्रमाण है । सो पुद्गल का परिमाण विषेँ धर्म, अधर्म, आकाश, काल का परिमाण मिलाएं, अजीव पदार्थ का परिमाण हो है ।

बहुरि असंयत अर देशसंयत का परिमाण मिलाए, तिन विषेँ प्रमत्तादिकनि का प्रमाण संख्यात मिलाएं, जो प्रमाण होइ, तितने पुण्य जीव है । बहुरि किंचिदून द्वयर्द्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण कर्म परमाणूनि की सत्ता है ताके संख्यातवे भागमात्र शुभ प्रकृतिरूप अजीव पुण्य है । बहुरि मिश्र अपेक्षा किछू अधिक जो पुण्य जीवनि का प्रमाण, ताकौ संसारी राशि में घटाएं, जो प्रमाण रहे, तितने पाप जीव है । बहुरि द्वयर्द्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध कौ संख्यात का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना अवशेष भाग प्रमाण अशुभ प्रकृतिरूप अजीव पाप हैं । बहुरि आस्रव पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है । संवर पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है । निर्जराद्रव्य गुणश्रेणी निर्जरा विषेँ उत्कृष्टपनै जितनी निर्जरा होइ तीहि प्रमाण है । बंध पदार्थ समयप्रबद्ध प्रमाण है । मोक्षद्रव्य द्वयर्द्ध गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण है ।

इति आचार्य श्री नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीव-तत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत की टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका

विषेँ जीवकाण्ड विषेँ प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनविषेँ सम्यक्त्वमार्गणा

प्ररूपणा नाम सतरहवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१७॥

जो उपदेश सुनकर पुरुषार्थ करते हैं, वे मोक्ष का उपाय कर सकते हैं और जो पुरुषार्थ नहीं करते वे मोक्ष का उपाय नहीं कर सकते । उपदेश नो जिना-मात्र है, फल जैसा पुरुषार्थ करे, वैसा लगता है ।

— मोक्षमार्ग प्रकाशक — अध्याय ६-पृष्ठ-३१०

## अठारहवां अधिकार : संज्ञीमार्गणा

अरि रजविघ्न विनाशकर, अमित चतुष्टय थान ।  
शत इंद्रनि करि पूज्य पद, द्यो श्री अर भगवान ॥१८॥

आगे सज्ञी मार्गणा कहैं है-

णोइंदियआवरणखओवसमं तज्जबोहणं सण्णा ।  
सा जस्स सो दु सण्णी, इदरो सेसिंदिवबोहो ॥६६०॥

नोइंद्रियावरणक्षयोपशमस्तज्जबोधनं संज्ञा ।  
सा यस्य स तु संज्ञी, इतरः शेषेन्द्रियावबोधः ॥६६०॥

टीका - नो इन्द्रिय जो मन, ताके आवरण का जो क्षयोपशम तीहिकरि उत्पन्न भया जो बोधन, ज्ञान, ताकौं संज्ञा कहिए । सो संज्ञा जाकैं पाइए ताको संज्ञी कहिए है । मन-ज्ञान करि रहित अवशेष यथासंभव इन्द्रियनि का ज्ञान करि संयुक्त जो जीव, सो असंज्ञी है ।

सिक्खाकिरियुवदेसालावग्गाही मणोवलंबेण ।  
जो जीवो सो सण्णी, तविवरीओ असण्णी दु ॥६६१॥

शिक्षाक्रियोपदेशालापग्राही मनोवलंबेन ।  
यो जीवः स संज्ञी, तद्विपरीतोऽसंज्ञी तु ॥६६१॥

टीका - हित-अहित का करने - त्यजनेरूप शिक्षा, हाथ-पग का इच्छा करि चलावने आदिरूप क्रिया, चामठी (बेत) इत्यादि करि उपदेश्या वधविधानादिक सो उपदेश, श्लोकादिक का पाठ सो आलाप, इनिका ग्रहण करणहारा जो मन ताका अवलंबन करि क्रम तै मनुष्य वा बलध वा हाथी वा सूवा इत्यादि जीव, सो संज्ञी नाम है । बहुरि इस लक्षण तै उलटा लक्षण का जो जीव, सो असंज्ञी नाम जानना ।

मीमंसदि जो पुव्वं, कज्जमकज्जं च तच्चमिदरं च ।  
सिक्खदि णामेणेदि य, समणो अमणो य विवरीदो ॥६६२॥

मीमांसति यः पूर्वं, कार्यमकार्यं च तत्त्वमितरच्च ।

शिक्षते नाम्ना एति च, समनाः अमनाश्च विपरीतः ॥६६२॥

टीका - जो पहिलै कार्य - अकार्य कौ विचारै, तत्त्व - अतत्त्व कौ सीखै, नाम करि बुलाया हुवा आवै, सो जीव मन सहित समनस्क, सजी जानना । इस लक्षण तै उलटा लक्षण कौ जो धरै होइ, सो जीव मन रहित अमनस्क असंजी जानना ।

इहां जीवनि की संख्या कहैं हैं -

देवैर्हि सादिरेगो, रासी सण्णीण होदि परिमाणं ।

तेणूणो संसारी, सव्वेसिमसण्णिजीवाणं ॥६६३॥

देवैः सातिरेको, राशिः संज्ञिनां भवति परिमाणम् ।

तेनोनः संसारी सर्वेषामसंज्ञिजीवानाम् ॥६६३॥

टीका - च्यारि प्रकार के देवनि का जो प्रमाण, तिनि तै किछू अधिक सजी जीवनि का प्रमाण है । संजी जीवनि विषै देव बहुत है । तिनि विषै नारक, मनुष्य, पंचेंद्री सैनी तिर्यंच मिलाए सजी जीवनि का प्रमाण हो है । इस प्रमाण कौ संसारी जीवनि का प्रमाण में घटाएँ, अवशेष सर्व असंजी जीवनि का प्रमाण हो है ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व-

प्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नाम भाषा टीका

विषै जीवकाण्ड विषै प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनि विषै सजी-मार्गणा

प्ररूपणा नामा अठारहवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१८॥

तत्त्वनिर्णय करने मे उपयोग न लगावे वह तो इसी का दोष है । तथा पुरुषार्थ से तत्त्वनिर्णय मे उपयोग लगावे तब स्वयमेव ही मोह का अभाव होने पर सम्यक्त्वादि रूप मोक्ष के उपाय का पुरुषार्थ बनता है ।

- मोक्षमार्ग प्रकाशक अध्याय ६, पृष्ठ-३११

## उठ्ठीसवां अधिकार : आहार-मार्गणा

मल्लिकुसुम समगंधजुत मोह शत्रुहर मल्ल ।

बहिरंतर श्रीसहित जिन, मल्लि हरहु मम शल्ल ॥१९॥

आगे आहार-मार्गणा कहैं हैं-

उदयावण्णसरीरोदयेण तद्देहवयणचित्ताणं ।

णोकस्मवग्गणाणं, ग्रहणं आहारयं णाम ॥६६४॥

उदयापन्नशरीरोदयेन तद्देहवचनचित्तानाम् ।

नोकर्मवर्गणानां, ग्रहणमाहारकं नाम ॥६६४॥

टीका - औदारिक, वैक्रियिक, आहारक इन तीन शरीर नामा नामकर्म विषे किसी हो का उदय करि जो तिस शरीररूप वा वचनरूप वा द्रव्य मनरूप होने योग्य जो नोकर्म वर्गणा, तिनिका जो ग्रहण करना, सो आहार असा नाम है ।

आहरदि सरीराणं, तिण्हं एयदरवग्गणाओ य ।

भासामणाण णियदं, तम्हा आहारयो भणियो ॥६६५॥

आहारति शरीराणां त्रयाणामेकतरवर्गणाश्च ।

भासामनसोर्नित्यं तस्मादाहारको भणितः ॥६६५॥

टीका - औदारिकादिक शरीरनि विषे जो उदय आया कोई शरीर, तीहि रूप आहारवर्गणा, बहुरि भाषावर्गणा, बहुरि मनोवर्गणा इन वर्गणानि कौ यथायोग्य जीवसमास विषे यथायोग्य काल विषे यथायोग्यपनै नियमरूप आहरति कहिए ग्रहण करै, सो आहार कह्या है ।

विग्रहगदिमावण्णा, केवलिणो समुघदो अयोगी य ।

सिद्धा य अणाहारा, सेसा आहारया जीवा ॥६६६॥

विग्रहगतिमापन्नाः, केवलिनः समुद्घाता अयोगिनश्च ।

सिद्धाश्च अनाहाराः, शेषा आहारका जीवाः ॥६६६॥

टीका — विग्रहगति कौ जे प्राप्त भए, अैसे च्यारचों गतिवाले जीव, बहुरि प्रतर अर लोकपूरणरूप केवल समुद्घात कौ प्राप्त भए अैसे सयोगी-जिन, बहुरि सर्व अयोगी-जिन, बहुरि सर्व सिद्ध भगवान ए सर्व अनाहारक है । अवशेष सर्व जीव आहारक ही है ।

सो समुद्घात कै प्रकार है ? सो कहै है—

वेयणकसायवेगुव्वियो य मरणंतियो समुग्घादो ।  
तेजाहारो छट्ठो, सत्तमओ केवलीणं तु ॥६६७॥

वेदनाकषायवैगुव्विकाश्च, मारणांतिकः समुद्घातः ।  
तेजआहारः षष्ठः, सप्तमः केवलिनां तु ॥६६७॥

टीका — वेदना, कषाय, वैक्रियिक, मारणांतिक, तैजस, छठा आहारक, सातवां केवल ए सात समुद्घात जानने । इनिका स्वरूप लेश्या मार्गणा विषे क्षेत्राधिकार में कह्या था, सो जानना ।

समुद्घात का स्वरूप कहा, सो कहै है—

मूलशरीरमच्छंडिय, उत्तरदेहस्स जीवपिंडस्स ।  
णिग्गमणं देहादो, होदि समुग्घादणामं तु ॥६६८॥

मूलशरीरमत्यक्त्वा उत्तरदेहस्य जीवपिंडस्य ।  
निर्गमनं देहाद्भवति समुद्घातनाम तु ॥६६८॥

टीका — मूल शरीर कौ तौ छोड़ै नाही, बहुरि कार्माण, तैजसरूप उत्तर शरीर सहित जीव के प्रदेश समूह का मूल शरीर तै बाह्य निकसना, सो समुद्घात अैसा नाम जानना ।

आहारमारणंतिय दुगं पि णियमेण एगदिसिगं तु ।  
दस-दिसि गदा हु सेसा, पंच समुग्घादया होति ॥६६९॥

आहारमारणांतिकद्विकमपि नियमेन एकदिशिकं तु ।  
दशदिशि गताहि शेषाः पंच समुद्घातका भवति ॥६६९॥



टीका - आहारक अर मारणांतिक ए दोऊ समुद्धात तौ नियम करि एक दिशा कौ ही प्राप्त हो है; जातें इन विषे सूच्यंगुल का संख्यातवां भाग प्रमाण ही उंचाई, चौड़ाई होइ । अर लंबाई बहुत होइ । तातें एक दिशा कौ प्राप्त कहिए । बहुरि अवशेष पंच समुद्धात रहे, ते दशों दिशा कौ प्राप्त हैं, जातें इनि विषे यथा-योग्य लंबाई, चौड़ाई, उंचाई सर्व ही पाइए है ।

आगे आहार अनाहार का काल कहैं हैं-

**अंगुलअसंखभागो, कालो आहारयस्स उक्कस्सो ।**

**कम्मम्मि अणाहारो, उक्कस्सं तिण्णि समया हु ॥६७०॥**

अंगुलासंख्यभागः, कालः आहारकस्योत्कृष्टः ।

कार्मणे अनाहारः, उत्कृष्टः त्रयः समया हि ॥६७०॥

टीका - आहार का उत्कृष्ट काल सूच्यंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण है । सूच्यंगुल का असंख्यातवा भाग के जेते प्रदेश होंहि, तितने समय प्रमाण आहारक का काल है ।

इहां प्रश्न - जो मरण तौ आयु पूरी भए पीछे होइ ही होइ, तहां अनाहार होइ इहां आहार का काल इतना कैसे कहा ?

ताकां समाधान - जो मरण भए भी जिस जीव के वक्ररूप विग्रह गति न होइ, सूधी एक समय रूप गति होइ, ताकै अनाहारकपणा न हो है । आहारकपणा ही रहै है, तातें आहारक का पूर्वोक्तकाल उत्कृष्टपने करि कहा है । बहुरि आहारक का जघन्य काल तीन समय घाटि सांस का अठारहवां भाग जानना; जातें क्षुद्रभव विषे विग्रहगति के समय घटाए इतना काल हो है । बहुरि अनाहारक का काल कार्माण शरीर विषे उत्कृष्ट तीन समय जघन्य एक समय जानना; जातें विग्रह गति विषे इतने काल पर्यंत ही नोकर्म वर्गणानि का ग्रहण न हो है ।

आगे इहां जीवनि की संख्या कहैं है-

**कम्मइयकायजोगी, होदि अणाहारयाण परिमाणं ।**

**तद्विरहिदसंसारी, सब्बो आहारपरिमाणं ॥६७१॥**

कार्मणकाययोगी, भवति अनाहारकाणां परिमाणम् ।

तद्विरहितसंसारी, सर्व आहारपरिमाणम् ॥६७१॥

टीका - कार्माण काययोगवाले जीवनि का जो प्रमाण योगमार्गणा विषे कह्या, सोई अनाहारक जीवनि का प्रमाण जानना । इसको ससारी जीवनि का प्रमाण में घटाएं, अवशेष रहै, तितना आहारक जीवनि का प्रमाण जानना । सोई कहै हैं - प्रथम योगनि का काल कहिए है - कार्माण का तौ तीन समय, औदारिक मिश्र का अंतर्मुहूर्त प्रमाण, औदारिक का तीहस्यो संख्यात गुणा काल, तथा सर्वकाल मिलाएं तीन समय अधिक संख्यात अंतर्मुहूर्त प्रमाण काल भया । याका किचित् ऊन संसारी राशि का भाग दीएं, जो प्रमाण आवै, ताको तीन करि गुणै, जो प्रमाण आवै तितने अनाहारक जीव है; अवशेष सर्व संसारी आहारक जीव है । वैक्रियिक, आहारकवाले थोरे है, तिन की मुख्यता नाही है ।

इहां प्रक्षेप योगोद्धृतमिश्रपिंडः प्रक्षेपकाणां गुणको भवेदिति, असा यह करणसूत्र जानना । याका अर्थ - प्रक्षेप को मिलाय करि मिश्र पिंड का भाग देइ, जो प्रमाण होइ ताको प्रक्षेपक करि गुणै, अपना अपना प्रमाण होइ । जैसें कोई एक हजार प्रमाण वस्तु है, ताते किसी का पंच बट है, किसी का सात बट है, किसी का आठ बट है । सब को मिलाएं प्रक्षेपक का प्रमाण बीस भए । तिस बीस का भाग हजार को दीएं पचास पाए, तिनको पंच करि गुणै, अढाई सै भए, सो पंच बटवाले कै आए । सात करि गुणै, साढा तीन सौ भए, सो सात बटवाले कै आए । आठ करि गुणै, च्यारि सै भए, सो आठ बटवाले कै आए । ऐसे मिश्रक व्यवहार विषे अन्यत्र भी जानना ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विषे जीवकाण्ड विषे प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा तिनिविषे आहार-मार्गणा प्ररूपणा नाम उगनीसवा अधिकार सपूर्ण भया ॥१६॥

सच्चे उपदेश से निर्णय करने पर भ्रम दूर होता है, परंतु ऐसा पुरुषार्थ नहीं करता, इसी से भ्रम रहता है । निर्णय करने का पुरुषार्थ करे-तो भ्रम का कारण जो मोह-कर्म, उसके भी उपशमादि हो, तब भ्रम दूर हो जाये, क्योंकि निर्णय करते हुए परिणामो की विशुद्धता होती है, उससे मोह के स्थिति अनुभाग घटते हैं ।

- मोक्षमार्ग प्रकाशक : अधिकार ६, पृष्ठ-३१०

## बीसवां अधिकार : उपयोगाधिकार

सुव्रत पावन कौं भजै, जाहि भक्त व्रतवंत ।

निज सुव्रत श्री देहु मम, सो सुव्रत अरहंत ॥२०॥

आगे उपयोगाधिकार कहैं हैं—

वस्तुनिमित्तं भावो, जादो जीवस्स जो दु उवजोगो ।

सो दुविहो णायव्वो, सायारो चैव णायारो ॥६७२॥

वस्तुनिमित्तं भावो, जातो जीवस्य यस्तूपयोगः ।

स द्विविधो ज्ञातव्यः साकारश्चेवानाकारः ॥६७२॥

टीका — वसे है, एकीभाव रूप निवसै है; गुण, पर्याय जा विषै, सो वस्तु, ज्ञेय पदार्थ जानना । ताके ग्रहण के अर्थ जो जीव का परिणाम विशेष रूप भाव प्रवर्तै, सो उपयोग है । बहुरि सो उपयोग साकार - अनाकार भेद तै दोय प्रकार जानना ।

आगे साकार उपयोग आठ प्रकार है, अनाकार उपयोग चारि प्रकार हैं, ऐसा कहै है—

णाणं पंचविहं पि य, अण्णाण-तियं च सागरुवजोगो ।

चदु-दंसणमणगारो, सव्वे तल्लक्खणा जीवा ॥६७३॥

ज्ञानं पंचविधमपि च, अज्ञानत्रिकं च साकारोपयोगः ।

चतुर्दर्शनमनाकारः, सर्वे तल्लक्षणा जीवाः ॥६७३॥

टीका — मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवल ए पंच प्रकार ज्ञान, बहुरि कुमति, कुश्रुत, विभंग ए तीन अज्ञान, ए आठौ साकार उपयोग है । बहुरि चक्षु, अचक्षु अवधि, केवल ए चारयो दर्शन अनाकार उपयोग है । सो सर्व ही जीव ज्ञान - दर्शन रूप उपयोग लक्षण कौ धरै है ।

इस लक्षण विषै अतिव्याप्ति, अव्याप्ति, असंभवी दोष न संभवै हैं । जहां लक्ष्य विषै वा अलक्ष्य विषै लक्षण पाइए, तहां अतिव्याप्ति दोष है । जैसे जीव का

लक्षण अमूर्तिक कहिए तौ अमूर्तिकपना जीव विषे भी है अर धर्मादिक विषे भी है । बहुरि जहा लक्षण का एकदेश विषे लक्षण पाइए, तहां अव्याप्ति दोष है । जैसे जीव का लक्षण रागादिक कहिए तौ रागादिक संसारी विषे तौ संभवै, परि सिद्ध जीवनि विषे संभवै नाही । बहुरि जो लक्ष्य तै विरोधी लक्षण होइ, सो असंभवी कहिए । जैसे जीव का लक्षण जड़त्व कहिए, सो संभवै ही नाही । जैसे त्रिदोष रहित उपयोग ही जीव का लक्षण जानना ।

**मदि-सुद-ओहि-मणेहिं य सग-सग-विसये विसेसविण्णाणं ।**

**अंतोमुहुत्तकालो, उवजोगो सो दु सायारो ॥६७४॥**

मतिश्रुतावधिमनोभिश्च स्वकस्वकविषये विशेषविज्ञानं ।

अंतर्मुहूर्तकाल, उपयोगः स तु साकारः ॥६७४॥

टीका — मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय ज्ञाननि करि अपने - अपने विषय विषे जो विशेष ज्ञान होइ, अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण पदार्थ का ग्रहण रूप लक्षण धरै, जो उप योग होइ, सो साकार उपयोग है । इहां वस्तु का ग्रहण रूप जो चैतन्य का परिणमन, ताका नाम उपयोग है । मुख्यपने उपयोग है, सो छद्मस्थ के एक वस्तु का ग्रहण रूप चैतन्य का परिणमन अंतर्मुहूर्त मात्र ही रहै है । तातै अंतर्मुहूर्त ही कह्या है ।

**इंद्रियमणोहिणा वा, अत्थे अविसेसिदूण जं गहणं ।**

**अंतोमुहुत्तकालो, उवजोगो सो अणायारो ॥६७५॥**

इंद्रियमनोऽवधिना, वा अर्थे अविशेष्य यद्ग्रहणम् ।

अंतर्मुहूर्तकालः उपयोगः स अनाकारः ॥६७५॥

टीका — नेत्र इन्द्रियरूप चक्षुदर्शन वा अवशेष इन्द्रिय अर मनरूप अचक्षु दर्शन वा अवधि दर्शन, इनकरि जो जीवादि पदार्थनि का विशेष न करिके निर्विकल्पपने ग्रहण होइ, सो अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण सामान्य अर्थ का ग्रहण रूप निराकार उपयोग है ।

भावार्थ — वस्तु सामान्य विशेषात्मक है । तहा सामान्य का ग्रहण कौ निराकार उपयोग कहिए, विशेष का ग्रहण कौ साकार उपयोग कहिए । जातै सामान्य विषे वस्तु का आकार प्रतिभासै नाही; विशेष विषे आकार प्रतिभासै है ।

आगें इहां जीवनि की संख्या कहैं हैं -

णाणुवजोगजुदाणं, परिमाणं णाणमग्गणं व हवे ।  
दंसणुवजोगियाणं, दंसणमग्गण व उत्तकमो ॥६७६॥

ज्ञानोपयोगयुतानां परिमाणं ज्ञानमार्गणावद्भवेत् ।  
दर्शनोपयोगिनां दर्शनमार्गणावदुक्तक्रमः ॥६७६॥

टीका - ज्ञानोपयोगी जीवनि का परिमाण ज्ञानमार्गणावत् है । बहुरि दर्शनो-  
पयोगी जीवनि का परिमाण दर्शनमार्गणावत् है । सो कुमतिज्ञानी, कुश्रुतज्ञानी,  
विभंगज्ञानी, मतिज्ञानी, श्रुतज्ञानी, अवधिज्ञानी, मनःपर्ययज्ञानी, केवलज्ञानी, बहुरि  
तिर्यंच-विभंगज्ञानी, मनुष्य-विभंगज्ञानी, नारक-विभंगज्ञानी, इनिका प्रमाण जैसें  
ज्ञानमार्गणा विषे कह्या है । तैसें ही ज्ञानोपयोग विषे प्रमाण जानना । किछू विशेष  
नाहीं । बहुरि शक्तिगत चक्षुर्दर्शनी, व्यक्तगत चक्षुर्दर्शनी, अचक्षुर्दर्शनी, अवधिदर्शनी  
केवल दर्शनी, इनिका प्रमाण जैसें दर्शन-मार्गणा विषे कह्या है; तैसें इहां निराकार  
उपयोग विषे प्रमाण जानना । किछू विशेष नाही ।

इति श्री आचार्य नेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व  
प्रदीपिका नाम संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विषे  
जीवकाण्ड विषे प्ररूपित बीस प्ररूपणा तिनिविषे उपयोग-मार्गणाप्ररूपणा  
नामा बीसवा अधिकार सपूर्ण भया ॥२०॥

तत्त्वनिर्णय न करने मे किसी कर्म का दोष नहीं है, तेरा ही दोष है,  
परंतु तू स्वयं तो महन्त रहना चाहता है और अपना दोष कर्मादिक को लगाता  
है, सो जिन आज्ञा माने तो ऐसी अनीति संभव नहीं है । तूफे विषय कषाय  
रूप ही रहना है इसलिए झूठ बोलता है । मोक्ष की सच्ची अभिलाषा हो तो  
ऐसी युक्ति किसलिए बनाए ? सांसारिक कार्यों मे अपने पुरुषार्थ से सिद्धि न  
होती जाने तथापि पुरुषार्थ उद्यम किया करता है, यहाँ पुरुषार्थ खो बैठा है,  
इसलिए जानते हैं कि मोक्ष को देखा-देखी उत्कृष्ट कहता है, उसका स्वरूप  
पहिचान कर उसे हितरूप नहीं जानता । हित जानकर उसका उद्यम बने सो  
न करे यह असंभव है ।

- मोक्षमार्ग प्रकाशक । अधिकार ६, पृष्ठ-३११

## इक्कीसवां अधिकार : अंतरभावाधिकार

विभव अमित ज्ञानादि जुत, सुरपति नुत नमिनाथ ।

जय मम ध्रुवपद देहु जिहि, हत्यो घातिया साथ ॥२१॥

आगे बीस प्ररूपणा का अर्थ कहि; अब उत्तर अर्थ कौ कहै है—

गुणजीवा पज्जत्ती, पाणा सण्णा य मग्गणुवजोगो ।

जोग्गा परूविदव्वा, ओघादेसेसु पत्तेयं ॥६७७॥

गुणजीवाः पर्याप्तयः, प्राणाः संज्ञाश्च मार्गणोपयोगौ ।

योग्याः प्ररूपितव्या, ओघादेशयोः प्रत्येकम् ॥६७७॥

टीका — कही जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषे गुणस्थान अर मार्गणास्थान, इचि विषे गुणस्थान अर जीवसमास अर पर्याप्ति अर प्राण अर संज्ञा अर चौदह मार्गणा अर उपयोग ए बीस प्ररूपणा जैसै संभवै, तैसै निरूपण करनी । सोई कहै है—

चउ पण चोद्दस चउरो, निरयादिसु चोद्दसं तु पंचक्खे ।

तसकाये सेंसिदियकाये मिच्छं गुणट्ठाणं ॥६७८॥

चत्वारि पंच चतुर्दश, चत्वारि निरयादिषु चतुर्दश तु पंचाक्षे ।

त्रसकाये शेषेद्रियकाये मिथ्यात्व गुणस्थानम् ॥६७८॥

टीका — गति-मार्गणा विषे क्रम ते गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादि नरक विषे च्यारि, तिर्यच विषे पांच, मनुष्य विषे चौदह, देव विषे च्यारि जानने । बहुरि इन्द्रिय-मार्गणा विषे अर काय-मार्गणा विषे पचेद्रिय मे अर त्रसकाय मे ती चौदह गुणस्थान है । अवशेष इंद्रिय अर काय मे एक मिथ्यादृष्टी गुणस्थान है । बहुरि जीवसमास नरकगति अर देवगति विषे सैनी पर्याप्ति, निर्वृत्ति अपर्याप्ति ए दोय हैं; अर तिर्यच विषे सर्व चौदह ही है । मनुष्य विषे सैनी पर्याप्ति, अपर्याप्ति ए दोय हैं । इहा नरक देवगति विषे लब्धि-अपर्याप्तक नाही; ताते निर्वृत्ति-अपर्याप्ति कह्या । मनुष्य विषे निर्वृत्ति-अपर्याप्ति, लब्धि-अपर्याप्ति दोऊ पाइए, ताते सामान्यपने अपर्याप्ति ही कह्या है । बहुरि इंद्रिय-मार्गणा विषे एकेद्रिय मे बादर, सूक्ष्म, एकेंद्री तो पर्याप्ति अर अपर्याप्ति असै च्यारि जीवसमास है । वेद्री, तेइन्द्री मे अपना अपना पर्याप्ति अपर्याप्ति रूप दोय जीवसमास है । पचेद्रिय में सैनी, असैनी पर्याप्ति वा अपर्याप्ति ए च्यारि

जीवसमास है । बहुरि कायमार्गणा विषै पृथ्वी आदि पंच स्थावरनि में एकेंद्रियवत् च्यारि च्यारि जीवसमास है । त्रस विषै अवशेष दश जीवसमास हैं ।

**मज्झिम-चउ-मण-वयरणे, सण्णिप्पहुंदिं दु जाव खीणो त्ति ।**

**सेसाणं जोगि त्ति य, अणुभयवयणं तु वियलादो ॥६७६॥**

मध्यमचतुर्मेनवचनयोः, संज्ञिप्रभृतिस्तु यावत् क्षीण इति ।

शेषाणां योगीति च, अनुभयवचनं तु विकलतः ॥६७९॥

टीका — मध्यम जो असत्य अर उभय मन वा वचन इनि च्यारि योगनि विषै सैनी मिथ्यादृष्टी तै लगाइ क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान हैं । बहुरि सत्य अर अनुभव मनोयोग विषै अर सत्य वचन योग विषै सैनी पर्याप्त मिथ्यादृष्टी तै लगाइ सयोगी पर्यंत तेरह गुणस्थान हैं । बहुरि इनि सबनि विषै जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि अनुभय वचनयोग विषै विकलत्रय मिथ्यादृष्टी तै लगाइ तेरह गुणस्थान हैं । बहुरि बेइंद्री, तेइंद्री, चौइंद्री, सैनी पंचेद्री, असैनी पंचेद्री इनका पर्याप्तरूप पांच जीवसमास है ।

**ओरालं पज्जत्ते, थावरकायादि जाव जोगो त्ति ।**

**तम्मिस्समपज्जत्ते, चदुगुणठाणेसु नियमेण ॥६८०॥**

ओरालं पर्याप्ते, स्थावरकायादि यावत् योगीति ।

तन्मिश्रमपर्याप्ते, चतुर्गुणस्थानेषु नियमेन ॥६८०॥

टीका — औदारिक काययोग एकेद्री स्थावर पर्याप्त मिथ्यादृष्टी तै लगाइ, सयोगी पर्यंत तेरह गुणस्थाननि विषै है । बहुरि औदारिक मिश्रकाययोग अपर्याप्त च्यारि गुणस्थाननि विषै ही है नियमकरि । किनविषै ? सो कहै है—

**मिच्छे सासणसम्मे, पुंवेदयदे कवाडजोगिम्मि ।**

**णर-तिरिये वि य दोण्णि वि, होंति त्ति जिणेहिं णिदिट्ठं ॥६८१॥**

मिथ्यात्वे सासनसम्यक्त्वे, पुवेदायते कपाटयोगिनि ।

नरतिरश्चोरपि च द्वावपि भवन्तीति जिनेर्निर्दिष्टम् ॥६८१॥

टीका — मिथ्यादृष्टी, सासादन पुरुषवेद का उदय करि संयुक्त असंयत, कपाट समुद्वात सहित सयोगी इनि अपर्याप्तरूप च्यारि गुणस्थाननि विषै, सो औदा-

रिक मिश्रयोग पाइए है । बहुरि औदारिक वा औदारिक-मिश्र ए दोऊ योग मनुष्य अर तिर्यचनि ही कै है, अँसा जिनदेवने कह्या है । बहुरि औदारिक विषे ती पर्याप्त सात जीवसमास है, अर औदारिक मिश्र विषे अपर्याप्त सात जीवसमास अर सयोगी कै एक पर्याप्त जीवसमास अँसै आठ जीवसमास है ।

**वेगुव्वं पज्जत्ते, इदरे खलु होदि तस्स मिस्सं तु ।  
सुर-णिरय-चउट्ठाणे, मिस्से ण हि मिस्सजोगो हु ॥६८२॥**

वेगुव्वं पर्याप्ते, इतरे खलु भवति तस्य मिश्रं तु ।  
सुरनिरयचतुःस्थाने, मिश्रे नहि मिश्रयोगो हि ॥६८२॥

टीका — वैक्रियिक योग पर्याप्त देव, नारकीनि के मिथ्यादृष्टी तै लगाइ च्यारि गुणस्थाननि विषे हैं । बहुरि वैक्रियिक-मिश्र योग मिश्रगुणस्थान विषे नाही; तातें देवन्नारकी संबंधी मिथ्यादृष्टी, सासादन, असंयत इनही विषे है । बहुरि जीवसमास वैक्रियिक विषे एक सैनी पर्याप्त है । अर वैक्रियिक मिश्र विषे एक सैनी निर्वृत्ति-अपर्याप्त है ।

**आहारो पज्जत्ते, इदरे खलु होदि तस्स मिस्सो दु ।  
अंतोमुहुत्तकाले, छट्ठगुणे होदि आहारो ॥६८३॥**

आहारः पर्याप्ते, इतरे खलु भवति तस्य मिश्रस्तु ।  
अंतर्मुहूर्तकाले, षष्ठगुणे भवति आहारः ॥६८३॥

टीका — आहारक योग सैनी पर्याप्तक छट्ठा गुणस्थान विषे जघन्यपने वा उत्कृष्टपने अतर्मुहूर्त काल विषे ही है । बहुरि आहारक-मिश्र योग है, तो उत्तर जो सजी अपर्याप्तरूप छट्ठा गुणस्थान विषे जघन्यपने वा उत्कृष्टपने अतर्मुहूर्त काल विषे ही हो है । तातें तिन दोऊनि कै गुणस्थान एक प्रमत्त अर जीवसमास मोई ए.ठ ए.ठ जानना ।

**ओरालियमिस्सं वा, चउगुणठाणेषु होदि कम्मइयं ।  
चदुगदिविग्गहकाले, जोगिस्स य पदरलोगपूरणगे ॥६८४॥**

ओरालिकमिश्रो वा, चतुर्गुणस्थानेषु भवति कामंजम् ।  
चतुर्गतिविग्रहकाले, योगिनश्च प्रतरलोकपूरणके ॥६८४॥



टीका - कार्माण्योग औदारिक मिश्रवत् च्यारि गुणस्थाननि विषे है । सो कार्माण्योग च्यार्यो गति संबन्धी विग्रहगति विषे वा सयोगी के प्रतर लोक पूरण काल विषे पाइए है । ताते गुणस्थान च्यारि अर जीवसमास आठ औदारिक मिश्रवत् इहां जानने ।

**थावरकायप्पहुदी, संढो सेसा असण्णिआदी य ।**

**अणियट्ठिस्स य पढमो, भागो त्ति जिणेहिं णिद्धिट्ठं ॥६८५॥**

स्थावरकायप्रभृतिः, षंडः शेषा असंज्ञादयश्च ।

अनिवृत्तेश्च प्रथमो, भागः इति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥६८५॥

टीका - वेदमार्गणा विषे नपुंसकवेद है, सो स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी तें लगाइ अनिवृत्तिकरण का पहिला सवेद भागपर्यंत हो है; ताते गुणस्थान नव, जीवसमास सर्व चौदह है । बहुरि शेष स्त्रीवेद अर पुरुषवेद सैनी, असैनी पंचेंद्रिय मिथ्यादृष्टी तें लगाइ, अनिवृत्तिकरण का अपना-अपना सवेद भागपर्यंत है । ताते गुणस्थान नव, जीवसमास सैनी, असैनी, पर्याप्त वा अपर्याप्तरूप च्यारि जिनदेवनि करि कहे हैं ।

**थावरकायप्पहुदी, अणियट्ठीबित्तिचउत्थभागो त्ति ।**

**कोहत्तियं लोहो पुण, सुहुमसरागो त्ति विण्णेयो ॥६८६॥**

स्थावरकायप्रभृति, अनिवृत्तिद्वित्रिचतुर्थभाग इति ।

क्रोधत्रिकं लोभः पुनः, सूक्ष्मसराग इति विज्ञेयः ॥६८६॥

टीका - कषायमार्गणा विषे स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी तें लगाइ क्रोध, मान, माया तौ क्रमते अनिवृत्तिकरण का दूसरा, तीसरा, चौथा भागपर्यंत है । अर लोभ सूक्ष्मसांपराय पर्यंत है; ताते क्रोध, मान, माया विषे गुणस्थान नव, लोभविषे दश; अर जीवसमास सर्वत्र चौदह जानने ।

**थावरकायप्पहुदी, मदिसुदअण्णाणयं विभंगो दु ।**

**सण्णीपुण्णप्पहुदी, सासणसम्मो त्ति णायव्वो ॥६८७॥**

स्थावरकायप्रभृति, मतिश्रुताज्ञानकं विभंगस्तु ।

संज्ञिपूर्णप्रभृति, सासनसम्यगिति ज्ञातव्यः ॥६८७॥

टीका — ज्ञानमार्गणा विषे कुमति, कुश्रुत अज्ञान दोऊ स्थावरकाय मिथ्या-  
दृष्टी तै लगाइ सासादनपर्यंत है । तातै तहा गुणस्थान दोय, अर जीवसमास चौदह  
हैं । बहुरि विभगज्ञान संज्ञी पर्याप्त मिथ्यादृष्टी आदि सासादन पर्यंत जानना; तातै  
गुणस्थान दोय अर जीवसमास एक सैनी पर्याप्त ही है ।

**सण्णाणतिगं अविरदसम्मादी छट्ठगादि मणपज्जो ।**

**खीणकसायं जाव दु, केवलणाणं जिणे सिद्धे ॥६८८॥**

सद्विज्ञानत्रिकमविरतसम्यगादि षष्ठकादिर्मनःपर्ययः ।

क्षीणकषायं यावत्तु, केवलज्ञानं जिने सिद्धे ॥६८८॥

टीका — मति, श्रुत, अवधि ए तीन सम्यग्ज्ञान असंयतादि क्षीणकषाय पर्यंत  
हैं; तातै गुणस्थान नव अर जीवसमास सैनी पर्याप्त अपर्याप्त ए दोय जानने । बहुरि  
मनःपर्ययज्ञान छट्ठा तै क्षीणकषाय पर्यंत है; तातै गुणस्थान सात अर जीवसमास  
एक सैनी पर्याप्त ही है । मनःपर्ययज्ञानी के आहारक ऋद्धि न होइ; तातै आहारक  
मिश्र अपेक्षा भी अपर्याप्तिपना न संभवै है । बहुरि केवलज्ञान सयोगी, अयोगी अर  
सिद्ध विषे है; तातै गुणस्थान दोय, जीवसमास सैनी पर्याप्त अर सयोगी की अपेक्षा  
अपर्याप्त ए दोय जानने ।

**अयदो त्ति हु अविरमणं, देसे देसो पमत्त इदरे य ।**

**परिहारो सामाइयछेदो छट्ठादि थूलो त्ति ॥६८९॥**

**सुहुमो सुहुमकसाये, संते खीणे जिणे जहक्खादं ।**

**संजममगणभेदा, सिद्धे रात्थित्ति णिद्दिट्ठं ॥६९०॥ जुम्मं ।**

अयत इति अविरमणं, देशे देशः प्रमत्तेतरस्मिन् च ।

परिहारः सामायिकश्छेदः षष्ठादिः स्थूल इति ॥६८९॥

सूक्ष्मः सूक्ष्मकषाये, शान्ति क्षीणे जिने यथाख्यातम् ।

संयममार्गणा भेदाः, सिद्धे न संतीति निर्दिष्टम् ॥६९०॥

टीका — संयममार्गणा विषे असंयम है, सो मिथ्यादृष्ट्यादिक असंयत पर्यंत  
चारि गुणस्थाननि विषे है । तहां जीवसमास चौदह है । बहुरि देशसंयम एकदेश

संयत गुणस्थान विषै ही है । तहां जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि सामायिक छेदोपस्थापना संयम प्रमत्तादिक अनिवृत्तिकरण पर्यंत च्यारि गुणस्थानन विषै है । तहां जीवसमास संज्ञी पर्याप्त अर आहारक मिश्र अपेक्षा अपर्याप्त ए दोय हैं । बहुरि परिहारविशुद्धि संयम प्रमत्त अप्रमत्त दोय गुणस्थाननि विषै ही है । तहां जीवसमास एक सैनी पर्याप्त हैं; जातैं इस सहित आहारक होइ नाही । बहुरि सूक्ष्मसांपराय संयम सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान विषै ही है । तहां जीवसमास एक सैनी पर्याप्त है । बहुरि यथाख्यात संयम उपशांतकषायादिक च्यारि गुणस्थाननि विषै है । तहां जीवसमास एक सैनी पर्याप्त अर समुद्घात केवली की अपेक्षा अपर्याप्त ए दोय हैं । बहुरि सिद्ध विषै संयम नाही है, जातैं चारित्र है, सो मोक्ष का मार्ग है, मोक्षरूप नाही है, अैसे परमागम विषै कह्या है ।

**चउरक्खथावराविरदसम्मादिट्ठी दु खीणमोहो त्ति ।  
चक्खु-अचक्खु-ओही, जिणसिद्धे केवलं होदि ॥६९१॥**

चतुरक्षस्थावराविरतसम्यग्दृष्टिस्तु क्षीणमोह इति ।  
चक्षुरचक्षुरवधिः, जिनसिद्धे केवलं भवति ॥६९१॥

टीका - दर्शनमार्गणा विषै चक्षुदर्शन है । सो चौइंद्री मिथ्यादृष्टी आदि क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान विषै है । तहां जीवसमास चौइंद्री, सैनी पंचेद्री असैनी पंचेद्री पर्याप्त वा अपर्याप्त ए छह है । बहुरि अचक्षु दर्शन स्थावरकाय मिथ्या दृष्टी आदि क्षीणकषाय पर्यंत बारह गुणस्थान विषै हैं । तहां जीवसमास चौदह है । बहुरि अवधि दर्शन असंयतादि क्षीणकषाय पर्यंत नव गुणस्थान विषै है । तहां जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त दोय है । बहुरि केवलदर्शन सयोग - अयोग दोय गुणस्थान विषै है । तहां जीवसमास केवलज्ञानवत् दोय है अर सिद्ध विषै भी केवल दर्शन है ।

**थावरकायप्पहुदी, अविरदसम्मो त्ति असुह-तिय-लेस्सा ।  
सण्णीदो अपमत्तो, जाव दु सुहतिणिणलेस्साओ ॥६९२॥**

स्थावरकायप्रभृति, अविरतसम्यगिति अशुभत्रिकलेश्याः ।  
संज्ञितोऽप्रमत्तो यावत्तु शुभास्तिलो लेश्याः ॥६९२॥

टीका — लेश्यामार्गणा विषे कृष्णादिक अशुभ तीन लेश्याए हे । ते स्थावर मिथ्यादृष्टी आदि असंयत पर्यंत है । तहा जीवसमास चौदह है । बहुरि तेजोलेश्या अर पद्मलेश्या सैनी मिथ्यादृष्टी आदि अप्रमत्त पर्यंत है । तहा जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय है ।

एवमिदं सुकला लेश्या, सयोगिचरिमो त्ति होदि नियमेण ।  
गयजोगिमि वि सिद्धे, लेश्या णत्थि त्ति निदिट्ठं ॥६६३॥

नवरि च शुक्ला लेश्या, सयोगिचरम इति भवति नियमेन ।

गतयोगेऽपि च सिद्धे, लेश्या नास्तीति निदिष्टम् ॥६६३॥

टीका — शुक्ललेश्या विषे विशेष है, सो कहा ? शुक्ललेश्या सैनी मिथ्यादृष्टी आदि सयोगी पर्यंत है । तहां जीवसमास सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय है नियम करि; जातें केवलसमुद्घात का अपर्याप्तपना इहां अपर्याप्त जीवसमास विषे गर्भित है । बहुरि अयोगी जिन विषे वा सिद्ध विषे लेश्या नाही, अंसा परमागम विषे कहा है ।

थावरकायप्पहुदी, अजोगिचरिमो त्ति होन्ति भवसिद्धा ।  
मिच्छाइट्ठिठ्ठाणे, अभव्वसिद्धा हवन्ति त्ति ॥६६४॥

स्थावरकायप्रभृति, अयोगिचरम इति भवन्ति भवसिद्धाः ।

मिथ्यादृष्टिस्थाने, अभव्यसिद्धा भवन्तीति ॥६६४॥

टीका — भव्यमार्गणा विषे भव्यसिद्ध है, ते स्थावरकाय मिथ्यादृष्टी आदि अयोगी पर्यंत है । अर अभव्यसिद्ध एक मिथ्यादृष्टी गुणस्थान विषे ही हैं । इनि दोऊनि विषे जीवसमास चौदह-चौदह है ।

मिच्छो सासनमिस्सो, सग-सग-ठाणम्मि होदि अयदादो ।  
पढमुवसमवेदगसम्मत्तदुगं अप्पमत्तो त्ति ॥६६५॥

मिथ्यात्वं सासनमिश्रौ, स्वकस्वकस्थाने भवति अयतात् ।

प्रथमोपशमवेदकसम्यक्त्वद्विकमप्रमत्त इति ॥६६५॥

टीका — सम्यक्त्वमार्गणा विषे मिथ्यादृष्टी, सासादन, मित्र ए तीन तो अपने-अपने एक-एक गुणस्थान विषे हैं । बहुरि जीवसमास मिथ्यादृष्टी विषे तो

चौदह हैं । सासादन विषे बादर एकेंद्री, बेद्री, तेंद्री, चौइन्द्री, सैनी, असैनी अपर्याप्त अर सैनी पर्याप्त ए सात पाइए । द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तै पड़ि जो सासादन कौ प्राप्त भया होइ, ताकी अपेक्षा तहां सैनी पर्याप्त अर देव अपर्याप्त ए दोय ही जीवसमास है । मिश्र विषे सैनी पर्याप्त एक ही जीवसमास है । बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर वेदक सम्यक्त्व ए दोऊ असंयतादि अप्रमत्त पर्यंत है । तहां जीवसमास प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषे तौ मरण नाही है, तातै एक संज्ञी पर्याप्त ही है । अर वेदक सम्यक्त्व विषे सैनी पर्याप्त वा अपर्याप्त ए दोय हैं; जातैं धम्मानरक, भवनत्रिक बिना देव, भोगभूमिया मनुष्य वा तिर्यंच, इनिकै अपर्याप्त विषे भी वेदक सम्यक्त्व संभव है ।

द्वितीयोपशम सम्यक्त्व को कहैं हैं—

बिदियुवसमसम्मत्तं, अविरदसम्मादि संतमोहो त्ति ।

खड्गं सम्मं च तहा, सिद्धो त्ति जिणेहिं णिदिट्ठं ॥६६६॥

द्वितीयोपशमसम्यक्त्वमविरतसम्यगादिशांतमोह इति ।

क्षायिकं सम्यक्त्वं च तथा, सिद्ध इति जिनेर्निदिष्टम् ॥६६६॥

टोका — द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असंयतादि उपशांत कषाय पर्यंत है; जातैं इस द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कौ अप्रमत्त विषे उपजाय ऊपरि उपशांतकषाय पर्यंत जाइ, नीचे पड़ै, तहां असंयत पर्यंत द्वितीयोपशम सम्यक्त्व सहित आवै, तातै असंयत आदि विषे भी कहा । तहां जीवसमास संज्ञी पर्याप्त अर देव असंयत अपर्याप्त ए दोय पाइए है, जातैं द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषे मरण है, सो मरि देव ही हो है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व असंयतादि अयोगी पर्यंत ही है । तहां जीवसमास संज्ञी पर्याप्त है । अर जाके आयु बंध हुवा होइ, ताके धम्मा नरक, भोगभूमिया मनुष्य, तिर्यंच, वैमानिक देव, इनिका अपर्याप्त भी है, तातै दोय जीवसमास है । बहुरि सिद्ध विषे भी क्षायिक सम्यक्त्व है; असा जिनदेवने कहा है ।

सण्णी सण्णिप्पहुदी, खीणकसाओ त्ति होदि णियमेण ।

थावरकायप्पहुदी, असण्णि त्ति हवे असण्णी हु ॥६६७॥

संज्ञी संज्ञिप्रभृतिः क्षीणकषाय इति भवति नियमेन ।

स्थावरकायप्रभृतिः, असंज्ञीति भवेदसंज्ञी हि ॥६६७॥

टीका — संज्ञी मार्गणा विषे 'संज्ञी जीव' मिथ्यादृष्टी आदि क्षीणकपाय पर्यंत है । तहा जीवसमास संज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त ए दोय है । बहुरि असंज्ञी जीव स्थावर कायादिक असैनी पचेद्री पर्यंत मिथ्यादृष्टी गुणस्थान विषे ही है नियमकरि । तहा जीवसमास सैनी संबंधी दोय बिना बारह जानने ।

**थावरकायप्पहुदी, सजोगिचरिमो त्ति होदि आहारी ।  
कम्मइय अणाहारी, अजोगिसिद्धे वि णायव्वो ॥६६८॥**

स्थावरकायप्रभृतिः, सयोगिचरम इति भवति आहारी ।  
कर्मण अनाहारी, अयोगिसिद्धेऽपि ज्ञातव्यः ॥६९८॥

टीका — आहारमार्गणा विषे स्थावर काय मिथ्यादृष्टी आदि सयोगी पर्यंत आहारी है । तहां जीवसमास चौदह है । बहुरि मिथ्यादृष्टी, सासादन, असंयत, सयोगी इनिके कार्माण अवस्था विषे अर अयोगी जिन अर सिद्ध भगवान इनि विषे अनाहार है । तहां जीवसमास अपर्याप्त सात, अयोगी की अपेक्षा एक पर्याप्त ए आठ हैं ।

आगें गुणस्थाननि विषे जीवसमासनि कौ कहै है—

**मिच्छे चोद्दसजीवा, सासण अयदे पमत्तविरदे य ।  
सण्णदुगं सेसगुणे, सण्णीपुण्णो दु खीणो त्ति ॥६६९॥**

मिथ्यात्वे चतुर्दश जीवाः, सासानायते प्रमत्तविरते च ।  
संज्ञिद्विकं शेषगुणे, संज्ञिपूर्णस्तु क्षीण इति ॥६९९॥

टीका — मिथ्यादृष्टी विषे जीवसमास चौदह है । सासादन विषे, अविरत विषे, प्रमत्त विषे चकार ते सयोगी विषे संज्ञी पर्याप्त, अपर्याप्त ए दोय जीवसमास है । इहा प्रमत्त विषे आहारक मिश्र अपेक्षा अर सयोगी विषे केवल समुद्घात अपेक्षा अपर्याप्तपना जानना । बहुरि अवशेष आठ गुणस्थाननि विषे अपि शब्द तें अयोगी विषे भी एक संज्ञीपर्याप्त जीवसमास है ।

आगें मार्गणास्थाननि विषे जीवसमासनि कौ दिखावै है —

**तिरिय-गदीए चोद्दस, हवंति सेसेसु जाण दो दो दु ।  
मग्गणठाणस्सेवं, णेयाणि समासठाणाणि ॥७००॥**

तिर्यग्गतौ चतुर्दश, भवन्ति शेषेषु जानीहि द्वौ द्वौ तु ।  
मार्गणास्थानस्यैवं, ज्ञेयानि समासस्थानानि ॥७००॥

टीका — तिर्यग्गति विषे जीवसमास चौदह हैं । अवशेष गतिनि विषे संज्ञी पर्याप्ति वा अपर्याप्ति ए दोय दोय जीवसमास जानने । अैसे मार्गणास्थानकनि विषे यथायोग्य पूर्वोक्त अनुक्रम करि जीवसमास जानने ।

आगे गुणस्थाननि विषे पर्याप्ति वा प्राण कहै हैं—

पञ्जत्ती पाणा वि य, सुगमा भाविन्द्रियं ण जोगिस्मिह ।  
तहिं वाचुस्सासाउगकायत्तिगदुगमजोगिणो आऊ ॥७०१॥

पर्याप्तयः प्राणा अपि च, सुगमा भावेन्द्रियं न योगिनि ।  
तस्मिन् वागुच्छ्वासायुष्ककायत्रिकद्विकमयोगिन आयुः ॥७०१॥

टीका — चौदह गुणस्थाननि विषे पर्याप्ति अर प्राण जुदे न कहिए है; जातें सुगम है । तहा क्षीणकषाय पर्यंत तो छहौ पर्याप्ति है, दशौ प्राण हैं । बहुरि सयोगी जिन विषे भावेन्द्रिय तौ है नाहीं, द्रव्येन्द्रिय की अपेक्षा छह पर्याप्ति है । बहुरि सयोगी के प्राण च्यारि है — १ वचनबल, २ सासोस्वास, ३ आयु, ४ कायबल ए च्यारि है । अवशेष पंचेन्द्रिय अर मन ए छह प्राण नाहीं है । तहा वचनबल का अभाव होतें तीन ही प्राण रहै है । उस्वास निश्वास का अभाव होतें दोय ही रहै है । बहुरि अयोगी विषे एक आयु प्राण ही रहे है । तहां पूर्वे सचित भया था, जो कर्मनोकर्म का स्कंध, सो समय समय प्रति एक एक निषेक गलतें अवशेष द्वचर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्व रह्या, सो द्रव्यार्थिक नय करि तौ अयोगी का अतसमय विषे नष्ट हो है । पर्यायार्थिक नय करि ताके अगतर समय विषे नष्ट हो है — यह तात्पर्य है ।

आगे गुणस्थाननि विषे संज्ञा कहै है—

छट्ठो त्ति पढमसण्णा, सकज्ज सेसा य कारणावेक्खा ।  
पुव्वो पढमणियट्ठो, सुहुमो त्ति कमेण सेसाओ ॥७०२॥

षष्ठ इति प्रथमसंज्ञा, सकार्या शेषाश्च कारणापेक्षाः ।

अपूर्वः प्रथमानिवृत्तिः, सूक्ष्म इति क्रमेण शेषाः ॥७०२॥

टीका — मिथ्यादृष्टी आदि प्रमत्तपर्यंत अपना कार्यसहित च्यार्यो संज्ञा है । तहां छठे गुणस्थानि आहार संज्ञा का विच्छेद हुआ, अवशेष तीन संज्ञा अप्रमत्तादि विषे है; सो तिनिका निमित्तभूत कर्म पाइए है । तहां ताकी अपेक्षा है, कार्य रहित है, सो अपूर्वकरण पर्यंत तीन संज्ञा है । तहां भय संज्ञा का विच्छेद भया । अनिवृत्ति-करण का प्रथम सवेदभाग पर्यंत मैथुन, परिग्रह दोय संज्ञा है । तहां मैथुन संज्ञा का विच्छेद भया । सूक्ष्मसांपराय विषे एक परिग्रह संज्ञा रही । ताका तहा ही विच्छेद भया । ऊपरि उपशात कषायादिक विषे कारण का अभाव ते कार्य का भी अभाव है । ताते कार्य रहित भी सर्व संज्ञा नाही है ।

मार्गण उवजोगा वि य, सुगमा पुव्वं परुविदत्तादो ।  
गदिआदिसु मिच्छादो, परुविदे रूविदा होंति ॥७०३॥

मार्गणा उपयोगा अपि च, सुगमाः पूर्वं प्ररूपितत्वात् ।  
गत्यादिषु मिथ्यात्वाद्वा, प्ररूपिते रूपिता भवन्ति ॥७०३॥

टीका — गुणस्थानकनि विषे चौदह मार्गणा अर उपयोग लगाना सुगम है, जाते पूर्वं प्ररूपण करि आए है । मार्गणानि विषे गुणस्थान वा जीवसमास कहे । तहां ही कथन आय गया, तथापि मदबुद्धिनि के समझने के निमित्त बहुरि कहिए है । नरकादि गतिनामा नामकर्म के उदय तें उत्पन्न भई पर्याप्त, ते गति कहिए, सो मिथ्या-दृष्टी विषे च्यार्यो नारकादि गति, पर्याप्त वा अपर्याप्त है । सासादन विषे नारक अपर्याप्त नाही, अवशेष सर्व है । मिश्र विषे च्यार्यो गति पर्याप्त ही है । असयत विषे धम्मानारक तौ पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ है । अवशेष नारक पर्याप्त ही है । बहुरि भोगभूमियां तिर्यच वा मनुष्य अर कर्मभूमिया मनुष्य अर वैमानिक देव तौ पर्याप्त वा अपर्याप्त दोऊ है । अर कर्मभूमियां तिर्यच अर भवनत्रिक देव ए पर्याप्त ही चतुर्थ गुणस्थान विषे पाइए हैं । बहुरि देशसंयत विषे कर्मभूमिया तिर्यच वा मनुष्य पर्याप्त ही है । बहुरि प्रमत्त विषे मनुष्य पर्याप्त ही है, आहारक सहित पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ हैं । बहुरि प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत मनुष्य पर्याप्त ही है, सयोगी विषे पर्याप्त वा समुद्घात अपेक्षा अपर्याप्त है । अयोगी पर्याप्त ही है ।

बहुरि एकेन्द्रियादिक जातिनामा नामकर्म के उदय ते निपज्या जीव के पर्याप्त सो इन्द्रिय है । तिनकी मार्गणा एकेन्द्रियादिक पंच है । ते मिथ्यादृष्टी विषे तौ पाचों



पर्याप्त वा अपर्याप्त है । सासादन विषे अपर्याप्त तौ पाचौ पाइए अर पर्याप्त एक पंचेद्रिय पाइए है । मिश्र विषे पर्याप्त पंचेद्रिय ही है । असंयत विषे पर्याप्त वा अपर्याप्त पंचेद्री है । देशसंयत विषे पर्याप्त पंचेद्री ही है । प्रमत्त विषे आहारक अपेक्षा दोऊ है । अप्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत एक पंचेद्रिय पर्याप्त ही है । सयोगी विषे पर्याप्त है, समुद्घात अपेक्षा दोऊ है । अयोगी विषे पर्याप्त ही पंचेद्रिय है ।

पृथ्वीकायादिक विशेष कौ लीए एकेंद्रिय जाति अर स्थावर नामा नामकर्म का उदय अर त्रस नामा नामकर्म का उदय तै निपजे जीव के पर्याय ते काय कहिए, ते छद्म प्रकार है । तहां मिथ्यादृष्टी विषे तौ छहौं पर्याप्त वा अपर्याप्त हैं । सासादन विषे बादर पृथ्वी, अप, वनस्पती ए स्थावर अर त्रस विषे बेंद्री, तेद्री, चौद्री, असैनी पंचेद्री ए तौ अपर्याप्त ही है । अर सैनी त्रस काय पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ है । आगें संज्ञी पंचेद्रिय त्रस काय ही है, तहां मिश्र विषे पर्याप्त ही है । अविरत विषे दोऊ है । देशसंयत विषे पर्याप्त ही है । प्रमत्त विषे पर्याप्त है । आहारक सहित दोऊ है । अप्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत पर्याप्त ही है, सयोगी विषे पर्याप्त ही है । समुद्घात सहित दोऊ है । अयोगी विषे पर्याप्त ही है ।

पुद्गल विपाकी शरीर अर अंगोपांग नामा नामकर्म के उदय तै मन, वचन, काय करि संयुक्त जो जीव, ताके कर्म नोकर्म आवने कौ कारण जो शक्ति वा ताकरि उत्पन्न भया जो जीव के प्रदेशनि का चचलपना, सो योग है । सो मन-वचन-काय भेद तै तीन प्रकार है । तहा वीर्यातिराय अर नोइन्द्रियावरण कर्म, तिनके क्षयोपशम करि अंगोपांग नामकर्म के उदय करि मनःपर्याप्ति संयुक्त जीव के मनोवर्गणारूप जे पुद्गल आए, तिनिका आठ पाखड़ी का कमल के आकार हृदय स्थानक विषे जो निर्माण नामा नामकर्म तै निपज्या, सो द्रव्य मन है । तहा जो कमल की पांखड़ीनि का अग्रभागनि विषे नोइन्द्रियावरण का क्षयोपशमयुक्त जीव का प्रदेश समूह है, तिनिविषे लब्धि उपयोग लक्षण कौ धरै, भाव मन है । ताका जो परिणमन, सो मनोयोग है । सो सत्य, असत्य, उभय, अनुभय रूप विषय के भेद तै च्यारि प्रकार है । बहुरि भाषापर्याप्ति करि संयुक्त जो जीव, ताके शरीर नामा नामकर्म के उदय करि अर स्वरनामा नामकर्म का उदय का सहकारी कारण करि भाषावर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कंध तिनिका च्यारि प्रकार भाषारूप होइ परिणमन, सो वचन योग है । सो वचन योग भी सत्यादिक पदार्थनि का कहनहारा है, ताते च्यारि प्रकार है ।

बहुरि औदारिक, वैक्रियिक, आहारक शरीर नामा नामकर्म के उदय करि आहार वर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कंध, तिनिका निर्माण नामा नामकर्म के उदय करि निपज्या जो शरीर, ताके परिणामन के निमित्त तै जीव का प्रदेशनि का जो चचल होना, सो औदारिक आदि काय योग है । बहुरि शरीरपर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् एक समय घाटि अंतर्मुहूर्त पर्यंत, तिनके मिश्र योग है । इहा मिश्रपना कह्या है, सो औदारिकादिक नोकर्म की वर्गणानि का आहरण आप ही तै न हो है, कार्माण वर्गणा का सापेक्ष लीए है; तातै कह्या है । बहुरि विग्रह गति विषै औदारिकादिक नोकर्म की वर्गणानि का तौ ग्रहण है नाही, कार्माण शरीर नामा नामकर्म का उदय करि कार्माण वर्गणारूप आए जे पुद्गल स्कंध, तिनिका ज्ञानावरणादिक कर्म पर्याय करि जीव के प्रदेशनि विषै बघ होतै भया जो जीव के प्रदेशनि का चचलपना, सो कार्माण काययोग है । असै ए पंद्रह योग है ।

तिसु तेरं दस मिस्से, सत्तसु णव छट्ठयम्मि एगारा ।

जोगिम्मि सत्त जोगा, अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥७०४॥

त्रिषु त्रयोदश दश मिश्रे, सप्तसु नव षष्ठे एकादश ।

योगिनि सप्त योगा, अयोगिस्थानं भवेत् शून्यम् ॥७०४॥

टीका — कहे पंद्रह योग, तिनि विषै मिथ्यादृष्टी, सासादन, असंयत इन तीनों विषै तेरह तेरह योग है, जातै आहारक, आहारकमिश्र, प्रमत्त बिना अन्यत्र नाही है । बहुरि मिश्र विषै औदारिक मिश्र, वैक्रियिकमिश्र, कार्माण ए तीनों भी नाही, तातै दश ही है । बहुरि ऊपरि सात गुणस्थानकनि विषै वैक्रियिक योग भी नाही है; तातै प्रमत्त विषै तौ आहारकद्विक के मिलने तै ग्यारह योग है, औरनि विषै नव नव योग है । बहुरि सयोगी विषै सत्य-अनुभय मनोयोग, सत्य-अनुभय वचनयोग, औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण ए सात योग है । अयोगी गुणस्थान विषै योग नाही तातै शून्य है । बहुरि स्त्री, पुरुष, नपुंसक वेदनि करि उदय करि वेद हो है, ते तीनों अनिवृत्तिकरण के सवेदभाग पर्यंत है; ऊपरि नाही ।

बहुरि क्रोधादिक च्यारि कषायनि का यथायोग्य अनतानुबधी इत्यादि रूप उदय होत संतै क्रोध, मान, माया, लोभ हो है । तहां मिथ्यादृष्टी सासादन विषै तौ अनंतानुबधी आदि च्यारि च्यारि प्रकार है । मिश्र असंयत विषै अनतानुबधी बिना

तीनतीन प्रकार हैं । देशसंयत विषे अप्रत्याख्यान बिना दोय दोय प्रकार है । प्रमत्तादि अनिवृत्तिकरण का दूसरा भागपर्यंत संज्वलन क्रोध है । तीसरा भाग पर्यंत मान है । चौथा भाग पर्यंत माया है । पंचम भाग पर्यंत बादर लोभ है । सूक्ष्मसांपराय विषे सूक्ष्म लोभ है । ऊपर सर्व कषाय रहित है ।

मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्ययज्ञानावरण के क्षयोपशम तै मति आदि ज्ञान हो है । केवल ज्ञानावरण के समस्त क्षय तै केवलज्ञान हो है । मिथ्यात्व का उदय करि सहवर्ती अैसे मति, श्रुत, अवधि ज्ञानावरण के क्षयोपशम तै कुमति, कुश्रुत, विभंग ज्ञान हो है; सो सर्व मिलि आठ ज्ञान भए । तहां मिथ्यादृष्टी सासादन विषे तौ तीन कुज्ञान हैं । मिश्र विषे तीन कुज्ञान वा सुज्ञान मिश्ररूप है । अविरत अर देशसंयत विषे मति, श्रुत, अवधि ए आदि के तीन सुज्ञान हैं । प्रमत्तादि क्षीणकषायपर्यंत विषे मनःपर्यय सहित आदिक के च्यारि सुज्ञान है । सयोगी, अयोगी विषे एक केवल-ज्ञान है ।

बहुरि संज्वलन की चौकड़ी अर नव नोकषाय इनके मंद उदय करि व्रत का धारना, समिति का पालना, कषाय का निग्रह, दंड का त्याग, इन्द्रियनि का जय अैसे भावरूप संयम हो है । सो संयम सामान्यपने एक सामायिक स्वरूप है; जातै सर्वसावद्ययोगविरतोऽस्मि' मै सर्व पाप सहित योग का त्यागी हू; अैसे भाव विषे सर्व गर्भित भए । विशेषपने असयम, देशसंयम, सामायिक, छेदोपस्थापना, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात भेद तै सात प्रकार है । तहा असयत पर्यंत च्यारि गुणस्थाननि विषे असयम ही है । देशसयत विषे देशसयम है । प्रमत्तादिक अनिवृत्तिकरण पर्यंत सामायिक, छेदोपस्थापना है । प्रमत्त-अप्रमत्त विषे परिहार विशुद्धि भी है । सूक्ष्मसांपराय विषे सूक्ष्मसांपराय है । उपशात कषायादिक विषे यथाख्यात सयम है ।

बहुरि चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण के क्षयोपशम तै अर केवलदर्शनावरण के समस्त क्षय तै चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल दर्शन हो है । तहा मिश्रगुणस्थान पर्यंत तौ चक्षु, अचक्षु, दोय दर्शन है । असंयतादि क्षीणकषाय पर्यंत विषे चक्षु, अचक्षु, अवधि तीन दर्शन है । सयोग, अयोग अर सिद्ध विषे केवल दर्शन है ।

कषाय के उदय करि अनुरंजित अैसी मन, वचन, कायरूप योगनि की प्रवृत्ति सो लेश्या है । सो शुभ-अशुभ के भेद तै दोय प्रकार है । तहां अशुभलेश्या कृष्ण, नील, कपोत भेद तै तीन प्रकार है । शुभ लेश्या तेज, पद्म, शुक्लभेद तै तीन प्रकार

है । तहां असंयत पर्यंत तौ छहौ लेश्या है । देशसंयतादि अप्रमत्त पर्यंत विषे तीन शुभ-  
लेश्या ही है । अपूर्वकरणादि सयोगी पर्यंत विषे शुक्ललेश्या ही है । अयोगी, योग  
के अभाव तै लेश्या रहित है ।

सामग्रीविशेष करि रत्नत्रय वा अनंत चतुष्टयरूप परिणमने कौ योग्य, सो  
भव्य कहिए । परिणमने कौ योग्य नाहीं, सो अभव्य कहिए । इहा अभव्य राशि  
जघन्य युक्तानन्त प्रमाण है । संसारी राशि में इतना घटाए, अवशेष रहै, तितने भव्य  
सिद्ध है । सो भव्य तीन प्रकार — १ आसन्नभव्य, २ दूरभव्य, ३ अभव्यसमभव्य । जे  
थोरे काल में मुक्त होने योग्य होइ, ते आसन्नभव्य है । जे बहुत काल में मुक्त होने  
होइ, ते दूर भव्य है । जे त्रिकाल विषे मुक्त होने के नाहीं, केवल मुक्त होने की  
योग्यता ही कौ धरै है, ते अभव्यसम भव्य है । सो इहा मिथ्यादृष्टी विषे भव्य-अभव्य  
दोऊ है । सासादनादि क्षीणकषायपर्यंत विषे एक भव्य ही है । सयोग-अयोग विषे  
भव्य अभव्य का उपदेश नाहीं है ।

बहुरि अनादि मिथ्यादृष्टी जीव क्षयोपशमादिक पचलब्धि का परिणामरूप  
परिणया । तहां मिथ्यादृष्टी ही विषे करण कीए, तहा अनिवृत्तिकरण का अंत  
समय विषे अनतानुबधी अर मिथ्यात्व इनि पचनि का उपशम करि ताके अनंतर  
समय विषे मिथ्यात्व का ऊपरि के वा नीचे के निषेक छोडि, बीच के निषेकनि का  
अभाव करना; सो अंतर कहिए, सो अंतर्मुहूर्त के जेते समय तितने निषेकनि का  
अभाव अनिवृत्तिकरण विषे ही कीया था, सो तिनि निषेकनिरूप जो अतरायाम सबधी  
अंतर्मुहूर्त काल, ताका प्रथम समय विषे प्रथमोपशम सम्यक्त्व कौ पाइ असंयत हो है ।  
वा प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर देशव्रत, इनि दोऊनि कौ युगपत् पाइ करि देशसंयत हो  
है । अथवा प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर महाव्रत, इनि दोऊनि कौ युगपत् पाइ करि  
अप्रमत्तसंयत हो है । तहां तिस पावने के प्रथम समय तै लगाइ, अंतर्मुहूर्त ताई गुण  
संक्रमण विधान करि मिथ्यात्वरूप द्रव्यकर्म कौ गुणसंक्रमण भागहार करि घटाइ  
घटाइ तीन प्रकार करै है । गुणसंक्रमण विधान अर गुणसंक्रमण भागहार का कथन  
आगे करैगे, तहां जानना । सो मिथ्यात्व प्रकृति रूप अर सम्यक्त्वमिथ्यात्व प्रकृतिरूप  
वा सम्यक्त्व प्रकृतिरूप अैसे एक मिथ्यात्व तीन प्रकार तहा कीजिए है; सो इनि  
तीनों का द्रव्य जो परमाणूनि का प्रमाण, सो असंख्यात गुणा, असंख्यात गुणा घाटि  
अनुक्रम तै जानना ।

इहां प्रश्न - जो मिथ्यात्व कौं मिथ्यात्व प्रकृतिरूप कहा कीया ?

ताकां समाधान - पूर्वे जो उस मिथ्यात्व की स्थिति थी, तामे अतिस्थापनावली मात्र घटावै है, सो अतिस्थापनावली का भी स्वरूप आगे कहैगे । जो अप्रमत्त गुणस्थान कौ प्राप्त हो है, सो अप्रमत्तस्यो-प्रमत्त में अर प्रमत्तस्यो-अप्रमत्त में संख्यात हजार बार आवै जाय है । तातें प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्रमत्त विषे भी कहिए ते ए चार्यों गुणस्थानवर्ती प्रथमोपशमसम्यक्त्व का अंतर्मुहूर्त काल विषे जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहैं, अर तहां अनंतानुबंधी की किसी प्रकृति का उदय होइ तौ सासादन होइ । बहुरि जो भव्यता गुण का विशेष करि सम्यक्त्व गुण का नाश न होइ तौ उस उपशम सम्यक्त्व का काल कौ पूर्ण होतें सम्यक्त्व प्रकृति के उदय तें वेदक सम्यग्दृष्टी हो है । बहुरि जो मिश्र प्रकृति का उदय होइ, तौ सम्यग्मिथ्यादृष्टी हो है । बहुरि जो मिथ्यात्व ही का उदय आवै तो मिथ्यादृष्टी ही होइ जाइ ।

बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषे विशेष है, सो कहा ?

उपशम श्रेणी चढने के निमित्त कोई सातिशय अप्रमत्त वेदक सम्यग्दृष्टी तहां अप्रमत्त विषे तीन करण की सामर्थ्य करि अनंतानुबंधी का प्रशस्तोपशम बिना अप्रशस्तोपशम करि ऊपरि के जे निषेक, जिनिका काल न आया है, ते तौ है ही; जे नीचे के निषेक अनंतानुबंधी के है, तिनिकौ उत्कर्षण करि ऊपरि के निषेकनि विषे प्राप्त करै है वा विसयोजन करि अन्य प्रकृतिरूप परिणमावै है, अैसे क्षपाइ दर्शनमोह की तीन प्रकृति, तिनिका बीच के निषेकनि का अभाव करने रूप अंतरकरण करि अतर कीया । बहुरि उपशमविधान करि दर्शनमोह की प्रकृतिनि कौ उपशमाइ, अंतर कीएं निषेक सबधी अतर्मुहूर्त काल का प्रथम समय विषे द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी होइ, उपशम श्रेणी कौ चढि, क्रम तें उपशात कषाय पर्यंत जाइ, तहां अतर्मुहूर्त काल तिष्ठि करि, अनुक्रम तें एक एक गुणस्थान उतरि करि, अप्रमत्त गुणस्थान कौ प्राप्त होइ, तहां अप्रमत्त स्यो प्रमत्त में वा प्रमत्त स्यो अप्रमत्त में हजारों बार आवै जाइ, तहांस्यो नीचे देशसयत होइ, तहां तिष्ठै; वा असंयत होइ तहां तिष्ठै । अथवा जो ग्यारह्वां आदि गुणस्थाननि विषे मरण होइ, तौ तहा स्यो अनुक्रम बिना देव पर्ययरूप असंयत हो है । वा मिश्र प्रकृति के उदय तें मिश्र गुणस्थानवर्ती हो है वा अनंतानुबंधी के उदय होतें द्वितीयोपशम सम्यक्त्व कौ विराधै है; अैसी किसी आचार्य की पक्ष की अपेक्षा सासादन हो है । वा मिथ्यात्व का उदय करि मिथ्या-

दृष्टी हो है । बहुरि असंयतादिक च्यारि गुणस्थानवर्ती जे मनुष्य, बहुरि असंयत, देश-संयत गुणस्थानवर्ती उपचार महाव्रत जिनके पाइए है, असी आर्या स्त्री, ते कर्मभूमि के उपजे असै वेदक सम्यक्त्वी होइ, तिनहीके केवली श्रुतकेवली दोन्यो विषे किसी का चरणां के निकटि सात प्रकृति का सर्वथा क्षय होते क्षायिक सम्यक्त्व हो है, सो असै सम्यक्त्व का विधान कहा ।

सो सम्यक्त्व सामान्यपनै एक प्रकार है । विशेषपनै १ मिथ्यात्व, २ सासादन ३ मिश्र, ४ उपशम, ५ वेदक, ६ क्षायिक भेद तै छह प्रकार है । तहा मिथ्यादृष्टी विषे तो मिथ्यात्व ही है । सासादन विषे सासादन है । मिश्र विषे मिश्र है । असंयतादिक अप्रमत्त पर्यंत विषे उपशम (औपशमिक), वेदक, क्षायिक तीन सम्यक्त्व है । अपूर्व-करणादि उपशात कषाय पर्यंत उपशमश्रेणी विषे उपशम, क्षायिक दोय सम्यक्त्व है । क्षपक श्रेणीरूप अपूर्वकरणादिक सिद्ध पर्यंत एक क्षायिक सम्यक्त्व ही है ।

बहुरि नो इंद्रिय, जो मन, ताके आवरण के क्षयोपशम तै भया जो ज्ञान, ताकौ संज्ञा कहिए । सो जिसके पाइए, सो संज्ञी है । जाके न पाइए अर यथासंभव अन्य इंद्रियनि का ज्ञान पाइए, सो असंज्ञी है । तहा सज्ञी मिथ्यादृष्टि आदि क्षीण कषाय पर्यंत है । असंज्ञी मिथ्यादृष्टी विषे ही है । सयोग अयोग विषे मन-इन्द्रिय सम्बन्धी ज्ञान नाही है; तातै सज्ञी-असज्ञी न कहिए है ।

बहुरि शरीर अर अगोपाग नामा नामकर्म के उदय तै उत्पन्न भया जो शरीर वचन, मन रूप नोकर्म वर्गणा का ग्रहण करना, सो आहार है । विग्रहगति विषे वा प्रतर लोक पूर्ण महित सयोगी विषे वा अयोगा विषे वा सिद्ध विषे अनाहार है, तातै मिथ्यादृष्टी, सासादन, असंयत, सयोगी इनि विषे तौ दोऊ है । अवशेष नव गुण-स्थान विषे आहार ही है । अयोगी विषे वा सिद्ध विषे अनाहार ही है ।

गुणस्थाननि विषे उपयोग कहै है -

दोण्हं पंच य छच्चैव, दोसु मिस्सम्मि होति वामिस्सा ।  
सत्तुवजोगा सत्तसु, दो चैव जिणे य सिद्धे य ॥७०५॥

द्वयोः पंच च षट्चैव, द्वयोर्मिश्रे भवन्ति व्यामिश्राः ।

सप्तोपयोगाः सप्तसु, द्वौ चैव जिने च सिद्धे च ॥७०५॥

टीका - गुण पर्यायवान् वस्तु है, ताके ग्रहरूप जो व्यापार प्रवर्तन, सो उप योग है । ज्ञान है, सो जानने योग्य जो वस्तु, तातें नाहीं उपजै हैं । सो कह्या है -

स्वहेतुजनितोऽप्यर्थः, परिच्छेद्यः स्वतो यथा ।

तथा ज्ञानं स्वहेतूत्थं, परिच्छेदात्मकं स्वतः ॥१॥

याका अर्थ - जैसे वस्तु अपने ही उपादान कारण तैं निपज्या, आपही तैं जानने योग्य है । तैसे ज्ञान अपने ही उपादान कारण तैं निपज्या, आपही तैं जानने-हारा है । बहुरि ज्ञेय पदार्थ अर प्रकाशादिक ए ज्ञानका कारण नाही, जातैं ए ती ज्ञेय है । जैसे अंधकार ज्ञेय है, तैसे ए भी ज्ञेय है - जानने योग्य है । जानने कों कारण नाही, अैसा जानना । बहुरि सो उपयोग ज्ञान दर्शन के भेद तैं दोय प्रकार है । तहां कुमति, कुश्रुत, विभंग, मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय, केवल भेद तैं ज्ञानोपयोग आठ प्रकार है । चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल भेद तैं दर्शनोपयोग च्यारि प्रकार है । तहां मिथ्यादृष्टी सासादन विषे तो कुमति, कुश्रुत, विभंग ज्ञान, चक्षु, अचक्षु, दर्शन ए पांच उपयोग है । बहुरि मिश्रविषे मिश्ररूप मति, श्रुत, अवधि ज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शन, ए छह उपयोग है । असंयत देशसंयत विषे मति, श्रुत, अवधिज्ञान, चक्षु, अचक्षु, अवधिदर्शन ए छह उपयोग है । प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत विषे तेई मनः-पर्यय सहित सात उपयोग है । सयोगी, अयोगी, सिद्ध विषे केवलज्ञान केवलदर्शन ए दोय उपयोग है ।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पचसंग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम सस्कृत टीका के अनुसार सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका नामा भाषाटीका विषे प्ररूपित जे बीस प्ररूपणा, तिनिविषे गुणस्थाननिविषे बीस प्ररूपणा निरूपणा नामा इकवीसवां अधिकार सम्पूर्ण भया ॥२॥

## बाईसवां अधिकार : आलापाधिकार

सुरनर गणपति पूज्यपद, बहिरंतर श्री धार ।

नेमि धर्मरथनेमिसम, भजौं हौहु श्रीसार ॥२२॥

आगें आलाप अधिकार को अपने इष्टदेव को नमस्कार पूर्वक कहनेको प्रतिज्ञा करें हैं -

गोयमथेरं पणमिय, ओघादेसेसु बीसभेदाणं ।

जोजणिकाणालावं, वोच्छामि जहाकमं सुणहु ॥७०६॥

गौतमस्थविरं प्रणम्य, ओघादेशयोविशभेदानाम् ।

योजनिकानामालापं, वक्ष्यामि यथाक्रमं शृणुत ॥७०६॥

टोका - विशिष्ट जो गो कहिए भूमि, आठवी पृथ्वी, सो है स्थविर कहिए सास्वती, जाके असा सिद्धसमूह, अथवा गौतम है स्थविर कहिए गणधर जाके असा वर्धमान स्वामी अथवा विशिष्ट है गो कहिए वाणी जाकी असा स्थविर कहिए मुनि-समूह, सो असे जु गौतम स्थविर ताहि प्रणम्य नमस्कार करिके ओघ जो गुणस्थान अर आदेश जो मार्गणास्थान, इनिविषे जोडनेरूप जो गुणस्थानादिक बीस प्ररूपणा, तिनिका आलाप, ताहि यथाक्रम कहौंगा, सो सुनहु । जहा बीस प्ररूपणा प्ररूपिए, असे विवक्षित स्थाननि का कहना ताका नाम आलाप जानना । सो कहै है -

ओघे चोदसठाणे, सिद्धे बीसदिविहाणमालावा ।

वेदकसायविभिण्णे, अणियट्ठीपंचभागे य ॥७०७॥

ओघे चतुर्दशस्थाने, सिद्धे विंशतिविधानामालापाः ।

वेदकषायविभिन्ने, अनिवृत्तिपंचभागे च ॥७०७॥

टोका - ओघ जो गुणस्थान अर चौदह मार्गणास्थान ए परमागम विषे प्रसिद्ध है । सो इनिविषे गुणजीवा पज्जत्ती इत्यादिक बीस प्ररूपणानि का सामान्य पर्याप्त, अपर्याप्त ए तीन आलाप हो है । बहुरि वेद अर कषाय करि है भेद जिनि विषे असे अनिवृत्तिकरण के पंच भाग तिनिविषे आलाप जुदे-जुदे जानने ।



धारै सो पर्याप्त तिर्यच । बहुरि जो स्त्रीवेदरूप है, सो योनिमत तिर्यच । जो लब्धि अपर्याप्त अवस्था कौ धारै सो लब्धि अपर्याप्त तिर्यच ।

तहां सामान्यादिक चारि प्रकार तिर्यचनि कै पंच गुणस्थान पाइए । तहां मिथ्यादृष्टी, सासादन, अविरत विषै तीन तीन आलाप हैं । तहां इतना विशेष है— योनिमत तिर्यच के अविरत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है; जातै जो पहिलें तिर्यच आयु बांध्या होइ तो भी सम्यग्दृष्टी स्त्रीवेद नपुंसकवेद विषै न उपजै । बहुरि मिश्र वा देशविरत विषै पर्याप्त आलाप ही है ।

**तेरिच्छियलद्वियपज्जत्ते, एक्को अपुण्ण आलावो ।**

**मूलोघं मणुसतिए, मणुसिणिअयदम्हि पज्जत्तो ॥७१४॥**

तिर्यग्लब्ध्यपर्याप्ते, एक अपूर्ण आलापः ।

मूलोघं मनुष्यत्रिके, मानुष्ययते पर्याप्तः ॥७१४॥

टीका — लब्धि अपर्याप्त तिर्यच विषै एक अपर्याप्त आलाप ही है ।

बहुरि मनुष्य चारि प्रकार - तहां सर्वभेद जामें गर्भित होइ अंसा सामान्य मनुष्य । बहुरि जो पर्याप्त अवस्था कौ धारै, सो पर्याप्त मनुष्य, बहुरि जो स्त्री वेद-रूप सो योनिमत मनुष्य, बहुरि जो लब्धि अपर्याप्तपनां कौ धारै, सो लब्धि अपर्याप्त मनुष्य है ।

तहा सामान्यादिक तीन प्रकार मनुष्यनि के प्रत्येक चौदह गुणस्थान पाइए । इहा भाव वेद अपेक्षा योनिमत मनुष्य के चौदह गुणस्थान कहे है । गुणस्थानवत् आलाप जानने । विशेष इतना - जो योनिमत मनुष्य के असंयत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है । कारण पूर्वे कहा ही है ।

बहुरि इतना विशेष है — जो असंयत तिर्यचिणी के प्रथमोपशम, वेदक ए दोय सम्यक्त्व है । अर मनुष्यणी के प्रथमोपशम, वेदक, क्षायिक ए तीन सम्यक्त्व संभवै है । तथापि जहां सम्यक्त्व हो है, तहां पर्याप्त आलाप ही है । सम्यक्त्व सहित मरै, सो स्त्रीवेदनि विषै न उपजै है । बहुरि द्रव्य अपेक्षा योनिमती, पंचम गुणस्थान तें ऊपरि गमन करै नाही, तातै तिनके द्वितीयोपशम सम्यक्त्व नाही है ।

मणुसिणि प्रमत्तविरदे, आहारदुगं तु एत्थि शिथमेण ।

अवगदवेदे मणुसिणि, सण्णा भूदगदिमासेज्ज ॥७१५॥

मानुष्यां प्रमत्तविरते, आहाराद्विकं तु नास्ति नियमेन ।

अपगतवेदायां मानुष्यां, संज्ञा भूतगतिमासाद्य ॥७१५॥

टीका — द्रव्य पुरुष अर भाव स्त्री असा मनुष्य प्रमत्तविरत गुणस्थान विषे होइ, ताके आहारक अर आहारक आंगोपांग नामकर्म का उदय नियम करि नाही है ।

तु शब्द तै स्त्रीवेद, नपुसकवेद का उदय विषे मन पर्ययज्ञान अर परिहार विशुद्धि संयम ए भी न हो है ।

बहुरि भाव मनुष्यणी विषे चौदह गुणस्थान है । द्रव्य मनुष्यणी विषे पाच ही गुणस्थान है ।

बहुरि वेद रहित अनिवृत्तिकरण विषे मनुष्यणी कै मैथुन संज्ञा कही है । सो कार्य रहित भूतपूर्वगति न्याय करि जाननी । जैसे कोऊ राजा था, वाकौ राजभ्रष्ट भए पीछे भी राजा ही कहिए है; तैसे जाननी । सो भाव स्त्री भी नववा ताई ही है । इहां चौदह गुणस्थान कहे, सो भूतपूर्वगति न्यायकरि ही कहे है । बहुरि आहारक ऋद्धि कौ जो प्राप्त भया, ताके भी वा परिहार विशुद्धि संयम विषे द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अर मन पर्यय ज्ञान न हो है; जातै तैतीस वर्ष बिना सो परिहार विशुद्धि संयम होइ नाही । प्रथमोपशम सम्यक्त्व की इतनी स्थिति नाही । अर परिहार विशुद्धि संयम सहित श्रेणी न चढे, तातै द्वितीयोपशम सम्यक्त्व भी बने नाही, तातै तिन दोऊनि का संयोग नाही संभवै है ।

एणलद्धिअपज्जत्ते, एक्को दु अपुण्णगो दु आलावो ।

लेस्साभेदविभिण्णा, सत्तवियप्पा सुरट्ठाणा ॥७१६॥

नरलब्ध्यपर्याप्ते, एवस्तु अपूर्णकस्तु आलापः ॥

लेश्याविभिन्नानि, सप्तविकल्पानि सुरस्थानानि ॥७१६॥

टीका — बहुरि लब्धि अपर्याप्त मनुष्य विषे एक अपर्याप्त आलाप ही है । बहुरि लेश्या भेद करि भिन्न ऐसे देवनि के स्थानक सात है; ते कहै हैं ।

भवनत्रिक देव, बहुरि सौधर्म युगल, बहुरि सनत्कुमार युगल, बहुरि ब्रह्मादिक छह, बहुरि शतारयुगल, बहुरि आनतादिक नवम ग्रैवेयक पर्यंत तेरह, बहुरि अनुदिश, अनुत्तर विमान चौदह, इनि सात स्थानकनि विषै क्रम तै तेज का जघन्यांश, बहुरि तेज का मध्यमांश, बहुरि तेज का उत्कृष्टांश, पद्म का जघन्यांश, बहुरि पद्म का मध्यमांश, बहुरि पद्म का उत्कृष्टांश, शुक्ल का जघन्यांश, बहुरि शुक्ल का मध्यमांश, बहुरि शुक्ल का उत्कृष्टांश ए लेश्या पाइए हैं ।

सर्वसुराणं ओघे, मिच्छदुगे अविरदे य तिण्णोव ।  
णवरि य भवणतिकप्पित्थीणं च य अविरदे पुण्णो ॥७१७॥

सर्वसुराणामोघे, मिथ्यात्वद्विके अविरते च त्रय एव ।  
नवरि च भवनत्रिकल्पस्त्रीणां च च अविरते पूर्णः ॥७१७॥

टीका — सर्व सामान्य देव विषै मिथ्यादृष्टी सासादन, असंयत इनिविषै तीन तीन आलाप है । बहुरि इतना विशेष — जो भवनत्रिक देव अर कल्पवासिनी स्त्री, इनके असंयत विषै एक पर्याप्त आलाप ही है । जातै असंयत तिर्यच मनुष्य मरि करि-तहा उपजै नाही ।

मिस्से पुण्णालाओ, अणुद्दिसाणुत्तरा हु ते सम्मा ।  
अविरद तिण्णालावा, अणुद्दिसाणुत्तरे होति ॥७१८॥

मिश्रे पूर्णालापः, अनुदिशानुत्तरा हि ते सम्यक् ।  
अविरते त्रय आलापाः, अनुदिशानुत्तरे भवति ॥७१८॥

टीका — नव ग्रैवेयक पर्यंत सामान्य देव, तिनके मिश्र गुणस्थान विषै एक पर्याप्त आलाप ही है । बहुरि अनुदिश अर अनुत्तर विमानवासी अहमिद्र सर्व सम्यग्दृष्टी ही है । तातै तिनके असंयत विषै तीन आलाप है ।

आगे इन्द्रिय मार्गणा विषै कहै हैं—

वादरसुहमेन्द्रिय-बि-ति-चउ-रिन्द्रियअसण्णिजीवाणं ।  
ओघे पुण्णे तिण्ण य, अपुण्णगे पुण्ण अपुण्णो दु ॥७१९॥

वादरसूक्ष्मैर्केन्द्रियद्वित्रिचतुरिन्द्रियासंज्ञिजीवानाम् ।  
ओघे पूर्णं त्रयश्च, अपूर्णके पुनः अपूर्णस्तु ॥७१९॥

टीका - बादर सूक्ष्म एकेद्रिय, बहुरि बेद्री, तेद्री, चौद्री, असैनी पंचेद्री इनकी सामान्य रचना पर्याप्त नामकर्म का उदय संयुक्त, तीहि विषै तीन आलाप है । निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्था विषै भी पर्याप्त नामकर्म ही का उदय जानना ।

सण्णी ओघे मिच्छे, गुणपडिवण्णे य मूलआलावा ।  
लद्धियपुण्णे एक्कोऽपज्जत्तो होदि आलाओ ॥७२०॥

संज्ञोघे मिथ्यात्वे, गुणप्रतिपन्ने च मूलालापाः ।  
लब्ध्यपूर्णं एकः, अपर्याप्तो भवति आलापः ॥७२०॥

टीका - सैनी पंचेद्री तिर्यंच की सामान्य रचना विषै पंच गुणस्थान है । तिनि विषै मिथ्यादृष्टी में तो मूल में कहे थे, तेई तीन आलाप है । बहुरि जो विशेष गुण को प्राप्त भया, ताके सासादन अर संयत विषै मूल में कहे ते तीन, तीनों आलाप हैं । मिश्र अर देशसंयत विषै एक पर्याप्त आलाप है । बहुरि सैनी लब्धि अपर्याप्त विषै एक लब्धि अपर्याप्त आलाप ही है ।

आगे कायमार्गणा विषै दोय गाथानि करि कहै है -

भू-आउ-तेउ-वाऊ-णिच्चचदुग्गदि-णिगोदगे तिणिण ।  
ताणं थूलिदरेसु वि, पत्तेगे तद्दुभेदे वि ॥७२१॥

तसजीवाणं ओघे, मिच्छादिगुणे वि ओघ आलाओ ।  
लद्धिअपुण्णे एक्कोऽपज्जत्तो होदि आलाओ ॥७२२॥ जुम्मं ।

स्वप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदके त्रयः ।  
तेषां स्थूलेतरयोरपि, प्रत्येके तद्विभेदेऽपि ॥७२१॥

असजीवानामोघे, मिथ्यात्वादिगुणेऽपि ओघ आलापः ।  
लब्ध्यपूर्णं एकः, अपर्याप्तो भवत्यालापः ॥७२२॥ युग्मम् ।

टीका - पृथ्वी, अप, तेज, वायु, नित्यनिगोद, चतुर्गतिनिगोद इनके बादर-सूक्ष्म भेद, बहुरि प्रत्येक वनस्पती याके सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित भेद, इनि सबनि विषै तीन-तीन आलाप है । अस जीवनि के सामान्य करि चाँदह गुणस्थाननि विषै,

गुणस्थाननि विपै कहे तैसे ही आलाप है; किछू विशेष नाही । पृथ्वी आदि त्रस पर्यंत जो लब्धि अपर्याप्ति है, ताकै एक लब्धि अपर्याप्ति ही आलाप है ।

आगे योगमार्गणा विषै कहै हैं—

एककारसजोगाणं, पुण्णगदाणं सपुण्णआलाओ ।

मिस्सचउक्कस्स पुणो, सगएक्कअपुण्ण आलाओ ॥७२३॥

एकादशयोगानां, पूर्णगतानां स्वपूर्णांलापः ।

मिश्रचतुष्कस्य पुनः, स्वकैकापूर्णांलापः ॥७२३॥

टीका — पर्याप्ति अवस्था विषै होहिं अैसे च्यारि मन, च्यारि वचन, औदारिक, वैकियक, आहारक इन ग्यारह योगनि कै अपना-अपना एक पर्याप्ति आलाप ही है । जैसे सत्य मनोयोग के सत्य मन पर्याप्ति आलाप है । अैसे सबनि कै जानना । बहुरि अवशेष रहे च्यारि, मिश्र योग, तिनिके अपना अपना एक अपर्याप्ति आलाप ही है । जैसे आदारिक मिश्र के एक औदारिक मिश्र अपर्याप्ति आलाप है । अैसे सबनि कै जानना ।

आगे अवशेष मार्गणा विपै कहै है —

वेदादाहारो त्ति य, सगुणट्ठाणाणमोघ आलाओ ।

णवरि य संढिच्छीणं, णत्थि हु आहारणाण दुगं ॥७२४॥

वेदादाहार इति च, स्वगुणस्थानानामोघ आलापः ।

नवरि च पंडस्त्रीणां, नास्ति हि आहारकानां द्विकम् ॥७२४॥

टीका — वेदमार्गणा ते लगाइ आहारमार्गणा पर्यंत दश मार्गणानि विषै अपना अपना गुणस्थाननि का आलापनि का अनुक्रम गुणस्थाननि विपै कहे, तैसे ही जानना । उनका विशेष है जो भावनपुंसक वा स्त्री वेद होइ अरु द्रव्य पुरुष होइ अैसे जो वेद आहारक, आहारकमिश्र आलाप नाही है, जातै आहारक गरीर विपै प्रश-  
न्य मति के ही उदय है । तथा वेदनि के अनिवृत्तिकरण का सवेद भाग पर्यंत गुणस्थाननि । लोभ, मान, माया, वादर लोभ इनिके अनिवृत्तिकरण के वेद रहित  
तथा तथा पर्यंत क्रम ते गुणस्थान हैं । सूक्ष्म लोभ के सूक्ष्म सापराय ही है ।  
दुर्गा, दुर्गा विपै कहे दोय गुणस्थान हैं । मति, श्रुत, अवधि के नव है ।

मनःपर्यय के सात है । केवलज्ञान के दोय है । असंयम के च्यारि है । देशसयम के एक है । सामायिक, छेदोपस्थापना के च्यारि है । परिहार विशुद्धि के दोय है । सूक्ष्मसांपराय के एक है । यथाख्यात चारित्र के च्यारि है । चक्षु, अचक्षु दर्शन के बारह है । अवधि दर्शन के नव है । केवल दर्शन के दोय है । कृष्ण, नील, कपोत लेश्या के च्यारि है । पीत पद्म के सात है । शुक्ल के तेरह है । भव्य के चौदह हैं । अभव्य के एक है । मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र के एक एक है । द्वितीयोशम सम्यक्त्व के आठ है । प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर वेदक के च्यारि है । क्षायिक के ग्यारह है । संज्ञी के बारह है । असंज्ञी के एक है । आहारक के तेरह है । अनाहारक के पांच हैं । अैसे ए गुणस्थान कहे, तिन गुणस्थाननि विषे आलाप मूल में जैसे सामान्य गुणस्थाननि विषे अनुक्रम करि आलाप कहे थे, तैसे ही जानने ।

**गुणजीवा पञ्जत्ती, प्राणा सण्णा गइंदिया काया ।**

**जोगा वेदकसाया, णाणजमा दंसणा लेस्सा ॥७२५॥**

**भव्वा सम्मत्ता वि य, सण्णी आहारगा य उवजोगा ।**

**जोगा परूविदव्वा, ओघादेसेसु समुदायं ॥७२६॥ जुम्मं ।**

गुणजीवाः पर्याप्तयः, प्राणाः संज्ञाः गतीन्द्रियाणि कायाः ।

योगा वेदकषायाः, ज्ञानयमाः दर्शनानि लेश्याः ॥७२५॥

भव्याः सम्यक्त्वान्यपि च, संज्ञिनः आहारकाश्रोपयोगाः ।

योग्याः प्ररूपितव्या, ओघादेशयोः समुदायम् ॥७२६॥ युग्मम् ।

टीका — गुणस्थान चौदह, मूल जीवसमास चौदह, तहां पर्याप्ति सात, अपर्याप्ति सात, पर्याप्ति छह, तहां सज्ञी पचेन्द्रिय के पर्याप्ति अवस्था विषे पर्याप्ति अवस्था संबधी छह अर अपर्याप्ति अवस्था विषे अपर्याप्ति संबधी छह, असज्ञी वा विकलत्रय के पर्याप्ति-अपर्याप्ति सबधी पांच-पांच, एकेद्री के च्यारि-च्यारि जानने ।

प्राण — सज्ञी पचेन्द्रिय के दश, तीहि अपर्याप्ति के सात, अनज्ञी पचेन्द्रिय के नव तीहि अपर्याप्ति के सात, चौइन्द्री के आठ, तीहि अपर्याप्ति के छह, तेइन्द्री के नान, तीहि अपर्याप्ति के पांच, वेइन्द्री के छह, तीहि अपर्याप्ति के च्यारि, एकेन्द्रिय के च्यारि, तीहि अपर्याप्ति के तीन हैं । सयोग केवली के वचन, काय, उस्वास, यातु ए च्यारि

प्राण है । तिसही के वचन बिना तीन हो हैं । कायबल बिना दोय होय है । अयोगी के एक आशु प्राण है ।

बहुरि संज्ञा च्यारि, गति च्यारि, इन्द्रिय पांच, काय छह, योग पंद्रह तिनमें पर्याप्त अवस्था संबंधी ग्यारह, अपर्याप्त अवस्था संबंधी तीन मिश्र अर एक कार्माण ए च्यारि हैं । वेद तीन, कषाय च्यारि, ज्ञान आठ, संयम सात, दर्शन च्यारि, लेश्या छह, भव्य दोय, सम्यक्त्व छह, संज्ञी दोय, आहार दोय, उपयोग बारह, ए सर्व समुच्चय गुणस्थान वा मार्गणा स्थाननि विषे यथायोग्य प्ररूपण करने ।

जीवसमास विषे विशेष कहै है -

ओघे आदेशे वा, सण्णीपज्जंतगा हवे जत्थ ।

तत्थ य उणवीसंता, इगि-बि-ति-गुणिदा हवे ठाणा ॥७२७॥

ओघे आदेशे वा, संज्ञिपर्यन्तका भवेयुर्यत्र ।

तत्र चैकोनविंशता, एकद्वित्रिगुणिता भवेयुः स्थानानि ॥७२७॥

टीका - गुणस्थान वा मार्गणास्थान विषे जहां संज्ञी पंचेद्री पर्यंत मूल चौदह जीवसमास निरूपण करिए, तहां उत्तर जीवसमास एक नै आदि देकरि उगणीस पर्यंत सामान्य करि, दोय पर्याप्त अपर्याप्त करि, तीन पर्याप्त, अपर्याप्त, लब्धि अपर्याप्त करि गुणें, एकनै आदि देकरि उगणीस पर्यंत वा दोय नै आदि देकरि अठतीस पर्यंत वा तीन नै आदि देकरि सत्तावन पर्यंत जीवसमास के भेद है । ते सर्व भेद तहा जानने । सामान्य जीवसमास एक, त्रस-स्थावर भेदतै दोय, इत्यादि सर्वभेद जीवसमास अधिकार विषे कहे है; सो जानने । इनिकों एक, दोय, तीन करि गुणें क्रमतै एक, दोय, तीन आदि उगणीस, अठतीस सत्तावन पर्यंत भेद हो है ।

इहा तै आगे गुणस्थानमार्गणा विषे गुणस्थान, जीवसमास इत्यादि बीस भेद जोडिए है; सो कहिए है -

वीर-मुह-कमल-गिग्गय-सयल-सुय-ग्गहण-पयउण-समत्थं ।

णामिऊण गोयममहं, सिद्धंतालावमणुवोच्छं ॥७२८॥

वीरमुखकमलनिर्गतसकलश्रुतग्रहणप्रकटनसमर्थम् ।

नत्वा गौतममहं सिद्धांतालापमनुवक्ष्ये ॥७२८॥

टीका — वर्धमान स्वामी के मुख कमल तै निकस्या अैसा सकल शास्त्र महा-  
गंभीर, ताके प्रकट करने कौ समर्थ अैसा सिद्धपर्यंत आलाप, सो श्रीगौतम स्वामी कौ  
नमस्कार करि मैं कहौ हौ ।

तहां सामान्य गुणस्थान रचना विषै जैसै चौदह गुणस्थानवर्ती जीव है । गुण-  
स्थान रहित सिद्ध है । चौदह जीवसमास युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव है ।  
छह-छह, पांच-पांच, च्यारि-च्यारि, पर्याप्ति, अपर्याप्ति युक्त जीव है । तिनकरि रहित  
जीव है । दश, सात, नव, सात, आठ, छह, सात, पांच, छह, च्यारि, च्यारि, तीन, च्यारि,  
दोय, एक प्राण के धारी जीव है । तिनकरि रहित जीव है । पंद्रह योग युक्त जीव है ।  
अयोगी जीव है । तीन वेद युक्त जीव है । तिनकरि रहित जीव है । च्यारि कषाय युक्त  
जीव है । तिनकरि रहित जीव है । आठ ज्ञान युक्त जीव हैं । ज्ञान रहित जीव नाही ।  
सप्त संयम युक्त जीव हैं । तिनकरि रहित जीव है । च्यारि दर्शन युक्त जीव हैं ।  
दर्शन रहित जीव नाही । द्रव्य, भाव छह लेश्या युक्त जीव है । लेश्या रहित जीव है ।  
भव्य वा अभव्य जीव है । दोऊ रहित जीव है । छह सम्यक्त्व युक्त जीव है । सम्य-  
क्त्व रहित नाही । संज्ञी वा असंज्ञी जीव है । दोऊ रहित जीव है । आहारी जीव हैं ।  
अनाहारी जीव है । दोऊ रहित नाही । साकारोपयोग वा अनाकारोपयोग वा युगपत्  
दोऊ उपयोग युक्त जीव है । उपयोग रहित जीव नाही है । अैसै अन्यत्र यथासंभव  
जानना ।

अथ गुणस्थान वा मार्गणास्थाननि विषै यथायोग्य बीस प्ररूपणा निरूपणा  
कीजिए है ।

सो यन्त्रनि करि विवक्षित गुणस्थान वा मार्गणास्थान का आलाप विषै जो  
जो प्ररूपणा पाइए, सो सो लिखिए हैं । तहां यन्त्रनि विषै अैसी सहनानी जाननी ।  
पहिलैं तौ एक बडा कोठा, तिस विषै तौ जिस आलाप विषै बीस प्ररूपणा लगाई,  
तिसका नाम लिखिए है । बहुरि तिस कोठे के आगै आगै बरोबरि बीस कोठे, तिन-  
विषै प्रथमादि कोठे तै लगाइ, अनुक्रम तै गुणस्थान, जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञी,  
गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद, कषाय, ज्ञान, संयम, दर्शन, लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व,  
संज्ञी, आहार, उपयोग ए बीस प्ररूपणा जो जो पाइए, सो सो लिखिए है । तिनविषै  
गुणस्थानादिक का नाम नाही लिखिए है । तथापि पहिला कोठा विषै गुणस्थान,  
दूसरा विषै जीवसमास, तीसरा विषै पर्याप्ति इत्यादि बीसवां कोठा विषै उपयोग पर्यंत  
जानने । तहा तिनि कोठेनि विषै जहां जिस प्ररूपणा का जितना प्रमाण होइ, तितने



ही का अंक लिख्या होइ, तहां तौ सो प्ररूपणा सर्व जाननी । जैसे पहिले कोठे में चौदह का अंक जहां लिख्या होइ, तहां सर्व गुणस्थान जानने । दूसरा कोठे विषे जहां चौदह का अंक लिख्या होइ, तहां सर्व जीवसमास जानने । जैसे ही तृतीयादि कोठेनि विषे जहां छह, दश, च्यारि, च्यारि, छह, पंद्रह, तीन, च्यारि, आठ, सात, च्यारि, छह, दोय, छह, दोय-दोय बारह के अंक लिखे होंइ, तहां अपने अपने कोठेनि विषे सो सो प्ररूपणा सर्व जाननी । बहुरि जहां प्ररूपणा का अभाव होइ, तहां बिदी लिखिए है । जैसे पहिले कोठे विषे जहां बिदी लिखी होइ, तहां गुणस्थान का अभाव जानना । दूसरा कोठा विषे जहां बिदी लिखी होइ, तहां जीवसमास का अभाव जानना । जैसे अन्यत्र जानना । बहुरि जहां प्ररूपणा विषे केतेक भेद पाइए, तहां अपने अपने कोठेनि विषे जितने भेद पाइए, तितनेका अंक लिखिए है । बहुरि तिन भेदनि के नाम जानने के अर्थ नाम का पहिला अक्षर वा पहिले दोय आदि अक्षर वा दोय विशेषण जानने के अर्थ दोऊ विशेषणनि के आदि के दोय अक्षर वा तिन अक्षरनि के आगे अपनी संख्या के अंक लिखिए है, सोई कहिए है—

जितने गुणस्थान पाइए, तितने का अंक पहिले कोठे में लिखिए है । तिस अंक के नीचे तिन गुणस्थाननि का नाम जानने के अर्थ तिनके नामनि के आदि-अक्षर लिखिए है । सो आदि अक्षर की सहनानी तै सर्व नाम जानि लेना ।

तहां मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि के नाम की ऐसी सहनानी । मि । सा । मिश्र । अवि । देश । प्र । अग्र । अपू । अनि । सू । उ । क्षी । स । अ ।

बहुरि जहां आदि के ऐसा लिख्या होइ, तहां मिथ्यादृष्टि आदि जितने लिखे होंइ, तितने गुणस्थान जानने । बहुरि जैसे ही दूसरा कोठा विषे जीवसमास, सो जीवसमास दोय प्रकार पर्याप्त वा अपर्याप्त, तहां सहनानी ऐसी ष । अ । बहुरि तहां सूक्ष्म, वादर, वेद्री, तेद्री, चौद्री, असंजी, संजी की सहनानी ऐसी सू । बा । बें । तें । चौ । अ । सं । तहां सूक्ष्म के पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ होंइ, तौ सहनानी ऐसी सू २ पर्याप्त ही होइ तौ सहनानी ऐसी सू ष १ । अपर्याप्त ही होइ तौ ऐसी सू अ १ संजी पर्याप्त अपर्याप्त की ऐसी सं २ पर्याप्त की ऐसी सं ष १ संजी अपर्याप्त की ऐसी सं अ १ सहनानी है । जैसे ही औरनि की जाननी । बहुरि जहां अपर्याप्त ही जीवसमास होइ, तहां 'अपर्याप्त' ऐसा लिखिए है । जहां पर्याप्त ही होइ, तहां 'पर्याप्त' ऐसा लिखिए है । बहुरि प्रमत्त विषे आहारक अपेक्षा, सयोगी विषे केवल-

समुद्घात अपेक्षा, पर्याप्त-अपर्याप्त जीवसमास जानने । बहुरि कायमार्गणा की रचना विषै जहां सत्तावन, अठचारणवै, च्यारि सै छह जीवसमास कहे है, ते यथासंभव पर्याप्त, अपर्याप्त सामान्य आलाप विषै जानि लेने । बहुरि वनस्पती रचना विषै प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक बादर सूक्ष्म, चित्य-इतर निगोद के पर्याप्त अपर्याप्त की अपेक्षा यथासंभव जीवसमास बारह नै आदि देकरि जानने ।

बहुरि तीसरा कोठा विषै पर्याप्ति, सो पर्याप्ति जितनी पाइए, तिनके अंक ही लिखिए है, नाम नाही लिखिए है । तहा अैसा जानना छह तौ संज्ञी पंचेद्री के, पंच असंज्ञी वा विकलत्रय के, च्यारि एकेद्री के जानने । ते पर्याप्त आलाप विषै तौ पर्याप्त जानने । अपर्याप्त आलाप विषै अपर्याप्त जानने । सामान्य आलाप विषै ते दोय दोय बार जहां लिखे होइ, तहां पर्याप्त, अपर्याप्त दोऊ जानने ।

बहुरि चौथा कोठा विषै प्राण, ते प्राण जितने पाइए है तिनके अंक ही लिखिए है, नाम नाही लिखिए है । तहां अैसा जानना ।

पर्याप्त आलाप विषै तौ दश संज्ञी के अर नव असंज्ञी के आठ चौद्री के, सात तेद्री के, छह बेद्री के, च्यारि एकेद्री के, बहुरि च्यारि सयोगी के, एक अयोगी का यथासंभव जानने । बहुरि अपर्याप्त आलाप विषै सात संज्ञी के, सात असंज्ञी के, छह चौद्री के, पांच तेद्री के, च्यारि बेद्री के, तीन एकेद्री के, बहुरि दोय सयोगी के, यथा-संभव जानने । बहुरि जहां सामान्य आलाप विषै ते पूर्वोक्त दोऊ लिखिए, तहां पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ जानने ।

बहुरि पांचवां कोठा विषै संज्ञा, तहां आहारादिक की अैसी सहनानी है आ ।  
भ । मै । प ।

बहुरि छठा कोठा विषै गति, तहां नरकादिक की अैसी सहनानी है न ।  
ति । म । दे ।

बहुरि सातवां कोठा विषै इन्द्रिय, तहां एकेद्रियादिक की अैसी सहनानी है  
ए । बें । तें । चौ । पं ।

बहुरि आठवां कोठा विषै काय, सो पृथ्वी आदि की अैसी पृ । अ । ते । वा ।  
व । बहुरि पांचो ही स्थावरनि की अैसी—स्था ५ । बहुरि त्रस की अैसी त्र । सहनानी है ।

बहुरि नवमां कोठा विषै योग, तहां मन के च्यारि, तिनकी अैसी म ४ ।  
वचन के च्यारि, तिनकी अैसी ब ४ । काय के विषै औदारिकादिकनि की अैसी औ ।  
औ मि । वै । वै मि । आ । आ मि । का । अथवा औदारिक, औदारिकमिश्र इनि  
दोऊनि की अैसी औ २ । वैक्रियिक द्विक की अैसी वै २ । आहारक द्विक की अैसी  
आ २ । बहुरि सयोगी के सत्य, अनुभय, मन-वचन पाइए । तिनकी अैसी  
म २ । ब २ । बहुरि बेद्रियादिक के अनुभय वचन पाइए, ताकी अैसी अनु ब १ ।  
सहनानी है ।

बहुरि दशवां कोठा विषै वेद, तहां नपुंसकादिक की अैसी न । पु । स्त्री  
सहनानी है ।

बहुरि ग्यारहवां कोठा विषै कषाय, तहां क्रोधादिक की अैसी क्रो । मा ।  
माया । लो । सहनानी है । बहुरि बारह्वां कोठा विषै ज्ञान, तहां कुमति, कुश्रुत,  
विभंग की अैसी कुम । कुश्रु । वि । अथवा इन तीनों की अैसी कुज्ञान ३ । बहुरि  
मतिज्ञानादिक की म । श्रु । अ । म । के । अथवा मति, श्रुत, अवधि तीनों की अैसी  
मत्यादि ३ । मति, श्रुत, अवधि, मन-पर्यय की अैसी मत्यादि ४ । सहनानी है ।

बहुरि तेरहवां कोठा विषै संयम, तहां संयमादिक की अैसी अ । दे । सा ।  
छे । प । सू । य । सहनानी है ।

बहुरि चौदहवां कोठा विषै दर्शन, तहां चक्षु आदि की अैसी च । अच । अव ।  
के । अथवा चक्षु अचक्षु अवधि तीनों की अैसी चक्षु आदि ३ सहनानी है ।

बहुरि पंद्रहवां कोठा विषै लेश्या, तहां द्रव्य लेश्या की सहनानी अैसी द्र ।  
याके आगै जितनी द्रव्य लेश्या पाइए, तितने का अंक जानना । बहुरि भाव लेश्या की  
सहनानी अैसी भा । याके आगै जितनी भावलेश्या पाइए तितने का अंक जानना ।  
दोऊ ही जागै कृष्णादिक नामनि की अैसी कृ । नी । क । इनि तीनों की अैसी  
अशुभ ३ । तेज आदिक की अैसी ते । प । शु । इन तीनों की अैसी शुभ ३ ।  
सहनानी जाननी ।

बहुरि सोलहवां कोठाविषै भव्य, सो भव्य अभव्य की अैसी भ । अ । सहनानी है ।

सत्तरहवां कोठा विषै सम्यक्त्व, तहां मिथ्यादिक की अैसी मि । सा ।  
मिश्र । उ । वे । क्षा । सहनानी है ।

बहुरि अठारहवां कोठा विषै संज्ञी, तहां संज्ञी असंज्ञी की ऐसी सं । अ । सहनानी है ।

बहुरि उगणीसवा कोठा विषै आहार, तहां आहार-अनाहार की ऐसी आ । अन । सहनानी है ।

बहुरि बीसवा कोठा विषै उपयोग, तहां ज्ञानोपयोग — दर्शनोपयोग की ऐसी ज्ञा । द । सहनानी है । जैसे इन सहनानीनि करि यंत्रनि विषै कहिए है अर्थ सो नीकें जानना ।

बहुरि जहां गुणस्थानवत् वा मूलौघवत् ऐसा कह्या होइ, गुणस्थान वा सिद्ध रचना विषै जैसे प्ररूपणा होइ, तैसे यथसंभव जानना । बहुरि और भी जहां जिसवत् कह्या होइ, तहां ताके समान प्ररूपणा जानि लेना । तहां जो किछू जिस कोठा विषै विशेष कह्या होइ, सो विशेष जानि लेना । बहुरि जहां स्वकीय ऐसा कह्या होइ, तहां जिसका आलाप होइ, तहां तिस विषै संभवती प्ररूपणा वा जिसका आलाप कीजिए, सो ही प्ररूपणा जानि लेना । बहुरि इतना कथन जानि लेना —

सर्व्वेसि सुहमाणं, काळदा सव्वविग्गहे सुक्का ।

सव्वो मिस्सो देहो, कओदवण्णो ह्वे णियमा ॥१॥

इस सूत्र करि सर्व पृथ्वीकायादिक सूक्ष्म जीवनि कैं द्रव्यलेश्या कपोत है । विग्रहगति संबधी कार्माण विषै शुक्ल है । मिश्र शरीर विषै कपोत है । अंस अपर्याप्त आलापनि विषै द्रव्यलेश्या कपोत अर शुक्ल ही जानि लेना ।

बहुरि द्वितीयादि पृथ्वी का रचना विषै लेश्या अपनी अपनी पृथ्वी विषै संभवती स्वकीय जाननी ।

बहुरि मनुष्य रचना विषै प्रमत्तादिक विषै तीन भेदभाव अपेक्षा हैं । द्रव्य अपेक्षा एक पुरुषवेद ही है । बहुरि सप्तमादि गुणस्थाननि विषै आहार सज्ञा का अभाव, साता-असाता वेदनीय की उदीरणा का अभाव तै जानना । बहुरि स्त्री, नपुंसक वेद का उदय होतै आहारकयोग, मन पर्ययज्ञान, परिहारविशुद्धि संयम न होइ, अंसा जानना । बहुरि श्रेणी तै उतरि द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी चतुर्थादि गुणस्थानकनि तै मरि देव होइ, तोहि अपेक्षा वैमानिक देवनि कैं अपर्याप्तकाल विषै उपशम सम्यक्त्व कह्या है ।

बहुरि एकेंद्री जीवनि कै पर्याप्त नामकर्म के उदय तैं पर्याप्त, निर्वृत्तिअपर्याप्त अवस्था है । बहुरि अपर्याप्त नामकर्म के उदय तैं लब्धि अपर्याप्तक हो है; अैसा जानना । बहुरि कायमार्गणा रचना विषैं पर्याप्त, बादर, पृथ्वी, वनस्पती, त्रस के द्रव्यलेश्या छहो हैं । अप कै शुक्ल, तेज कै पीत, वायु कै हरित वा गोमूत्र वा अव्यक्त वर्णरूप द्रव्य लेश्या स्वकीय जानना ।

बहुरि साधारण शरीर जानने के अर्थ गाथा—

पृथ्वी आदि चउण्हं, केवलि आहारदेवणिरयंगा ।

अपदिट्ठदाहु सव्वे, परिट्ठदंगा हवे सेसा ॥१॥

पृथ्वी आदि च्यारि, अर केवली, आहारक, देव, नारक के शरीर निगोद रहित अप्रतिष्ठित है । अवशेष सर्व निगोद सहित सप्रतिष्ठित है; अैसा साधारण रचना विषैं स्वरूप जानना ।

बहुरि सासादन सम्यग्दृष्टी मरि नरक न जाय, तातै नारकी अपर्याप्त सासा-  
दन न होइ । बहुरि पंचमी आदि पृथ्वी के आये अपर्याप्त मनुष्यनि के कृष्ण नील लेश्या होतैं वेदक सम्यक्त्व हो है, तातैं कृष्ण — नील लेश्या की रचना विषैं अपर्याप्त आलाप विषैं मनुष्यगति कहिए है । बहुरि पर्याप्त विषैं कृष्णलेश्या नाही । अपर्याप्त में मिश्रगुणस्थान नाही, तातैं कृष्णलेश्या का मिश्रगुणस्थान विषैं देव बिना तीन गति हैं । इत्यादिक यंत्रसम्व अर्थ जानि यंत्रनि करि कहिए है अर्थ, सो जानना । अथ यन्त्र रचना,

[illegible]

सासादन पर्याप्तको रचना	१ सासा	१ संप	६। प	१०	४	४	३	४	३	१० मधव वधवी वि	१ त्र	१ प	१ प	१ त्र	३ मि विमि कार	३	४	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३	३</
------------------------------	-----------	----------	------	----	---	---	---	---	---	-------------------------	----------	--------	--------	----------	------------------------	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	---	-----

अनमत्त रचना	१ अनमत्त	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	३	४	४ मत्या दिक्क	३ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	१ उ क्षार	१ ल	१ आ	७ शा द ३
अपुंगरण रचना	१ अपु	१ संप	६	१०	३ आहार विना	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	३	४	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षार	१ ल	१ अहा	७ का द ३
अनिगति करण प्रथम भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	२ मेरे प १	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	२	४	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षा	१ ल	१ आहा	७ का द ३
अनिगति करण द्वितीय भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	०	४	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षार	१ ल	१ आहा	८ का द ३
अनिगति करण तृतीय भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	०	३ जाय विला	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षार	१ ल	१ आहा	९ का द ३
अनिगति करण चतुर्थ भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	०	२ भाया लाग	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षार	१ ल	१ आहा	९ का द ३
अनिगति करण पंचम भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	०	१ ता	४ मत्या दिक्क	२ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षा	१ ल	१ मा	९ का द ३
अनिगति करण षष्ठ भाग रचना	१ अनि	१ सर	६	१०	१ प	१ म	१ प	१ ज	६ मठ चढ आर	०	१ ला	४ मत्या दिक्क	१ सां छै प १	३ आदि के	३ भार शुभ	१ म	२ उ क्षा	१ ल	१ मा	९ का द ३



उपसंतक- प.य रचना	१ उप	१ संप	६	१०	०	१ म	१ प	१ त्र	६ मध वध और	०	०	०	४ म दिक	१ यथा	३ आदि के	द्रष्ट भार शुक्र	१ म	२ उर क्षार	१ स	१ आहा	७ झाड़ दर
क्षीणकभाय रचना	१ क्षीण	१ संप	६	१०	०	१ म	१ पं	१ त्र	६ मध वध और	०	०	०	४ मल्या दिक	१ यथा	३ आदि क	द्रष्ट भार शुक्र	१ म	१ क्षा	१ स	१ आहा	७ झाड़ दर
सयोगकेव- ली रचना	१ सयो	२ पर ५१	६६	४२	०	१ म	१ पं	१ त्र	७ मनर वचर और २ का१	०	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्रष्ट भार शुक्र	०	१ क्षा	०	२ आ१	२ आ१ दर
अयोगकेव- ली रचना	१ सयो	१ प	६	१ आयु	०	१ म	१ पं	१ त्र	०	०	०	०	१ के	१ यथा	१ के	द्रष्ट भा०	०	१ क्षा	०	१ अना हारक	२ आ१ दर
गुणस्थाना नौतिसिद्ध- रमेष्टारचना	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	१ के	०	१ के	०	०	१ क्षा	०	१ अना हारक	२ आ१ दर
सामान्य ना- रक जीवनि को रचना	४ आदिके	२ संप १ संय १	६६	१०७	४	१ न	१ पं	१ त्र	६ मध वध और २ का१	१ नपु	४	६ अक्षा नर मल्या दिक	१ अस	३ आदि के	द्रव्य करक १ शु१ भार अशुम	२	६	१ स	२	६ आ१ दर	
सामान्य नारक पर्याप्त रचना	४ आदिके	१ प	६६	१०	४	१ न	१ पं	१ त्र	६ मध वध और २ का१	१ नपु	४	६ अक्षा नर मल्या दिक	१ अस	३ आदि के	द्र १ क १ भार अशुम	२	६	१ स	१ आहा रक	६ आ१ दर	



सामान्यनि- यन रचना	देश	संप	६	१०	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	मल्या दिक	१ देश	३ आदि के	द्र ६ भा ३ शुभ	१ म	२ और व १	१ से	१ आ	६ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	आदिके	संभ १ अम प अस १ अ १	६६ ५५	१०७ ६७	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	मल्या दिक ३ कुहा-देश १ न ३	२ सं १ कुहा-देश १ अस १	३ वध आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	६ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	आदिके	संप १ अस १ प १	६५	१०६	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	कुहा न ३ मल्या दिक ३	२ अस १ अस १ देश १	३ वध आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	१ आहा	६ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	मि १ सा १ अवि १	संभ १ अस १ अ १	६५	७७	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	कुहा न ३ मल्या दिक ३	१ अस १ अस १ देश १	३ वध आदि	द्र ६ भा ६	२	६	२	२	६ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	मि १	संभ १ अस १ प १	६६ ५५	१०७ ६७	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	कुहा न ३ मल्या दिक ३	१ अस १ अस १ देश १	२ वध अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	२	२	५ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	मि १	संभ १ अस १ प १	६५	१०६	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	कुहा न ३ मल्या दिक ३	१ अस १ अस १ देश १	२ वध अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	२	१ आहा	५ का ३ द ३
पंचदो नि- यन रचना	मि १	संभ १ अस १ अ १	६५	७७	४	१ ति	१ पं	१ न	१ मध वध और	३	४	कुहा न ३ मल्या दिक ३	१ अस १ अस १ देश १	२ वध अच १	द्र ६ भा ६	२	१ मिथ्या	२	२	४ का ३ द ३

पंचेद्रो तिथि- च रासादन ७ न	१ सा	२ संप १ संभ १	६-६	१०७	४	१ ति	१ पे	१ ज	१ मध वध और का १	३	४	३ कुजान	१ असं	२ चर अचर	३ माह	१ म	१ सासा	१ स	२	५ भाद्र द २
पंचेद्रो तिथि- रासादन पदम रचना	१ सा	१ संप	६	१०	४	१ ति	१ पे	१ ज	६ मध वध और और	३	४	३ कुजान	१ असं	२ चर अचर	३ माह	१ म	१ सा	१ स	१ आहा	५ भाद्र द २
पंचेद्रो तिथि- च सासा दन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ संप १ संभ १	६	७	४	१ ति	१ पे	१ ज	२ औमि कार	३	४	२ कुम कुथार	१ असं	२ चर अचर	३ माह	१ म	१ सा	१ स	२	४ भाद्र द २
पंचेद्रो ति- यंत मिश रचना	१ मिश्र	१ संप	६	१०	४	१ ति	१ पे	१ ज	६ मध वध और और	३	४	३ मिश्र	१ असं	२ चर अचर	३ माह	१ म	१ मिश्र	१ स	१ आहा	५ भाद्र द २
पंचेद्रो ति- यंत असंयत रचना	१ असं	२ संप १ संभ १	६-६	१०७	४	१ ति	१ पे	१ ज	११ मध वध और का १	३	४	३ मत्या दिक	१ असं	३ चर अचर	३ माह	१ म	३ उर वर क्षार	१ स	२	६ भाद्र द २
पंचेद्रो तिथि- च असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६	१०	४	१ ति	१ पे	१ ज	६ मध वध और और	३	४	३ मत्या दिक	१ असं	३ चर अचर	३ माह	१ म	३ उर वर क्षार	१ स	१ आहा	६ भाद्र द २
पंचेद्रो तिथि- असंयत अप- र्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६	७	४	१ ति	१ पे	१ ज	० अमि १ पुख का १	३	४	३ मत्या दि	१ असं	३ चर अचर	३ माह	१ म	२ क्षा व १	१ स	२	६ भाद्र द २

पंचेद्री निर्यव देश संयत रचना	१ देश	१ संप	६	१०	४	१ ति	१ पे	१ न	६ म ४ व ४ ओ १	२	४	३ मत्या दिक	१ देश	३ चळु आदि	३ ६ भाद्र शुभ	१ म	२ उर वे १	१ स	१ आहा	१ शा ३ द ३
पंचेद्री पर्याप्त निर्यव रचना पंचेद्री निर्य च वत् है	पंचे द्रीवत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्	पंचं वत्
योनिमती निर्यव जो नि यंबणी ताकी रचना	५ आदिके	५ संप १ संप १ असं १ प १ आ स १ आ	६ ६ ५ ५	१० १७ ६ ७	४	१ ति	१ पे	१ न	११ म ४ व ४ ओ २ का १	१ खी	४	६ कुजा न ३ मत्या दिदि	२ असं देश	३ चळु आदि	३ ६ भाद्र	२	५ क्षायि क विना	२	२	६ क्षा द ३
योनिमती निर्यव पर्याप्त रचना	५ आदिके	२ संप असं प १	६ ५	१० १६	४	१ ति	१ पे	१ न	६ म ४ व ४ ओ १	१ खी	४	६ कुजा न ३ मत्या दिदि	२ असं देश	३ चळु आदि	३ ६ भाद्र	२	५ क्षायि क विना	२	१ आहा	६ क्षा द ३
योनिमती निर्यव अप- र्याप्त रचना	१ मिथ्या १ सा १	१ संप असं आ	६ ५	७ ७	४	१ ति	१ पे	१ न	३ ओमि १ का १	१ खी	४	२ कुम १ कुअ १	१ असं	२ च १ अव १	३ २ का १ १ भाद्र अशुभ	२	२ मिथ्या १ सा १	२	२	४ क्षा ३ द २
योनिमती निर्यव मि- थ्यादृष्टि रचना	१ मिथ्या	५ संप असं १ असं आ १	६ ६ ५ ५	१० १७ ६ ७	४	१ ति	१ पे	१ न	११ म ४ व ४ ओ २ का १	१ खी	४	३ कुजा न ३	१ असं	२ च १ अव १	३ ६ भाद्र	२	१ मिथ्या	२	२	५ क्षा ३ द २
योनिमती निर्यव मि- थ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मिथ्या	२ संप असं प १	६ ५	१० ६	४	१ ति	१ पे	१ न	६ म ४ व ४ ओ १	१ खी	४	३ कुजा न ३	१ असं	२ च १ अव १	३ ६ भाद्र	२	१ मिथ्या	२	१ आहा	५ क्षा ३ द २

[illegible]

[illegible]

सामान्य मनु- ष्य अतिवृत्ति करण टिप्पणी भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	४	४ मत्या दिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	२ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य अनि वृत्ति कारण वृत्तय भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	३	४ मत्या दिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	२ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य अनि वृत्ति कारण चतुर्थ भाग रचना	१ अनि	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	२	४ मत्या दिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	२ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य अनि वृत्ति कारण गवम भाग रचना	१ अनि	१ संप १	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	१	४ मत्या दिक	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	३ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य सूर्य सापथ्य रचना	१ सू	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	१	४ मत्या दिक	१ सूर्यम	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	२ उ १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य उपशान्ति कथाय रचना	१ उ	१ संप	६	१०	१ प	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	०	४ मत्या दिक	१ यथा	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	२ वे १ क्षा १	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३
सामान्य म- नुष्य क्षीण कथाय रचना	१ क्षी	१ संप	६	१०	०	१ म	१ पं	१ त्र	६ म ४ व ४ औ १	०	०	३ मत्या दिक	१ यथा	३ चक्षु आदि	३६ भा १ शुक्ल	१ म	१ क्षा	१ स	१ आहा	७ क्षा ३ द ३



[illegible]

मनुष्यणी मिथ्यादृष्टि परांति रचना।	१ मि	१ संप	६	१०	४	१ म	१ पं	१ न	६ म व व औ १	१ स्त्री	४	३ कुबान	१ असं	२ च १ अव १	२ द ६ भाद	२ मिथ्या स	१ आहा	५ शाद द २
मनुष्यणी मिथ्यादृष्टि अपयाम रचना	१ मि	१ स अ	६	७	४	१ म	१ पं	१ न	६ औमि १ का १	१ स्त्री	४	२ कुम १ कुशु १	१ अरं	२ च १ अव १	२ द २ काशु १ भाद अशुम	१ मिथ्या स	२	४ शा द २
मनुष्यणी सासादन रचना	१ सा	१ संप १ सख १	६	१०	४	१ म	१ पं	१ न	६ म व व औ १	१ स्त्री	४	३ कुबान असं	१ असं	२ च १ अव १	२ द ६ भाद	१ सा	१ आहा	५ शाद द २
मनुष्यणी सा सादन अपय स रचना	१ सा	१ सख	६	७	४	१ म	१ पं	१ न	६ औमि १ का १	१ स्त्री	४	२ कुम १ कुशु १	१ असं	२ च १ अव १	२ द २ काशु १ भाद अशुम	१ सा	१ आहा	४ शाद द २
मनुष्यणी स- म्यमिथ्या दृष्टिरचना	१ मिथ्र	१ संप	६	१०	४	१ म	१ पं	१ न	६ म व व औ १	१ स्त्री	४	३ मिथ्र	१ असं	२ च १ अव १	२ द ६ भाद	१ मिथ्र	१ आहा	५ शाद द २
मनुष्यणी असंयत रचना	१ असं	१ संप १	६	१०	४	१ म	१ पं	१ न	६ म व व औ १	१ स्त्री	४	३ मत्या दि	१ असं १	३ च १ अव १	२ द ६ भाद	३ व १ व १ क्षा १	१ आहा	६ शाद द २

મનુષ્યની દેશ સંવત સ્થના	૧ દેશ	૧ સંવ	૬	૧૦	૪	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૧ છો	૪	૩ મત્યા દિક	૧ દેશ	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ મ	૧ મ	૩ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩
મનુષ્યની પ્રમત સ્થના	૨ મ	૧ સંવ	૬	૧૦	૪	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૧ છો	૪	૩ મતિ આદિ	૨ સા છે	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ મ	૧ મ	૩ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩
મનુષ્યનો અમત સ્થના	૧ અમ	૧ સંવ	૬	૧૦	૩ આહાર વિના	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૧ છો	૪	૩ મત્યા દિક	૨ સા છે ૧	૨ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ મ	૧ મ	૩ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩
મનુષ્યનો અપૂર્વ કરણ સ્થના	૧ અપૂ	૧ સંવ	૬	૧૦	૩ આહાર વિના	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૧ છો	૪	૩ મતિ આદિ	૨ સા છે ૧	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ કુ	૧ મ	૨ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ મં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩
મનુષ્યનો અનિચ્છિત કરણ પ્રથમ ભાગ સ્થના	૧ અનિ	૧ સંવ	૬	૧૦	૨ મૈ ૧ પા ૧	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૧ છો	૪	૩ મતિ આદિ	૨ સા છે ૧	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ કુ	૧ મ	૨ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩
મનુષ્યનો- અનિચ્છિક રણદિતોય ભાગ સ્થના	૧ અનિ	૧ સંવ	૬	૧૦	૧ પ	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૦	૪	૩ મતિ આદિ	૨ સા છે ૧	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ કુ	૧ મ	૨ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૧
મનુષ્યનો- અનિચ્છિક રણદિતોય ભાગ સ્થના	૧ અનિ	૧ સંવ	૬	૧૦	૧ પ	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૬ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૦	૩ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧	૩ મતિ આદિ	૨ સા છે ૧	૩ ચલુ આદિ	૩ ૬ માં શુ કુ	૧ મ	૨ ૩ ૧ કે ૧ ક્ષા ૧	૧ સં	૧ આહા	૬ કા ૩ દ ૩



प्रमाणित पत्रिका रचना	१ मिथ्या	१ सत्य	६	७	४	१ म	१ प	१ न	१ अमिह कार	१ नपु	४ कुमर कुशु	२ असं कुशु	१ असं अव	२ चर अव	२ कशु भा	२ मिथ्या	१ स	२	४ द
प्रमाणित पत्रिका रचना	४ आदि के	२ सप	६६	१०-७	४	१ दे	१ प	१ न	१ म व व	२ खो पु	४ कुमान मत्या दि	६ कुमान मत्या दि	१ असं अव	३ चर आदि	३ द भा	६	१ स	१ आहा	६ द
प्रमाणित पत्रिका रचना	४ आदि के	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ न	१ म व व	२ खो पु	४ कुमान मत्या दि	६ कुमान मत्या दि	१ असं अव	३ चर आदि	३ द भा	६	१ स	१ आहा	६ द
प्रमाणित पत्रिका रचना	४ मि मा आदि	१ सप	६	७	४	१ दे	१ प	१ न	१ म व व	२ खो पु	४ कुमान मत्या दि	६ कुमान मत्या दि	१ असं अव	३ चर आदि	३ द भा	६	१ स	१ आहा	६ द
प्रमाणित पत्रिका रचना	४ मि मा आदि	१ सप	६६	१०-७	४	१ दे	१ प	१ न	१ म व व	२ खो पु	४ कुमान मत्या दि	६ कुमान मत्या दि	१ असं अव	३ चर आदि	३ द भा	६	१ स	१ आहा	६ द
प्रमाणित पत्रिका रचना	४ मि मा आदि	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ न	१ म व व	२ खो पु	४ कुमान मत्या दि	६ कुमान मत्या दि	१ असं अव	३ चर आदि	३ द भा	६	१ स	१ आहा	६ द

[illegible]

भवननिक देव रचना	४ आदिके	२ संपर संवर	६६	१०७	४	१ दे	१ प	१ न	११ म व व व व व व व कार	२ लीर पुं	४	६ कु खान मत्या दि	१ असं असं	३ चर आदि	३ मा अशु ३ पी	२	५ क्षायि क विना	१ सं	१ आहा	६ आदि द
भवननिक देव पर्याप्त रचना	५ आदिके	१ रूप	६	१०	४	१ दे	१ प	१ न	६ म व व व व व व व कार	२ लीर पुं	४	६ कु खान मत्या दि	१ असं असं	३ चर आदि	३ मा अशु ३ पी	२	५ क्षायि क विना	१ सं	१ आहा	६ आदि द
भवननिक देव अपर्याप्त रचना	२ मि सार	१ संख	६	७	४	१ दे	१ प	१ न	२ वैमि कार	२ लीर पुं	४	२ कुमान कुशु	१ असं असं	२ चर अवर	३ मा अशु ३ पी	२	२ मिथ्या १ सार	१ सं	२ आहा	४ आदि द
भवननिक देव मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	२ संपर संवर	६६	१०७	४	१ दे	१ प	१ न	११ म व व व व व व व कार	२ लीर पुं	४	३ कुमान	१ असं असं	२ चर अवर	३ मा अशु ३ पी	२	१ मिथ्या	१ सं	२ आहा	५ आदि द
भवननिक देव मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मि	१ संपर	६	१०	४	१ दे	१ प	१ न	६ म व व व व व व व कार	२ लीर पुं	४	३ कुमान	१ असं असं	२ चर अवर	३ मा अशु ३ पी	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ आदि द
भवननिक देव मिथ्या त्रि पर्याप्त रचना	१ मि	१ संख	६	७	४	१ दे	१ प	१ न	२ वैमि कार	२ लीर पुं	४	२ कुमान कुशु	१ असं असं	२ चर अवर	३ मा अशु ३ पी	२	१ मिथ्या	१ सं	२ आहा	४ आदि द
भवननिक देव मिथ्या दृष्टि पर्याप्त रचना	१ मा	२ संपर संवर	६६	१०७	४	१ दे	१ प	१ न	११ म व व व व व व व कार	२ लीर पुं	४	३ कुमान	१ असं असं	२ चर अवर	३ मा अशु ३ पी	२	१ मिथ्या	१ सं	१ आहा	५ आदि द

भवनत्रिक देव सासा दन पर्याप्त रचना	१ सा	१ सप	६	१०	४	१ दे	१ पे	१ ज	६ म व वी १	२ स्त्री पु १	४	३ कुशान	१ अस	२ चर अचर	द्र ६ भार पीत	१ म	१ सा	१ स	१ आहा	५ क्षा ३ द ३
भवनत्रिक देव सासा- दन अर्याप्त रचना	१ सा	१ स अ	६	७	४	१ दे	१ पे	१ ज	२ वेमि कार	२ स्त्री पु १	४	२ कुमार कुशु	१ अस	२ चर अचर	द्र २ कार भार अशुभ	१ म	१ सा	१ स	२	५ क्षा ३ द ३
भवनत्रिक देव सस्य मिथ्या दृष्टि रचना	१ मिथ	१ स प	६	१०	४	१ दे	१ पे	१ ज	६ म व वी १	२ स्त्री पु १	४	३ मिथ	१ अस	२ चर अचर	द्र ६ भार पीत	१ म	१ मिथ	१ स	१ आहा	५ क्षा ३ द ३
भवनत्रिक देव असंयत रचना	१ अस	१ स प	६	१०	४	१ दे	१ पे	१ ज	६ म व वी १	२ स्त्री पु १	४	३ मत्या दि	१ अस	२ चर अचर	द्र ६ भार पीत	१ म	२ उ १ वे १	१ स	१ आहा	६ क्षा ३ द ३
सौधर्म ईशान देव रचना	४ आदि के	२ स प र संभर	६ ६	१० ७	४	१ दे	१ पे	१ ज	११ म व वी २ कार	२ स्त्री पु १	४	६ कुशान मत्या दि ३	१ अस	३ चर अचर आदि	द्र ३ पोशेक रशु भार पीत	२	६	१ स	२	६ क्षा ३ द ३
सौधर्म ईशान देव पर्याप्त रचना	४ आदि के	१ स प	६	१०	४	१ दे	१ पे	१ ज	६ म व वी १	२ स्त्री पु १	४	६ कुशान मत्या दि ३	१ अस	३ चर अचर आदि	द्र १ पीत भार पीत	२	६	१ स	१ आहा	६ क्षा ३ द ३
सौधर्म ईशान देव अर्याप्त रचना	३ मि र सा र अचर	१ स व	६	७	४	१ दे	१ पे	१ ज	२ वेमि कार	२ स्त्री पु १	४	५ कुमार कुशु मत्या दि ३	१ अस	३ चर अचर आदि	द्र २ कार भार पीत	२	५ मिथ विना	१ स	२	८ क्षा ५ द ३



प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	६ पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	४ अप याप्त	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ क्षा १	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	४ प्र०अ० १०अ०	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	३ औ १ का १	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	२ प्रति छिन्न प्रति छिन्न पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	१ औ	१ न	४	१ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	२ प्रति. अप. अप. याप्त	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ का १	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	८ सुं.वा नि.इ. प.अ	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	३ औ १ का १	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	५ क्षार ६ १
प्रत्ययानिष्ठा विद्य. पर्याप्त रचना	१ मि	४ सुं.वा नि.इ. प.अ	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुम्भ १ कुम्भ १	१ अ	१ अ	१ अ	१ अ	३ क्षार ६ १

साधारण वनस्पती अपरांत रचना	१ मि	सू बा नि. इ अप यांत	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	१ औमि १ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	१ क १ शुभ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
साधारणव नस्पतीवाह रचना	१ मि	१ धानि इतरनि गोक्षप यांत पर्याप्त	४४	४३	४	१ ति	१ प	१ व	३ औ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ ६ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
साधारण वनस्पती पातृपयांत रचना	१ मि	२ वा नि त्यन्त्र पर्याप्त	४	४	४	१ ति	१ प	१ व	१ औ	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ ६ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
साधारणव न पानीवाह अर्यांत वाल वि अपर्याप्त रचना	१ मि	२ वा नि त्यन्त्र रयप यांत	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ २ का १ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
साधारणवर सयवहसत कोरचनात ६ मयुथी काय मत्	१ मि	२ सुसप्त त्यन्त्र रयप यांत	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ २ का १ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
नित्यनिगोद वर्गनिनि गोदस्थना साधारण न	१ मि	२ सुसप्त त्यन्त्र रयप यांत	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ २ का १ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १
२ सयप रचना	१ मि	२ सुसप्त त्यन्त्र रयप यांत	४	३	४	१ ति	१ प	१ व	२ औमि १ कार	१ न	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	१ अव	३ २ का १ भा ३ अशुभ	२	१ मि	१ अ	२	३ बा २ द १

अन्तर य पर्याप्त रचना	१३	वे तैर चौर सर अ	६५	१०१६ ८१७ ६११	४	४	४	वे तैर चौर पं १	४	१ अ वे १ आ १	११ मअ च ४ ओ १ वे १ आ १	३	४	८	७	४	उ २ क १ भा ६	२	६	२	१	१२	
त्रसकाय अपर्याप्त रचना	५	मिरमा अमि १ प्रसर	वे तैर चौर सर १	६५	७७ ६५ ४१	४	४	वे तैर चौर पं १	४	१ अमि वेमि १ आमि १ इकार	४ ३	३	४	६	४	४	उ २ क १ भा ६	२	५ मिना	२	२	१० भा ६ द ४	
त्रसकाय मि य द्विष्ट रचना	१ मि	वे तैर चौर सर	६६ ५५	१०७ ६७ ८६ ७५ ६०	४	४	४	वे तैर चौर पं १	४	१ अ वे १ आ १	१३ आहार द्विक विना	३	४	३	३	२	द ६ च १ अव १ भा ६	२	१ मि	२	२	५ भा ३ द २	
त्रसकायमि ध्याद्वेष्ट पर्याप्त रचना	१ मि	पर्याप्त वे तैर चौर सर	६५	१०१ ६१ ८१ ७१ ६१	४	४	४	वे तैर चौर पं १	४	१ अ वे १ आ १	० मं ४ च ४ ओ १ वे १	३	४	३	३	२	द ६ च १ अव १ भा ६	२	१ मि	२	१	५ भा ३ द २	
त्रसकायम याद्वेष्ट पर्याप्त रचना	१ मि	अप वे तैर चौर सर	६५	७१ ७१ ६१ ५१ ४१	४	४	४	वे तैर चौर पं १	४	१ अ वे १ आ १	३ ओ १ मि १ वे १ आ १	३	४	३	३	२	द २ क १ अव १ भा ६	२	१ मि	२	४	५ भा ३ द २	
त्रसकायम मदना च १ गु १ द्वेष्ट	गुण स्थान वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्	गुण वन्
अकाय रचना	०	०	०	०	सिद्ध	०	गति	०	०	०	०	०	०	१	०	०	०	०	१	०	१	२	१ अना हार भा ३ द २

[illegible]

[illegible]



काययोगी मिथ्याद्विगि अपर्याप्त रचना	१ मि	७ अप यौत	६ ५ ४	७७६। ५७६।	४	४	४	५	६	३ ओमि १ वैमि १ कार	३	४	३ कुमर कुमर	१ अ	२ चर अचर	२ क १ शुर माद	२	१ मि	२	५ क्षा २ द २
काययोगी सासादन रचना	१ सा	२ संप० संअ०	६ ६	१०७।	४	४	४	१ प	१ न	५ ओर १ वै २ कार	३	४	३ कुमान	१ अ	२ चर अचर	२ ६ माद	१ म	१ सा	१ से	५ क्षा २ द २
काययोगी सासादन पर्याप्त रचना	१ सा	१ संप	६	१०	४	४	४	१ प	१ न	२ ओर १ वै २ कार	३	४	३ कुमान	१ अ	२ चर अचर	२ ६ माद	१ म	१ सा	१ से	५ क्षा २ द २
काययोगी सासादन अपर्याप्त रचना	१ सा	१ संप	६	७	४	४	३ नरक विना	१ प	१ न	३ ओमि १ वैमि १ कार	३	४	२ कुमर कुमर १	१ अ	२ चर अचर	२ क १ शुर मा ६	१ म	१ सा	१ से	४ क्षा २ द २
काययोगी सम्यग्मिथ्या द्विगि रचना	१ मिश्र	१ संप	६	१०	४	४	४	१ प	१ न	२ ओर १ वै २ कार	३	४	३ मिश्र	१ असं	२ चर अचर	२ ६ माद	१ म	१ मिश्र	१ से	५ क्षा २ द २
काययोगी असंयत रचना	१ असं	२ संप संअर	६ ६	१०७	४	४	४	१ प	१ न	५ ओर १ वै २ कार	३	४	३ मत्पा दिक	१ अ	३ चक्षु आदि	२ ६ माद	१ म	३ १ १ वे १ क्षा १	१ से	६ क्षा २ द २
काययोगी असंयत पर्याप्त रचना	१ असं	१ संप	६	१०	४	४	४	१ प	१ न	२ ओर १ वै २ कार	३	४	३ मत्पा दिक	१ अ	३ चक्षु आदि	२ ६ मा ६	१ म	३ १ १ वे १ क्षा १	१ से	६ क्षा २ द २

काययोगी अमयत अपयात रचना	१ असं	१ संम	६	७	४	४	१ प	१ न	३ ओमि १ वीमि १ कार	२ नु १ पु	४	३ मत्या विक	१ असं	३ चक्षु आदि	३ द्र २ काशु माद	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	२	६ भाद द ३
काययोगी काययोगी सयत रचना	१ दे	१ संप	६	१०	४	२ नि म	१ प	१ न	१ ओ	३	४	३ मत्या विक	१ दे	३ चक्षु आदि	३ द्र ६ भाद शुम	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	१ आहा	६ भाद द ३
काययोगी ममन रचना	१ म	२ संपर संक्षार	६दि	१०७	४	१ म	१ प	१ न	३ ओ आर	३	४	४ मत्या विक	३ सार छि पर	३ चक्षु आदि	३ द्र ६ भाद शुम	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	१ आहा	७ भाद द ३
काययोगी नमस रचना	१ अम	१ संप	६	१०	४	१ म	१ प	१ न	१ ओ	३	४	४ मत्या विक	३ सार छि पर	३ चक्षु आदि	३ द्र ६ भाद शुम	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	१ आहा	७ भाद द ३
काययोगी ममन रचना	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	काय योग की	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर	गुण स्वान पर
काययोगी ममन रचना	१ म	३ प म	६दि	४	४	१ म	१ प	१ न	३ ओ कार	३	४	३ मत्या विक	१ प	३ चक्षु आदि	३ द्र ६ भाद शुम	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	२ भाद द ३	
काययोगी ममन रचना	१ म	३ प म	६दि	४	४	१ म	१ प	१ न	३ ओ कार	३	४	३ मत्या विक	१ प	३ चक्षु आदि	३ द्र ६ भाद शुम	१ म	३ उरि वेरि क्षार	१ से	१ भाद द ३	



[illegible]

औदारिक मिश्रयोगी मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	७ अप यास	६ ५ ४	७७६ ५४३	४	२ मर तिर	५	६	१ औमि	३	४	२ कुमर कुशुर	१ अ	२ चर अचर	३ कपोत भाद्र अशुभ	२	१ मि	२	१ आ	४ आर दर
औदारिक मिश्रयोगी सासादन रचना	१ सा	१ संभ	६	७	४	२ मर तिर	१ पं	१ त्र	१ औमि	३	४	२ कुमर कुशुर	१ अ	२ चर अचर	३ कपोत भाद्र अशुभ	१ म	१ सा	१ सं	१ आहा	४ आर दर
औदारिक मिश्रयोगी असयत रचना	१ अस	१ संभप	६ अ	७ प	४	२ तिर मर	१ प	१ त्र	१ औमि	१ पुं	४	३ मत्या दिक	१ अ	३ चक्षु आदि	३ कपोत भाद्र	१ म	२ चर क्षर	१ सं	१ आ	६ आर दर
औदारिक मिश्रयोगी सयोगी रचना	१ सयो	१ अ	६ अ	२	४	१ म	१ प	१ त्र	१ औमि	१ ०	४	२ के	१ य	१ के	३ कपोत भाद्र शुक्ल	१ म	१ क्षा	१ ०	१ आ	२ आर दर
वैक्रियिक फा.योगी रचना	४ मि मर मि अ	१ सप	६	१०	४	२ नर देर	१ प	१ अ	१ वै	३	४	६ कु आनर मत्या दि ३	१ अ	३ चक्षु आदि	३ प्रद भाद्र	२	६	१ सं	१ आ	६ आर दर
वैक्रियिक मिथ्या मिश्र दृष्टि रचना	१ मि	१ संप	६	१०	४	२ मर देर	१ प	१ अ	१ वै	३	४	३ कुमान	१ अ	२ चर अचर	३ प्रद भाद्र	२	१ मि	१ सं	१ आ	५ आर दर
वैक्रियिक मिथ्या सासादन रचना	१ मा	१ सप	६	१०	४	२ नर देर	१ पं	१ अ	१ वै	३	४	३ कुमान	१ अ	२ चर अचर	३ प्रद भाद्र	१ म	१ सा	१ सं	१ आ	५ आर दर

વૈક્રિયિકયો ગો સમ્યગ્મિ ધ્યા દૃષ્ટિ રચના	૧ મિથ્ર	૧ સંપ	૬	૧૦	૪	૨ નર દેશ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૩	૪	૩ મિથ્ર દિ	૧ અ	૨ અવર	દ્ર ૬ માદ	૧ મ	૧ મિથ્ર	૧ સં	૧ આ	૫ જા ૩ દ ૩
વૈક્રિયિક યોગો અસં યત રચના	૧ અસં	૧ સંપ	૬	૧૦	૪	૨ નર દેશ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૩	૪	૩ મત્યા દિ	૧ અ	૩ અસુ આદિ	દ્ર ૬ માદ	૧ મ	૩ ઝર ઘૈ ૧ જા ૧	૧ સં	૧ આ	૬ જા ૩ દ ૩
વૈક્રિયિક મિથ્ર યોગો રચના	મિથ્રસા અવિ	૧ સંઅ	૬	૭	૪	૨ નર દેશ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૩	૪	૫ કુમર કુમર મત્યા દિ	૧ અ	૩ અસુ આદિ	દ્ર ૧ કપોત માદ	૨	૫ મિથ્ર વિના	૧ સં	૧ આ	૮ જા ૫ દ ૩
વૈક્રિયિકમિ શ્રયોગો મિથ્રદૃષ્ટિ રચના	૧ મિ	૧ સંઅ	૬	૭	૪	૨ નર દેશ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૩	૪	૨ કુમર કુમર	૧ અ	૨ અવર	દ્ર ૧ કપોત માદ	૨	૧ મિ	૧ સં	૧ આ	૪ જા ૨ દ ૨
વૈક્રિયિકમિ શ્રયોગો સાસાદન રચના	૧ સા	૧ સંઅ	૬	૭	૪	૧ દે	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૨ લો ૧ પુ ૧	૪	૩ કુમર કુમર	૧ અ	૨ અવર	દ્ર ૧ કપોત માદ	૧ મ	૧ સા	૧ સં	૧ આ	૪ જા ૨ દ ૨
વૈક્રિયિકમિ પ્રયોગો અસં યત રચના	૧ અસં	૧ સંઅ	૬	૭	૪	૨ નર દેશ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૨ નપુ પુ ૧	૪	૩ મત્યા દિ	૧ અ	૩ અસુ આદિ	દ્ર ૧ કપોત માદ મ ૩ કપોત	૧ મ	૩ ઝર ઘૈ ૧ જા ૧	૧ સં	૧ આ	૬ જા ૩ દ ૩
આહારકા યોગો રચના	૧ પ્રમસ	૧ પર્યાસ	૬	૧૦	૪	૧ મ	૧ પં	૧ જ	૧ ઘૈ	૧	૪	૩ મત્યા દિ	૨ સા ૧ ઘૈ ૧	૩ અસુ આદિ	દ્ર ૧ કુલ માદ કુમ	૧ મ	૨ ઝર ઘૈ ૧ જા ૧	૧ સં	૧ આ	૬ જા ૩ દ ૩

[illegible]

गोविंदीमि म रचना	१ गदिदे	२ सं० २० पर्याप्त	३ ६१	४ १०६	५ ४	६ तिर मर देर	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० म४ व४ ओर वेर	११ स्त्री	१२ ४	१३ मंगःप पयके बल विना	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ ६	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
गोविंदी म रचना	२ मि १ सा १	२ सं० २० अप याप्त	३ ६५	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि १ सा १	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
गोविंदीमि म रचना	२ मि	२ सं० २० अप याप्त	३ ६५	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
खोविदेमि म रचना	१ मि	२ सं० २० अप याप्त	३ ६५	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
खोविदेमि म रचना	१ मि	२ सं० २० अप याप्त	३ ६६	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
खोविदेमि म रचना	१ सा	२ सं० २० अप याप्त	३ ६६	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५
खोविदेमि म रचना	१ सा	२ सं० २० अप याप्त	३ ६६	४ ७७	५ ४	६ नरक विना	७ ५	८ १ प	९ १ ज	१० ३ ओ मि १ वेमि १ का १	११ स्त्री	१२ ४	१३ कुम १ कुशु १	१४ १ अ	१५ २ चर अचर	१६ द्र २ क १ शु १ मा ३ अशुम	१७ २	१८ २ मि	१९ २	२० २	२१ ५	२२ ५

खीविदीसा सादनअप्या रचना	१ सा	१ संप	६	७	४	३ नरक विना	१ प	१ न	३ मर वीमि का	१ ली	४	२ कुमर कुशुर	१ अ	२ वर अवर	द्रुम गुमा अगुमा	१ म	१ सा	१ सं	२	४ कार दर
खीविदीसय्य मियाहृदि रचना	१ मिम	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ प	१ न	१० मर वर वीमि का	१ ली	४	३ मिम	१ अ	२ वर अवर	द्रुम मा	१ म	१ मिम	१ सं	१ आहा	५ कार दर
खीविदी असंयत रचना	१ मसं	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ प	१ न	१० मर वर वीमि का	१ ली	४	३ मति आदि	१ अ	३ वर आदि	द्रुम मा	१ म	३ उर वर का	१ सं	१ आहा	६ कार दर
खीविदी देश संयत रचना	१ हे	१ संप	६	१०	४	३ ति म	१ प	१ न	६ मर वर वीमि का	१ ली	४	३ मति आदि	१ हे	३ वर आदि	द्रुम मा गुम	१ म	३ उर वर का	१ सं	१ आहा	६ कार दर
खीविदी प्रमत्त रचना	१ म	१ संप	६	१०	४	१ म	१ प	१ न	६ मर वर वीमि का	१ ली	४	३ म नित्या विम नःपय यनाही	२ सा छे	३ वर आदि	द्रुम मा गुम	१ म	३ उर वर का	१ सं	१ आहा	६ कार दर
खीविदी अप्रमत्त रचना	१ म्प	१ संप	६	१०	४	१ म	१ प	१ न	६ मर वर वीमि का	१ ली	४	३ मति आदि	२ सा छे	३ वर आदि	द्रुम मा गुम	१ म	३ उर वर का	१ सं	१ आहा	६ कार दर
खीविदी यंनर रचना	१ म्प	१ संप	६	१०	४	३ म्प विना	१ प	१ न	६ मर वर वीमि का	१ ली	४	३ मति आदि	२ सा छे	३ वर आदि	द्रुम मा गुम	१ म	३ उर वर का	१ सं	१ आहा	६ कार दर

[illegible]

[illegible]



નપું સકલસા નાદસરવના	૧ સા	૨ સંપર્ સંભર	૬૬	૧૦૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૨આ દાર વિક ૬૦મિ વિના	૧ ન	૪	૩ કુચાન	૧ અ	૨ ચર અવર	૬૬ માદ	૧ મ	૧ સા	૧ સં	૨	૫ જા ૨ દ ૨
નપું સકલે પીલાસાદન પર્યાસ રચના	૧ સા	૧ સંજી પર્યાસ	૬ પ	૧૦	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦૧ મધ વધ ઔર કૌર	૧ ન	૪	૩ કુચાન	૧ અ	૨ ચર અવર	૬૬ માદ	૧ મ	૧ સા	૧ સં	૧ આ	૫ જા ૩ દ ૨
નપું સકલે સાસાદન અપર્યાસ રચના	૧ સા	૧ સંઝ	૧ જ	૭	૪	૨ મર તિર	૧ પં	૧ જ	૨ વૈમિ કાર	૧ ન	૪	૨ કુમ કુટુ	૧ અ	૨ ચર અવર	૬૨ કરશુ માર અશુ	૧ મ	૧ સા	૨ સં	૨	૪ જા ૩ દ ૨
નપું સકલસમ્ય રિઝયાદુપિ રચના	૧ મિશ્ર	૧ સંપ	૬ પ	૧૦	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મધ વધ ઔર કૌર	૧ ન	૪	૩ મિશ્ર	૧ અ	૨ ચર અવર	૬૬ માદ	૧ મ	૧ મિશ્ર	૧ સં	૧ આ	૫ જા ૩ દ ૨
નપું સકલે અસ યત રચના	૧ અસં	૨ સંપ સંભર	૬૬	૧૦૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૨મધ વધ ઔર કાર	૧ ન	૪	૩ મત્યા દિ	૧ અ	૩ ચસુ આદિ	૬૬ માદ	૧ મ	૩ ડર કૌર કાર	૧ સં	૨	૬ જા ૩ દ ૨
નપું સકલે અસ યત પર્યાસ રચના	૧ અસં	૨ સંપ	૬	૧૦	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મધ વધ ઔર કૌર	૧ ન	૪	૩ મત્યા દિ	૧ અ	૩ ચસુ આદિ	૬૬ માદ	૧ મ	૩ ડર કૌર કાર	૧ સં	૧ આ	૬ જા ૩ દ ૨
નપું સકલે અસ યત પર્યાસ રચના	૧ અસં	૧ સંમ	૬ અ	૭ અ	૪	૧ નરક	૧ પં	૧ જ	૨ વૈમિ કાર	૧ ન	૪	૩ મત્યા દિ	૧ અ	૩ ચસુ આદિ	૬૨ કરશુ માર અશુમ	૧ મ	૨ ચેર કાર	૧ સં	૨	૬ જા ૩ દ ૨

[illegible]

प्रोद्योग्यगो मिथ्या दृष्टि रचना	१ मि	१४	६६ ५५५ ४४४	१०७ ६७ ८६ ७५ ६४ ४३	४	४	४	५	६	१३ आहार काकि कावि ना	३	१ कौ	३ कुक्षान	१ अ	२ वर अव	२६ माद	२ मिअ	२	५ आ ३ द २
मोथकयापी मिथ्यादृष्टि प्रयोस रचना	१ मि	७ प्रयोस	६ ५ ४	१० ६ ७ ४	४	४	४	५	६	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	१ कौ	३ कुक्षान	१ अ	२ वर अव	२६ मा ६	१ मि	२	५ आ ३ द २
कोधीमिथ्या दृष्टि अप्रयोस रचना	१ मि	१ अप योस	६ ५ ४	७ ४ ५ ३	४	४	४	५	६	३ औ मि १ वै मि १ का १	३	१ कौ	२ कुम १ कुशु १	१ अ	२ वर अव	२२ क १ शु १ मा ६	१ मि	२	४ आ २ द २
कोधीसासा- दनरचना	१ सा	१ स पर संअ १	६६	१०७	४	४	४	१ पं	१ व	१३ आहार काकि विना	३	१ कौ	३ कुक्षान	१ अ	२ वर अव	२६ मा ६	१ सा	२	५ आ ३ द २
कोधीसासा दनप्रयोस रचना	१ सा	१ स प	६	१०	४	४	४	१ पं	१ व	१० म ४ व ४ औ १ वै १	३	१ कौ	३ कुक्षान	१ अ	२ वर अव	२६ मा ६	१ सा	२	५ आ ३ द २
कोधीसासा दनअप्रयोस रचना	१ सा	१ संअ	६	७	४	४	४	१ पं	१ व	३ औ मि १ वै मि १ का १	३	१ कौ	३ कुम १ कुशु १	१ अ	२ वर अव	२२ क १ शु १ मा ६	१ सा	२	४ आ २ द २
कोधीसम्य गिमिथ्यादृष्टि रचना	१ मिअ	१ स प	५	१०	४	४	४	१ पं	१ व	१० म ४ व ४ औ १ वै १	२	१ कौ	३ मिअ	१ अ	२ वर अव	२६ मा ६	१ मिअ	२	५ आ ३ द २

[illegible]

કપોતલેશ્ય સાલાધનપ યાતરવના	૧ સા	૧ સંપ	૬	૧૦	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મ ૪ પ ૪ ઓ ૧ વે ૧	૩	૪	૩ કુબાન	૧ ઝ	૨ ચર અચર	દ્ર ૬ માર કપોત	૧ ઝ	૧ લા	૧ સં	૧ આ	૫ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના પયાતરવના	૧ સા	૧ સંપ	૬ ઝ	૭ ઝ	૪	૩ નરક વિના	૧ પં	૧ જ	૩ ઓમિશ દેમિ ૧ ફાર ૧	૩	૪	૨ કુમ ૧ કુથુ ૧	૧ ઝ	૨ ચર અચર	દ્ર ૨ માર કપોત	૧ ઝ	૧ લા	૧ સં	૨	૪ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના દુષ્ટિવના	૧ મિશ્ર	૧ સંપ	૬	૧૦	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧ વે ૧	૩	૪	૩ મિશ્ર	૧ ઝ	૨ ચર અચર	દ્ર ૬ માર કપોત	૧ ઝ	૧ મિશ્ર	૧ સં	૧ આ	૫ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના મુક્ત	૧ અસં	૨ સંપ	૬ ૬	૧૦ ૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧ વે ૧	૩	૪	૩ મતિ આદિ	૧ ઝ	૩ ચર અચર	દ્ર ૬ માર કપોત	૧ ઝ	૩ ઝર વે ૧ ફાર ૧	૧ સં	૨	૬ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના મુક્ત	૧ અસં	૧ સંપ	૬ ૫	૧૦ ૫	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૧૦ મ ૪ વ ૪ ઓ ૧ વે ૧	૩	૪	૩ મતિ આદિ	૧ ઝ	૩ ચર અચર	દ્ર ૬ માર કપોત	૧ ઝ	૩ ઝર વે ૧ ફાર ૧	૧ સં	૧ આદિ	૬ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના મુક્ત	૧ અસં	૧ સંપ	૬ ૫	૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૩ ઓમિશ દેમિ ૧ ફાર ૧	૩	૪	૩ મતિ આદિ	૧ ઝ	૩ ચર અચર	દ્ર ૨ માર કપોત	૧ ઝ	૩ ઝર વે ૧ ફાર ૧	૧ સં	૨	૬ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના મુક્ત	૧ અસં	૧ સંપ	૬ ૫	૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૩ ઓમિશ દેમિ ૧ ફાર ૧	૩	૪	૩ મતિ આદિ	૧ ઝ	૩ ચર અચર	દ્ર ૨ માર કપોત	૧ ઝ	૩ ઝર વે ૧ ફાર ૧	૧ સં	૨	૬ ઝા ૨ દ ૨
કપોતલેશ્ય સાસાદનના મુક્ત	૧ અસં	૧ સંપ	૬ ૫	૭	૪	૩ દેવ વિના	૧ પં	૧ જ	૩ ઓમિશ દેમિ ૧ ફાર ૧	૩	૪	૩ મતિ આદિ	૧ ઝ	૩ ચર અચર	દ્ર ૨ માર કપોત	૧ ઝ	૩ ઝર વે ૧ ફાર ૧	૧ સં	૨	૬ ઝા ૨ દ ૨

शुक्लेय मिथ्यादि पयास रचना	१ मि	१ संप	६	१००	४	३ नरक विना	१ पं	१ न	१० मध वध कीर	३	४	३ कुञ्जान	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	२	१ मि	१ सं	१ भा	५ भा द २
शुक्लेय मिथ्यादि पयास रचना	१ मि	१ सं अ	६ अ	७	४	१ देव	१ पं	१ न	२ वैमिश काश	१ पुं	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	२	१ मि	१ सं	१ भा	४ भा द २
शुक्लेय सासादन रचना	१ सा	२ संप संअ	६	१०७	४	३ नरक विना	१ पं	१ न	१२ मध वध कीर का	३	४	३ कुञ्जान	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	१ म	१ सा	१ सं	१ भा	५ भा द २
शुक्लेय सासादन पयास रचना	१ सा	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ न	१० मध वध कीर	३	४	३ कुञ्जान	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	१ मं	१ सा	१ सं	१ भा	५ भा द २
शुक्लेय सासादन अपयास रचना	१ सा	१ संअ	६ अ	७	४	१ देव	१ पं	१ न	२ वैमिश काश	१ पुं	४	२ कुमर कुथुर	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	१ म	१ सा	१ सं	१ भा	४ भा द २
शुक्लेय सासादन मिथ्यादि रचना	१ मिथ	१ संप	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ न	१० मध वध कीर	३	४	३ मिथ	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	१ म	१ मिथ	१ सं	१ भा	५ भा द २
शुक्लेय सासादन मिथ्यादि रचना	१ मिथ	२ संप संअ	६	१०	४	३ नरक विना	१ पं	१ न	२ वैमिश काश	३	४	३ मिथ	१ अ	२ चर अव	प्रद माश शुक्ल	१ म	३ भो पि	१ सं	१ भा	६ भा द २

आधिकसम्य गृह्यदेशसं यतरचना	१ देश	१ संप	६ प	१० प	४	१ मनुष्य	१ प	१ त्र	६ म व जी १	३	४	गुं वत्	३ मति आदि	१ दे	३ चक्षु आदि	प्र ६ मा ३ शुभ	१ म	१ क्षा	१. सं	१ आ	१ आदि पदे
आधिक सम्य गृह्यप्रमत्ता दिमिदपर्यंत गुणस्थान वत् रचना	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	गुं वत्	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	प्र ६ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	गुं वत्	गुं वत्
धेवक सम्य गृह्य रचना	४ असं यतादि	२ पर अ १	६ द	१० ७	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	प्र ६ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	२	७ आ ३ प ३
धेवक सम्य गृह्यपर्याप्त रचना	४ असं यतादि	१ संप	६ प	१० प	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	प्र ६ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	१ आ	७ आ ३ प ३
धेवकसम्य गृह्य यांतरचना	२ असं १ प्रम १	१ स ध	६ अ	७ अ	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	प्र २ का १ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	२	६ आ ३ प ३
धेवकसम्य गृह्य यांतरचना	१ असं	२ स ध १ संप १	६ द	१० ७	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	प्र ६ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	२	६ आ ३ प ३
धेवकसम्य गृह्य यांतरचना	१ असं	१ स ध १ संप १	६ द	१० ७	४	४	१ प	१ त्र	१५	३	४	गुं वत्	४ मति आदि	५ आदि दे १ सा १ छे १ प १	३ चक्षु आदि	प्र ६ मा ६	१ म	१ वेवक	१. सं	२	६ आ ३ प ३

उपशम सम्यग्दृष्टि असंयत स्वना	१ असं	२ संयत संयत	१०७	४	४	१ पं	१ अ	१२मधु वधुजी १ वै २ का १	३	४	३	३ मत्या दि	१ असं	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	२	६ का ३ व ३
उपशमसम्य ग्दृष्टिअसंयत पर्याप्त स्वना	१ असं	१ संयत	१०५	४	४	१ पं	१ अ	१०म ४वधु जी १ वि १	३	४	३	३ मति आदि	१ असं	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	६ का ३ व ३
उपशम सम्यग्दृष्टि असंयत अप र्याप्त स्वना	१ असं	१ संयत	७	४	१ देव	१ पं	१ अ	२ वैमि का १	१ पुं	४	३ मति आदि	१ असं	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	२	६ का ३ व ३	
उपशमसम्य ग्दृष्टि देश रायतस्वना	१ देश	१ संयत	१०	४	२ लि १ म १	१ पं	१ अ	६ म ४ व ४ जी १	३	४	३ मति आदि	१ देश	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	६ का ३ व ३	
उपशम सम्यग्दृष्टि ममता स्वना	१ म	१ संयत	१०	४	१ म	१ पं	१ अ	६ म ४ व ४ जी १	३	४	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	७ का ४ व ३	
उपशम सम्यग्दृष्टि ममता स्वना	१ म	१ संयत	१०	३	१ म	१ पं	१ अ	६ म ४ व ४ जी १	३	३	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	७ का ४ व ३	
उपशम सम्यग्दृष्टि ममता स्वना	१ म	१ संयत	१०	३	१ म	१ पं	१ अ	६ म ४ व ४ जी १	३	३	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	७ का ४ व ३	
उपशम सम्यग्दृष्टि ममता स्वना	१ म	१ संयत	१०	३	१ म	१ पं	१ अ	६ म ४ व ४ जी १	३	३	३ मति आदि	२ सा १ छे १	३ चक्षु आदि	३ मा ६	१ म	१ उप	१ सं	१ आ	७ का ४ व ३	





गुणजीव ठाणरहिया, सञ्जापज्जत्तिपाणपरिहीणा ।  
सैसणवमग्गणूणा, सिद्धा सुद्धा सदा होंति ॥७३२॥

गुणजीवस्थानरहिताः, संज्ञापर्याप्तिप्राणपरिहीनाः ।  
शेषनवमार्गणोनाः, सिद्धाः शुद्धाः सदा भवन्ति ॥७३२॥

टीका - चौदह गुणस्थान वा चौदह जीवसमासनि करि रहित हैं । बहुरि च्यारि संज्ञा, छह पर्याप्ति, दश प्राणनि करि रहित है । बहुरि सिद्ध गति, ज्ञान, दर्शन, सम्यक्त्व, अनाहार इनि बिना अवशेष नव मार्गणानि करि रहित है । अैसे सिद्ध परमेष्ठो द्रव्यकर्म भावकर्म के अभाव तै सदा काल शुद्ध है ।

णिकखेवे एयत्थे, णयप्पमाणे णिरुत्तिअणियोगे ।  
मग्गइ वीसं भेयं, सो जाणइ अप्पसब्भावं ॥७३३॥

निक्षेपे एकार्थे, नयप्रमाणे निरुक्तचनुयोगयोः ।  
मार्गयति विशं भेदं, स जानाति आत्मसद्भावम् ॥७३३॥

टीका - नाम, स्थापना, द्रव्य, भावरूप च्यारि निक्षेप बहुरि प्राणी, भूत, जीव, सत्त्व इनि च्यारचोनि का एक अर्थ है, सो एकार्थ । बहुरि द्रव्यार्थिक, पर्यायार्थिक नय; बहुरि मतिज्ञानादिरूप प्रत्यक्ष परोक्ष प्रमाण, बहुरि जीव है, जीवैगा, जीया अैसा जीव शब्द का निरुक्ति । बहुरि

“किं कस्स केण कत्थवि केवचिरं कतिविहा य भावा”

कहा ? किसकै ? किसकरि ? कहाँ ? किस काल ? कै प्रकार भाव है । अैसे छह प्रश्न होते निर्देश, स्वामित्व, साधन, अधिकरण, स्थिति, विधान इन छहों तै साधना, सो यह नियोग अैसे निक्षेप, एकार्थ, नय, प्रमाण, निरुक्ति, नियोगनि विषे जो भव्य जीव गुणस्थानादिक बीस प्ररूपणा रूप भेदनि कौ जानै है, सो भव्य जीव आत्मा के सत-समीचीन भाव कौ जानै है ।

अज्जज्जसेण-गुणगणसमूह-संधारि अजियसेणगुरु ।  
भुवणगुरु जस्स गुरु, सो रायो गोम्मटो जयदु ॥७३४॥